UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182855

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY
Call No H81/S71Sa Accession No G.H-3148
Author सूरदास 1
Title सूरदास ग्रन्थावली
This book should be returned on or before the date
last marked below

निवेदन

'बिहारी-रत्नाकर' का संपादन समाप्त करके स्वर्गीय बाबू जगन्नाथदास जी रत्नाकर ने 'सूरसागर' के संपादन में हाथ लगाया था। बहुत परिश्रम और व्यय करके उन्होंने अनेक प्रतियों का संग्रह किया था और अक्षरक्रम से सबके पदों की सूची बनवाई थी। इसके अनंतर उन्होंने उसके संपादन में हाथ लगाया था और एक प्रकार से ½ अंश के शुद्ध पाठ का संकलन कर भी लिया था। इस पाठ-शुद्धि के अंतर्गत छंदों का संशोधन, चरणों का क्रम निरूपण तथा पद प्रयोगों की निश्चित पद्धति का अनुसरण आदि संपादन-संबंधी अधिकांश आवश्यक अंग पूरे हो गए थे। परंतु अभी शेष चतुर्थांश का संकलन करने के अतिरिक्त अनेक पाठों में से सबसे सुंदर और उपयुक्त पाठ चुनकर रखना तथा संपूर्ण संपादित अंश को अंतिम रूप देना बाकी रह गया था कि कराल काल ने उन्हें कवलित कर लिया। उनके सुयोग्य पुत्र बाबू राधेकृष्णदास ने यह सब सामग्री सभा को अर्पित कर दी और यह इच्छा प्रकट की कि सभा इस काम को संपन्न करे। यद्यपि रत्नाकर जी ने स्वयं भी यह निश्चय किया था कि यह ग्रंथ काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हो, और छपाई आदि के संबंध में भी उन्होंने कुछ बातें निश्चित की थीं, पर वे उनके जीवनकाल में कार्यरूप में परिणत न हो सकीं। उनका स्वर्गवास होने तथा समस्त सामग्री के प्राप्त होने पर सभा ने यह निश्चय किया कि रत्नाकर जी के निश्चित सिद्धांतों की रक्षा करते हुए यह ग्रंथ संपादित होकर प्रकाशित हो। एतदर्थ सभा ने पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय, पंडित रामचंद्र शुक्ल, पंडित केशवप्रसाद मिश्र, प्रकाशन-मंत्री तथा संपादक पंडित नंददुलारे वाजपेयी की एक उपसमिति बनाई। इस कार्य को पंडित नंददुलारे वाजपेयी उक्त समिति के तत्त्वावधान में, तथा पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय के निरीक्षण में और उनके परामर्श के अनुसार, कर रहे हैं। इस संपादन-कार्य में जिन जिन ग्रंथों से कार्य लिया गया है उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण
(१)	(व)	यह वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई की संवत् १९६४ की छपी हुई प्रति है।
(२)	(ना)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति संवत् १८८० की लिखी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की है।
(३)	(स)	यह भी सभा की प्रति है। यह संवत् १९१६ की लिखी हुई है।
(४)	(ल)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति लखनऊ-निवासी स्व० श्रीयुत लाला श्यामसुंदरदास जी अग्रवाल वैश्य, मशकगंज के पास है। यह संवत् १८६६ ज्येष्ठ शुक्ल ५ बृहस्पतिवार को मोहन रंगारांम जी के पठनार्थ लिखी गई। संपादन-कार्य में इस प्रति से अधिक सहायता नहीं मिली। केवल उसके अधिक पदों का संग्रह मात्र ही किया जा सका है।
(५)	(श)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति जिला शाहजहाँपुर, ग्राम पवायाँ के प० लालमणि जी मिश्र, वैद्य की है। इस प्रति से संपादन में अधिक सहायता नहीं मिली। केवल अधिक पद ही लिखे जा सके। इसके पश्चात् पुस्तक लौटा देनी पड़ी।

प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण
(६)	(का)	यह पत्राकार हस्तलिखित प्रति 'काल्पीकर' राज्य पुस्तकालय की है। कुँवर व्रजेशसिंह के द्वारा प्राप्त हुई है। यह प्रति संवत १८८६ मे लिखी गई।
(७)	(वृ)	यह वृंदाननवाली प्रति संवत १८१३ में लिपिबद्ध हुई।
(८)	(ना) २	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की है। यह संवत १९०६ में राजा सूबासिंह के पढ़ने के लिये लिखी गई थी।
(९)	(के)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति श्रीयुक्त बाबू केशवदास शाह, रईस, काशी की है। यह सं० १७५३ में लिखी गई। इससे अधिक प्राचीन प्रति अब तक देखने में नही आई। यह प्रति कुछ समय के लिये ही प्राप्त हुई थी। यथोचित उपयोग करके यह शीघ्र ही लौटा दी गई।
(१०)	(कृ)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति श्रीयुक्त राय कृष्णदास जी, रईस, बनारस की है। यह संवत् १९२६ में श्री गयाप्रसाद जी वैश्य की पत्नी के लिये प० नाथूराम जी गौड़ द्वारा लिखी गई।
(११)	(गो)	यह पत्राकार प्रति काशी के रईस बाबू गोकुलदास जी की है। इसके अक्षर बहुत सुंदर और पक्के है। कहीं भी वे अस्पष्ट नहीं हैं।
(१२)	(जा)	यह पुस्तकाकार प्रति काशी के जानीमल खानचंद जी की है। यह संवत् १९०२ में लिखी गई थी।
(१३)	(स) २	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की है।
(१४)	(क)	यह प्रति कलकत्ता लखनऊ दोनों स्थानों में सन् १८८६ की छपी हुई है।
(१५)	(जौ)	यह जौनपुर की पत्राकार हस्तलिखित प्रति प० गणेशविहारी जी (मिश्र-बधुओं में बड़े) द्वारा प्राप्त हुई है। यह संवत् १८५४ में लिखी गई थी।
(१६)	(कौ)	यह कंकरौली राज्य की पुस्तक पुराने देशी कागज पर लिखी हुई है। यह गोकुल के किन्हीं रण छोड़मल जी के लिये लिखी गई थी। इसके लेखक हैं गोकुलदास ब्राह्मण। उन्होंने इसे श्रावण शुक्ला पवित्रा ११ संवत् १९१२ को लिखा था।
(१७)	(पू)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति कलकत्ता के श्रीयुक्त बा० पूर्णचंद्र जी नाहर की है। इसके पाठ अच्छे हैं। अनेक बार इससे बहुमूल्य सहायता प्राप्त हुई है। इसके अक्षर कई प्रकार के लिखे गए हैं, पर सब सुपाठ्य हैं।
(१८)	(रा)	यह हस्तलिखित पुस्तक दरियाबाद के प्रसिद्ध रईस श्रीयुक्त राय राजेश्वरबली जी की है। यह फारसी लिपि में लिखी गई है। इसकी लिखावट सुंदर है। इसमें नीचे-ऊपर नुकतों का प्राय अभाव है। इससे इसके पढ़ने में कठिनाई पड़ती है, परंतु इसके कारण पाठ-निर्धारण में बड़ी सहायता प्राप्त हुई है। ऐसे समय में जब कि हिंदी की सभी प्रतियों के पाठों से निराश होना पड़ा है, इसने शुद्ध पाठ बताकर पुनः आशा प्रदान की है। यह संवत् १८८२ में लिपिबद्ध हुई।

प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण	प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण
(१६)	(श्या)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति आरंभ में राय बहादुर श्यामसुंदरदास जी के द्वारा प्राप्त हुई थी, इसलिये यह उन्हीं के नाम से इस संस्करण में व्यक्त की गई है। अब यह सभा की संपत्ति है।			संस्करण में ग्रहण किए गए हैं। इस विशालकाय ग्रंथ के संग्रहकार प्रसिद्ध संगीतज्ञ 'रागसागर' श्री कृष्णानंद व्यास महोदय हैं। इसका प्रकाशन बंगीय साहित्य-परिषद् की ओर से नागरी और बँगला दोनों लिपियों में किया गया है।
(२०)		"राग-कल्पद्रुम" नामक इस ग्रंथ में, जो ३ बड़े भागों में समाप्त हुआ है, महाकवि सूरदास के बहुत से पद प्राप्त होते हैं। इनमें कुछ ऐसे भी हैं जो अन्य ग्रंथों में नहीं मिलते। उनमें से जो प्रामाणिक समझे गए वे इस		◡	यह चिह्न जिन दीर्घ अक्षरों के नीचे हो उन्हें ह्रस्व की भाँति पढ़ना चाहिए।

Printed by A Bose,
at The Indian Press, Ltd Benares-Branch

प्रथम स्कंध

विनय

मंगलाचरण

* राग बिलावल

चरन-कमल बंदौं हरि-राइ[1] ।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे[2] कौं सब कछु दरसाइ ।
बहिरो सुनै, गूँग[3] पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराइ ।
सूरदास स्वामी करुनामय, बार बार[4] बंदौं तिहिं पाइ ॥१॥

सगुणोपासना

* राग कान्हरो

अबिगत-गति कछु कहत न आवै ।
ज्यौं गूँगे मीठे फल कौ रस अंतरगत ही भावै ।
परम स्वाद सबही सु[5] निरंतर अमित तोष उपजावै ।
मन-बानी कौं[6] अगम-अगोचर, सो जानै जो पावै ।
रूप-रेख-गुन[7]-जाति-जुगति-बिनु निरालंब[8] कित धावै ।
सब बिधि अगम बिचारहिं तातैं सूर सगुन[9]-पद गावै ॥२॥

---

* (क) धनाश्री, कल्याण ।

(१) राई, इसी भाँति अन्य चरणों में दरसाई, धराई, पाई —१, १४ । राय, इसी भाँति अन्य चरणों में दरसाय, धराय, पाय— ३, १६ । (२) अँधरे—१४ । आँधे—१६ । (३) मूक १ । (४) बारबार नमो पद जाई—१४ । (ना) अल्हैया

(५) जु—१, १६ । सौ—२, ३, ८, १४ । (६) तैं—३ । (७) जस —२, । (८) निरालब मन चकृत धावै—१ । (९) सूर सगुन लीला-पद गाव—१, ६, ८ । सूर सगुन लीला विधि गावै—१६ ।

भक्त-वत्सलता * राग मारू

। वासुदेव की बडी बडाई ।

जगत-पिता, जगदीस, जगत-गुरु, निज[1] भक्तनि की सहत ढिठाई ।
भृगु को चरन राखि[2] उर ऊपर[3], बोले बचन सकल-सुखदाई ।
सिव-बिरंचि मारन कौं धाए, यह[4] गति काहू देव न पाई ।
बिनु बदलैं उपकार करत हैं, स्वारथ बिना करत मित्राई ।
रावन अरि कौ अनुज बिभीषन, ताकौं मिले भरत की नाईं ।
बकी कपट करि मारन आई, सो हरि जू बैकुंठ पठाई ।
बिनु दीन्हैं ही देत सूर-प्रभु[5], ऐसे[6] हैं जदुनाथ गुसाईं ॥३॥

* राग धनाश्री

करनी करुना-सिंधु की, मुख[7] कहत न आवै ।
कपट हेत परसैं बकी, जननी-गति पावै ।
बेद-उपनिषद जासु[8] कौं, निरगुनहिं बतावै ।
सोइ सगुन ह्वै नंद की दाँवरी बँधावै ।
उग्रसेन की आपदा सुनि सुनि बिलखावै ।
कंस मारि, राजा करै[9], आपहु[10] सिर नावै ।
जरासंध बंदी कटैं नृप-कुल जस गावै ।
अस्मय[11]-तन गौतम-तिया कौ साप नसावै ।

---

* (ना) बिहागरा । (ई) कान्हरा ।

। यह पद (क) में नहीं है ।

(१) अपुन भक्त की—१ । अपने जन की ६, ८ । (२) आनि—३, ६, ८ । (३) अतर—३, ६, ८ । (४) सो—१, १६, १९ । (५) कहि—६, ८ । (६) ऐसी ह्वै जदुपति ठकुराई—२ । (ना) अलहैया बिलावल । (क) बिलावल । (७) कहु—१, ३, १६, १९ । (८) जस कहै—१, २, ३ । (९) किया—१, २, ३, ४, ५, ८, १४, १६, १८ । (१०) आपुन—१, २, ३, १९ । (११) असमय बन निगले पिता ताको साप नसावै—१, १९ ।

लच्छा-गृह[1] तें काढि कैं पांडव गृह ल्यावै।
जैसैं गैया बच्छ कैं सुमिरत उठि धावै।
वरुन-पास तें ब्रजपतिहिं छन माहिं छुडावै।
दुखित गयंदहिं जानि कै आपुन उठि धावै।
कलि मैं नामा प्रगट[2] ताकी छानि छवावै।
सूरदास की बीनती कोउ[3] ले पहुँचावै ॥४॥

राग मारू

†ऐसी[4] को करी अरु भक्त काजें।
जैसी[5] जगदीस जिय धरी लाजें॥

हिरनकस्यप बढ़्यो उदय अरु अस्त लौं, हटी[6] प्रहलाद चित चरन लायो।
भीर के परे तें धीर सबहिनि तजी, खंभ तें प्रगट ह्वै जन छुडायो।
ग्रस्यो गज ग्राह लै चल्यो पाताल कौं, काल कें त्रास मुख नाम आयो।
छाँडि सुखधाम अरु गरुड़ तजि साँवरो पवन के गवन तें अधिक[7] धायो।
कोपि कौरव गहे केस जब सभा मैं, पांडु की बधू जस नेंकु[8] गायो।
लाज के साज मैं हुती ज्यों द्रौपदी, बढ़्यो तन-चीर नहिं अंत पायो।
रोर[9] कै जोर तैं सोर घरनी कियो, चल्यो द्विज द्वारिका-द्वार[10] ठाढो।
जोरि अंजलि मिले, छोरि तंदुल लए, इंद्र के बिभव तें अधिक बाढो।

---

① उधरे सोक-समुद्र तें। ② प्रगटिया—१, २, १८, १९। प्रगट भयो ७, ९। ③ को—२, ८।
† यह पद (शा, क) में नहीं है।
④ ऐसी कौन करी है (करिहैं) और भक्त काजै—१, २, १६, १८। ⑤ जैसी धरी जगदीस जिय माहिं लाजै २, ३, ६, १६, १८। जैसे धरे (धरैं) जगदीस जिय माहिं लाजें—१, १९। ⑥ ग्रस्या १, ३, १६, १८, १९। ⑦ बेगि —६, ८, १८। ⑧ बेग—३। ⑨ महादुख दीन हो तबै घरनी कह्या—२। ⑩ जाइ—१, ३, १९।

सक्र[1] को दान-बलि-मान ग्वारनि लियौ, गह्यौ गिरि पानि, जस जगत छायौ ।
यहै जिय जानि कै अघ भव त्रास तैं, सूर कामी-कुटिल सरन आयौ ॥५॥

राग रामकली

† का न कियौ जन-हित जदुराई ।
प्रथम कह्यौ जो बचन दयारत, तिहिं बस गोकुल गाइ चराई ।
भक्तवछल बपु धरि नरकेहरि, दनुज दह्यौ, उर दरि, सुरसाँई ।
बलि बल देखि, अदिति-सुत-कारन, त्रिपद ब्याज[2] तिहुँ पुर फिरि आई† ।
एहि थर बनी क्रीडा गज-मोचन और अनंत कथा स्रुति गाई ।
सूर दीन प्रभु-प्रगट-बिरद सुनि अजहुँ दयाल पतत[3] सिर नाई ॥६॥

* राग रामकली

जहाँ जहाँ सुमिरे हरि जिहिं बिधि, तहँ तैसें उठि धाए (हो) ।
दीन-बंधु हरि, भक्त-कृपानिधि, बेद-पुरानन गाए (हो) ।
सुत कुबेर के मत्त-मगन भए, बिषै-रस[4] नैननि छाए (हो) ।
मुनि सराप तैं भए जमलतरु, तिन्ह हित आपु बँधाए (हो) ।
पट[5] कुचैल, दुरबल द्विज देखत, ताके तंदुल खाए (हो) ।
संपति दै बाकी पतिनी कौं, मन-अभिलाष पुराए (हो) ।

---

(१) सक्र को दान बिन मान ग्वालिन किया —२ ३ ८ ।

† यह पद केवल (बे, बृ, ना) में है ।

(२) भियदुपलव —१ । त्रिपद पल्लव—१६ ।

‡ इस पंक्ति का पाठ स्पष्ट सार्थक नहीं हो रहा था । प्राप्त प्रतियों के 'भियदुपलव' अथवा 'त्रिपद-पल्लव' पाठ निरर्थक या सभंगछंद होने के कारण ग्रहण नहीं किए गए । 'त्रिपदपल्लव' के स्थान पर 'त्रिपदपल्लव' रखने से छंद का संगति ना हो जाती थी किन्तु अर्थ अधिक क्लिष्ट और निर्बल हो पडता था । अत श्रीमद्भागवत से सहायता लेकर इस संस्करण में 'त्रिपदव्याज' पाठ रखा गया है । (महीं सर्वा हृता दृष्ट्वा त्रिपदव्याजयाचया)—भागवत (८, २१, ६) । यों भी महाकवि पर भागवत का ऋण सब को मान्य है ।

(३) पतित—१,१६ ।

* (ना, कां) आसावरी । (क) बिलावल ।

(४) बिषै-स्वाद मन छाए (हो) —२ । सुत कुबेर के मगन भए बिषयारस नैननि छाए (हो)—३ ।

(५) वस्त्र कुचैल दीन—१ । वस्त्र कुचिल दुर्बल—३,६,८,१६, १८ ।

जब गज गह्यो ग्राह जल-भीतर, तब हरि कौं उर ध्याए (हो)।
गरुड छाँडि, आतुर ह्वै धाए, सो ततकाल छुडाए (हो)।
कलानिधान, सकल-गुन-सागर, गुरु धौं कहा पढाए (हो)।
तिहिं उपकार मृतक सुत जाँचे, सो जमपुर तैं ल्याए (हो)।
तुम मोसे अपराधी माधव, केतिक स्वर्ग[1] पठाए (हो)।
सूरदास-प्रभु भक्त-वछल तुम, पावन-नाम कहाए (हो) ॥७॥

* राग धनाश्री

प्रभु[2] कौ देखौ एक सुभाइ।
अति-गंभीर-उदार-उदधि हरि, जान-सिरोमनि राइ।
तिनका[3] सौं अपने जन कौ गुन मानत मेरु-समान।
सकुचि गनत अपराध-समुद्रहिं बूँद-तुल्य भगवान।
बदन-प्रसन्न-कमल सनमुख ह्वै देखत हौं हरि जैसें।
बिमुख भए अकृपा न निमिषहूँ, फिरि चितयौं तौ तैसें!
भक्त-बिरह-कातर करुनामय, डोलत पाछैं लागे।
सूरदास ऐसे स्वामी कौं देहिं पीठि सो अभागे ॥८॥

* राग नट

हरि सौं ठाकुर और न जन कौं।
जिहिं जिहिं बिधि सेवक सुख पावै, तिहिं बिधि राखत मन[4] कौं।

---

(१) मुक्ति—१, ६, ८।
* (ना) नट। (क) सारग। (कां) कान्हरा।
(२) देखा हरि का एक सुभाव—२, १४। देखा देखा एक सुभाइ—६, ८, १६, १८, १९। (३) तिनका इतनी सेवा का फल—२। राई जितनी सेवा को फल—१४, १६।
(ना) कान्हरो।
† यह पद (क) में नहीं है।
(४) तन—२, ३, १८। तिन—१९।

भूख[1] भए भोजन जु उदर कौं, तृषा तोय, पट तन कौं।
लग्यौ[2] फिरत सुरभी ज्यौं सुत-सँग, ओचट गुनि गृह बन कौं।
परम उदार, चतुर-चितामनि, कोटि कुबेर निधन कौं।
राखत हैं जन की परतिज्ञा, हाथ पसारत कन कौं।
संकट परै[3] तुरत उठि धावत, परम सुभट निज पन कौं।
कोटिक करै एक नहिं मानै सूर महा कृतघन कौं ॥९॥

* राग धनाश्री

हरि सौं[4] मीत न देख्यौं[5] कोई।
विपति[6]-काल सुमिरत, तिहिं औसर आनि तिरीछौ[7] हाई।
ग्राह गहे गजपति मुकरायौ, हाथ चक्र लै धायौ।
तजि बैकुंठ, गरुड तजि, श्री तजि[8], निकट दास कै आयौ।
दुर्वासा कौ साप निवार्‌यौ, अंबरीष-पति राखी।
ब्रह्मलोक-परजंत फिर्‌यौ तहँ देव-मुनी-जन साखी।
लाखागृह तैं जरत पांडु-सुत बुधि[9]-बल नाथ, उबारे।
सूरदास-प्रभु अपने जन के नाना त्रास निवारे ॥१०॥

* राग धनाश्री

राम[10] भक्तवत्सल निज बानौं।
जाति, गोत, कुल, नाम, गनत नहिं, रंक होइ कै[11] रानौं।

---

(१) भूखैं बहु—१, २, ६ ८, १७, १८ १६। (२) लग्या फिरत सुरभी ज्यौं सुत-सेंग उचित गमन गृह बन का—१, १६। लग्या फिरत सुरभी के सुत ज्या सेंग उचित गृह बन कौं—२। लग्या फिरत सुरभी के सुत ज्यौं सेंग उचट गृह बन कौं—३।

* (ना) सोरठ।

(३) देखौ—१, २। (४) अत-काल—१, २, ७, ६, १६। (५) प्रतीच्छा—१, ३, १६। (६) पति—२, ३। (७) जादोनाथ—६, ८।

(ना) कान्हरा।

† यह पद (क, श्या) में नहीं है।

(८) कृत्न—१६। (९) की—५, १४।

सिव-ब्रह्मादिक कौन जाति प्रभु, हौं अजान नहिं जानौं।
हमता[1] जहाँ तहाँ प्रभु नाहीं, सो हमता क्यौं मानौं?
प्रगट खभ तें दए दिखाई, जद्यपि कुल कौ दानौ।
रघुकुल राघव कृस्न सदा ही गोकुल कीन्हौं थानौ।
बरनि न जाइ भक्त[2] की महिमा, बारंबार बखानौं।
ध्रुव रजपूत, बिदुर दासी-सुत, कौन[3] कौन अरगानौ।
जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ, भक्तनि-हाथ बिकानौ।
राजसूय में चरन पखारे स्याम लिए[4] कर पानौ।
रसना एक, अनेक स्याम-गुन, कहँ लगि करौं बखानौ!
सूरदास-प्रभु की महिमा अति, साखी बेद-पुरानौ ॥११॥

* राग बिलावल

काहू[5] के कुल तन न बिचारत।

अबिगत की गति कहि[6] न परति है, ब्याध-अजामिल तारत।
कौन जाति अरु पाँति बिदुर की, ताही कें पग धारत।
भोजन करत माँगि घर उनकें, राज-मान-मद टारत।
ऐसे[7] जनम-करम के ओछे, ओछनि हूँ ब्यौहारत।
यहैं सुभाव सूर के प्रभु कौ, भक्त-बछल-प्रन पारत ॥१२॥

---

(१) ममता—३। मिथ्या—६, ८। (२) भजन—१, २, १६। (३) कौरव का अरगाना—२। कान कान गुन गानो—३। (४) सबन गुर माना—६, ८।

* (ना) कान्हरो। (क) धनाश्री।

(५) काहू का कुल नाहिं बिचारत—५, १४, १६। (६) कहो कहा लौं—६, ८। (७) ऐसे जन्म करम के ओछे ओछे ही अनुसारत—१। ओछि जाति निज गृह कुल ओछे ओछे ही ब्याहारत—३।

*राग सारंग

गोबिंद प्रीति सबनि की मानत ।
जिहिं जिहिं भाइ करत जन सेवा, अंतर[1] की गति जानत ।
सबरी[2] कटुक बेर तजि, मीठे चाखि, गोद भरि ल्याई ।
जूठनि की कछु संक न मानी, भच्छ किए सत-भाई ।
संतत[3] भक्त-मीत हितकारी स्याम बिदुर कैं आए ।
प्रेम[4]-बिकल, अति आनँद उर धरि, कदली-छिकुला खाए ।
कौरव-काज चले रिषि सापन, साक-पत्र सु अघाए ।
सूरदास करुना-निधान प्रभु, जुग जुग भक्त बढाए ॥१३॥

*राग रामकली

सरन गए कों[5] को न उबारयौ ।
जब जब भीर परी संतनि[6] कौं, चक्र सुदरसन तहाँ सँभारयौ ।
भयौ[7] प्रसाद जु अंबरीष कौं, दुरबासा को क्रोध निवारयौ ।
ग्वालनि हेत धरयौ गोबर्धन, प्रगट इंद्र कौ गर्व प्रहारयौ ।
†कृपा करी प्रहलाद भक्त पर, खंभ फारि हिरनाकुस मारयौ ।
†नरहरि रूप धर्‌यौ करुनाकर, छिनक माहिं उर नखनि बिदारयौ ।

---

*(ना) बिहागरो ।

(१) अंतरगत की—१, १४, १६, १८, १९ । अंतरगति ही जानत—६, ८ । (२) बेर चाखि कटु तजि ले मीठे भोलिनि दीन्हे जाई २, ३, १४, १६, १८ । (३) संतनि—१ । सुनियत—२ । (४) अति रस बाढ़ा (बाढी) प्रीति निरंतर साग मगन ह्वै खाए—१, १६, १९ । अंतरगत की प्रीति परस्पर साग मगन ह्वै खाए—३ । प्रेम-बिकल बिदुर अर्पन प्रभु कदली-छिलका खाए—६, ८, १४, १८ ।

(ना) आसावरी ।

† यह पद (क) में नहीं है ।

(५) काकौ—३ । (६) भक्तनि—२ । (७) महा प्रसाद भया—३, ६ ।

‡ ये दो चरण (ना, कं, रा) में नहीं हैं तथा (वे, स, का, श्या) में इनका पाठ यह है—"कृपा करी प्रहलाद भक्त कों, खंभ फारि उर नखहिं बिदार्‌यौ । नरहरि रूप धर्‌यौ करुनाकर छिनक माहिं हिरनाकुस मार्‌यौ ॥" (ना) में यह पाठ है—"कृपा करी प्रहलाद भक्त पर हरनाकुस को उदर बिदारयौ । नरहरि रूप धरयौ करुनाकर छिनक माहिं हरनाकुस मारयौ ॥" इन्हीं के आधार पर उपर्युक्त पाठ निर्धारित किया गया है ।

ग्राह ग्रसत गज कौं जल बूडत, नाम लेत वाको दुख टार्‌यो ।
सूर स्याम बिनु और करै को, रंग-भूमि मैं कंस पछार्‌यो ॥१४॥

* राग केदारो

† जन की और कौन पति राखै ?

जाति-पाँति-कुल-कानि न मानत, बेद-पुरानानि साखै ।
जिहिं कुल राज द्वारिका कीन्हो, सो[1] कुल साप तैं नास्यो ।
सोइ मुनि अंबरीष कैं कारन तीनि भुवन भ्रमि त्रास्यो ।
जाको चरनोदक सिव सिर धरि, तीनि लोक हितकारी ।
सोइ[2] प्रभु पांडु-सुतनि के कारन[3] निज कर चरन पखारी ।
बारह बरस बसुदेव-देवकिहिं कंस महा दुख[4] दीन्हो ।
तिन प्रभु प्रहलादहिं सुमिरत ही नरहरि-रूप जु कीन्हो ।
जग जानत जदुनाथ, जिते[5] जन निज-भुज-स्रम-सुख पायो !
ऐसो को जु[6] न सरन गहे[7] तैं कहत सूर उतरायो[8] ॥१५॥

राग केदारो

‡ जब जब दीननि कठिन परी ।

जानत हौं, कर्मनामय जन कौं तब तब सुगम करी ।
सभा मँझार दुष्ट दुस्सासन द्रौपदि आनि धरी ।
सुमिरत[9] पट कौ कोट बढ्‌यो तब, दुख-सागर उबरी ।

(ना) बिहागरो ।

† यह पद (क) में नहीं है ।

(१) सो कुल सापत—१ । (२) तिन—१, २, ३, ८ । (३) स्वारथ—८। (४) डर—१, ३, १६ । (५) जननि जिन—८ । (६) जो—१, २, ३ । न जु—५ । (७) गए—३ । (८) इतराया—१ । उबराया—३, १६ । उनराया—८ ।

‡ यह पद केवल (वे) में है । अत इसके परिशोधन में अन्य प्रतियों की सहायता नहीं मिली ।

(९) हरि सुमिरत पट कोट उठे तब दुख-सागर उबरी ।

ब्रह्म-बाण तैं गर्भ उबार्‌यौ, टेरत जरी जरी।
बिपति-काल पांडव-बधु बन मैं राखी स्याम ढरी।
करि भोजन अवसेस जज्ञ कौ[1] त्रिभुवन-भूख हरी।
पाइ[2] पियादे धाइ ग्राह सौं लीन्हौ राखि करी।
तब तब रच्छा करी भगत पर जब जब बिपति परी।
महा मोह मैं पर्‌यौ सूर प्रभु, काहैं सुधि बिसरी? ॥१६॥

* राग रामकली

और न कान्हहिं जन की पीर।
जब जब दीन दुखी भयौ, तब तब कृपा करी बलबीर।
गज बल-हीन बिलोकि दसौ दिसि, तब हरि-सरन पर्‌यौ।
करुनासिंधु, दयाल, दरस दै, सब संताप हर्‌यौ।
गोपी-ग्वाल-गाय-गोसुत-हित सात दिवस गिरि लीन्ह्यौ।
मागध हत्यौ, मुक्त नृप कीन्हे, मृतक बिप्र-सुत दीन्ह्यौ।
श्री नृसिंह बपु धर्‌यौ असुर हति, भक्त-बचन प्रतिपार्‌यौ।
सुमिरत नाम, द्रुपद-तनया कौ पट अनेक बिस्तार्‌यौ।
मुनि-मद मेटि दास-ब्रत राख्यौ, अंबरीष-हितकारी।
लाख-गृह तैं, सत्रु-सैन तैं, पांडव-बिपति निवारी।
बरुन-पास ब्रजपति मुकरायौ, दावानल-दुख टार्‌यौ।
गृह आने बसुदेव-देवकी, कंस महा खल[3] मार्‌यौ।

---

① प्रभु—१, १७। ② पाय राखि धरी—१। (क) सोरठ।
प्रमाद भक्तन पन राख्यौ गज ग्रा (ना) नट नारायनी। ③ भट—३।

सो श्रीपति जुग[1] जुग सुमिरन-बस, वेद[2] विमल जस गावै।
असरन-सरन सूर जाँचत है, को अब[3] सुरति करावै? ॥१७॥

*राग केदारो

| ठकुरायत[4] गिरिधर[5] की साँची।

कौरव जीति जुधिष्ठिर-राजा, कीरति तिहूँ[6] लोक में माँची।
ब्रह्म-रुद्र डर डरत काल कैं, काल डरत भृ[7]-भँग की आँची।
रावन सौ नृप[8] जात न जान्यो, माया विषम सीस पर[9] नाची।
गुरु-सुत आनि दिए जमपुर तैं, विप्र सुदामा कियो अजाची।
दुस्सासन कटि[10]-बसन छुडावत, सुमिरत नाम द्रौपदी बाँची।
हरि-चरनारबिंद तजि लागत अनत कहूँ, तिनकी मति काँची।
सूरदास भगवंत भजत जे[11], तिनकी लीक चहूँ जुग खाँची ॥१८॥

राग मलार

‡स्याम गरीबनि हूँ[12] के गाहक।

दीनानाथ हमारे ठाकुर, साँचे[13] प्रीति-निबाहक।
कहा बिदुर की जाति-पाँति, कुल, प्रेम-प्रीति के लाहक।
कह पांडव कैं घर ठकुराई? अरजुन के रथ-बाहक!
कहा सुदामा कैं धन हो? तौ सत्य-प्रीति के चाहक।
सूरदास सठ[14], तातैं हरि भजि आरत के दुख-दाहक ॥१९॥

---

① श्रीपति जुग जुग सुमिरन क बस—१। ② देव—१, १६। ③ जो—१६। * (ना) कान्हरा। | यह पद (क) में नहीं है। ④ ठकुराई—८। ⑤ गिरिधर जू की—२, १५, १६। ⑥ तीनि—१, ३, ६, ८, १६। ⑦ प्रभु-इच्छा-आची—२। ⑧ रिपु—८। ⑨ धरि—१, २, ३, ६, १६। ⑩ कर—१, ६, ८, १६। ⑪ नित—२, ६। ‡ यह पद केवल (ना, स, ल, की) में है। ⑫ ही—३, १६। ⑬ साँच बिरद कहाइक—२। साची—३। ⑭ सब भाँतिनि—३।

राग कान्हरौ

† जैसैं तुम गज कौ पाउँ छुडायौ ।
अपने जन कौं दुखित जानि कै पाउँ पियादे धायौ ।
जहँ जहँ गाढ परी[1] भक्तनि कौं, तहँ तहँ आपु जनायौ[2] ।
भक्ति-हेत प्रहलाद उबार्‌यौ, द्रौपदि-चीर बढायौ ।
प्रीति जानि हरि गए विदुर कैं, नामदेव-घर छायौ ।
सूरदास द्विज दीन सुदामा, तिहिं दारिद्र नसायौ ॥२०॥

* राग रामकली

‡ नाथ अनाथनि ही के संगी ।
दीनदयाल, परम[3] करुनामय, जन-हित हरि बहु-रंगी ।
§ पारथ-तिय कुरुराज सभा मैं बोलि करन चहैं नंगी ।
§ स्रवन सुनत करुना-सरिता भए, बढयौ बसन उमंगी ।
¶ कहा विदुर की जाति बरन है, आइ साग लियौ मंगी ।
कहा कूबरी सील[4]-रूप-गुन ? बस भए स्याम त्रिभंगी ।
ग्राह गह्यौ गज बल बिनु ब्याकुल, बिकल गात, गति लंगी ॥ ।
धाइ चक्र लै ताहि उबार्‌यौ, मार्‌यौ ग्राह बिहंगी ।

---

† यह पद केवल (ना, कां) में है ।

(१) परत – २, १६ । (२) जतायौ—१६ ।

* (कां) विलावल ।

‡ यह पद (स, क, कां, पू) में है, पर इसका पाठ किसी प्रति में शुद्ध नहीं है ।

(३) कहत—३ । दुखित—१४ १६, १७ ।

§ ये दोनों चरण (स) में नहीं हैं और (क, पू) में इनका पाठ भ्रष्ट है । (कां) की सहायता से शुद्ध करके यह पाठ रखा गया है ।

¶ यह चरण (क, पू) में नहीं है ।

(४) रूप-रासि-कर—३ ।

‖ इस पंक्ति के पश्चात् (क) में यह एक चरण अतिरिक्त है—"भक्तन बछल कृपानिधि केसव प्रेमिन के प्रभु संगी ।"

कहा कहौं हरि केतिक तारे, पावन-पद परतंगी।
सूरदास यह विरद स्रवन सुनि, गरजत अधम अनंगी॥२१॥

† जे जन सरन भजे बनवारी।

ते ते राखि लिए जग-जीवन, जहँ जहँ विपति परी तहँ टारी।
संकट तैं प्रहलाद उधारचौ, हिरनाकसिप-उदर नख फारी।
अंबर हरत द्रुपद-तनया की दुष्ट-सभा मधि लाज सम्हारी।
राख्यौ गोकुल बहुत विघन तैं, कर-नख पर गोबर्धन धारी।
सूरदास प्रभु सब सुख-सागर, दीनानाथ, मुकुंद, मुरारी॥२२॥

‡ पारथ के सारथि हरि आप भए हैं।
भक्त-बछल नाम निगम गाइ गए हैं।
बाएँ कर वाजि[1]-बाग दाहिन हैं बैठे।
हाँकत हरि हाँक देत गरजत ज्यौं ऐंठे।
छाता लौं छाँह किए सोभित हरि-छाती।
लागन नहिं देत कहूँ समर-आँच ताती।
करन-मेघ बान-बृंद भादौं-झरि लायो।
जित जित मन अर्जुन को तितहिं रथ चलायो।
कौरो-दल नासि नासि कीन्हौं जन-भायो।
सरन गए राखि लेत सूर सुजस गायो॥२३॥

---

† यह पद केवल (स, ल) में ह।

‡ यह पद केवल (स, ल) में है।

(१) नाग बाज—३।

* राग परज

† स्याम-भजन-बिनु कोन बडाई ?

बल, बिद्या, धन, धाम, रूप, गुन और[1] सकल मिथ्या सौंजाई ।
अंबरीष, प्रहलाद, नृपति बलि, महा ऊँच पदवी तिन पाई ।
गहि सारँग, रन रावन जीत्यौ, लंक बिभीषन फिरी[2] दुहाई ।
मानी हार बिमुख दुरजोधन, जाके जोधा हे सौ भाई ।
पांडव पाँच भजे प्रभु-चरननि, रनहिँ जिताए हैं जदुराई ।
गज[3]-रवनि सुमिरे पति-कारन, असुर-बंदि तें[4] दिए छुडाई ।
अति आनंद सूर तिहिँ औसर, कीरति निगम कोटि मुख गाई ॥२४॥

राग बिहागरौ

‡ कहा गुन बरनौं स्याम, तिहारे ।
कुबिजा, बिदुर, दीन द्विज, गनिका[5], सबके काज सँवारे[6] ।
जज्ञ-भाग[7] नहिँ लियौ हेत सौं रिषिपति पतित बिचारे ।
भिल्लिनि के फल खाए[8] भाव सौं खाटे-मीठे-खारे ।
कोमल कर गोवर्धन धारयौ जब[9] हुते नंद-दुलारे ।
दधि-मिस आपु बँधायो दाँवरि, सुत कुबेर के तारे ।
गरुड छाँडि प्रभु पायँ पियादे गज-कारन पग धारे ।
अब मोसौं अलसात जात हौ अधम-उधारनहारे !

---

* (क्रौं) सारग ।

† यह पद केवल (शा, १८) में है ।

(१) और सकल सहजाद—५ । अरु कुल शील सकल बहि जाइ—१६ । (२) आनि दिवाई—१६ । (३) चढे विमान मित्र सुग्रीवा असुर मारि जब सिया छुडाई—५ । (४) नृप सकल—१६ ।

‡ यह पद केवल (शा) में है ।

(५) के हित । (६) सँभारे । (७) जज्ञ भोग । (८) खाइ । (९) जबहीं तें ।

कहँ न सहाय करी भक्तनि की, पांडव जरत उबारे।
स्र परी[1] जहँ विपति दीन पर, तहाँ विघन तुम टारे ॥२५॥

राग सारंग

† भक्तनि हित तुम कहा न कियौ ?

गर्भ परीच्छित-रच्छा कीन्ही, अंबरीष-व्रत राखि लियौ।
जन प्रहलाद-प्रतिज्ञा पुरई, सखा विप्र-दारिद्र हयौ।
अंबर हरत द्रौपदी राखी, ब्रह्म-इंद्र कौ मान नयौ।
पांडव कौ दूतत्व कियौ पुनि, उग्रसेन कौं राज दयौ।
राखी पैज भक्त भीषम की, पारथ कौ सारथी भयौ।
दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के, नारद-साप निवृत्त कियौ।
करि बल-बिगत उबारि दुष्ट तैं, ग्राह ग्रसत बैकुंठ दियौ।
गौतम की पतिनी तुम तारी, देव,[2] दवानल कौं अँचयौ।
सूरदास-प्रभु भक्त-वछल हरि, बलि-द्वारैं दरबान भयौ ॥२६॥

* राग धनाश्री

‡ ऐसेहिं जनम बहुत बौरायो।

बिमुख भयौ हरि-चरन-कमल तजि, मन संतोष न आयौ।
जब जब प्रगट भयौ जल थल मैं, तब तब बहु बपु धारे।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह-बस, अनहिं किए अघ भारे।

---

① दास।

† यह पद केवल (शा, का) में है। दोनों के पाठ कुछ अस्तव्यस्त से हैं। अतएव दोनों का मिलान करके उपर्युक्त पाठ संशोधित किया गया है।

②रानी जसोदा दूध पिया - १६।

* (का) ईमन।

‡ यह पद केवल (क, कां, पू) में है। इसके पाठ बड़े अस्तव्यस्त मिले। तीनों के पाठ मिलाकर एक पाठ निर्धारित करके रक्खा गया है। विस्तार-भय से पाठांतर नहीं दिए गए।

नृग, कपि, बिप्र, गीध, गनिका, गज, कंस-केसि-खल तारे।
अघ, बक, वृषभ, बकी, धेनुक हति, भव-जल-निधि तैं उबारे।
संखचूड, मुष्टिक, प्रलंब अरु तृनावर्त संहारे।
गज-चानूर हते, दव नास्यौ, व्याल मथ्यौ, भयहारे!
जन-दुख जानि, जमलद्रुम-भंजन, अति आतुर ह्वै धाए।
गिरि कर धारि इंद्र-मद मर्द्यौ, दासनि सुख उपजाए।
रिपु कच गहत द्रुपद-तनया जब सरन सरन कहि भाषी।
बढ़ै दुकूल-कोट अंबर लौं, सभा-माँझ पति राखी।
मृतक जिवाइ दिए गुरु के सुत, व्याध परम गति पाई।
नंद-बरुन-बंधन-भय-मोचन, सूर पतित सरनाई ॥२७॥

राग धनाश्री

| तातैं जानि भजे बनवारी। सरनागत[1] की ताप निवारी।
जन-प्रहलाद-प्रतिज्ञा पारी। हिरनकसिपु की देह बिदारी।
ध्रुवहिं अभै पद दियौ मुरारी। अंबरीष की दुर्गति टारी।
द्रुपद-सुता जब प्रगट पुकारी। गहत चीर हरि-नाम उचारी।
गज, गनिका, गौतम-तिय तारी। सूरदास सठ, सरन तुम्हारी ॥२८॥

राग धनाश्री

| ऐसे कान्ह[2] भक्त हितकारी।
जहाँ जहाँ जिहिं काल सम्हारे, तहँ तहँ त्रास निवारी।
धर्म-पुत्र जब जज्ञ उपायौ, द्विज मुख ह्वै पन लीन्हौं।
अस्व-निमित उत्तर दिसि कैं पथ गमन धनंजय कीन्हौं।

| यह पद केवल (क) में है।

(१) शरण आए।

‡ यह पद केवल (क) में है।

(२) भगवत।

अहिपति-सुता-सुवन सन्मुख ह्वै वचन कह्यौ इक हीनौ।
पारथ विमल वभ्रुवाहन कौं सीस-खिलौना दीनौ।
इतनी सुनत कुंति उठि धाई, बरषत लोचन नीर।
पुत्र-कबंध अंक भरि लीन्हौ, धरति न इक छिन धीर।
लै लै स्तोन हृदय लपटावति, चुंबति भुजा गँभीर।
त्यागति प्रान निरखि सायक धनु, गति-मति-बिकल-सरीर।
ठाढ़े भीम, नकुल, सहदेवऊ नृप सब कृष्न समेत।
पौढ़े कहा समर-सेज्या सुत, उठि किन उत्तर देत!
थकित भए कछु मंत्र न फुरई, कीने माह अचेत।
या रथ बैठि बंधु की गर्जहिँ पुरवै[1] को कुरुखेत?
काकौ बदन निहारि द्रौपदी दीन दुखी संभरिहैं?
काकी ध्वजा बैठि कपि किलकिहि, किहिँ भय दुरजन डरिहैं?
काके हित श्रीपति ह्याँ ऐहैं, संकट रच्छा करिहैं?
को कौरव-दल-सिंधु मथन करि या दुख पार उतरिहैं?
चिंता मानि, चितै अंतर-गति, नाग-लोक कौं धाए।
पारथ-सीस सौंधि अष्टाकुल, तब जदुनंदन ल्याए।
अमृत गिरा बहु बरषि सूर-प्रभु, भुज गहि पार्थ उठाए।
अस्त्र समेत बभ्रुवाहन लै, सुफल जज्ञ-हित आए ॥२६॥

राग गौरी

†मोहन के मुख ऊपर वारी।
देखत नैन सबै सुख उपजत, बार बार तातैं बलिहारी।

---

(१) पुरई।

† यह पद केवल (क) में है।

ब्रह्मा बाल बछरुवा हरि गयौ, सो ततछन सारिखे सँवारी।
कीन्हौं कोप इंद्र बरषारितु, लीला लाल गोबर्धन धारी।
राखी लाज समाज माहिँ जब, नाथ नाथ द्रौपदी पुकारी।
तीनि लोक के ताप-निवारन, सूर स्याम सेवक-सुखकारी ॥३०॥

* राग सोरठ

†गोबिँद गाढे[1] दिन के मीत।
गज अरु ब्रज प्रहलाद, द्रौपदी, सुमिरत ही निहर्चात।
लाखागृह पांडवनि उबारे, साक-पत्र मुख नाए।
अंबरीष-हित साप निवारे, व्याकुल चले पराए।
नृप-कन्या कौ व्रत प्रतिपार्‌यौ, कपट बेष इक धार्‌यौ।
तामैँ प्रगट भए श्रीपति जू, अरि-गन-गर्ब प्रहार्‌यौ।
कोटि छ्यानवे नृप-सेना सब जरासंध बँध छोरे।
ऐसैँ[2] जन परतिज्ञा राखत, जुद्ध प्रगट करि जोरे।
गुरु-बांधव-हित मिले सुदामहिँ, तंदुल पुनि पुनि जाँचत।
भगत-बिरह कौ अतिहीँ कादर, असुर-गर्ब-बल नासत॥।
संकट-हरन-चरन हरि प्रगटे, बेद बिदित जस गावै।
सूरदास ऐसे प्रभु तजि कै, घर घर देव मनावै! ॥३१॥

राग आसावरी—तिताला

‡प्रभु तेरौ बचन भरोसौ साँचौ।
पोषन भरन बिसंभर साहब, जो कलपै सो काँचौ।

---

* (पू) कान्हरो।
† यह पद कंवल (क, पू) में नहीं है।
(१) हैँ मन—१४। (२) भगवति विरह के अतहिँ पाए गर्भ असुरबल नाशो रे—१४।
॥ (क) में "ऐसै जन परतिज्ञा राखत" पंक्ति के बदले यह है—"प्रेम विकलता लखि गोपिनि की बिबिध रूप धरि नाचत।"
‡ यह पद "रागकल्पद्रुम" से संकलित किया गया है।

जब गजराज ग्राह सों अटक्यो, बली बहुत दुख पायो ।
नाम लेत ताही छिन हरि जू, गरुड़हि छाँडि छुड़ायो ।
दुस्सासन जब गही द्रौपदी, तब तिहि बसन बढायो ।
सूरदास प्रभु भक्तवछल हैं, चरन सरन हौं आयो ॥३२॥

राग सारंग

†हरै बलबीर बिना को पीर ?
सारँग-पति प्रगटे सारँग तैं, जानि दीन पर भीर ।
सारँग विकल भयो सारँग में, सारँग तुल्य सरीर ।
पर्‌यो काम सारँग-बासी सौं, राखि लियो बलबीर ।
सारँग इक सारँग ह्वै लोट्यो, सारँगही कैं तीर ।
सारँग[1]-पानि गए ता ऊपर, गए परीच्छत कीर ।
गहैं दुष्ट द्रुपदी कौ सारँग, नैननि बरसत नीर ।
सूरदास प्रभु अधिक कृपा तैं, सारँग भयो गँभीर ॥३३॥

*राग सारंग

हरि के जन सब तैं अधिकारी ।
ब्रह्मा महादेव तैं को बड, तिनकी[2] सेवा कछु न सुधारी ।
जाँचक पै जाँचक कह जाँचै ? जो जाँचै तौ रसना हारी ।
गनिका-सुत सोभा नहिं पावत, जाके[3] कुल कोऊ न पिता री ।

---

† यह पद केवल (का, ३) में है । इन दोनो प्रतियो में यह द्रौपदी के प्रसग में है । पर वस्तुत यह विनय का पद है । अत यह इस संस्करण में यहा रखा गया है ।

① सारँग पानि गए ता ऊपर भए परीच्छत कीर—६ ।

* (ना) कान्हरो ।

② तिनके सबक भ्रमत भिखारी—१, ५, ८, १६, १८, १६ । तिनहूँ सेवा कछु न सँभारा—२ । ③ जिन कुल कोऊ नहीं पितारी—१। जिनका कुल कोऊ न पता री—३ । जिहि को कुल काऊ न बतारी (नवनारी) ६, ८ । जिनके कुल में कोउ पिता री—१४ । सो मुख कायों कहे पिता री—१६ ।

तिनकी[1] साखि देखि, हिरनाकुस-रावन-कुटुंब-सहित भई ख्वारी ।
जन प्रहलाद प्रतिज्ञा पाली, कियो[2] विभीषन राजा भारी ।
सिला तरी जल माहिँ सेत बँधि, बलि वह चरन अहिल्या तारी ।
जे रघुनाथ-सरन तकि आए, तिनकी सकल आपदा टारी ।
जिहिँ गोविंद अचल ध्रुव राख्यो, रवि[3]-ससि किए प्रदच्छिनकारी ।
सूरदास भगवंत-भजन विनु धरनी जननि कोऊ कत मारी ? ॥३४॥

* राग सारंग

जापर दीनानाथ ढरै ।
साइ कुलीन, बड़ो सुंदर सोइ, जिहिँ पर कृपा करै ।
कौन[4] विभीषन रंक-निसाचर, हरि हँसि छत्र धरै ।
राजा कौन बड़ो रावन तेँ, गर्वहिँ-गर्व गरै[5] ।
रंकव[6] कौन सुदामाहूँ तेँ, आप समान करै ।
अधम[7] कौन है[8] अजामील तेँ, जम तहँ जात डरै ।
†कौन विरक्त अधिक नारद तेँ, निसि-दिन भ्रमत फिरै ।
जोगी कौन बड़ो संकर तेँ, ताकौँ काम छरै ।
अधिक कुरूप कौन कुबिजा तेँ, हरि पति पाइ तरै[9] ।
अधिक सुरूप कौन सीता तेँ, जनम बियोग भरै ।

---

(१) तारी—२ । तिहिँ की—८ । (२) विभीषन सु अजहुँ राजा री—१ । विभीषन रात अजहुँ राजा रा—३ । विभीषन अजहुँ राजा री—६, ८ । बीभीषन आहुक राजा रा—१४ । (३) रवि ससि दे प्रदच्छिना तारी—१, १६ । ग्रह दहिनावत दत ह तारी—२ । ग्रह दहनावत दत न भारी—३ । कर दहनावत देत दिहारी—६ । ग्रह दहनावर्ति देति बिसारी—१४ । ग्रह धावत देत दहारी—१८ ।

* (ना) सोरठ । (को) गारी ।

† यह चरण (वे, स, रा, श्या) में नहीँ है ।

(४) बस निसाचर भया विभीषन माथै छत्र धरे—२ । (५) जरै—२, ६, ८, १८ । (६) रकहु—६, ८ । (७) अधम सु (जु) कौन अजामिल इ तैँ—१, २, १६ । (८) अरु—६ ।

‡ यह चरण (का, ज्ञा, कां, रा) में नहीँ है ।

(९) बरै—१, २, १६ ।

†यह गति-मति जानै नहिँ कोऊ, किहिँ रस रसिक ढरै।
सूरदास भगवंत-भजन विनु फिरि[1] फिरि जठर जरै ॥३५॥

* राग सारंग

†जाकौं दीनानाथ निवाजैँ ।
भव-सागर मैँ कबहुँ न झूकै, अभय निसाने बाजैँ ।
विप्र सुदामा कौं निधि दीन्हौं, अर्जुन रन मैँ गाजैँ ।
लंका राज विभीषन राजैँ[2], ध्रुव आकास विराजैँ ।
मारि कंस-केसी मथुरा मैँ, मेट्यो सबै दुराजैँ ।
उग्रसेन-सिर छत्र धर्‌यौ है, दानव दस[3] दिसि भाजैँ ।
अबर गहत द्रोपदी राखी, पलटि अंध-सुत लाजैँ ।
सूरदास प्रभु महा भक्ति तैँ. जाति अजातिहिँ साजैँ ॥३६॥

* राग देवगंधार

जाकौं मनमोहन अंग करै ।
ताकौ केस खसै नहिँ सिर[4] तैँ, जो जग बैर परै ।
हिरनकसिपु-परहार थक्यौ, प्रहलाद न नैँकु डरै ।
अजहूँ लगि उत्तानपाद-सुत, अविचल[5] राज करै ।
राखी लाज द्रुपद-तनया की, कुरुपति चीर हरै ।
दुरजोधन कौ मान भंग करि बसन-प्रवाह भरै ।

---

‡ यह चरण केवल (ना) में है।

(१) अत कहा निसर—२ । (को) कान्हरो ।

| यह पद केवल (वे, का) में है।

(२) निश्चय—१६ । (३) दुहुं—१ । (ना) सोरठ।

(४) तन तैँ—२ । कबहूँ—१६ । (५) राज करत न मरै – १, १६ ।

† इसके पश्चात (वे, स, श्या) में ये दो चरण किंचित अंतर के साथ है—

विप्र भक्त नृग अंध कूप दियो बलि पढि वेद छरै । दीनदयाल, कृपाल, कृपानिधि, कायैं कहत परै ।

इंद्र मिलि सुरनि बलि-पास आए बहुरि, उन कह्यौ, कहौ किहिँ काज आए ?
त्रिदसपति समुद के मथन के बचन जो, सेा सकल ताहि कहिकै सुनाए ।
बलि कह्यौ, बिलँब अब नैंकु नहिँ कीजियै, मंदराचल अचल चले धाई ।
दोउ इक मंत्र ह्वै जाइ पहुँचे तहाँ, कह्यौ, अब लीजियै इहिँ उचाई ।
मंदराचल उपारत भयौ स्रम बहुत, बहुरि लै चलन कौँ जब उठायौ ।
सुर-असुर बहुत ता ठौरहीँ[1] मरि गए, दुहुनि कौ गर्व यौँ हरि नसायौ ।
तब दुहुँनि ध्यान भगवान कौ धरि कह्यौ, बिन तुम्हारी कृपा गिरि न जाई ।
बाम कर सौँ पकरि, गरुड़ पर राखि हरि, छीर कैँ जलधि तट धरचौ ल्याई ।
कह्यौ भगवान अब बासुकी ल्याइयै, जाइ तिन बासुकी सौँ सुनायौ ।
मानि भगवंत-आज्ञा सेा आयौ तहाँ, नेति करि अचल कौँ सिंधु नायौ ।
मंदराचल समुद माहिँ बूड़न लग्यौ, तब सबनि बहुरि अस्तुति सुनाई ।
कूर्म कौ रूप धरि, धरचौ गिरि पीठि पर, सुर-असुर सबनि कैँ मन बधाई ।
पूछ[2] कौँ तजि असुर दौरिकै मुख गह्यौ, सुरनि तब पूँछ की ओर लीन्ही ।
मथत भए छीन, तब बहुरि बिनती करी, श्रीमहाराज निज सक्ति दीन्ही ।
भयौ हलाहल प्रगट प्रथमहीँ मथत जब, रुद्र कैँ कंठ दियौ ताहि धारी ।
चंद्रमा बहुरि जब मथत आयौ निकसि, सेाउ करि कृपा दीन्हौ मुरारी ।
कामनाधेनु पुनि सप्तरिषि कौँ दई, लई उन बहुत मन हर्ष कीन्हे ।
अप्सरा, पारिजातक, धनुष, अस्व, गज स्वेत, ये पाँच सुरपतिहिँ दीन्हे ।
संख, कौस्तुभमनी, लई पुनि आप हरि, लच्छमी बहुरि तहँ दइ दिखाई ।
परम सुंदर, मनौ तड़ित है दूसरी[3], कमल की माल कर लियेँ आई ।

---

① भार ते—६, ८ । ② पूजि गनपति—२, ३ । ③ दर्शनीय—१ । दर्शनी—१६ ।

देखिकै उमा कौं रुद्र लज्जित भए, कह्यौ मैं कौन यह काम कीनौ।
इंद्रि-जित हौं कहावत हुतौ, आपु कौं समुझि मन माहिँ ह्वै रह्यौ खीनौ।
चतुरभुज रूप धरि आइ दरसन दियौ, कह्यौ, सिव सोच दीजै बिहाई।
सम तुम्हारे नहीं दूसरौ जगत मैं, कह्यौ तुम, रूप तब दियौ दिखाई।
नारि के रूप कौं देखि मोहै न जो, सो नहीं लोक तिहुँ माहिँ जायौ।
सूर स्वामी-सरन रहति माया सदा, को जगत जो न कपि ज्यौं नचायौ॥१०॥

॥ ४३७ ॥

सुंद-उपसुंद-वध — * राग मारू

† असुर द्वै हुते बलवंत भारी। [1]सुंद-उपसुंद स्वेच्छा-बिहारी।
भगवती तिन्हैं दीन्हीं दिखाई। देखि सुंदरि रहे दोउ लुभाई।
भगवती कह्यौ तिनकौं सुनाई। जुद्ध जीतै सो मोहिँ बरै आई।
तब दुहुँनि जुद्ध कीन्हौ बनाई। लरि मुए तुरत ही दोउ भाई।
देखिकै नारि मोहित जो होवै। आपनौ मूल या बिधि सो खोवै।
सुक नृपति पाहिँ जिहिँ बिधि सुनाई। सूर जनहूँ तिहीं भाँति गाई॥११॥

॥ ४३८ ॥

वामन-अवतार — राग बिलावल

जैसैं भयौ बावन अवतार। कहौं, सुनौ सो अब चित धार।
हरि जब अमृत सुरनि पियायौ। तब बलि असुर बहुत दुख पायौ।

---

* (वे) बिलावल।

† भागवत के इस स्कंध में सुंद-उपसुंद अथवा शुंभ-निशुंभ का कोई प्रसंग नहीं आया है। परंतु सूरसागर की सभी प्रतियों में यह इसी स्थान पर आता है। अत. इस संस्करण में भी यहीं रक्खा गया है।

[1] सुंभ अनसुंभ सुर जीत हारी—३, ६, ८।

इंद्र मिलि सुरनि बलि-पास आए बहुरि, उन कह्यौ, कहौ किहिँ काज आए ?
त्रिदसपति समुद के मथन के बचन जो, सेा सकल ताहि कहिकै सुनाए ।
बलि कह्यौ, बिलँब अब नैंकु नहिँ कीजियै, मंदराचल अचल चले धाई ।
दोउ इक मंत्र ह्वै जाइ पहुँचे तहाँ, कह्यौ, अब लीजियै इहिँ उचाई ।
मंदराचल उपारत भयौ स्रम बहुत, बहुरि लै चलन कौँ जब उठायौ ।
सुर-असुर बहुत ता ठौरहीँ[1] मरि गए, दुहुनि कौ गर्व यौँ हरि नसायौ ।
तब दुहुँनि ध्यान भगवान कौ धरि कह्यौ, बिन तुम्हारी कृपा गिरि न जाई ।
बाम कर सौँ पकरि, गरुड़ पर राखि हरि, छीर कैँ जलधि तट धरचौ ल्याई ।
कह्यौ भगवान अब बासुकी ल्याइयै, जाइ तिन बासुकी सौँ सुनायौ ।
मानि भगवंत-आज्ञा सेा आयौ तहाँ, नेति करि अचल कौँ सिंधु नायौ ।
मंदराचल समुद माहिँ बूड़न लग्यौ, तब सबनि बहुरि अस्तुति सुनाई ।
कूर्म कौ रूप धरि, धरचौ गिरि पीठि पर, सुर-असुर सबनि कैँ मन बधाई ।
पूछ[2] कौँ तजि असुर दौरिकै मुख गह्यौ, सुरनि तब पूँछ की ओर लीन्ही ।
मथत भए छीन, तब बहुरि बिनती करी, श्रीमहाराज निज सक्ति दीन्ही ।
भयौ हलाहल प्रगट प्रथमहीँ मथत जब, रुद्र कैँ कंठ दियौ ताहि धारी ।
चंद्रमा बहुरि जब मथत आयौ निकसि, सेाउ करि कृपा दीन्हौ मुरारी ।
कामनाधेनु पुनि सप्तरिषि कौँ दई, लई उन बहुत मन हर्ष कीन्हे ।
अप्सरा, पारिजातक, धनुष, अस्व, गज स्वेत, ये पाँच सुरपतिहिँ दीन्हे ।
संख, कौस्तुभमनी, लई पुनि आप हरि, लच्छमी बहुरि तहँ दइ दिखाई ।
परम सुंदर, मनौ तड़ित है दूसरी[3], कमल की माल कर लियेँ आई ।

---

① भार ते—६, ८ । ② पूजि गनपति—२, ३ । ③ दर्शनीय—१ । दर्शनी—१६ ।

तोहिँ बैठारिहौं नाव मैँ हाथ गहि, बहुरि हम ज्ञान तोहिँ कहि सुनावैँ ।
सर्प इक आइहै बहुरि तुम्हरैँ निकट, ताहि सौँ नाव मम स्रृंग बाँधौ ।
यहै कहि भए अँतरधान तब मत्स्य प्रभु, बहुरि नृप आपनौ कर्म साधौ ।
सातवैँ दिवस आयौ निकट जलधि जब, नृप कह्यौ अब कहाँ नाव पावैँ ।
आइ गइ नाव, तब रिषिनि तासौँ कह्यौ, आउ हम नृपति तुमकौँ बचावैँ ।
पुनि कह्यौ, मत्स्य हरि अब कहाँ पाइये, रिषिनि कह्यौ, ध्यान चित माहिँ धारौ ।
मत्स्य अरु सर्प तिहिँ ठौर परगट भए, बाँधि नृप नाव यौँ कहि उचारौ ।
ज्यौँ महाराज या जलधि तैँ पार कियौ, भव-जलधि पार त्यौँ करौ स्वामी ।
अहं-ममता हमैँ सदा लागी रहै, मोह-मद-क्रोध-जुत मंद कामी[1] ।
कर्म सुख-हित करत, होत तहँ दुःख नित, तऊ नर मूढ़ नाहीँ सँभारत ।
करन-कारन महाराज हैँ आप ही, ध्यान प्रभु कौ न मन माहिँ धारत ।
बिन तुम्हारी कृपा गति नहीँ नरनि की, जानि मोहिँ आपनौ, कृपा[2] कीजै ।
जनम अरु मरन मैँ सदा दुःखित रहत, देहु मोहिँ ज्ञान जिहिँ सदा जीजै ।
मत्स्य भगवान कह्यौ ज्ञान पुनि नृपति सौँ, भयौ सो पुरान सब जगत जान्यौ ।
लह्यौ नृप ज्ञान, कह्यौ आँखि अब मीचि तू, मत्स्य जो कह्यौ सो नृपति मान्यौ ।
आँखि कौँ खोलि जब नृपति देख्यौ बहुरि, कह्यौ, हरि प्रलय-माया दिखाई ।
कह्यौ जो ज्ञान भगवान, सो आनि उर, नृपति निज आयु इहिँ बिधि बिताई ।
बहुरि संखासुरहिँ मारि, बेदाऽनि दिए, चतुरमुख बिबिध अस्तुति सुनाई ।
सूर के प्रभू की नित्य लीला नई, सकै कहि कौन, यह कछुक गाई ! ॥१६॥
॥४४३॥

---

① गामी—२, ३ ६, ८ । ② राखि लीजै—२ ।

देखिकै उमा कौं रुद्र लज्जित भए, कह्यौ मैं कौन यह काम कीनौ।
इंद्रि-जित हौं कहावत हुतौ, आपु कौं समुझि मन माहिँ ह्वै रह्यौ खीनौ।
चतुरभुज रूप धरि आइ दरसन दियौ, कह्यौ, सिव सोच दीजै बिहाई।
सम तुम्हारे नहीं दूसरौ जगत मैं, कह्यौ तुम, रूप तब दियौ दिखाई।
नारि के रूप कौं देखि मोहै न जो, सो नहीं लोक तिहुँ माहिँ जायौ।
सूर स्वामी-सरन रहति माया सदा, को जगत जो न कपि ज्यौं नचायौ॥१०॥

॥ ४३७ ॥

सुंद-उपसुंद-वध

* राग मारू

असुर द्वै हुते बलवंत भारी। [1]सुंद-उपसुंद स्वेच्छा-बिहारी।
भगवती तिन्हैं दीन्हीं दिखाई। देखि सुंदरि रहे दोउ लुभाई।
भगवती कह्यौ तिनकौं सुनाई। जुद्ध जीतै सो मोहिँ बरै आई।
तब दुहुँनि जुद्ध कीन्हौ बनाई। लरि मुए तुरत ही दोउ भाई।
देखिकै नारि मोहित जो होवै। आपनौ मूल या बिधि सो खोवै।
सुक नृपति पाहिँ जिहिँ बिधि सुनाई। सूर जनहूँ तिहीं भाँति गाई॥११॥

॥ ४३८ ॥

वामन-अवतार

राग बिलावल

जैसैं भयौ बावन अवतार। कहौं, सुनौ सो अब चित धार।
हरि जब अमृत सुरनि पियायौ। तब बलि असुर बहुत दुख पायौ।

---

* (वे) बिलावळ।

† भागवत के इस स्कंध में सुंद-उपसुंद अथवा शुंभ-निशुंभ का कोई प्रसंग नहीं आया है। परंतु सूरसागर की सभी प्रतियों में यह इसी स्थान पर आता है। अत. इस संस्करण में भी यहीं रक्खा गया है।

(1) सुंभ अनसुंभ सुर जीत हारी—३, ६, ८।

जौ सुरपति कोप्यौ ब्रज[1] ऊपर, क्रोध[2] न कछू सरै।
ब्रज-जन[3] राखि नंद कौ लाला[4], गिरिधर बिरद धरै।
जाकौ बिरद है गर्व-प्रहारी, सो कैसैं बिसरै?
सूरदास भगवंत-भजन करि, सरन गए[5] उबरै॥३७॥

* राग केदारौ

जाकौं हरि अंगीकार कियौ।
ताके कोटि बिघन हरि हरि कें, अभै प्रताप दियौ।
दुरवासा अंबरीष सतायौ, सो हरि-सरन गयौ।
परतिज्ञा राखी मन-मोहन, फिरि[6] तापैं पठयौ।
बहुत सासना दई प्रहलादहि, ताहि निसंक कियौ।
निकसि खंभ तैं नाथ निरंतर, निज[7] जन राखि लियौ।
मृतक भए सब सखा जिवाए, बिष-जल जाइ पियौ।
सूरदास-प्रभु भक्तबछल हैं, उपमा कौं न बियौ॥३८॥

* राग बिलावल

कहा कमी जाकें राम धनी।
मनसा-नाथ मनोरथ-पूरन,[8] सुख-निधान जाकी मौज[9] घनी।
अर्थ, धर्म अरु काम, मोक्ष फल, चारि पदारथ देत गनी[10]।
इंद्र समान हैं जाके सेवक, नर बपुरे की कहा गनी।

---

(१) गोकुल पर—२, ८। (२) कहि धौं कछु न सरै—१, ८ १६। (३) राख्यौ ब्रजजन—१, ३, ८। (४) ठाकुर—२, ३, ६, ८। (५) गहे १, ३, ६, १६। * (ना) सारंग। (६) ताही पैं—६, ८। (७) अपना—१, २, ३, १६। (ना) कान्हरो। (८) पुजवै—२, ६। पुरवै—३, ८, १६। पूरे—१८। (९) बात—३, ६, ८, १६। (१०) छनी—१, ६, ८, १६।

तोहिँ बैठारिहौं नाव मैँ हाथ गहि, बहुरि हम ज्ञान तोहिँ कहि सुनावैँ ।
सर्प इक आइहै बहुरि तुम्हरैँ निकट, ताहि सौँ नाव मम स्रृंग बाँधौ ।
यहै कहि भए अँतरधान तब मत्स्य प्रभु, बहुरि नृप आपनौ कर्म साधौ ।
सातवैँ दिवस आयौ निकट जलधि जब, नृप कह्यौ अब कहाँ नाव पावैँ ।
आइ गइ नाव, तब रिषिनि तासौँ कह्यौ, आउ हम नृपति तुमकौँ बचावैँ ।
पुनि कह्यौ, मत्स्य हरि अब कहाँ पाइये, रिषिनि कह्यौ, ध्यान चित माहिँ धारौ ।
मत्स्य अरु सर्प तिहिँ ठौर परगट भए, बाँधि नृप नाव यौँ कहि उचारौ ।
ज्यौँ महाराज या जलधि तैँ पार कियौ, भव-जलधि पार त्यौँ करौ स्वामी ।
अहं-ममता हमैँ सदा लागी रहै, मोह-मद-क्रोध-जुत मंद कामी[1] ।
कर्म सुख-हित करत, होत तहँ दुःख नित, तऊ नर मूढ़ नाहीँ सँभारत ।
करन-कारन महाराज हैँ आप ही, ध्यान प्रभु कौ न मन माहिँ धारत ।
बिन तुम्हारी कृपा गति नहीँ नरनि की, जानि मोहिँ आपनौ, कृपा[2] कीजै ।
जनम अरु मरन मैँ सदा दुःखित रहत, देहु मोहिँ ज्ञान जिहिँ सदा जीजै ।
मत्स्य भगवान कह्यौ ज्ञान पुनि नृपति सौँ, भयौ सो पुरान सब जगत जान्यौ ।
लह्यौ नृप ज्ञान, कह्यौ आँखि अब मीचि तू, मत्स्य जो कह्यौ सो नृपति मान्यौ ।
आँखि कौँ खोलि जब नृपति देख्यौ बहुरि, कह्यौ, हरि प्रलय-माया दिखाई ।
कह्यौ जो ज्ञान भगवान, सो आनि उर, नृपति निज आयु इहिँ बिधि बिताई ।
बहुरि संखासुरहिँ मारि, बेदाऽनि दिए, चतुरमुख बिबिध अस्तुति सुनाई ।
सूर के प्रभू की नित्य लीला नई, सकै कहि कौन, यह कछुक गाई ! ॥१६॥
॥४४३॥

---

① गामी—२, ३ ६, ८ । ② राखि लीजै—२ ।

कहा कृपिन की माया गनियै, करत फिरत अपनी अपनी।
खाइ न सकै खरचि नहिँ जानै, ज्यौँ भुवंग-सिर रहत मनी।
आनँद-मगन राम-गुन गावै, दुख-संताप की काटि तनी।
सूर कहत जे भजत राम कौँ, तिनसौँ हरि सौँ सदा बनी ॥३६॥

* राग बिलावल

हरि के जन की अति ठकुराई।
महाराज, रिषिराज, राजमुनि, देखत रहे लजाई।
निरभय देह, राज-गढ[1] ताकौ, लोक[2] मनन-उतसाहु।
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, ये[3] भए चोर तेँ साहु।
दृढ विस्वास कियौ सिंहासन, तापर बैठै भूप।
हरि-जस बिमल छत्र सिर ऊपर, राजत परम अनूप।
हरि-पद-पंकज पियो प्रेम-रस, ताही कैँ रँग गतौ।
मंत्री ज्ञान न औसर पावै, कहत बात[4] सकुचातौ।
अर्थ-काम दोउ रहैँ दुवारैँ,[5] धर्म-मोक्ष सिर नावैँ।
बुद्धि[6]-विवेक विचित्र पौरिया, समय न कबहूँ पावैँ।
अष्ट महा-सिधि द्वारैँ ठाढीँ, कर जोरे, डर लीन्हे।
छरोदार बैराग बिनोदी, झिरकि बाहिरैँ कीन्हे।

---

* (ना) नट।

† यह पद (वे) मेँ विनय-प्रसंग तथा परीक्षित के पास शुकागमन के प्रसंग मेँ भी है। (ना) मेँ यह केवल विनय-प्रसंग ही मेँ है। शेष प्रतियो मेँ यह शुकागमन प्रसंग ही मेँ रखा है। इस संस्करण मेँ भी इसका विनय मेँ ही रखा जाना उचित समझा गया।

(१) करि—१, ३, ६, ८, १९। ताही को—१४। (२) लोगन—१, ३, ६, ८, १४, १६। (३) मिलि—१४। (४) न बात सकातो—१४। (५) दूबरे—८। दूर दुरि—१४। (६) बैठि—१। बिनै—३, १४।

माया, काल, कछू नहिं व्यापै, यह रस-रीति जो जानै।
सूरदास यह सकल समग्रो, प्रभु[1] -प्रताप पहिचानै ॥४०॥

तुम्हरैं भजन सबहि सिंगार।
जो कोउ प्रीति करै पद-अंबुज, उर मंडत[2] निरमोलक हार।
किंकिनि नूपुर पाट पटंबर, मानो लिये फिरैं घर-बार।
मानुष-जनम पोत नकली ज्यौं, मानत भजन-बिना बिस्तार।
कलिमल दूरि करन के काजैं, तुम लीन्हो जग में अवतार।
सूरदास प्रभु तुम्हरे भजन बिनु, जैसैं सूकर-स्वान-सियार ॥४१॥

माया-वर्णन

* राग केदारो

बिनती सुनौ दीन की चित दै, कैसैं तुव गुन गावै ?
माया नटी लकुटि[3] कर लीन्हे, कोटिक नाच नचावै।
दर-दर लोभ लागि लिये डोलनि, नाना स्वाँग बनावै[4]।
तुम सौं कपट करावति प्रभु जू, मेरी बुधि भरमावै।
मन अभिलाष-तरंगनि[5] करि करि, मिथ्या निसा[6] जगावै।
सोवत सपने मैं ज्यौं संपति, त्यौं दिखाइ बौरावै।
महा मोहिनी मोहि[7] आतमा, अपमारगहिं लगावै।
ज्यौं दूती पर-बधू भोरि[8] कै, लै पर-पुरुष दिखावै[9]।
मेरे तो तुम पति, तुमहीं गति, तुम समान को पावै ?
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा बिनु, को मो[10] दुख बिसरावै ॥४२॥

---

(१) गुरु प्रताप—१, ३, ६, ८। गुरु प्रसाद—१४।
। यह पद केवल (स, ल) में हैं।
(२) मंडन—३।
* (ना) आसावरी (को) कान्हरो।
(३) सटी—६, ८, १६। (४) करावै—१। (५) तरंग मगन करि—३। (६) आनि—२। (७) मोह मत्त करि—२। (८) चोरि—१६। (९) मिलावै—१६। (१०) मो (मम) दुखहि छुड़ावै—६, ८।

*राग केदारौ

हरि, तुव माया को न बिगोयौ ?
सो जोजन मरजाद सिंधु की, पल मैं राम बिलोयौ ।
नारद मगन भए माया मैं, ज्ञान-बुद्धि-बल खोयौ ।
साठि पुत्र अरु द्वादस कन्या, कठ लगाए जोयौ ।
संकर कौ मन हरयौ कामिनी, सेज छाँडि भू सोयौ ।
चारु[1] मोहिनी आइ आँध कियौ, तब नग्न-सिग्न तैं रोयौ ।
सो भैया दुरजोधन राजा, पल मैं गरद समायौ ।
सूरदास[2] कंचन अरु काँचहिं, एकहिं धगा पिरोयौ ॥४३॥

*राग सारंग

(गोपाल) तुम्हरी माया महाप्रबल, जिहिं सब जग बस कीन्हौ (हो) ।
नैंकु चितै, मुसक्याइ कै, सब कौ मन हरि लीन्हौ (हो) ।
पहिरे राती चूनरी, सेत उपरना सोहै (हो) ।
कटि लहँगा नीलौ बन्यौ, को जो देखि न मोहै (हो) ?

---

* (ना) परज, (का, ई, का, रा) सोरठ ।

(१) जारि मोहिनी आठ आठ कियो —१,२,१६ ।
चार मोहिनी आठ आठ कियो —३ ।
जारि मोहिनी आध आध कियो —६ ।
जोरि मोहिनी आध कियो —८ ।
चारु मोहिनी आय मनहिं गहि —१६ ।
जार मोहिनी आध आध कियो —१८ ।

(२) सूरजदास कांच अरु कांचन —१६ ।
(ना) सोरठ ।

† यह पद (शा का) में नहीं है। (वे, स, ल) में यह दो दो स्थानों पर आया है। एक तो "माया-वर्णन" के प्रसंग में और दूसरे "रास लीला" के प्रसंग में, "श्री राधा-कृष्ण विवाह" के अंतर्गत। (ना, का, बृ, ई, पू) में यह केवल "माया-वर्णन" के प्रसंग में पाया जाता है और (के, पो) में केवल "रास प्रसंग" में। इस संस्करण में इसका यहीं रक्खा जाना उचित समझा गया।

इसका मूल अनेक प्रतियों में अशुद्ध पाया गया। चरणों का क्रम भी अस्त-व्यस्त था। अधिक शुद्ध प्रतियों की सहायता लेकर दोनों का संशोधन किया गया है। विस्तार-भय से पाठांतर नहीं दिये जा सके।

चोली चतुरानन ठग्यौ, अमर उपरना राते (हो)।
अंतरौटा अवलोकि कै, असुर महा-मद माते (हो)।
नैकु दृष्टि जहँ परि गई, सिव-सिर टोना लागे (हो)।
जोग-जुगति बिसरी सबै, काम-क्रोध-मद जागे (हो)।
लोक-लाज सब छुटि गई, उठि धाए सँग लागे (हो)।
सुनि याके उतपात कौं, सुक सनकादिक भागे (हो)।
बहुत कहाँ लौं बरनिऐ, पुरुष न उबरन पावै (हो)।
भरि सोवै सुख-नींद में, तहाँ सु जाइ जगावै (हो)।
एकनि कौं दरसन ठगै, एकनि के सँग सोवै (हो)।
एकनि लै मंदिर चढै, एकनि बिरचि बिगोवै (हो)।
अकथ कथा याकी कछू, कहत नहीं कहि आई (हो)।
छैलनि के सँग यौं फिरै, जैसें तनु सँग छाई (हो)।
इहिं बिधि इहिं डहके सबै, जल-थल-नभ-जिय जेते (हो)।
चतुर-सिरोमनि नंद-सुत, कहौं कहाँ लगि तेते (हो)।
कछु कुल-धर्म न जानई, रूप सकल जग माँच्यौ (हो)।
बिनु देखें, बिनुहीं सुनें, ठगत न कोऊ बाँच्यौ (हो)!
इहिं लाजनि मरिऐ सदा, सब कोउ कहत तुम्हारी (हो)।
सूर स्याम इहिं बरजि कै, मेटो अब कुल-गारी (हो)॥४४॥

* राग बिहागरौ

हरि, तेरौ भजन कियौ न जाइ।
कह करौं, तेरी प्रबल माया देति मन[1] भरमाइ।

---

* (ना, का) केदारा (पं) बिलावल।

(१) लहर बहाइ—१, २, ३, १६।

जबै आवौं साधु-संगति, कछुक मन ठहराइ ।
ज्यौं[1] गयंद अन्हाइ सरिता, बहुरि वहै सुभाइ ।
बेष धरि धरि हर्‌यौ पर-धन, साधु-साधु कहाइ ।
जैसैं नटवा लोभ-कारन करत स्वाँग बनाइ ।
करौं जतन, न भजौं तुमकौं, कछुक मन उपजाइ ।
सूर प्रभु[2] की सबल माया, देति मोहि भुलाइ[3] ॥४५॥

* राग बिहागरौ

माधौ जू, मन माया बस कीन्हा ।
लाभ-हानि कछु समुझत नाहीं, ज्यौं पतंग तन दीन्हौ ।
गृह दीपक, धन तेल, तूल तिय, सुत ज्वाला अति जोर ।
मैं मति-हीन मरम नहिं जान्यौ, पर्‌यौ अधिक करि दौर ।
बिवस भयौं नलिनी के सुक ज्यौं, बिन गुन मोहि गह्यौ ।
मैं अज्ञान कछू नहिं समुझ्यौ, परि दुख-पुंज[4] सह्यौ ।
बहुतक[5] दिवस भए या जग में, भ्रमत फिर्‌यौ मति-हीन ।
सूर स्यामसुंदर जौ सेवै,[6] क्यौं होवै गति दीन ॥४६॥

अब हौं माया-हाथ बिकानौ ।
परबस भयौ पसू ज्यौं रजु-बस, भज्यौ न श्रीपति रानौ ।
हिंसा-मद-ममता-रस भूल्यौं, आसाहीं लपटानौ ।
याही करत अधीन भयौ हौं, निद्रा अति न अघानौ ।

---

(१) धोइ गज ज्यौं बिमल बहाइ—२ । (६) सुमिर—१ ।
सरिता—२ । (२) हरि—१, (का) बनाओ । | यह पद केवल (स, ल)
३ । (३) लुभाइ—१, ३, ६, ८ । (४) बीच—८ । (५) बहुते—८ । में है ।

अपने हीँ अज्ञान-तिमिर मैँ, बिसर्‌यो परम ठिकानौ।
सूरदास की एक आँखि है, ताहू मैँ कछु कानौ ॥४७॥

* राग धनाश्री

† दीन जन क्यौँ करि आवै सरन ?
भूल्यौ फिरत सकल जल-थल-मग, सुनहु ताप[1]-त्रय-हरन।
परम[2] अनाथ, बिबेक-नैन बिनु, निगम-ऐन क्यौँ पावै ?
पग[3] पग परत कर्म-तम-कूपहिँ, को करि कृपा बचावै ?
नहिँ कर लकुटि सुमति[4]-सतसंगति, जिहिँ अधार अनुसरई।
प्रबल अपार मोह-निधि दुस-दिसि, सुधौँ कहा अब करई।
अखुटित[5] रटत सभीत, ससंकित, सुकृत सब्द नहिँ पावै।
सूर स्याम-पद-नख-प्रकास बिनु, क्यौँ करि तिमिर नसावै ? ॥४८॥

राग धनाश्री

अब सिर परी ठगौरी देव।
तातैँ बिवस भयौ करुनामय, छाँडि तिहारी सेव।
माया-मंत्र पढ़त मन निसि-दिन, मोह-मूरछा आनत।
ज्यौँ मृग नाभि-कमल निज[6] अनुदिन निकट रहत नहिँ जानत।
भ्रम-मद-मत्त, काम-तृष्ना-रस-बेग,[7] न क्रमैँ गह्यौ।
सूर एक पल गहरु न कीन्हयौ, किहिँ[8] जुग इतौ सह्यौ ! ॥४९॥

---

(१) कान्हरा।

† यह पद केवल (ज्ञा, क, का, पू) में है।

(२) सुनि बतापहरन—१४, १६। (३) मम अनाथ अबि बेक नयन बिनु सुकृत सब्द सुनि धाव—१४। (४) सुभूति—१४। भक्त—१६। (५) अघटित रटत सभार सुसृत स्वनि निगम ऐन नहिँ पाव—१४।

‡ यह पद केवल (क, पू) में है।

(६) तजि—१४, १७। (७) ज्यौं गज नक्र गह्यौ—१७। (८) कहि जुग इते रह्यौ—१४।

राग धनाश्री

† माया देखत ही जु गई ।
ना हरि-हित, ना तू-हित, इनमैं एकौ तौ न भई !
ज्यौं मधुमाखी सँचति निरंतर, बन की ओट लई ।
व्याकुल होत हरे ज्यौं सरवस, आँखिनि धूरि दई ।
सुत-संतान-स्वजन-वनिता-रति, घन समान उनई[१] ।
राखे सूर पवन पाखँड हति, करी[२] जो प्रीति नई[३] ॥५०॥

अविद्या-वर्णन

* राग मलार

† माधौ जू, यह मेरी इक गाइ ।
अब आज तैं आप-आगैं दई, लै आइयै चराइ ।
यह अति हरहाई, हटकत हूँ बहुत अमारग जाति ।
फिरति[४] बेद-बन-ऊख उखारति, सब दिन अरु सब राति ।
हित करि मिलै लेहु गोकुलपति, अपने गोधन माहँ ।
सुख सोऊँ सुनि बचन तुम्हारे, देहु कृपा करि बाहँ ।
निधरक रहौं सूर के स्वामी, जनि[५] मन जानौ फेरि ।
मन-ममता रुचि सौं रखवारी, पहिलैं लेहु निबेरि ॥५१॥

* राग धनाश्री

§ कितेक[६] दिन हरि-सुमिरन बिनु खोए ।
पर-निंदा रसना के रस करि, केतिक[७] जनम बिगोए ।

---

† यह पद केवल (क, पू) में है ।
(१) उनही—१४ । (२) करि क्यौं—१७ । (३) नहीं—१४ ।
* (ना) नट ।
‡ यह पद (का, ज्ञा, रा) में नहीं है ।
(४) बन बन तृण उखारति सकल दिन अरु रानि—२ । बन बन अवन उखारत सब दिन अरु सब रात—३ । (५) जन्म न जाऊँ फेरि—१, १६ । जनम न जान्यौ भीर—३ ।
(ना) नट, (का) रान्हरो ।
§ यह पद (रा) में नहीं है ।
(६) इतिक (एते) दिन—६, ८ । इतन—१४ । (७) अपने परतर बोए (गोए)—१, २, ३, ६, ८, १९ । अपन करतल बोए—१४, १६ ।

तेल लगाइ कियौ रुचि-मर्दन, बस्तर मलि-मलि धोए ।
तिलक बनाइ चले स्वामी ह्वै, बिषयिनि के मुख जाए ।
काल[1] बली तें सब जग काँप्यौ, ब्रह्मादिक हूँ रोए ।
सूर अधम[2] की कहा[3] कौन गति, उदर भरे, परि सोए ॥५२॥

राग बिलावल

† यह आसा पापिनी दहै ।
तजि सेवा बैकुंठनाथ की, नीच नरनि कें संग रहै ।
जिनकौ मुख देखत दुख उपजत, तिनकौं राजा-राय कहै ।
धन[4]-मद-मूढनि, अभिमानिनि, मिलि, लोभ लिए दुर्बचन सहै ।
भई[5] न कृपा स्यामसुंदर की, अब कहा स्वारथ फिरत बहैं ?
सूरदास सब-सुख-दाता-प्रभु-गुन बिचारि नहिं चरन गहै ॥५३॥

* राग सारंग

इहिं राजस कौ[6] को न बिगायौ ?
हिरनकसिपु, हिरनाच्छ आदि दै, रावन, कुंभकरन कुल खोयौ ।
कंस, केसि, चानूर, महाबल करि निरजीव जमुन-जल बोयौ ।
जज्ञ-समय सिसुपाल सुजोधा अनायास लै जोति समायौ ।
ब्रह्मा-महादेव-सुर-सुरपति नाचत फिरत महा रस भोयौ ।
सूरदास‡ जा चरन-सरन रह्यौ, सो जन निपट नींद भरि सोयौ ॥५४॥

---

(१) सगरा जनम गवाइ अकारथ अंतकाल बहु रोए—६, ८ । सब जग कंपित त्रास ब्याल डर सुर ब्रह्मादिक रोए—१४ । (२) पतित—८ । (३) होति—२ । हाइ—३ । (४) अरु—२ ।

† यह पद केवल (शा, का) में है ।

(५) धन मद मूढ मिले अभिमानी यह लालच दुरबचन लही—२ । (६) भई न कृपा स्यामसुंदर की अपन कहा की जाति भई—२ ।

* (का) बिहागरो ।

‡ यह पद केवल (क, का) में है ।

(७) गुन—१४ । (८) सूरदास जो साधु संगति म सो नर नितही नींद भरि सोयो—१६ ।

* राग सारंग

† फिरि[1] फिरि ऐसोई[2] है करत ।
जैसें प्रेम पतंग दीप[3] सौं, पावक हू न डरत ।
भव[4]-दुख-कूप ज्ञान करि दीपक, देखत प्रगट परत ।
काल-व्याल, रज-तम-विष-ज्वाला कत जड जंतु जरत !
अविहित वाद-विवाद सकल मत इन लगि भेष धरत ।
इहिं विधि भ्रमत सकल निसि-दिन गत, कछू न काज सरत ।
अगम[5] सिंधु जतननि सजि नौका, हठि क्रम-भार भरत ।
सूरदास-व्रत यहै, कृष्ण भजि, भव-जलनिधि उतरत ॥५५॥

तृष्णा-वर्णन

* राग केदारो

‡ माधौ, नैंकु हटकौ गाइ ।
भ्रमत निसि-बासर अपथ-पथ, अगह गहि नहिं जाइ ।
छुधित अति न अघाति कबहूँ, निगम-द्रुम दलि खाइ ।
अष्ट-दस-घट नीर अँचवति, तृषा तउ न बुझाइ ।
छहौं रस जौ धरौं आगैं, तउ न गंध सुहाइ ।
और अहित अभच्छ भच्छति, कला बरनि न जाइ ।
व्योम, धर, नद, सैल, कानन इते चरि न अघाइ ।
नील खुर अरु अरुन लोचन, सेत सींग सुहाइ ।
भुवन चौदह खुरनि खूँदति, सु धौं कहाँ समाइ ।
ढीठ, निठुर[6], न डरति काहूँ, त्रिगुन ह्वै समुहाइ ।

---

* (का) केदारा ।

† यह पद केवल (क, का) में है ।

(१) पुनि पुनि सोई हेत करत—१६ । (२) सोइ—१४ । (३) रूप ४ । —१६ । (४) मन—१६ । (५) अगम सिंधु भव तन नौका तजि—१६ । (ना) रामकली । (का) कान्हरो ।

‡ यह पद (का, ना) में नहीं है ।

(६) निडर—१६ ।

हरै खल-बल दनुज-मानव-सुरनि सीस चढ़ाइ।
रचि-बिरचि[1] मुख-भौंह-छबि, लै चलति चित्त चुराइ।
नारदादि सुकादि मुनिजन थके करत उपाइ।
ताहि कहु कैसैं कृपानिधि, सकत सूर चराइ ? ॥५६॥

राग देवगधार

†कहत[2] हे, आगैं जपिहैं राम।
बीचहिं भई और की औरै, परचौ काल सौं काम।
गरभ-बास दस मास अधोमुख[3], तहँ न भयौ बिस्राम।
बालापन खेलतहीं खोयौ, जोबन जोरत दाम।
अब तौ जरा निपट नियरानी, करचौ न कछुवै काम।
सूरदास प्रभु कौं बिसरायौ बिना लिएँ हरि-नाम ॥५७॥

राग कान्हरौ

‡ रे मन, जग पर जानि ठगायौ।
धन-मद, कुल-मद, तरुनी कैं मद, भव[4]-मद, हरि बिसरायौ।
कलि-मल-हरन, कालिमा-टारन, रसना स्याम न गायौ।
रसमय जानि सुवा सेमर कौं चोंच घालि पछितायौ।
कर्म-धर्म, लीला-जस, हरि-गुन, इहिं रस छाँव[5] न आयौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु कहु कैसैं सुख पायौ! ॥५८॥

---

① सिव विरंचि मुख भौंह की छबि चलति चित्त चुराइ—२।
† यह पद (ना, स, ल, का) में है।

② घट मै आगे जप्यौ न राम—३। ③ हुतो तू—३।
‡ यह पद (ना, स, ल, का) में है।

④ तिहुँ मद—२, १६। ⑤ छाड़ि—२, १६।

* राग नट

†रे मन, छाँड़ि बिषय कौ रँचिबौ ।
कत तूँ सुवा होत सेमर कौ, अंतहिँ[1] कपट न बचिबौ ।
अंतर गहत कनक-कामिनि कौं, हाथ रहैगौ पचिबौ ।
तजि अभिमान, राम कहि बौरे, नतरुक ज्वाला तचिबौ ।
सतगुरु कह्यौ, कहौं तोसौं हौं, राम-रतन[2] धन सँचिबौ ।
सूरदास-प्रभु हरि-सुमिरन बिनु जोगी-कपि ज्यौं नचिबौ॥५६॥

राग देवगंधार

‡चौपरि जगत मड़े जुग बीते ।
गुन पाँसे, क्रम अंक, चारि गति सारि, न कबहूँ जीते ।
चारि पसार दिसानि, मनोरथ घर, फिरि फिरि गिनि आनै ।
काम-क्रोध-मद-संग मूढ़ मन खेलत हार न मानै ।
बाल-बिनोद बचन हित-अनहित बार बार मुख भाखै ।
मानौ बग बगदाइ प्रथम दिसि आठ-सात-दस नाखै ।
षोड़स जुक्ति, जुवति चित षोड़स, षोड़स बरस निहारै ।
षोड़स अंगनि मिलि प्रजंक पै छ-दस अंक फिरि डारै ।
पंद्रह पित्र-काज, चौदह दस-चारि पठे, सर साँधे ।
तेरह रतन कनक रुचि द्वादस अटन जरा जग बाँधे ।

---

* (का) मलार ।

† यह पद (ना, स, ल, शा, क, कौं, पू) में है ।

① अंत कपासनि पचिबौ—३, १४, १६ । ② नाम—२ ।

‡ यह पद केवल (ना,क,पू) में है । तीनों के पाठो में बड़ा भेद है और चरणों की संख्या भी न्यूनाधिक है । (ना) में केवल १६ चरण हैं पर (क,पू) में ५० है । पाठ तीनों ही के गड़बड़ हैं । (ना) का पाठ अन्य पाठों की अपेक्षा सूरदासजी की प्रणाली से कुछ अधिक मिलता है । अतः इस संस्करण में वही संगृहीत है ।

नहिँ रुचि पंथ, पयादि डरनि छकि पंच एकादस ठानै।
नौ दस आठ प्रकृति तृष्ना सुख सदन सात संधानै।
पंजा पंच प्रपंच नारि-पर भजत, सारि फिरि मारी।
चौक चबाउ भरे दुबिधा छकि रस रचना रुचि धारी।
बाल, किसोर, तरुन, जर, जुग सो सुपक सारि ढिग ढारी।
सूर एक पौ नाम बिना नर फिरि फिरि बाजी हारी॥ ६०॥

राग सारंग

†अब कैसैँ पैयत[1] सुख माँगे ?
जैसोइ बोइयै तैसोइ लुनिऐ, कर्मन[2] भोग अभागे।
तीरथ-ब्रत कछुवै नहिँ कीन्हौ, दान दियौ नहिँ जागे।
पछिले कर्म सम्हारत नाहीँ, करत नहीँ कछु आगे।
बोवत बबुर[3], दाख फल चाहत, जोवत[4] हैं फल लागे।
सूरदास तुम राम न भजि कै, फिरत काल सँग लागे॥ ६१॥

‡ रे मन, गोबिँद के ह्वै रहियै।
इहिँ संसार अपार बिरत ह्वै, जम की त्रास न सहियै।
दुख, सुख, कीरति, भाग आपनैँ आइ परै सो गहियै।
सूरदास भगवंत-भजन करि अंत बार कछु लहियै॥ ६२॥

§ रे मन, अजहूँ क्यौँ न सम्हारै।
माया-मद मैँ भयौ मत्त, कत जनम बादिहीँ हारै।

---

† यह पद (स, ल, शा, काँ) मेँ है।
① मानत—३। ② करि मन—३। ③ नीब—३। ④ चितवत—१६।
‡ यह पद केवल (स, ल) मेँ है।
§ यह पद केवल (स, ल, शा) मेँ है।

तू तौ बिषया-रंग रँग्यो है, बिन धोए क्यौं छूटै।
लाख जतन करि देखौ, तैसैं बार-बार बिष[1] घूँटै।
रस लै-लै औटाइ करत गुर, डारि देत है खोई।
फिरि औटाए स्वाद जात है, गुर तैं खाँड़ न होई।
सेत, हरौ, रातौ अरु पियरौ रंग लेत है धोई।
कारौ अपनौ रंग न छाँड़ै, अनरँग कबहुँ न होई।
कुबिजा भई स्याम-रँग-राती, तातैं सोभा पाई।
ताहि सबै कंचन सम तौलैं अरु श्री-निकट समाई।
नंद-नँदन-पद-कमल छाँड़ि कै माया-हाथ बिकानौ।
सूरदास आपुहिं समुझावै, लोग बुरौ जिनि मानौ॥६३॥

राग धनाश्री

† जनम साहिबी करत गयौ।
काया-नगर बड़ी गुंजाइस, नाहिं न कछु बढ़यौ।
हरि कौ नाम, दाम खोटे लौं, झकि-झकि डारि दयौ।
बिषया-गाँव अमल कौ टोटौ, हँसि-हँसि कै उमयौ।
नैन-अमीन, अधर्मिनि कैं[2] बस, जहँ कौ तहाँ छयौ।
दगाबाज कुतवाल काम रिपु, सरबस[3] लूटि लयौ।
पाप उजीर कह्यौ सोइ मान्यौ, धर्म-सुधन लुटयौ[4]।
चरनोदक कौं छाँड़ि सुधा-रस, सुरा-पान अँचयौ।

---

① मुख—३।
† यह पद केवल (स, ल, रा) में है। इसके चरणों के पाठ तथा क्रम में भेद है। यहाँ (स) का शुद्ध पाठ तथा क्रम रखा गया है।
② के सँग पाछे फिरत धयौ—१८। ③ सहरौ—१८।
④ उमयो—१८।

कुबुधि-कमान चढ़ाइ कोप करि, बुधि-तरकस रितयौ ।
सदा सिकार करत मृग-मन कौ, रहत मगन भुरयौ ।
घेरचौ आइ कुटुम-लसकर मैं, जम अहदी पठयौ ।
सूर नगर चौरासी भ्रमि-भ्रमि, घर-घर कौ जु भयौ ॥६४॥

राग धनाश्री

† नर तैं जनम पाइ कह कीनौ ?
उदर भरचौ कूकर-सूकर लौं, प्रभु कौ नाम न लीनौ ।
श्री भागवत सुनी नहिँ स्रवननि, गुरु गोबिँद नहिँ चीनौ ।
भाव-भक्ति कछु हृदय न उपजी, मन बिषया मैं दीनौ ।
झूठौ सुख अपनौ करि जान्यौ, परस प्रिया कैं भीनौ ।
अघ कौ मेरु[1] बढ़ाइ अधम तू, अंत भयौ बलहीना ।
लख चौरासी जोनि भरमि कै फिरि वाहीं मन दीनौ ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु ज्यौं अंजलि-जल छीनौ ॥६५॥

राग कान्हरौ

‡ नीकैं गाइ गुपालहिँ मन रे ।
जा गाए निर्भय पद पाए अपराधी अनगन रे ।
गायौ गीध, अजामिल, गनिका, गायौ पारथ-धन रे ।
गायौ स्वपच परम अघ-पूरन, सुत पायौ बाम्हन रे ।
गायौ ग्राह-ग्रसत गज जल मैं, खंभ बँधे तैं जन रे ।
गाए सूर कौन नहिँ उबरचौ, हरि परिपालन पन रे ॥६६॥

---

† यह पद केवल (स, ल, शा, कां) में है ।

(१) भार—१६ ।

‡ यह पद केवल (स, ल, शा, कां) में है ।

* राग केदारौ

† रह्यो मन सुमिरन कौ पछितायौ ।
यह[1] तन राँचि राँचि करि बिरच्यौ, कियौ आपनौ भायौ ।
मन[2]-कृत-दोष अथाह तरंगिनि, तरि नहिँ सक्यौ, समायौ ।
मेल्यौ जाल काल जब खैँच्यौ, भयौ मीन[3] जल-हायौ ।
कीर पढ़ावत गनिका तारी, ब्याध[4] परम पद पायौ ।
ऐसौ सूर नाहिँ कोउ दूजौ, दूरि करै जम-दायौ ॥ ६७ ॥

राग सारंग

‡ सब तजि भजिऐ नंद-कुमार ।
और भजे तैँ काम सरै नहिँ, मिटै न भव-जंजार ।
जिहिँ जिहिँ जोनि जन्म धारयौ, बहु जोरयौ अघ कौ भार ।
तिहिँ काटन कौँ समरथ हरि कौ तीछन नाम-कुठार ।
बेद, पुरान, भागवत, गीता, सब कौ यह मत सार ।
भव-समुद्र हरि-पद-नौका बिनु कोउ न उतारै पार ।
यह जिय जानि, इहीँ छिन भजि, दिन बीते जात असार ।
सूर[5] पाइ यह समौ लाहु लहि, दुर्लभ फिरि संसार ॥६८॥

* राग सूहा बिलावल

§ यहई[6] मन आनंद-अवधि सब ।
निरखि सरूप बिवेक-नयन भरि, या सुख तैँ नहिँ और कछू अब ।

---

* (का) गौरी ।
† यह पद (स, ल, शा, क, कां) में है ।
① यह तन आप आप करि विरच्यौ कियौ आपनो भायो—३ ।
② मन कृत नदी तरंग ते जबहीँ बहेउ चल्यौ जु सवायो—१४ ।
③ मीन को हायो—१४ । ④ अजामील सुख पायो— १४ ।
‡ यह पद केवल (स, ल, कां) में है ।
⑤ सूरदास यह समय पाइबौ—१६ ।
(क, को) विलावल ।
§ यह पद (बे, ना, शा, वृ, रा, श्या) में नहीं है ।
⑥ यहई सही आनंद अवधि सब—६, १७ ।

चित[1] चकोर-गति करि अतिसय रति, तजि स्रम सघन बिषय लोभा।
चिंति चरन-मृदु-चारु-चंद-नख, चलत चिन्ह चहुँ दिसि सोभा।
जानु सुजघन करभ-कर-आकृति, कटि प्रदेस किंकिनि राजै।
हृद बिध नाभि, उदर त्रिबली बर, अवलोकत भव-भय भाजै।
उरग-इंद्र उनमान सुभग भुज, पानि पदुम आयुध राजैं।
कनक-बलय, मुद्रिका मोदप्रद, सदा सुभग संतनि काजैं।
उर बनमाल बिचित्र बिमोहन, भृगु-भँवरी भ्रम कौं नासै।
तड़ित-बसन घन-स्याम सदृस तन, तेज-पुंज तम कौं त्रासै।
परम रुचिर मनि-कंठ किरनि-गन, कुंडल-मुकुट-प्रभा न्यारी।
बिधु मुख, मृदु मुसुक्यानि अमृत सम, सकल लोक-लोचन प्यारी।
सत्य-सील-संपन्न सुमूरति, सुर-नर-मुनि-भक्तनि भावै।
अंग-अंग-प्रति-छबि-तरंग-गति सूरदास क्यौं कहि आवै! ॥ ६६ ॥

† रे मन, आपु कौं पहिचानि।
सब जनम तैं भ्रमत खोयौ, अजहुँ तौ कछु जानि।
ज्यौं मृगा कस्तूरि भूलै, सु तौ ताकैं पास।
भ्रमत हीं वह दौरि ढूँढै, जबहिं पावै बास।
भरम ही बलवंत सब मैं, ईसहू कैं भाइ।
जब भगत भगवंत चीन्है, भरम मन तैं जाइ।
सलिल लौं सब रंग तजि कै, एक रंग मिलाइ।
सूर जो द्वै रंग त्यागै, यहै भक्त सुभाइ ॥७०॥

---

① चित चकोर रति करि सोई मति—१४, १७।

† यह पद केवल (स, ल) में है।

राग रामकली

† राम न सुमिरयौ एक घरी।
परम भाग सुक्रित के फल तैं सुंदर देह धरी।
जिहिं जिहिं जोनि भ्रम्यौ संकट-बस, सोइ-सोइ दुखनि भरी।
काम-क्रोध-मद-लोभ-गरब मैं, बिसरयौ स्याम हरी।
भैया-बंधु-कुटुंब घनेरे, तिनतैं कछु न सरी।
लै देही घर-बाहर जारी, सिर ठाँकी लकरी।
मरती बेर सम्हारन लागे, जो कछु गाड़ि धरी।
सूरदास तैं कछू सरी नहिं, परी काल-फँसरी॥ ७१॥

‡ नर देही पाइ चित्त चरन-कमल दीजै।
दीन बचन, संतनि-सँग दरस-परस कीजै।
लीला-गुन अंमृत रस स्रवननि-पुट पीजै।
सुंदर मुख निरखि, ध्यान नैन माहिं लीजै।
गद्‌गद सुर, पुलक रोम, अंग प्रेम भीजै।
सूरदास गिरिधर-जस गाइ गाइ जीजै॥७२॥

* राग धनाश्री

§ जनम सिरानोई सो लाग्यौ।
रोम रोम, नख-सिख लौं मेरैं, महा अघनि[1] बपु पाग्यौ।
पंचनि के हित-कारन यह मन जहँ तहँ भरमत भाग्यौ।
तीनौ पन ऐसैं हीं खोए, समय गए पर जाग्यौ।

---

† यह पद केवल (स, ल, शा, को) में है।
‡ यह पद केवल (स, ल) में है।
* (को) सारंग।
§ यह पद केवल (शा, को) में है।
(१) अगिनि—५।

तौ तुम कोऊ तार्‌यौ नहिँ, जौ, मोसौं पतित न दाग्यौ।
हौं स्रवननि सुनि कहत न एकौ, सूर सुधारौ आग्यौ ॥७३॥

राग नट

† गाइ लेहु मेरे गोपालहिँ।
नातरु काल-ब्याल लेतै है, छाँड़ि देहु तुम सब जंजालहिँ।
अंजलि के जल ज्यौं तन छीजत, खोटे कपट तिलक अरु मालहिँ।
कनक-कामिनी सौं मन बाँध्यौ, ह्वै गज चल्यौ स्वान की चालहिँ।
सकल सुखनि के दानि आनि उर, दृढ़ बिस्वास भजौ नँदलालहिँ।
सूरदास जो संतनि कौं हित, कृपावंत मेटत दुख-जालहिँ ॥ ७४ ॥

* राग धनाश्री

‡ जौ[1] हरि-ब्रत निज उर न धरैगौ।
तौ[2] को अस त्राता जु अपुन करि, कर कुठावँ पकरैगौ।
आन देव की भक्ति-भाइ करि, कोटिक कसब[3] करैगौ।
सब वे दिवस चारि मन-रंजन, अंत काल बिगरैगौ।
चौरासी लख जोनि जन्मि जग, जल-थल भ्रमत फिरैगौ।
सूर सुकृत सेवक सोइ साँचौ, जो स्यामहिँ सुमिरैगौ॥७५॥

* राग सारंग

§ अंत के दिन कौं हैँ घनस्याम।
माता-पिता-बंधु-सुत तौ लगि, जौ लगि जिहिँ[4] कौं काम।

---

† यह पद केवल (शा) में है।

* (कां) सारंग।

‡ यह पद केवल (शा, कां) में है।

(१) जौ हरि तजि ब्रत और धरैगो—१६। (२) सो अपने पायन कों आपुन कर कुठार पकरैगो—१६। (३) कपट—१६। . (कां) कान्हरो।

§ यह पद केवल (क, कां) में है।

(४) जिय को—१४।

आमिष-रुधिर-अस्थि अँग जौलौं, तौलौं कोमल चाम।
तौ लगि यह संसार सगौ है जौ लगि लेहि न नाम।
इतनी जउ जानत मन मूरख, मानत याहीं धाम।
छाँड़ि न करत सूर सब भव-डर बृंदावन सौं ठाम॥ ७६॥

राग बिलावल

† तेरौ तब तिहिँ दिन, को हितू हो हरि बिन,
सुधि करि कै कृपिन, तिहिँ चित आनि।
जब अति दुख सहि, कठिन करम गहि,
राख्यौ हो जठर महिँ स्रोनित सौं सानि।
जहाँ न काहू कौ गम, दुसह दारुन तम,
सकल बिधि बिषम, खल मल खानि।
समुझि धौं जिय महिँ, को जन सकत नहिँ,
बुधि बल कुल तिहिँ, जायौ काकी कानि!
वैसी आपदा तैं राख्यौ, तोष्यौ, पोष्यौ, जिय दयौ,
मुख - नासिका - नयन - स्रौन - पद - पानि।
सुनि कृतघन, निसि-दिन कौ सखा आपन,
अब जो बिसारचौ करि बिनु पहिचानि।
अजहुँ सँग रहत, प्रथम लाज गहत,
संतत सुभ चहत, प्रिय जन जानि।
सूर सो सुहृद मानि, ईस्वर अंतर जानि,
सुनि सठ, झूठौ हठ-कपट न ठानि॥७७॥

---

† यह पद केवल (क, का) में है। इसके पाठ तथा छंद की शुद्धि विशेष परिश्रम-पूर्वक की गई है।

राग धनाश्री

† जनम तौ ऐसेहिँ बीति गयौ ।
जैसेँ रंक पदारथ पाए, लोभ बिसाहि लयौ ।
बहुतक जन्म पुरीष-परायन, सूकर-स्वान भयौ ।
अब मेरी मेरी करि बौरे, बहुरौ बीज बयौ ।
नर कौ नाम पारगामी हो, सो तोहिँ स्याम दयौ ।
तैँ जड़ नारिकेल कपि-कर ज्यौँ, पायौ नाहिँ पयौ ।
रजनी गत बासर मृगतृष्ना रस हरि कौ न चयौ ।
सूर नंद-नंदन जेहिँ बिसरयौ, आपुहिँ आपु हयौ ॥७८॥

राग धनाश्री

‡ प्रीतम जानि लेहु मन माहीँ ।
अपनैँ सुख कौँ सब जग बाँध्यौ, कोउ काहू कौ नाहीँ ।
सुख मैँ आइ सबै मिलि बैठत, रहत चहूँ दिसि घेरे ।
बिपति परी तब सब सँग छाँड़े, कोउ न आवै नेरे ।
घर की नारि बहुत हित जासौँ, रहति सदा सँग लागी ।
जा छन हंस तजी यह काया, प्रेत प्रेत कहि भागी ।
या बिधि कौ ब्यौपार बन्यौ जग, तासौँ नेह लगायौ ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, नाहक जनम गँवायौ ॥७९॥

राग बिलावल

§ क्यौँ तू गोबिँद नाम बिसारौ ?
अजहूँ चेति, भजन करि हरि कौ, काल फिरत सिर ऊपर भारौ ।

---

†यह पद केवल (क,प्र) में है।
‡ यह पद केवल (क) में है। कुछ परिवर्तन के साथ यह सिक्खो के 'ग्रंथ साहब' में भी पाया जाता है। उसमें इसके रचयिता 'नानक' माने गए हैं।
§ यह पद केवल (क) में है।

धन-सुत-दारा काम न आवैं, जिनहिँ लागि आपुनपौ हारौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, चल्यौ पछिताइ, नयन जल ढारौ ॥८०॥

राग कान्हरौ

† जौ अपनौ मन हरि सौं राँचै।
आन उपाय-प्रसंग छाँड़ि कै, मन-बच-क्रम अनुसाँचै।
निसि-दिन नाम लेत ही[1] रसना, फिरि जु प्रेम-रस माँचै।
इहिँ बिधि सकल लोक मैं बाँचै,[2] कौन कहै अब साँचै।
सीत-उष्न, सुख-दुख नहिँ मानै, हर्ष-सोक नहिँ खाँचै[3]।
जाइ समाइ सूर वा निधि मैं, बहुरि जगत नहिँ नाचै ॥८१॥

राग टोड़ी

‡ जो घट अंतर हरि सुमिरै।
ताकौ काल रूठि का करिहै, जो चित चरन धरै।
कोपै तात प्रहलाद भगत कौ, नामहिँ लेत जरै।
खंभ फारि नरसिंह प्रगट ह्वै, असुर के प्रान हरै।
सहस बरस गज जुद्ध करत भए, छिन इक ध्यान धरै।
चक्र धरे बैकुँठ तैँ धाए, वाकी पैज सरै।
अजामील द्विज सौं अपराधी, अंतकाल बिडरै[4]।
सुत-सुमिरत नारायन-बानी, पार्षद धाइ परैँ।
जहँ जहँ दुसह कष्ट भक्तनि कौं, तहँ तहँ सार करै।
सूरजदास स्याम सेए तैँ दुस्तर पार तरै ॥८२॥

---

† यह पद केवल (क, पू) में है।

① है—१७। ② विरचै—१७। ③ बाचै—१४, १७।

‡ यह पद केवल (क) में है।

④ बिगरे।

राग सोरठ

† करि हरिसौं सनेह मन साँचौ ।
निपट कपट की छाँड़ि अटपटी, इंद्रिय बस राखहि किन पाँचौ ?
सुमिरन कथा सदा सुखदायक, विषधर विषय-विषम-विष बाँचौ ।
सूरदास प्रभु हित के सुमिरौ जौ, तौ आनँद करिकै नाँचौ ॥८३॥

राग टोड़ी

‡ हरि बिन अपनौ को संसार ।
माया-लोभ-मोह हैं चाँड़े काल-नदी की धार ।
ज्यौं जन-संगति होति नाव मैं, रहति न परसैं पार ।
तैसैं धन-दारा-सुख-संपति, बिछुरत लगै न बार ।
मानुष जनम, नाम नरहरि कौ, मिलै न बारंबार ।
इहिं तन छन-भंगुर के कारन, गरवत कहा गँवार !
जैसैं अंधौ अंध कूप मैं गनत न खाल-पनार ।
तैसेहिं सूर बहुत उपदेसैं सुनि सुनि गे कै बार ॥८४॥

राग धनाश्री

§ हरि बिनु मीत नहीं कोउ तेरे ।
सुनि मन, कहौं पुकारि तोसौं हौं, भजि गोपालहिं मेरे ।
या संसार बिषय-बिष-सागर, रहत सदा सब घेरे ।
सूर स्याम बिनु अंतकाल मैं कोउ न आवत नेरे ॥८५॥

---

† यह पद केवल (क) में है।
‡ यह पद केवल (क) में है।
§ यह पद केवल (क) में है।

राग भिंभौटी

† जा दिन मन पंछी उड़ि जैहै ।
ता दिन तेरे तन-तरुवर के सबै पात झरि जैहैं ।
या देही कौ गरब न करियै, स्यार-काग-गिध खैहैं ।
तीननि मैं तन कृमि, कै बिष्टा, कै ह्वै खाक उड़ैहै ।
कहँ वह नीर, कहाँ वह सोभा, कहँ रँग-रूप दिखैहै ।
जिन लोगनि सौं नेह करत है, तेई देखि घिनैहैं ।
घर के कहत सवारे काढ़ौ, भूत होइ धरि खैहैं ।
जिन पुत्रनिहिं बहुत प्रतिपाल्यौ, देवी-देव मनैहैं ।
तेई[1] लै खोपरी बाँस दै, सीस फोरि बिखरैहैं ।
अजहूँ मूढ़ करौ सतसंगति, संतनि मैं कछु पैहै ।
नर-बपु धारि नाहिं जन हरि कौं, जम की मार सो खैहै ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु बृथा सु जनम गँवैहै ॥८६॥

राग बिहाग—तिताला

‡ अब तौ यहै बात मन मानी ।
छाड़ौ नाहिं स्याम-स्यामा की बृंदाबन रजधानी ।
भ्रम्यौ बहुत लघु धाम बिलोकत छन-भंगुर दुखदानी ।
सर्बोपरि आनंद अखंडित सूर-मरम लपिटानी ॥८७॥

---

† यह पद केवल (क) में है।

[1] तेइ लै बास दयौ खोपरी मैं।

‡ यह पद राग कल्पद्रुम से संकलित किया गया है।

बिनती

* राग केदारौ

† बंदौं चरन-सरोज तिहारे।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, ललित त्रिभंगी प्रान पियारे।
जे पद-पदुम सदा सिव के धन, सिधु-सुता उर तैं नहिं टारे।
जे पद-पदुम तात-रिस[1]-त्रासत, मन-बच-क्रम प्रहलाद सँभारे।
जे पद-पदुम-परस-जल-पावन-सुरसरि-दरस कटत अघ भारे।
जे पद-पदुम-परस रिषि-पतिनी, बलि[2], नृग, ब्याध, पतित बहु तारे।
जे पद-पदुम रमत बृंदावन अहि[3]-सिर धरि, अगनित रिपु मारे।
जे पद-पदुम परसि ब्रज[4]-भामिनि सरबस दै, सुत-सदन बिसारे।
जे पद-पदुम रमत पांडव-दल दूत भए, सब काज सँवारे।
सूरदास तेई पद-पंकज त्रिबिध-ताप-दुख-हरन[5] हमारे ॥६४॥

* राग धनाश्री

हरि जू, तुमतैं कहा न होइ ?
‡ बोलै गुंग, पंगु गिरि लंघै अरु आवै अंधौ जग जोइ।
पतित अजामिल, दासी कुबिजा, तिनके[6] कलिमल डारे धोइ।
रंक सुदामा कियौ इंद्र-सम, पांडव-हित कौरव-दल खोइ।

---

* (ना) नट नारायणी। (क) कान्हरा।

† यह पद (ना, स, ल, शा, का, कां, पू, रा, श्या) में दो दो स्थानों पर है। एक तो यहाँ और दूसरे "कालिय-दमन" के प्रसंग में, कालिय की स्त्री की विनय में। इस संस्करण में यह यहीं रखा गया है।

① सुत—२। ② औरौ ब्याध अमित खल तारे—१४। ③ सुरभिनि सँग गाइनि बन चारे—२। ④ दिज—२। ⑤ हरत—२।

· (ना) ईमन।

‡ इस चरण के अनंतर (ना) में ये दो पंक्तियाँ और हैं—चंद्रहास इक हुते नृपति सुत पठए हुते हतन बन सोइ। दैन कह्यौ विष विषया पाई तारन तरन तुमहिं प्रभु सोइ।

⑥ तिनहूं के कलिमल सब धोइ—१, ३, ८।

बालक मृतक जिवाइ दए प्रभु[1], तब गुरु-द्वारैं आनँद होइ।
सूरदास-प्रभु इच्छापूरन, श्रीगुपाल सुमिरौ[2] सब कोइ ॥९५॥

* राग सोरठ

† बिनती करत मरत हौं लाज।
नख-सिख लौं मेरी यह देही है पाप की जहाज।
और पतित आवत न आँखि-तर देखत अपनौ साज।
तीनौं पन भरि और निबाह्यौ तऊ न आयौ बाज।
पाछैं भयौ न आगैं ह्वै है, सब पतितनि सिरताज।
नरकौ भज्यौ नाम सुनि मेरौ, पीठि दई जमराज।
अबलौं नान्हे-नून्हे तारे, ते सब बृथा-अकाज।
साँचैं बिरद सूर के तारत, लोकनि-लोक अवाज ॥९६॥

* राग सोरठ

‡ अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर दुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारै प्रान?
सुमिरत[3] ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान॥९७॥

---

① द्विज जो आयौ दरबारे रोइ—१, ६, ८, १९। ② सुमिरत—१, ३, ८, १९।

* (कां) धनाश्री।

† यह पद केवल (वे, कां) में है। (वे) में यह पद "माया" के प्रसंग में है। पर (का) में विनय के पदो के साथ मिलता है। इस संस्करण में यह विनय के पदो में रक्खा जाता है क्योकि यह विनय का ही पद समझ पड़ता है।

(ना) अलहिया बिलावल।

‡ यह पद (शा, का, ना, रा) में नही है।

③ निकसि भुवंगम डस्यो पारधी तातें छूट्यौ बान—३।

बिनती

* राग केदारौ

† बंदौं चरन-सरोज तिहारे।
सुंदर स्याम कमल-दल-लोचन, ललित त्रिभंगी प्रान पियारे।
जे पद-पदुम सदा सिव के धन, सिधु-सुता उर तैं नहिं टारे।
जे पद-पदुम तात-रिस[1]-त्रासत, मन-बच-क्रम प्रहलाद सँभारे।
जे पद-पदुम-परस-जल-पावन-सुरसरि-दरस कटत अघ भारे।
जे पद-पदुम-परस रिषि-पतिनी, बलि[2], नृग, ब्याध, पतित बहु तारे।
जे पद-पदुम रमत बृंदाबन अहि[3]-सिर धरि, अगनित रिपु मारे।
जे पद-पदुम परसि ब्रज[4]-भामिनि सरबस दै, सुत-सदन बिसारे।
जे पद-पदुम रमत पांडव-दल दूत भए, सब काज सँवारे।
सूरदास तेई पद-पंकज त्रिबिध-ताप-दुख-हरन[5] हमारे ॥६४॥

* राग धनाश्री

हरि जू, तुमतैं कहा न होइ ?
‡ बोलै गुंग, पंगु गिरि लंघै अरु आवै अंधौ जग जोइ।
पतित अजामिल, दासी कुबिजा, तिनके[6] कलिमल डारे धोइ।
रंक सुदामा कियौ इंद्र-सम, पांडव-हित कौरव-दल खोइ।

---

* (ना) नट नारायणी। (क) कान्हरा।

† यह पद (ना, स, ल, शा, का, कां, पू, रा, श्या) में दो दो स्थानों पर है। एक तो यहां और दूसरे "कालिय-दमन" के प्रसंग में, कालिय की स्त्री की विनय में। इस संस्करण में यह यहीं रखा गया है।

① सुत—२। ② औरौ ब्याध अमित खल तारे—१४। ③ सुरभिनि सँग गाइनि बन चारे—२। ④ दिज—२। ⑤ हरत—२।

* (ना) ईमन।

‡ इस चरण के अनंतर (ना) में ये दो पंक्तियाँ और हैं—चंद्रहास इक हुते नृपति सुत पठए हुते हतन बन सोइ। दैन कह्यौ विष विषया पाई तारन तरन तुमहिं प्रभु सोइ।

⑥ तिनहूं के कलिमल सब धोइ—१, ३, ८।

बालक मृतक जिवाइ दए प्रभु[1], तब गुरु-द्वारैं आनँद होइ।
सूरदास-प्रभु इच्छापूरन, श्रीगुपाल सुमिरौ[2] सब कोइ ॥९५॥

* राग सोरठ

† बिनती करत मरत हौं लाज।
नख-सिख लौं मेरी यह देही है पाप की जहाज।
और पतित आवत न आँखि-तर देखत अपनौ साज।
तीनौं पन भरि ओर निबाह्यौ तऊ न आयौ बाज।
पाछैं भयौ न आगैं ह्वै है, सब पतितनि सिरताज।
नरकौ भज्यौ नाम सुनि मेरौ, पीठि दई जमराज।
अबलौं नान्हे-नून्हे तारे, ते सब बृथा-अकाज।
साँचैं बिरद सूर के तारत, लोकनि-लोक अवाज ॥९६॥

* राग सोरठ

‡ अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान।
ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर दुक्यौ सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयौ आनि यह, कौन उबारै प्रान?
सुमिरत[3] ही अहि डस्यौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।
सूरदास सर लग्यौ सचानहिं, जय-जय कृपानिधान॥९७॥

---

① द्विज जो आयौ दरबारे रोइ—१, ६, ८, १९। ② सुमिरत—१, ३, ८, १९।

* (कां) धनाश्री।

† यह पद केवल (वे, कां) में है। (वे) में यह पद "माया" के प्रसंग में है। पर (का) में विनय के पदो के साथ मिलता है। इस संस्करण में यह विनय के पदो में रक्खा जाता है क्योकि यह विनय का ही पद समझ पड़ता है।

(ना) अलहिया बिलावल।

‡ यह पद (शा, का, ना, रा) में नही है।

③ निकसि भुवंगम डस्यो पारधी तातें छूट्यौ बान—३।

* राग बिहागरौ

हृदय की कबहुँ न जरनि घटी ।
बिनु गोपाल बिथा या तन की कैसैं जाति कटी ।
अपनी रुचि जित ही जित ऐंचति इंद्रिय-कर्म[1]-गटी ।
हौं तित हीं उठि चलत कपट लगि, बाँधे नैन-पटी ।
झूठौ मन, झूठी सब काया, झूठी आरभटी[2] ।
अरु झूठनि के बदन निहारत मारत[3] फिरत लटी[4] ।
दिन-दिन हीन छीन भइ काया दुख-जंजाल-जटी ।
चिंता कीन्हैं[5] भूख भुलानी, नींद फिरति उचटी ।
मगन भयौ माया-रस लंपट, समुझत नाहिं हटी[6] ।
ताकैं मूँड़ चढ़ी नाचति है मीचऽति नीच[7] नटी ।
किंचित[8] स्वाद स्वान-बानर ज्यौं, घातक रीति ठटी ।
सूर सुजल सींचियै[9] कृपानिधि, निज जन चरन-तटी ॥९८॥

* राग केदारौ

अब कैं नाथ, मोहिं उधारि ।
मगन हौं भव-अंबुनिधि मैं, कृपासिंधु मुरारि !
नीर अति गंभीर माया, लोभ-लहरि तरंग ।
लिए जात अगाध जल कौं गहे ग्राह अनंग ।

---

* (ना) देवगंधार ।

① ग्राम—१, २, ३। ② आरिहटी—२। आरटटी—३। अरनि अटी—६, ८। ③ पारत फिरत घटी—२। ④ सटी—६, ८। ⑤ के भय—३। ⑥ नटी—२। ⑦ नीच मटी—२। बीच बटी—३। ⑧ खैंचत स्वाद स्वान पातर ज्यौं—१, ६, ८, १९। ⑨ सींचे करनानिधि निज जन जरनि मिटी—६, ८।

. (ना) विभास। (क) बिलावल।

मीन इंद्री तनहिँ[1] काटत, मोट अघ सिर भार।
पग न इत उत धरन पावत, उरझि मोह सिवार।
क्रोध-दम्भ-गुमान-तृष्ना पवन अति झकझोर।
नाहिँ चितवन देत सुत-तिय, नाम-नौका ओर।
थक्यौ बीच बिहाल, बिह्वल, सुनौ करुना-मूल!
स्याम, भुज गहि काढ़ि लीजै[2], सूर ब्रज कैँ कूल ॥९९॥

* राग सारंग

माधौ जू, मन हठ कठिन परयौ।
जद्यपि बिद्यमान सब निरखत, दुःख सरीर भरयौ।
बार-बार निसि-दिन अति आतुर, फिरत दसौँ दिसि धाए।
ज्यौँ सुक सेमर-फूल बिलोकत, जात नहीँ बिनु खाए।
जुग-जुग जनम, मरन अरु बिछुरन, सब समुझत मत-भेव।
ज्यौँ दिनकरहिँ उलूक न मानत, परि आई यह टेव।
हौँ कुचील, मति-हीन सकल बिधि, तुम कृपालु जग जान।
सूर-मधुप निसि कमल-कोष-बस, करौ कृपा-दिन-भान ॥१००॥

*राग धनाश्री

आछौ गात अकारथ गारयौ।
करी न प्रीति कमल-लोचन सौँ, जनम जुवा ज्यौँ हारयौ।
‡निसि-दिन बिषय-बिलासनि बिलसत, फूटि[3] गई तव चारयौ।
‡अब लाग्यौ पछितान पाइ दुख, दीन, दई कौ मारयौ।

---

① अतिहि —१, १४, १६।
② डारहु—१४, १७।
* (का) धनाश्री।
(ना) बिहागरौ।
‡ ये दो चरण (शा, ना, रा) में नहीँ हैँ।
③ बीति गए पन चारयौ—२। बहुत कियौ है चारयौ—१६।

कामी, कृपन[1], कुचील, कुदरसन, को न कृपा करि तारचौ।
तातैं कहत दयाल देव-मनि, काहैं सूर बिसारचौ ? ॥१०१॥

*राग सारंग

माधौ जू, मन सबही बिधि पोच।
अति उनमत्त, निरंकुस, मैगल, चिंता-रहित, असोच।
महा मूढ अज्ञान-तिमिर महँ, मगन होत सुख मानि।
तेली के वृष लौं नित भरमत, भजत न सारँगपानि।
गीध्यौ दुष्ट[2] हेम तस्कर ज्यौं, अति आतुर मति-मंद।
लुबध्यौ स्वाद[3] मीन-आमिष[4] ज्यौं, अवलोक्यौ नहिं फंद।
ज्वाला-प्रीति[5] प्रगट सन्मुख हठि[6], ज्यौं पतंग तन जारचौ।
बिषय-असक्त, अमित-अघ-ब्याकुल, तबहूँ कछु न सँभारचौ।
ज्यौं कपि सीत-हतन[7]-हित गुंजा सिमिटि होत लौलीन।
त्यौं सठ बृथा तजत नहिं कबहूँ, रहत बिषय-आधीन।
सेमर-फूल सुरँग अति निरखत, मुदित होत खग-भूप।
परसत चोंच तूल उघरत मुख, परत दुःख कैं कूप।
‡जहाँ गयौ तहँ भलौ न भावत, सब कोऊ सकुचानौ।
‡ज्ञान और बैराग भक्ति, प्रभु, इनमैं कहूँ न सानौ।
और कहाँ लौं कहौं एक मुख, या मन के कृत काज।
सूर पतित तुम पतित-उधारन, गहौ बिरद की लाज ॥१०२॥

---

① कुटिल—१।
* (का) धनाश्री।
② ढीठ—१, १६, १६। ढीठि—२। ③ स्वान—२, ६, ८, १८। आनि—१६। ④ आतुर—१। ⑤ परति—२। बरत—३। ⑥ तिहिं—२। ⑦ हुतासन—१, २, ३, ६, ८, १८, १६।
‡ये दो चरण केवल (का, ना) में हैं।

राग सारंग

मेरौ मन मति-हीन गुसाईं ।
सब सुख-निधि पद-कमल छाँड़ि, स्रम करत स्वान की नाईं ।
फिरत बृथा भाजन अवलोकत, सूनैं सदन अजान ।
तिहिं लालच कबहूँ, कैसेहूँ, तृषि न पावत प्रान ।
कौर-कौर-कारन कुबुद्धि, जड़, किते सहत अपमान ।
जहँ-जहँ जात तहीं तहिं त्रासत अस्म, लकुट, पद-त्रान ।
तुम सर्वज्ञ[1], सबै बिधि पूरन, अखिल-भुवन-निज-नाथ ।
तिन्हैं छाँड़ि यह सूर महा सठ, भ्रमत[2] भ्रमनि कैं साथ ॥१०३॥

* राग गौरी

दयानिधि[3] तेरी गति लखि न परै ।
धर्म अधर्म, अधर्म धर्म करि, अकरन करन करै ।
जय अरु बिजय कर्म[4] कह कीन्हौ, ब्रह्म-सराप दिवायौ ।
असुर-जोनि ता ऊपर दीन्ही, धर्म-उछेद करायौ ।
पिता-बचन खंडै सो पापी, सोइ प्रहलादहिं कीन्हौ ।
निकसे खंभ-बीच तैं नरहरि, ताहि अभय पद दीन्हौ ।
दान-धर्म बहु कियौ भानु-सुत, सो तुव बिमुख कहायौ ।
बेद-बिरुद्ध सकल पांडव-कुल, सो तुम्हरैं मन भायौ ।
जज्ञ करत बैरोचन कौ सुत, बेद-बिहित[5]-बिधि-कर्मा ।
सो छलि[6] बाँधि पताल पठायौ, कौन कृपानिधि, धर्मा ?

---

① कृतज्ञ सबही—३ । ② फिरत—२, ३ । (ना) ईमन । (क) धनाश्री । (काँ) नट । ③ करुनामय—१, ३, ६, १६ । ④ कहा अकरम कियौ— ८ । अकर्म कियेा कह—१४ । ⑤ विमल—१, १६ । बचन—२, ३, ६, ८, १६, १८ । ⑥ बलि—२, ३ ।

द्विज-कुल-पतित अजामिल बिषयी, गनिका-हाथ[1] बिकायौ।
सुत-हित नाम लियौ नारायन, सो बैकुंठ पठायौ।
पतिब्रता जालंधर-जुवती, सो पति-ब्रत तैं टारी।
दुष्ट पुंस्चली, अधम सो गनिका सुवा पढ़ावत तारी।
मुक्ति-हेत जोगी स्रम[2] साधै, असुर बिरोधैं[3] पावै।
अबिगत गति करुनामय तेरी, सूर कहा कहि गावै ॥१०४॥

राग सारंग

अबिगत-गति जानी न परै।
मन-बच-कर्म[4]-अगाध, अगोचर, किहि बिधि बुधि सँचरै ?
अति प्रचंड पौरुष बल पाएँ[5], केहरि भूख मरै।
अनायास[6] बिनु उद्यम कीन्हैं[7], अजगर उदर भरै।
रीतै भरै, भरैं पुनि ढारै, चाहै फेरि भरै।
कबहुँक तृन बूड़ै पानी मैं, कबहुँक सिला तरै।
बागर तैं सागर करि डारै[8], चहुँ दिसि नीर भरै।
पाहन-बीच कमल बिकसावै[9], जल मैं अगिनि जरै।
राजा रंक, रंक तैं राजा, लै सिर छत्र धरै।
सूर पतित तरि जाइ छिनक[10] मैं, जौ प्रभु नैंकु ढरै ॥१०५॥

* राग केदारौ

अपनी भक्ति देहु भगवान।
कोटि लालच जौ दिखावहु, नाहिनैं रुचि आन।

---

① नेह लगायौ—१, २, ३। ② स्रम कीनौ—१। बहु स्रम करि—२। बहु स्रम करै—३। श्रम करि करि—८। ③ बिरोधी—३। ④ अगम—१, ६, ८, १४, १६, १८, १६। ⑤ मातौ—८ १४। ⑥ बिन आसा—१, १६। ⑦ सहजहिं—१४। ⑧ राखै—१, ८, १६। ⑨ बिकसाही—१, १४, १६। परकासै—३। ⑩ तनक—१, १९। पलक—२।

* (ना) बिलावल। (क) सारंग। (रा) धनाश्री।

जा दिना तैं जनम पायौ, यहै मेरी रीति।
बिषय-बिष हठि खात, नाहीं डरत करत अनीति।
जरत ज्वाला, गिरत गिरि तैं, स्वकर[1] काटत[2] सीस।
देखि साहस सकुच मानत, राखि सकत न ईस।
‡कामना करि[3] कोटि कबहूँ किए बहु पसु-घात।
‡सिंह-सावक ज्यौं[4] तजैं गृह, इंद्र आदि डरात।
नरक कूपनि[5] जाइ जमपुर परयौ बार अनेक।
थके किंकर-जूथ जमके, टरत टारैं न नेक।
महा माचल, मारिबे की सकुच नाहिं न मोहिं।
किए प्रन हौं परयौं द्वारैं, लाज प्रन की तोहिं।
नाहिं काँचौ कृपा-निधि हौं, करौ कहा रिसाइ।
सूर तबहुँ न द्वार छाँड़ै, डारिहौ[6] कढ़िराइ ॥१०६॥

*राग धनाश्री

† जन के उपजत दुख किन काटत ?
जैसैं[7] प्रथम-अषाढ़-आँजु-तृन, खेतिहर निरखि उपाटत।
जैसैं मीन[8] किलकिला दरसत, ऐसैं[9] रहौ प्रभु डाटत।
पुनि पाछैं अघ-सिंधु बढ़त[10] है, सूर खाल किन पाटत॥१०७॥

---

① सुमिरि — ८। ② कांपत—८।

‡ ये दो चरण (स, क, रा) में नहीं हैं।

③ करि कोपि कबहूँ (कीनौ) करत कर—१, १६। कौ कोप कीन्हौ—२। ④ जात गृह तजि इंद्र अधिक—१, ६, ८, १६। ⑤ कुंभी—३। ⑥ काढ़िहौ—३।

* (कां) सारंग।

† यह पद (ना) में नहीं है।

⑦ जैसे प्रथम अषाढ़ के वृक्षनि खेतहर निरखि उपाटत—१, १६। ⑧ नैन—८। ⑨ राखत रहु ऐसैं प्रभु दाटत—३। ⑩ बढ़ैगौ—१६।

* राग कान्हरौ

कीजै प्रभु अपने बिरद की लाज।
महा पतित, कबहूँ नहिँ आयौ, नैकु तिहारैँ काज।
माया सबल धाम-धन-बनिता बाँध्यौ हौं इहिँ साज।
देखत-सुनत सबै जानत हौं, तऊ न आयौ[1] बाज।
कहियत पतित बहुत तुम तारे, स्रवननि सुनी अवाज।
दई न जाति खेवट[2] उतराई, चाहत चढ़्यौ जहाज?
लीजै पार उतारि सूर कौं महाराज ब्रजराज।
नई न करन कहत प्रभु, तुम हौ सदा गरीब-निवाज॥१०८॥

* राग बिलावल

महा प्रभु, तुम्हैँ बिरद की लाज।
कृपा-निधान, दानि, दामोदर, सदा सँवारन काज।
जब गज-चरन ग्राह गहि राख्यौ, तबहीँ[3] नाथ पुकार्‌यौ।
तजि कै गरुड़ चले अति आतुर, नक्र[4] चक्र करि मार्‌यौ।
निसि-निसि ही रिषि लिए सहस-दस दुरबासा पग धार्‌यौ।
ततकालहिँ तब प्रगट भए हरि, राजा-जीव उबार्‌यौ।
हिरनाकुस प्रहलाद भक्त कौं बहुत सासना जार्‌यौ।
रहि न सके, नरसिंह रूप धरि, गहि कर असुर पछार्‌यौ।
दुस्सासन गहि केस द्रौपदी, नगन करन कौं ल्यायौ।
सुमिरत ही ततकाल कृपानिधि, बसन-प्रवाह बढ़ायौ।

---

* (ना) सारग।
① आवै लाज—३। ② धार—१, २, ६, ८।
४ (ना) नट।
③ तब तुम्हैँ—१, ३।
⑧ पकरि चक्र कर मार्‌यौ—१, २, ८, १६।

मागधपति बहु जीति महीपति, कछु जिय मैं गरबाए।
जीत्यौ जरासंध, रिपु मार्‌यौ, बल करि भूप छुड़ाए।
महिमा अति अगाध, करुनामय भक्त-हेत हितकारी।
सूरदास पर कृपा करौ अब, दरसन देहु मुरारी ॥१०६॥

* राग धनाश्री

सरन आए की प्रभु[1], लाज धरिऐ।
सध्यौ नहिं धर्म सुचि, सील, तप, व्रत कछू, कहा मुख लै तुम्हैं बिनै करिऐ।
कछू चाहौं कहौं, सकुचि मन मैं रहौं, आपने[2] कर्म लखि त्रास आवै।
यहै निज सार, आधार मेरौ यहै, पतित-पावन बिरद बेद गावै।
जन्म तैं एक टक लागि आसा रही, बिषय-बिष खात नहिं तृप्ति मानी।
जो छिया छरद करि सकल संतनि तजी, तासु तैं मूढ़-मति प्रीति ठानी।
पाप-मारग जिते, सबै[3] कीन्हे तिते, बच्यौ[4] नहिं कोउ जहँ सुरति मेरी।
सूर अवगुन भर्‌यौ, आइ द्वारैं पर्‌यौ, तकै गोपाल, अब सरन[5] तेरी ॥११०॥

* राग धनाश्री

प्रभु[6], मेरे गुन-अवगुन न बिचारौ।
कीजै[7] लाज सरन आए की, रवि-सुत-त्रास निवारौ।
जोग[8]-जज्ञ-जप-तप नहिं कीन्हौ, बेद बिमल नहिं भाख्यौ।
अति रस-लुब्ध स्वान जूठनि ज्यौं, अनत नहीं चित राख्यौ।

---

* (ना) मारू।
① उर—१। जिय—३।
② कर्म अपने जानि—१, ३, ८, १६। ③ तेब—१, २, ३, १९।
④ तज्यौ—२। ⑤ ओट—२, ३, ६, ८, १८।
⑥ (ना) टोड़ी।
⑦ प्रभु मेरे अवगुन न बिचारौ—१४। ⑧ धरि जिय—१४। ⑨ मैं न जोग जप तप व्रत—६, ८।

जिहिँ जिहिँ जोनि फिरयौ संकट-बस तिहिँ[1] तिहिँ यहै कमायौ ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-ग्रसित ह्वै[2] बिषय परम बिष खायौ ।
जौ गिरिपति मसि घोरि उदधि मैं, लै[3] सुरतरु बिधि[4] हाथ ।
मम कृत दोष लिखै[5] बसुधा भरि, तऊ नहीं मिति नाथ ।
तुमहिँ समान और नहिँ दूजौ काहि भजौं हौं दीन ।
कामी[6], कुटिल, कुचील, कुदरसन, अपराधी, मति-हीन ।
तुम तौ[7] अखिल, अनंत, दयानिधि, अबिनासी, सुख-रासि ।
भजन-प्रताप नाहिँ मैं जान्यौ, परयौं[8] मोह की फाँसि[9] ।
तुम सरबज्ञ, सबै बिधि समरथ, असरन-सरन मुरारि ।
मोह[10]-समुद्र सूर बूड़त है, लीजै भुजा पसारि ॥ १११ ॥

* राग सारंग

तुम हरि, साँकरे के साथी ।
सुनत पुकार, परम आतुर ह्वै, दौरि छुड़ायौ हाथी ।
गर्भ परीच्छित रच्छा कीन्ही, बेद-उपनिषद साखी ।
बसन बढ़ाइ[11] द्रुपद-तनया की सभा माँझ पति राखी ।
राज-रवनि गाईं ब्याकुल ह्वै, दै दै तिनकौं धीरक ।
मागध हति राजा सब छोरे, ऐसे प्रभु पर-पीरक ।
‡कपट रूप निसिचर तन धरिकै अमृत पियौ गुन मानी ।
‡कठिन परैं ताहू मैं प्रगटे, ऐसे प्रभु सुख-दानी ।

---

① तहँ तहँ—३, ८ । ② मैं—१, ३, ८ । ③ लै सारद निज—८ । ④ बिज—१, ३, १६ । ⑤ लिखै—३, १६ । ⑥ कपटी—१४ । ⑦ अखिल अनंत दयाल—१, ३, ८ । तुम प्रभु अजित अनंत लोकपति अघ-मोचन सुखरासि—१७ । ⑧ बँध्यौ—२, ३, ८ । ⑨ पास—३, ८ । ⑩ कृपानिधान—२, ३, ६ । * (ना) देवगंधार । (कां) परज । ⑪ बढ़ाए द्रुपदसुता के—२, ३, ६ ।

‡ ये दोनों चरण केवल (वें, का, ज्ञा, कां, श्या) में हैं । इनके पाठों में बड़ा अंतर है । (कां) का पाठ जो अधिक सार्थक है, यहाँ रक्खा गया है ।

ऐसेँ कहौं कहाँ लगि गुन-गन, लिखत अंत नहिँ लहिऐ ।
कृपासिंधु उनहीँ के लेखैँ मम लज्जा निरबहिऐ ।
सूर तुम्हारी आसा निबहै, संकट मैँ तुम साथै ।
ज्यौं जानौ त्यौं करौ, दीन की बात सकल तुव हाथै ॥११२॥

*राग सारंग

तुम बिनु साँकरैँ को काकौ ।
तुमहीँ देहु[1] बताइ देवमनि, नाम लेउँ धौं ताकौ ।
गर्भ परीच्छित रच्छा कीनी, हुतौ नहीँ बस माँ कौ ।
मेटी पीर परम पुरुषोत्तम, दुख मेट्यौ दुहुँ-धाँ कौ ।
हा करुनामय कुंजर टेरयौ, रह्यौ नहीँ बल, थाकौ ।
लागि पुकार तुरत छुटकायौ, काट्यौ बंधन ताकौ ।
अंबरीष कौँ साप देन गयौ, बहुरि[2] पठायौ ताकौँ ।
उलटी गाढ़ परी दुर्बासैँ, दहत सुदरसन जाकौँ ।
निधरक भए पांडु-सुत डोलत, हुतौ नहीँ डर काकौ ?
चारौँ बेद चतुर्मुख ब्रह्मा जस गावत हैँ ताकौ ।
जरासिंधु कौ जोर उघार्‌यौ, फारि कियौ दुफाँकौ ।
छोरी बंदि बिदा किए राजा, राजा ह्वै गए राँकौ ।
सभा-माँझ द्रौपदि-पति राखी, पति[3] पानिप कुल ताकौ[4] ।
बसन-ओट करि कोट बिसंभर, परन न दीन्हौ झाँकौ ।

---

* (ना) ईमन । (का, ना, रा) भैरौ । (पू) परज ।
① दीनदयाल—१, ३, ६, ८, १६, १८, १९ । ② डौर न पायौ ताकौ—२, ६, ८ । फिरयौ सुदर्सन चाकौ—१६ । ③ पति जानै गुन जाकौ—१ । ④ नाकौ—६, ८, १६ ।

भीर परैं भीषम-प्रन राख्यौ, अर्जुन कौ रथ हाँकौ ।
रथ तैं उतरि चक्र कर लीन्हौ, भक्तबछल-प्रन ताकौ ।
नरहरि ह्वै हिरनाकुस मारचौ, काम परचौ हो बाँकौ ।
गोपीनाथ सूर के प्रभु[1] कैं बिरद न लाग्यौ टाँकौ ॥११३॥

* राग कान्हरौ

तुम्हरी कृपा गोपाल[2] गुसाईं, हौं अपने अज्ञान न जानत ।
उपजत दोष नैन नहिं सूझत, रवि की किरनि उलूक न मानत ।
सब सुख-निधि[3] हरिनाम महामनि, सो पाएहुँ नाहीं पहिचानत ।
परम कुबुद्धि, तुच्छ रस-लोभी, कौड़ी लगि[4] मग की रज छानत ।
सिव कौ धन[5], संतनि कौ सरबस, महिमा बेद-पुरान बखानत ।
इते मान यह सूर महा सठ, हरि-नग[6] बदलि, बिषय[7]-बिष[8] आनत ॥११४॥

* राग बिलावल

अपनैं जान मैं बहुत करी ।

कौन भाँति हरि कृपा तुम्हारी, सो स्वामी, समुझी न परी ।
दूरि गयौ दरसन के ताईं[9], ब्यापक[10] प्रभुता सब बिसरी ।
मनसा-बाचा-कर्म-अगोचर सो मूरति नहिं नैन धरी ।
गुन बिन गुनी, सुरूप रूप बिन, नाम बिना[11] श्री स्याम हरी ।
कृपा-सिंधु, अपराध अपरिमित, छमौ, सूर तैं सब बिगरी ॥११५॥

---

① स्वामी है समुद्र करना को—३, १६ ।
* (ना) जैतश्री । (का, ना ई) बिलावल ।
② कृपाल—२ । गोबिंद—११ । ③ कौ सुख नाम महातम—२, ३ । ④ बदले मग रज छानत—१, ३, ८, १६ । लगि मग मग रज छानत—१४ । ⑤ ध्यान संत कौ—८ । ⑥ मग—३ । ⑦ बिघन खल—२ । ⑧ खरि—१ । थल—३ । खर—८ । घर—१४ ।
* (ना) अलहै बिलावल ।
⑨ कारन—२, ८, १४ । नाते—१६ । ⑩ तुव महिमा प्रभुता (बिभुता) बिसरी—२, १४ । ⑪ लेत—१, ३, ६, ८, १६, १८, १६ ।

राग बिलावल

तुम प्रभु[1], मोसौं बहुत करी।
नर-देही दीनी सुमिरन कौं, मो पापी तैं कछु न सरी।
गरभ-बास अति त्रास, अधोमुख, तहाँ न मेरी सुधि बिसरी।
पावक-जठर[2] जरन नहिं दीन्हौ, कंचन सी मम[3] देह करी[4]।
जग मैं जनमि पाप बहु कीन्हे, आदि-अंत लौं सब बिगरी[5]।
सूर पतित, तुम पतित-उधारन, अपने बिरद की लाज धरी॥११६॥

* राग धनाश्री

†मायौ जू, जौ जन तैं बिगरै।
तउ[6] कृपाल, करुनामय केसव, प्रभु नहिं जीय धरै।
जैसैं जननि-जठर-अंतरगत सुत अपराध करै।
तौऊ जतन करै अरु पोषै, निकसैं[7] अंक भरै।
जद्यपि मलय-बृच्छ जड़ काटै, कर कुठार पकरै।
तऊ सुभाव न[8] सीतल छाँड़ै, रिपु-तन-ताप हरै।
धर बिधंसि नल करत किरषि हल, बारि, बीज बिथरै।
सहि सन्मुख तउ सीत-उष्न कौं, सोई सुफल करै[9]।

---

① गोपाल—१, २, १६। ② जरत—२, ८। ③ मेरी—१, २, ८। ④ धरी—१, २। ⑤ निबरी—२।

* (ना) नटनारायनी।

† यह पद (स, शा, क) में एकाधिक स्थानो पर है। एक तो विनय में और दूसरे किंचित् पाठांतर से ब्रह्म स्तुति में। (ल, के) में यह केवल ब्रह्मास्तुति में है और (वे, ना) में केवल विनय में। इस संस्करण में भी यह विनय में ही रक्खा जाता है।

⑥ सुनि—५, १४। ⑦ विगसै—१, ३। ⑧ सुगंध सुसीतल—१। सुसील सुसीतल—८। ⑨ फरै—११।

रसना द्विज दलि दुखित होति बहु, तउ रिस कहा करै !
छमि[1] सब छोभ जु छाँड़ि, छवौ रस लै समीप सँचरै ।
कारन-करन, दयालु, दयानिधि, निज[2] भय दीन डरै ।
इहिँ कलिकाल-ब्याल-मुख-ग्रासित सूर सरन उबरै ॥११७॥

* राग कान्हरौ

दीन-नाथ अब बारि तुम्हारी ।
पतित उधारन बिरद जानि कै, बिगरी लेहु सँवारी ।
बालापन खेलत[3] ही खोयौ, जुवा बिषय-रस मातैँ ।
बृद्ध भए सुधि प्रगटी मोकौँ, दुखित पुकारत तातैँ ।
सुतनि तज्यौ, तिय तज्यौ, भ्रात तज्यौ, तन तैँ त्वच भई न्यारी ।
स्रवन न सुनत, चरन-गति थाकी, नैन भए जलधारी ।
पलित केस, कफ कंठ बिरुंध्यौ, कल न परति दिन-राती ।
माया-मोह न छाँड़ै तृष्ना, ये दोऊ दुख-थाती[4] ।
अब यह बिथा दूरि करिबे कौँ और न समरथ कोई ।
सूरदास-प्रभु करुना-सागर, तुमतैँ होइ सो होई ॥ ११८ ॥

* राग आसावरी

पतितपावन जानि सरन आयौ ।
उदधि-संसार सुभ नाम-नौका तरन, अटल अस्थान निजु निगम गायौ ।
ब्याध अरु गीध, गनिका, अजामील द्विज, चरन गौतम-तिया[5] परसि पायौ ।
अंत औसर अरध-नाम-उच्चार करि सुम्रत गज ग्राह तैँ तुम छुड़ायौ ।

---

(१) जद्यपि अग विभग होत है लै समीप सँचरै—१, १६ । छमि सत (छत) छोभ छीर मधु मिस्रित मुख समीप सँचरै—१४, १७ ।

(२) तजि नहिँ दीन टरै—३ । * (ना) आसावरी ।

(३) खेलन मैँ—३ । (४) दाती—१, १६ ।

(ना) मारू । (क) धनाश्री ।

(५) नारि—१, ३, ६, ८, १४, १६, १८, १६ ।

अबल प्रहलाद, बलि दैत्य[1] सुखहीँ भजत, दास ध्रुव चरन चित-सीस नायौ।
पांडु-सुत बिपति-मोचन महादास लखि, द्रौपदी-चीर नाना बढायौ।
भक्त-बत्सल कृपा-नाथ असरन-सरन, भार-भूतल-हरन जस[2] सुहायौ।
सूर प्रभु-चरन चित चेति चेतन[3] करत, ब्रह्म-सिव-सेस-सुक-सनक ध्यायौ॥११६॥

* राग आसावरी

(श्री) नाथ सारंगधर कृपा करि दीन पर, डरत भव-त्रास तैँ राखि लीजै।
नाहिँ जप, नाहिँ तप, नाहिँ सुमिरन-भजन, सरन आए की अब लाज कीजै।
जीव जल थल जिते, बेष धरि धरि तिते, अटत दुरगम अगम अचल भारे।
मुसल मुदगर हनत, त्रिबिध करमनि गनत, मोहिँ दंडत धरम-दूत हारे।
बृषभ, केसी, प्रलँब, धेनुकऽरु पूतना, रजक, चानूर से दुष्ट तारे।
अजामिल गनिका तैँ कहा मैँ घटि कियौ, तुम जो अब सूर चित तैँ बिसारे॥१२०॥

* राग आसावरी

कबहूँ तुम नाहिँ न गहरु कियौ।
सदा सुभाव सुलभ सुमिरन बस, भक्तनि अभै दियौ।
गाइ-गोप-गोपीजन-कारन गिरि कर-कमल लियौ।
अघ-अरिष्ट, केसी, काली मथि दावानलहिँ पियौ।
कंस-बंस बधि, जरासंध हति, गुरु-सुत आनि दियौ।
करषत सभा द्रुपद-तनया कौ अंबर अछय[4] कियौ।
सूर स्याम सरबज्ञ कृपानिधि, करुना-मृदुल-हियौ।
काकी सरन जाउँ नँदनंदन[5], नाहिँन और बियौ॥१२१॥

---

① बलवंत—३। ② जन—३, १४। ③ चिंतन—१४।

* (ना) मारू। (का, ज्ञा, कीं, रा) धनासिरी। (क) सारंग चर्चरी।

* (ना, कीं) सारंग। (का, ज्ञा, क, रा) धनाश्री।

④ आनि छयौ—२, ३, १४। ⑤ करुनामय—१, ८। जदुनंदन—१४।

*राग सारंग

तातैं तुम्हरौ भरोसौ आवै ।

दीनानाथ पतित-पावन, जस बेद-उपनिषद गावै ।
जौ तुम कहौ कौन खल तारयौ, तौ हौं बोलौं साखी ।
पुत्र-हेत सुर-लोक गयौ द्विज, सक्यौ न कोऊ राखी ।
गनिका किए कौन ब्रत-संजम, सुक-हित नाम पढ़ावै ।
मनसा करि सुमिरयौ गज बपुरैं[1], ग्राह प्रथम[2] गति पावै ।
बकी जु गई घोष मैं छल करि, जसुदा की गति दीनी ।
और कहति स्रुति, बृषभ-ब्याध की जैसी गति तुम कीनी ।
द्रुपद-सुताहिं दुष्ट दुरजोधन सभा माहिं पकरावै ।
ऐसौ और कौन करुनामय, बसन-प्रवाह बढ़ावै ?
दुखित जानिकै सुत कुबेर के, तिन्ह लगि आपु बँधावै ।
ऐसौ को ठाकुर, जन-कारन दुख सहि, भलौ मनावै ?
दुरबासा दुरजोधन पठयौ पांडव-अहित बिचारी ।
साक[3] पत्र लै सबै अघाए, न्हात भजे कुस डारी ।
देवराज मष-भंग जानि कै बरष्यौ ब्रज पर आई ।
सूर स्याम राखे सब निज कर, गिरि लै भए सहाई ॥१२२॥

*राग धनाश्री

दीन कौ दयाल सुन्यौ, अभय दान दाता ।
साँची बिरुदावलि, तुम जग के पितु माता ।

---

* (ना) धनाश्री ।
① बैरी—३, ८ । ② परम—१, २, ३, ६, १६ । ③ सुमिरत तीनौं लोक अघाए न्हात भज्यौ कुस डारी—१। साक पत्र लै सबै अघाने जन आपदा निवारी—२ ।
* (ना) भैरव चर्चरी ।

ब्याध-गीध-गनिका-गज इनमैं को ज्ञाता ?
सुमिरत तुम आए तहँ, त्रिभुवन बिख्याता ।
केसि-कंस दुष्ट मारि, मुष्टिक कियौ घाता ।
धाए[1] गजराज-काज, केतिक यह बाता !
तीनि लोक बिभव दियौ तंदुल के खाता ।
सरबस प्रभु रीझि देत तुलसी कैं पाता ।
गौतम की नारि तरी नैंकु परसि लाता ।
और को[2] है तारिबे कौं, कहौ कृपा-ताता ।
माँगत हैं सूर त्यागि[3] जिहिं तन-मन राता ।
अपनी प्रभु भक्ति देहु जासौं तुम[4] नाता ॥१२३॥

* राग मारू

सो कहा जु मैं न कियौ (जौ) सोइ चित्त धरिहौ ।
पतित-पावन-बिरद साँच (तौ) कौन भाँति करिहौ ?
जब तैं जग जनम लियौ, जीव नाम[5] पायौ ।
तब तैं छुटि औगुन इक नाम न कहि आयौ ।
साधु-निंदक, स्वाद-लँपट, कपटी, गुरु-द्रोही ।
जेते अपराध जगत, लागत सब मोहीं ।
गृह-गृह प्रति द्वार फिरचौ, तुमकौं प्रभु छाँड़े ।
अंध अंध टेकि चलै, क्यौं न परै गाड़े[6] ।

---

① अपने ध्रुव राज काज—१, २, ३, १४, १६ । ② कुटिल तारि तारि काहे गर्बाता—१, १६ । पतित तारि तारि मम हित करु बाता—३ । ③ त्याग—२, १४ । ④ चित राता—२ । है नाता—१६ । धनाश्रो । ⑤ हौं कहायौ—१ । ⑥ खाड़े—२, ३ ।

* (ना) देव साख । (क)

‡सुकृती-सुचि-सेवकजन काहि न जिय भावै।
‡प्रभु की प्रभुता यहै जु दीन सरन पावै।
कमल[1]-नैन, करुनामय, सकल-अँतरजामी।
बिनय कहा करै सूर, कूर, कुटिल, कामी॥ १२४॥

* राग सारग

कौन गति करिहौ मेरी नाथ!
हौं तौ कुटिल, कुचील, कुदरसन, रहत बिषय के साथ।
दिन बीतत माया कैं लालच, कुल-कुटुंब कैं हेत।
सिगरी रैनि नींद भरि सोवत जैसैं पसू अचेत।
कागद[2] धरनि, करै द्रुम लेखनि, जल-सायर मसि घोरै।
लिखै गनेस जनम भरि मम कृत, तऊ दोष नहिं ओरै।
‡ गज, गनिका अरु बिप्र अजामिल, अगनित अधम उधारे।
‡ यहै जानि अपराध करे मैं तिनहूँ सौं अति भारे।
लिखि लिखि मम अपराध जनम के, चित्रगुप्त अकुलाए।
भृगु रिषि आदि सुनत चक्रित भए, जम सुनि सीस डुलाए।
परम पुनीत-पवित्र, कृपानिधि, पावन-नाम कहायौ।
सूर पतित जब सुन्यौ बिरद यह, तब धीरज मन आयौ॥ १२५॥

* राग केदारौ

मेरी कौन गति ब्रजनाथ?
भजन बिमुखऽरु सरन नाहीं, फिरत बिषयनि साथ।

---

‡ ये दोनों चरण केवल (क) में हैं।
(१) स्यामसुँदर—१४।
* (ना) बिलावल।
(२) कागर—६।
‡ ये दोनों चरण केवल (वे, स, श्या) में हैं।
* (ना) भैरवी।

हौं पतित, अपराध-पूरन, भरयौ[1] कर्म-विकार।
काम क्रोधऽरु लोभ चितवौं, नाथ तुमहिँ बिसार।
उचित अपनी कृपा करिहौ तबै तौ बनि जाइ।
सोइ करहु जिहिँ चरन सेवै सूर जूठनि खाइ॥१२६॥

* राग धनाश्री

सोइ कछु कीजै दीन-दयाल।
जातैँ जन छन चरन न छाँड़ै करुना-सागर, भक्त-रसाल।
इंद्री अजित, बुद्धि बिषयारत, मन[2] की दिन[3]-दिन उलटी चाल।
काम-क्रोध-मद-लोभ-महाभय, अह-निसि नाथ, रहत[4] बेहाल।
जोग-जुगति[5], जप-तप, तीरथ-ब्रत, इनमैँ एकौ अंक[6] न भाल।
कहा करौं, किहिँ भाँति रिझावौं हौं तुमकौं सुंदर नँदलाल।
सुनि समरथ, सरबज्ञ, कृपानिधि, असरन-सरन, हरन जग-जाल।
कृपानिधान, सूर की यह गति,कासौं कहै[7] कृपन इहिँ काल!॥१२७॥

* राग गूजरी

कृपा अब कीजिऐ बलि जाउँ।
नाहिंन मेरैँ और कोउ, बलि, चरन-कमल बिन ठाउँ।
हौं असोच, अक्रित, अपराधी, सनमुख होत लजाउँ।
तुम कृपाल, करुनानिधि, केसव, अधम - उधारन - नाउँ।

---

① जरयौ—१। जरौ—८।
② तिनकी—२। ③ अनुदिन—८, १४। ④ भ्रमत—३, १६। ⑤ जज्ञ—१, १६। ⑥ अग—२, १४। ⑦ कही परै यह हाल—८।
* (ना) सारंग। (क) आसावरी।
* (ना) जयतश्री। (क, काँ) केदारा।

काकैं द्वार जाइ होउँ ठाढ़ौ, देखत काहि सुहाउँ।
असरन-सरन नाम तुम्हरौ, हौं कामी, कुटिल, निभाउँ।
कलुषी अरु मन मलिन बहुत मैं [1]सेंत-मेंत न बिकाउँ।
सूर पतितपावन पद-अंबुज, सो[2] क्यौं परिहरि जाउँ ॥१२८॥

* राग सारंग

दीन-दयाल, पतित-पावन प्रभु, बिरद बुलावत कैसौ ?
कहा भयौ गज-गनिका तारैं जो[3] न तारौ जन ऐसौ।
जो कबहूँ नर जन्म पाइ नहिं नाम तुम्हारौ लीनौ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह तजि, अनत नहीं चित दीनौ।
अकरम, अबिधि, अज्ञान, अवज्ञा, अनमारग, अनरीति।
जाकौ नाम लेत अघ उपजै, सोई[4] करत अनीति।
इंद्री-रस-बस भयौ, भ्रमत रह्यौ, जोइ कह्यौ सो कीनौ।
नेम-धर्म-ब्रत, जप-तप-संजम, साधु-संग नहिं चीनौ।
दरस-मलीन, दीन दुरबल अति, तिनकौं[5] मैं दुख-दानी।
ऐसौ सूरदास जन हरि कौ, सब अधमनि मैं मानी[6] ॥१२९॥

* राग देवगंधार

मोहिं[7] प्रभु तुमसौं होड़ परी।
ना जानौं करिहौ[8] अब कहा तुम नागर नवल हरी।

---

① सेंत्यौ तैं—१४। ② पारस क्यौ परसावै—१४। * (ना) आसावरी। ③ जौ—३, ८। ④ सो मै—१, २, ३। ⑤ तिन कैसे १, ३। दुखदानी—१। इहिं (तिहिं) को मैं दुखदानी—२, १६। सहे कुमति दुखखानी—८। ⑥ नामी— (ना) सारंग। १७। ⑦ मोसौं तुमसौं होड़ परी— ⑧ जु—१, ३, १६।

हुतीँ जिती जग मैँ अधमाई सो मैँ सबै करी।
अधम[1]-समूह उधारन-कारन तुम जिय जक पकरी।
मैँ जु रह्यौँ राजीव-नैन, दुरि, पाप-पहार-दरी।
पावहु मोहिँ कहाँ तारन कौँ, गूढ़-गँभीर खरी।
एक अधार साधु-संगति कौ, रचि पचि मति[2] सँचरी।
याहू[3] सौँज संचि नहिँ राखी, अपनी धरनि धरी।
मोकौँ मुक्ति बिचारत हौ प्रभु[4], पचिहौ[5] पहर-घरी।
श्रम तैँ तुम्हैं पसीना ऐहै, कत यह टेक[6] करी?
सूरदास बिनती कह बिनवै, दोषनि देह भरी।
अपनौ बिरद सम्हारहुगे तौ यामैँ सब निबरी ॥१३०॥

* राग धनाश्री

नाथ[7] सकौ तौ मोहिँ उधारौ।
पतितनि मैँ बिख्यात पतित हौँ, पावन नाम तुम्हारौ।
बड़े पतित पासंगहु नाहीँ, अजामिल[8] कौन बिचारौ।
भाजे नरक नाम सुनि मेरौ, जम[9] दीन्यौ हठि तारौ।
छुद्र पतित तुम तारि रमापति, अब न करौ जिय गारौ।
सूर पतित कौँ ठौर नहीँ[10], तौ बहत बिरद कत भारौ? ॥१३१॥

---

① पतित समूहनि उद्धरिबे कौ—२, ३, ६, १६। ② कै—१, ३, १६। ③ ज्यौं गज शुचि नहाइ निरमल करि पुनि रज सीस धरी—१, १६। ④ तुम—२। ⑤ अचिरज अधिक खरी—२। ⑥ जकनि करी—१। जक पकरी—३, ८।

* (ना) सारंग।

⑦ कब तुम मोसौ पतित उधारौ—२, ३, ६, ८, १८, १६। नाथ जू अबके मोहिँ उबारो—१४। ⑧ अजामेल जु बिचारौ—२। ⑨ जमनि दियौ—१, ३, ६, १४, १६। ⑩ कहूँ नहिँ है हरि नाम सहारौ—१, २, ३, ६, ८, १८, १६।

राग धनाश्री

तुम कब मो सौं पतित[1] उधारयौ ।
काहे कौं हरि बिरद बुलावत[2], बिन मसकत को तारयौ ।
गीध[3], ब्याध, गज, गौतम की तिय, उनकौ कौन निहोरौ ।
गनिका तरी आपनी करनी, नाम भयौ प्रभु तोरौ ।
अजामील[4] तौ बिप्र, तिहारौ, हुतौ पुरातन दास ।
नैंकु चूक तैं यह गति कीनी, पुनि बैकुंठ निवास ।
पतित जानि तुम सब जन तारे, रह्यौ[5] न कोऊ खोट ।
तौ जानौं जौ मोहिं तारिहौ, सूर कूर कबि ठोट ॥१३२॥

* राग धनाश्री

पतित-पावन हरि, बिरद तुम्हारौ कौनैं नाम धरयौ ?
हौं तौ दीन, दुखित, अति दुरबल, द्वारैं रटत[6] परयौ ।
चारि पदारथ दिए, सुदामा तंदुल भेंट धरयौ ।
द्रुपद-सुता की तुम पति राखी, अंबर दान करयौ ।
संदीपन सुत तुम प्रभु दीने, बिद्या-पाठ करयौ ।
बेर सूर की निठुर भए प्रभु, मेरौ कछु न सरयौ ॥१३३॥

* राग धनाश्री

† आजु हौं एक-एक[7] करि टरिहौं ।
कै[8] तुमहीं कै हमहीं, माधौ, अपने भरोसैं लरिहौं ।

---

(१) अधम—६ । (२) बहत हौ—१६ । (३) ब्याध गीध पूतना जु तारी तिनकौ कहा निहोरौ—१४ । (४) अजामील द्विज जन्म जन्म कौ—१४ । (५) गह्यौ—२, ३ ।

* (ना) भैरव । (क) परज । (को) सारंग ।

(६) रहत—२,३ ।

† (क) कल्यान । (कौ) सोरठ ।

† यह पद (का, ना, रा) मे नहीं है ।

(७) कोद—१६ । (८) मोहिं कहा डरपावत हौ प्रभु अपने पूरे पर लरिहौं—१४ ।

हौं तौ पतित सात पीढ़िनि कौ, पतितै[1] ह्वै निस्तरिहौं ।
अब[2] हौं उघरि नच्यौ चाहत हौं, तुम्हैं बिरद बिन करिहौं ।
कत[3] अपनी परतीति नसावत, मैं पायौ हरि हीरा[4] ।
सूर[5] पतित तबहीं उठिहै, प्रभु, जब हँसि दैहौ बीरा ॥१३४॥

* राग नट

कहावत ऐसे त्यागी दानि ।
चारि पदारथ दिए सुदामहिं अरु गुरु के सुत आनि ।
रावन के दस मस्तक छेदे, सर[6] गहि सारँग-पानि ।
लंका दई बिभीषन जन कौं, पूरबली पहिचानि ।
बिप्र[7] सुदामा कियौ अजाची, प्रीति पुरातन जानि ।
सूरदास सौं[8] कहा निहोरौ[9], नैननि हूँ की हानि ! ॥१३५॥

* राग धनाश्री

मोसौं बात सकुच तजि कहिये ।
कत ब्रीड़त[10], कोउ और बतावौ, ताही के ह्वै रहिये ।
कैधौं तुम पावन प्रभु नाहीं, कै कछु मो मैं झोलौ[11] ।
तौ हौं अपनी फेरि सुधारौं, बचन एक जौ बोलौ ।
तीन्यौ पन मैं और निबाहे, इहै स्वाँग कौं काछे ।
सूरदास कौं यहै बड़ा दुख, परत सबनि के पाछे ॥१३६॥

---

① जौ जिय ऐसी धरिहौ—६ । ② अब तौ आइ बनी जग जीवनि—१६ । ③ अब तौ तुम परतीति नसाई क्यौं मन मानै हियरा—१४ । ④ हीरो—१६ । ⑤ सूरदास साँची तब थपिहौ जो हँसि दैहौ बीरा—१४ । सूर स्याम तौ हीये बसिहै जो न देहो हसि बीरो—१६ ।

* (ना) ईमन । (कां) बिलावल ।

⑥ कर गहि सारँग बान—६, ८, १६ । ⑦ ध्रुव प्रहलाद अमर करि राखे सुरपति ऊपर जानि—१६ । ⑧ कौ—२, ८ । ⑨ निठुर भए—१, ८, १६ । निठुरई—१४ ।

(ना) बिहागरो । (कां) सारंग ।

⑩ भरमावत हौ तुम मोकौं कहु काके—२, ३, १६ । बहरावत हौ तुम मोकौं कहु काके—६, ८, १८ । ⑪ जोलौ—२, ३, ६, ८, १६ ।

* राग सारंग

प्रभु, हौं बड़ी बेर कौ ठाढौ ।
और[1] पतित तुम जैसे तारे, तिनही[2] मैं लिखि काढौ ।
जुग जुग बिरद यहै चलि आयौ, टेरि कहत हौं यातैं[3] ।
मरियत लाज पाँच[4] पतितनि मैं, हौं अब[5] कहौ घटि कातैं ?
कै प्रभु हारि मानि कै बैठौ, कै करौ बिरद सही ।
सूर पतित जौ झूठ कहत है, देखौ खोजि बही ॥१३७॥

* राग सारंग

प्रभु, हौं सब पतितनि कौ टीकौ ।
और पतित सब दिवस चारि के, हौं तौ[6] जनमत ही कौ ।
बधिक, अजामिल, गनिका तारी और पूतना ही कौं ।
मोहिं छाँड़ि तुम और उधारे, मिटै सूल क्यौं जी कौ ?
कोउ न समरथ अघ करिबे कौं, खैंचि कहत हौं लीकौ ।
मरियत लाज सूर पतितनि मैं, मोहूँ[7] तैं को नीकौ ! ॥१३८॥

राग सारंग

† हौं तौ पतित-सिरोमनि, माधौ !
अजामील बातनि हीं तारचौ, हुतौ जु मोतैं[8] आधौ ।
कै प्रभु हार मानि कै बैठौ, कै अबहीं[9] निस्तारौ ।
सूर पतित कौं और ठौर नहिं, है हरि-नाम सहारौ ॥१३९॥

---

* (ना) बरारी। (का) मारू।

① जैसें और पतित सब तारे त्यों मोहू—१७। ② तिनहूँ तैं लखि ठाढ़ौ—६। तिनहूँ तैं लखि गाढ़ौ—८। ③ तातैं—३, ८। ④ बचे—३। ⑤ हौं ही हो घटि काते—६।

* (ना) नट। (क, का) धनाश्री।

⑥ जनमांतर ही कौ—१, १९। नृप जनमत ही कौ—२। ⑦ कहत सबनि मैं नीकौ—२, १४। हमहू में को नीको—१९।

† यह पद (ना) में नहीं है।

* राग सारंग

माधौ जू, मोतैं और न पापी ।
घातक, कुटिल, चबाई, कपटी, महाक्रूर, संतापी ।
लंपट, धूत, पूत दमरी कौ, बिषय-जाप कौ[1] जापी ।
भच्छि अभच्छ, अपान पान करि, कबहुँ न मनसा धापी ।
कामी, बिवस कामिनी कैं रस, लोभ-लालसा थापी ।
मन-क्रम-बचन दुसह सबहिनि सौं कटुक-बचन-आलापी ।
जेतिक अधम उधारे प्रभु तुम, तिनकी गति मैं नापी ।
सागर-सूर बिकार भर्‌यौ जल, बधिक[2]-अजामिल बापी ॥१४०॥

* राग कान्हरौ

हरि, हौं सब पतितनि-पतितेस[3] ।
और न सरि करिबे कौं दूजौ, महामोह मम देस[4] ।
आसा कैं सिंहासन बैठ्यौ, दंभ-छत्र सिर तान्यौ ।
अपजस अति नकीब कहि टेर्‌यौ, सब सिर आयसु मान्यौ ।
मंत्री काम-क्रोध निज, दोऊ अपनी अपनी रीति ।
दुबिधा[5]-दुंद रहैं निसि-बासर, उपजावत बिपरीति ।
मोदी लोभ, खवास मोह के, द्वारपाल अहँकार ।
पाट बिरध[6] ममता है मेरैं, माया कौ अधिकार ।
दासी तृष्ना भ्रमत टहल-हित, लहत न छिन बिश्राम ।

---

* (ना) सोरठ । (क) नट, धनाश्री ।
१, २, ३, ८, १६ ।
१. (ना) नट ।
८, १६ । ④ दीस—२, ३, ६, ८, १६ । ⑤ काया नगर—६, ८ । ⑥ अहं—१, १६ ।
① नित—१४ । ② पतित-
③ कौ ईस—२, ३, ६,

अनाचार-सेवक सौं मिलिकै करत चबाइनि[1] काम।
बाजि मनोरथ, गर्व मत्त गज, असत[2]-कुमत रथ-सूत।
पायक मन, बानैत अधीरज, सदा दुष्ट-मति दूत।
गढवै भयौ नरकपति मोसौं, दीन्हे रहत किवार।
सेना साथ बहुत भाँतिन की, कीन्हे पाप अपार।
निंदा जग उपहास करत, मग बंदीजन जस गावत।
हठ, अन्याय, अधर्म, सूर नित[3] नौबत द्वार बजावत॥१४१॥

राग धनाश्री

† साँचौ सेा लिखहार कहावै।
काया-ग्राम मसाहत करि कै, जमा बाँधि ठहरावै।
मन-महतो करि कैद अपने मैं, ज्ञान-जहतिया लावै।
माँड़ माँड़ि खरिहान क्रोध कौ, पोता-भजन भरावै।
बट्टा काटि कसूर भरम कौ, फरद तलै लै डारै।
निहचै एक असल पै राखै, टरै न कबहूँ टारै।
करि अवारजा प्रेम प्रीति कौ, असल तहाँ खतियावै।
दूजे करज दूरि करि दैयत, नैंकु न तामैं आवै।
मुजमिल जोरै ध्यान कुल्ल कौ, हरि सौं तहँ लै राखै।
निर्भय रूपै लेाभ छाँड़िकै, सोई वारिज राखै।

---

① चौगुनेा काम—३, १८। ② असत कुसत रथ सूत—११। ③ नट—६, ८।

† यह पद (वे, स, ल, शा, वृ, कां, श्या) में है। इसका पाठ सब प्रतियों में बड़ा अस्त-व्यस्त तथा भ्रष्ट है। उन सब के पाठों को मिलाकर भाव तथा अर्थ पर ध्यान रखते हुए ऊपर का पाठ-संशोधन किया गया है।

जमा-खरच नीकैं करि राखै, लेखा समुझि बतावै।
सूर आपु गुजरान मुहासिब, लै जवाब पहुँचावै ॥१४२॥

* राग धनाश्री

† हरि, हौं ऐसो अमल कमायौ।
साबिक जमा हुती जो जोरी, मिनजालिक तल ल्यायौ।
वासिल बाकी, स्याहा मुजमिल, सब अधर्म की बाकी।
चित्रगुप्त सु होत मुस्तौफी, सरन गहूँ मैं काकी?
मोहरिल पाँच साथ करि दीने, तिनकी बड़ी बिपरीति।
जिम्मैं उनके, माँगैं मोतैं, यह तौ बड़ो अनीति।
पाँच-पचीस साथ अगवानी, सब मिलि काज बिगारे।
सुनी तगीरो, बिसरि गई सुधि, मो तजि भए नियारे।
बढ़ौ तुम्हार बरामद हूँ कौ लिखि कीनौ है साफ।
सूरदास की यहै बीनती, दस्तक कीजै माफ ॥१४३॥

* राग सारग

हरि[1], हौं सब पतितनि कौ राजा।
निंदा पर-मुख पूरि रह्यो जग, यह निसान नित बाजा[2]।
तृष्ना देसऊ सुभट मनोरथ, इंद्री खड्ग[3] हमारी।
मंत्री काम कुमति दीबे कौं, क्रोध रहत प्रतिहारी।

---

* (ना) विलावल। (का) नट। (ना) बिहागरौ। (क) धनाश्री।

† यह पद (वे, ना, स, काँ, श्या) में है। सभी प्रतियों में इसका पाठ बड़ा अस्त-व्यस्त है। तथापि सब पाठों को मिलाकर अर्थानुरोध का ध्यान रखते हुए, इसे शुद्ध तथा सार्थक बनाने की चेष्टा की गई है।

① प्रभु—१। ② गाजा—१। ③ किरिषि—२।

गज-अहँकार चढ़्यौ दिग-बिजयो, लोभ-छत्र करि[1] सीस ।
फौज[2] असत-संगति की मेरैं, ऐसो हौं मैं ईस ।
मोह-मया बंदी गुन गावत, मागध दोष-अपार ।
सूर पाप को गढ़ दृढ़ कीन्हो, मुहकम लाइ किवार ॥१४४॥

* राग धनाश्री

† हरि, हौं सब पतितनि कौ राउ ।
को करि सकै बराबरि मेरी, सो धौं[3] मोहिं बताउ ।
ब्याध, गीध अरु पतित पूतना, तिनतैं[4] बड़ौ जु और ।
तिनमैं अजामील, गनिकादिक, उनमैं मैं सिरमौर ।
जहँ-तहँ सुनियत यहै बड़ाई, मो समान नहिं आन ।
और हैं आजकाल के राजा, मैं तिनमैं सुलतान ।
अब लगि प्रभु तुम बिरद बुलाए, भई न मोसौं भेंट ।
तजौ बिरद कै मोहिं उधारौ, सूर कहै[5] कसि[6] फेंट ॥१४५॥

* राग सारंग

हरि, हौं सब पतितनि कौ नायक ।
को करि सकै बराबरि मेरी, और[7] नहीं कोउ लायक ।
जो प्रभु अजामील कौं दीन्हौ, सो पाटौ लिखि पाऊँ ।
तौ विस्वास होइ मन मेरैं, औरौ पतित बुलाऊँ ।

---

① धरि—२, १४, १७ । ② भुवपति ग्यान भज्यौ निज भुव तजि सत संगति पति ईस—१७ ।

* (ना) नट । (का, ना) सारंग ।

† यह पद (ल, का) में नहीं है ।

③ तो—१ । ④ मैं बढ़ि जो और—१ । ⑤ गही—१, ३, १६ । ⑥ हँसि—२, ३, १८ ।

५ (क, का) धनाश्री ।

⑦ को इतनौ है—८ । और नाहिंनैं—१७ ।

बचन बाहँ[1] लै चलौं गाँठि दै, पाऊँ[2] सुख अति भारी।
यह मारग चौगुनौ चलाऊँ, तौ पूरौ ब्यौपारी।
यह[3] सुनि जहाँ तहाँ तैं सिमिटैं, आइ होइ इक ठौर।
अब कैं तौ आपुन[4] लै आयौ, बेर बहुर की और।
होड़ा होड़ो मनहिं भावते किए पाप भरि पेट।
ते[5] सब पतित पाय-तर डारौं, यहै हमारी भेंट।
बहुत भरोसौ जानि तुम्हारौ, अघ कीन्हे भरि भाँड़ो।
लीजे बेगि निबेरि तुरतहीं सूर पतित कौ टाँड़ो ॥१४६॥

* राग धनाश्री

मोसौं पतित न और गुसाईं।
अवगुन मोपैं अजहुँ न छूटत, बहुत पच्यौ अब ताईं।
जनम जनम तैं हौं भ्रमि आयौ कपि गुंजा की नाईं।
परसत[6] सीत जात नहिं क्यौंहूँ, लै लै निकट बनाईं[7]।
मोह्यौ[8] जाइ कनक-कामिनि-रस, ममता[9] मोह बढाई।
जिह्वा-स्वाद मीन ज्यौं उरझ्यौ, सूझी नहीं फँदाई।
सोवत मुदित भयौ सपने मैं पाई निधि जो पराई।
जागि परैं कछु हाथ न आयो, यौं जग की प्रभुताई[10]।
सेए[11] नाहिं चरन गिरिधर के, बहुत करी अन्याई।
सूर पतित कौं ठौर कहूँ नहिं, राखि लेहु सरनाई ॥१४७॥

---

① मानि—१, ३। ② होइ भरोसो भारी—६, ८। ③ पतित उधारन नाम सुन्यौ जब सरन गही तकि दौर—१। ④ अपनी—१। इतने—३,५,६,८,१४। अपने—१६। ⑤ सबै पतित पायनि तर—१, ३, ८।
* (ना) भैरव। (क) टोड़ी।
⑥ ता परसत गयौ सीत न कबहूँ—१४। ⑦ बताई—२। तपाई—१४, १७। ⑧ लुबध्यौ—१४, १७। ⑨ मिथ्या—६, ८। ⑩ निठुराई—६, ८। ⑪—परसे १, ३, १६।

राग जंगला—तिताला

† मो सम कौन कुटिल खल कामी ।
तुम सौं कहा छिपी करुनामय, सब के अंतरजामी !
जो तन दियौ ताहि बिसरायौ, ऐसौ नोन-हरामी ।
भरि भरि द्रोह बिषै कौं धावत, जैसैं सूकर ग्रामी ।
सुनि सतसंग होत जिय आलस, बिषयिनि सँग बिसरामो ।
श्रीहरि-चरन छाँड़ि बिमुखनि की निसि-दिन करत गुलामो ।
पापी परम[1], अधम, अपराधी, सब पतितनि मैं नामी ।
सूरदास प्रभु अधम-उधारन सुनियै श्रीपति स्वामी ॥१४८॥

* राग धनाश्री

हरि, हौं महापतित, अभिमानी ।
परमारथ सौं बिरत[2], बिषय-रत, भाव-भगति नहिं नैंकहु जानी ।
निसि-दिन दुखित मनोरथ करि करि, पावतहूँ तृष्ना न बुझानी ।
सिर पर मीच[3], नीच नहिं चितवत, आयु घटति ज्यौं अंजुलि-पानी ।
बिमुखनि[4] सौं रति[5] जोरत दिन-प्रति, साधुनि सौं न कबहुँ पहिचानी ।
तिहिं बिनु रहत नहीं निसि बासर, जिहिं सब दिन रस-बिषय[6] बखानी ।
माया[7]-मोह-लोभ के लीन्हें, जानी न बृंदाबन रजधानी ।
नवल किसोर जलद[8]-तनु सुंदर, बिसरयो सूर सकल-सुख-दानी ॥१४९॥

---

† यह पद (शा) तथा राग-कल्पद्रुम से संकलित किया गया है ।
① पतित ।
* (ना) मालश्री । (कां) कान्हरा ।
② पीठि—१ । ③ काल—१, २, ३, १४, १६ । ④ बिषियनि—२ । ⑤ हित—८ । ⑥ रीति—१४ । ⑦ माया मोह लोभ नहिं जाने (जामें) ऐसी बृंदाबन रजधानी—१, १६ । ⑧ जलज सुंदर बपु—६,८ ।

* राग धनाश्री

माधो जू, मोहिँ काहे की लाज।

‡जनम जनम यौँ हीँ भरमायौ, अभिमानी, बेकाज।
जल[1]-थल जीव जिते जग, जीवन निरखि दुखित भए देव!
गुन[2]-अवगुन की समुझ न संका, परि[3] आई यह टेव।
अब[4] अनखाइ कहौं, घर अपनैँ राखौ बाँधि-बिचारि।
सूर स्वान के पालनहारैँ आवति हैँ नित गारि ॥१५०॥

* राग सारंग

माधौ जू, सो अपराधी हौं।

जनम पाइ कछु भलौ न कीन्हौ, कहौ[5] सु क्यौं निबहौं?
सब सौँ बात[6] कहत जमपुर की गज-पिपीलिका लौं।
पाप-पुन्य कौ फल दुख सुख है, भोग[7] करौ जोइ गौं।
मोकौं पंथ बतायौ सोई नरक कि सरग लहौं।
काकैँ बल हौं तरौं गुसाईँ, कछु न भक्ति मो मौं।
हँसि बोलौ जगदीस जगत-पति, बात तुम्हारी यौं।
करुना-सिंधु कृपाल, कृपा[8] बिनु काकी सरन तकौं।

---

* (ना) सोरठ। (क, का) सारंग।

‡ इस चरण के पश्चात् (क, पू) में ये दो पंक्तियाँ अधिक है — कोटिक (अ)कर्म किए करुनामय या देही के साज। निसिबासर बिषयारस रुचि ते कबहुँ न आयौ बाज॥

① बहुत बार जलथल जग जायो भ्रमि आयौ दिन देव—१४। ② अवगुन की कुछ सकुच न संका—१४, १७। ③ परी आनि—१६। ④ सरबस खाइ रह्यौ घर बैठ्यौ करौ न कछू बिचारि—१, २, ३, ६, ८, १६, १८, १६।

(ना) भोपाली।

⑤ धरौ न मन मैं भौ—२, ३, १६, १८। ⑥ रीति—१, १६,। ⑦ लोग करै जिय कौ १७। ⑧ कृपानिधि भजौ सरन को क्यौं—१, २, ६, ८, १६। कृपानिधि तजौं सरन को क्यौं—१८।

बात सुने तैं बहुत हँसौगे, चरन-कमल की सौं।
मेरी देह छुटत जम पठए, जितक दूत घर मौं।
लै लै ते हथियार आपने, सान धराए त्यौं।
जिनके दारुन दरस देखि कै, पतित करत म्यौं म्यौं।
दाँत चबात चले जमपुर तैं, धाम हमारे कौं।
ढूँढ़ि फिरे घर कोउ न बतायौ, स्वपच कोरिया लौं।
रिस भरि गए परम किंकर तब, पकरयौ छुटि न सकौं।
लै लै फिरे नगर मैं घर घर, जहाँ मृतक हो हौं।
ता रिस मैं मोहिं बहुतक मारयौ, कहँ लगि बरनि सकौं।
हाय हाय मैं परयौ पुकारौं, राम-नाम न कहौं।
ताल-पखावज चले बजावत, समधी सोभा कौं।
सूरदास की भली बनी है, गजी गई अरु पौं॥१५१॥

* राग कान्हरौ

थोरे जीवन भयौ[1] तन भारौ।

कियौ न संत-समागम कबहूँ, लियौ न नाम तुम्हारौ।
अति उनमत्त मोह-माया-बस नहिं कछु बात बिचारौ।
करत उपाव न पूछत[2] काहू, गनत न खाटौ-खारौ।
इंद्री-स्वाद-बिबस निसि-बासर, आप अपुनपौ हारौ।
जल औंड़े[3] मैं चहुँ दिसि पैरयौ, पाउँ कुल्हारौ मारौ।

---

* (ना ३) देसाख। (का, ना ३, क, रा) केदार। (कां) धनाश्री।

① बहु—१, ६, ८, १६।
② सूझत कबहूँ—२, ३, ६, ८।
③ जल उनमत्त मीन ज्यौं बपुरो—१, १६। जल बुदबुद मौ जीवन बपुरौ—२।

बाँधी मोट पसारि त्रिबिध गुन, नहिँ कहुँ बीच उतारौ ।
देख्यौ सूर बिचारि सीस परी, तब तुम सरन पुकारौ ॥१५२॥

* राग धनाश्री

अब मैँ नाच्यौ बहुत गुपाल ।
काम-क्रोध कौ पहिरि चोलना, कंठ विषय की माल ।
महामोह के नूपुर बाजत, निंदा-सब्द-रसाल ।
भ्रम-भोयौ मन भयौ पखावज, चलत असंगत चाल ।
तृष्ना नाद करति घट भीतर, नाना बिधि दै ताल ।
माया को कटि फेँटा बाँध्यौ, लोभ-तिलक दियौ भाल ।
कोटिक कला काछि दिखराई जल-थल सुधि नहिँ काल ।
सूरदास की सबै अबिद्या दूरि करौ नँदलाल ॥ १५३ ॥

* राग धनाश्री

ऐसैँ करत अनेक जन्म गए, मन संतोष न पायौ ।
दिन-दिन अधिक दुरासा लाग्यौ, सकल लोक भ्रमि आयौ ।
सुनि-सुनि स्वर्ग, रसातल, भूतल, तहाँ-तहाँ उठि धायौ ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-अगिनि तैँ कहूँ न जरत बुझायौ ।
सुत[1]-तनया-बनिता-बिनोद-रस, इहिँ[2] जुर-जरनि जरायौ ।
मैँ अग्यान अकुलाइ, अधिक लै, जरत माँझ घृत नायौ ।
‡भ्रमि-भ्रमि अब हार्‌यौ हिय अपनैँ, देखि अनल जग छायौ ।
‡सूरदास-प्रभु तुम्हरी कृपा बिनु, कैसैँ जात नसायौ ! ॥१५४॥

---

* (ना, कौं) सारग ।
: (ना) ईमन (क) सारंग ।
① स्रक चंदन—१, २, ३, १४, १८, १६ । ② यह जर जरनि वितायो—१ ।
‡ ये दोनों चरण (ना, स, रा) में नहीं हैँ । उन दोनों में सूरदास का नाम छठी पंक्ति में इस तरह रक्खा गया है—"मैँ अग्यान अकुलाइ सूर प्रभु जरत माहिँ घृत नायो" ।

* राग धनाश्री

जनम तौ बादिहिँ गयौ सिराइ ।
हरि-सुमिरन नहिँ गुरु की सेवा, मधुबन बस्यौ न जाइ ।
अब की बार मनुष्य-देह धरि, कियौ[1] न कछू उपाइ ।
भटकत फिरयौ स्वान की नाईं नैंकु जूठ कैं चाइ ।
कबहुँ न रिझए लाल गिरिधरन, बिमल-बिमल जस गाइ ।
प्रेम सहित पग बाँधि घूँघरू, सक्यौ न अंग नचाइ ।
श्रीभागवत सुनी नहिँ स्रवननि[2] नैंकहु[3] रुचि उपजाइ ।
आनि भक्ति करि, हरि-भक्तनि के कबहुँ न धोए पाइ ।
अब[4] हौं कहा करौं करुनामय, कीजै कौन उपाइ ।
भव-अंबोधि, नाम-निज-नौका, सूरहिँ लेहु चढ़ाइ ॥ १५५ ॥

* राग गौरी

माधौ जू, तुम कत जिय बिसरयौ ?
जानत सब अंतर की करनी, जो मैं करम करयौ ।
पतित-समूह सबै तुम तारे, हुतौ जु लोक भरयौ ।
हौं उनतैं न्यारौ करि डारयौ, इहिँ दुख जात मरयौ ।
फिरि-फिरि जोनि[5] अनंतनि भरम्यौ, अब सुख-सरन परयौ ।
इहिँ अवसर कत बाहँ छुड़ावत, इहिँ डर अधिक डरयौ ।
हौं पापी, तुम पतित-उधारन, डारे हौं कत देत ?
जौ जानौ यह सूर पतित नहिँ, तौ तारौ निज हेत ॥ १५६ ॥

---

* (ना) विभास (कां)सारंग । ① भज्यौ न आन उपाइ—१, २, ६, ८, १८, १९ । ② कबहूँ—३, ६ । ③ मन मैं—८ । ④ तुम सौं कहा कहौं करुनामै बिनती बहुत बनाइ—६, ८ । (ना) बड़हंस (कां) गूजरी (रा) धनाश्री । ⑤ ज्यौ अनीति मैं राग्यौ—१६ ।

* राग केदारौ

जौ पै तुमहीं बिरद बिसारौ।
तौ कहौ कहाँ जाइ करुनामय, कृपिन करम कौ मारौ!
दीन-दयाल, पतित-पावन, जस बेद बखानत चारौ।
सुनियत कथा पुरानन, गनिका[1], ब्याध, अजामिल तारौ।
राग[2]-द्वेष, बिधि-अबिधि, असुचि-सुचि, जिहिं[3] प्रभु जहाँ सँभारौ।
कियौ न कबहुँ बिलंब कृपानिधि, सादर सोच निवारौ।
अगनित[4] गुण हरि नाम तिहारैं, अजौ अपुनपौ धारौ।
सूरदास-स्वामी[5], यह जन अब करत करत स्रम हारौ॥ १५७॥

* राग सारंग

ऐसे[6] और बहुत खल तारे।
चरन-प्रताप, भजन-महिमा कौं,[7] को कहि सकै तुम्हारे?
दुखित गयंद, दुष्ट-मति गनिका, नृग नृप कूप उधारे।
बिप्र बजाइ चल्यौ सुत कैं हित, कटे[8] महा दुख भारे।
ब्याध, गीध, गौतम की नारी, कहौ कौन ब्रत धारे?
केसी, कंस, कुबलया, मुष्टिक, सब सुख-धाम सिधारे।
उरजनि कौं बिष बाँटि लगायौ, जसुमति की गति पाई।
रजक - मल्ल - चानूर - दवानल - दुख - भंजन सुखदाई।

---

* (ना) गौरी (ना) देव-गंधार (क) कान्हरा।

① दिस (दस) दिस—२, ३। निगमन—८। ② राग दोष—१, २। ③ जिन प्रभु जितै सँभारयौ—१। ④ इहँ लगि नाम रूप गुनगन सब आज अपुन पन धारौ—२, ६, ८, १८। ⑤ प्रभु चितवत काहे न—१, १६।

३ (ना) विलावल (क) धनाश्री।

⑥ जैसे—१, २, ३, ६, ८, १४, १८, १६। ⑦ सुख—६, ८, १६। ⑧ काटि—१, २, ३, १४, १६।

नृप सिसुपाल महा पद[1] पायौ, सर-अवसर नहिँ जान्यौ।
अघ-बक-तृनावर्त-धेनुक हति, गुन गहि दोष न मान्यौ।
पांडु-बधू पटहीन सभा मैँ, कोटिनि बसन पुजाए।
बिपति काल सुमिरत तिहिँ[2] अवसर जहाँ[3] तहाँ उठि धाए।
गोप-गाइ-गोसुत जल-त्रासत, गोबर्धन कर धार्‌यौ।
संतत दीन, हीन,[4] अपराधी, काहेँ सूर बिसार्‌यौ ? १५८ ॥

* राग केदारौ

बहुरि की कृपाहू कहा कृपाल ?
बिद्यमान जन दुखित जगत मैँ, तुम प्रभु दीन-दयाल !
जीवत जाँचत कन[5]-कन निर्धन, दर-दर रटत बिहाल।
तन छूटे तैँ धर्म नहीँ कछु, जौ दीजै मनि-माल[6]।
कह दाता जो द्रवै न दीनहिँ देखि दुखित ततकाल[7] ।
सूर स्याम कौ कहा निहोरौ, चलत बेद की चाल ॥१५९॥

* राग केदारौ

† कौन सुनै यह बात हमारी ?
समरथ और देखौँ तुम बिनु, कासौँ बिथा कहौँ बनवारी ?
तुम अबिगत, अनाथ के स्वामी, दीन-दयाल, निकुंज[8]-बिहारी।
सदा सहाइ करी दासनि की, जो उर धरी सोइ प्रतिपारी।

---

① मद माते—२, ३, ८। ② छिन भीतर—१, २, ३, ८, १९। ③ तहीँ तहीँ—१, २, १९। ④ महा—१, २, ३, ८, १९।

* (ना) देवगिरि, (शा, का, क, कौं, रा) नट।

⑤ गुनगनि—२। गनि गनि—३। ⑥ लाल—२, ३, १४। ⑦ कलिकाल—१, २, ३, ५, १४, १९।
(ना) बिहागरौ।

† यह पद (ना) मेँ नहीँ है।

⑧ भक्त हितकारी—६।

अब किहिँ सरन जाउँ जादौपति, राखि लेहु बलि, त्रास निवारी।
सूरदास चरननि की बलि-बलि, कौन खता[1] तैँ कृपा बिसारी? १६०॥

* राग कल्यान

जैसैँ राखहु तैसैँ रहौँ।
जानत हौ दुख-सुख सब जन के, मुख करि कहा कहौं?
कबहुँक भोजन लहौँ कृपानिधि, कबहुँक भूख सहौँ।
कबहुँक चढ़ौँ तुरंग, महा गज, कबहुँक भार बहौँ।
कमल-नयन, घन-स्याम-मनोहर, अनुचर भयौ रहौँ।
सूरदास-प्रभु भक्त-कृपानिधि, तुम्हरे चरन गहौँ॥ १६१॥

* राग धनाश्री

कब लगि फिरिहौँ दीन बह्यौ[2]?
सुरति-सरित-भ्रम-भौँर-लोल मैँ, मन परि[3] तट न लह्यौ।
बात-चक्र बासना[4]-प्रकृति मिलि, तन[5]-तृन तुच्छ गह्यौ।
उरझ्यौ बिबस कर्म-निर अंतर, स्वामि सुख-सरनि चह्यौ।
बिनती करत डरत करुनानिधि, नाहिँ न परत रह्यौ।
सूर[6] करनि तरु रच्यौ जु निज कर, सो कर नाहिँ गह्यौ॥ १६२॥

× राग धनाश्री

तेऊ चाहत कृपा तुम्हारी।
जिन कैँ बस अनिमिष अनेक गन अनुचर अज्ञाकारी।

---

① गुसा—१,१६। गुसाईँ—२। कथा—६।
* (ना) विहागरौ (कां) देवगंधार।
०१ (ना) सारंग।
② भयौ—१, २, ३, ६, ८, १६। ③ परचत न लह्यौ १। तर तट न लह्यौ—३। परबत न लयौ—६, ८। तिरपति न लह्यौ—१८। ④ तृष्ना—१, ३, ६, ८, १६। ⑤ हौं तृन तुच्छ गह्यौ—१, ३, १६। तरुनी तुच्छ गह्यौ—२, १६। ⑥ सूर करन वर रच्यौ जु निज कर सो कर नाहिँ गह्यौ—१, १६। सूर करन तर रच्यौ जु निजकर सो नहिँ हमैँ कह्यौ—६, ८।
× (ना) देवगंधार।

बहत पवन, भरमत ससि-दिनकर, फनपति सिर न डुलावै ।
दाहक गुन तजि सकत न पावक, सिंधु न सलिल बढ़ावै[1] ।
सिव-बिरंचि-सुरपति-समेत सब सेवत प्रभु-पद चाए[2] ।
जो कछु करन कहत सोई सोइ कीजत अति अकुलाए[3] ।
तुम अनादि, अबिगत, अनंत-गुन-पूरन परमानंद ।
सूरदास पर कृपा करौ प्रभु, श्रीबृंदाबन-चंद ॥ १६३ ॥

* राग मलार

तुम तजि और[4] कौन पै जाउँ ?
काकैं द्वार जाइ सिर नाऊँ, पर हथ कहाँ बिकाउँ ?
ऐसो को दाता है समरथ, जाके दिऐं अघाउँ ।
अंत काल तुम्हरैं सुमिरन गति, अनत कहूँ नहिं दाउँ[5] ।
रंक सुदामा कियौ अजाची, दियौ अभय-पद ठाउँ ।
कामधेनु, चितामनि, दीन्हौं कल्पवृच्छ-तर छाउँ ।
भव-समुद्र अति देखि भयानक, मन मैं अधिक डराउँ ।
कीजै कृपा सुमिरि अपनौ प्रन,[6] सूरदास बलि जाउँ ॥१६४॥

* राग सारंग

† अब धौं कहौ, कौन दर जाउँ ?
तुम जगपाल, चतुर चिंतामनि, दीनबंधु सुनि नाउँ ।

---

(१) बहावै—१, २, ३, १६ । (२) जानै—२, १८ । जाई—३, ६, ८ । (३) अकुलानै—२, १८ । अकुलाई—३, ६, ८ ।

* (ना) सूहो ।

(४) कौन नृपति कैं—१, ३, १६ । (५) जाउँ—१, २, ३ । ठाउँ—६, १६, १८, १६ । (६) जन—८, १६ ।

* (क) धनाश्री ।

† यह पद (वे, वृ, रा, श्या) में नही है । (ना, स, ल, शा, ना, कां) में यह द्रौपदी-प्रकरण में रक्खा गया है । पर (क) में यह विनय के पदो के साथ संकलित है । वस्तुतः यह पद विनय का है । इसमें द्रौपदी का रूपक मात्र है । अत. हमने इसको विनय में ही रखना उचित समझा ।

माया कपट[1]-जुवा, कौरव-सुत, लोभ, मोह, मद भारी।
परबस परी सुनौ करुनामय, मम मति[2]-तिय अब हारी।
क्रोध-दुसासन गहे लाज-पट, सर्व अंध-गति मेरी।
सुन, नर, मुनि, कोउ निकट न आवत, सूर समुझि हरि[3]-चेरी ॥१६५॥

* राग मारू

मेरी तौ गति-पति तुम, अनतहिँ दुख पाऊँ!
हौं कहाइ तेरौ, अब कौन कौ कहाऊँ?
कामधेनु छाँड़ि कहा अजा लै दुहाऊँ!
हय गयंद उतरि कहा गर्दभ-चढ़ि धाऊँ!
कंचन-मनि खोलि डारि, काँच[4] गर बँधाऊँ?
कुमकुम कौ लेप[5] मेटि, काजर मुख लाऊँ?
पाटंबर-अंबर तजि, गूदरि पहिराऊँ?
अंब सुफल छाँड़ि, कहा सेमर कौं धाऊँ?
सागर की लहरि छाँड़ि, छीलर कस[6] न्हाऊँ?
‡सूर कूर, आँधरौ, मैं द्वार परयौ गाऊँ॥१६६॥

* राग आसावरी

† स्याम-बलराम कौं[7] सदा गाऊँ।
स्याम-बलराम बिनु दूसरे देव कौं, स्वप्न हूँ माहिँ[8] नहिँ हृदय[9] ल्याऊँ।

---

① कपटरूप—२, १४। ② पति मति—२। ③ मोहि—२।

* (ना) भैरव चर्चरी।

④ गुंज कंठ नाऊँ—२। ⑤ तिलक—१, १६। ⑥ कत—१।

‡ (का, ज्ञा) में इस पद का पहला चरण नहीं है। उसके बदले अंत में यह एक चरण अधिक है—

"सुनियै दै कान स्याम-
सुंदर बलि जाऊँ॥"

* (ना, का ज्ञा) मारू। (को) केदारा।

† यह पद (शा) में नहीं है।

⑦ गुन—८। ⑧ नाहिँ नै—८। ⑨ सीस नाऊँ—२।

यहै जप, यहै तप, यहै मम नेम-ब्रत, यहै मम प्रेम, फल यहै ध्याऊँ।
यहै मम ध्यान, यहै ज्ञान, सुमिरन यहै, सूर-प्रभु देहु[1] हौं यहै पाऊँ ॥१६७॥

* राग देवगंधार

† मेरौ मन अनत कहाँ सुख[2] पावै।
जैसैं उड़ि जहाज कौ पच्छी, फिरि जहाज पर आवै।
कमल-नैन कौ छाँड़ि महातम, और देव कौं ध्यावै।
परम गंग कौं छाँड़ि पियासौ दुरमति कूप खनावै।
जिहिं मधुकर[3] अंबुज-रस चाख्यौ, क्यौं करील-फल भावै[4]।
सूरदास-प्रभु कामधेनु तजि, छेरी कौन दुहावै ॥ १६८ ॥

* राग सारंग

तुम्हारी भक्ति हमारे प्रान[5]।
छूटि गएँ कैसैं जन[6] जीवत, ज्यौं पानी बिनु पान।
जैसैं मगन नाद-रस[7] सारँग, बधत बधिक बिन[8] बान।
ज्यौं चितवत ससि ओर चकोरी, देखत ही सुख[9] मान।
जैसैं कमल होत अति[10] प्रफुलित, देखत दरसन भान।
सूरदास-प्रभु-हरि-गुन मीठे, नित प्रति सुनियत कान ॥१६९॥

---

① देव—८। देउ—१६।

* (ना) सारग। (का, ज्ञा) केदारा।

† (१, ४) में यह पद दशम स्कंधांतर्गत उद्धव-गोपी-संवाद में भी आया है। परन्तु अन्य प्रतियों के अनुसार इस संस्करण में यह यहीं रक्खा गया है।

② सचु—१६। ③ मधु मधुर अंबु—१६। ④ खावै—१, ३।

* (ना) बिलावल। (ज्ञा) केदारा।

⑤ त्रान—२। ध्यान—८। ⑥ जिय—६, ८। ⑦ सुनि—१, १४, १६। सौं—२, ३। ⑧ तन—१, २, ३, १६। ⑨ सुच (सुचि)—३, ६, १४, १८, १६। ⑩ परिफुलित—१, ३, ६, १६।

* राग धनाश्री

जौ हम भले बुरे तौ तेरे ।
तुम्हैं हमारी लाज-बड़ाई, बिनती सुनि प्रभु मेरे ।
सब तजि तुम सरनागत आयौ, दृढ़[1] करि चरन गहे रे ।
तुम प्रताप-बल बदत[2] न काहूँ, निडर भए घर-चेरे ।
और देव सब रंक-भिखारी, त्यागे बहुत अनेरे ।
सूरदास प्रभु तुम्हरी कृपा तैं, पाए सुख जु घनेरे ॥१७०॥

* राग बिलावल

हमैं नँदनंदन मोल लिये ।
जम के फंद काटि मुकराए, अभय अजाद[3] किये ।
भाल तिलक, स्रवननि तुलसीदल, मेटे अंक बिये ।
मूँड़्यौ मूँड, कंठ बनमाला, मुद्रा-चक्र दिये ।
सब कोउ कहत गुलाम स्याम कौ, सुनत सिरात हिये ।
सूरदास कौं और बड़ो सुख, जूठनि खाइ जिये ॥१७१॥

× राग कान्हरौ

† भक्त-वछल प्रभु, नाम[4] तुम्हारौ ।
जल-संकट तैं राखि लियौ गज, ग्वालनि हित गोवर्धन धारौ ।
द्रुपद-सुता कौ मिट्यौ महादुख, जबहीं सो हरि टेरि पुकारौ ।
हौं अनाथ, नाहिंन कोउ मेरौ, दुस्सासन तन करत उघारौ ।

---

* (ना, क) कान्हरौ । (का, ना) सारग ।
① निज कर—१, २, ३, ६, ८, १६ । ② डरत—२ ।
(ना) ईमन । (ना) सारंग । (क) धनाश्री ।
③ अजात—१ । अनंद—८ । प्रताप—१६ ।
× (कां) केदारा ।
† यह पद (ना, स, ल, कां) में है ।
④ बिरद—१६

भूप अनेक बंदि तैँ छोरे, राज-रवनि जस अति बिस्तारौ।
कीजै लाज नाम[1] अपने की, जरासंध सौं असुर सँघारौ।
अंबरीष कौ साप निवारौ, दुरबासा कौं चक्र सँभारौ।
बिदुर दास कैँ भोजन कीन्हौ, दुरजोधन कौ मेट्यौ गारौ।
संतत दीन, महा अपराधी, काहैँ सूरज कूर बिसारौ?
सेा कहि नाम रह्यौ प्रभु तेरौ, बनमाली, भगवान, उधारौ॥१७२॥

राग जैतश्री

† हरि, हौं महा अधम संसारी।
आन समुझ मैँ बरिया ब्याही, आसा कुमति कुनारी।
धर्म-सत्त मेरे पितु-माता, ते दोउ दिये बिडारी।
ज्ञान-विवेक बिरोधे दोऊ, हते बंधु हितकारी।
बाँध्यौ बैर दया भगिनी सौं, भागि दुरी सु बिचारी।
सील-सँतेाष सखा दोउ मेरे, तिन्हैँ बिगोवति भारी।
कपट-लोभ वाके दोउ भैया, ते घर के अधिकारी।
तृष्ना बहिनि, दीनता सहचरि, अधिक प्रीति बिस्तारी।
अति निसंक, निरलज्ज, अभागिनि, घर घर फिरत न हारी।
मैँ तो बृद्ध भयौं वह तरुनी, सदा बयस इकसारी।
याकैँ बस मैँ बहु दुख पायौ, सेाभा सबै बिगारी।
करियै कहा, लाज मरियै जब अपनी जाँघ उघारी।
अधिक कष्ट मोहिँ परचौ लोक मैँ, जब यह बात उचारी।
सूरदास प्रभु हँसत कहा हौ, मेटौ बिपति हमारी॥१७३॥

---

(१) बिरद बाने की—२।

† यह पद केवल (ना) तथा रागकल्पद्रुम में है।

* राग नट

† तिहारे आगैं बहुत नच्यौ ।
निसि-दिन दीन-दयाल, देवमनि, बहु बिधि रूप रच्यौ ।
कीन्हे स्वाँग जिते जाने[1] मैं, एकौ तौ न बच्यौ ।
सोधि[2] सकल गुन काछि दिखायौ, अंतर हो जो सच्यौ ।
जौ[3] रीझत नहिं नाथ गुसाईं, तौ कत जात जँच्यौ ?
इतनी कहौ, सूर पूरो दै, काहैं मरत पच्यौ ॥१७४॥

* राग अहीरी

‡ भवसागर[4] मैं पैरि न लीन्हौ ।
इन पतितनि कौं देखि[5] देखि कै पाछैं सोच न कीन्हौ ।
अजामील-गनिकादि आदि दै, पैरि पार गहि पैलौ ।
संग लगाइ बीचहीं छाँड़्यौ, निपट अनाथ, अकेलौ ।
अति गंभीर, तीर नहिं नियरैं, किहिं बिधि उतर्‌यो जात ?
नहीं अधार नाम अवलोकत, जित-तित गोता खात ।
मोहिं देखि सब हँसत परस्पर, दै दै तारी तार[6] ।
उन[7] तौ करी पाछिले की गति, गुन तोर्‌यौ बिच धार ।
पद-नौका की आस लगाए, बूड़त हौं बिनु छाहँ ।
अजहूँ सूर देखिबौ करिहौ, बेगि गहौ किन बाहँ ? ॥१७५॥

---

* (का) धनाश्री ।

† यह पद (ना, स, ल, शा, क, कां, पू) में है ।

① जग मैं हे—२ । ② जानि जुगति मन विरत दिखायौ—२ । ③ रीझत नहीं गुबिंद दया-निधि क्यौं कछु जात जँच्यौ—२ ।

* (का) गौरी ।

‡ यह पद (ना, शा, क, कां पू) में है ।

④ मैं अघसागर—१४, १६, १७ । ⑤ देखा देखी—१६ । देखी देखा—१७ । ⑥ फीट—१६ । भीट—१७ । ⑦ कीनी कथा पाछिले के सी (की सी) गुर दिखाय पुनि (दइ) ईंट—१६, १७ ।

राग सोरठ

† भरोसौ नाम कौ भारी।
प्रेम सौं जिन नाम लीन्हौ, भए अधिकारी।
ग्राह जब गजराज घेरयौ, बल गयौ हारी।
हारि कै जब टेरि दीन्ही, पहुँचे गिरिधारी।
सुदामा-दारिद्र भंजे, कूबरी तारी।
द्रौपदी कौ चीर बढ्यौ, दुस्सासन गारी।
बिभीषन कौं लंक दीनी, रावनहिँ मारी।
दास ध्रुव कौं अटल पद दियौ, राम-दरबारी।
सत्य भक्तहिँ तारिबे कौं, लीला बिस्तारी।
चेर मेरी क्यों ढील कीन्ही, सूर बलिहारी॥१७६॥

* राग धनाश्री

‡ तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत।
लालच लागि[1] कोटि देवनि के, फिरत कपाटनि खोलत।
जब लगि सरबस दीजै उनकौं, तबहीं लगि यह प्रीति।
फल माँगत फिरि जात मुकर ह्वै, यह देवनि की रीति।
एकनि कौं जिय-बलि दै पूजे, पूजत नैंकु न तूठे।
तब पहिचानि सबनि कौं छाँड़े, नख-सिख लौं सब झूठे।
कंचन मनि तजि काँचहिँ सैंतत, या माया के लीन्हे।
चारि पदारथ हूँ कौ दाता, सु तौ बिसर्जन कीन्हे।

---

† यह पद केवल (ना)में है।
* (कां) गौरी। (पू) कान्हरो।
‡ यह (स, ल, शा, क, कां, पू) में है।
(१) लगि बहु देवनि पूजत कनै कपाट न खोलत—३।

तुम कृतज्ञ, करुनामय, केसव, अखिल लोक के नायक।
सूरदास हम दृढ़ करि पकरे, अब ये चरन सहायक ॥१७७॥

राग गौरी

† प्रभु मेरे, मोसौं पतित उधारौ।
कामी[1], कृपिन, कुटिल, अपराधी, अघनि भरचौ बहु भारौ।
तीनौ पन मैं भक्ति न कीन्ही, काजर हूँ तैं कारौ।
अब आयौ हौं सरन तिहारी, ज्यौं जानौ त्यौं तारौ।
गीध-ब्याध-गज-गनिका उधरी[2], लै लै नाम तिहारौ।
सूरदास प्रभु कृपावंत ह्वै, लै भक्तनि मैं डारौ ॥१७८॥

‡ जानिहौं अब बाने की बात।
मोसौं पतित उधारौ प्रभु जौ, तौ बदिहौं निज तात।
गीध, ब्याध, गनिकाऽरु अजामिल, ये को आहिं बिचारे।
ये सब पतित न पूजत मो सम, जिते पतित तुम तारे।
जौ तुम पतितनि के पावन हौ, हौं हूँ पतित न छोटौ।
बिरद आपुनौ और तिहारौ, करिहौं लोटक-पोटौ।
कै हौं पतित रहौं पावन ह्वै, कै तुम बिरद छुड़ाऊँ।
मैं एक करौं निरवारौ, पतितनि-राव कहाऊँ।
सुनियत है, तुम बहु पतितनि कौं, दीन्हौ है सुखधाम।
अब तौ आनि परचौ है गाढ़ौ, सूर पतित सौं काम ॥१७९॥

---

† यह पद (स, ल, शा, कां) में है।

① महा कुटिल क्रोधी—१६।

② तारी—३, १६।

‡ यह पद केवल (स, ल) में है।

राग जैतश्री

† तब बिलंब नहिँ कियौ, जबै हिरनाकुस मार्‌यौ ।
तब बिलंब नहिँ कियौ, केस गहि कंस पछार्‌यौ ।
तब बिलंब नहिँ कियौ, सीस दस रावन कट्टे ।
तब बिलंब नहिँ कियौ, सबै दानव दहपट्टे ।
कर[1] जोरि सूर बिनती करै, सुनहु न हो रुकुमिनि-रवन !
काटौ[2] न फंद मो अंध के, अब बिलंब कारन कवन ? ॥१८०॥

* राग धनाश्री

‡ ताहूँ सकुच सरन आए की होत जु निपट निकाज ।
जद्यपि बुधि-बल-बिभव-बिहूनौ, बहत कृपा करि लाज ।
तृन जड़, मलिन, बहत बपु राखै, निज कर गहै जु जाइ ।
कैसैँ कूल-मूल आस्रित कौँ तजै आपु अकुलाइ ?
॥तुम प्रभु अजित, अनादि, लोक-पति, हौँ अजान, मतिहीन ।
॥कछुव न होत निकट उत लागत, मगन होत इत दीन ।
परिहस-सूल प्रबल निसि-बासर, तातैँ यह कहि आवत ।
सूरदास गोपाल-सरनगत भएँ न को गति पावत ॥१८१॥

* राग सोरठ

§ (हरि) पतित-पावन, दीन-बंधु, अनाथनि के नाथ ।
संतत सब लोकनि स्रुति, गावत यह गाथ ।

---

† यह छप्पय केवल (स, ल, रा) में है ।

① सूरदास विनती करै सुनौ प्रभौ रुकुमिनि रवन—३ । ② काटत दुख मो अंध के अब बिलंब कारन कवन—३ ।

* (कां) कान्हरा ।

‡ यह पद (स, ल, क, कां) में है ।

॥ ये दो चरण (स, कां) में नहीं हैं ।

(कां) मारू ।

§ यह पद (स, ल, शा, क, कां) में है ।

मोसौ कोउ पतित नहिँ अनाथ - हीन - दीन।
काहे न निस्तारत प्रभु, गुननि-अँगनि-हीन।
गज, गनिका, गौतम-तिय मोचन मुनि-साप।
अरु[1] जन - संताप - दरन, हरन-सकल-पाप।
मनसा-बाचा-कर्मना, कछू कही राखि ?
सूर सकल अंतर के[2] तुमहीँ हौ साखि ॥१८२॥

* राग सोरठ

† जौ प्रभु, मेरे दोष बिचारैँ।
करि अपराध अनेक जनम लौँ, नख-सिख भरौ बिकारैँ।
पुहुमि पत्र करि सिंधु मसानी गिरि-मसि कौँ लै डारैँ।
सुर-तरुवर की साख लेखिनी, लिखत सारदा हारैँ !
पतित-उधारन बिरद बुलावैँ, चारौँ बेद पुकारैँ।
सूर स्याम हौँ पतित-सिरोमनि, तारि सकैँ तौ तारैँ ॥१८३॥

‡ हमारी तुमकौँ लाज हरी !
जानत हौ प्रभु, अंतरजामी, जो मोहिँ माँझ परी।
अपनैँ औगुन कहँ लौँ बरनौँ, पल पल, घरी घरी।
अति प्रपंच की मोट बाँधिकै अपनैँ सीस धरी।

---

① अर्जुन—३, १४, १६।
② प्रभु हो तुमहिँ साखि—१६।
* (पू) कान्हरो।

† यह पद (स, ल, शा, क, पू) में है। इस पद के पाठ में बड़ी भिन्नता तथा अबोधता थी। प्रतियों को मिलाकर यह पाठ शुद्ध किया गया है।

‡ यह पद केवल (स, ल) में है।

खेवनहार न खेवट मेरैं, अब मो नाव अरी।
सूरदास प्रभु, तव चरननि की आस लागि उबरी ॥१८४॥

† प्रभु जू, यौं कीन्ही हम खेती।
बंजर भूमि, गाउँ हर[1] जोते, अरु जेती की तेती।
काम-क्रोध दोउ बैल बली मिलि, रज-तामस सब कीन्हौ।
अति कुबुद्धि मन हाँकनहारे, माया-जूआ दीन्हौ।
इंद्रिय - मूल - किसान, महातृन - अग्रज - बीज बई।
जन्म जन्म की बिषय-बासना, उपजत लता नई।
पंच-प्रजा अति प्रबल बली मिलि, मन-बिधान जौ कीनौ।
अधिकारी जम[2] लेखा माँगै, तातैं हौं आधीनौ।
घर मैं गथ नहिं भजन तिहारौ, जौन दियैं मैं छूटौं।
धर्म जमानत मिल्यौ न चाहै, तातैं ठाकुर लूटौं।
अहंकार पटवारी कपटी, झूठो लिखत बही।
लागै धरम, बतावै अधरम, बाकी सबै रही।
सोई करौ जु बसतै रहियै, अपनौ धरियै नाउँ।
अपने नाम की बैरख बाँधौ, सुबस बसौं इहिं गाउँ।
कीजै कृपा-दृष्टि की बरषा, जन की जाति लुनाई।
सूरदास के प्रभु सो करियै, होइ न कान-कटाई ॥ १८५॥

---

† यह पद केवल (स, ल) मे है। दोनों के पाठ बड़े अशुद्ध थे। दोनो की सहायता से पद को सुबोध बनाने की चेष्टा की गई है।

① और—३। अर—४
② जस—३, ४।

सूर-समिति के सदस्यों की नामावली जिनके निरीक्षण में संपादन का कार्य किया जा रहा है—

प० अयोध्यासिंह उपाध्याय (प्रधान)
पं० केशवप्रसाद मिश्र
० रामचंद्र शुक्ल
सभा के प्रकाशन मंत्री
प० नन्ददुलारे वाजपेयी (संपादक)

संपादन-कार्य में सूरसागर की जिन प्राचीन प्रतियों से सहायता ली गई है, उनका संक्षिप्त विवरण—

प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण	प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण
(१)	(वे)	यह वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई की संवत् १९६४ की छपी हुई प्रति है।	(६)	(का)	यह पत्राकार हस्तलिखित प्रति 'काळाकाँकर' राज्य पुस्तकालय की है। कुँवर व्रजेशसिंह के द्वारा प्राप्त हुई है। यह प्रति संवत् १८८९ में लिखी गई।
(२)	(ना)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति संवत् १८८० की लिखी नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी की है।	(७)	(वृ)	यह वृंदावनवाली प्रति संवत् १८१३ में लिपिबद्ध हुई।
(३)	(स)	यह भी सभा की प्रति है। यह संवत् १९१६ की लिखी हुई है।	(८)	(ना) २	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी की है। यह संवत् १९०९ में राजा सूबासिंह के पढ़ने के लिये लिखी गई थी।
(४)	(ल)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति लखनऊ निवासी स्व० श्रीयुक्त लाला श्यामसुंदरदास जी अग्रवाल वैश्य, मशकगंज के पास है। यह संवत् १८६६ ज्येष्ठ शुक्ल ५ बृहस्पतिवार को मोदी गंगाराम जी के पठनार्थ लिखी गई। संपादन-कार्य में इस प्रति से अधिक सहायता नहीं मिली। केवल उसके अधिक पदों का संग्रह मात्र ही किया जा सका है।	(९)	(के)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति श्रीयुक्त बाबू केशवदास शाह, रईस, काशी की है। यह संवत् १७५३ में लिखी गई। इससे अधिक प्राचीन प्रति अब तक देखने में नहीं आई। यह प्रति कुछ समय के लिये ही प्राप्त हुई थी। यथोचित उपयोग करके यह शीघ्र ही लौटा दी गई।
(५)	(शा)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति जिला शाहजहाँपुर, ग्राम पवायाँ के प० लालमणि जी मिश्र, वैद्य की है। इस प्रति से संपादन में अधिक सहायता नहीं मिली। केवल अधिक पद ही लिखे जा सके। इसके पश्चात् पुस्तक लौटा देनी पड़ी।	(१०)	(कृ)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति श्रीयुक्त राय कृष्णदास जी, रईस, बनारस की है। यह संवत् १९२६ में श्री गयाप्रसाद जी वैश्य की पत्नी के लिये पं० नाथूराम जी गौड़ द्वारा लिखी गई।

प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण	प्रति-संख्या	संकेताक्षर	विवरण
(११)	(गो)	यह पत्राकार प्रति काशी के रईस बाबू गोकुलदास जी की है। इसके अक्षर बहुत सुंदर और पक्के हैं। कहीं भी वे अस्पष्ट नहीं हैं।			लिखावट सुंदर है। इसमें नीचे-ऊपर नुकतों का प्राय अभाव है। इससे इसके पढ़ने में कठिनाई पड़ती है; परंतु इसके कारण पाठ-निर्धारण में बड़ी सहायता प्राप्त हुई है। ऐसे समय में जब कि हिंदी की सभी प्रतियों के पाठों से निराश होना पड़ा है, इसने शुद्ध पाठ बताकर पुनः आशा प्रदान की है। यह संवत् १८८२ में लिपिबद्ध हुई।
(१२)	(जा)	यह पुस्तकाकार प्रति काशी के जानीमल खानचंद जी की है। यह संवत् १९०२ में लिखी गई थी।			
(१३)	(स / २)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी की है।			
(१४)	(क)	यह प्रति कलकत्ता लखनऊ दोनों स्थानों में सन् १८८९ की छपी हुई है।	(१९)	(श्या)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति आरंभ में राय बहादुर श्यामसुंदरदास जी के द्वारा प्राप्त हुई थी, इसलिये यह उन्हीं के नाम से इस संस्करण में व्यक्त की गई है। अब यह सभा की संपत्ति है।
(१५)	(जौ)	यह जौनपुर की पत्राकार हस्तलिखित प्रति पं० गणेशविहारी जी (मिश्र-बंधुओं में बड़े) द्वारा प्राप्त हुई है। यह संवत् १८५४ में लिखी गई थी।	(२०)		"राग-कल्पद्रुम" नामक इस ग्रंथ में, जो ३ बड़े भागों में समाप्त हुआ है, महाकवि सूरदास के बहुत से पद प्राप्त होते हैं। इनमें कुछ ऐसे भी हैं जो अन्य ग्रंथों में नहीं मिलते। उनमें से जो प्रामाणिक समझे गए वे इस संस्करण में ग्रहण किए गए हैं। इस विशालकाय ग्रंथ के संग्रहकार प्रसिद्ध संगीतज्ञ 'रागसागर' श्री कृष्णानंद व्यास महोदय हैं। इसका प्रकाशन वंगीय साहित्य-परिषद् की ओर से नागरी और बँगला दोनों लिपियों में किया गया है।
(१६)	(कां)	यह कांकरौली राज्य की पुस्तक पुराने देशी कागज पर लिखी हुई है। यह गोकुल के किन्हीं रणछोड़मल जी के लिये लिखी गई थी। इसके लेखक हैं गोकुलदास ब्राह्मण। उन्होंने इसे श्रावण शुक्ला पवित्रा ११ संवत् १९१२ को लिखा था।			
(१७)	(पू)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति कलकत्ता के श्रीयुक्त बाबू पूर्णचंद्र जी नाहर की है। इसके पाठ अच्छे हैं। अनेक बार इससे बहुमूल्य सहायता प्राप्त हुई है। इसके अक्षर कई प्रकार के लिखे गए हैं; पर सब सुपाठ्य हैं।			
(१८)	(रा)	यह हस्तलिखित पुस्तक दरियाबाद के प्रसिद्ध रईस श्रीयुक्त राय राजेश्वरबली जी की है। यह फारसी लिपि में लिखी गई है। इसकी		⌣	यह चिह्न जिन दीर्घ अक्षरों के नीचे हो, उन्हें ह्रस्व की भाँति पढ़ना चाहिए।

Printed by A Bose, at the Indian Press, Ltd. Benares-Branch

† प्रभु जू, हौं तौ महा अधर्मी ।
अपत, उतार, अभागौ, कामी, बिषयो, निपट कुकर्मी ।
घाती, कुटिल, ढीठ, अति क्रोधी, कपटी, कुमति, जुलाई ।
औगुन की कछु सोच न संका, बड़ौ दुष्ट, अन्याई ।
बटपारी, ठग, चोर, उचक्का, गाँठि-कटा, लठबाँसी ।
चंचल, चपल, चबाइ, चौपटा, लिये मोह की फाँसी ।
चुगुल, ज्वारि, निर्दय, अपराधी, झूठौ, खोटौ-खूटा ।
लोभी, लौंद, मुकरवा, झगरू, बड़ौ पढ़ैलौ, लूटा ।
लंपट, धूत, पूत दमरी कौ, कौड़ी कौड़ी जोरै ।
कृपन, सूम, नहिँ खाइ खवावै, खाइ मारि कै औरै ।
लंगर, ढीठ, गुमानी, टूँडक, महा मसखरा, रूखा ।
मचला, अकलै-मूल, पातर, खाउँ खाउँ करै भूखा ।
निर्घिन, नीच कुलज, दुर्बुद्धी, भोंदू, नित कौ रोऊ ।
तृष्ना हाथ पसारे निसि-दिन, पेट भरे पर सोऊ ।
बात बनावन कौं है नीकौ, बचन-रचन समुझावै ।
खाद-अखाद न छाँडै अब लौं सब मैं साधु कहावै ।
महा कठोर, सुन्न हिरदै कौ, दोष देन कौं नीकौ ।
बड़ौ कृतघ्नो और निकम्मा, बेधन, राँकौ-फाँकौ ।
महा मत्त, बुधि-बल कौ हीनौ, देखि करै अंधेरा ।
बमनहिँ खाइ, खाइ सो डारै, भाषा कहि कहि टेरा ।
मूकू, निंद, निगोड़ा, भोंड़ा, कायर, काम बनावै ।
कलहा, कुही, मूष रोगी अरु काहूँ नैंकु न भावै ।

† यह पद केवल (स, ल) में है ।

पर-निंदक, परधन कौ द्रोही, पर-संतापनि बोरौ ।
औगुन और बहुत हैं मो मैं, कह्यौ सूर मैं थोरौ ॥ १८६ ॥

* राग धनाश्री

† अधम की जौ देखौ अधमाई ।
सुनु त्रिभुवन-पति, नाथ हमारे, तौ कछु कह्यौ न जाई ।
जब तैं जनम-मरन-अंतर हरि, करत न अघहिं अघाई ।
अजहूँ लौं मन मगन काम सौं, बिरति[1] नाहिं उपजाई ।
परम कुबुद्धि, अजान ज्ञान तैं, हिय जु बसति जड़ताई ।
पाँचौ देखि प्रगट ठाढे ठग, हठनि ठगौरी खाई ।
सुमृति-बेद मारग हरि-पुर कौ, तातैं लियौ भुलाई ।
कंटक-कर्म कामना-कानन कौ मग दियौ दिखाई ।
हौं कहा कहौं, सबै जानत हौ, मेरी कुमति कन्हाई[2] ।
सूर पतित कौं नाहिं कहूँ गति, राखि लेहु सरनाई ॥ १८७ ॥

राग सारंग

‡ तातैं बिपति-उधारन गायौ ।
स्रवननि साखि सुनी भक्तनि मुख, निगमनि भेद बतायौ ।
सुवा पढ़ावत जीभ लडावति, ताहि बिमान पठायौ ।
चरन-कमल परसत रिषि-पतिनी, तजि पषान, पद पायौ ।
सब-हित-कारन देव, अभय पद, नाम प्रताप बढायौ ।
आरतिवंत सुनत गज-क्रंदन, फंदन काटि छुड़ायौ ।

---

* (का) ईमन ।
| यह पद (स, ल, शा, क, का) में है ।
(१) विप्रति नहिं उपजाई—१४ । जुवतिनि रुचि उपजाई—१६ । (२) कमाई—३ ।
‡ यह पद केवल (शा) में है ।

पावँ[1] अबार सु धारि रमापति, अजस करत जस पायौ[2] ।
सूर कूर कहै मेरी बिरियाँ बिरद कितै बिसरायो ॥१८८॥

राग कान्हरौ

† ऐसी कब करिहौ गोपाल ।
मनसा-नाथ, मनोरथ-दाता[3], हौ प्रभु दीनदयाल ।
चरननि चित्त निरंतर अनुरत, रसना चरित-रसाल ।
॥लोचन सजल, प्रेम-पुलकित तन, गर अचल, कर माल ।
इहिँ बिधि लखत, झुकाइ रहै जम अपनैँ हीँ भय भाल ।
सूर सुजस-रागी न डरत मन, सुनि जातना कराल ॥१८९॥

राग धनाश्री

‡ ऐसे प्रभु अनाथ के स्वामी ।
दीनदयाल[4], प्रेम परिपूरन, सब-घट-अंतरजामी ।
करत बिबस्त्र द्रुपद-तनया कौँ, सरन सब्द कहि आयौ ।
पूजि अनंत कोटि बसननि हरि, अरि कौ गर्ब गँवायौ ।
सुत-हित बिप्र, कीर-हित गनिका, नाम[5] लेत प्रभु पायौ ।
छिनक भजन, संगति-प्रताप तैँ, गज अरु ग्राह छुडायौ ।
नर-तन, सिंह-बदन, बपु कीन्हौ, जन लगि भेष बनायौ ।
निज जन दुखी जानि भय तैँ अति, रिपु हति, सुख उपजायौ ।

---

① पावनवारि सिधारि । ② गायौ ।

† यह पद केवल (शा, क, का) में है ।

③ पूरन—५, १६ ।

|| इस चरण के पश्चात् (का) में ये दो पंक्तिया और हैँ—
पीत वसन मणि भूषित भूषण
जन देखत किहिँ काल ।
बाहिर भीतर सब अँग सुदर
घन तन नैन विशाल ।
इनमेँ से पहिली पंक्ति कुछ पाठातर के साथ (शा) में भी है ।

‡ यह पद केवल (शा, क, का) में है ।

④ ऐसे दीन दास पर-पीरक—१४ । ⑤ पर स्वारथ—१४ ।

तुम्हरी कृपा गुपाल गुसाईं, किहिँ किहिँ स्रम न गँवायौ ?
सूरजदास अंध, अपराधो, सेा काहेँ बिसरायौ ॥ १९० ॥

राग धनाश्री

† तौ लगि बेगि हरौ किन पीर ?
जौ लगि आन न आनि पहूँचै, फेरि परैगी भीर ।
अबहिँ[1] निवछरौ समय, सुचित ह्वै, हम तौ निधरक कीजै ।
औरौ[2] आइ निकसिहेँ तातेँ, आगेँ हे सेा लीजै ।
जहाँ तहाँ तैँ सब आवैँगे[3], सुनि सुनि सस्तौ नाम ।
अब तौ परचौ रहैगौ दिन-दिन तुमकौं ऐसेा काम ।
यह[4] तौ बिरद प्रसिद्ध भयौ जग, लोक-लोक जस कीन्हौ ।
सूरदास प्रभु समुझि देखिये, मैँ बड़ तोहिँ करि दीन्हौ ॥१९१॥

* राग धनाश्री

‡ माधौ जू, हौं पतित-सिरोमनि ।
औरु न कोई लायक देखौं, सत-सत अघ प्रति रोमनि ।
अजामील, गनिकाऽरु ब्याध, नृग, ये सब मेरे चटिया[5] ।
उनहूँ जाइ सौंह दै पूछौ, मैँ करि पठयौ सटिया ।
यह प्रसिद्ध सबही कौ संमत, बड़ौ बड़ाई पावै ।
ऐसौ को अपने ठाकुर कौ इहिँ बिधि महत घटावै ।

---

† यह पद केवल (शा, का) में है ।

① नाहिँ विखबरी मे सोचत हौ तुम तौ निधरक कच्छु —५ । ② औरौ निकट आनि लगि पापिन अरु आगे हेँ लच्छु—५ । ③ उठि धाए—५ । ④ विरद प्रसिद्ध भयौ मोहीँ तै लोक-लोक जस लीनौ—१६ ।

* (का) सारंग ।

‡ यह पद केवल (शा, का, पू) में है ।

⑤ जुअटा—५ । ⑥ इनहिँ सौंह देवाय किन पूछौ तरी पढ़ाए सुअटा—५ ।

नाहक मैं लाजनि मरियत है, इहाँ आइ सब नासी।
यह तौ कथा चलैगी आगैं, सब पतितनि मैं हाँसी।
सूर सुमारग फेरि चलैगौ, बेद-बचन उर धारौ।
बिरद छुडाइ लेहु बलि[1] अपनौ, अब इहि तैं हद पारौ ॥१९२॥

* राग सारंग

† जिन[2] जिनहीं केसव[3] उर गायौ।
तिन तुम पै गोबिंद-गुसाईं, सबनि अभै[4]-पद पायौ।
॥ सेवा[5] यहै, नाम सर-अवसर जो काहुहिं कहि आयौ।
॥ कियौ बिलंब न छिनहुँ कृपानिधि, सोइ सोइ निकट बुलायौ।
मुख्य अजामिल मित्र हमारौ, सो मैं चलत बुझायौ।
कहाँ कहाँ लौं कहौं कृपन की, तिनहुँ न स्रवन सुनायौ।
ब्याध, गीध, गनिका, जिहिं कागर, हौं तिहिं चिठि न चढायौ।
मरियत लाज पाँच पतितनि मैं, सूर सबै[6] बिसरायौ ॥१९३॥

राग नट नारायन

‡ बिरद मनौ[7] बरियाइन छाँड़े।
तुम सौं कहा कहौं करुनामय, ऐसे प्रभु तुम ठाढे[8]।
सुनि सुनि साधु-बचन ऐसौ सठ, हठि औगुननि हिरानौ।
धोयौ चाहत कीच भरौ पट, जल सौं रुचि नहिं मानौ।

---

(१) ब्रत—१६।
* (का) ईमन।
† यह पद केवल (शा, क, का) में है।
(२) जतन जतन जन हरि संग गायौ—५। (३) के सँग—१४। (४) अपुन पौ—१४, १६।
॥ ये दोनों चरण (क) में नहीं हैं।
(५) याही नाम सार तेहिं औसर जा काहूँ कहि आयौ—१६।
(६) और कहा लगि ज्ञान कृपिन को काहु स्रम न पिछायो—५।
(७) समौ—१४, १६।
‡ यह पद केवल (शा) में है।
(८) मानौ बर पाइ नहिं छाड़ो। (९) ठाडो।

जौ मेरी करनी तुम हेरौ, तौ न करौ कछु लेखौ।
सूर पतित तुम पतित-उधारन, बिनय-दृष्टि अब देखौ॥१६४॥

* राग धनाश्री

† जन यह कैसे कहै गुसाईं ?
तुम बिनु दीनबंधु[1], जादवपति, सब फीकी ठकुराई।
अपने से कर-चरन-नैन-मुख, अपनी सी बुधि पाई।
काल-कर्म-बस फिरत सकल प्रभु, तेऊ हमरी नाईं।
पराधीन, पर बदन निहारत, मानत मूढ बडाई।
हँसैं हँसत, बिलखैं बिलखत हैं, ज्यौं दर्पन मैं झाईं।
॥ लियैं दियौ चाहैं सब कोऊ, सुनि समरथ जदुराई !
देव[2], सकल व्यापार परस्पर, ज्यौं पसु-दूध-चराई।
¶ तुम बिनु और न कोउ कृपानिधि, पावै पोर पराई।
٪ सूरदास के त्रास हरन कौं कृपानाथ-प्रभुताई॥१६५॥

राग देवगंधर।

‡ इक कौं आनि ठेलत पाँच !
करुनामय, कित जाउँ कृपानिधि, बहुत नचायौ नाच।
सबै कूर मोसौं ऋन चाहत, कहौ कहा तिन दीजे !
बिना दियैं दुख देत दयानिधि, कहौ कौन बिधि कीजे !

---

* (का) मारू।
† यह पद (शा क, का, पू) में है।
(१) दीन दयाल देवमनि—१।
॥ यह चरण (शा, का) में नहीं है।
(२) सूर—१, १६।
¶ यह चरण (शा) में नहीं में है।
٪ यह चरण (का) में नहीं है।
‡ यह पद केवल (शा) में है।

थाती प्रान तुम्हारो मोपै, जनमत हौं जो दोन्ही ।
सो मैं बाँटि दई पाँचनि कौं, देह जमानति लीन्ही ।
मन राखैं तुम्हरे चरननि पै, नित नित जो दुख पावैं ।
मुकरि जाइ, कै दीन बचन सुनि, जमपुर बाँधि पठावैं ।
लेखौ करत लाखही निकसत, को गनि सकत अपार ।
हीरा जनम दियो प्रभु हमकौं, दीन्ही बात सम्हार ।
गीता-बेद-भागवत मैं प्रभु, यौं बोले हैं आथ ।
जन के निपट निकट सुनियत हैं, सदा रहत हौ साथ ।
जब जब अधम करी अधमाई, तब तब टोक्यो नाथ ।
अब तौ मोहिं बोलि नहिं आवै, तुमसौं क्यौं कहौं गाथ !
हौं तौ जाति गँवार, पतित हौं, निपट निलज, खिसिआनौ ।
तब हँसि कह्यो सूर-प्रभु सो तौ, मोहूँ सुन्यो घटानौ ॥१६६॥

राग आसावरी

। हरि जू, मोसो पतित न आन ।
मन-क्रम-बचन पाप जे कीन्हे, तिनकौ नाहिं प्रमान ।
चित्रगुप्त जम-द्वार लिखत हैं, मेरे पातक भारि ।
तिनहूँ त्राहि करी सुनि औगुन, कागद दीन्हे डारि ।
औरनि कौं जम कैं अनुसासन, किंकर कोटिक धावैं ।
सुनि मेरी अपराध-अधमई, कोऊ निकट न आवैं ।
हौं ऐसो, तुम वैसे पावन, गावत हैं जे तारे ।
अवगाहौं पूरन गुन स्वामी, सूर से अधम उधारे ॥१६७॥

† यह पद केवल (क, का) में है ।

* राग धनाश्री

† मोसौ पतित न और हरे[1] ।
जानत हौ प्रभु अंतरजामी, जे[2] मैं कर्म करे ।
ऐसौ अंध, अधम, अबिवेकी, खोटनि[3] करत खरे ।
बिषयी[4] भजे, बिरक्त न सेए, मन धन-धाम धरे ।
ज्यौं माखी, मृगमद-मंडित-तन परिहरि, पूय[5] परै ।
त्यौं मन मूढ बिषय-गुंजा गहि, चिंतामनि बिसरै[6] ।
ऐसे[7] और पतित अवलंबित, ते छिन माहिं तरे ।
सूर पतित, तुम पतित[8]-उधारन, बिरद कि लाज धरे ॥१९८॥

* राग नट

‡ मेरी बेर क्यौं रहे सोचि ?
काटि कै अघ-फाँस पठवहु, ज्यौं दियौ गज मोचि ।
कौन करनी घाटि मोसौं, सो करौं फिरि काँधि ।
न्याइ कै नहिं खुनुस कीजै, चूक पल्लैं बाँधि ।
मैं कछू करिबे न छाँड्यौ, या सरोरहिं पाइ ।
तऊ मेरौ मन न मानत, रह्यौ अघ पर छाइ ।
अब कछू हरि कसरि नाहीं, कत लगावत बार ?
सूर-प्रभु यह जानि पदवी, चलत बैलहिं आर ॥१९९॥

---

* (कौं) मारू ।

† यह पद केवल (क, कौं, पू) में है ।

① हरी—१७ । ② जो मैं करनि करी—१७ । ③ पोटी करत खरी—१७ । ④ बिषइनि भजै बिरक्ति न सेवै मन क्रम ध्यान धरी—१७ । ⑤ पुरइ परी—१७ । ⑥ बिसरी—१७ । ⑦ हारे त्रास करत जम किंकर तहाँ न टेक टरी—१७ । ⑧ क्यौं न उधारहु बिरद की लाज धरी—१७ ।

(का) रामकली ।

‡ यह पद केवल (क, कौं, पू) में है ।

* राग धनाश्री

† अपुने कौं को न आदर देइ ?
ज्यौं बालक अपराध कोटि करै, मातु न मानै तेइ ।
ते बेली कैसैं दहियत[1] हैं, जे अपनैं रस भेइ ।
श्री[2] संकर बहु रतन त्यागि कै, बिषहिं कंठ धरि लेइ ।
माता-अछत छीर बिन सुत मरै, अजा-कंठ-कुच सेइ ?
जद्यपि सूरज महा पतित है, पतित-पावन तुम तेइ ॥२००॥

* राग धनाश्री

‡ जौ जग और बियो कोउ पाऊँ ।
तौ हौं बिनती बार-बार करि, कत प्रभु तुमहिं सुनाऊँ ?
सिव बिरंचि, सुर-असुर, नाग-मुनि, सु तौ जाँचि जन आयौ ।
भूल्यौ, भ्रम्यौ, तृपातुर मृग लौं, काहूँ स्रम न गँवायौ ।
अपथ सकल चलि, चाहि चहूँ दिसि, भ्रम उघटत मतिमंद ।
थकित होत रथ चक्र-हीन ज्यौं, निरखि कर्म-गुन-फंद ।
पौरुष-रहित, अजित इंद्रिनि बस, ज्यौं गज पंक परचौ ।
बिषयासक्त, नटी के कपि ज्यौं, जोइ जोइ कह्यौ, करचौ ।
|| भव-अगाध-जल-मग्न महा सठ, तजि पद-कूल रह्यौ ।
|| गिरा-रहित, बृक-ग्रसित अजा लौं, अंतक आनि गह्यौ ।

---

* (का) सारंग ।
† यह पद केवल (क, का) में है ।
(१) सूखति है—१६ । (२) ज्यौं—६ । (का) सारंग ।
‡ यह पद केवल (क, का) में है।
|| ये दोनों चरण (क) में नहीं हैं ।

अपने ही अँखियानि[1] दोष तैं, रबिहिँ उलूक न मानत।
अतिसय सुकृत-रहित, अघ-ब्याकुल, बृथा स्रमित रज छानत।
सुनु त्रयताप-हरन, करुनामय, संतत दीनदयाल!
सूर कुटिल[2] राखौ सरनाई, इहिँ ब्याकुल[3] कलिकाल ॥२०१॥

राग केदारौ

† प्रभु, तुम दीन के दुख-हरन।
स्यामसुंदर, मदन-मोहन, बान असरन-सरन।
दूर देखि सुदामा आवत, धाइ परम्यो चरन।
लच्छ सौं बहु लच्छ दीन्हौ, दान अवढर-ढरन।
छल कियौ पांडवनि कौरव, कपट-पासा ढरन।
ख्वाय बिष, गृह लाय दीन्हौ, तउ न पाए जरन।
बूड़तहिँ ब्रज राखि लीन्हौ, नखहिँ गिरिवर धरन।
सूर प्रभु कौ सुजस गावत, नाम-नौका तरन ॥२०२॥

* राग धनाश्री

भक्ति बिना जौ कृपा न करते, तौ हौं आस न करतौ।
बहुत पतित उद्धार किए तुम, हौं तिनकौं अनुसरतौ।
मुख मृदु-बचन जानि मति जानहु, सुद्ध पंथ पग धरतौ।
कर्म-बासना छाँड़ि कबहुँ नहिँ साप[4] पाप आचरतौ।

---

① अभिमान—१४। ② पतित—१६। ③ अवसर—१६।

† यह पद केवल (क, का, पू) में है। (का) में दूसरी पंक्ति नहीं है। (क, पू) में अंत के चार चरणों के स्थान पर ये दो चरण हैं—

बधे कौरव भंज कीन्हौ भयो गिरिवर धरन। सूर प्रभु की कृपा जापर भक्त जन सब तरन ॥

* (का) सारंग।

‡ यह पद केवल (क, का) में है।

④ सोच—१६।

सुजन-बेष-रचना प्रति जनमनि, आयौ पर-धन हरतौ।
धर्म-धुजा अंतर कछु नाहीँ, लोक दिखावत फिरतौ।
परतिय-रति-अभिलाष निसा-दिन, मन-पिटरी लै भरतौ।
दुर्मति, अति अभिमान, ज्ञान[1] बिन, सब साधन तैँ टरतौ।
उदर-अर्थ चोरी हिंसा करि, मित्र-बंधु सौँ लरतौ।
रसना-स्वाद-सिथिल, लंपट ह्वै, अघटित भोजन करतौ[2]।
यह ब्यौहार लिखाइ, रात-दिन, पुनि जीतौ पुनि मरतौ।
रवि-सुत-दूत बारि नहिँ सकते, कपट घनौ उर बरतौ[3]।
साधु-सील, सद्रूप पुरुष कौ, अपजस बहु उच्चरतौ।
औघड़-असत-कुचीलनि सौँ मिलि, माया-जल मैँ तरतौ।
कबहुँक राज-मान-मद-पूरन, कालहु तैँ नहिँ डरतौ।
मिथ्या बाद आप-जस सुनि सुनि, मूछहिँ पकरि अकरतौ[4]।
इहिँ बिधि उच्च-अनुच तन धरि धरि. देस बिदेस बिचरतौ।
तहँ सुख मानि, बिसारि नाथ-पद, अपनैँ रंग बिहरतौ।
अब मोहिँ राखि लेहु मनमोहन, अधम-अंग पद परतौ।
खर-कूकर की नाईँ मानि सुख, बिषय-अगिनि मैँ जरतौ।
तुम गुन की जैसे मिति नाहिँ न, हौँ अघ कोटि बिचरतौ।
तुम्हैँ-हमैँ प्रति बाद भए तैँ गौरव काकौ गरतौ?
मोतैँ कछू न उबरी हरि जू, आयौ चढत-उतरतौ।
अजहूँ सूर पतित-पद तजतौ, जौ औरहु निस्तरतौ ॥२०३॥

---

① सुपन मेँ—१६। ② निरतो—१४। ③ करतो—१६। ④ बिगरतो—१४, १६।

॥ ये आठ चरण (का) मेँ नहीँ है।

* राग बिलावल

तुम्हरौ नाम तजि प्रभु जगदीसर, सु तौ कहौ मेरे और कहा बल ?
बुधि-बिवेक-अनुमान आपनैं, सोधि गह्यौ सब सुकृतनि कौ फल ।
बेद, पुरान, सुमृति, संतनि कौं, यह आधार मीन कौं ज्यौं जल ।
अष्ट सिद्धि, नव निधि, सुर-संपति, तुम बिनु तुसकन कहुँ न कछू लल ।
अजामील, गनिका, जु ब्याध, नृग, जासौं जलधि तरे ऐसेउ खल ।
सोइ प्रसाद सूरहिँ अब दीजै, नहीं बहुत तौ अंत एक पल ॥२०४॥

* राग सारंग

† अब हौं हरि, सरनागत आयौ ।
कृपानिधान, सुदृष्टि हेरिये, जिहिं पतितनि अपनायौ ।
ताल, मृदंग, झाँझ, इंद्रिनि मिलि, बीना, बेनु बजायौ ।
मन मेरैं नट के नायक ज्यौं तिनहीं नाच नचायौ ।
उघट्यौ सकल सँगीत रीति[1]-भव अंगनि अंग बनायौ ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह की, तान-तरंगनि गायौ ।
सूर अनेक देह धरि भूतल, नाना भाव दिखायौ ।
नाच्यौ नाच लच्छ चौरासी, कबहुँ न पूरौ पायौ ॥२०५॥

× राग नट

§ मन बस होत नाहिंनै मेरैं ।
जिनि बातनि तैं बह्यौ फिरत हौं, सोई[2] लै लै प्रेरैं ।

---

* (का) ईमन ।
† यह पद केवल (क, का) में है ।
‖ ये दोनो चरण (क) में नहीं हैं ।
(का) बिहागरौ ।
‡ यह पद केवल (क, का) में है ।
(१) भीत—१६ ।
× (का) सारंग ।
§ यह पद केवल (क, का, पू) में है ।
(२) तेई बात अनेरे—१४, १७ ।

कैसैं[1] कहौं-सुनौं जस तेरे, औरै आनि खचेरै ।
तुम[2] तौ दोष लगावन कौं सिर, बैठे देखत नेरैं ।
कहा करौं, यह चरचौ बहुत दिन, अंकुस बिना मुकेरैं ।
अब करि सूरदास प्रभु आपुन, द्वार परचौ है तेरैं ॥२०६॥

राग धनाश्री

† मैं तौ अपनी कही बड़ाई ।
अपने कृत तैं हौं नहिं बिरमत, सुनि कृपालु ब्रजराई !
जीव न तजै स्वभाव जीव कौ, लोक बिदित दृढताई ।
तौ क्यौं तजै नाथ अपनौ प्रन ? हे प्रभु की प्रभुताई !
पाँच लोक मिलि कह्यौ, तुम्हारैं नहिं अंतर मुकताई ।
तब सुमिरन-छल दुर्भर के हित, माला तिलक बनाई ।
काँपन लागी धरा, पाप तैं ताडित लखि जदुराई !
आपुन भए उधारन जग के, मैं सुधि नीकैं पाई ।
अब मिथ्या तप, जाप, ज्ञान सब, प्रगट भई ठकुराई ।
सूरदास उद्धार सहज गनि, चिंता सकल गँवाई ॥२०७॥

राग गौरी

‡ अब मोहिं सरन राखियै नाथ !
कृपा करी जो गुरुजन पठए, बह्यौ जात गह्यौ हाथ ।
अहंभाव तैं तुम बिसराए, इतनेहिं छूट्यौ साथ ।
भवसागर मैं परचौ प्रकृति-बस, बांध्यौ फिरचौ अनाथ ।

---

① कासौं कहौ करौ कछु पैरै औरे आनत घेरे—१४, १७ ।

② तापर दोष लगावन को सिर बैठो देखत नेरे—१४, १७ ।

† यह पद केवल (क) में है।

‡ यह पद केवल (क,पू) में है।

स्रमित भयौ, जैसेँ मृग चितवत, देखि देखि भ्रम-पाथ ।
जनम न लख्यौ संत की संगति, कह्यौ-सुन्यौ गुन-गाथ ।
कर्म, धर्म, तीरथ बिनु राधन, ह्वै गए सकल अकाथ ।
अभय-दान दै, अपनौ कर धरि सूरदास कैँ माथ ॥२०८॥

राग धनाश्री

† अब मोहिँ मजत[1] क्यौँ न उबारौ ?

दीनबंधु, करुनानिधि स्वामी, जन के दुःख निवारौ ।
ममता-घटा, मोह की बूँदैँ, सरिता मैन अपारौ ।
बूडत कतहुँ थाह नहिँ पावत, गुरुजन-ओट-अधारौ ।
गरजत क्रोध-लोभ कौ नारौ, सूझत कहुँ न उतारौ ।
तृष्ना-तड़ित चमकि छनहीँ-छन, अह-निसि यह तन जारौ ।
यह भव-जल कलिमलहिँ गहे हैँ, बोरत सहस प्रकारौ ।
सूरदास पतितनि के संगी, बिरदहिँ नाथ, सम्हारौ ॥२०९॥

राग धनाश्री

‡ जगतपति नाम सुन्यौ हरि, तेरौ

. . .. ।

मन चातक जल तज्यौ स्वाति-हित, एक रूप ब्रत धारचौ ।
नैँकु बियोग मीन नहिँ मानत, प्रेम-काज बपु हारचौ ।
राका-निसि केते अंतर ससि, निमिष चकोर न लावत ।
निरखि पतंग बानि नहिँ छाँड़त, जदपि जोति तनु तावत ।

---

† यह पद केवल (क) मेँ है ।

[1] भीजत ।

‡ यह पद केवल (क, पु) मेँ है । दोनो प्रतियोँ मे इसका दूसरा चरण नही मिलता ।

कीन्हे नेह-निबाह जीव जड़, ते इत-उत नहिँ चाहत।
जैहै काहि समीप सूर नर, कुटिल बचन-दव दाहत ॥२१०॥

* राग देवगधार

† जौ पै यहै बिचार परी।
तौ कत कलि-कलमष लूटन[1] कौँ, मेरी देह धरी ?
जौ नाहीँ अनुसरत[2] नाम जग, बिदित बिरद कत कीन्हौ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह कैँ, हाथ बाँधि कत दीन्हौ ?
मनसा और मानसी सेवा, दोउ अगाध करि जानौँ।
होहु कृपालु कृपानिधि, केसव, बहु अपराध न मानौ।
काकौ गृह, दारा, सुत, संपति, जासौँ कीजै हेत ?
सूरदास प्रभु दिन उठि मरियत, जम कौँ लेखौ देत ॥२११॥

राग टोड़ी

‡ भजहु न मेरे स्याम मुरारी।
सब संतनि के जीवन हैँ हरि, कमल-नयन प्यारे हितकारी।
या संसार-समुद्र, मोह-जल, तृष्ना-तरँग उठति अति भारी।
नाव न पाई सुमिरन हरि कौ, भजन-रहित बूड़त संसारी।
दीन-दयाल, अधार सबनि के, परम सुजान, अखिल अधिकारी।
सूरदास किहिँ तिहिँ तजि जाँचै, जन-जन-जाँचक होत भिखारी ॥२१२॥

---

* (पू) धनाश्री।

† यह पद केवल (क, पू) में है।

(१) टूटन—१४। (२) स्व समानौ कीजत—१४। तुम करत—१७।

‡ यह पद केवल (क) में है।

राग धनाश्री

हारी[1] जानि परो हरि मेरी ।
माया-जल बूड़त हौं, तकि तट चरन-सरन धरि तेरी ।
भव सागर, बोहित बपु मेरो, लोभ-पवन दिसि चारौ ।
सुत-धन-धाम-त्रिया[2]-हित औरै लयौ बहुत विधि भारौ ।
अब भ्रम-भँवर परयो ब्रज-नायक, निकसन की सब बिधि की ।
सूर सरद-ससि-बदन दिखाएँ उठै लहर जलनिधि की ॥२१३॥

राग रामकली

अनाथ के नाथ प्रभु कृष्न स्वामी ।
नाथ[3] सारंगधर, कृपा करि मोहिं पर, सकल अघ-हरन हरि गरुड़गामी ।
परयो भव-जलधि मैं, हाथ धरि काढि मम दोष जनि धारि चित काम-कामी ।
सूर बिनती करै, सुनहु नँद-नंद तुम, कहा कहौं खोलि के अंतरजामी ॥२१४॥

राग धनाश्री

अदभुत जस बिस्तार करन कौं हम जन कौ बहु हेत ।
भक्त-पावन कोउ कहत न कबहूँ, पतित-पावन कहि लेत ।
जय अरु बिजय कथा नहिं कहुवै, दसमुख-बध-बिस्तार ।
जद्यपि जगत-जननि कौ हरता, सुनि सब उतरत पार ।
सेसनाग के ऊपर पौढत, तेतिक नाहिं बड़ाई ।
जातुधानि-कुच-गर मर्षत तब, तहाँ पूर्नता पाई ।

---

† यह पद केवल (क, पू) में है। इसके प्रथम चरण का पाठ दोनों में बिलकुल एक है परन्तु उसका कुछ अर्थ नहीं लगता। अत पूर पद के भाव तथा अर्थ के अनुरोध से उपर्युक्त पाठ निर्धारित कर उसे सार्थक करने की चेष्टा की गई है।

(१) हिराजिनि परेउ (रयो) हरि मेरी—१४, १७। (२) तृपा—१४।

‡ यह पद केवल (क) में है।

(३) श्रीनाथ।

§ यह पद केवल (क) में है।

धर्म कहैं, सर-सयन गंग-सुत, तेतिक नाहिं सँतोष।
सुत सुमिरत आतुर द्विज उधरत, नाम भयो निर्दोष!
धर्म-कर्म-अधिकारिनि सौं कछु नाहिं न तुम्हरो काज।
भू-भर-हरन प्रगट तुम भूतल, गावत संत-समाज।
भार-हरन बिरुदावलि तुम्हरो, मेरे क्यों न उतारो?
सूरदास-सत्कार किए तें ना कछु घटै तुम्हारो ॥२१५॥

राग धनाश्री

† हरि जू, हौं यातें दुख-पात्र।
श्रीगिरिधरन-चरन-रति ना भई तजि विषया-रस मात्र।
हुतौ आढ्य तव कियौ असद्व्यय, करी न ब्रज-बन-जात्र।
पोषे नहिं तुव दास प्रेम सौं, पोष्यौ अपनौ गात्र।
भवन सँवारि, नारि-रस लोभ्यौ, सुत, बाहन, जन, भ्रात्र।
महानुभाव निकट नहिं परसे, जान्यौ न कृत-विधात्र।
छल-बल करि जित-तित हरि पर-धन, धायौ सब दिन-रात्र।
सुद्वासुद्र बोझ बहु बह्यो सिर, कृषि जु करी लै दात्र।
हृदय कुचील काम-भू-तृष्ना-जल-कलिमल है पात्र।
ऐसे कुमति जाट सूरज कौं प्रभु बिनु कोउ न धात्र ॥२१६॥

राग नट

‡ मेरें हृदय नाहिं आवत हौ, हे गुपाल, हौं इतनी जानत!
कपटी, कृपन, कुचील, कुदरसन, दिन उठि बिषय-बासना बानत।

† यह पद केवल (क) में है। ‡ यह पद केवल (क) में है।

कदली कंटक, साधु असाधुहिँ, केहरि कैँ सँग धेनु बँधाने।
यह बिपरीति जानि तुम जन की, अंतर दै बिच रहे लुकाने।
जो राजा-सुत होइ भिखारी, लाज परे ते जाइ बिकाने।
सूरदास प्रभु अपने जन कौँ कृपा करहु जौ लेहु निदाने॥२१७॥

राग सोरठ

† प्रभु, मैँ पीछौ लियौ तुम्हारौ।
तुम तौ दीनदयाल कहावत, सकल आपदा टारौ।
महा कुबुद्धि, कुटिल, अपराधी, औगुन भरि लियौ भारौ।
सूर कूर की याही बिनती, लै चरननि मैँ डारौ॥२१८॥

राग मुलतानी धनाश्री-तिताला

† मेरी सुधि लीजौ हो ब्रजराज।
और नहीँ जग मैँ कोउ मेरौ, तुमहिँ सुधारन-काज।
गनिका, गीध, अजामिल तारे, सबरी औ गजराज।
सूर पतित पावन करि कीजै, बाहँ गहे की लाज॥२१९॥

राग खवावती-तिताला

§ हमारे प्रभु, औगुन चित न धरौ।
समदरसी है नाम तुम्हारौ, सोई पार करौ।
इक लोहा पूजा मैँ राखत, इक घर बधिक परौ।
सो दुबिधा पारस नहिँ जानत, कंचन करत खरौ।
इक नदिया इक नार कहावत, मैलौ नीर भरौ।
जब मिलि गए तब एक बरन ह्वै, गंगा नाम परौ।

† यह पद राग-कल्पद्रुम से संकलित किया गया है।
‡ यह पद राग-कल्पद्रुम से संकलित किया गया है।
§ यह पद राग कल्पद्रुम से संकलित किया गया है।

तन माया, ज्यौ ब्रह्म कहावत, सूर सु मिलि बिगरौ।
कै इनकौ निरधार कीजिये, कै प्रन जात टरौ ॥२२०॥

राग मुलतानी-तिताला

† अब मेरी राखौ लाज मुरारी।
संकट मैं इक संकट उपजौ, कहै मिरग सौं नारी।
और कछू हम जानति नाहीं, आई सरन तिहारी।
उलटि पवन जब बावर जरियौ, स्वान चल्यौ सिर झारी।
नाचन-कूदन मृगिनी लागी, चरन कमल पर वारी।
सूर स्याम-प्रभु अविगत-लीला, आपुहि आपु सँवारी ॥२२१॥

यमुना-स्तुति राग रामकली

‡ भक्त जमुने सुगम, अगम औरैं।
प्रात जो न्हात, अघ जात ताके सकल, ताहि जमहू रहत हाथ जोरैं।
अनुभवी जानही बिना अनुभव कहा, प्रिया जाकौ नहीं चित्त चोरैं।
प्रेम के सिंधु कौ मर्म जान्यो नहीं, सूर कहि कहा भयौ देह बोरैं? ॥२२२॥

राग रामकली

§ फल फलित होत फल-रूप जानैं।
देखिहू सुनिहु नहिं ताहि अपनौ कहैं, ताकी यह बात कोउ कैसैं मानैं।
ताहि कैं हाथ निरमोल नग दीजिये, जोइ नीकैं परखि ताहि जानैं।
सूर कहि कूर तैं दूर बसिये सदा, जमुन कौ नाम लीजे जु छानैं ॥२२३॥

---

† यह पद राग-कल्पद्रुम से संकलित किया गया है।

‡ यह पद केवल (क) में है।

§ यह पद केवल (क) में है।

श्रीभागवत-प्रसंग

* राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
हरि की कथा होइ जब जहाँ। गंगाहू चलि आवै तहाँ।
जमुना, सिंधु, सरस्वति आवै। गोदावरी बिलंब न लावै।
सर्ब तीर्थ कौ बासा तहाँ। सूर हरि-कथा होवै जहाँ॥२२४॥

भागवत वर्णन

* राग सारंग

‡ श्रीमुख चारि स्लोक दए ब्रह्मा कौं समुझाइ।
ब्रह्मा नारद सौं कहे, नारद ब्यास सुनाइ।
ब्यास कहे सुकदेव सौं द्वादस स्कंध बनाइ।
सूरदास सोई कहे पद[1] भाषा करि गाइ॥२२५॥

श्री शुक-जन्म-कथा

× राग बिलावल

§ब्यास कह्यौ जो सुक सौं गाइ। कहौं सो सुनौ संत चित लाइ।
ब्यास पुत्र-हित बहु तप कियौ। तब नारायन यह बर दियौ।
ह्वै है पुत्र भक्त अति ज्ञानी। जाकी जग मैं चलै कहानी।
यह बर दै हरि कियौ उपाइ। नारद मन संसय उपजाइ।

---

* (ना) सारंग।
† यह पद (ना, श्या) में नहीं है।
(ना) कान्हरा।
‡ यह पद (श्या) में नहीं है।
① बिधि—२।
× (ना) बिभास।
§ यह पद (श्या) में नहीं है।

तब नारद गिरिजा पैं गए। तिनसौं या विधि पूछत भए।
मुंडमाल सिव-ग्रीवा कैसी? मोसौं बरनि सुनावौ तैसी।
उमा कही मैं तौ नहिं जानी। अरु सिवहूँ मोसौं न बखानी।
नारद कह्यौ अब पूछौ जाइ। बिनु पूछैं नहिं देहिं बताइ।
उमा जाइ सिव कौं सिर नाइ। कह्यौ सुनौ बिनती सुरराइ।
मुंडमाल कैसी तब ग्रीवा? याकी मोहिं बतावौ सींवा।
सिव बोले तब बचन रसाल। उमा आहि यह सो मुँडमाल।
जब जब जनम तुम्हारौ भयौ। तब तब मुंडमाल मैं लयौ।
उमा कह्यौ सिव तुम अबिनासी। मैं तुम्हरे चरननि की दासी।
मेरे हित इतनौ दुख भरत। मोहिं अमर काहे नहिं करत?
तब सिव-उमा गए ता ठौर। जहाँ नहीं द्वितिया कोउ और।
सहस-नाम तहँ तिन्हैं सुनायौ। जातैं आपु अमर-पद पायौ।
तहाँ हुतौ इक सुक कौ अंग। तिहिं यह सुन्यौ सकल परसंग।
ताकौं सिव मारन कौं धायौ। तिन उड़ि अपुनौ आपु बचायौ।
उड़त-डड़त सुक[1] पहुँच्यौ तहाँ। नारि व्यास की बैठी जहाँ।
सिवहू ताके पाछैं धाए। पै ताकौं मारन नहिं पाए।
व्यास-नारि तबहीं मुख बायौ। तब तनु तजि मुख माहिं समायौ।
द्वादस बर्ष गर्भ मैं रह्यौ। व्यास[2] भागवत तबहीं[3] कह्यौ।
बहुरौ जब जदुपति समुझायौ। तेरी माता बहु दुख पायौ।
तू जिहिं हित नहिं बाहर आवै। सो हमसौं कहि क्यौं न सुनावै?

---

① सो—२, १६, १८। सह्यौ—८ ③ तब तिहि—१, ३।
② तब तेहि माता बहु दुख

प्रभु तुव माया मोहिँ सतावत । तातैँ मैँ बाहर नहिँ आवत ।
हरि कह्यौ अब न व्यापिहै माया । तब वह गर्भ छाँड़ि जग आया ।
माया मोह ताहि नहिँ गह्यौ[1] । सुन्यौ ज्ञान सो सुमिरन रह्यौ ।
जैसेँ सुक कौँ व्यास पढायौ । सूरदास तैसेँ कहि गायौ ॥२२६॥

श्रीभागवत के वक्ता-श्रोता * राग बिलावल

† व्यासदेव जब सुकहिँ पढायौ । सुनि कै सुक[2] सो हृदय बसायौ ।
सुक सौँ नृपति परीक्षित सुन्यौ । तिनि पुनि भली भाँति करि गुन्यौ ।
सूत सौनकनि सौँ पुनि कह्यौ । बिदुर सो मैत्रेय सौँ लह्यौ ।
सुनि भागवत सबनि[3] सुख पायौ । सूरदास सो बरनि सुनायौ ॥२२७॥

सूत-शौनक-सवाद ❀ राग बिलावल

‡ सूत व्यास सौँ हरि-गुन सुने[4] । बहुरौ तिन निज मन मैँ गुने[5] ।
सो पुनि नीमषार मैँ आयौ । तहाँ रिषिनि कौ दरसन पायौ ।
रिषिनि कह्यौ हरि[6]-कथा सुनावौ । भली भाँति हरि के गुन गावौ ।
प्रथमहिँ कह्यौ व्यास-अवतार । सुनौ सूर सो अब चित धार ॥२२८॥

व्यास-अवतार × राग बिलावल

§ हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि - चरनारबिद उर धरौ ।
व्यास-जनम भयौ जा परकार । कहौँ सो कथा, सुनौ चित धार ।

---

① दह्यौ—१ ।
* (ना) विभास ।
† यह पद (श्या) मेँ नहीँ है ।
② सुत—३, ८, १८ । ③ जननि—२ । परम—१६ । महा—१८ ।
(ना) विभास ।
‡ यह पद (श्या) मेँ नहीँ है ।
④ सुन्यो—६, ८, १८ । ⑤ गुन्यौ—६, ८, १८ । ⑥ भागवत—३ ।
× (ना) विभास । (रा) विलावल ।
§ यह पद (श्या) मेँ नहीँ है ।

सत्यवती मच्छोदरि[1] नारी । गंगा-तट ठाढी सुकुमारी ।
तहाँ परासर रिषि चलि आए । बिबस होइ तिहिं[2] कैं मद छाए ।
रिषि कह्यौ ताहि, दान-रति देहि । मैं बर देहुँ तोहिं सेा लेहि ।
तू कुमारिका बहुरौ होइ । तोकौं नाम धरै नहिं कोइ ।
मेरौ कह्यौ न जौ तू करै । देहौं साप, महा दुख भरै ।
सत्यवती सराप-भय मान । रिषि कौ बचन कियौ परमान ।
जोजनगंधा काया करी । मच्छ-बास ताकी सब हरी ।
व्यासदेव ताकैं सुत भए । होत जनम बहुरौ बन गए ।
देखौ काम-प्रतापऽधिकाई । कियौ परासर बस रिषिराई ।
प्रबल सत्र आहै यह मार । यातैं संतौ, चलौ सँभार ।
या बिधि भयौ व्यास-अवतार । सूर कह्यौ भागवत बिचार ॥२२६॥

श्री भागवत अवतरण का कारण * राग बिलावल

† भयो भागवत जा परकार । कहौं, सुनौ सेा अब चित धार ।
सतजुग लाख बरस की आइ । त्रेता दस सहस्र कहि गाइ ।
द्वापर सहस एक की भई । कलिजुग सत संवत रहि गई ।
सोऊ कहन सुनन कौं रही[3] । कलि-मरजाद जाइ[4] नहिं कही ।
तातैं हरि करि व्यासऽवतार । करो[5] संहिता बेद-बिचार ।
बहुरि पुरान अठारह किये । पै तउ सांति न आई हिये ।

---

① मछरी (मछवी) व्रत पारी—२, ३, १६, १८ । ② तिनके मद घाए—१ । तिनि पार लँघाए—२,३, ६, १८ । तिन पार लगाए—८ ।

* (ना) भैरो ।

† यह पद (श्या) में नहीं है ।

③ भाई—१,३,६, ८ । ④ कही नहिं जाई—१, ३, ६, ८ । ⑤ कीनी संख्या—२ ।

तब नारद तिनकैं ढिग आइ । चारि स्लोक कहे समुझाइ ।
ये ब्रह्मा सौं कहे भगवान । ब्रह्मा मोसौं कहे बखान ।
सोई अब मैं तुमसौं भाखे । कहौ[1] भागवत इन हिय राखे ।
श्री भागवत सुनै जो कोइ । ताकौं हरि-पद-प्रापति होइ ।
ऊँच नीच ब्यौरौ न रहाइ[2] । ताकी साखी मैं[3], सुनि भाइ !
जैसैं लोहा कंचन होइ । व्यास, भई मेरी गति सोइ ।
दासी-सुत तैं[3] नारद भयौ । दोष दासपन कौ मिटि गयौ ।
व्यासदेव तब करि हरि-ध्यान । कियौ भागवत कौ व्याख्यान ।
सुनै भागवत जो चित लाइ । सूर सो हरि भजि भव तरि जाइ ॥२३०॥

राग सारंग

† कह्यौ सुक श्री भागवत-विचार ।
जाति-पाँति कोउ पूछत नाहीं, श्रीपति कैं दरबार ।
श्रीभागवत सुनै जो हित करि, तरै सो भव-जल पार[4] ।
सूर सुमिरि सो[4] रटि निसि-बासर, राम-नाम निज सार ॥२३१॥

नाम-माहात्म्य

* राग कान्हरौ

‡ बडो है राम नाम की ओट ।
सरन गऐं प्रभु काढि देत नहिं, करत कृपा कैं कोट ।

---

① नाम भागवत यातैं राखे —२ । ② बड़ाई—१, ६, ८ । ③ तैं—२ ।

† यह पद (श्या) में नहीं है ।

④ धार—१ । ⑤ गुन—१ ६, ८ ।

* (ना) विलावल ।

‡ यह पद (श्या) में नहीं है ।

बैठत सबै सभा हरि जू की, कौन बड़ौ को छोट ?
सूरदास पारस के परसैं मिटति लोह की खोट ॥२३२॥

* राग धनाश्री

सोइ भलौ जो रामहिं गावै ।
स्वपचहु स्रेष्ट होत पद सेवत, बिनु गोपाल द्विज-जनम न[1] भावै ।
बाद-बिवाद, जज्ञ-ब्रत-साधन, कितहूँ[2] जाइ, जनम डहकावै ।
होइ अटल जगदीस-भजन मैं, अनायास[3] चारिहुँ फल पावै ।
कहूँ ठौर नहिं चरन-कमल बिनु, भृंगी ज्यौं दसहूँ दिसि धावै ।
सूरदास प्रभु संत-समागम, आनँद अभय निसान बजावै ॥२३३॥

राग सारग

काहु के बैर कहा सरै ।
ताकी सरबरि करै सो झूठौ जाहि गुपाल बड़ौ करै ।
ससि-सन्मुख जो धूरि उड़ावै, उलटि ताहि कैं मुख परै ।
चिरिया कहा समुद्र उलीचै, पवन कहा परबत टरै ?
जाकी कृपा पतित ह्वै पावन, पग परसत पाहन तरै ।
सूर केस नहिं टारि सकै कोउ, दाँत पीसि जौ जग मरै ॥२३४॥

* राग केदारौ

है हरि-भजन कौ परमान ।
नीच पावैं ऊँच पदवी, बाजते नीसान ।
भजन[4] कौ परताप ऐसौ, जल तरै पाषान !
अजामिल अरु भीलि[5] गनिका, चढे जात बिमान ।

---

* (ना) कान्हरा । (का) सारंग ।
(1) गँवावै—६ । (2) कित ह्वै २ । गनिहूँ—६, ८, १८ ।
(3) सेवा तासु चारि—१, ३ ६, १६ ।
(ना) रामकली ।
(4) हरि भजन—२ । (5) गीध—१६ ।

चलत तारे सकल मंडल, चलत ससि अरु भान।
भक्त ध्रुव कौं अटल पदवी, राम के दीवान।
निगम जाकौ सुजस गावत, सुनत संत सुजान।
सूर हरि की सरन आयौ, राखि लै भगवान ॥२३५॥

बिदुर-गृह भगवान-भोजन

* राग बिलावल

हरि, हरि, हरि, सुमिरौ सब कोइ। ऊँच नीच हरि गनत न दोइ।
विदुर-गेह हरि भोजन पाए। कौरव-पति कौं मन नहिँ ल्याए।
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ। सूर स्याम भक्तनि मन भाइ[1] ॥२३६॥

* राग बिलावल

भए पांडवनि के हरि दूत। गए जहाँ[2] कौरवपति धूत।
उन सौं जो हरि बचन सुनाए[3]। सूर कहत सो[4] सुनौ चित लाए ॥२३७॥

राग बिलावल

"सुनि राजा दुर्जोधना, हम तुम पैँ आए।
'पांडव-सुत जीवत मिले, दै[5] कुसल पठाए।
'छेम-कुसल अरु दीनता, दंडवत सुनाई[6]।
'कर जोरे बिनती करो, दुरबल-सुखदाई[7]।
'पाँच गाउँ पाँचौ जननि, किरपा करि दीजै।
'ये तुम्हरे कुल-बंस हैँ, हमरी सुनि लीजै।"
"उनकी मोसौं दीनता, कोउ कहि न सुनावौ।
'पांडव-सुत अरु द्रौपदी कौं मारि गड़ावौ[8]।

---

* (ना) भोपाली।
(१) आइ—१, ३, ६, ८, १६।
* (ना) विभास।
(२) तहाँ जहँ कौरौ पूत—८।
(३) उचारे—२। (४) सोई चित धारे—२। सुनियो चित लाए—१६। (५) तिन हमहिँ—२।
(६) सुनाए—२। (७) अधिकाए—२। दुख पाई—८। (८) कढ़ावौ—१, ८, १६।

'राजनीति जानौ नहीं, गो-सुत चरवारे।
'पीवौ छाँछ अघाइ कै, कब के रयवारे!"
"गाइ-गाउँ के वत्सला[1] मेरे आदि सहाई।
इनकी लज्जा नहिँ हमैं, तुम राज-बड़ाई।"
भीषम-द्रोन-करन सुनैं, कोउ मुखहु न बोलैं।
ये पांडव क्यौं गाड़िऐ[2], धरनी-धर डोलैं।
हम कछु लेन न देन मैं[3], ये बीर तिहारे।
सूरदास प्रभु उठि चले, कौरव-सुत हारे॥२३८॥

* राग धनाश्री

ऊधौ, चलौ बिदुर कैं[4] जइयै।
दुरजोधन कैं कौन काज जहँ आदर-भाव न पइयै!
‖ गुरुमुख नहीं[5] बड़े अभिमानी, कापै[6] सेव करइयै?
टूटी छानि, मेघ जल बरसैं, टूटौ पलँग बिछइयै।
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौं, तिया कहै प्रभु अइयै।
सकुचत फिरत जो बदन छिपाए, भोजन कहा मँगइयै।
तुम तौ तीनि लोक के ठाकुर, तुम तैं कहा दुरइयै?
हम तौ प्रेम-प्रीति के गाहक, भाजी-साक छकइयै।
¶ हँसि हँसि खात, कहत मुख महिमा, प्रेम-प्रीति अधिकइयै।
सूरदास-प्रभु भक्तनि कैं बस, भक्तनि[7] प्रेम बढ़इयै॥२३९॥

---

① बेटला — १, १६। बीठला—२। ② काढ़िए—१, ८, १६। ③ है—१, २, १६।
* (ना) सारंग।
④ घर—२, ८।
‖ यह चरण (स, कां, रा) में नहीं है।
⑤ नहिं राजा—२। ⑥ सेवा कहा—८।
¶ यह चरण (स) में नहीं है। (ना) में इसके स्थान पर यह पंक्ति है—बथुआ साग मटर की रोटी ठाकुर भोग लगइयै।
⑦ निसिदिन—१६।

* राग धनाश्री

हरि ठाढे रथ चढ़े दुवारे ।
तुम दारुक, आगैं ह्वै देखौ, भक्त भवन किधौं अनत सिधारे ।
सुनि सुंदरि उठि उत्तर दीन्ह्यौ, कौरव-सुत कछु काज हँकारे ।
तहँ आए जदुपति सुनियत[1] हैं, कमल-नयन हरि हितू हमारे ।
जिनकौं[2] मिलन गए पति तेरे, सेा ठाकुर ये बिदित[3] तुम्हारे ।
सूर[4] सुनत संभ्रम उठि दौरी, प्रेम-मगन, तन-दसा बिसारे ॥२४०॥

* राग धनाश्री

प्रभु जू, तुम हौ अंतरजामी ।
तुम लायक भोजन नहिँ गृह मैं अरु नाहीं गृह-स्वामी ।
हरि कह्यौ साग-पत्र[5] मोहिँ अति प्रिय, अम्रित ता सम नाहीं ।
बारंबार सराहि सूर प्रभु, साग बिदुर घर खाहीं ॥२४१॥

भगवान-दुर्योधन-सवाद

× राग सोरठ

क्यौं दासी-सुत कैं पग धारे ?
भीषम-करन-द्रोन-मंदिर तजि, मम गृह तजे मुरारे !
सुनियत हीन, दीन, बृषली[6]-सुत, जाति-पाँति तैं न्यारे ।
तिनकैं जाइ कियौ तुम भोजन, जदु-कुल लाजनि मारे ।

---

* (ना) बिहागरा । (का) कान्हरो ।

① कहियत—१, १६ । ② तिनकौ मिलन गयौ पति मेरौ ते ठाकुर हैं बिदित (बड़े) हमारे—१, २, ३, ६, ८, १६ । ③ प्रभू—१, १६ । बडे—२, ६, ८ । ④ सूरज प्रभु सुनि संभ्रम धाए प्रेम मगन तन बसन बिसारे—१, २, ३, ६, ८, १६ ।

* (ना) नट ।

⑤ पत्र जो—१, १६ । प्रीति-युत—३ ।

× (ना) भैरव । (का) सारंग ।

⑥ गृह लंपट—२ । सब भाँतिन—८ ।

हरि जू कह्यौ, सुनौ दुरजोधन, सत्य सुबचन हमारे।
सोइ निरधन, सोइ कृपन दीन हैं, जिन मम चरन बिसारे।
तुम साकट, वै भगत-भागवत[1], राग-द्वेष तैं न्यारे।
सूरदास प्रभु नंदनँदन कहैं, हम ग्वालनि-जुठिहारे ॥२४२॥

* राग सारंग

"हम तैं बिदुर कहा है नीकौ ?
'जाकैं रुचि सौं भोजन कीन्हौ, कहियत[2] सुत दासी कौ।"
"द्वै बिधि भोजन कीजै राजा, बिपति परैं कै प्रीति।
'तेरैं प्रीति न मोहिं आपदा, यहै बड़ी बिपरीति।
'ऊँचे मंदिर कौन काम के, कनक-कलस जो चढाए।
'भक्त-भवन मैं हौं जु बसत हौं, जद्यपि तृन करि छाए।
'अंतरजामी नाउँ हमारौ, हौं अंतर की जानौं।
'तदपि सूर मैं भक्तबछल हौं, भक्तनि हाथ बिकानौं" ॥२४३॥

* राग सारंग

"हरि[3], तुम क्यौं न हमारैं आए ?
'षट-रस ब्यंजन छाँडि रसोई, साग बिदुर-घर खाए।
'ताके झुगिया[4] मैं तुम बैठे कौन बड़प्पन पायो ?
'जाति[5]-पाँति कुलहू तैं न्यारौ, है दासी कौ जायो।"
"मैं तोहिं सत्य कहौं दुरजोधन, सुनि तू बात हमारी।
'बिदुर हमारौ प्रान पियारौ, तू बिषया-अधिकारी।

---

① वेई भक्त भागवत वेई—१, १६।
* (ना) जैतश्री।
② सुनियत—१। (ना) नट नारायनी।
③ प्रभु जू—६, ८।
④ धाम जाय तुम—३। ⑤ जानत जाति पाँति तैं न्यारौ—६, ८।

'जाति-पाँति सबकी हौं जानौं, बाहिर छाक मँगाई।
'ग्वालनि कैं सँग भोजन कीन्हौं, कुल कौं लाज लगाई।
'जहँ अभिमान तहाँ मैं नाहीं, यह भोजन बिष लागै।
'सत्य पुरुष सो दीन गृहत है, अभिमानी कौं त्यागै।
'जहँ जहँ भीर परै भक्तनि कौं, तहाँ तहाँ उठि धाऊँ।
'भक्तनि के हौं संग फिरत हौं, भक्तनि हाथ बिकाऊँ।
'भक्तबछल है बिरद हमारौ, बेद सुमृतिहूँ गावैं।"
सूरदास प्रभु यह निज महिमा, भक्तनि काज बढ़ावैं ॥२४४॥

द्रौपदी-सहाय

* राग बिलावल

हरि, हरि, हरि, सुमिरौ सब कोइ। नारि-पुरुष हरि गनत न दोइ।
द्रुपद-सुता की राखी लाज। कौरव-पति[1] कौ पारयौ ताज।
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ। सूर स्याम भक्तनि सुखदाइ[2] ॥२४५॥

⊛ राग बिलावल

कौरव पासा कपट बनाए। धर्म-पुत्र कौं जुआ खिलाए।
तिन हारयौ सब भूमि-भँडार। हारी बहुरि द्रौपदी नार।
ताकौं पकरि सभा मैं ल्यावै[3]। दुस्सासन कटि-बसन छुड़ावै[4]।
तब वह हरि सौं रोइ पुकारी। सूर राखि मम लाज मुरारी ॥२४६॥

× राग सारंग

अब कछु नाहिंन नाथ, रह्यौ!
सकल सभा मैं पैठि[5] दुसासन, अंबर आनि गह्यौ।

---

* (ना) बिभास। (रा) हिंडोल।

① सुत—६, ८। ② बनि आइ—१, १८। जुबताइ—२। हित आइ—८।

(ना) परज।

③ लाए—१, ३, ६, ८, १६, १८। ल्याइ—२।

④ छुड़ाए—१, ३, ६, ८, १६, १८। छुड़ाइ—२।

× (का, ना, रा) नट।

⑤ बैठि—१, २, ३, ८, १६।

हारि सकल भंडार-भूमि, आपुन बन-बास लह्यौ।
एकै[1] चीर हुतौ मेरे पर, सेा इन हरन चह्यौ।
हा जगदीस ! राखि इहिँ अवसर, प्रगट पुकारि कह्यौ।
सूरदास उमँगे दोउ नैना, सिंधु[2]-प्रवाह बह्यौ ॥ २४७॥

राग मारू

† राखेा पति गिरिवरगिरि-धारी !

अब तौ नाथ, रह्यौ कछु नाहिँन, उघरत माथ अनाथ पुकारो।
बैठी सभा सकल भूपनि की, भीषम-द्रोन-करन ब्रतधारी।
कहि न सकत कोउ बात बदन पर, इन पतितनि मेा अपति बिचारी।
पांडु-कुमार पवन से डोलत, भीम गदा कर तैँ महि डारी।
रही न पैज प्रबल पारथ की, जब तैँ धरम-सुत घरनी हारी।
अब तौ नाथ न मेरेा कोई, बिनु श्रीनाथ-मुकुंद-मुरारी।
सूरदास अवसर के चूकैँ, फिरि पछितैहौ देखि उघारी ॥२४८॥

* राग कल्यान

‡ मेा अनाथ के नाथ हरी !

ब्रह्मादिक, सनकादिक, नारद, जिहिँ समाधि नहिँ ध्यान टरी।
बूड़त स्याम, थाह नहिँ पावौँ, दुस्सासन-दुख-सिंधु परी[3]।
भक्त-बछल प्रभु नाम सुमिरि कै, ता कारन मैँ सरन धरी।
भीषम, द्रोन, करन, अस्थामा, सकुनि सहित काहूँ न सरी।
महापुरुष[4] सब बैठे देखत, केस गहत धरहरि[5] न करी।

---

① इतनक—२, ३। ② बसन—१, १६।

† यह पद केवल (श्या)मेँ है।

* (का, ना) बिलावल। (कौ) सारग।

‡ यह पद (वे, वृ, रा, श्या) मेँ नहीँ है।

③ मरी—२, ८। ④ महाबीर—२। ⑤ कछु धर—८।

त्राहि-त्राहि द्रौपदी पुकारी, गई बैकुंठ अवाज खरी।
सूर स्याम फिरि कहा करौगे, जब जैहै इक बसन हरी ॥२४६॥

† जब गहि राजसभा मैं आनी।
द्रुपद-सुता पट-हीन करन कौं दुस्सासन अभिमानी।
परै बज्र या नृपति-सभा पै, कहति प्रजा अकुलानी।
बैठे हँसत करन, दुर्जोधन, रोवति द्रौपदि रानी!
जित देखति तित कोऊ नाहीं, टेरि कहति मृदु बानी।
हा जदुनाथ, कमल-दल-लोचन, करुनामय, सुखदानी!
गरुड़ चढे देखे नँदनंदन ध्यान-चरन-लपटानी।
सूरदास प्रभु कठिन बिपति सौं राखि लियौ जग जानी ॥२५०॥

* राग मारू

‡ इत-उत देखि[1] द्रौपदी टेरी।
ऐंचत बसन, हँसत कौरव-सुत[2], त्रिभुवन-नाथ, सरन हौं तेरी।
सरबस दै अंबर तन बाँच्यौ, सोउ अब हरत, जाति पति मेरो।
क्रोधित देखि हँसे कौरव-कुल, मानौ मृगी सिंह बन घेरी।
गहि दुस्सासन केस सभा मैं, बरबस[3] लै आयौ ज्यौं चेरी।
पांडव सब पुरुषारथ छाँड़्यौ, बाँधे कपट-बचन की बेरी।
हा जदुनाथ द्वारिका-बासी, जुग-जुग भक्त-आपदा फेरी।
बसन-प्रवाह बढ़्यौ सुनि सूरज, आरत बचन कहे जब टेरी ॥२५१॥

---

† यह पद केवल (स, ल, शा) में है।
* (का) सारंग।
‡ यह पद (बे, रा, श्या) में नहीं है।
① दसा द्रौपदी हेरी—३।
② कुल—१, ३, ६, १६।
③ परबस—२, ३, ८।

* राग बिलावल

जितनी लाज गुपालहिं मेरी।
तितनी नाहिँ बधू हौं जिनकी, अंबर हरत[1] सबनि तन हेरी।
पति अति रोष मारि मनहीं मन, भीषम दई बचन बँधि बेरी।
हा जगदीस, द्वारिकाबासी, भई अनाथ, कहति हौं टेरी।
बसन-प्रवाह बढ्यौ जब जान्यौ, साधु-साधु, सबहिनि मति फेरी।
सूरदास-स्वामी जस प्रगट्यौ, जानी[2] जनम-जनम की चेरी ॥२५२॥

राग रामकली

† प्रभु[3], मोहिं राखिये इहिं ठौर।
केस गहत कलेस पाऊँ, करि दुसासन जोर।
करन, भीषम, द्रोन, मानत नाहिँ कोउ निहोर।
पाँच[4] पति हित हारि बैठे, रावरैं हित मोर।
धनुष-बान सिरान, कैधौं, गरुड बाहन खोर।
चक्र[5] काहु चोरायौ[6], कैधौं, भुजनि बल भयौ थोर।
सूर के प्रभु कृपा-सागर[7], चितै लोचन-कोर।
बढ्यौ[8] बसन-प्रवाह जल ज्यौं, होत जय-जय सोर ॥२५३॥

---

* (ना) कान्हरा।

① लेत—२, ३, ६, ८, १८। ② जनम-जनम की भई सु चेरी—६, ८।

† यह पद केवल (स, ल, शा) में है।

③ हरि—५। ④ सबै भूपति—३। ⑤ गदा चक्र चारायो काहू की भुजनि बल थोर—३। ⑥ चोराइ लीन्हौ—५। ⑦ करिकै—३। ⑧ बाढि बसन अकास लाग्यौ करत जय जय सोर—३।

राग आसावरी

† लाज[1] मेरा राखौ स्याम हरी।

हा-हा करि द्रौपदी पुकारी, बिलँब न करौ घरी।
दुस्सासन[2] अति दारुन रिस करि, केसनि करि[3] पकरी।
दुष्ट[4]-सभा पिसाच दुरजोधन, चाहत नगन करी।
भीषम, द्रोन, करन, सब[5] निरखत, इनतैं कछु न सरी।
अर्जुन-भीम महाबल जोधा, इनहूँ मौन धरी।
अब मोकौं धरि रही न कोऊ, तातैं जाति मरी।
मेरैं मात-पिता-पति-बंधू, एकै टेक हरी।
जय-जयकार भयौ त्रिभुवन मैं, जब द्रौपदि उबरी।
सूरदास प्रभु सिंह-सरन-गति स्यारहिं[6] कहा डरी ॥२५४॥

* राग धनाश्री

निबाहौ[7] बाहँ गहे की लाज।
द्रुपद-सुता भाषति, नँदनंदन, कठिन बनी है आज।
भीषम, द्रोन, करन, दुरजोधन, बैठे सभा बिराज।
तिन देखत मेरौ पट काढत, लीक[8] लगै तुम लाज।

---

† यह पद केवल (स, ल, शा) में है। (स) तथा (शा) के पाठो में बडा अतर है और चरणों की संख्या भी न्यूनाधिक है। अतिरिक्त होने के कारण (शा) की "बसन प्रवाह बढयौ करुना-मय सेना हारि परै" पक्ति निकाल दी गई।

① अब मोहिं गोविंद लाज परी—३।

|| ये चरण (शा) में नहीं हैं।

② हम पर रोष कियौ दुस्सासन बरबट केस धरी—३। ③ कौं—५। ④ महामूढ—५। ⑤ कु तीसुत—३।

¶ ये चरण (स) में नहीं हैं।

⑥ गीदड तैं न डरी—३।

* (ना) अलहिया। (का, ना, का) देवगधार।

⑦ निबहौ—१, १८, १९। निवहियो—२। ⑧ नैंकु तुम्हैं नहिं—२। नैंक लगै नहिं—१८।

खंभ फारि हरनाकुस मार्‌यौ, जन[1] प्रहलाद निवाज ।
जनक-सुता-हित हत्यौ लंकपति, बाँध्यौ साइर-पाँज[2] ।
॥ गदगद स्वर, आतुर, तन पुलकित, नैननि नीर-समाज ।
दुखित द्रौपदी जानि जगतपति, आए खगपति त्याज ।
पूरे चीर भीरु[3]-तन-कृष्ना, ताके भरे जहाज ।
काढि काढि थाक्यौ दुस्सासन, हाथनि उपजी खाज ।
बिकल[4] मान खोयौ कौरव-पति, पारेउ सिर कौ ताज ।
सूरज प्रभु यह मान सदाई, भक्त-हेत महराज ॥२५५॥

राग बिहागरौ

† ठाढी कृष्न-कृष्न यौं बोलै ।
जैसैं कोऊ बिपति परे तैं, दूरि धर्‌यौ धन खोलै ।
पकर्‌यौ चीर दुष्ट दुस्सासन, बिलख बदन भइ डोलै ।
जैसैं राहु नीच ढिग आएँ, चंद्र-किरन झकझोलै ।
जाकैं मीत नंदनंदन से, ढकि लइ पीत पटोलै ।
सूरदास ताकौं डर काकौ, हरि गिरिधर[5] के ओलै ॥२५६॥

* राग धनाश्री

तुम्हरी कृपा बिनु[6] कौन उबारे ?
अर्जुन, भीम, जुधिष्ठिर, सहदेव, सुमति[7] नकुल[8] बलभारे ।

---

① ध्रुव नृप धर्‌यौ—१, २, ३, १८, ११ । ② गाज—१, १६ । बाज—३ ।

॥ यह चरण (वे, स, ना) में इसी स्थान पर मिलता है । परन्तु (ना) में यह पद के अत में है ।

③ बहुरि—१ । भरे—१८ । फेर—१६ । ④ बिकल अमान कर्‌यौ कौरवपति—१ । ब्याकुल मान गयौ कौरवपति—२ ।

† यह पद केवल (वे, बृ, श्या) में है ।

⑤ गिरिवर—१ ।

* (ना) टोड़ी ।

⑥ को को न—६, ८ । ⑦ सुनत—६, ८ । ⑧ बिकल—२ ।

केस पकरि ल्यायो दुस्सासन, राखी लाज, मुरारे !
नाना वसन बढाइ दिए प्रभु, बलि-बलि नंद-दुलारे ।
नगन न होति, चकित भयो राजा, सीस धुनै, कर मारै ।
जापर कृपा करै करुनामय, ता दिसि कौन निहारै ?
जो जो जन निस्चै करि सेवै, हरि निज बिरद सँभारै ।
सूरदास प्रभु अपने जन कौं, उर तैं नैंकु न टारै ॥२५७॥

† द्रौपदी हरि सौं टेरि कही ।
तुम जिनि सहौ स्यामसुंदर वर, जेती मैं जु सही ।
तुम पति पाँच, पाँच पति हमरे, तुम सौं कहा रही ?
भीषम, करन, द्रोन देखत, दुस्सासन बाहँ गही ।
पूरे चीर, अंत नहिँ पायो, दुरमति हारि लही ।
सूरदास प्रभु द्रुपद-सुता की, हरि जू लाज ठही ॥२५८॥

राग आसावरी

‡ जौ मेरे दीनदयाल न होते ।
तौ मेरी अपत करत कौरव-सुत, होत पंडवनि ओते ।
कहा भीम के[1] गदा धरैं कर, कहा धनुष धरै पारथ ?
काहु[2] न धरहरि करी हमारी, कोउ न आयो स्वारथ ।
समुझि-समुझि गृह-आरति[3] अपनी, धर्मपुत्र मुख जोवै ।
सूरदास प्रभु नंद-नदन-गुन गावत निसि[4]-दिन रोवै ॥२५९॥

---

† यह पद केवल (स, ल) में है ।

‡ यह पद (ना, स, ल, शा, का, गु, को) मे है ।

(१) जो—२ । (२) कहा किह स्वारथ—२ । (३) रासि आपनी—२, ३, १६ । (४) मन नकुल सहदेव करत है और सुभट बच सोहै—६, ८ ।

पाण्डव-राज्याभिषेक * राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि चरनारबिंद उर धरौ।
हरि पांडव[1] कौं ज्यौं दियौ राज। पुनि सो गए राज ज्यौं त्याज।
बहुरौ भयौ परीच्छित राजा। ताकौं साप बिप्र-सुत साजा।
सुनि हरि-कथा मुक्त सो भयौ। सूत सौनकनि सौं सो कह्यौ।
कहौं सु कथा सुनौ चित धारि। सूर कहै भागवत बिचारि[2] ॥२६०॥

भीष्मोपदेश, युधिष्ठिर-प्रति * राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
भारत जुद्ध होइ जब बीता। भयौ जुधिष्ठिर अति भयभीता।
गुरुकुल[3]-हत्या मोतैं भई। अब धौं कैसी करिहै दई।
करौं तपस्या, पाप निवारौं। राज-छत्र नाहीं सिर धारौं।
लोगनि तिहिं बहु बिधि समुझायौ। पै तिहिं मन-संतोष न आयौ।
तब हरि कह्यौ टेक परिहरौ। भीष्म[4] पितामह कहै सो करौ।
हरि-पांडव रन-भूमि सिधाए। भीषम देखि बहुत सुख पाए।
हरि कह्यौ, राज न करत धर्मसुत। कहत हते मैं भ्रात[5] तात-जुत।
गुरु-हत्या मोतैं ह्वै आई। कह्यौ सो छूटै कौन उपाई?
राजधर्म तब भीषम गायौ। दानापद पुनि मोक्ष सुनायौ।

---

* (ना) विभास।
† यह पद (शा, का, रा) में नहीं है।
① पडौ—२। पाडव को दीन्हौ—८। पडुनि—१६। ② अनुसार—२, ३, ६। (ना) विभास। ③ कुरकुल—१, १६, १६। ④ भीषमपिता—२, ३, ६, ८। ⑤ भ्रात भ्रात सुत—१, ६, १६, १८, १६। भ्रात तात सुत—२। भ्राता गुरु सुत—३। भ्रात भ्रात-जुत—८।

पै नृप को संदेह न गयो। तब भीषम नृप सौं यौं कह्यो।
धर्म-पुत्र तू देखि विचार। कारन करनहार करतार।
नर के किऐं कछू नहिं होइ। करता-हरता आपुहिं सोइ।
ताकौं सुमिरि राज तुम करो। अहंकार चित तैं परिहरो।
अहंकार किऐं लागत पाप। सूर स्याम मेटैं संताप ॥२६१॥

* राग धनाश्री

करी गोपाल की सब होइ।
जो अपनौ पुरुषारथ मानत, अति झूठौ है सोइ।
साधन, मंत्र, जंत्र, उद्यम, बल, ये सब डारौ धोइ।
जा कछु लिखि[1] राखी नँदनंदन, मेटि सकै नहिं कोइ।
दुख सुख, लाभ-अलाभ समुझि[2] तुम, कतहिं[3] मरत हो रोइ।
सूरदास स्वामी करुनामय, स्याम-चरन मन पोइ ॥२६२॥

* राग कान्हरौ

होत[4] सो जो रघुनाथ ठटै।
पचि-पचि रहैं सिद्ध, साधक, मुनि, तऊ न बढै-घटै।
जोगी जोग[5] धरत मन अपनैं, सिर[6] पर राखि जटै।
ध्यान धरत महादेवऽरु ब्रह्मा, तिनहूँ पै न छटै[7]।
जती[8], सती, तापस आराधैं, चारौं बेद रटै।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, करम-फाँस[9] न कटै ॥२६३॥

---

* (ना) सोरठ।
† यह पद (का) में नहीं है।
① रचि—२। ② सहज—२, ३। ③ काहि—२।
(ना) सोरठ।
④ होत वही जो राम ठटै—२। ⑤ जुगति—२। ध्यान—८। ⑥ औसिर—१, २, ३। ⑦ पटै—२। घटी—३, १६। घटै—६, ८, १६, १८। ⑧ जपि तपि तपसी आराधन कर—१ ⑨ रेख—१, १६।

राग सारंग

भावी काहू सौं न टरै ।
कहँ वह राहु, कहाँ वै रवि ससि, आनि सँजोग परै ।
मुनि बसिष्ठ पंडित अति ज्ञानी, रचि-पचि लगन धरै ।
तात-मरन, सिय-हरन, राम बन-बपु धरि बिपति भरै ।
रावन जीति कोटि तैंतीसौ, त्रिभुवन राज करै ।
मृत्युहिं बाँधि कूप मैं राखै, भावी-बस सो मरै ।
अरजुन के हरि हुते[1] सारथी, सोऊ[2] बन निकरै ।
द्रुपद-सुता कौ राजसभा, दुस्सासन चीर हरै ।
हरीचंद सो को जगदाता, सो घर नीच भरै ।
जौ गृह छाँड़ि देस बहु धावै, तउ वह संग फिरै ।
भावी कैं बस तीन लोक हैं, सुर नर देह धरै ।
सूरदास प्रभु रची[3] सु ह्वै है, को करि सोच मरै! ॥२६४॥

* राग कान्हरौ

तातैं[4] सेइयै श्री जदुराइ ।
संपति बिपति, बिपति तैं संपति, देह[5] कौ यहै सुभाइ ।
तरुवर फूलै, फरै, पतझरै[6], अपने कालहिं पाइ ।
सरवर नीर भरै, भरि[7] उमड़ै, सूखै, खेह[8] उड़ाइ ।
दुतिया-चंद बढत ही बाढै, घटत-घटत घटि जाइ ।
सूरदास संपदा-आपदा, जिनि कोऊ पतिआइ[9] ॥२६५॥

---

(१) हित—१ । (२) तऊ जु बन सुकरै—६, ८, १८ । तेऊ बन बिचरै—१६ । (३) ठटी—२ । * (ना) अडाना । (४) याते—२ । (५) इन—२ । देह धरे को भाइ—८ । (६) परिहरै—१, ३ । (७) पुनि—१ फिर—२, १६ । (८) धरि—२ । (९) पछिताइ—६, ८ ।

* राग मलार

† इहिँ विधि कहा घटैगौ तेरौ ?
नंदनँदन करि घर कौ ठाकुर, आपुन ह्वै रहु चेरौ ।
कहा भयौ जौ संपति बाढी, कियौ बहुत घर बेरौ ।
कहुँ हरि-कथा, कहूँ हरि-पूजा, कहुँ संतनि कौ डेरौ ।
जो बनिता-सुत-जूथ सकेले, हय-[1]गय-विभव घनेरौ ।
सबै[2] समर्पौ सूर स्याम कौं, यह साँचौ मत मेरौ ॥२६६॥

महाभारत में भगवान की भक्तवत्सलता का प्रसग

* राग सारंग

‡ भक्तबछल श्री जादवराइ ।
भीषम की परतिज्ञा राखी, अपनौ बचन फिराइ ।
भारत माहिँ कथा यह विस्तृत, कहत होइ विस्तार ।
सूर भक्त-वत्सलता बरनौं[3], सर्व कथा कौ सार ॥२६७॥

अर्जुन-दुर्योधन का कृष्ण गृह-गमन

× राग सारंग

भक्तबछलता प्रगट करी ।
सत संकल्प वेद की आज्ञा, जन के काज प्रभु दूरि धरी[4] ।
भारतादि दुरजोधन, अर्जुन, भेँटन गए द्वारिकापुरी ।
कमलनैन पौढे सुख-सेज्या, बैठे पारथ पाइतरी ।

---

* (ना, का) धनाश्री ।
† यह पद (वृ) में नहीं है ।
(१) हय गय रथनि घनेरौ—१, १६ । हय रथ कटक घनेरा—६, ८ । (२) सब तजि सुमिरण सूर स्याम गुण—१ । सब तजि सुमिरा सूर स्याम—८, १६ ।
(ना) जैतश्री
‡ यह पद (वृ, का) में नहीं है ।
(३) निगुन सर्व गुननि कौ सार—२ ।
× (ना) पट मंजरी ।
(४) करी—२, ३, ६, १६, १८, १६ । परी—८ ।

प्रभु जागे[1], अर्जुन-तन चितयौ, कब आए तुम, कुसल खरी[2] ?
ता पाछैं दुर्जोधन भेयौ[3], सिर-दिसि तैं मन गर्व धरी।
दुहुँनि मनोरथ अपनौ भाष्यौ, तब श्रीपति बानी उचरी।
जुद्ध न करौं, सस्त्र नहिं पकरौं, एक ओर सेना सिगरी।
हरि-प्रभाउ राजा नहिं जान्यौ, कह्यौ सैन मोहिं देहु हरी।
अर्जुन कह्यौ जानि सरनागत, कृपा करौ ज्यौं पूर्व करी।
निज पुर आइ, राइ, भीषम सौं, कही जो बातैं हरि उचरी।
सूरदास भीषम परतिज्ञा, अस्त्र गहावन पैज करी ॥२६८॥

दुर्योधन-वचन, भीष्म-प्रति

* राग धनाश्री

मतौ[4] यह पूछत भ्रतलराइ।
"सुनौ पितामह भीषम, मम गुरु, कीजै कौन उपाइ ?
'उत अर्जुन अरु भीम पंडु-सुत, दोउ बर[5] बीर गँभीर।
'इत भगदत्त, द्रोन, भूरिश्रव, तुम सेनापति धीर।
'जे जे जात, परत ते भूतल, ज्यौं ज्वाला-गत[6] चीर।
'कौन सहाइ, जानियत नाहीं, होत बीर निर्बीर।"
"जब तोसौं समुझाइ कही नृप, तब तैं करी न कान।
'पावक[7] जथा दहत सबही दल तूल-सुमेरु-समान।

---

(१) आगे—६, ८। (२) धरी—१,२,६,८,१६। (३) भे टहिं—१। बैठे—२, ३, १६। पेख्यो—६ भेटौ—१८।

* (ना) सारग। (का) कानरा। (रा) बिलावल।

† कुछ प्रतियों में इसके चरणों की संख्या न्यूनाधिक है और उनके पाठ तथा क्रम में भी भेद है। (ना, का, ग्रं) अंक की प्रतियों की संख्या तथा क्रम समान हैं। उन्हीं का आधार लेकर इस संस्करण का पाठ रक्खा गया है।

(४) राज मति बिह्वल बूझत (पूछत) राव—६, ८। (५) क्रोधी गहर गँभीर—२। (६) पट—२। (७) पावक किरच दहै दुरजोधन—२। पावक दहत सबै दल तेरौ सेमर तूल समान—६, ८।

'अबिगत, अबिनासी, पुरुषोत्तम, हाँकत[1] रथ कै[2] आन।
'अचरज कहा पार्थ जौ बेधै, तीनि लोक इक बान!"
"अब तौ हौं तुमकौं तकि आयौ, सोइ रजायसु दीजै।
'जातैं रहै छत्रपन मेरौ, सोइ मंत्र कछु कीजै।
'जा सहाइ पांडव-दल जीतौं, अर्जुन कौ रथ लीजै।
'नातरु कुटुंब सकल संहरि कै, कौन काज अब जीजै?"
"तेरैं काज करौं पुरुषारथ[3], जथा जीव घट माहीं।
'यह न कहौं, हौं रन चढि जीतौं, मो मति नहिं अवगाही।
'अजहूँ चेति, कह्यौ करि मेरौ, कहत पसारे बाहीं।
'सूरदास सरबरि को करिहै, प्रभु पारथ ह्वै नाहीं" ॥२६९॥

भीष्म-प्रतिज्ञा

* राग मलार

आजु जौ हरिहिं न सस्त्र[4] गहाऊँ।
तौ लाजौं[5] गंगा जननी कौं, सांतनु-सुत न कहाऊँ।
॥ स्यंदन[6] खंडि महारथि खंडौं, कपिध्वज सहित गिराऊँ।
॥पांडव[7]-दल-सन्मुख ह्वै धाऊँ, सरिता-रुधिर बहाऊँ।
इती न करौं सपथ तौ[8] हरि की, छत्रिय-गतिहिं न पाऊँ।
सूरदास रनभूमि बिजय बिनु, जियत न पीठि दिखाऊँ ॥२७०॥

---

(१) बेध्यौ रथ की कान—२। (२) कियान—६। जो आन—८। (३) बल पौरुष—२। *(ना) धुरिया मलार। (का) मारू। (४) अस्त्र—८। (५) लजा—३। ॥ ये दो चरण (का) में नहीं हैं। (६) सब दल खंडि—२। स्यदन सहित—१६। (७) पाडु सुतन—८। (८) मोहिं—१, २, ३, ८।

राग मारू

सुरसरी-सुवन रनभूमि आए ।
बान-बरषा लगे करन अति क्रुद्ध ह्वै, पार्थ-अवसान तब सब भुलाए ।
कह्यौ करि कोप प्रभु अब प्रतिज्ञा तजौ, नहीं तौ जुद्ध निजु हम हराए ।
सूर-प्रभु, भक्तवत्सल-बिरद आनि उर, ताहि या बिधि बचन कहि सुनाए ॥२७१॥

अर्जुन के प्रति भगवान् के वचन * राग बिलावल

हम भक्तनि के, भक्त हमारे ।
सुनि अर्जुन परतिज्ञा मेरी, यह ब्रत टरत न टारे ।
भक्तनि काज लाज जिय धरि कै, पाइ पियादे धाऊँ ।
जहँ-जहँ भीर परै भक्तनि कौं, तहँ-तहँ जाइ छुड़ाऊँ ।
जो भक्तनि सौं बैर करत है, सो बैरी निज मेरौ ।
देखि बिचारि भक्त-हित-कारन, हाँकत हौं रथ तेरौ ।
जीतैं जीति भक्त अपनैं के, हारैं हारि बिचारौं ।
सूरदास सुनि भक्त-बिरोधी, चक्र सुदरसन जारौं ॥२७२॥

भगवान् का चक्र-धारण * राग सारंग

गोबिंद कोपि चक्र कर लीन्हौ ।
छाँड़ि आपनौ प्रन जादवपति, जन कौ भायौ कीन्हौ ।
रथ तैं उतरि अवनि आतुर ह्वै, चले चरन अति धाए ।
मनु[1] संचित भू-भार उतारन, चपल भए अकुलाए !

---

* (ना) विहागरा । (का, ना, कां) मलार । (ना) मलार । (ना) धनाश्री । (का, ना, कां) मलार ।

(१) मनु शक्ति भू भार उतारन चलत भए अकुलाए—१, १६ । जन संकट भौ-भार.....—३ । मन संकट भूभार बहुत है —६, ८, १८ ।

कछुक अंग तैं उड़त पीतपट, उन्नत बाहु बिसाल ।
स्रवत[1] स्रोनकन, तन सोभा, छबि-घन बरसत मनु लाल ।
सूर सु भुजा समेत सुदरसन देखि बिरंचि भ्रम्यौ ।
मानौ आन सृष्टि करिबे कौं, अबुज नाभि जम्यौ ॥२७३॥

* राग मलार

वरु[2] मेरी परतिज्ञा जाउ ।
इत पारथ कोप्यौ है हम पर, उत भीषम भट-राउ ।
रथ तैं उतरि चक्र कर लीन्हौ, सुभट सामुहैं आए ।
ज्यौं[3] कंदर तैं निकसि सिंह, झुकि, गज-जूथनि पर धाए ।
आइ निकट श्रीनाथ निहारे[4], परी तिलक पर दीठि ।
सीतल भई चक्र की ज्वाला, हरि हँसि दीन्ही पीठि ।
जय-जय-जय चितामनि स्वामी, सांतनु-सुत यौं भाखे ।
तुम बिनु ऐसो कौन दूसरो, जो मेरो प्रन राखे ।
साधु-साधु सुरसरी-सुवन तुम, नहिं[5] प्रन लागि डराऊँ ।
सूरजदास भक्त दोऊ दिसि, कापर चक्र चलाऊँ ॥२७४॥

अर्जुन और भीष्म का संवाद

* राग धनाश्री

"कहौ पितु, मोसौं सोइ सतिभाव ।
'जातैं दुरजोधन-दल जीतौं, किहिं बिधि करौं उपाव" ।

---

(१) स्वेद स्रवत तनु सोभा कन—१, २, ६, ८, १६ ।
* (ना) धनाश्री ।
(२) मेरी परतिज्ञा रहौ कि जाउ—१, ६, ८ ।
|| ये दो चरण (स, रा) में नहीं हैं ।
(३) ज्यौं सारंग जूथ मैं पैठत केहरि अति बल पाए—२ । (४) बिचारी—१, २, ३, १८ १६ । प्रचारयो—१६ । (५) मैं—१, ६, ८, १६ ।
(ना) जैतश्री । (को) बिलावल । (रा) सारंग ।

"जब लगि जिय घट-अंतर मेरैं, को सरबरि करि पावै ?
'चिरंजीव तौलौं' दुरजोधन, जियत न पकरचौ आवै ।
'कौरव छाँड़ि भूमि पर कैसैं दूजौ भूप कहावै ?
'तौ हम कछु न बसाइ पार्थ, जौ श्रीपति तोहिं जितावै" ।
"अब मैं सरन तुम्हैं तकि आयौ, हमैं मंत्र कछु दीजै ।
'नातरु कुटुंब सैन संहरि सब, कौन काज कौं जीजै" ।
"द्रुपद-कुमार होइ रथ आगैं, धनुष गहौ तुम बान ।
'ध्वजा बैठि हनुमत गल[2]गाजै, प्रभु हाँकै रथ-यान ।
'केतिक जीव कृपिन मम बपुरौ[3], तजै कालहू प्रान ।
'सूर एकहीं बान बिदारैं[4], श्री गोपाल की आन" ॥२७५॥

भीष्म का देह-त्याग * राग सारंग

पारथ भीषम सौं मति पाइ । कियौ सारथी सिखंडी आइ ।
भीषम ताहि देखि मुख फेरचौ । पारथ जुद्ध-हेत रथ प्रेरचौ ।
कियौ जुद्ध अतिहीं बिकरार । लागी चलन रुधिर की धार ।
भीषम सर-सज्या पर परचौ । पै दछिनाइनि लखि नहिं मरचौ ।
हरि पांडव-समेत तहँ आए । सूरज-प्रभु भीषम मन भाए ॥२७६॥

* राग सारंग

हरि सौं भीषम बिनय सुनाई । कृपा करी तुम जादवराई !
भारत मैं मेरौ प्रन राख्यौ । अपनौ कह्यौ दूरि करि नाख्यौ ।

---

① जौ लौ—१, २, ३, १६ । नहीं हैं ।
② कल—१, १६ । किलकारे —६, ८ ।
‖ ये दो चरण (स) में
③ अतर—८ । ④ विदारे —८ ।
* (ना) विभास । (का) बिलावल ।
(ना) विभास । (ना) बिलावल ।

तुम बिनु प्रभु को ऐसो करै । जो भक्तनि कैं बस अनुसरै ।
तव दरसन सुर-नर-मुनि दुर्लभ । मोकौं भयौ सो अतिहीं सुर्लभ ।
॥दूरि नहीं गोबिंद वह काल । ॥सूर कृपा कीजै गोपाल ॥२७७॥

* राग सारग

गोबिंद, अब न दूरि वह काल ।
दीनानाथ, देवकी-नंदन, भक्तबछल गोपाल !
मैं भीषम, तुम कृष्न सारथी, किये पीतपट लाल ।
बहुत सनाह समर सर बेधे, ज्यौं[1] कंटक नल-नाल ।
तुम्हरैं चरन-कमल मो मस्तक, कत ताकौं सर-जाल ?
सूरदास जन जानि आपनौ, देहु अभय की माल ॥२७८॥

* राग मलार

वा पट पीत की फहरानि ।
कर धरि चक्र, चरन की धावनि, नहिं बिसरति वह बानि ।
रथ तैं उतरि चलनि[2] आतुर ह्वै, कच रज की लपटानि ।
मानौ सिंह सैल तैं निकस्यौ[3], महा मत्त गज जानि ।
जिन गोपाल मेरौ प्रन राख्यौ, मेटि बेद की कानि ।
सोई सूर सहाइ हमारे, निकट भए हैं आनि ॥२७९॥

॥ इन दो चरणों के स्थान पर (का ना) में ये दो चरण हैं—
अभयदान अब मोकौं दीजै ।
सूरदास प्रभु इतनी कीजै ॥

* (ना) देवगधार ।

(१) कनक बेल ज्यौं ताल—१, १६ । कंटक तुल्य सुभाल—६, ८ ।

(ना) धुरिया मलार ।

(२) अवनि—१, २, ३, १६ ।

(३) ,, —२ ।

* राग सारंग

भीषम धरि हरि कौ उर ध्यान । हरि के देखत तजे परान ।
तासु क्रिया करि सब गृह आए । राजा सिंहासन बैठाए ।
हरि पुनि द्वारावती सिधाए । सूरदास हरि के गुन गाए ॥२८०॥

भगवान् का द्वारिका-गमन

* राग बिलावल

धर्मपुत्र कौं दै हरि राज । निज पुर चलिबे कौं कियौ साज ।
तब कुंती बिनती उच्चारी । सुनौ कृपा करि कृष्न मुरारी ।
जब-जब हमकौं बिपदा परी । तब-तब प्रभु सहाइ तुम करी ।
तुम बिनु हमहिं राज किहिं काम? सूर बिसारहु हमैं न स्याम ॥२८१॥

कुन्ती-विनय

राग कान्हरौ

प्रभु जू, बिपदा भली बिचारी ।
धिक यह राज बिमुख चरननि तैं[1], कहति पांडु की नारी ।
लाखा-मंदिर कौरव रचियौ[2], तहँ राखे बनवारी ।
अंबर[3] हरत सभा मैं कृष्ना सोक-सिंधु तैं तारी ।
अतिथि[4] रिषीस्वर सापन आए, सोच भयौ जिय भारी ।
स्वल्प[5] साग तैं तृप्त किए सब, कठिन आपदा टारी ।
जन[6] अर्जुन की रच्छा कारन, सारथि भए मुरारी ।
सोई सूर सहाइ हमारे, संतनि के हितकारी ॥२८२॥

---

* (ना) बिभास ।
१ (ना) बिभास ।
① तुमतैं बिमुख—१, ३ १६ ।
(ना) बिभास । (का, ना ३) कल्यान ।
② बिरच्यौ—१ । राच्यौ —३ । ③ दुर्योधन की सभा द्रौपदी अंबर दिए अपारी (उबारी) —१, ३, १६ । ④ असी सहस रिषि—६, ८ । अतिथि सप्तरिषि —१६ । ⑤ सो सब साग पत्र (पात) करि तिरपित—६, ८ । ⑥ परतिज्ञा प्रहलाद की राखी श्री नरहरि बपु धारी—१, ३, १६ ।

* राग मलार

† अब[1] वे बिपदा हू न रहीं ।
मनसा करि सुमिरत हे जब-जब, मिलते तब-तबहीं ।
अपने दीन दास कैं हित लगि, फिरते सँग-सँगहीं ।
लेते राखि पलक गोलक ज्यौं, संतत तिन सबहीं ।
रन अरु बन, बिग्रह, डर आगैं, आवत जहाँ-तहीं ।
राखि लियो तुमहीं जग-जीवन, त्रासनि तैं सबहीं ।
कृपा-सिंधु की कथा[2] एक रस, क्यौं करि जाति कहीं ।
कीजै कहा सूर सुख-संपति, जहँ जदुनाथ नहीं ? ॥२८३॥

राजा धृतराष्ट्र का वैराग्य तथा वन-गमन

* राग बिलावल

कौरवपति ज्यौं बन कौं गयो । धर्मपुत्र बिरक्त पुनि भयो ।
बरनि सुनावौं ता अनुसार । सूत कह्यो जैसैं परकार ।
भारतादि कुरुपति की जथा[3] । चली पांडवनि की जब कथा ।
बिदुर कह्यो मति करौ अन्याइ । देहु पांडवनि राज बटाइ ।
कुरुपति कह्यो, धान मम खाइ । पांडु-सुतनि की करत सहाइ ।
याकौं ह्याँ तैं देहु निकारि । बहुरि न आवै मेरे द्वारि ।
बिदुर सस्त्र सब तबहिं उतारि । चल्यो तीरथनि मुंड उघारि ।
भारत के बीतैं पुनि आयो । लोगनि सब बृत्तांत सुनायो ।

---

* ($\frac{\text{न}}{\text{इ}}$) कल्यान ।

† यह पद (वे, स, रा) में नहीं है । जिन प्रतियों में यह पद है, उनमें पाठांतर बहुत हैं । उन्हें मिलाकर ऊपर लिखा पाठ निर्धारित किया गया है ।

(१) अब—२ । पर—८ ।

(२) कृपा (कथा) सुनत ही नाहीं परति कही—२, ६ । (ना) भेरवी ।

(३) तथा—२ । सभा—३, ६, १६ ।

तब पूछ्यौ, कुरुपति है कहाँ ? कह्यौ, पांडु-सुत-मंदिर जहाँ ।
राजा सेव भली बिधि करै । दंपति[1]-आयसु सब अनुसरै ।
बिदुर कह्यौ, देखौ हरि-माया । जिन यह सकल लोक भरमाया ।
इहिँ माया सब लोगनि लूट्यौ । जिहिँ हरि कृपा करी सो छूट्यौ ।
इनके पुत्र एक सौ मुए । तिन्हैँ बिसारि सुखी ये हुए ।
अब मैँ उनकौँ ज्ञान सुनाऊँ । जिहिँ तिहिँ बिधि बैराग्य उपाऊँ ।
बहुरौ धर्म-पुत्र पैँ आयौ । राजा देखि बहुत सुख पायौ ।
करि सन्मान कह्यौ या भाइ । करी हमारी बहुत सहाइ ।
लाखा-गृह तैँ जरत उबारे । अरु बालापन तैँ प्रतिपारे ।
कौन-कौन तीरथ फिरि आए ? बिदुर सकल बृत्तांत सुनाए ।
बहुरि कह्यौ, हरि-सुधि कछु पाई ? कह्यौ न कछू, रह्यौ सिर नाई ।
बहुरौ कुरुपति कैँ ढिग आए । पूछे समाचार सतिभाए ।
कह्यौ, जुधिष्ठिर सेवा करत । तातैँ बहुत अनंदित रहत ।
कह्यौ, सुतनि[2]-सुधि आवति कबहीं? कह्यौ, भावियै कैँ बस सबहीँ ।
बिदुर कह्यौ, सत पुत्र तुम्हारे । पांडु-सुतनि सो सकल सँहारे ।
तिनकैँ गृह तुम भोजन करत । अरु पुनि कहत सुखी हम रहत !
धिक तुम, धिक या कहिबे ऊपर । जीवित रहिहौ कौ लौँ भू पर ।
स्वान-तुल्य है बुद्धि तुम्हारी । जूठनि काज सहत दुख भारी ।
द्रौपदि के तुम बसन छिनाए । इनि तव राज बहुत दुख पाए ।
इनकैँ गृह रहि तुम सुख मानत । अति निलज्ज, कछु[3]लाज न आनत!
जीवनि-आस प्रबल श्रुति लेखी । साच्छात सो तुममैँ देखी ।

---

① दिन प्रति—८ । ② पुत्र—१, ६, ८,१६,१८,१९ । ③ कस—३ । क्यौ—१९ ।

काल-अगिनि सबही जग जारत । तुम कैसे कैं[1] जिअन बिचारत ?
आयु तुम्हारी गई सिराइ । बन चलि भजौ द्वारिकाराइ ।
कुरुपति कह्यौ अंध हम दोइ । बन मैं भजन कौन बिधि होइ ?
बिदुर कह्यौ, सेवा मैं करिहौं । सेवा करत नैंकु नहिं टरिहौं ।
अर्ध निसा तिनकौं लै गयौ । प्रात भए नृप बिस्मय भयौ ।
बूड़ि मुए, कै कहुँ उठि गए । तिनकैं सोच[2] नृपति बहु तए ।
उहाँ जाइ कुरुपति बल-जोग । दियौ छाँड़ि तन कौ संजोग ।
गंधारी सहगामिनि कियौ । बिदुर भक्त तीरथ-मग लियौ ।
तिहिं अंतर नारद तहँ आए । नृप कौं सब बृत्तांत सुनाए ।
नृप कैं मन उपज्यौ बैराग । भजौं सूर-प्रभु अब सब त्याग ॥२८४॥

हरि-बियोग, पांडव-राज्य-त्याग, उत्तर-गमन * राग सारंग

†हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
हरि-बियोग पांडव तजि राज । गए बन, भयौ परीच्छित-राज ।
कहौं सु कथा, सुनौ चित धारि । सूर कह्यौ भागवतऽनुसारि ॥२८५॥

अर्जुन का द्वारिका जाना और शोक-समाचार लाना ❀ राग बिलावल

राजा सौं अर्जुन सिर नाइ । कह्यौ, सुनौ बिनती महराइ ।
बहु दिन भए, हरि-सुधि नहिं पाई । आज्ञा होइ तौ देखौं जाई ।
यह कहि पारथ हरि-पुर गए । सुन्यौ, सकल जादव ह्वै भए ।

---

(१) जीवन न बिचारत—१, ३, १६ । अप जियत—६, ८ ।
(२) ताप— १, ३, ६, ८, १६ ।

* (ना) बिभास । (ना) बिलावल ।
(ना) रामकली ।
† यह पद(शा) में नहीं है ।

अर्जुन सुनत नैन जल धार । परयौ धरनि पर खाइ पछार ।
तब दारुक संदेस सुनायौ । कह्यो, हरि जू जो गीता गायौ ।
सो[1] सुरूप हिरदै महँ आन । रहियौ करत सदा मम[2]ध्यान ।
तब अर्जुन मन धीरज धारि । चले संग लै जे नर[3]-नारि ।
तहँ भिल्लनि[4] सौं भई लराई । लूटे सब, बिन स्याम-सहाई ।
अर्जुन बहुत दुखित तब भए । इहाँ अपसगुन होत नित नए ।
रोवैं बृषभ, तुरग अरु नाग । स्यार द्यौस, निसि बोलैं काग ।
कंपै भुव, बर्षा नहिँ होइ । भयौ सोच[5] नृप-चित यह जोइ ।
इहिँ अंतर अर्जुन फिरि आयौ । राजा कैँ चरननि सिर नायौ ।
राजा ताकौं कंठ लगाइ । कह्यौ, कुसल हैँ जादवराइ ?
बल, बसुदेव, कुसल सब लोइ ? अर्जुन यह सुनि दीन्हौ रोइ ।
राजा कह्यौ, कहा भयौ तोहिँ । तू क्यौं कहि न सुनावै मोहिँ ।
काहू असत्कार[6] तोहिँ कियौ । कै कहि दान न द्विज कौं दियौ ।
कै सरनागत कौं नहिँ राख्यौ । कै तुमसौं काहू कटु भाष्यौ ।
कै हरि जू भए अंतर्धान । मोसौं कहि तू प्रगट बखान ।
तब अर्जुन नैननि जल डारि । राजा सौं कह्यौ बचन उचारि ।
सूरज-प्रभु बैकुंठ सिधारे । जिन[7] हमरे सब काज सँवारे ॥२८६॥

---

① सो सरूप मम हिरदै—१, २, ३, ८, १८, १६। ② मन—१६। ③ बर—८। ④ कावनि—२, ३, ६, ८, १६, १८, १६। ⑤ सु (स) चेत नृपति—२, ३, ६। ⑥ तिरस्कार—२, ३, १६, १८। ⑦ तिहिँ (तिन) बिन को कारज मम सारे—२, ३, १८, १६।

* राग धनाश्री

हरि बिनु को पुरवै मो स्वारथ ?
मीड़त[1] हाथ, सीस धुनि ढोरत, रुदन करत नृप, पारथ ।
थाके हस्त, चरन-गति थाकी, अरु थाक्यौ पुरुषारथ ।
पाँच बान मोहिं संकर दीन्हे, तेऊ गए अकारथ ।
जाकैं संग सेत-बँध कीन्हौं, अरु जीत्यौं महभारथ ।
गोपी हरी सूर के प्रभु बिनु, रहत[2] प्रान किहिँ स्वारथ ! ॥२८७॥

* राग बिलावल

यह सुनि राजा रोइ पुकारे । भीमादिक रोए पुनि सारे ।
रोवत सुनि कुंती तहँ आई । कहौ, कुसल जादौ-जदुराई ?
अर्जुन कह्यौ, सबै लरि मुए । हरि-बिनु सब अनाथ हम हुए ।
कुंती प्रान तजे धरि ध्यान । जीवन-मरन उनहिं[3] भल जान ।
राज परीच्छित कौं नृप दीन्हौ । बज्रनाभ[4] मथुरापति कीन्हौ ।
द्रुपद-सुता समेत सब भाई । उत्तर दिसा गए हरि[5] ध्याई ।
जोग पंथ करि उन तनु तजे । सूर सबै तजि[6] हरि-पद भजे ॥२८८॥

गर्भ में परीक्षित की रक्षा तथा उनका जन्म — राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
हरि परीच्छितहिं गर्भ-मँझार । राखि लियौ निज कृपा-अधार ।

---

* (ना) धुरिया मलार । (का, ना) मलार ।

① मुंडहिँ धुनत सीस कर मारत—१, २ । मूड़ धुनत सिर सेा कर मारत—६,८ । ② घटत न (जु) प्रान पदारथ—१, ६, ८, १६ । रहत न प्रान पदारथ—२ । छुटत न प्रान पदारथ—१६ । (ना) भैरव ।

③ उन्है फल—३ । ④ बिचरि नाथ—३ । बृजनायक—८ । ⑤ हर्षाई—१ । ⑥ ते—१, ३, १६ ।

कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ । जो हरि भजे, रहै सुख पाइ ।
भारत जुद्ध बितत जब भयौ । दुरजोधन अकेल[1] रहि गयौ ।
अस्वत्थामा तापैं जाइ । ऐसी भाँति कह्यौ समुझाइ ।
हमसौं तुमसौं बाल-मिताई । हमसौं कछु न भई[2] मित्राई ।
अब जो आज्ञा मोकौं होइ । छाँड़ि बिलंब करौं मैं[3] सोइ ।
॥राज गए का दुख नहिं कोइ । ॥पांडव राज नहीं जो होइ ।
उनके मुएँ हिएँ सुख होइ । जौ करि सकौ, करौ अब सोइ ।
हरि सर्वज्ञ बात यह जानि । पांडु-सुतनि सौं कही बखानि ।
आज सरस्वति[4]-तट रहौ सोइ । पै यह बात न जानै कोइ ।
पांडव हरि की आज्ञा पाइ । तजि गृह, रहे सरस्वति जाइ ।
काहू सौं यह कहि न सुनाई । उहाँ जाइ सब रैनि बिताई ।
अस्वत्थामा निसि तहँ आए । द्रौपदि-सुत तहँ सोवत पाए ।
उनके सिर लै गयौ उतारि । कह्यौ, पांडवनि[5] आयौ मारि ।
बिन देखैं ताकौं सुख भयौ । देखे तैं दूनौ दुख ठयौ ।
ये बालक तैं बृथा सँहारे[6] । कहि[7], कुरुपति तजि प्रान सिधारे ।
अस्वत्थामा भय करि भग्यौ । इहाँ लोग सब सोवत जग्यौ ।
द्रौपदि देखि सुतनि दुख पायौ । अर्जुन सौं यह बचन सुनायौ ।
अस्वत्थाम[8] न जब लगि मारौ । तब लगि अन्न न मुख मैं डारौ ।
हरि-अर्जुन रथ पर चढि धाए । अस्वत्थामा पै चलि आए ।

---

① अकेल तहँ रह्यौ—१, १६ । घायल तहँ रह्यौ—३, ६, १६ । घायल तहँ भयौ—१८ । ② बनी सिवकाई—२ । ③ अब—१, २, ३, ८, १६ । || ये दो चरण (१६) में नहीं हैं । ④ सुरसरी—८ । ⑤ दुर-जोधन—१, ३, १६ । ⑥ जु मारे—१, १६ । ⑦ पुनि—१, २, ३, १६ । ⑧ अस्वत्थामा जब लगि मारौ—१ ।

अस्वत्थामा अस्त्र चलायौ । अर्जुन हूँ ब्रह्मास्त्र पठायौ ।
उन दोउनि सौं भई लराई । अर्जुन तब दोउ लिए बुलाई ।
अस्वत्थामा कौं गहि ल्याए । द्रौपदि सीस मूँड़ि मुकराए ।
याके मारैं हत्या होइ । मनि[1] लै छाँड़ौ सोभा खोइ ।
अस्वत्थामा बहुरि खिस्याइ । ब्रह्म-अस्त्र कौं दियौ चलाइ ।
गर्भ परीच्छित जारन गयौ । तब हरि ताहि जरन नहिं दयौ ।
रूप चतुर्भुज गर्भ-मँझारि । ताकौं तासौं लियौ उबारि ।
जन्म परीच्छित कौ जब भयौ । कह्यौ, चतुर्भुज कहूँ अब गयौ ?
पुनि जब हरि कौं देख्यौ जोइ । पाइ सँतोष सुखी भयौ सोइ ।
राजा जन्म-समय कौं देखि । मन मैं पायौ हर्ष बिसेषि ।
गर्भ-परीच्छित रच्छा करी । सोई कथा सकल बिस्तरी ।
श्रीभगवान कृपा जिहिं करै । सूर सो मारैं काके मरै ? ॥२८६॥

परीक्षित-कथा * राग सारंग

हरि, हरि-भक्तनि कौं सिर नाऊँ । हरि, हरि-भक्तनि के गुन गाऊँ ।
हरि, हरि-भक्त एक, नहिं दोइ । पै यह जानत बिरला कोइ ।
भक्त परीच्छित हरि कौ प्यारौ । गर्भ-मँझार हुतौ जब बारौ ।
ब्रह्म-अस्त्र तैं ताहि बचायौ । जुग-जुग बिरद यहै चलि आयौ ।
बहुरि राज ताकौ जब भयौ । मिस दिगविजय चहूँ दिसि गयौ ।
परजा सकल धर्म-रत देखी । ताकैं मन भयौ हर्ष बिसेखी ।
कुरुच्छेत्र मैं पुनि जब आयौ । गाइ, बृषभ तहँ दुःखित पायौ ।

---

① मूयौ जियत न देख्यौ कोइ—१, १६ ।

* (ना) विभास । (का, ना, कां, रा) बिलावल ।

तासु बृषभ कैँ पग त्रय नाहिँ । रोवति गाइ देखि करि ताहिँ ।
बृषभ धर्म, पृथ्वी सो गाइ । बृषभ कह्यौ तासौँ या भाइ ।
मेरैँ हेत दुखी तू होत । कै अधर्म तो ऊपर[1] होत ?
गो कह्यौ, हरि बैकुंठ सिधारे । सम-दम उनहीँ संग पधारे ।
दया, धर्म, संतोषहु गयौ । ज्ञान, छमादिक सब लय भयौ ।
जज्ञ, सराध न कोऊ करै । कोऊ धर्म न मन मैँ धरै ।
अरु तुमकौँ बिनु पाइनि देखि । मोहिँ होत है दुःख बिसेखि ।
सूद्रराज[2] इहिँ अंतर आयौ । बृषभ-गाइ कौँ पाइ चलायौ ।
ताहि परीच्छित खड्ग उठाइ । बहुरौ बचन कह्यौ या भाइ ।
तू को, कौन देस है तेरौ ? कै छल गह्यौ राज सब मेरौ ।
या बिधि नृपति परीच्छित कह्यौ । पै वासौँ उत्तर नहिँ लह्यौ ।
कह्यौ बृषभ सौँ, को दुखदाइ ? तासु नाम मोहिँ देहु बताइ ।
इंद्र होइ ताहू कौँ मारौँ । तुम्हरौ यह संताप निवारौँ ।
बृषभ कह्यौ तुम ऐसेहि राउ । पै मैँ लेउँ कौन कौ नाउँ ?
कोउ कहै हरि-इच्छा दुख होइ । द्वितिया दुखदायक नहिँ कोइ ।
कोउ कहै करम होइ दुख-दाता । काहू दुख नहिँ देत बिधाता ।
कोउ कहै सत्रु होइ दुखदाई । सो तौ मैँ न कीन्हि सत्राई ।
काकौ नाम बताऊँ तोकौँ । दुखदायक अदृष्ट[3] मम मोकौँ ।
कहियत[4] इतने दुख-दातार । तुमहीँ देखौ करौ बिचार ।
तब बिचार करि राजा-देख्यौ । सूद्र नृपति कलिजुग करि लेख्यौ ।

---

① तुम पर अच्छोत—१ । १, १६ । ③ अरिष्ट सम मोकौं—
② इहिँ अंतर राजा सूद्र आयो— १ । ④ लहत आपन—१, १६ ।

बृषभ धर्म अरु पृथ्वी गाइ । इनकौं यहै भयौ दुखदाइ ।
ताहि कह्या तू बड़ौ अधर्मी । तो समान नहिँ और कुकर्मी ।
छमा, दया, तप पग तैँ काट्या । छाँड़ि देस मम, यह कहि डाँट्यौ ।
तिन कह्यौ, मो मैँ एक भलाई । तुमसौं कहौं, सुनौ चित लाई ।
धर्म बिचारत मन मैँ होइ । मनसा पाप लगै नहिँ कोइ ।
राज तुम्हारौ है सब ठौर । तुम बिनु नृपति न द्वितिया और ।
जौन ठौर मोहिँ आज्ञा होइ । ताही ठौर रहौं मैँ जोइ ।
कही, हरि-बिमुखऽरु बेस्या जहाँ । सुरापान, बधिकनि गृह तहाँ ।
जूआ खेलत जहाँ जुआरी । ये पाँचौ हैँ ठौर तुम्हारी ।
पाँचौ होहिँ नृपति ये जहाँ । मोकौं ठौर बतावहु तहाँ ।
तब नृप ताकौं कनक बतायौ । कनक-मुकुट लखि सो लपटायौ ।
इक दिन राइ अखेटहिँ गयौ । ता बन माहिँ पियासौ भयौ ।
रिषि समीक कैँ आस्रम आयौ । रिषि हरि-पद सौं ध्यान लगायौ ।
राजा जल ता रिषि सौं माँग्यौ । ताकौ मन हरि-पद सौं लाग्यौ ।
राजा कौं उत्तर नहिँ दियौ । तब मन माहिँ क्रोध तिन कियौ ।
यह सब कलिजुग कौ परभाउ । जो नृप कैँ मन भयउ कुभाउ ।
रिषि की कपट-समाधि बिचारि । दियौ भुजंग मृतक गर डारि ।
रिषि समाधि महँ त्यौंही रह्यौ । स्रृंगी रिषि सौं लरिकनि कह्यौ ।
स्रृंगी रिषि तब कियौ बिचार । प्रजा-दोष करै नृपति गुहार ।
नृपति-दोष कहियै किहि जाइ । दियौ साप तिहिँ तच्छक खाइ ।
दै करि साप पिता पहँ आयौ । देख्यौ सर्प पिता-गर नायौ ।
रोवन लग्यौ मृतक सो जान । रुदन सुनत छूट्यौ रिषि-ध्यान ।

सुत सौं कह्यौ कहा भयौ तोहिं । क्यौं न सुनावत निज दुख मोहिं ?
स्रृंगी रिषि तब कहि समुझायौ । नृप भुजंग तव ग्रीवा नायौ ।
यह अपराध बड़ौ उन कीन्हौ । तच्छक डसन साप मैं दीन्हौ ।
रिषि कह्यौ बहुत बुरौ तैं कीन्हौ । जो यह साप नृपति कौं दीन्हौ ।
तुव सराप तैं मरिहै सोइ । यह अपराध मोहिं सब होइ ।
सुख सौं बसत राज उनकैं सब । दुख पैहैं सो सकल प्रजा अब ।
ताकी रच्छा हरि जू करी । हरी-अवज्ञा तुम अनुसरी ।
इत राजा मन मैं पछिताइ । मैं यह कियौ बडो अन्याइ ।
जाकैं हृदय बुद्धि यह आवै । ताकौ फल सो भलौ न पावै ।
रिषि सिष्यहिं भेज्यौ समुझाइ । नृप सौं कहि तू ऐसो जाइ ।
मम सुत साप दियौ या भाइ । सप्तम दिन तोहिं तच्छक खाइ ।
स्रृंगी यह कीन्हौ बिनु जानैं । होत कहा अब के पछितानैं ।
तातैं तुम उपाइ सो करौ । जातैं भव-सागर कौं तरौ ।
नृप सुनि, लाग्यौ करन बिचार । सप्तम दिन मरिबौ निरधार ।
जज्ञ-दान करि सुरपुर जैये । तहाँ जाइ कै सुख बहु पैये ।
बहुरि कह्यौ सुरपुर कछु नाहिं । पुन्य-छीन तिहिं[1] ठौर गिराहिं ।
तातैं सुत, कलत्र, सब त्याग । गहौं एक हरि-पद अनुराग ।
बहुरि कह्यौ, अबकौ कहा त्याग । खोयौ जन्म विषय-सुख-लाग ।
सूर न हरि-पद सौं चित लायौ । इत-उत देखत जनम गँवायौ ॥२६०॥

(१) भए बहुरि—२, २ ।

* राग धनाश्री

इत-उत देखत जनम गयौ ।
या झूठो माया कैं कारन[1], दुहुँ दृग अंध भयौ ।
जनम-कष्ट तैं[2] मातु दुखित भई, अति दुख प्रान सह्यौ ।
वै त्रिभुवनपति बिसरि गए तोहिं, सुमिरत क्यौं न रह्यौ ?
श्रीभागवत सुन्यौ नहिं कबहूँ, बीचहिं भटकि मरयौ[3] ।
सूरदास कहै, सब जग बूड़्यौ, जुग-जुग भक्त तरयौ[4] ॥२६१॥

* राग सारंग

† जनम सिरानौ अटकैं-अटकैं ।
राज-काज, सुत-बित की डोरी, बिनु बिबेक फिरयौ भटकैं ।
कठिन जेा[5] गाँठि परी माया की, तोरी जाति न झटकैं ।
ना हरि-भक्ति[6], न साधु-समागम, रह्यौ बीचही लटकैं ।
ज्यौं बहु कला काछि दिखरावै, लोभ न छूटत नट कैं ।
सूरदास सोभा क्यौं पावै, पिय-बिहीन धनि मटकैं ॥२६२॥

× राग सारंग

जनम सिरानौ ऐसैं-ऐसैं ।
कै घर-घर भरमत जदुपति बिनु, कै सोवत, कै बैसैं ।

---

* (ना) नट। (का) बिलावल।
① लालच—१, ३, १६। ② मैं पाय (पाप) दुखित भये—१, १६। ③ मुयौ—१, २, ३, १८, १६। ④ जियौ—१, २, ३, १८, १६।
(ना, का, ना, का) नट।
† यह पद (५) में नहीं है।
⑤ फँदा जु रच्यौ माया को तोरयौ—६। कुफद रच्यौ—१६।
⑥ भजन—१, १६, १६।
× (ना) बिलावल।

कै कहुँ खान-पान-रमनादिक, कै कहुँ बाद अनैसैं ।
कै कहुँ रंक, कहूँ[1] ईस्वरता, नट-बाजीगर जैसैं ।
चेत्यौ नाहिँ, गयौ टरि औसर, मीन बिना जल जैसैं ।
यह गति भई सूर की ऐसी, स्याम मिलैं धौं कैसैं ॥२६३॥

* राग देवगंधार

बिरथा जन्म लियौ संसार ।
करी[2] कबहुँ न भक्ति हरि की, मारी जननी भार ।
जज्ञ, जप, तप नाहिँ कीन्ह्यौ, अल्प मति बिस्तार ।
प्रगट[3] प्रभु नहिँ दूरि हैं, तू, देखि नैन पसार ।
प्रबल माया[4] ठग्यौ सब जग, जनम जूआ हार ।
सूर हरि कौ सुजस गावौ, जाहि[5] मिटि भव-भार ॥२६४॥

* राग सोरठ

काया हरि कैं काम न आई ।
भाव-भक्ति जहँ हरि-जस सुनियत, तहाँ जात अलसाई ।
लोभातुर ह्वै काम मनोरथ, तहाँ सुनत उठि धाई ।
चरन-कमल सुंदर[6] जहँ हरि के, क्यौंहुँ न जाति[7] नवाई ।
जब लगि स्याम-अंग नहिँ परसत, अंधे ज्यौं भरमाई ।
सूरदास भगवंत-भजन तजि, बिषय परम बिष खाई ॥२६५॥

---

① कै ईस्वर पदवी—२, ३, १६, १८ ।

* (का, ना, कां, रा) केदार ।

② करी न कबहूँ—१, २ ।

③ प्रगट ब्रह्म दुरयौ (दूरौ) नहीं—१, २ ३, १६ । ④ अविद्या—१, २, ३ ६, १६, १८ । तृष्ना - १६ । ⑤ जिहिँ मिटे—३ ।

* (ना) कान्हरा ।

⑥ मंदिर जहँ हरि कौ—२, ३ । ⑦ जाति लिवाई—२ । सीस—८ ।

राग धनाश्री

† सबै दिन गए विषय के हेत ।
तीनौं पन ऐसैं हीं खोए[1], केस भए सिर सेत ।
आँखिनि अंध, स्रवन नहिं सुनियत, थाके चरन समेत ।
गंगा-जल तजि पियत कूप-जल, हरि तजि पूजत प्रेत ।
॥मन-बच-क्रम जौ भजै स्याम कौं, चारि पदारथ देत ।
॥ऐसो प्रभू छाँड़ि क्यौं भटकै, अजहूँ चेति अचेत ।
राम नाम बिनु क्यौं छूटोगे, चंद गहैं ज्यौं केत ।
सूरदास कछु खरच न लागत, राम नाम मुख लेत ॥२६६॥

* राग सारंग

जौ तू राम-नाम-धन[2] धरतौ ।
अबकौ जन्म, आगिलौ तेरौ, दोऊ जन्म सुधरतौ ।
¶जम कौ त्रास सबै मिटि जातौ, भक्त नाम तेरौ परतौ ।
¶तंदुल-घिरत समर्पि स्याम कौं, संत-परोसौ करतौ ।
होतौ नफा साधु की संगति, मूल गाँठि नहिं[3] टरतौ ।
सूरदास बैकुंठ-पैंठ मैं, कोउ न फैंट पकरतौ ॥२६७॥

---

† यह पद (शा) में नहीं है ।

|| ये दो चरण (बे, ना, स, को, रा, श्या) में नहीं हैं ।

¶ ये दोनों चरण (ना, स, रा) में नहीं है ।

① बितए—६, ८ । बीते —१६ ।

* (ना) बिलावल ।

② चित—६, १६ ।

③ तें न—१६ ।

* राग देवगंधार

† सबनि सनेहौ छाँड़ि दयौ ।
हा जदुनाथ ! जरा तन ग्रास्यौ, प्रतिभौ[1] उतरि गयौ ।
सोइ तिथि-बार-नछत्र-लगन-ग्रह, सोइ जिहिँ ठाट ठयौ ।
तिन अंकनि कोउ फिरि नहिँ बाँचत, गत[2] स्वारथ समयौ ।
सोइ धन-धाम, नाम सोई, कुल सोई जिहिँ बिढ़यौ ।
अब सबही कौ बदन स्वान लौं, चितवत दूरि भयौ ।
बरष दिवस[3] करि होत पुरातन, फिरि-फिरि लिखत नयौ ।
निज कृति-दोष बिचारि सूर प्रभु, तुम्हरी सरन गयौ ॥२६८॥

* राग मलार

‡ द्वै मैं एकौ तौ न भई ।
ना हरि भज्यौ, न गृह सुख पायौ, वृथा[4] बिहाइ गई ।
ठानी हुती और कछु मन मैं, औरै आनि ठई ।
अबिगत-गति कछु समुझि परत नहिँ, जो कछु करत दई ।
सुत-सनेहि-तिय सकल कुटुँब मिलि, निसि-दिन होत खई ।
पद-नख-चंद चकोर बिमुख मन, खात अँगार मई ।
बिषय-बिकार-दवानल उपजी, मोह-बयारि लई[5] ।
भ्रमत-भ्रमत बहुतै दुख पायौ, अजहुँ न टेव गई ।

---

* (क) कल्यान । (का) कान्हरा ।

† यह पद (ना, शा, क, कों, पू) में है । इसका पाठ पाचों प्रतियों में बड़ा अस्तव्यस्त है । उन्हें मिलाकर शुद्ध पाठ रखने की चेष्टा की गई है ।

(१) प्रति ज्यौं—२ । व्रत जो—५ । प्रतिमो—१४ । पति ज्यौ—१६ । (२) जगत स्वार्थ—१७ । (३) बरष प्रति—२ । बरष तन—१७ ।

(ना) देवगिरि ।

‡ यह पद (शा) में नहीं है ।

(४) बीच—२, ३, १७ ।

|| ये चारों चरण (ना, स, रा) में नहीं हैं ।

(५) बई—१६ ।

होत कहा अबके पछिताऐं, बहुत[1] बेर बितई।
सूरदास सेये न कृपानिधि, जो सुख सकल मई ॥२९९॥

* राग सारग

यह सब मेरीयै[2] आइ कुमति।
अपनैं ही अभिमान-दोष दुख पावत हौं मैं अति।
जैसें केहरि उझकि कूप-जल, देखत अपनी प्रति।
कूदि पर्‌यौ, कछु मरम न जान्यौ, भई आइ सोइ गति।
ज्यौं गज फटिक सिला मैं देखत दसननि डारत हति।
जौ तू सूर सुखहिं चाहत है, तौ करि[3] बिषय-बिरति ॥३००॥

* राग केदारौ

झूठेही[4] लगि जनम गँवायौ।
भूल्यौ[5] कहा स्वप्न के सुख मैं[6], हरि सौं चित न लगायौ।
कबहुँक बैठ्यौ रहसि-रहसि कै, ढोटा गोद खिलायौ।
कबहुँक फूलि सभा मैं बैठ्यौ, मूँछनि ताव दिवायौ।
टेढी चाल, पाग सिर टेढो, टेढ़ैं-टेढ़ैं धायौ।
सूरदास प्रभु क्यौं नहिं चेतत[7], जब लगि काल न आयौ ॥३०१॥

---

① होनी सिर बितई—१। होनी सिर जु छई—१६।
* (ना) यमन। (क) धनाश्री।
② मेरे सिर आई—२। मेरे अइ कुमति ३। मेरी आइ—८।
③ क्यौं विषय परत—१,८,१६।
* (ना) बिहागरा। (रा) धनाश्री।
④ झूठहि—१, ३। ⑤ भयौ कहा सपने—२, ६, ८। ⑥ को—१, ३, ६, ८, १६। ⑦ सेवत—८।

* राग केदारौ

जग मैं जीवत ही कौ नातौ ।
मन बिछुरैं तन छार होइगौ, कोउ न बात[1] पुछातौ ।
मैं-मेरी कबहूँ नहिं कीजै, कीजै पंच-सुहातौ ।
बिषयासक्त रहत निसि-बासर, सुख सियरौ, दुख तातौ ।
साँच-झूठ करि माया जोरी, आपुन रूखौ खातौ ।
सूरदास कछु[2] थिर न[3] रहैंगौ, जो आयौ सो जातौ ॥३०२॥

* राग धनाश्री

कहा लाइ तैं[4] हरि सौं तोरी ?
हरि सौं तोरि कौन सौं जोरी ?
सिर पर धरि न चलैगौ कोऊ, जो[5] जतननि करि माया जोरी ।
राज-पाट सिंहासन बैठौ, नील पदुम हूँ सौं कहै थोरी ।
मैं-मेरी करि जनम गँवावत, जब लगि नाहिं परति जम-डोरी ।
धन-जोबन-अभिमान अल्प जल, काहे कूर[6] आपनी बोरी ।
हस्ती देखि बहुत मन-गर्वित[7], ता मूरख की मति है थोरी ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, चले खेलि फागुन की[8] होरी ॥३०३॥

× राग धनाश्री

बिचारत ही लागे दिन जान ।
सजल देह, कागद तैं कोमल, किहिं बिधि राखै प्रान ?

---

* (ना) भैरव । (का, ना, का, रा) कान्हरा ।
① देखि बुझातो—२ । बात बुझातो—३ । ② कोऊ थिर बाहीं—१६ । ③ नहिं रहई—१ । न रहाई—३ ।
* (ना) विभास ।
④ मैं—२, १६, १८ । ⑤ अनेक जतन—१, २, १६ । यह पंक्ति (ना, स, रा) में नहीं है ।
⑥ बृड—६ । ⑦ हर्षत—२, १६ । ⑧ कैसी—२ । ज्यौं—६, ८ ।
× (ना, का) सारंग ।

जोग न जज्ञ, ध्यान नहिँ सेवा, संत-संग नहिँ ज्ञान।
जिह्वा-स्वाद, इंद्रियनि-कारन, आयु घटति दिन मान।
और उपाइ नहीँ रे बौरे, सुनि तू यह दै कान।
सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारँगपान ॥३०४॥

* राग धनाश्री

† अब मैँ जानी, देह बुढ़ानी।
सीस, पाउँ, कर[1] कह्यौ न मानत, तन की दसा सिरानी।
आन कहत, आनै कहि आवत, नैन-नाक बहै पानी।
मिटि गइ चमक-दमक अँग-अँग की, मति[2] अरु दृष्टि हिरानी।
नाहिँ रही कछु सुधि तन-मन की, भई जु बात बिरानी[3]।
सूरदास अब होत बिगूचनि, भजि लै सारँगपानी ॥३०५॥

मन-प्रबोध

* राग देवगंधार

‡ रे मन, सुमिरि हरि हरि हरि!
सत जज्ञ नाहिँन नाम सम, परतीति करि करि करि।
हरि-नाम हरिनाकुस बिसार्‌यौ, उठ्यौ बरि बरि बरि।
प्रह्लाद-हित जिहिँ असुर मार्‌यौ, ताहि डरि डरि डरि।

---

* (ना) बिलावल। (का, ना, रा) जैतश्री। (का) सारंग।

† यह पद (शा) में नहीँ है।

(१) धर—१, २, ६, ८, १८, १९। (२) दृष्टि रु मति जु—१, २, ६, ८, १६।

|| इस चरण के पहले (वे, का, ना, श्या) में ये दो चरण अधिक हैँ—
नारी गारी बिनु नहिँ बोलै
पूत करै कलकानी।
घर मैँ आदर कादर कैसौ
खीझत रैनि बिहानी ॥

(३) पुरानी—१, ६, १६।
(ना) सोरठ। (का, ना, रा) केदारा।

‡ यह पद (शा) में नहीँ है।

गज-गीध-गनिका-ब्याध के अघ गए गरि गरि गरि।
रस-चरन-अंबुज बुद्धि-भाजन, लेहि भरि भरि भरि।
द्रौपदी के लाज[1] कारन, दौरि परि परि परि।
पांडु-सुत के बिघन जेते, गए टरि टरि टरि।
करन, दुरजोधन, दुसासन, सकुनि, अरि अरि अरि।
अजामिल[2] सुत-नाम लीन्हैं, गए तरि तरि तरि।
चारि फल के दानि हैं प्रभु, रहे फरि फरि फरि।
सूर श्री गोपाल हिरदै[3] राखि धरि धरि धरि ॥३०६॥

* राग केदारौ

करि मन, नंद-नंदन-ध्यान।
सेव चरन-सरोज सीतल, तजि बिषय-रस-पान।
जानु-जंघ त्रिभंग सुंदर, कलित कंचन-दंड।
काछनी कटि पीतपट-दुति, कमल-केसर-खंड।
मनौ[4] मधुर मराल-छौना, किंकिनी-कल-राव।
नाभि-ह्रद, रोमावली-अलि, चले सहज सुभाव।
कंठ मुक्तामाल, मलयज, उर बनी बनमाल।
सुरसरी कैं तीर मानौ लता स्याम तमाल।
बाहु-पानि सरोज-पल्लव, धरे मृदु मुख बेनु।
अति बिराजत बदन-बिधु पर सुरभि-रंजित[5]-रेनु।

इस चरण के पश्चात् शेष चरणों में दो मात्राएँ कम हैं।

① काज आछे दाउ—२।

② सुत हित अजामिल—१, २, ३, ६, ८, १४, १६। ③ के गुन हृदय—१, ८, १४, १६।

* (ना) सोरठ।

④ जनु (मनु) मराल प्रवाल—१, २, ६, ८, १८।

⑤ मंडित—१, २, ३, ६, ८, १८, १६।

अधर, दसन, कपोल, नासा, परम सुंदर नैन।
चलित कुंडल गंड-मंडल, मनहुँ निर्तत मैन।
कुटिल भ्रू[1] पर तिलक रेखा, सीस सिखिनि[2]-सिखंड।
मनु मदन धनु-सर सँधाने, देखि घन-कोदंड।
सूर श्रीगोपाल की छबि, दृष्टि भरि-भरि लेहु।
प्रानपति की निरखि सोभा, पलक परन न देहु ॥३०७॥

* राग केदारौ

भजि मन, नंद[3]-नंदन-चरन।
परम पंकज अति मनोहर, सकल सुख के करन।
सनक-संकर ध्यान[4] धारत, निगम-आगम[5] बरन।
सेस, सारद, रिषय नारद, संत चिंतत सरन।
पद-पराग-प्रताप-दुर्लभ, रमा कौ[6] हित-करन।
परसि गंगा भई पावन, तिहूँ पुर धर[7]-धरन।
चित्त चितन करत जग[8]-अघ हरत, तारन-तरन।
गए तरि लै नाम केते, पतित हरि-पुर-घरन।
जासु पद-रज-परस गौतम-नारि-गति[9]-उद्धरन।
जासु महिमा प्रगटि केवट, धोइ पग सिर धरन।
कृष्न-पद-मकरंद पावन, और नहिँ सरबरन।
सूर भजि चरनारबिंदनि, मिटै जीवन-मरन ॥३०८॥

---

① कच भ्रू—३, ६। ② सिखी—१, २, ३, ६, १६। मुकुट—८।
* (ना) सोरठ। (क) बिहागरा।
† यह पद(शा)में नहीं है।
③ चरन संकट हरन—१४, १६। ④ ध्यान ध्यावत—१, २, ३, १४, १८, १६। योगि ध्यावत—८। ⑤ असरन सरन—६, १४। अबरन बरन—१, २, ३, १६। ⑥ लोहित—१, ३, १६। बोहित—२, १४। पोहित—६, ८। मोहित—१६। ⑦ दुरि ढरन—६। दुरि टरन—८। ⑧ कृत—२, १८। ⑨ गज—८।
|| यह चरण (रा) में नहीं है।

राग केदारौ

† रे मन, समुझि सोचि-बिचारि ।
भक्ति बिनु भगवंत दुर्लभ, कहत निगम पुकारि ।
धारि पासा साधु-संगति, फेरि रसना-सारि ।
दाउँ अबकैं परयौ पूरौ, कुमति[1] पिछली हारि ।
राखि सतरह, सुनि अठारह, चोर पाँचौ मारि ।
डारि दै तू तीनि काने, चतुर चौक निहारि ।
काम क्रोधऽरु[2] लोभ मोह्यौ, ठग्यौ[3] नागरि नारि ।
सूर श्री गोबिंद-भजन बिनु, चले दोउ कर झारि ॥३०६॥

* राग सारंग

‡ होउ मन, राम-नाम कौ गाहक ।
चौरासी लख जीव[4]-जोनि मैं भटकत फिरत अनाहक ।
भक्तनि-हाट बैठि अस्थिर ह्वै, हरि नग[5] निर्मल लेहि ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह तू, सकल दलालो[6] देहि ।
करि हियाव, यह सौंज लादि कै, हरि कैं पुर लै जाहि ।
घाट-बाट कहुँ अटक होइ नहिं, सब कोउ देहि निबाहि ।
और बनिज मैं नाहीं[7] लाहा, होति मूल मैं हानि ।
सूर स्याम कौ सौदा साँचौ, कह्यौ हमारौ मानि ॥३१०॥

---

† यह पद (शा) में नहीं है।

① मिटै—२। ② मद—१, २, ३। जो—६, ८। ③ पग्यौ—१, ३, ६, ८, १६। निरखि—२।

* (ना) कल्यान। (रा) केदारा।

‡ यह पद (शा) में नहीं है।

④ जिया—१, २, ६, ८, १६। ⑤ गुन—३। ⑥ दलालन—६, ८। ⑦ नाहिं लाहु है—८।

* राग केदारौ

† रे मन, राम सौं करि हेत ।
हरि-भजन की बारि करि लै, उबरै तेरौ खेत ।
मन सुवा, तन पींजरा, तिहिं[1] माँझ राखे चेत ।
काल फिरत बिलार-तनु धरि, अब धरौ तिहिं लेत ।
सकल बिषय-बिकार तजि, तू[2] उतरि सायर-सेत ।
सूर भजि गोबिद के[3] गुन, गुर बताए देत ॥ ३११ ॥

* राग कान्हरौ

‡ मन-बच-क्रम मन, गोबिंद सुधि करि ।
सुचि-रुचि सहज समाधि साधि सठ, दीनबंधु करुनामय उर धरि ।
मिथ्या बाद-बिवाद छाँड़ि दै, काम-क्रोध-मद-लोभहिं परिहरि ।
चरन-प्रताप आनि उर अंतर, और सकल सुख या सुख तरहरि ।
बेदनि कह्यौ, सुमृतिहूँ भाष्यौ, पावन-पतित नाम निज नरहरि ।
जाकौ सुजस सुनत अरु गावत, जैहै पाप-बृंद भाजि भरहरि ।
परम उदार, स्याम-घन-सुंदर, सुखदायक, संतत हितकर हरि ।
दीनदयाल, गोपाल, गोपपति, गावत गुन आवत ढिग ढरहरि ।
अति भयभीत निरखि भवसागर, घन ज्यौं घेरि रह्यौ घट घरहरि ।
जब जम-जाल-पसार परैगौ[4], हरि बिनु कौन करैगौ धरहरि ?
अजहूँ चेति मूढ़, चहुँ दिसि तैं उपजी[5] काल-अगिनि झर[6] झरहरि ।
सूर काल-बल-ब्याल ग्रसत है, श्रीपति-सरन परत किन फरहरि ?॥ ३१२॥

---

* (ना) सोरठ । (का) रामकली ।
† यह पद (शा) में नहीं है ।
① रे बँध्यौ रहत निकेत— २, ३ । ② तौ तरै सायर— ६, ८ । ③ कौ यौ—२, ३ । (क) नट ।
‡ यह पद (शा) में नहीं है और (क) में दो स्थानों पर है ।
④ करैगौ—२ । ⑤ पसरी —६, ८ । काल अगिनि झुकि परिहै झरहरि—१६ । ⑥ झुकि— २, ३ ।

* राग कान्हरौ

तिहारौ कृष्न कहत कह जात ?
बिछुरैं मिलन बहुरि कब ह्वैहै, ज्यौं तरवर के पात !
सीत-बात[1]-कफ कंठ बिरोधै, रसना टूटै बात ।
प्रान लए जम जात, मूढ-मति देखत जननी-तात ।
छन इक माहिँ कोटि जुग बीतत, नर की केतिक बात ?
यह जग-प्रीति सुवा-सेमर ज्यौं, चाखत ही उड़ि जात ।
‖ जम कैं फंद परचौ नहिँ जब लगि, चरननि किन लपटात?
कहत सूर बिरथा यह देही, एतौ[2] कत इतरात ॥३१३॥

राग केदारौ

† हरि की सरन महँ तू आउ ।
काम-क्रोध-बिषाद-तृष्ना, सकल जारि बहाउ ।
काम कैं बस जो परै जमपुरी ताकौं त्रास ।
ताहि निसि-दिन जपत रहि जो सकल-जीव-निवास ।
कहत यह बिधि भली तोसौं, जौ तू छाँड़ै देहि ।
सूर स्याम सहाइ हैं तौ आठहूँ सिधि लेहि ॥३१४॥

* राग कान्हरौ

‡ दिन दस लेहि गोबिंद गाइ ।
छिन न चितत चरन-अंबुज, बादि जीवन जाइ ।

---

* (ना) धनाश्री । (का, ना, क, कां, रा) केदारा ।

① पित्त—१, १६ ।

‖ (स, कां) में इस चरण के बदले यह है—
काल अहेरी फिरत सीस पर
मृग ज्यौं नाद भुलात ।

② इतौ कहा—१, १६ । अतरगति—२, १८ । अंतर कत—३ ।

† यह पद केवल (शा) में है

* (ना, का, ना, क, कां, रा) केदारा ।

‡ यह पद (शा) में नहीं है ।

दूरि जब लौं जरा रोगऽरु चलति इंद्रो भाइ।
आपुनौ कल्यान करि लै, मानुषी तन पाइ।
रूप जोबन सकल मिथ्या, देखि जनि गरबाइ।
ऐसेहीं अभिमान-आलस, काल ग्रसिहै आइ।
कूप खनि कत जाइ रे नर, जरत भवन बुझाइ।
सूर हरि कौ भजन करि लै, जनम-मरन नसाइ ॥३१५॥

राग केदारौ

† दिन द्वै लेहु गोबिंद गाइ।
मोह-माया-लोभ लागे[1], काल बेरै[2] आइ।
बारि[3] मैं ज्यौं उठत बुदबुद, लागि बाइ बिलाइ।
यहै तन-गति जनम-झूठौ, स्वान-काग न खाइ।
कर्म-कागद बाँचि देखौ, जौ[4] न मन पतियाइ।
अखिल लोकनि भटकि आयौ, लिख्यौ मेटि न जाइ।
सुरति के दस द्वार रूँधे, जरा बेरचौ आइ।
सूर हरि की[5] भक्ति कीन्हैं, जन्म-पातक जाइ ॥३१६॥

* राग धनाश्री

‡ मन, तोसौं किती कही समुझाइ।
नंद-नँदन के चरन-कमल भजि, तजि पाखँड-चतुराइ।

---

† यह पद केवल (शा, क, का) में है।
① लालो—५। ② दौरयो—१४। ③ पानि—५। नीर—१४। ④ जौ न तन बनि आइ—५। ⑤ कौ भजन कीजै (की-हे)—१४, १६।
* (ना) नट नारायणी।
‡ यह पद (शा) में नहीं है।

सुख-संपति, दारा-सुत, हय-गय, झूठ सबै[1] समुदाइ ।
छनभंगुर[2] यह सबै स्याम बिनु, अंत नाहिँ सँग जाइ ।
जनमत-मरत बहुत जुग बीते, अजहूँ लाज न आइ ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जैहै जनम गँवाइ ॥३१७॥

* राग मलार

† अब मन, मानि[3] धौं राम दुहाई ।
मन-बच-क्रम हरि-नाम हृदय धरि, ज्यौं गुरु बेद बताई ।
महा कष्ट दस मास गर्भ बसि[4], अधोमुख-सीस रहाई ।
इतनी[5] कठिन सही[6] तैं केतिक, अजहुँ न तू समुझाई !
मिटि गए राग[7]-द्वेष सब तिनके, जिन हरि प्रीति लगाई ।
सूरदास प्रभु[8]-नाम की महिमा, पतित[9] परम गति पाई ॥३१८॥

* राग आसावरी

‡ बौरे मन, रहन अटल करि जान्यौ[10] ।
धन-दारा-सुत-बंधु-कुटुंब-कुल, निरखि निरखि बौरान्यौ[11] ।
जीवन जन्म अल्प सपनौ सो, समुझि देखि मन माहीं ।
बादर-छाहँ, धूम-धौराहर, जैसें थिर न रहाहीं ।
जब लगि डोलत, बोलत, चितवत[12], धन-दारा हैं तेरे ।
निकसत हंस, प्रेत कहि तजिहैं, कोउ न आवै नेरे ।

---

① स्वप्न—१४ । ② छनही के ये—८ ।

* (ना) अड़ाना । (क) सोरठ ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

③ मानहुँ—२ । दैहौ—६, ८ । ④ में ६, ८ । ⑤ अटकनि कटिन सहनि तैं निकस्यौ—६, ८ । ⑥ सही तू निकस्यौ—१, १६ । ⑦ रोग दोष—३ । ⑧ हरि—३, ६, ८ । ⑨ पतितनि को गति दाई—८ ।

(ना) सावत सारंग । (का) धनाश्री ।

‡ यह पद (शा) में नहीं है ।

⑩ जाना—१,२,३,६,८,१८ ११ । ⑪ बौराना—१,२, ३, ६, ८, १८, १६ । ⑫ तब लगि—३ ।

मूरख, मुग्ध[1], अजान, मूढमति, नाहीं कोऊ तेरौ ।
जो कोऊ तेरौ हितकारी, सो कहै काढ़ि सबेरौ ।
घरी[2] इक सजन-कुटुंब मिलि बैठैं, रुदन बिलाप कराहीं ।
जैसें काग काग के मूऐं, काँ-काँ करि उड़ि जाहीं ।
कृमि-पावक तेरौ तन भखिहै, समुझि देखि मन माहीं ।
दीन-दयाल सूर हरि[3] भजि लै, यह औसर फिरि नाहीं ॥३१६॥

* राग गौरी

† ते[4] दिन बिसरि गए इहाँ आए ।
अति उन्मत्त मोह-मद छाक्यौ, फिरत केस बगराए ।
॥ जिन दिवसनि तैं जननि-जठर मैं रहत बहुत दुख पाए।
॥ अति संकट मैं भरत भँटा लौं, मल मैं मूँड गड़ाए।
॥ बुधि-बिवेक-बल-हीन, छीन-तन, सबही[5] हाथ पराए ।
तब[6] धौं कौन साथ रहि[7] तेरैं, खान-पान पहुँचाए ।
॥ तिहिं न करत चित अधम अजहुँ लौं, जीवत जाके ज्याए।
सूर सो मृग ज्यौं बान सहत नित[8] बिषय ब्याध के गाए ॥३२०॥

* राग धनाश्री

† रे मन, निपट निलज अनीति ।
जियत की कहि को चलावै, मरत बिषयनि[9] प्रीति ।

---

① सठ—८। ② घरी एक सजन कुटुंब मिलि बैठे रुदन कराहीं—१। ③ भजि लै अब—६, ८।

* (ना) भोपाली। (क) टोड़ी। (का) कान्हरा।

† यह पद (शा) में नहीं है।

④ वे—६, ८। ⑤ हित—८। ⑥ कहि—६, १६। ⑦ हो—१, २, ३, ६, १६।

॥ ये चारों चरण (ना, स, रा) में नहीं हैं।

⑧ सिर—१६।

(ना) देवगधार।

‡ यह पद (शा) में नहीं है।

⑨ बिषया—१, ३, १६।

स्वान कुब्ज, कुपंगु[1], कानौ, स्रवन-पुच्छ[2]-बिहीन।
भग्न भाजन कंठ, कृमि सिर, कामिनी-आधीन।
निकट आयुध बधिक धारे, करत तीच्छन धार।
अजा-नायक मगन क्रीड़त, चरत[3] बारंबार।
देह छिन-छिन होति छीनी, दृष्टि देखत लोग।
सूर स्वामी सौं बिमुख ह्वै, सती[4] कैसे भोग? ॥३२१॥

* राग गौरी

† बौरे मन, समुझि-समुझि कछु चेत।
इतनौ[5] जन्म अकारथ खोयौ, स्याम चिकुर भए सेत।
तब लगि सेवा करि निस्चय सौं, जब लगि हरियर[6] खेत।
सूरजदास[7] भरम जनि भूलौ, करि बिधना सौं हेत ॥३२२॥

* राग धनाश्री

‡ रे सठ, बिन गोबिँद सुख नाहीँ।
तेरौ दुःख दूरि करिबे कौं, रिधि-सिधि फिरि-फिरि जाहीँ।
सिव, बिरंचि, सनकादिक मुनिजन इनकी[8] गति अवगाहीँ।
जगत-पिता जगदीस-सरन बिनु, सुख तीनौं पुर नाहीँ।
और सकल मैँ देखे-ढूँढे[9], बादर[10] की सी छाहीँ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, दुख कबहूँ नहिँ जाहीँ ॥३२३॥

---

① कुखंग—२। ② पुच्छा-हीन—१, २, ३, ८, १६। ③ चडत—१, १६। मुदित—६। ④ सुपन—२।

* (का, ना, इ) सारंग।

† यह पद (ना, स, ल) मेँ नहीँ है।

⑤ अपनौ—६, ८। ⑥ हरवा—१, १६। ⑦ सूरदास भरमौ—६, ८।

‡ (ना) अहीरी। (का, ना, इ, कौ, रा) कान्हरा।

† यह पद (शा) मेँ नहीँ है।

⑧ उनहुँ कि—६, ८। ⑨ कूठे—१। ⑩ तिरन अगिनि सी छाहीँ—६, ८।

* राग कान्हरौ

† मन, तोसौं कोटिक बार कही ।
समुझि न चरन[1] गहे गोबिंद के, उर अघ-सूल सही ।
सुमिरन, ध्यान, कथा हरिजू की, यह एकौ न रही[2] ।
लोभी, लंपट, बिषयिनि सौं हित, यौं तेरी निबही ।
छाँडि कनक-मनि रतन अमोलक, काँच[3] की किरच गही ।
ऐसो तू है चतुर बिवेकी, पय तजि पियत मही ।
ब्रह्मादिक, रुद्रादिक, रवि-ससि, देखे सुर सबही ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, सुख तिहुँ लोक नहीं ॥३२४॥

* राग परज

‡ मन[4] रे, माधव सौं करि प्रीति ।
काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह तू, छाँड़ि सबै बिपरीति ।
भौंरा भोगी बन भ्रमै, (रे) मोद[5] न मानै ताप[6] ।
सब[7] कुसुमनि मिलि रस करै, (पै) कमल बँधावै आप ।
सुनि परमिति पिय प्रेम की, (रे) चातक चितवन[8] पारि ।
घन-आसा सब दुख सहै, (पै) अनत न जाँचै बारि ।
देखौ करनी कमल की, (रे) कीन्हौं रवि[9] सौं हेत ।
प्रान तज्यौ, प्रेम न तज्यौ, (रे) सूख्यौ सलिल समेत ।

---

* (ना) सूहो । (का) धनाश्री ।

† यह पद (शा) में नही है ।

① सरन गयौ—१४ । ② भई—१, २, ६, १६ । गही—१४ । ③ गुंज की गरज गही—६, ८ ।

(ना) सारग । (क) बिलावल । (का) सोरठ ।

‡ यह पद (शा) में नहीं है ।

④ मना रे तू—२, ३, १८ । ⑤ मूढ—२, ३ । मोहु—१४ । ⑥ माप—३, १४ । पाप—८ । ⑦ सब सुमननि नीरस करै रे—१४ । ⑧ चेत बिचारि—६, ८ । ⑨ जल—१, ६, ८, १६ ।

दीपक पीर न जानई, (रे) पावक परत पतंग।
तनु तौ तिहिँ ज्वाला जरचौ, (पै) चित न भयौ रस-भंग।
मीन बियोग न सहि सकै, (रे) नीर न पूछै बात।
देखि जु तू ताकी गतिहिँ, (रे) रति न घटै तन जात।
परनि[1] परेवा प्रेम की, (रे) चित लै चढत अकास।
तहँ चढि तीय[2] जो देखई, (रे) भू पर[3] परत निसास।
सुमिरि सनेह कुरंग कौ, (रे) स्रवननि राच्यौ राग।
धरि न सकत पग पछमनौ, (रे) सर सनमुख उर लाग।
देखि जरनि, जड़, नारि, की, (रे) जरति प्रेत[4] के संग।
चिता न चित फीकौ भयौ, (रे) रची[5] जु पिय कैँ रंग।
लोक-बेद बरजत सबै, (रे) देखत नैननि त्रास।
चोर न चित चोरी तजै, (रे) सरबस सहै बिनास।
सब रस कौ रस प्रेम है, (रे) बिषयी खेलै सार।
तन-मन-धन-जोबन खसै, (रे) तऊ न मानै हार।
तैँ जो रतन पायौ भलौ, (रे) जान्यौ साधि[6] न साज।
प्रेम-कथा अनुदिन सुनै, (रे) तऊ न उपजै लाज।
सदा सँघाती आपनौ, (रे) जिय कौ जीवन-प्रान।
सु[7] तैँ बिसारचौ सहज हीँ, (रे) हरि, ईस्वर, भगवान।
बेद, पुरान, सुमृति सबै, (रे) सुर-नर सेवत जाहि।
महा मूढ अज्ञान मति, (रे) क्यौँ न सँभारत ताहि ?

---

① प्रीति परेवा की गनौ चाहन चढ़त (चाहत चढ़न) अकास १, १६। ② ताहि—२, ३, १४। तेहि (तिहि)—६, ८। ③ परत छाडि उर स्वास—१, १६। ④ प्रीति—२, ३। प्रेम—८। ⑤ राची—२, ३, ८, १४। ⑥ साधु समाज—१, १६। ⑦ सो तू बिसरयौ—१। तैँ बिसरायौ—८।

खग-मृग-मीन-पतंग लौं, (रे) मैं सोधे सब ठौर।
जल-थल-जीव जिते तिते, (रे) कहौं कहाँ लगि और।
प्रभु पूरन पावन सखा, (रे) प्राननि हूँ कौ नाथ।
परम दयालु कृपालु है, (रे) जीवन जाकैं हाथ।
गर्भ-बास अति त्रास मैं, (रे) जहाँ न एकौ अंग।
सुनि सठ, तेरौ प्रानपति, (रे) तहँउ न छाँड़्यौ संग!
दिन-राती[1] पोषत रह्यौ, (रे) जैसें[2] चोली पान।
वा दुख तैं तोहि काढ़ि कै, (रे) ले दीनौ पय-पान।
जिन जड तैं चेतन कियौ, (रे) रचि[3] गुन[4]-तत्त्व-बिधान[5]।
चरन, चिकुर, कर, नख, दए, (रे) नयन, नासिका, कान।
असन, बसन बहु बिधि दए, (रे) औसर औसर आनि।
मातु-पिता-भैया मिले, (रे) नई रुचि नई पहिचानि।
सजन कुटुँब परिजन बढ़े, (रे) सुत-दारा-धन-धाम।
महामूढ बिषयी भयौ, (रे) चित आकर्ष्यौ काम।
खान-पान-परिधान[6] मैं[7], (रे) जोबन गयौ सब बीति[8]।
ज्यौं बिट[9] पर-तिय[10]-सँग बस्यौ, (रे) भोर भए भई[11] भोति।
जैसें सुखही तन[12] बढ़्यौ, (रे) तैसें तनहि[13] अनंग।
धूम बढ्यौ, लोचन खस्यौ[14], (रे) सखा न सूझ्यौ संग।

---

(१) दिना राति—१। (२) ज्यौं तबोली पान—१। (३) रज—३, ६, ८, १६। (४) कें—२। (५) बँधान—३। निधान—६, ८। (६) परनारि—६, ८। (७) रस—१, १६। सुख—६, ८। (८) बितीत—१, १६। (९) पति—२, ३, ६, ८, १६। (१०) परि परतीय बस—१, १६। (११) भय भीत—१, २। भयौ भीत—१६। (१२) मन—१। धन—२, ३, ८, १४, १६। (१३) बढ्यौ—१। नेह—८। (१४) गयौ—२। गह्यौ—१६।

जम जान्यौ, सब जग सुन्यौ, (रे) बाढ्यौ अजस अपार ।
बीच न काहू तब कियौ, (जब) दूतनि दीन्हीं[1] मार ।
कहा[2] जानै कैवा[3] मुवौ, (रे) ऐसैं कुमति, कुमीच ।
हरि सौं[4] हेत बिसारि कै, (रे) सुख चाहत है नीच !
जौ पै जिय लज्जा नहीं, (रे) कहा कहौं सो बार ?
एकहु आँक[5] न हरि भजे, (रे) रे सठ, सूर गँवार ॥३२५॥

* राग कल्यान

† धोखैं ही धोखैं डहकायौ ।
समुझि न परी, बिषय-रस गीध्यौ, हरि-हीरा घर माँझ गँवायौ ।
ज्यौं कुरंग जल देखि अवनि[6] कौ, प्यास न गई चहूँ[7] दिसि धायौ ।
जनम-जनम बहु करम किए हैं, तिनमैं आपुन आपु बँधायौ ।
ज्यौं सुक सेमर सेव[8] आस लगि, निसि-बासर हठि[9] चित्त लगायौ ।
गीतौ परयौ जबै फल चाख्यौ, उड़ि गयौ तूल, ताँवरौ आयौ ।
ज्यौं कपि डोरि बाँधि बाजीगर, कन-कन कौं चौहटैं नचायौ ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, काल-ब्याल पै आपु डसायौ[10] ॥३२६॥

राग बिलावल

‡ धोखैं ही धोखैं[11] बहुत बह्यौ[12] ।
मैं जान्यौ सब संग चलैगौ, जहँ कौ तहाँ रह्यौ ।

---

(१) काढ्यौ बार—१ । दीन्हों —१६ । (२) को—८, १४ । (३) कहवा—१ । (४) सौ मीत—८ । (५) अग—२, ३ ।

* (ना) कान्हरा । (का) गौरी ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(६) प्रछन गो (गौ)—६, ८ । पिवन को —१४ । (७) दसो —३ । (८) फल आसा—२ । सो आसा—३, ६, ८ । सेह— १४ । (९) हित—१६ । (१०) खवायो—२ ।

‡ यह पद (ना, स, ल, का) में है ।

(११) धोखौ—२, ३ । (१२) भयो—२, ३ ।

तीरथ गवन कियौ नहिँ कबहूँ, चलतहिँ चलत दह्यौ ।
सूरदास सठ[1] तब हरि सुमिरचौ, जब कफ कंठ गह्यौ ॥३२७॥

* राग धनाश्री

† जनम गँवायौ ऊआबाई[2] ।
भजे न चरन-कमल जदुपति के, रह्यौ बिलोकत छाई[3] ।
धन-जोबन-मद ऐँड़ो-ऐँड़ो, ताकत नारि पराई ।
लालच-लुब्ध स्वान जूठनि ज्यौँ, सोऊ हाथ न आई ।
रंच काँच-सुख लागि मूढ-मति[4], कंचन-रासि गँवाई ।
सूरदास प्रभु छाँड़ि सुधा-रस, विषय[5] परम बिष खाई ॥३२८॥

* राग धनाश्री

‡ भक्ति कब करिहौ, जनम सिरानौ ।
बालापन खेलतहीँ खोयौ, तरुनाई[6] गरबानौ ।
बहुत प्रपंच किये माया के, तऊ न अधम[7] अघानौ ।
जतन-जतन करि माया जोरी, लै गयौ रंक न रानौ ।
॥ सुत-बित[8]-बनिता-प्रीति[9] लगाई, झूठे भरम भुलानौ ।
॥ लोभ-मोह तैँ चेत्यौ नाहीँ, सुपनैँ ज्यौँ डहकानौ ।
बिरध भऐँ कफ कंठ बिरोध्यौ, सिर धुनि धुनि पछितानौ ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जम कैँ हाथ बिकानौ ॥३२९॥

---

(१) प्रभु—३ ।
* (ना) बिहागरो ।
† यह पद (शा) मेँ नहीँ है ।
(२) आन उपाई—६, ८ । (३) झाई—२, १४ । (४) कत—२, ३, ६, ८ । (५) मरत बिषय—१४ ।
' (ना) पचम ।
‡ यह पद (शा) मेँ नहीँ है ।
(६) तरुना पै—१, २, ६, १६ । तरुनापन—३, ८ । तरुन भये—१४ । (७) पतित—३, ८, १६ । (८) पितु—६, ८ । (९) मोह लगायो—१, १६ ।
॥ ये दोनो चरण (मा, स, ल, क, रा) मेँ नहीँ हैँ ।

* राग धनाश्री

† (मन) राम-नाम-सुमिरन बिनु, बादि जनम खोयौ ।
रंचक सुख कारन, तैं अंत क्यौं[1] बिगोयो ?
साधु-संग[2], भक्ति बिना, तन अकार्थ जाई ।
ज्वारी ज्यौं हाथ झारि, चालै छुटकाई[3] ।
दारा-सुत, देह-गेह, संपति सुखदाई ।
इनमैं कछु नाहिं तेरौ, काल-अवधि आई ।
काम - क्रोध - लोभ - मोह - तृष्ना मन मोयौ[4] ।
गोबिंद-गुन[5] चित बिसारि, कौन नींद सोयो !
सूर कहै चित बिचारि, भूल्यौ भ्रम अंधा ।
राम-नाम भजि[6] लै, तजि और सकल धंधा ॥३३०॥

* राग कल्यान

‡ भक्ति बिनु बैल बिराने ह्वैहौ ।
पाउँ चारि, सिर सृंग, गुंग मुख, तब कैसैं गुन गैहौ ?
चारि पहर दिन चरत फिरत बन, तऊ न पेट अघैहौ ।
टूटे कंधऊरु फूटी नाकनि, कौ[7] लौं धौं भुस खैहौ ।
लादत, जोतत लकुट बाजिहै, तब कहँ मूँड़ दुरैहौ ?
॥ सीत, घाम, घन, बिपति बहुत बिधि, भार तरैं मरि जैहौ ।

---

* (ना) चर्चरी । (का) भैरौ ।
† यह पद (शा) में नहीं है ।
① काल—१, २, ३, १४, १६, १८, १९ । ② सँगति—१, १९ । ③ झटकाई—१ । चुपकाई—६, ८ । ④ मोह्यो—२, ३, १४ । पोयो—१९ ⑤ को—१९ । ⑥ लै तजि करि (क) —१, १९ । निज करनी—२, ३, १४ ।
⑦ (ना) नट । (कौ) सारंग ।
‡ यह पद (शा) में नहीं है ।
॥ यह चरण (ना, स, का, रा) में नहीं है ।

|| हरि-संतनि कौ कह्यौ न मानत, कियौ आपुनौ पैहौ ।
सूरदास भगवत-भजन बिनु, मिथ्या[1] जनम गँवैहौ ॥३३१॥

राग सारंग

तजौ[2] मन, हरि-बिमुखनि कौ संग ।
जिनकैं संग कुमति उपजति है, परत भजन मैं भंग ।
कहा होत पय-पान कराऐं, बिष नहिं तजत भुजंग ।
कागहिं कहा कपूर चुगाऐं, स्वान न्हवाऐं गंग ।
खर कौं कहा अरगजा-लेपन, मरकट भूषन-अंग ।
गज कौं कहा सरित[3] अन्हवाऐं, बहुरि धरै वह ढंग ।
पाहन पतित[4] बान[5] नहिं बेधत, रीतौ करत निषंग ।
सूरदास कारी[6] कामरि पै, चढत न दूजौ रंग ॥३३२॥

* राग सोरठ

† रे मन, जनम अकारथ खोइसि ।
हरि की भक्ति न कबहूँ कीन्हौं, उदर भरे परि सोइसि ।
निसि-दिन फिरत रहत मुँह बाए, अहमिति[7] जनम बिगोइसि ।
गोड़ पसारि परचौ दोउ नोकैं, अब[8] कैसी कह होइसि !
काल-जमनि सौं आनि बनी है, देखि-देखि मुख रोइसि ।
सूर स्याम बिनु कौन छुडावै, चले जाव भाई[9] पोइसि ॥३३३॥

|| यह चरण (ना, स, को, रा) में नहीं है ।

(१) बिर्था—१६ । (२) छाँडि—१, ३, १६ । (३) न्हवाए सरिता बहुरि धरै ज्यहि ढंग—१ । न्हवाऐं सलिता —१६ । (४) पेट—२ । (५) बांस—१ । (६) खल कारी कामरि—१, ३ १८ । प्रभु कारी कामरि—१६ ।

* (ना) बिहागरौ । (का) सारंग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(७) अहकार करि—१, २, ३, ६, ८, १६ । (८) अब कीये कहा होइस—१ । (९) करि—६, ८ ।

* राग सोरठ

† तब तैं गोबिंद क्यौं न सँभारे ?
भूमि परे तैं सोचन लागे, महा कठिन दुख भारे ।
अपनौ पिंड पोषिबे कारन, कोटि सहस जिय मारे ।
इन पापनि तैं क्यौं उबरैगे, दामनगीर[1] तुम्हारे ।
आपु लोभ-लालच कैं कारन, पापनि[2] तैं नहिं हारे ।
सूरदास जम[3] कंठ गहे तैं[4], निकसत प्रान दुखारे ॥३३४॥

* राग धनाश्री

‡ रे मन मूरख, जनम गँवायौ ।
करि अभिमान बिषय-रस गीध्यौ, स्याम-सरन नहिं आयौ ।
॥ यह संसार सुवा-सेमर ज्यौं, सुंदर देखि लुभायौ ।
॥ चाखन लाग्यौ रुई गई[5] उड़ि, हाथ कछू नहिं आयौ ।
कहा होत अब के पछिताऐं, पहिलैं पाप[6] कमायौ ।
कहत[7] सूर भगवंत-भजन बिनु, सिर धुनि-धुनि पछितायौ ॥३३५॥

× राग मारू

§ औसर हार्‌यौ रे, तैं हार्‌यौ ।
मानुष-जनम पाइ नर बौरे, हरि कौ भजन बिसार्‌यौ ।

---

* (ना) सूहो । (का, ना, क, का, रा) सारंग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

① दाम न गिरह—३ । ② कहूँ न पाप तिहारे—१ । कहुँ न पाप तैं हारे—२, १६ । ③ कफ—२ । ④ तब—३ । (ना, कां) सारंग । (क) गुर्जरी ।

‡ यह पद (शा) में नहीं ह ।

॥ ये दो चरण (का) में नहीं हैं ।

⑤ उडि गई—१, ३, १६ । ⑥ क्यौं न—२। नरक—३ । नाहिं—१४ । ⑦ सूरदास—१६ ।

× (ना) अड़ानो । (का, ना) परज । (रा) परज मारू ।

§ यह पद (शा) में नहीं हैं ।

रुधिर[1] बूँद तैं साजि कियौ तन, सुंदर रूप सँवारचौ।
जठर-अगिनि अंतर उर[2] दाहत, जिहिं दस मास उबारचौ।
जब तैं जनम लियौ जग भीतर, तब तैं तिहिं प्रतिपारचौ।
अंध, अचेत, मूढमति, बौरे, सो प्रभु क्यौं न सँभारचौ?
पहिरि पटंबर, करि आडंबर, यह तन झूठ[3] सिंगारचौ।
काम-क्रोध-मद-लोभ, तिया-रति, बहु विधि काज बिगारचौ।
मरन भूलि, जीवन थिर जान्यौ, बहु उद्यम जिय धारचौ।
सुत-दारा कौ मोह अँचे बिष, हरि-अमृत-फल डारचौ।
झूठ-साँच करि माया जोरी, रचि-पचि भवन सँवारचौ[4]।
काल-अवधि पूरन भई जा दिन, तनहूँ त्यागि सिधारचौ।
प्रेत-प्रेत तेरौ नाम परचौ, जब[5], जेंवरि बाँधि निकारचौ।
जिहिं सुत कैं हित बिमुख गोबिंद तैं, प्रथम तिहीं मुख जारचौ।
भाई-बंधु-कुटुंब-सहोदर, सब मिलि यहैं बिचारचौ।
जैसे कर्म, लहौ फल तैसे, तिनुका तोरि उचारचौ।
सतगुरु कौ उपदेस हृदय धरि, जिन भ्रम सकल निवारचौ।
हरि भजि, बिलँब छाँड़ि सूरज सठ, ऊँचैं टेरि पुकारचौ॥३३६॥

चित्-बुद्धि-संवाद

* राग देवगधार

चकई री, चलि चरन-सरोबर, जहाँ न प्रेम-बियोग।
जहँ भ्रम-निसा होति नहिं कबहूँ, सोइ सायर सुख जोग।

---

(१) पानि के बुंद ते पिंड प्रगट कियो—८। (२) ऊरध मुख—१, २, ६, ८, १४, १६, १८, १९। (३) ठाठ—१। (४) उसारयौ—१, २, ३, ६, १४, १९। (५) नर झोरी—२।

* (ना, कां) कान्हरो। (क) बिलावल।

जहाँ[1] सनक-सिव हंस, मीन मुनि, नख रवि-प्रभा प्रकास।
प्रफुलित कमल, निमिष नहिं ससि-डर, गुंजत निगम सुबास।
जिहिं सर सुभग[2] मुक्ति-मुक्ताफल, सुकृत-अमृत-रस पीजै।
सो सर छाँडि कुबुद्धि बिहंगम, इहाँ कहा रहि कीजै?
लछमी-सहित होति नित क्रीड़ा, सोभित सूरजदास।
अब न सुहात बिषय-रस-छीलर[3], वा[4] समुद्र की आस ॥३३७॥

* राग देवगंधार

† चलि सखि, तिहिं सरोवर जाहिं।
जिहिं सरोवर कमल कमला, रवि बिना बिकसाहिँ।
हंस उज्जल पंख[5] निर्मल, अंग मलि-मलि न्हाहिँ।
मुक्ति-मुक्ता अनगिने फल, तहाँ[6] चुनि[7]-चुनि खाहिँ।
अतिहिं मगन महा मधुर रस, रसन[8] मध्य समाहिँ।
पदुम-बास सुगंध-सीतल, लेत पाप नसाहिँ।
सदा प्रफुलित रहैं, जल बिनु निमिष नहिं कुम्हिलाहिं।
सघन[9] गुंजत बैठि उन पर भौंरहू[10] बिरमाहिं।
देखि नीर जु छिलछिलौ जग[11], समुझि कछु मन माहिँ।
सूर क्यौं नहिं चलै उडि तहँ, बहुरि उडिबो नाहिं ॥३३८॥

---

① जहा सनक से मीन हस सिव (मुनिजन —१, २, १६। ② चुगत—२। ③ झीलर—२, ८। ④ हरि—२ ३, ६, ८। * (का) कान्हरा।

† यह पद (शा) में नहीं है।

⑤ पक्ति—३। ⑥ अबु के १, १६। अब क—६, ८। ⑦ तिन्हें—१ १६। ⑧ चुगि चुगि—२, ३। ⑨ रसहिँ—२, ६, ८। ⑩ मगन—६। ⑪ हे—१। ह्वै—२, ३। ⑫ अति—१, ६, ८, १६।

* राग रामकली

† भृंगी री, भजि स्याम[1]-कमल-पद, जहाँ न निसि कौ त्रास ।
जहँ बिधु-भानु समान, एक[2] रस, सो बारिज सुख-रास ।
जहँ किंजल्क भक्ति नव-लच्छन, काम-ज्ञान रस एक ।
निगम, सनक, सुक, नारद, सारद, मुनि जन भृंग अनेक ।
सिव-बिरंचि खंजन मनरंजन, छिन-छिन करत प्रवेस ।
अखिल कोष तहँ भर्‌यो सुकृत-जल. प्रगटित स्याम-दिनेस ।
सुनि मधुकरि[3], भ्रम तजि कुमुदनि कौ, राजिवबर की आस ।
सूरज प्रेम-सिंधु मैं प्रफुलित, तहँ चलि करै निवास ॥३३६॥

* राग देवगंधार

‡ सुवा, चलि ता बन कौ रस पीजै ।
जा बन राम-नाम अम्रित-रस, स्रवन[4]-पात्र भरि लीजै ।
को तेरौ पुत्र, पिता तू काकौ, घरनी, घर कौ तेरौ ?
काग[5]-सृगाल-स्वान कौ भोजन, तू कहै मेरौ-मेरौ !
बन बारानसि मुक्ति-छेत्र है, चलि तोकौं दिखराऊँ ।
सूरदास साधुनि की संगति, बड़े भाग्य जो पाऊँ ॥३४०॥

---

* (ना) आसावरी । (क) बिलावल । (कां) कान्हरा ।

† यह पद (ल, शा) में नहीं है ।

① चरन—१, २ ३, ६, ८, १४, १८, १६ । ② प्रभा नख—१, ६, ८, १६ । ③ मधुकरी भरम तजि निर्भय राजिव रवि—१ ।

(कां) कान्हरा ।

‡ यह पद (ना, स, ल, रा) में नहीं है ।

④ स्रवत—६ । ⑤ काम कराल—१ । काल कराल—६, ८ । काग कराल—१६ ।

* राग बिलावल

या बिधि राजा करचौ, बिचारि । राज-साज[1] सबहीं कौं डारि ।
जीरन पट कुपीन तन धारि । चल्यौ सुरसरी, सीस[2] उघारि ।
पुत्र-कलत्र देखि सब रोवैं । राजा तिनकी ओर न जोवैं ।
राजा चलत चले सब लोग । दुखित भए सब नृपति-बियोग ।
नृपति सुरसरी कैं तट आइ । कियौ असनान मृत्तिका लाइ ।
करि संकल्प अन्न-जल त्याग्यौ । केवल हरि-पद सौं अनुराग्यौ ।
अत्रि-बसिष्ठादिक तहँ आए । नारदादि मुनि बहुरि सिधाए ।
कुस-आसन दै तिनहिं बिठायौ । यौं कहि पुनि तिनकौं सिरनायौ ।
धन्य भाग्य, तुम दरसन पाए । मम उद्धार[3] करन तुम आए ।
तुम देखत हरि-सुमिरन होइ । और प्रसंग चलै नहिं कोइ ।
आज्ञा होइ करौं अब सोइ । जातैं[4] मेरी सदगति होइ ।
कोउ कहै, तीरथ सेवन करौ । कोउ कहै, दान-जज्ञ बिस्तरौ ।
काहूँ कह्यौ मंत्र-जप करना । काहूँ कछु, काहूँ कछु बरना ।
राजा कह्यौ, सप्त दिन माहिं । सिद्धि[5] होति कछु दीसति नाहिं ।
इहिं अंतर सुक मुनि तहँ आए । राजा देखि तुरत उठि धाए ।
करि दंडवत कुसासन दीन्हौ । पुनि सनमान ऋषिनि सब कीन्हौ ।
सुक कौ रूप कह्यौ नहिं जाइ । सुक-हिय रह्यौ कृष्न-रस छाइ ।
सुक की महिमा सुकही जानै । सूरदास कहि कहा बखानै ॥३४१॥

---

* (ना) विभास । (क, रा) सारंग ।

① काज—२ । पाट—३ । ② तीर—१ । ③ उधार कारन—१, ६, ८, १६ । ④ जाते हरि-पद प्रापति होइ—१६ । ⑤ हुति इहि को मोहिं सूझत—१ । होत तब इनि कौ सूझत—२ । होतु अत मोहिं सूझत—६ । ⑥ देव—१, २, ३, ६, ८, १६ ।

राग बिलावल

सुक नृप और कृपा करि देख्यौ । धन्य भाग तिन अपनौ लेख्यौ ।
बिनती करी चरन सिर नाइ । सप्त दिवस सब[1] मेरी आइ ।
तउ कुटुंब कौ मोह न जात । तन-धन-लोभ आइ लपटात ।
जानि बूझि मैं होत अजान । उपजत नाहीं मन में ज्ञान ।
अरु तनु छूटत बहु दुख होइ । तातैं सोच रहे[2] नहिं कोइ ।
बिना सोच[3] सुमिरन क्यौं होइ । आज्ञा होइ करौं अब सोइ ।
सुक कह्यौ, तन-धन कुटुंब बिहाइ । हरि-पद भजौ, न और उपाइ ।
आयु भग्न[4]-घट-जल ज्यौं छीजै । अह-निसि हरि-हरि सुमिरन कीजै ।
नृप षट्वांग पूर्व इक भयो । सु तौ द्वै घरी में तरि गयो ।
सात दिवस तेरी तौ आइ । कहौं भागवत, सुनि चित लाइ ।
सुनि हरि-कथा धरौ हरि-ध्यान । सब जग जानौ स्वप्न समान ।
या बिधि जौ हरि-पद उर धरिहौ । निस्संदेह सूर तौ[5] तरिहौ ॥३४२॥

राग बिलावल

हरि-जस-कथा सुनौ चित लाइ । ज्यौं षट्वांग तरचौ गुन गाइ ।
नृप षट्वांग भयौ भुव माहिं । ताके सम द्वितिया कोउ नाहिं ।
इक दिन इंद्र तासु घर आयौ । राजा उठि कै सीस नवायौ ।
धनि मम गृह, धनि भाग हमारे । जौ तुम चरन कृपा करि धारे ।

---

(१) रहि—२, ८। (२) हरत —१६। (३) खचा—१, १६। (४) अजुली—६, ८। (५) भव—२। सब—१६।

अब मोकौं जो आज्ञा होइ । आयसु मानि करौं मैं[1] सोइ ।
इंद्र कह्यौ, मम करौ सहाई । असुरनि सौं है हमैं लराई ।
इंद्रपुरी षट्वांग सिधाए । नाम सुनत सो[2] सकल पराए ।
सुरपति सौं नृप आज्ञा माँगी । उन कह्यौ, लेहु कछू बर माँगी ।
नृपति कह्यौ, कहौ मेरी आइ । बर लैहौं पुनि सीस चढाइ ।
दोइ मुहूरति आयु बताई । नृप बोल्यौ तब सीस नवाई ।
तुरत देहु मोहि घर पहुँचाइ । तरौं जाइ तहँ हरि-गुन गाइ ।
एक मुहूरत मैं भुव[3] आयौ । एक मुहूरत हरि-गुन गायौ ।
हरि-गुन गाइ परम पद लह्यौ । सूर नृपति सुनि धीरज गह्यौ ॥३४३॥

① सब—१ । अब—३, ८ । ② सब असुर—६, ८ । ③ फिरि—१, २, १६ ।

द्वितीय स्कंध

* राग बिलावल

‖ हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । ‖ हरि चरनारबिंद उर धरौ ।
सुकदेव हरि-चरननि सिर[1] नाइ । राजा सौं बोल्यौ या भाइ ।
तुम[2] कह्यौ सप्त दिवस मम आइ । कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ ।
चिंता छाँड़ि, भजौ जदुराइ । सूर तरौ, हरि के गुन गाइ ॥ १ ॥
॥३४४॥

राग सारंग

† कह्यौ सुक श्रीभागवत बिचारि ।
हरि की भक्ति जुगै जुग बिरधै, आन धर्म दिन चारि ।
चिंता तजौ परीच्छित राजा, सुनि सिख[3] साखि[4] हमार ।
कमल-नैन की लीला गावत, कटत अनेक बिकार ।
सतजुग सत, त्रेता तप कीजै, द्वापर पूजा चारि ।
सूर भजन कलि केवल कीजै, लज्जा-कानि निवारि ॥ २ ॥
॥३४५॥

---

* (ना) विभास ।
‖ ये दो चरण (का, ना) में नहीं हैं ।
① चित लाइ—१, १६ ।
② जो कहौ—६ ।
† यह पद (शा) में नहीं है ।
③ सुख—१ । ④ साचु—८ । सार—१६ ।

* राग बिलावल

† गोविंद-भजन करौ इहिँ बार ।
संकर पारवती उपदेसत, तारक मंत्र लिख्यौ स्रुति-द्वार ।
अस्वमेध जज्ञहु जौ कीजै, गया, बनारस अरु केदार ।
राम नाम-सरि तऊ न पूजै, जौ तनु गारौ जाइ हिवार ।
सहस बार जौ बेनी परसौ, चंद्रायन कीजै सौ बार ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जम के दूत खरे हैँ द्वार ॥ ३ ॥
॥३४६॥

राग केदारौ

‡ है हरि नाम कौ आधार ।
और इहिँ कलिकाल नाहीँ, रह्यौ बिधि-ब्यौहार ।
नारदादि सुकादि मुनि[1] मिलि, कियौ बहुत बिचार ।
॥ सकल स्रुति-दधि मथत पायौ[2], इतोई घृत-सार ।
दसौँ दिसि तैँ कर्म रोक्यौ[3], मोन कौँ ज्यौँ जार ।
सूर हरि कौ सुजस गावत, जाहि मिटि भव-भार ॥ ४ ॥
॥३४७॥

नाम-महिमा

* राग बिलावल

§ हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि हरि सुमिरत सब सुख होइ ।
हरि-समान द्वितिया नहिँ कोइ । स्रुति-सुम्रिति देख्यौ सब जोइ ।

---

* (ना) कल्यान । (ना इ) सारग । (का) रामकली ।

† इस पद के पाठो मेँ बडा हेर फेर है । चरणो की संख्या तथा छद मेँ भी भिन्नता है । सब प्रतियो का निरीक्षण करके यह पाठ निर्धारित किया गया है ।

‡ यह पद (शा) मेँ नहीँ है ।

(१) शकर—१४ ।

॥ (ना, का) मेँ इस चरण के पश्चात् ये दो चरण अधिक है—
नाव जजरी (जर्जरि) जरा ग्रासति
कियौ बिष ब्यौहार ।
दाम गाठी आहि नाहीँ
कैसे उतरो पार ॥

(२) काढ्यौ—१, ३, ८ १६ ।

(३) बंधन—१६ ।

१ (ना) विभास ।

§ यह पद (ल) मेँ नहीँ है । इसके पूर्वापर क्रम मेँ कुछ अतर है । (ना) का क्रम विशेष संगत प्रतीत होता है, अत इस संस्करण मे उसे ही ग्रहण किया गया है । चरणो की संख्या भी अधिकाश (ना) की भाँति रक्खी गई है । "हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि हरि सुमिरत सब सुख होइ ।" यह टेक का चरण तीन बार आया है ।

हरि हरि सुमिरत होइ सु होइ । हरि चरननि चित राखौ गोइ ।
बिनु हरि सुमिरन मुक्ति न होइ । कोटि उपाइ करौ जौ कोइ ।
हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि सुमिरे तैँ सब सुख होइ ।
सत्रु-मित्र हरि गनत न दोइ । जो सुमिरै ताकी गति होइ ।
हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि के गुन गावत सब लोइ ।
राव-रंक हरि गनत न दोइ । जो गावहि ताकी गति होइ ।
हरि हरि हरि सुमिरौ सब कोइ । हरि सुमिरे तैँ सब सुख होइ ।
हरि हरि हरि सुमिरचौ जो जहाँ । हरि तिहिँ दरसन दीन्ह्यौ तहाँ ।
हरि बिनु सुख नहिँ इहाँ न उहाँ । हरि हरि हरि सुमिरौ जहँ तहाँ ।
सौ बातनि की एकै बात । सूर सुमिरि हरि-हरि दिन-रात ॥ ५ ॥

॥३४८॥

* राग सारंग

जो सुख होत गुपालहिँ गाएँ ।
सो सुख होत न जप-तप कीन्हैँ, कोटिक तीरथ न्हाएँ ।
दिएँ लेत नहिँ चारि पदारथ, चरन-कमल चित लाएँ ।
तीनि लोक तृन-सम करि लेखत, नंद-नँदन उर आएँ ।
बंसीबट[1], बृंदाबन, जमुना तजि बैकुंठ न जावै[2] ।
सूरदास हरि कौ सुमिरन करि, बहुरि न भव[3]-जल आवै[4] ॥ ६ ॥

॥३४९॥

---

* (ना) अडाना ।

① गोकुल बृंदाबन जमुना तजि को बैकुंठहिँ जाइ—८ । ② जाये—१, ३ । जा ह—२ । जाई—६ । जाइ—८ । जायेँ—११ । ③ भव चलि—१, ११ । भुव तल—२ । ④ आये—१, ३ । आहै—२ । आई—६ । आइ—८ । आयेँ—११ ।

* राग केदारौ

† सोइ रसना, जो हरि-गुन गावै ।
नैननि की छबि यहै चतुरता, जौ मुकुंद[1]-मकरंदहिं ध्यावै ।
निर्मल चित तौ सोई साँचौ, कृष्न बिना जिहिं और न भावै ।
स्रवननि की जु[2] यहै अधिकाई, सुनि[3] हरि[4]-कथा सुधा-रस पावै ।
कर तेई जे स्यामहिं सेवैं, चरननि चलि बृंदाबन जावै ।
सूरदास जैयै बलि वाकी[5], जो हरि जू सौं प्रीति बढावै ॥ ७ ॥

॥३५०॥

राग सारग

‡ जब तैं रसना राम कह्यौ ।
मानौ धर्म साधि सब बैठ्यौ, पढिबे में धौं[6] कहा रह्यौ ।
प्रगट प्रताप ज्ञान-गुरु[7]-गम तैं, दधि मथि घृत लै, तज्यौ मह्यौ ।
सार कौ सार, सकल सुख कौ सुख, हनूमान-सिव जानि गह्यौ[8] ।
नाम-प्रतीति भई जा जन कौं, लै आनँद, दुख दूरि दह्यौ ।
सूरदास धनि-धनि वह प्रानी, जो हरि कौ ब्रत लै निबह्यौ ॥ ८ ॥

॥३५१॥

अनन्य भक्ति की महिमा

* राग सारग

§ गोबिंद सौं पति पाइ, कहँ मन अनत लगावै ?
स्याम-भजन बिनु सुख नहीं, जौ दस दिसि धावै ।

---

* (ना) ईमन । (क) कान्हरो । (का) सारग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(१) मकरद मुकु दहिं—१, ८, १६ । मकरद मुकु द दिसावै—६, ८ । (२) जो यहै चतुरता—२ । (३) जो चरनारबि द रस ध्यावै—२, ३, १८ । (४) रस—१, १६ । (५) ताके—१, २, ३, १६ ।

‡ यह पद (शा) में नहीं है ।

(६) अब—२ । (७) गुन—८ । (८) कह्यौ—१, ६, ८ । (ना) अल्हिया विलावल । (का) कान्हरा ।

§ इस पद का छंद सभी प्रतियों में सदोष है । इसके अधिकांश चरणों में १३ + १० = २३ मात्राएँ हैं किंतु कुछ में इस नियम का उल्लंघन करके २४ अथवा २५ मात्राएँ भी रख दी गई हैं । इस संस्करण में इस पद की २३ मात्राएँ स्वीकार की गई और प्रतियों की सहायता से शुद्ध करके रक्खी गई हैं ।

पति कौ ब्रत जो धरै तिय, सो सोभा पावै।
आन पुरुष कौ नाम लै, पतिब्रतहिँ लजावै।
गनिका उपज्यौ पूत, सो कौन कौ कहावै?
बसत सुरसरी तीर, मँदमति कूप खनावै।
जैसैं स्वान कुलाल के, पाछैं लगि धावै।
आन देव हरि तजि भजै, सो जनम गँवावै।
॥ फल की आसा चित्त धरि, जो बृच्छ बढावै।
॥ महा मूढ सो मूल तजि, साखा जल नावै।
सहज भजै नँदलाल कौं, सो सब सचुपावै।
सूरदास हरि नाम लै, दुख निकट न आवै॥ ६॥

॥३५२॥

* राग कान्हरौ

जाकौ मन लाग्यौ[1] नँदलालहिं[2], ताहि और नहिँ भावै (हो)।
¶ जो लै मीन दूध मैं डारै, बिनु[3] जल नहिँ सचुपावै (हो)।
¶ अति[4] सुकुमार डोलत रस-भीनौ, सो[5] रस जाहि पियावै (हो)।
ज्यौं गूँगो गुर खाइ अधिक रस, सुख-सवाद न बतावै (हो)।
जैसैं सरिता मिलै सिंधु कौं, बहुरि प्रवाह न आवै (हो)।
ऐसैं सूर कमल-लोचन तैं, चित नहिँ अनत डुलावै (हो)॥ १०॥

॥३५३॥

॥ ये दो चरण (ना, स, रा) मैं नहीं हैं।

* (ना, का) आसावरी।

(१) लागै—६, ८, १८। (२) गुपाल सौं—२।

¶ ये दो चरण (वे) मैं नहीं हैं।

(३) नीर भरे सचु पावै—२। नीरहिं मैं सचु पावै—८। नीर भले सुख पावै—१६, १८। (४) अति सुमार—२। ज्यौं सुमार डोलै रस भीतर—१६। (५) पीर न काहु जनावै (हो)—२, १६।

* राग बिहाग

जौ मन कबहुँक हरि कौं जाँचै ।
आन प्रसंग-उपासन[1] छाँडै, मन-बच-क्रम अपनैं उर साँचै ।
निसि-दिन स्याम सुमिरि जस गावै, कल्पन[2] मेटि प्रेम रस माँचै ।
यह ब्रत धरे लोक मैं बिचरै, सम करि गनै महामनि-काँचै ।
सीत-उष्न, सुख-दुख नहिँ मानै, हानि[3]-लाभ कछु सोच न राँचै ।
जाइ समाइ सूर वा[4] निधि मैं, बहुरि न उलटि जगत मैं नाचै ॥ ११ ॥
॥३५४॥

* राग बिलावल

जनम-जनम, जब-जब, जिहिं-जिहिं जुग, जहाँ-जहाँ जन जाइ ।
तहाँ-तहाँ हरि चरन-कमल-रति सो[5] दृढ होइ रहाइ ।
स्रवन सुजस सारंग-नाद-बिधि, चातक-बिधि मुख नाम ।
नैन चकोर सतत[6] दरसन ससि, कर अरचन अभिराम ।
सुमति सुरूप सँचै स्रद्धा-बिधि, उर-अंबुज अनुराग ।
नित प्रति अलि जिमि गुंज मनोहर, उड़त[7]जु प्रेम-पराग ।
औरौ सकल सुकृत श्रीपति हित, प्रति[8]फल-रहित सुप्रीति ।
नाक[9] निरै, सुख दुःख, सूर नहिं, जिहि की भजन प्रतीति ॥ १२ ॥
॥३५५॥

---

* (ना) कान्हरो । (का,[नी], क, रा) केदारा । (कौं) आसावरी ।

① आन ब्रत—६, ८ । उपाय छाँडि कै—१६ । ② गलियन मत्त —२ । कामन—६, ८, १६ । ③ हानि भए—१, १६ । आये गये शोक नहि राचै—३, १४ । ④ महा—२, ३ ।

५ (ना) अड़ानो ।

⑤ जो—१ । वह सुधि बुद्धि—२ । ⑥ संत सुनियत —२ । संत संतत—६, ८ । लखत संतत—१६ । ⑦ आवत —१, ६, ८, १४ । उद्यम—१८ । ⑧ तन मन रहत सुप्रीति—१, ८, १६ । सकल रहित करि प्रीति—२ । ⑨ नहिं तिहिं स्वर्ग नर्क सुख दुख कछु सूरज भनि परतीति—२ । स्वर्ग नर्क दुख सुख न सूझै प्रभु जिनके—३ ।

हरिविमुख-नि दा * राग सारग

अचंभौ इन लोगनि कौ आवै ।
छाँड़ैं स्याम-नाम[1]-अम्रित-फल, माया-बिष-फल भावै[2] ।
निदत मूढ मलय चंदन कौं, राख अंग लपटावै ।
मानसरोवर छाँड़ि हंस तट काग[3]-सरोवर न्हावै ।
पग तर जरत न जानै मूरख, घर तजि घूर बुझावै ।
चौरासी लख जोनि स्वाँग धरि, भ्रमि-भ्रमि जमहिं[4] हँसावै ।
मृगतृष्ना आचार-जगत[5] जल, ता सँग मन ललचावै ।
कहत[6] जु सूरदास संतनि मिलि हरि जस काहे[7] न गावै ! ॥ १३ ॥

॥३५६॥

* राग सारग

† भजन बिनु कूकर-सूकर जैसौ ।
जैसैं घर बिलाव[8] के मूसा, रहत बिषय[9]-बस वैसौ ।
बग-बगुली अरु गीध-गोधिनी, आइ जनम लियौ तैसौ ।
उनहूँ कैं गृह, सुत, दारा हैं, उन्हैं भेद कहु कैसौ ?
जीव मारि कै उदर भरत हैं, तिनकौ लेखौ ऐसौ ।
सूरदास[10] भगवंत-भजन बिनु, मनौ[11] ऊँट-बृष[12]-भैंसौ ॥ १४ ॥

॥३५७॥

---

* (ना) गौरी ।

(१) अमीरस फल को—१, १६ । (२) खावै—२, ३ । (३) काल—१८ । (४) लोग—२, ३, १६, १८ । जियहि हतावै—६, ८ । (५) मुक्ति—१ । (६) कहि अब—२, ८ । (७) गाय गवावै—२ । (ना) नट । (क) टोडी । (का) धनाश्री ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(८) बिलाव मूसा डर बसत इंद्रियनि—१८ । (९) इंद्री—६, ८, १६ । (१०) नरक परे चौरासी भरमै सूरज कह्यौ सु तैसो—२, ३, १८ । (११) ज्योंब ऊँट खर जैसो—१ । ज्यों व-ऊँट-खर भैंसो—१६ । (१२) खर—६, ८ ।

* राग सारंग

† भजन बिनु जीवत जैसैं प्रेत ।
मलिन मंदमति डोलत घर-घर, उदर भरन कैं हेत ।
॥ मुख कटु बचन, नित्त पर[1]-निंदा, संगति-सुजस न लेत ।
॥ कबहूँ[2] पाप करैं पावत धन, गाडि[3] धूरि तिहिं देत ।
गुरु-ब्राह्मन अरु संत-सुजन के, जात न कबहुँ निकेत ।
सेवा नहिं भगवंत-चरन की, भवन[4] नील कौ खेत ।
कथा नहीं गुन गीत सुजस हरि, सब[5] काहूँ दुख देत ।
ताकी कहा कहौं सुनि सूरज, बूड़त कुटुंब समेत ॥ १५ ॥

॥३५८॥

* राग सारंग

† जिहिं तन हरि भजिबौ[6] न कियौ ।
सो तन सूकर-स्वान-मीन ज्यौं, इहिं सुख कहा जियौ ?
¶ जो जगदीस ईस सबहिनि कौ, ताहि न चित्त दियौ ।
¶ प्रगट जानि जदुनाथ बिसारयौ, आसा-मद[7] जु पियौ ।
चारि पदारथ के प्रभु दाता, तिन्हैं न मिल्यौ हियौ ।
सूरदास रसना बस अपनैं, टेरि न नाम लियौ ॥ १६ ॥

॥३५९॥

---

* (ना) जैतश्री ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

॥ ये दो चरण (ना, स, कां, रा) में नहीं हैं ।

(१) प्रति (पर) नि दा सगुन (सुगन) सुयश सुखलेत—१, १६ ।

(२) कबहुँ न पुन्य करे बेस्या कौं गांठि धृति धन देत—६, ८ ।

(३) गांठि धूत तहँ—१, १६ । (४) लुनै जो बोवै खेत—२, ३, १८ ।

(५) साधत देव अचेत (अनेत) —१ १६ ।

(ना) देवगधार । (कां) बिलावल ।

‡ यह पद (शा) में नहीं है ।

(६) भजनौ—६, ८, १६ ।

¶ ये दो चरण (का, ना) में नहीं हैं ।

(७) मधु—२ ।

रत्नाकर

ब्रजभाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि गोलोक निवासी श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के समस्त काव्यो का यह अपूर्व संग्रह है। इनकी कविता के सबध मे विज्ञ साहित्यिकों से निवेदन करने की आवश्यकता नहीं। कविता-कला का इतना उत्कृष्ट अभ्यासी इस युग मे कहीं देखने को नहीं मिलता। यत्र तत्र बिखरे हुए उनके काव्य-रत्नों का यह संग्रह यथार्थ ही अपने नाम के अनुरूप हुआ है। 'रत्नाकर' मे ब्रजभाषा का प्राजल मणि भावों की उज्वलता से चौगुना चमक उठा है। अवसर के अनुकूल यत्र-तत्र चतुर चितेरों के एकरगे, तिरगे चित्रो तथा अनेकानेक उत्तमोत्तम डिजाइनो से इसकी काति और भी खिल उठी है। मुद्रक ने भी इसे सर्वांग-सुदर बनाने मे कोई कोर-कसर नहीं रखी। जो पुस्तक-प्रेमी स्थायी महत्त्व के सुदर और सरस साहित्य को सुचारु और आकर्षक वेशभूषा मे देखने के इच्छुक हैं उनके मनस्ताप की अपूर्व सामग्री इसमे विद्यमान है। यह प्रत्येक साहित्यिक की आलमारी मे शोभा पाने की अधिकारिणी है और इसका अभाव अवश्य एक बडी कमी है। इसके दो सस्करण प्रकाशित किए गए हैं। आर्ट पेपर के रायल आठ पेजी साइज के ६०० पृष्ठो के इस ग्रंथ के राज-सस्करण का मूल्य केवल ८) और साधारण सस्करण का ७) है। आशा है, साहित्य-प्रेमी इस पुस्तक को खरीदकर अपनी गुणज्ञता का परिचय देंगे।

बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास

इस पुस्तक मे रामायण-काल से लेकर आज तक का विवरण दिया गया है। इसमे पुराण, काव्य, कविता, इतिहास, गाथा, दतकथा, शिलालेख आदि इतिहास के लिये सहायक प्राय सभी साधनो से सहायता लेकर लेखक ने एक क्रमबद्ध निष्कर्ष निकाला है। बुदेलखड के इतिहास की कोई स्वतत्र पुस्तक नहीं थी। इसने इस कमी की पूर्ति की है। पृष्ठ-सख्या ४५०, मूल्य केवल ३)।

मआसिरुल उमरा

इतिहास-प्रेमियो को भली भाति विदित है कि यह ग्रथ कितने महत्त्व का है। इसमे मुगल दरबार के जिन सरदारों की जीवनियाँ नवाब शाहनवाज खाँ समसामुद्दौला ने दी हैं वे अत्यत प्रामाणिक और पक्षपात-रहित हैं। प्रथम भाग मे ९१ सरदारों की जीवनियाँ हैं। मूल्य केवल ४) रखा गया है।

ब्रजनिधि-ग्रंथावली

जयपुर-नरेश महाराज सवाई प्रतापसिहजी की समस्त रचनाओ का यह सग्रह है जो बहुत खोज और परिश्रम के अनंतर एकत्र किया गया है। पाद-टिप्पणियों मे कठिन शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं। प्रारभ मे विद्वान् सपादक पुरोहित हरिनारायणजी शर्मा की सुदीर्घ प्रस्तावना भी है। ४१९ पृष्ठो मे समाप्त इस पुस्तक का मूल्य केवल ३) है।

कोशोत्सव-स्मारक संग्रह

सपादक रायबहादुर महामहोपाध्याय पडित गौरीशंकर हीराचद ओझा। देश तथा विदेश के अनेक प्रख्यात विद्वानों एव अनेकानेक लब्ध-प्रतिष्ठ कवियों की सर्वश्रेष्ठ कृतियों का अपूर्व सग्रह। मूल्य ५)।

द्विवेदी-अभिनंदन-ग्रथ

अनेक सज्जना के सतत आग्रह पर सभा ने दो महीने के लिये इस ग्रंथ का मूल्य घटाकर आधा कर दिया था। इस अवधि मे इस पुस्तक की बहुतेरी प्रतियाँ बिकी। समय बीत गया पर आर्डरो का ताता लगा ही रहा और निरतर मागे आती ही जा रही है। वस्तुत यह पुस्तक सभा ने आर्थिक लाभ की अभिलाषा से नहीं छापी थी। यह आचार्य महोदय के सम्मानार्थ प्रकाशित की गई थी। अत इस सदुद्देश की सिद्धि पूर्ण रीति से तभी होगी जब इस ग्रथ-रत्न की एक एक प्रति हिदी भाषा एव हिदी भाषा के मान्य आचार्य महोदय के प्रत्येक भक्त क पास पहुँच जाय। ऐसे अनेक सज्जनो क आग्रह स सभा ने इस ग्रथ का मूल्य पुन ७ रु० ८ आ० कर दिया है। यह रिआयत केवल उन्हीं लोगो के साथ की जायगी जो सभा मे ग्रथ का मूल्य ७॥) और पकिंग तथा रजिस्टरी-व्यय ॥) कुल ८) मनीआर्डर से पेशगी भेज देगे। ऐसे सज्जनों के पास यह ग्रथ बैरग रलवे पार्सल से भेज दिया जायगा और रेलभाडा उन्हे देना पडेगा। जो सज्जन डाक से यह ग्रंथ मँगवाना चाहते हों उन्हे ७॥) मूल्य के अतिरिक्त १॥।=) डाक-व्यय के लिये और भजना चाहिए।

अभिनदन-ग्रथ मे विगत चालीस वर्षों के चुने हुए हिदी-साहित्य के पंडितों के अपूर्व निबध और कवियो की मनोरम रचनाएँ हैं। साथ ही इसमे देश और विदेश के सर्वश्रेष्ठ कलाकारों क सुंदर-सुंदर चित्रों का अलबम सजा दिया गया है जिसका मूल्य कला-रसिक ही अच्छी तरह आक सकते है। यह कहने मे अत्युक्ति न होगी कि साहित्य और चित्र-विद्या की ऐसी सयुक्त सुचारु प्रदर्शिनी कभी ही कभी सौभाग्य से देखने को मिलती है। जिस प्रकार 'गीता' या 'रामचरितमानस' के विषय मे कहा जाता है कि सपूर्ण भारतीय साहित्य और सस्कृति के नष्ट हो जाने पर भी इन दो ग्रथो से उनकी पूर्ति हो सकती है उसी प्रकार इस बीसवीं शताब्दि के हिदी-साहित्य की प्रगति की पूरी सामग्री आपको इस ग्रथ मे मिलेगी।

यदि आप अपने समय के साहित्य के साथ-साथ नहीं चल सके या उससे पूर्णत परिचित नहीं हो सके तो यह एक ऐसा अभाव है जिसके कारण आपके मन मे सकोच अवश्य होता होगा। अभिनदन-ग्रथ खरीदकर आप उसकी अप-टू-डेट जानकारी प्राप्त कर सकते है।

आशा है, हिदी-प्रेमी इस सुअवसर से लाभ उठावेंगे और इस ग्रथ-रत्न की एक-एक प्रति तुरत मँगाकर बीसवीं सदी की निधि अपने घरों मे रख लेगे।

पुस्तक-विक्रेताओ को १) रु० प्रति कमीशन दिया जायगा।

प्रधान मंत्री,
नागरीप्रचारिणी-सभा

सत्संग-महिमा * राग केदारौ

जा दिन संत पाहुने आवत ।
तीरथ कोटि सनान[1] करैँ फल जैसौ दरसन पावत ।
॥ नयौ नेह दिन-दिन प्रति उनकैँ चरन-कमल चित लावत ।
मन-बच-कर्म और नहिँ जानत, सुमिरत औ सुमिरावत ।
॥ मिथ्याबाद-उपाधि रहित ह्वै, बिमल-बिमल जस गावत ।
¶ बंधन कर्म कठिन जे पहिले, सोऊ काटि बहावत ।
¶ संगति रहैँ साधु की अनुदिन, भव-दुख दूरि नसावत ।
सूरदास[2] संगति करि तिनकी, जे हरि-सुरति करावत ॥१७॥

॥३६०॥

भक्ति-साधन ❀ राग धनाश्री

† हरि-रस तौ[3] ऽब जाइ कहुँ लहियै ।
गऐँ सोच आऐँ नहिँ आनँद, ऐसौ मारग गहियै ।
कोमल बचन, दीनता सब सौँ, सदा अनंदित रहियै ।
बाद-बिवाद, हर्ष-आतुरता[4], इतौ द्वंद[5] जिय सहियै ।
ऐसी जो आवै या मन मैँ, तौ सुख कहँ लौँ कहियै ।
अष्ट[6] सिद्धि, नव निधि, सूरज प्रभु, पहुँचै जो कछु चहियै ॥१८॥

॥३६१॥

---

* (ना) गौरी । (क) विहागरौ । (का) सारग ।

① समान करन—२, ३, १८ ।

|| ये दो चरण (का, ना) मे ँ नहीँ है ँ ।

¶ ये दो चरण (ना, स, क, का, रा) मे ँ नही ँ है ँ ।

② सूरदास या जन्म मरन तै ँ तुरत परम गति पावत—१, १६ ।

(ना) भैरवी । (क) गुर्जरी । (का) सारग ।

† यह पद (शा) मे ँ नहीँ है ।

③ तो कबहुँ जाइ लहिए—१ । तो पै कहुँ जाइ लहिए—३ । ④ अंतरता—२, ३, १८ । ईतरता—६, ८ । ⑤ दंड—१,१७, १६ । दंड सब—२ । दुःख जब—३ । ⑥ अष्ट महा सिधि सूर जहाँ लगि बिलसै—१७ ।

* राग धनाश्री

† जौ लौं मन-कामना[1] न छूटै ।
तौ कहा जोग-जज्ञ-व्रत कीन्हैं, बिनु कन तुस कौं कूटै ।
कहा सनान कियैं तीरथ के, अंग भस्म, जट-जूटै ?
कहा पुरान जु पढैं अठारह, ऊर्ध्व धूम के[2] घूटैं ।
जग सोभा[3] की[4] सकल बड़ाई, इनतैं कछू न खूटै ।
॥ करनी और, कहै कछु औरै, मन दसहूँ दिसि टूटै[5] ।
॥ काम, क्रोध, मद, लोभ सत्रु हैं, जो इतननि सौं छूटै ।
सूरदास तबहीं तम नासै, ज्ञान-अगिनि-झर फूटै ॥१६॥

॥३६२॥

राग बिलावल

भक्ति-पंथ कौं जो अनुसरै । सुत-कलत्र सौं हित परिहरै ।
असन-बसन की चित न करै । बिस्वंभर सब जग कौं भरै ।
पसु जाके द्वारे पर होइ । ताकौं पोषत अह-निसि सोइ ।
जो प्रभु कैं सरनागत आवै । ताकौं प्रभु क्यौं[6] करि बिसरावै ?
मातु[7]-उदर मैं रस पहुँचावत । बहुरि रुधिर तैं छीर बनावत ।
असन-काज प्रभु बन-फल करे[8] । तृषा-हेत जल-झरना भरे[9] ।
पात्र स्थान हाथ हरि दीन्हे । बसन-काज बल्कल प्रभु कीन्हे ।

---

* (ना) नाइकी । (क) नट ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(१) कालिमा—२ । (२) गर —६,८ । (३) सोना—१ । सुभाव —३ । (४) पुनि—२ ।

॥ ये दो चरण (क) मे नहीं हैं ।

(५) लूटै—१, ६, ८ । (६) केमैं—१६ । (७) माता उदर असन—२, ३ । (८) भरे—२ । (९) झरे—१, ३, ६, ८ ।

सजा पृथ्वी करी बिस्तार। गृह गिरि-कंदर करे अपार।
तातैं सब चिंता करि त्याग। सूर करौ हरि-पद अनुराग ॥२०॥
॥३६३॥

राग बिलावल

भक्ति-पंथ कौं जो अनुसरै। सेा अष्टांग जेाग कौं करै।
यम, नियमासन, प्रानायाम। करि अभ्यास होइ निष्काम।
प्रत्याहार - धारना - ध्यान। करै जु छाँड़ि बासना आन।
क्रम-क्रम सौं पुनि करै समाधि। सूर स्याम भजि मिटै उपाधि ॥२१॥
॥३६४॥

वैराग्य-वर्णन

* राग धनाश्री

† सबै दिन एकै से नहिं जात।
सुमिरन-भजन[1] कियौ करि हरि कौ, जब लौं तन-कुमलात।
कबहूँ कमला चपल पाइ कै, टेढैं टेढैं जात।
कबहूँ मग-मग धूरि बटोरत, भोजन कौं बिलखात।
॥ या देही कौ गरब करत[2], धन-जोबन के मदमात।
॥ हौं बड़, हौं बड, बहुत कहावत, सूधैं कहत न बात।
॥ बाद-बिवाद सबै दिन बीतैं, खेलत ही अरु खात।
॥ जेाग न जुक्ति, ध्यान नहिं पूजा, बिरध भएँ पछितात।

---

* (ना) बडहस।

† यह पद (शा) में नहीं है। भिन्न भिन्न प्रतियेा में इस पद के पाठ तथा चरणेा की संख्या में बड़ा भेद पाया जाता है। यह पद सूरदासजी के प्रसिद्ध पदेा में से है और बहुधा लेाग इसको गाते हैं। ये पाठ भेद तथा संख्या भेद इसी के परिणाम जान पड़ते हैं। इस संस्करण का पाठ निर्धारित करने में सभी प्रतियेा की सहायता ली गई है और अर्थ की संगति का अधिक ध्यान रक्खा गया है।

① ध्यान—१।

॥ ये चरण (स) में नहीं हैं।

② बावरौ (गवारौ) तदपि फिरत इतरात (अकुलात)—१, २, ८, १६।

॥ तातैं कहत सँभारहि रे नर, काहे कौं इतरात ?
॥ सूरदास भगवंत-भजन बिनु, कहूँ नाहिँ सुख गात ॥ २२ ॥

॥३६५॥

* राग सारंग

† गरब गोबिदहिँ भावत नाहीँ ।
कैसी करी हिरनकस्यप सौं, प्रगट होइ छिन माहीँ !
जग जानै करतूति कंस की, बृष मारचौ बल-बाहीँ ।
ब्रह्मा[1] इंद्रादिक पछिताने, गर्ब धारि मन माहीँ ।
जौबन-रूप-राज-धन-धरती जानि[2] जलद की छाहीँ ।
सूरदास हरि भजौ गर्ब तजि, बिमुख अगति[3] कौं जाहीँ ॥ २३ ॥

॥३६६॥

* राग कान्हरौ

बिषया[4] जात हरष्यौ गात ।
ऐसे अंध, जानि निधि[5] लूटत, परतिय सँग लपटात ।
बरजि रहे सब, कह्यौ न मानत, करि-करि जतन उड़ात ।
परै अचानक त्यौं रस-लंपट, तनु तजि जमपुर जात ।
यह तौ सुनी ब्यास के मुख तैं, परदारा दुखदात ।
रुधिर-मेद, मल-मूत्र, कठिन कुच, उदर[6] गंध-गंधात ।

॥ इन दो चरणों के स्थान पर (वे, स, का, ना, श्या) में ये दो चरण हैं—
"बालापन खेलत ही खोयौ
तरुनापै अलसात ।
सूरदास अवसर के बीते
रहिहौ पुनि पछितात ॥"

* (ना) कान्हरा । (क) टोडी ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

(१) ब्रह्मादिक नारद —३ । (२) बादर की सी—६, ८ । (३) नर्क—३ ।

* (ना) देवगधार ।

(४) मखिया मरि गईं ध्यौ खात १६ । मखिया जात मरख्यौ (ध्या) खात—१८ । (५) तैं मूरख —१, २, ३, १६ । मूरख जो—६, ८ । (६) तन दुर्गंध गँधात—२, ३, १८ ।

तन-धन-जोबन ता हित खोवत, नरक की पाछैं बात ।
जो[1] नर भलौ चहत तौ सो तजि, सूर स्याम[2] गुन गात ॥ २४ ॥
॥३६७॥

आत्मज्ञान * राग नट

† जौ लौं सत-सरूप नहिं सूझत ।
तौ लौं मृग[3] मद नाभि बिसारे, फिरत सकल बन बूझत ।
अपनौ[4] मुख मसि-मलिन मंदमति, देखत दर्पन माहीं ।
ता कालिमा मेटिबे कारन, पचत पखारत छाहीं ।
तेल-तूल-पावक-पुट भरि[5] धरि, बनै न बिना प्रकासत ।
कहत बनाइ दीप की बतियाँ, कैसैं धौं[6] तम नासत !
सूरदास यह[7] मति आए बिन, सब दिन गए अलेखे ।
कहा जानै दिनकर की महिमा, अध नैन बिन देखे ! ॥ २५ ॥
॥३६८॥

* राग नट

अपुनपौ आपुन[8] ही बिसरयौ ।
जैसैं स्वान काँच-मंदिर मैं, भ्रमि-भ्रमि भूकि मरयौ ।

---

① जो प्रभु चाहत हे सो तो —२ । ② प्रभू—१ । प्रगट—३ ।
* (ना) सारंग ।
† यह पद (शा) में नहीं है ।
③ मनमनि कंठ —२,३ ।
④ अपनो ही मुख मलिन—१, २, १६ । ⑤ धरि—२, ३ ।
⑥ ही—२, ३ । कें—१६ । ⑦ जब यह मति आवै वै दिन गए अलेखे—२, ३, ८ ।
* (ना) धनाश्री ।
⑧ आपहि मैं—३ । आपुहि ते बिगरयो—८ ।

॥ ज्यौं[1] सौरभ मृग-नाभि बसत है, द्रुम-तृन सूँघि[2] फिरचौ।
॥ ज्यौं सपने मैं रंक भूप भयौ, तसकर अरि पकरचौ।
ज्यौं केहरि प्रतिबिंब देखि कै, आपुन कूप परचौ।
जैसैं गज लखि फटिकसिला मैं, दसननि जाइ अरचौ।
मर्कट मूँठि छाँड़ि नहिं दीनी, घर-घर-द्वार फिरचौ।
सूरदास नलिनी कौ सुवटा[3], कहि कौनैं पकरचौ[4] ॥ २६ ॥
॥३६६॥

विराट-रूप-वर्णन

* राग केदारौ

नैननि निरखि स्याम-स्वरूप।
रह्यौ घट-घट[5] ब्यापि सोई, जोति-रूप अनूप।
चरन सप्त पताल जाके, सीस है आकास।
सूर-चंद्र-नछत्र-पावक, सर्ब तासु प्रकास ॥२७॥
॥३७०॥

आरती

* राग केदारौ

† हरि जू की आरती बनी।
अति बिचित्र रचना रचि राखी, परति न गिरा गनी।
कच्छप[6] अध आसन अनूप अति, डाँड़ी सहस[7]फनी।
मही सराव, सप्त सागर घृत, बाती सैल घनी।

॥ ये चरण (ना, स) में नहीं हैं।

(१) हरि—१, १६। हरि प्रभु तोही माहिं बससु है (हे प्रभु तोही माहिं बसत हौ) द्रुम तृन सोधि—६, ८। (२) सोधि सरयौ १६। (३) सुवना—२, ३, ८। (४) जकरयौ—।।

* (ना) सोरठ।

(५) घन—१६।

(ना) गौरी। (ना) धनाश्री। (को) सारंग।

† यह पद (शा) में नहीं है।

(६) कच्छवादि—२। (७) शेष फनी—१, २, ६, ८, १८, १६।

रवि-ससि-ज्योति जगत परिपूरन, हरति तिमिर रजनी ।
उड़त[1] फूल उड़गन नभ अतर, अंजन घटा घनी ।
नारदादि सनकादि प्रजापति, सुर-नर-असुर-अनी ।
काल-कर्म-गुन-ओर-अंत नहिँ, प्रभु इच्छा रचनी ।
॥ यह प्रताप दीपक सुनिरंतर, लोक सकल भजनी ।
सूरदास सब प्रगट[2] ध्यान मैं अति बिचित्र सजनी ॥२८॥

॥३७१॥

नृप-विचार

* राग गूजरी

श्री सुक के सुनि बचन, नृप, लाग्यौ करन विचार ।
झूठे नाते जगत के, सुत-कलत्र-परिवार ।
चलत न कोऊ सँग चलै, मोरि रहै मुख नारि ।
आवत गाढ़ै काम हरि, देख्यौ सूर बिचारि ॥२९॥

॥३७२॥

* राग गूजरी

† हरि बिनु कोऊ काम न आयौ ।
इहिँ माया झूठी प्रपंच लगि, रतन सौ जनम गँवायौ ।

---

(१) उडि उडि पतँग परत उडगन सब अवर—२ । उड़त फूल तेहि अतर तारे—६, ८ ।
॥ (वे, ना, का, ना, को, श्या) मैं इस चरण के पश्चात् यह एक पंक्ति कुछ पाठांतर से अधिक है—
जाकैं उदित नचत नाना बिधि गति अपनी अपनी ।

(२) प्रकृति धातु मय—१, १६ ।

* (ना) गौरी । (का ना, रा) सारंग । (को) आसावरी (ना) धनाश्री ।

† इस पद के पाठ तथा चरणों की संख्या में भिन्न भिन्न प्रतियों में अंतर है । इस संस्करण में विशेषत (वे) तथा (ना) का अनुसरण किया गया है । सामान्य पाठांतर अन्य प्रतियों से भी संकलित कर दिए गए हैं ।

कंचन-कलस, बिचित्र चित्र करि, रचि पचि भवन बनायौ ।
तामैं[१] तैं ततछनही काढ्यौ, पल भर[२] रहन न पायौ ।
॥ हौं तव[३] संग जरौंगी[४], यौं कहि, तिया धृति धन खायौ ।
॥ चलत रही चित चोरि, मोरि मुख, एक[५] न पग पहुँचायौ ।
बोलि बोलि सुत-स्वजन-मित्रजन, लीन्यौ सुजस सुहायौ ।
¶ परयौ जु काज अंत की बिरियाँ; तिनहुँ[६] न आनि छुड़ायौ ।
¶ आसा करि करि जननी जायौ, कोटिक लाड़ लड़ायौ ।
¶ तोरि लयौ कटिहू कौ डोरा, तापर बदन जरायौ ।
¶ पतित-उधारन, गनिका-तारन, सो मैं सठ बिसरायौ ।
लियौ न नाम कबहुँ धोखेहूँ, सूरदास पछितायौ ॥३०॥

॥३७३॥

* राग देवगंधार

सकल तजि, भजि मन चरन मुरारि ।
स्रुति, सुम्रिति[७], मुनि जन सब भाषत, मैं हूँ कहत पुकारि ।
जैसैं[८] सुपनैं सोइ देखियत, तैसैं यह संसार ।
जात बिलै ह्वै छिनक मात्र मैं, उघरत नैन-किवार ।

---

① छाँड़ि चले पछिताइ बहुत चित जम जब त्रास दिखायौ—८ । ② थिर—२ ।
॥ ये चरण (का) में नहीं हैं ।
③ तेरे सँग चलौं तिया कहि धृति धृति धन खायौ—२ । तेरे सँग जरिहौ यह कहि—१६ ।
④ चलौंगी—२, ३, ८ । ⑤ पग एकौ न पठायौ—३ ।
¶ ये चरण (रा) में नहीं हैं ।
⑥ केहु न आनि छुड़ायौ—८ । * (ना) देव साख ।
⑦ स्मृति अरु—१ ।
⑧ जैसो सुपना—२, ३, १६ । जैसे सपन रैन में देखत तैसो . —८ ।

बारंबार[1] कहत मैं तोसौं, जनम-जुआ जनि हारि।
पाछैं भई सु भई सूर जन, अजहूँ समुझि[2] सँभारि ॥३१॥
॥३७४॥

* राग गूजरी

† अजहूँ सावधान किन होहि।
माया बिषम भुजंगिनि कौ बिष, उतरयौ नाहिंन तोहि।
कृष्न सुमंत्र जियावन[3] मूरी, जिन जन[4] मरत जिवायौ।
बारंबार निकट स्रवननि ह्वै, गुरु-गारुड़ी सुनायौ।
॥ बहुतक[5] जीव देह अभिमानी, देखत ही इन खाया।
॥कोउ-कोउ उबरयौ साधु-संग, जिन स्याम[6] सजीवनि पायौ।
जाकौ[7] मोह-मैर अति छूटै, सुजस गीत के गाएँ।
सूर मिटै[8] अज्ञान-मूरछा, ज्ञान-सुभेषज[9] खाएँ ॥३२॥
॥३७५॥

श्री शुकदेव के प्रति परीक्षित-वचन

* राग गूजरी

नमो[10] नमो हे कृपानिधान।
चितवत कृपा-कटाच्छ तुम्हारैं, मिटि[11] गयौ तम-अज्ञान।

---

(१) बारै बार—१। (२) सुरति—२, ३, ६ ८, १६, १८, १६।

* (ना) ईमन। (का, ना, क) टोड़ी। (कौ) सारंग।

† यह पद (शा) मे नहीं है।

(३) सुधावन—२। (४) जग—१, २।

‖ य चरण (ना, स, क, रा) में नहीं हैं।

(५) भौतिक देह जीय अभिमानी देखत ही दुख लायो—१, १६। यह छनभग देह अभिमानी देखत ही दुख पायो—६, ८।

(६) राम—१, १६। (७) जाग्यौ—१, ३। (८) गई—३, ८, १८।

(९) मूरि के—१, १६।

(ना) काफी। (का, ना, कौ) केदार। (रा) देवगधार।

(१०) नमो नमो करुनानिधान—१, ६, ८, १६। नमो नमो हरि कृपानिधान—२। नमो नमो कृपानिधान (किरपानिधान)—३, १८। (११) छूटि गयो—२।

मोह-निसा कौ लेस रह्यौ नहि भयौ बिवेक-बिहान।
आतम-रूप सकल घट दरस्यौ, उदय कियौ[1] रवि-ज्ञान।
मैं-मेरो अब रही न मेरैं, छुट्यौ देह-अभिमान।
भावै परौ[2] आजुही यह तन, भावै रहौ अमान।
मेरैं जिय अब यहै लालसा, लीला श्री भगवान।
स्रवन करौं निसि-बासर हित सौं, सूर तुम्हारी आन ॥३३॥
॥३७६॥

श्री शुकदेव-वचन * राग सारंग

कह्यौ सुक, सुनौ परीच्छित राव।
ब्रह्म अगोचर मन-बानी तैं, अगम, अनंत-प्रभाव।
भक्तनि हित अवतार धारि जो करी लीला संसार।
कहौं ताहि जो सुनै[3] चित्त दै, सूर तरै सो पार ॥३४॥
॥३७७॥

शुकदेव-कथित नारद-ब्रह्मा-संवाद * राग बिलावल

† नारद ब्रह्मा कौं सिर नाइ। कह्यौ, सुनौ त्रिभुवन-पति[4]-राइ।
सकल सृष्टि यह तुमतैं होइ। तुम सम[5] द्वितिया और न कोइ।

---

① भयौ अब ज्ञान—२।
② बरै—३
* (का) बिहागरो।
③ सुनै चित्त दै सूर तरै भव पार—६, ८।
④ (ना) बिभास। (कां) सारंग।
† (ना, स, का, ना) में इस पद के आदि में ये दो अतिरिक्त चरण मिलते हैं—
सुक कह्यौ हरि लीला ज्यौं व्यास।
कही सु कहौं सुनौ अब तास॥
⑧ के—८। ⑤ तेदूसर—८।

तुमहूँ[1] धरत कौन कौ ध्यान ? यह तुम मोसौं करौ[2] बखान ।
कह्यौ, करता-हरता भगवान । सदा करत मैं तिनकौ ध्यान ।
नारद सौं कह्यौ बिधि जिहिं[3] भाइ । सूर कह्यौ त्यौं ही सुक गाइ ॥३५॥

॥३७८॥

चतुर्विंशति अवतार-वर्णन

ब्रह्मा-वचन नारद के प्रति * राग धनाश्री

जो हरि करै सो होइ, करता राम हरो ।
ज्यौं दरपन-प्रतिबिंब, त्यौं सब सृष्टि करी ।
आदि निरंजन, निराकार, कोउ हुतौ न दूसर ।
रचौं सृष्टि-बिस्तार, भई इच्छा इक औसर ।
त्रिगुन प्रकृति तैं महत्तत्व, महत्तत्व तैं अहँकार ।
मन-इंद्री-सब्दादि-पँच, तातैं कियौ बिस्तार ।
सब्दादिक तैं पंचभूत सुंदर प्रगटाए ।
पुनि सबकौ रचि अंड, आपु मैं आपु समाए ।
तीनि लोक निज देह मैं, राखे करि बिस्तार ।
आदि पुरुष सोई भयो, जो प्रभु अगम अपार ।
नाभि-कमल तैं आदि पुरुष मोकौं प्रगटायो ।
खोजत जुग गए बीति, नाल कौ अंत न पायो ।
तिन[4] मोकौं आज्ञा करी, रचि सब सृष्टि बनाइ[5] ।

---

① हौ—१, १६ । ② कहौ —१, २, ८ । ③ या—१, २, ८ । जा—१८, १६ ।

* (ना) परज । (कां) आसावरी ।

④ तब—२, ३ । ⑤ उपाइ —१, १६ ।

थावर-जंगम, सुर-असुर, रचे सबै मैं आइ ।
मच्छ, कच्छ, बाराह, बहुरि नरसिंह रूप धरि ।
बामन, बहुरौ परसुराम, पुनि राम रूप करि ।
बासुदेव सोई भयौ, बुद्ध[1] भयौ पुनि सोइ ।
सोई कल्की होइहैं, और न द्वितिया कोइ ।
ये दस हरि-अवतार, कहे पुनि और चतुरदस ।
भक्तबछल भगवान, धरे तन भक्तनि कैं बस ।
अज, अविनासी, अमर प्रभु, जनमै-मरै न सोइ ।
नटवत[2] करत कला सकल, बूझै बिरला कोइ ।
सनकादिक, पुनि ब्यास, बहुरि भए हंस रूप हरि ।
पुनि नारायन, ऋषभदेव, नारद, धनवंतरि ।
दत्तात्रेयऽरु[3] पृथु बहुरि, जज्ञपुरुष-बपु धार ।
कपिल, मनू[4], हयग्रीव पुनि, कीन्हौ ध्रुव अवतार ।
भूमिरेनु कोउ गनै, नछत्रनि गनि समुझावै ।
कह्यौ चहैं अवतार, अंत सोऊ नहिं पावै ।
सूर कहौ क्यौं कहि सकै, जन्म-कर्म-अवतार ।
कहे कछुक गुरु-कृपा तैं श्रीभागवतऽनुसार ॥ ३६ ॥

॥३७६॥

---

① बोध—१६ । ② नटवर—१ । ③ नारद दत्तात्रेय हरि जज्ञ पुरुष—१ । ④ मोहिनी पृथु हयग्रीव सु—१ । मोहिनी हयग्रीव ह्वे—१६ ।

ब्रह्मा की उत्पत्ति * राग बिलावल

ब्रह्मा यौं[1] नारद सौं कह्यौ। जब मैं नाभि-कमल मैं रह्यौ।
खोजत नाल कितौ जुग गयो। तौहू मैं कछु मरम न लयो।
भई अकास बानी तिहिं बार। तू ये चारि श्लोक बिचार।
इन्हैं बिचारत ह्वैहै ज्ञान। ऐसी भाँति कह्यौ भगवान।
ब्रह्मा सो नारद सौं कहे। ब्यास सोइ नारद सौं लहे।
ब्यास कह्यौ मोसौं बिस्तार। भयो भागवत या परकार।
सोई अब मैं तोसौं भाषौं। तेरे हृदै न संसय राखौं।
मूल भागवत के येइ चारि। सूर भली बिधि इन्हैं बिचारि ॥३७॥

॥३८०॥

चतुःश्लोक श्रीमुख-वाक्य ❀ राग कान्हरौ

पहिले हौं ही हो तब[2] एक।
अमल, अकल, अज, भेद-बिवर्जित, सुनि[3] बिधि बिमल बिवेक।
सो हौं एक अनेक भाँति करि सोभित नाना भेष।
ता पाछैं इन गुननि गए तैं, हौं रहिहौं[4] अवसेष।
सत मिथ्या, मिथ्या सत लागत, मम माया सो जानि।
रवि[5], ससि, राहु सँजोग बिना ज्यौं, लीजतु है मन मानि।
ज्यौं गज फटिक मध्य न्यारो बसि, पंच प्रपंच बिभूत।
ऐसैं मैं सबहिनि तैं न्यारो, मनिनि[6] ग्रथित ज्यौं सूत।

---

* (ना) बिभास। (ना) भैरव। ३। ④ जु रहौं—२, ३। ⑤ ह्वै
① पुनि—६, ८, १६। ② बपु—२। ③ इहिं—२। २, ३। ⑥ मनि ग्रथित—२, ३।

॥ ज्यौं जल मसक जीव-घट अंतर, मम माया इमि जानि।
॥ सोई जस सनकादिक गावत, नेति नेति कहि मानि।
प्रथम ज्ञान, बिज्ञानक द्वितिय मत[1], तृतिय भक्ति कौ भाव।
सूरदास सोई समष्टि[2] करि, ब्यष्टि दृष्टि मन लाव ॥३८॥
॥३८१॥

॥ ये चरण (वे, ना, स, रा) में नहीं हैं।

(१) पद—१, १६। मन—८। ल्याव—२। मधुर मिष्ट रस गृष्ट

(२) सम सुनियत गुप्त दृष्टि में दृष्ट मन लाव—६, ८।

तृतीय स्कंध

श्री शुक-वचन

* राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
सुकदेव हरि-चरननि सिर[1] नाइ । राजा सौं बोल्यौ[2] या भाइ ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ । सूर तरौ[3] हरि के गुन गाइ ॥१॥

॥३८२॥

उद्धव का पश्चात्ताप

राग सोरठि

† हरि जु सौं अब मैं कहा कहौं ?
प्रभु अंतरजामी सब जानत, हौं सुनि सोचि रहौं ।
आयसु दियौ, जाउ बदरीबन, कहैं सो कियौ चहौं ।
तन-मन-बुधि जड़ देह दयानिधि, क्यौं करि लै निबहौं ?
अपनी करनी बिचारि गुसाईं, काहे न सूल सहौं ।
मैं इहिं ज्ञान ठगीं ब्रजबनिता, दियौ सु क्यौं न लहौं ?
प्रगट पाप-संताप सूर अब, कापर हठै गहौं ?
और इहाँउ बिवेक-अगिनि के बिरह-बिपाक दहौं ॥२॥

॥३८३॥

---

* (ना) विभास ।

① चित लाइ—१ । ② बोले—२, ८ । ③ दास—२, ३ ।

† यह पद केवल (वे, ना का) में है । (ना) में यह इसी स्थान पर है किंतु (वे, का) में एकादश स्कंध में आता है । भागवत के अनुसार इसका यहीं रक्खा जाना उचित है ।

राग सोरठि

† तुम्हरी गति न कछु कहि जाइ ।
दीनानाथ, कृपाल, परम सुजान जादोराइ ।
कहत पठवन बदरिका मोहिं, गूढ ज्ञान सिखाइ ।
सकुचि साहस करत मन मैं, चलत परत न पाइ ।
पिनाकहु के दंड लौं तन, लहत बल सतराइ ।
कहा करौं चित चरन अटक्यौ, सुधा-रस कैं चाइ ।
मेरी है इहिं देह कौ हरि, कठिन सकल उपाइ ।
सूर सुनत न गयो नवहों खंड-खंड नसाइ ॥ ॥

॥३८४॥

मैत्रेय-विदुर-संवाद

* राग बिलावल

‡ जब हरि जू भए अंतर्धान । कहि ऊधव सौं तत्त्वज्ञान ।
कह्यौ मयत्रेय सौं समुझाइ । यह तुम बिदुरहिं कहियो जाइ ।
बदरिकासरम दोउ मिलि आइ[1] । तीरथ करत[2] दोउ[3] अलगाइ ।
ऊधव-बिदुर तहाँ मिलि गए । दोऊ कृष्न-प्रेम-बस[4] भए ।
ऊधव कह्यौ, हरि कह्यौ जो ज्ञान । कहिहैं तुम्हैं मयत्रेय आन ।
यह कहि ऊधव आगैं चले । बिदुर मयत्रेय बहुरो मिले ।

---

† यह पद केवल (ना) में है ।

* (ना) सोरठि ।

‡ अ सूरदास मैत्रेय-विदुर-संवाद बदरिकाश्रम में कराते हैं । परंतु भागवत में वह हरिद्वार में गंगा तट पर हुआ है । कवि ने इस पद में विदुर से उद्धव की भेंट भी इसी स्थान पर कराई है किंतु भागवत के अनुसार वह यमुना-तट पर हुई थी ।

(१) आए—१, १६ । (२) कृत कीन्हीं अपकाइ—६, ८ । (३) गए अकुलाए—१, १६ । (४) रस छए—२, ३ । रस भए—१६ ।

जो कछु हरि सौं सुन्यौ[1] सुज्ञान । कह्यौ मयत्रेय ताहि बखान ।
सोइ मोहिँ दियो व्यास सुनाइ । कहौं सो सूर सुनौ चित लाइ ॥४॥
॥३८५॥

विदुर-जन्म * राग बिलावल

बिदुर [2]सु धर्मराइ अवतार । ज्यौं भयो, कहौं, सुनौ चितधार ।
मांडव ऋषि जब सूलो दयो । तब सो काठ हरौ ह्वै गयो ।
मांडव धर्मराज पै आयो । क्रोधवंत यह बचन सुनायो ।
कौन पाप मैं ऐसो कियो । जातैं मोकौं सूली दियो ।
धर्मराज कह्यौ, सुनु ऋषिराइ । छमा करौ तौ देउँ बताइ ।
बाल-अवस्था मैं तुम धाइ । उड़ति भँभीरी पकरी जाइ ।
ताहि सूल पर सूली दयो । ताको बदलो तुमसों लयो ।
ऋषि कह्यो, बाल-दसा अज्ञान । भयो पाप मोतैं बिनु जान ।
बालापन कौ लगत न पाप । तातैं देउँ तुम्हैं मैं साप ।
दासी-पुत्र होहु तुम जाइ । सूर बिदुर भयो सो इहिँ[3] भाइ ॥ ५ ॥
॥३८६॥

सनकादिक-अवतार ❀ राग बिलावल

ब्रह्मा ब्रह्मरूप उर धारि । मन सौं प्रगट किए सुत चारि ।
सनक, सनंदन, सनतकुमार । बहुरि सनातन नाम ये चार ।
ये चारौं जब ब्रह्मा किए । हरि कौ ध्यान धरयौ तिन हिये ।
ब्रह्मा कह्यौ, सृष्टि बिस्तारौ । उन यह बचन हृदय नहिँ धारौ ।

---

① सुनियो ज्ञान—१,२,११ । ② ह्वै—८ । ③ या—२, ८, ११ । (ना) विभास ।
* (ना) विभास ।

कह्यौ, यहै हम तुमसौं चहैं। पाँच बरष के नितहीं रहैं।
ब्रह्मा सौं तिन यह बर पाइ। हरि-चरननि चित राख्यौ लाइ।
सुकदेव कह्यौ जाहि[1] परकार। सूर कह्यौ[2] ताही अनुसार ॥ ६ ॥

॥३८७॥

रुद्र-उत्पत्ति * राग बिलावल

सनकादिकनि कह्यौ नहिं मान्यौ। ब्रह्मा क्रोध बहुत मन आन्यौ।
तब इक पुरुष भौंह तैं भयौ। होत समय तिन रोदन ठयौ।
ताकौं नाम रुद्र बिधि राख्यौ। तासौं सृष्टि करन कौं भाख्यौ।
तिन बहु सृष्टि तामसी करी। सो तामस करि मन अनुसरी।
ब्रह्मा मन सो भली न भाई। सूर सृष्टि तब और उपाई ॥ ७ ॥

॥३८८॥

सप्तऋषि, दक्ष प्रजापति तथा स्वायंभुव मनु की उत्पत्ति ❀ राग बिलावल

ब्रह्मा सुमिरन करि हरि-नाम। प्रगटे[3] रिषय सप्त अभिराम।
भृगु, मरीचि, अंगिरा, बसिष्ठ। अत्रि[4], पुलह, पुलस्त्य अति सिष्ठ।
॥ पुनि दच्छादि प्रजापति भए। ॥स्वायंभुव[5] सो आदि मनु जए।
इनतैं प्रगटी सृष्टि अपार। सूर कहाँ लौं करै बिस्तार ॥ ८ ॥

॥३८९॥

---

① जैसे—१, २, १८, १९। जेही—८। ② कहै—१, १९।
* (ना) भैरवी।
(ना) भैरवी।
③ प्रगट किए रिषि—१, २, १८, १९। ④ अत्रि [पुलह पुनि भयौ पुलस्त्य—१, २, ३, ६, ८, १९।
॥ (का, ना) में ये दो चरण नहीं हैं। उनके स्थान पर ये चार चरण हैं।
कश्यप गौतम विश्वामित्र। भरद्वाज वशिष्ठ पुनि अत्र। सप्तम रिषि जमदग्नि भए। श्या (शिव) शंभू और चारि मुनि भए॥
⑤ स्वयंभु आदि चारि मनु जए—१ ३,१९। शंभु आदि चारि मुनि भए—२,१६। श्यौ (शिव) शंभू और चार मुनि भए—६, ८।

सुर-असुर उत्पत्ति * राग बिलावल

ब्रह्मा रिषि मरीचि निर्मायौ[1]। रिषि मरीचि कस्यप उपजायौ।
सुर अरु असुर कस्यप के पुत्र। भ्रात बिमात[2] आपु मैं सत्रु।
सुर हरि-भक्त, असुर हरि-द्रोही। सुर अति छमी, असुर अति कोही।
उनमैं नित उठि होइ लराई। करैं सुरनि की कृष्न सहाई।
तिन हित जो-जो किये अवतार। कहौं सूर भागवतऽनुसार॥ ६ ॥

॥३६०॥

वाराह-अवतार * राग बिलावल

ब्रह्मा सौं स्वयंभु मनु भयौ। तासौं सृष्टि करन कौं कह्यौ।
तिन ब्रह्मा सौं कह्यो सिर नाइ। सृष्टि करौं सो रहै किहिं भाइ?
ब्रह्मा हरि-पद ध्यान लगायौ। तब[3] हरि बपु-बराह धरि आयौ।
ह्वै बराह पृथ्वी ज्यौं ल्यायौ। सूरदास त्यौंही सुक[4] गायौ॥१०॥

॥३६१॥

जय-विजय की कथा × राग धनाश्री

हरि-गुन-कथा अपार, पार नहिं पाइयै।
हरि सुमिरत सुख होइ, सु हरि-गुन गाइयै।
ब्रह्म-पुत्र सनकादि, गए बैकुंठ एक दिन।
द्वारपाल जय-विजय हुते, बरज्यो तिनकौं तिन।

---

*[1] (ना) भरवी। (१) बिरचायौ—१६। (२) द्विमात—६, ८।
* (ना) भैरवी।
[3] छीकत हरि बपु-बराह धरि आयौ—३, १८। ह्वै बराह बिधि नाक तैं आयौ—१६। (४) गुन—२।
× (ना) खमाइच। (का) बिलावल।

साप दियौ तब क्रोध ह्वै असुर होहु संसार।
हरि-दरसन कौं जात क्यौं रोक्यौ बिना बिचार?
हरि तिनसौं कह्यौ आइ, भली सिच्छा तुम दीनी।
बरज्यौ आवत तुम्हैं, असुर-बुधि इन यह कीनी।
तिन्हैं कह्यौ, संसार मैं असुर होहु अब जाइ।
तीजे[1] जनम बिरोध करि, मोकौं मिलिहौ आइ।
कस्यप की दिति नारि, गर्भ ताकैं दोउ आए।
तिनकैं तेज-प्रताप, देवतनि बहु दुख पाए।
गर्भ माहिं सत बर्ष रहि, प्रगट भए पुनि आइ।
तिन दोउनि कौं देखि कै, सुर सब गए डराइ।
हिरन्याच्छ इक भयौ, हिरनकस्यप भयौ दूजौ।
तिन के बल कौं इंद्र, बरुन, कोऊ नहिं पूजौ।
हिरन्याच्छ तब पृथी कौं, लै राख्यौ पाताल।
ब्रह्मा बिनती करि कह्यौ, दीनबंधु गोपाल!
तुम बिनु द्वितिया और कौन, जो असुर सँहारै।
तुम बिनु करुनासिंधु, और को पृथी उधारै?
तब हरि धरि बाराह-बपु, ल्याए पृथी उठाइ।
हिरन्याच्छ लै कर गदा, तुरतहिं पहुँच्यौ जाइ।
असुर क्रोध ह्वै कह्यौ, बहुत तुम असुर सँहारे।
अब लैहौं वह दाउँ, छाँड़िहौं नहिं बिन मारे।

---

① तृतिय जनम करिकै

बिरुध—२, ३।

यह कहिकै मारी गदा, हरि जू ताहि सम्हारि ।
गदा-जुद्ध तासौं कियौ, असुर न मानै हारि ।
तब ब्रह्मा करि बिनय कह्यौ, हरि, याहि[1] सँहारौ ।
तुम तौ लीला करत, सुरनि मन परयौ खँभारौ[2] ।
मारयौ ताहि प्रचारि[3] हरि, सुर-मन भयौ हुलास ।
सूरदास के प्रभु बहुरि, गए बैकुंठ-निवास ॥११॥

॥३६२॥

राग बिलावल

† स्वायंभुव मनु[4] सुत भए दोइ । तनया तीनि, सुनौ अब सोइ ।
दच्छ प्रजापति कौं इक दई । इक रुचि, इक कर्दम-तिय भई ।
कर्दम कैं भयौ कपिलऽवतार । सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥१२॥

॥३६३॥

कपिलदेव-अवतार तथा कर्दम का शरीर-त्याग * राग बिलावल

हरि हरि हरि सुमिरन नित करौ । हरि कौ ध्यान सदा हिय धरौ ।
ज्यौं भयौ कपिलदेव-अवतार । कहौं सो कथा, सुनौ चित धार ।
कर्दम पुत्र-हेत तप कियौ । तासु नारिहूँ यह ब्रत लियौ ।
हरि-सौ पुत्र हमारैं होइ । और जगत-सुख चहैं[5] न कोइ ।

---

① ताहि—१, २, ३, ६, ८, १६ । ② धकारौ—१ । गम्हारौ—३ । दुखारौ—६, ८ १६ । ③ बिचारि—१ । पछारि—६, ८, १६ ।

† यह पद (ल, शा, का, ना, कां, रा) में है । (स) में यह संख्या १३ के पद में सम्मिलित कर दिया गया है ।

④ स्वांभू मनु के—६, ८ । * (ना) विभास ।

⑤ सुखहू पुनि (होइ) सोइ—१, २, ३, १८, १६ ।

नारायन तिनकौं बर दियौ। मोसौं और न कोऊ बियौ।
मैं लैहौं तुम गृह अवतार। तप तजि, करौ भोग संसार।
दुहुँ तब तीरथ माहिँ नहाए। सुंदर रूप दुहूँ जन पाए।
भोग-समग्री जुरो अपार। बिचरन लागे सुख-संसार।
तिनके कपिलदेव सुत भए। परम सुभाग्य मानि तिन लए।
कर्दम कह्यौ तिन्हैं सिर नाइ। आज्ञा होइ, करौं तप जाइ।
अभिद अछेद रूप मम जान। जो सब घट है एक समान।
मिथ्या तनु कौ मोह बिसार। जाहु रहौ भावै गृह-बार।
करत इंद्रियनि चेतन जोइ। मम स्वरूप जानौ तुम सोइ।
जब मम रूप देह तजि जाइ। तब सब इंद्री-सक्ति नसाइ।
ताकौं जानि मग्न ह्वै रहै। देहऽभिमान ताहि नहिँ दहै।
तन-अभिमान जासु नसि जाइ। सो नर रहै सदा सुख पाइ।
और जो ऐसी जानै नाहिँ। रहै सो सदा काल-भय माहिँ।
यह सुनि कर्दम बनहिँ सिधाए। उहाँ जाइ हरि-पद चित लाए।
हरि-स्वरूप सब घट यौं जान्यौ। ऊख माहिँ ज्यौं रस है सान्यौ।
खोई[1] तन, रस आतम-सार। ऐसी बिधि जान्यौ निरधार।
यौं लखि, गहि हरि-पद-अनुराग। मिथ्या तनु कौ कीन्यौ त्याग।
तनहिँ त्यागि कै हरि-पद पायौ। नृप सुनि हरि-स्वरूप उर ध्यायौ।

देवहूति-कपिल-संवाद

इहाँ कपिल सौं माता कह्यौ। प्रभु मेरौ अज्ञान तुम दहौ।
आतमज्ञान देहु समुझाइ। जातैं जनम-मरन-दुख जाइ।

---

(१) जोयो—१,१६। छोई—२।

कह्यो कपिल, कहौं तुमसौं ज्ञान। मुक्त होइ नर ताकौं जान।
मुक्त[1] नरनि के लच्छन कहौं। तेरे सब संदेहै दहौं।
मम सरूप जो सब घट जान। मगन रहै तजि[2] उद्यम आन।
अरु सुख-दुख कछु मन नहिँ ल्यावै। माता, सो नर मुक्त कहावै।
और जो मेरौ रूप न जानै। कुटुँब-हेत नित उद्यम ठानै।
जाकौ इहिँ बिधि जन्म सिराइ। सो नर मरिकै नरकहिँ जाइ।
ज्ञानी-संगति उपजै ज्ञान। अज्ञानी-सँग होइ अज्ञान।
तातैँ साधु-संग नित करना। जातैँ मिटै जन्म अरु मरना।
थावर-जंगम मैँ मोहिँ जानै। दयासील, सब सौं हित मानै।
सत-संतोष दृढ करै समाधि। माता ताकौं कहियै साध।
काम, क्रोध, लोभहिँ परिहरै। द्वंद-रहित, उद्यम नहिँ[3] करै।
ऐसे लच्छन हैँ जिन माहिँ। माता, तिनसौं साधु कहाहिँ।
जाकौं काम-क्रोध नित ब्यापै। अरु पुनि लोभ सदा संतापै।
ताहि असाधु कहत सब[4] लोइ। साधु-बेष धरि साधु न होइ।
संत सदा हरि के गुन गावैँ। सुनि-सुनि लोग भक्ति कौं पावैँ।
भक्ति पाइ पावैँ हरि-लोक। तिन्हैँ न ब्यापै हर्ष अरु सोक।

भक्ति-विषयक प्रश्नोत्तर

देवहूति कह, भक्ति सो कहियै। जातैँ हरि-पुर बासा लहियै।
अरु सो भक्ति कीजै किहिँ भाइ। सोऊ मो कहँ देहु बताइ।

---

① मुक्ति बिबिध—१। मुक्ति बुद्धि—२, ६, ८, १८। ② निज उद्दिम आनि (ठानि)—१८, १६। ③ बहु—२ नित—१६। ④ कवि—१, ६, ८।

माता, भक्ति चारि परकार । सत, रज, तम गुन, सुद्धा[1] सार ।
भक्ति एक, पुनि बहु बिधि होइ । ज्यौं जल रँग-मिलि रंग सु होइ ।
भक्ति सात्विकी, चाहत मुक्ति । रजोगुनी, धन-कुटुँब अनुरक्ति ।
तमोगुनी, चाहै या भाइ । मम बैरी क्यौंहूँ मरि जाइ ।
सुद्धा भक्ति मोहिं कौं चाहै । मुक्तिहुँ कौं सो नहिं अवगाहै ।
मन-क्रम-बच मम सेवा करै । मन तैं सब आसा परिहरै ।
ऐसौ भक्त सदा मोहिं प्यारौ । इक छिन नातैं रहौं न न्यारौ ।
ताकौं जो हित, मम हित सोइ । ता सम मेरैं और न कोइ ।
त्रिबिध भक्त मेरे हैं जोइ । जो माँगै तिहिं देउँ मैं सोइ ।
भक्त अनन्य कछू नहिं माँगै । तातैं मोहिं सकुच अति लागै ।
ऐसौ भक्त सु ज्ञानी होइ । ताके सत्रु-मित्र नहिं कोइ ।
हरि-माया सब जग संतापै । ताकौं माया-मोह न ब्यापै ।
कपिल, कहौ हरि को निज रूप । अरु पुनि माया कौन स्वरूप ?
देवहूति जब या बिधि कह्यौ । कपिलदेव सुनि अति सुख लह्यौ ।
कह्यौ, हरि कैं भय रबि-ससि फिरै[2] । बायु बेग अतिसै[3] नहिं करै ।
अगिनि दहै[4] जाकैं भय नाहिं[5] । सो हरि[6] माया जा बस माहिं ।
माया कौं त्रिगुनात्मक जानौ । सत-रज-तम ताके गुन मानौ ।
तिन प्रथमहिं महतत्व उपायौ । तातैं अहंकार प्रगटायौ ।

---

(१) सुधा रसार—२ । सुधा प्रसार—६, ८ । तिनका सार—१६ । (२) डरे—१ । (३) सबै—६, ८ । (४) रहै—१, २, ३, ६, ८, १६ । (५) माहि—१, २, ३, ६, ८ । (६) माया हरि जा बस नाहिं—६, ८ ।

अहंकार कियौ तीनि प्रकार । सत[1] तैं मन सुर सातऽरुचार ।
रजगुन तैं इंद्रिय बिस्तारी । तमगुन तैं तन्मात्रा[2] सारी ।
तिनतैं पंचतत्व उपजायौ । इन सबकौ इक अंड बनायौ ।
अंड सो जड़ चेतन नहिं होइ । तब हरि-पद-छाया मन पोइ ।
ऐसी बिधि बिनती अनुसारी । महाराज बिन सक्ति तुम्हारी ।
यह अंडा चेतन नहिं होइ । करहु कृपा सो चेतन होइ ।
तामैं सक्ति आपनी धरी । चच्छ्वादिक इंद्री बिस्तरी ।
चौदह लोक भए ता माहिं । ज्ञानी ताहि बिराट कहाहिं ।
आदि पुरुष चेतन कौं कहत । तीनौं[3] गुन जामैं नहिं रहत ।
जड स्वरूप सब माया जानौ । ऐसौ ज्ञान हृदै मैं आनौ ।
जब लगि है जिय मैं अज्ञान । चेतन कौं सो सकै न जान ।
सुत-कलत्र कौं अपनौ जानै । अरु तिनसौं ममत्व बहु ठानै ।
ज्यौं कोउ दुख-सुख सपनैं जोइ । सत्य मानि लै ताकौं सोइ ।
जब जागै तब सत्य न मानै । ज्ञान भऐं त्यौंही जग जानै ।
चेतन घट-घट है या भाइ । ज्यौं घट-घट रवि-प्रभा लखाइ ।
घट उपजै, बहुरौ नसि जाइ । रवि नित रहै एकहीं भाइ ।
जड़ तन कौं है जनमऽरु मरना । चेतन पुरुष अमर-अज बरना ।
ताकौं ऐसौ जानै जोइ । ताकौ तिनसौं मोह न होइ ।
जब लौं ऐसौ ज्ञान न होइ । बरन-धरम कौं तजै न सोइ ।

---

① मन ते रिषि मन—१ । सत गुन तैं सुर—२ । ② पुनि मात्रा—६, ८ । ③ जो है तिहूँ गुनन तैं रहित—१, १६ ।

संतनि की संगति नित करै। पापकर्म मन तैं परिहरै।
अरु भोजन सो इहिं बिधि करै। आधौ उदर अन्न सौं भरै।
आधे मैं जल-बायु समावै। तब तिहिं आलस कबहुँ न आवै।
अरु जो परालब्ध सौं आवै। ताही कौं सुख सौं बरतावै।
बहुतै कौ उद्यम परिहरै। निर्भय ठौर बसेरौ करै।
तीरथ हू मैं जो भय होइ। ताहू ठाउँ परिहरै सोइ।
बहुरौ धरै हृदय महँ ध्यान। रूप चतुरभुज स्याम सुजान।
प्रथमैं चरन-कमल कौं ध्यावै। तासु महातम मन मैं ल्यावै।
गंगा प्रगट[1] इनहिं तैं भई[2]। सिव सिवता इनहीं तैं लई[3]।
लछमी इनकौं सदा पलोवै। बारंबार प्रीति करि जोवै।
जंघनि कौं कदली सम जानै। अथवा कनकखंभ सम मानै।
उर अरु ग्रीव बहुरि हिय धारै। तापर कौस्तुभ मनिहिं बिचारै।
तहँ[4] भृगु-लता, लच्छमी जान। नाभि-कमल चित धारै ध्यान।
मुख मृदु-हास देखि सुख पावै। तासौं प्रेम-सहित मन लावै।
नैन कमल-दल से अनियारे। दरसत तिन्हैं कटैं दुख भारे।
नासा-कीर, परम अति सुंदर। दरसत ताहि मिटै दुख-द्वंदर।
कूप समान स्रौन दोउ जानै। मुख कौ ध्यान याहि बिधि ठानै।
केसर-तिलक-रेख अति सोहै। ताकी पटतर कौं जग को है?
मृगमद-बिंदा तामैं राजै। निरखत ताहि काम सत लाजै।

---

(१) परसि उनहिं को—१, ८। (२) लहै—३। लही—६, हिय भृगुलता औ लछमी—८। १४। (२) बहै—३। बही—६, ८। (४) भृगुलत्ता लछमी तहँ—१। भृगु की लता श्री तहाँ १४।

मोर-मुकुट, पीतांबर सोहै। जो देखै ताकौ मन मोहै।
स्रवननि कुंडल परम मनोहर। नख-सिख ध्यान धरै यौं उर धर।
क्रम-क्रम करि यह ध्यान बढ़ावै। मन कहुँ जाइ,फेरि तहँ ल्यावै।
ऐसैं करत मगन रहै सोइ। बहुरौ ध्यान सहज ही होइ।
चितवत चलत न चित तैं टरै। सुत-तिय-धन की सुधि बिसमरै।
तब आतम घट-घट दरसावै। मगन होइ, तन-सुधि बिसरावै।
भूख प्यास ताकौं नहिं ब्यापै। सुख-दुख तनिकौ तिहिं न सँतापै।
जीवन-मुक्त रहै या भाइ। ज्यौं जल-कमल अलिप्त रहाइ।

चतुर्विध भक्ति

देवहूति यह सुनि पुनि कह्यौ। देह-ममत्व घेरि मोहिं रह्यौ।
कर्दम-मोह न मन तैं जाइ। तातैं कहियै सुगम उपाइ।
कपिल कह्यौ, तो हौं भक्ति सुनाऊँ। अरु ताकौ ब्यौरौ समुझाऊँ।
मेरी भक्ति चतुर्बिध करै। सनै-सनै तैं सब निस्तरै।
ज्यौं कोउ दूरि चलन कौं करै। क्रम-क्रम करि डग-डग पग धरै।
इक दिन सो उहाँ पहुँचै जाइ। त्यौं मम भक्त मिलै मोहिं आइ।
चलत पंथ कोउ थाक्यौ होइ। कहैं दूरि, डरि मरिहै सोइ।
जो कोउ ताकौं निकट बतावै। धीरज धरि सो ठिकानैं आवै।
तमोगुनी रिपु मरिबौ चाहै। रजोगुनी धन कुटुंब उछगाहै।
भक्त सात्विकी सेवै संत। लखै तिन्हैं मूरति भगवंत।
मुक्ति-मनोरथ मन मैं ल्यावै। मम प्रसाद तैं सो वह पावै।
निर्गुन मुक्तिहुँ कौं नहिं चहै। मम दरसन ही तैं सुख लहै।

ऐसौ भक्त सुमुक्त कहावै । सो बहुरचौ भव-जल नहिँ आवै ।
क्रम-क्रम करि सबकी गति होइ । मेरौ भक्त नसै नहिँ कोइ ।

हरि-विमुख की निंदा

हरि तैँ बिमुख होइ नर जोइ । मरिकै नरक परत है सोइ ।
तहाँ जातना बहु बिधि पावै । बहुरौ चौरासी मैँ आवै ।
चौरासी भ्रमि, नर-तन पावै । पुरुष-वीर्य सौँ तिय उपजावै ।
मिलि रज-वीर्य बेर-सम होइ । द्वितिय मास सिर धारै सोइ ।
तीजे मास हस्त-पग होहिँ । चौथ मास कर-अँगुरी सोहि ।
प्रान-बायु पुनि आइ समावै । ताकौँ इत-उत पवन चलावै ।
पंचम मास हाड़ बल पावै । छठैँ मास इंद्री प्रगटावै ।
सप्तम चेतनता लहै सोइ । अष्टम मास सँपूरन होइ ।
नीचैँ सिर अरु ऊँचैँ पाव । जठर अग्नि कौ ब्यापै ताव ।
कष्ट बहुत सो पावै उहाँ । पूर्वजन्म-सुधि आवै तहाँ ।
नवम मास पुनि बिनती करै । महाराज, मम दुख यह टरै ।
ह्याँ तैँ जौ मैँ बाहर परौँ । अहनिसि भक्ति तुम्हारी करौँ ।
अब मोपै प्रभु, कृपा करीजै । भक्ति अनन्य आपुनी दीजै ।
अरु यह ज्ञान न चित तैँ टरै । बार-बार यह बिनती करै ।
दसम मास पुनि बाहर आवै । तब यह ज्ञान सकल बिसरावै ।
बालापन दुख बहु बिधि पावै । जीभ बिना कहि कहा सुनावै ।
कबहूँ बिष्ठा मैँ रहि जाइ । कबहूँ माखी लागैँ आइ ।
कबहूँ जुवाँ देहिँ दुख भारी । तिनकौँ सो नहिँ सकै निवारी ।
पुनि जब षष्ठ बरष कौ होइ । इत उत खेल्यौ चाहै सोइ ।

माता-पिता निवारैं जबहीं । मन मैं दुख पावै सो तबहीं ।
माता-पिता पुत्र तिहिं जानैं । वहऊ उनसौं नातौ मानै ।
बर्ष ब्यतीत दसक जब होइ । बहुरि किसोर होइ पुनि सोइ ।
सुंदर नारी ताहि बिवाहै । असन-बसन बहुबिधि सो चाहै ।
बिना भाग सो कहाँ तैं आवै । तब वह मन मैं बहु दुख पावै ।
पुनि लछमी-हित उद्यम करै । अरु जब उद्यम खाली परै ।
तब वह रहै बहुत दुख पाइ । कहँ लौं कहौं, कह्यौ नहिं जाइ ।
बहुरौ ताहि बुढापौ आवै । इंद्री-सक्ति सकल मिटि जावै ।
कान न सुनै, आँखि नहिं सूझै । बात कहैं सो कछु नहिं बूझै ।
खैबेहूँ कौं जब नहिं पावै । तब बहु बिधि मन मैं पछितावै ।
पुनि दुख पाइ-पाइ सो मरै । बिनु हरि-भक्ति नरक मैं परै ।
नरक जाइ पुनि बहु दुख पावै । पुनि-पुनि यौंही आवै-जावै ।
तऊ नहीं हरि-सुमिरन करै । तातैं बार-बार दुख भरै ।

भक्त-महिमा

भक्त सकामी हू जो होइ । क्रम-क्रम करिकै उधरै सोइ ।
सनै-सनै बिधि-लोकहिं जाइ । ब्रह्मा-सँग हरि-पदहिं समाइ ।
निष्कामी बैकुंठ सिधावै । जनम-मरन तिहिं बहुरि न आवै ।
त्रिबिध भक्ति कहौं सुनि अब सोइ । जातैं हरि-पद प्रापति होइ ।
एकै कर्म-जोग कौं करैं । बरन-आसरम धर बिस्तरैं ।
अरु अधर्म कबहूँ नहिं करैं । ते नर याही बिधि निस्तरैं ।
एकै भक्ति-जोग कौं करैं । हरि-सुमिरन पूजा बिस्तरैं ।
हरि-पद-पंकज प्रीति लगावैं । ते हरि-पद कौं या बिधि पावैं ।

एकै ज्ञान-जोग बिस्तरैं । ब्रह्म जानि सब सौं हित करैं ।
ते हरि-पद कौं या बिधि पावैं । क्रम-क्रम सब हरि-पदहिं समावैं ।
कपिलदेव बहुरो यौं कह्यौ । हमैं-तुम्हैं संबाद जु भयौ ।
कलिजुग मैं यह सुनि है जोइ । सो नर हरि-पद प्रापत होइ ।
देवहूति सुज्ञान कौं पाइ । कपिलदेव सौं कह्यौ सिर नाइ ।
आगे मैं तुमकौं सुत मान्यौ । अब मैं तुमकौं ईश्वर जान्यौ ।
तुम्हरी कृपा भयौ मोहिं ज्ञान । अब न ब्यापिहै मोहिं अज्ञान ।
पुनि बन जाइ कियौ तन-त्याग । गहि कै हरि-पद सौं अनुराग ।
कपिलदेव सांख्यहिं जो गायौ । सो राजा मैं तुम्हैं सुनायौ ।
याहि समुझि जो रहै लव लाइ । सूर बसै सो हरिपुर जाइ ॥१३॥

॥३६४॥

चतुर्थ स्कंध

दत्तात्रेय-अवतार

* राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि[1]-चरनारबिद उर धरौ।
सुक हरि-चरननि कौं सिर नाइ। राजा सौं बोल्यौ या भाइ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चितलाइ। सूर तरौ[2] हरि के गुन गाइ ॥१॥

॥३६५॥

* राग बिभास

‡ रुचि कैं अत्रि नाम सुत भयौ। ब्याहि अनुसुया सौं सो दयौ।
ताकैं[3] भयौ दत्त अवतार। सूर कहत[4] भागवतऽनुसार ॥२॥

॥३६६॥

राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिद उर धरौ।
कहौं अब दत्तात्रेय-अवतार। राजा, सुनौ ताहि चित धार।
अत्रि पुत्र-हित बहु तप कियौ। तासु नारिहूँ यह ब्रत लियौ।
तीनौं देव तहाँ मिलि आए। तिनसौं रिषि ये बचन सुनाए।

---

* (ना) भैरवी।

† यह पद (वे, श्या) में दत्तात्रेय अवतार के पश्चात् मिलता है।

① आध पलकहूँ जिनि विस्मरौ—२, ३, १८। ② दास—३।

(को, रा) बिलावल।

‡ यह पद (वे, शा, ना, श्या) में नहीं है।

③ ताकै दत्तात्रेह अवतार—२। ④ भयौ—२।

मैं तो एक[1] पुरुष कौं ध्यायौ। अरु[2] एकहिं सौं चित्त लगायौ।
अपने आवन को कहौ कारन। तुम हौ सकल जगत-उद्धारन।
कह्यौ तुम एक पुरुष जो ध्यायौ। ताकौ दरसन काहु न पायौ।
ताकी सक्ति पाइ हम करैं। प्रतिपालैं बहुरौ संहरैं।
हम तीनौं हैं जग-करतार। माँगि लेहु हमसौं बर सार।
कह्यौ विनय मेरी सुनि लीजै। पुत्र सुज्ञानवान मोहिं दीजै।
बिष्नु-अंस सौं दत्तऽवतरे। रुद्र-अंस दुर्वासा धरे।
ब्रह्मा-अंस चंद्रमा भयौ। अत्रिऽनुसूया कौं सुख दयौ।
यौं भयौ दत्तात्रेय अवतार। सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥३॥

॥३६७॥

यज्ञपुरुष-अवतार

* राग बिलावल

† दच्छ[3] के उपजीं पुत्री सात। तिन मैं सती नाम बिख्यात।
महादेव कौं सो तिन दई। पुनि सो दच्छ-जज्ञ मैं मुई।
[4]तहँ कियौ जज्ञपुरुष अवतार। सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥४॥

॥३६८॥

---

(१) इक करता - २, ६, ८। (२) और न काहू सों चित लायौ —२। और एक ही सौं मन लायौ —६, ८।

† (ना) भैरवी।

। सूरसागर की प्राप्त प्रतियों में दक्ष की कन्याओं की संख्या भिन्न भिन्न मिलती है। कुछ में वह संख्या सात है तथा कुछ में साठ। भागवत तथा गरुड़पुराण में दक्ष-पुत्रियों की संख्या सोलह मिलती है। भागवत में प्रचेता के पुत्र और वर्हि के पौत्र एक अन्य दक्ष भी आए हैं जिनके दश सहस्र पुत्र और साठ कन्याएँ हुई थीं, किंतु ये दक्ष वे दक्ष नहीं हैं जिनका यहाँ प्रसंग है। इसलिए इस पद का अंतिम चरण "सूर कह्यौ भागवतऽनुसार' सदोष जान पड़ता है। संभव है कवि को इन दो दक्षों के कारण भ्रम हो गया हो, अथवा संभव है सूरसागर की किसी प्रति में जो हमें प्राप्त नहीं है, वह संख्या सोलह हो।

(३) दच्छ प्रजापति पुत्री जाना —३। दच्छ के उपजी पुत्री साठ —६, १८, १९। कन्या साठि दच्छ उतपात—८। (४) तहाँ कियौ हरि जज्ञ अवतार—१, ६, १८, १९।

राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
कहौं अब जज्ञपुरुष-अवतार। राजा, सुनौ ताहि चित धार।
सती दच्छ की पुत्री भई। दच्छ सो महादेव कौं दई।
ब्रह्मा, महादेव, रिषि सारे। इक दिन बैठे सभा मँझारे।
दच्छ प्रजापति हू तहँ आए। करि सनमान सबनि बैठाए।
काहूँ समाचार कछु पूछे। काहू सौं उनहूँ तब पूछे।
सिव की लागी हरि-पद तारी। तातैं नहिं उन आँखि उघारी।
महादेव बैठे रहि गए। दच्छ देखि अतिसय दुख तए[1]।
महादेव कौं भाषत साधु। मैं तौ देखौं बड़ो असाधु।
जज्ञ-भाग याकौं नहिं दीजै। मेरौ कह्यौ मानि करि लीजै।
नंदी-हृदय भयौ सुनि ताप। दियो ब्राह्मननि कौ तिन साप।
स्रुति पढि कै तुम नहिं उद्धरिहौ। बिद्या बेंचि जीविका करिहौ।
भृगु तब कोप होइ यौं कह्यौ। सुनत[2] साप रिस तैं तनु दह्यौ।
महादेव-हित जो तप करिहै। सोऊ भव-जल तैं नहिं तरिहै।
दच्छ प्रजापति जज्ञ रचायौ। महादेव कौं नाहिं बुलायौ।
सुर-गंधर्ब जे नेवति बुलाए। ते सब बधुनि सहित तहँ आए।
सती सबनि कौं आवत देखि। सिव सौं बोली बचन बिसेषि।
चलियै दच्छ-गेह हम जाहिं। जद्यपि हमैं बुलायौ नाहिं।
मोकौं तौ यह अचरज आयौ। उन हमकौं कैसैं बिसरायौ।

---

① भए—२, ३, ८। ② तैं सराप सबहुन को दियो—१, ६, १६, १८। तुम सराप सबको क्यौ दियौ—२।

गुरु-पितु-गृह बिनु बोलेहु जैऐ। है यह नीति नाहिँ सकुचैऐ।
सिव कह्यौ, तुम भली नीति सुनाई। पै वह मानत है सत्राई।
उहाँ गए जो होइ अपमान। तौ यह भलो बात नहिँ जान।
दुर्जन-बचन सुनत दुख जैसौ। बान लगैँ दुख होइ न तैसौ।
मम सत्राई हिरदैँ आन। करिहै वह तेरौ अपमान।
भऐँ अपमान उहाँ तू मरिहै। जौ मम बचन हृदय नहिँ धरिहै।
सती कह्यौ, मम भगिनी सात। सबै बुलाई ह्वैहैँ तात।
मोहूँ कौँ प्रभु, आज्ञा दीजै। महाराज, अब बिलँब न कीजै।
बारंबार सती जब कह्यौ। तब सिव अंतर्गत यौँ लह्यौ।
सती सदा मम आज्ञाकारी। कहति जो या बिधि बारंबारी।
दीखति है कछु होतनहारी। सो काहू पै जाइ न टारी।
गननि समेत सती तहँ गई। तासौँ दच्छ बात नहिँ कही॥।
सती जानि अपनौ अपमान। सिव कौ बचन कियौ परमान।
कह्यौ, उहाँ अब गयौ न जाइ। बैठि गई सिर नीचैँ नाइ।
सिव-आहुति-बेरा जब आई। बिप्रनि दच्छहिँ पूछ्यौ जाई।
सिव-निंदा करि तिनसौँ भाष्यौ। मैँ तौ पहिलैँ ही कहि राख्यौ।
मेरौ बचन मानि करि लेहु। सिव-निमित्त आहुति जनि देहु।
तब करि क्रोध सती तिहिँ कही। तैँ सिव की महिमा नहिँ लही।
महादेव ईस्वर भगवान। सत्रु-मित्र उन एक समान।
तैँ अज्ञान करो सत्राई। उनकी महिमा तैँ नहिँ पाई।

॥ इसके अनंतर ये चार चरण (शा) मेँ अधिक हैँ—नीकी विधि सौ माता लही। दच्छ बत तासो नहिँ कही। भगिनी हँसत मिली सब आइ। त्यौं त्यौं हिय मेँ अति बिलखाइ।

पिता जानि तोकौं नहिँ मारौं। अपनौ ही मैं प्रान सँहारौं।
जोग धारना करि तनु त्याग्यौ। सिव-पद-कमल हृदय अनुराग्यौ।
बहुरि हिमाचल कैं अवतरो। समय[1] पाइ सिव बहुरौ बरी।
इहाँ सिव-गननि उपद्रव कियौ। तब भृगु रिषि उपाइ यह ठयौ[2]।
आहुति जज्ञकुंड मैं डारी। कह्यौ, पुरुष उपजैं बल भारी।
पुरुष कुंड तैं प्रगट जो भए। भृगु कैं निकट सबै चलि गए।
भृगु कह्यौ, करत जज्ञ ये नास। इनकौं ह्याँतैं देहु निकास।
सिव के गन तिन बहुतै मारे। ते गन सिव पैं जाइ पुकारे।
सिव ह्वै क्रोध इक जटा उपारी। बीरभद्र उपज्यौ बलभारी।
बीरभद्र कौं नहीं पठायौ। तासौं इहिँ बिधि कहि समुझायौ।
दछ-सिर काटि कुंड मैं डारि। आवौ बेगि न लावौ बार।
बीरभद्र तब दच्छहिँ मारचौ। अरु भृगु रिषि कौ केस उपारचौ।
हाथ-पाइँ बहुतनि के काट। आइ नवायौ सिवहिँ ललाट।
तब सुर रिषि ब्रह्मा पैं आइ। दियौ सकल वृत्तांत सुनाइ।
कह्यौ ब्रह्मा सिव-निंदा जहाँ। बुरौ कियौ तुम बैठे तहाँ।
ब्रह्मा तिन लै सिव पहँ आए। सिव प्रनाम करि ढिग बैठाए।
सिव कौं सबनि कियौ सनमान। भोलानाथ लियो सो मान।
ब्रह्मा सिव कौं बचन सुनायौ। दच्छ तुम्हारौ मरम न पायौ।
जैसौ कियौ सो तैसौ पायौ। अब उहिँ चहियै फेरि जिवायौ।
सिव कह्यौ, मेरैं नहिँ सत्राई। सती मुएँ यह मन मैं आई।

---

① समयांतर (समै अंतर) हर (शिव)—१, ३, ६, ८। जनमंतर हर—१६। ② लियो—२। कियौ—३, ६, ८।

अब जो तुम्हरी आज्ञा होइ। छाँड़ि बिलंब करौं मैं सोइ।
ब्रह्मा, बिष्नु, रुद्र तहँ आए। भृगु रिषि केस आपने पाए।
घायल सबै नीक ह्वै गए। सुर-रिषि सबके भाए भए।
दच्छ-सीस जो कुंड मैं जर्‌यौ। ताके बदलैं अज-सिर धर्‌यौ।
महादेव तिहिं फेरि जिवायौ। दच्छ जानि यह सीस नवायौ।
बिप्रनि जज्ञ बहुरि बिस्तार्‌यौ। बेद भली बिधि सौं उच्चार्‌यौ।
जज्ञपुरुष प्रसन्न तब भए। निकसि कुंड तैं दरसन दए।
सुंदर स्याम चतुर्भुज रूप। ग्रीवा कौस्तुभ-माल अनूप।
उठि कै सबहिन माथ नवायौ। दच्छ बहुरि यौं बिनय सुनायौ।
मैं अपमान रुद्र कौ कियौ। तब मम जज्ञ सांग[1] नहिं भयो।
अब मोहिं कृपा कीजियै सोइ। फिरि ऐसी दुरबुद्धि न होइ।
बहुरौ भृगु रिषि अस्तुति कीनी। महाराज मम बुधि भई हीनी।
दियौ क्रोध करि सिवहिं सराप। करौ कृपा जो मिटै यह दाप[2]।
पुनि सिव ब्रह्मा अस्तुति करी। जज्ञ पुरुष बानी उच्चरी।
दच्छ कियौ सिव कौ अपमान। तातैं भई जज्ञ की हान।
बिष्नु, रुद्र, बिधि, एकहिं रूप। इन्हैं जानि मति भिन्न स्वरूप।
जातैं ये परगट भए आइ। ताकौं तू मन मैं[3] निज ध्याइ।
यौं कहि पुनि बैकुंठ सिधारे। बिधि[4], हरि, महादेव, सुर सारे।
या बिधि जज्ञपुरुष[5] अवतार। सूर कह्यौ भागवतऽनुसार॥ ५॥

॥ ३६६ ॥

---

① सिद्ध १६। ② पाप— ८। ③ माहीं—२। ④ सुर गंधर्ब गए पुनि—१। ⑤ भयो जज्ञ अवतार—१, ३, १६।

यज्ञपुरुष-अवतार (सक्षिप्त) राग मारू

जज्ञ प्रभु[1] प्रगट दरसन दिखायौ ।
बिष्नु-बिधि-रुद्र मम रूप ये तीनिहूँ, दच्छ सौं बचन यह कहि सुनायौ ।
दच्छ रिस मानि जब जज्ञ आरंभ कियौ, सबनि कौं सहित पत्नी हँकारचौ ।
रुद्र-अपमान कियौ, सती तब जीव दियौ, रुद्र के गननि ताकौं सँहारचौ ।
बहुरि बिधि जाइ, छमवाइ[2] के रुद्र कौं, बिष्नु, बिधि, रुद्र तहँ तुरत आए ।
जज्ञ आरंभ मिलि रिषिनि बहुरौ कियौ, सीस अज राखि कै दच्छ ज्याए ।
कुंड तैं प्रगटि जग-पुरुष दरसन दियौ, स्याम सुंदर चतुरभुज मुरारी ।
सूर प्रभु निरखि दंडवत सबहिनि कियौ, सुर-रिषिनि सबनि अस्तुति उचारी ॥६॥
॥४००॥

पार्वती-विवाह * राग बिलावल

सती हियैं धरि सिव कौ ध्यान । दच्छ-जज्ञ मैं छाँड़े प्रान ।
बहुरि हिमाचल कैं सुभ घरी । पारवती ह्वै सेा अवतरी ।
पारवती बय-प्रापत भई । तबहिं हिमाचल तासौं कही ।
तेरौ कासौं कीजै ब्याह ? तिन कह्यौ, मेरौ पति सिव आह ।
कह्यौ हिमाचल, सिव प्रभु, ईस । हमसौं-उनसौं कैसी रीस ?
पारवती सिव-हित तप करचौ । तब सिव आइ तहाँ, तिहिं बरचौ ।
पारवती-बिवाह ब्यवहार । सूर कह्यौ भागवतऽनुसार ॥ ७ ॥
॥४०१॥

---

① पुरुष—२, ३, १६ । * (ना) भेरवी ।
② समझाइ—२ ।

ध्रुव-कथा * राग बिलावल

†स्वायंभू मनु के सुत दोइ । तिनकी कथा कहौं, सुनि[1] सोइ ।
उत्तानपाद एक कौ नाम । द्वितिय प्रियब्रत अति अभिराम ।
ध्रुव[2] उत्तानपाद-सुत भयौ । हरि जू ताकौं दरसन दयौ ।
बहुरि दियो ताकौं अस्थान । देहिं प्रदच्छिन जहं ससि-भान ।
कहौं सो कथा, सुनौ चित धारि । सूर कह्यो भागवतऽनुसारि ॥८॥

॥४०२॥

* राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
अब कहौं ध्रुव बर देनऽवतार । राजा सुनौ ताहि चित धार ।
उतानपाद पृथ्वीपति भयो । ताकौ जस तीनौ पुर छयो ।
नाम सुनीति बड़ी तिहिं दार । सुरुचि दूसरी ताकी नार ।
भयो सुरुचि तैं उत्तम कार । अरु सुनीति कैं ध्रुव सुकुमार[3] ।
राजा हियैं सुरुचि सौं नेह । बसै सुनीति दूसरैं गेह ।
इक दिन नृपति सुरुचि-गृह आयो । उत्तम कुँवर गोद बैठायो ।
ध्रुव खेलत-खेलत तहँ आए । गोद बैठिबे कौं पुनि धाए ।
राजा तिय-डर गोद न लयो । ध्रुव सुकुमार रोइ तब दयो ।
तबहिं सुरुचि ध्रुव कौं समुझायो । तैं गोबिंद-चरन नहिं ध्यायो ।
जो हरि कौ सुमिरन तू करतौ । मेरैं गर्भ आनि अवतरतौ ।

---

* (ना) विभास ।
† यह पद (स) में नहीं है ।
① अब—२, ८ । ② उत्तानपाद के ध्रुव—१, २, ६ ८, १८, १९ ।
* (ना) रामकली ।
③ अवतार—३ ।

राजा तोकौं लेतौ गोद। तबहिँ गोद मैं करतौ मोद।
अजहूँ तू हरि-पद चित लाइ। होहिँ प्रसन्न तोहिँ जदुराइ।
सुरुचि के बचन बान सम लागे। ध्रुव आए माता पै भागे।
माता ताकौं रोवत देखि। दुख पायौ मन माहिँ बिसेषि।
कह्यौ पुत्र, तोकौं किन मारचौ? ध्रुव अति दुःखित बचन उचारचौ।
माता ताकौं कंठ लगायौ। तब ध्रुव सब बृत्तांत सुनायौ।
कह्यौ सुत, सुरुचि सत्य यह कह्यौ। बिनु हरि-भक्ति पुत्र मम भयौ।
अजहूँ जौ हरिपद चित लैहौ। सकल मनोरथ मन के पैहौ।
जिन-जिन हरि चरननि चित लायौ। तिन-तिन सकल मनोरथ पायौ।
प्रपिता तव ब्रह्मा तप कियौ। हरि प्रसन्न ह्वै तिहिँ बर दियौ।
तिन कीन्ह्यौ सब जग बिस्तार। जाकौ नाहीँ पारावार।
बहुरि स्वयंभू मनु तप कीन्हौ। ताहू कौं हरि जू बर दीन्हौ।
ताकैँ भयौ बहुत परिवार। नर, पसु, कीट, गनत नहिँ पार।
तैँ हूँ जो हरि-हित तप करिहै। सकल मनोरथ तेरौ पुरिहै।
ध्रुव यह सुनि बन कौँ उठि चले। पंथ माहिँ तिन नारद मिले।
देख्यौ पाँच बरष कौ बाल। सुरुचि बचन नहिँ सक्यौ सँभार।
अब मैँ हूँ याकौ दृढ देखौँ। लखि बिस्वास, बहुरि उपदेसौँ।
ध्रुव सौँ कह्यौ, क्रोध परिहरौ। मैँ जो कहौँ सो चित मैँ धरौ।
मेरैँ सँग राजा पै आउ। द्याऊँ तोहिँ राज-धन-गाउँ।
भक्ति-भाव की जो तोहिँ चाह। तोसौँ नहिँ ह्वैहै निर्बाह।
बहुतक तपसी पचि-पचि मुए। पै तिन हरि-दरसन नहिँ हुए।
मैँ हरि-भक्त, नाम मम नारद। मोसौँ कहि तू अपनौ हारद।

राजा पास कहौं जो जाइ। लैहै मानि नृपति सत-भाइ।
ध्रुव बिचार तब मन मैं कियो। सुमिरत नारद दरसन दियो।
जब मैं भक्ति स्याम की कैहौं। जानत नहीं कहा मैं पैहौं।
कह्यो नारद सौं, करो सहाइ। करौं भक्ति हरि की चित लाइ।
तुम नारायन-भक्त कहावत। केहि[1] कारन हमकौं भरमावत[2]?
तब नारद ध्रुव कौं दृढ़ देखि। कह्यो, देउँ मैं ज्ञान बिसेषि।
मथुरा जाइ सु सुमिरन करो। हरि को ध्यान हृदय मैं धरो।
॥ द्वादस अच्छर मंत्र सुनायो। ॥और चतुर्भुज रूप बतायो।
मथुरा जाइ सोइ उन कियो। तब नारायन दरसन दियो।
ध्रुव अस्तुति कीन्ही बहु भाइ। तब हरिजू बोले मुसुकाइ।
ध्रुव, जो तेरी इच्छा होइ। माँगि लेहि अब मोपैं सोइ।
प्रभु, मैं तुम्हरो दरसन लह्यो। माँगन कौं पाछैं कहा रह्यो?
हरि कह्यो, राज-हेत तप कियो। ध्रुव, प्रसन्न ह्वै मैं तोहि दियो।
अरु तेरैं हित कियो अस्थान। देहिं प्रदच्छिन जहँ ससि-भान।
ग्रह-नछत्रहू सबही फिरैं। तू भयो अटल, न कबहूँ टरैं।
अरु पुनि महा-प्रलय जब होइ। मुक्ति स्थान पाइहै सोइ।
यह कहि हरि निज लोक सिधारे। ध्रुव निज पुर कौं पुनि पग धारे।
जब ध्रुव पुर कैं बाहर आयो। लोगनि नृप कौं जाइ सुनायो।
उनके कहैं न मन मैं आई। तब नारद कह्यो नृप सौं जाई।

---

① काहे कौ तुम मोहिं फिरावत—१,१६। ② बौरावत—२। ॥ ये चरण (वे) में नहीं हैं।

ध्रुव आयौ हरि सौं बर पाइ। राजा, जाइ ताहिँ मिलि धाइ।
नृप सुनि मन आनंद बढ़ायौ। अंतःपुर मैं जाइ सुनायौ।
पुनि नृप कुटुँब सहित तहँ आए। नगर-लोग सब सुनि उठि धाए।
ध्रुव राजा के चरननि परयौ। राजा कंठ लाइ हित करयौ।
पुनि सो सुरुचि कैं चरननि परयौ। तासौं बचन मधुर उच्चरयौ।
तव उपदेस मैं हरि कौं ध्यायौ। यह उपकार न जात मिटायौ।
पुनि माता के पायनि परयौ। माता ध्रुव कौं अंकम भरयौ।
ध्रुव निज सिंहासन बैठाए। नृप तप-कारन बनहिँ सिधाए।
सातौ द्वीप राज ध्रुव कियौ। सीतल भयौ मातु कौ हियौ।
यौं भयौ ध्रुव-वर-देनऽवतार। सूर कह्यौ भागवतऽनुसार॥ ६॥

॥ ४०३ ॥

संक्षिप्त ध्रुव-कथा * राग आसावरी

ध्रुव बिमाता-बचन सुनि रिसायौ।
दीन के द्याल गोपाल, करुनामयी मातु सौं सुनि, तुरत सरन आयौ।
बहुरि जब बन चल्यौ, पंथ नारद मिल्यौ, कृष्न-निज-धाम मथुरा बतायौ।
मुकुट सिर धरैं, बनमाल कौस्तुभ गरैं, चतुर्भुज स्याम सुंदरहिँ ध्यायौ।
भए अनुकूल हरि, दियौ तिहिं तुरत वर, जगत करि राज पद अटल पायौ।
सूर[1] के प्रभु की सरन आयौ जो नर, करि जगत-भोग बैकुँठ सिधायौ॥१०॥

॥ ४०४ ॥

---

* (ना) मारू। (का) राम-कली।

(१) सूर प्रभु की सरन गही जिन आइ नर—६ ८।

धारि पृथु-रूप हरि राज कीन्हौ ।
बिष्नु की भक्ति परवर्त जग मैं करी, प्रजा कौं सुख सकल भाँति दीन्हौ ।
बेनु नृप भयौ बलवंत जब पृथी पर, रिषिनि सौं कह्यौ जप-तप निवारौ ।
॥मोहिं बिधि, बिष्नु, सिव, इंद्र, रवि-ससि गनौ, नाम मम लेइ आहुतिनि डारौ ।
॥जज्ञ मैं करत तब मेघ बरसत मही, बीज अकुर तबै जमत सारौ ।
होइ तिन क्रोध तब साप ताकौं दयौ, मारिकै ताहि जग-दुःख टारौ ।
भयौ आराज जब, रिषिनि तब मंत्र करि, बेनु की जाँघ कौ मथन कीन्हौ ।
जाँघ के मथे तैं पुरुष परगट भयौ, स्याम तिहिं भील कौ राज दीन्हौ ।
बहुरि जब रिषिनि भुज दछिन कीन्ही मथन, लच्छमी सहित पृथु दरस दीन्हौ ।
पहिरि सब आभरन, राज्य लागे करन, आनि सब प्रजा दंडवत कीन्हौ ।
बहुरि बंदीजननि आइ अस्तुति करी, इंद्र अरु बरुन तुम तुल्य नाहीं ।
कह्यौ नृप, बिनु पराक्रम न अस्तुति करौ, बिना किये मूढ़ सो हर्षि जाहीं ।
करौ भगवान कौ जस गुनीजन सदा, जो जगत-सिंधु तैं पार तारै ।
कियैं नर की स्तुती कौन कारज सरै, करै सो आपनौ जन्म हारै ।
कह्यौ तिन, तिन्हैं हम मनुष जानत नहीं, जगतपति जगतहित देह धार्‌यौ ।
करौगे काज जो कियौ न काहू नृपति, कियैं जस जाइ हम दुःख सारौ ।
बहुरि सब प्रजा मिलि आइ नृप सौं कह्यौ, बिना आजीविका मरत सारी ।
नृप धनुष-बान धरि पृथी पर कोप कियौ, तिन गऊ रूप बिनती उचारी ।

---

* (ना, का, ई, को, रा) मारू ।

॥ ये चरण केवल (शा) में हैं ।

बेनु के राज मैं औषधी गिलि गईं, होइहैं सकल किरपा तुम्हारी।
पर्बतनि जहाँ तहँ रोकि मोकौं लियौ, देहु करि कृपा इक दिसा टारी।
धनुष सौं टारि पर्बत किए एक दिसि, पृथी सम करि, प्रजा सब बसाई।
सुर-रिषिनि नृपति पुनि पृथी दोहन करो, आपनी जीविका सबनि पाई।
बहुरि नृप जज्ञ निन्यानबे करि, सतम जज्ञ कौं जबहिं आरंभ कीन्हौ।
इंद्र भय मानि, हय-गहन सुत सौं कह्यौ, सेा न लै सक्यौ, तब आप लीन्हौ।
नृपति सुत सौं कह्यौ, जाइ हय ल्याइ अब, इंद्र तिहिं देखि हय छाँड़ि दीन्हौ।
नृप कह्यौ सुरनि के हेतु मैं जज्ञ कियौ, इंद्र मम अस्व किहिं काज लीन्हौ?
रिषिनि कह्यौ, तुव सतम जज्ञ आरंभ लखि, इंद्र कौ राज-हित कँप्यौ हीयौ।
नृप कह्यौ, इंद्रपुर की न इच्छा हमैं, रिषिनि तब पूरनाहुती दीयौ।
पुरुष कह्यौ, कुंड तैं निकसि पूरन भयौ, इंद्र जिमि बर कछू माँगि लीजै।
पृथु कह्यौ, नाथ, मेरैं न कछु सत्रुता, अरु न कछु कामना, भक्ति दीजै।
जग-पुरुष गए बैकुंठ धामहिं जबै, ज्योति नृप प्रजा कौं तब हँकारौ।
तिन्हैं संतोषि कह्यौ, देहु माँगै हमैं, बिष्नु की भक्ति सब चित्त धारौ।
सुनत यह बात सनकादि आए तहाँ, मान दै कह्यौ, मोहिं ज्ञान दीजै।
कह्यौ, यह ज्ञान, यह ध्यान, सुमिरन यहै, निरखि हरि रूप मुख नाम लीजै।
पुनि कह्यौ, देहु आसीस मम प्रजा कौं, सबै हरि-भक्ति निज चित्त धारैं।
कृपा तुम करी, मैं भेंट कौं मन धरी, नहीं कछु वस्तु ऐसी हमारैं।
बहुरि सनकादि गए आपुने धाम कौं, नृपति, सब लेाग, हरि-भक्ति लाए।
सूर प्रभु-चरित अगनित, न गनि जाहिं, कछु जथामति आपनी कहि सुनाए॥११॥

॥४०५॥

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
कथा पुरंजन की अब कहौं। तेरे सब संदेहनि दहौं।
प्राचीनबर्हि भूप इक भए। आयु प्रजंत जज्ञ तिन ठए।
ताकैं मन उपजी तब ग्लानि। मैं कीन्ही बहु जिय की हानि।
यह मम दोष कौन बिधि टरै। ऐसी भाँति सोच मन करै।
इहिं अंतर नारद तहँ आए। नृप सौं यौं कहि बचन सुनाए।
मैं अबहीं सुरपुर तैं आयौ। मग मैं अद्भुत चरित लखायौ।
जज्ञ माहिं तुम पसु जे मारे। ते सब ठाढ़े सस्त्रनि धारे।
जोहत हैं वे पंथ तिहारौ। अब तुम अपनौ आप सँभारौ।
नृप कह्यौ, मैं ऐसोई कियौ। जज्ञ-काज मैं तिनि दुख दियौ।
रसनाहू कौ कारज सार्‌यौ। मैं यों अपनौ काज बिगार्‌यौ।
अब मैं यहै बिनै उच्चरौं। जो कछु आज्ञा होइ सो करौं।
कह्यौ, कहौं इक नृप की कथा। उन जो कियौ, करौ तुम तथा।
ताहि सुनौ तुम भलैं प्रकार। पुनि मन मैं देखौ जु बिचार।
ता नृप कौ परमातम मित्र। इक[1] छिन रहत न सो अन्यत्र।
खान-पान सो सब पहुँचावै। पै नृप तासौं हित न लगावै।
नृप चौरासी लछ फिरि आयौ। तब इहिं[2] पुर मानुष तन पायौ।
पुर कौं देखि परम सुख लह्यौ। रानी सौं मिलाप तहँ भयौ।
तिन पूछ्यौ, तू काकी धी है? उन कह्यौ नहिं सुमिरन मम ही है।

---

* (ना) भैरवी। अंत्र—१, १६। इक (यक) छिन ② यह पुनि—८।
① इक छिन रहै नहीं सो तासौ रहै न अंत्र—६, ८।

पुनि कह्यौ नाम कहा है तेरौ ? कह्यौ, न आव नाम मोहिँ मेरौ ।
तन पुर, जीव पुरंजन राव । कुमति तासु रानी कौ नाँव ।
आँखि, नाक, मुख, मूल दुवार । मूत्र, स्रौन, नव पुर कौ द्वार ।
लिग-देह नृप कौ निज गेह । दस इंद्रिय दासी सौं नेह ।
कारन तन सो सैन-अस्थान । तहाँ अविद्या नारि प्रधान ।
कामादिक पाँचौ प्रतिहार । रहैं सदा ठाढे दरबार ।
संतोषादि न आवन पावैं । बिषय भोग हिरदै हरषावैं ।
जा द्वारे पर इच्छा होइ । रानी सहित जाइ नृप सोइ ।
तहाँ-तहाँ कौ कौतुक देखि । मन मैं पावै हर्ष बिसेषि ।
इंद्री दासी सेवा करैं । तृप्ति न होइ, बहुरि बिस्तरैं ।
इन इंद्रिनि कौ यहै सुभाइ । तृप्ति न होइ कितौ हूँ खाइ ।
निद्रा बस जो कबहूँ सोवै । मिलि[1] सो अबिद्या सुधि-बुधि खोवै ।
उनमत ज्यौं सुख-दुख नहिं जानै । जागैं वहै रीति पुनि ठानै ।
संत दरस कबहूँ जौ होइ । जग-सुख मिथ्या जानै सोइ ।
पै कुबुद्धि ठहरान न देइ । राजा कौं अंकम भरि लेइ ।
राजा पुनि तब क्रीड़ा करै । छिन भरहू अंतर नहिँ धरै ।
जब अखेट पर इच्छा होइ । तब रथ साजि चलै पुनि सोइ ।
जा[2] बन की नृप इच्छा करै । तार्हा द्वार होइ निस्सरै ।
चच्छ्वादिक इंद्री दर जानौ । रूपादिक सब बन सम मानौ ।
मन मंत्री सो रथ हँकवैया । रथ तन, पुन्य-पाप दोउ पैया ।

---

(१) मिली अविद्या—२ । (२) जा द्वारे (नृप) पर—।, १६ ।

अस्त्र पाँच ज्ञानेंद्रिय पाँच। बिषय अखेटक नृप-मन राँच।
राजा मत्री सौं हित मानै। ताकैं दुख[1]-दुख, सुख-सुख जानै।
नरपति ब्रह्म-अंस, सुख रूप। मन मिलि पर्‌यौ दुःख कैं कूप।
ज्ञानी संगति उपजै ज्ञान। अज्ञानी सँग होइ अज्ञान।
मंत्री कहैं अखेट सो करै। बिषय-भोग जीवन संहरै।
निसि भएँ रानी पैं फिरि आवै। सोवति सो तिहिं बात सुनावै।
आजु कहा उद्यम करि आए। कहै बृथा भ्रमि-भ्रमि स्रम पाए।
काल्हि जाइ अस उद्यम करौं। तेरे सब भंडारनि भरौं।
सब निसि याही भाँति बिहाइ। दिन भए बहुरि अखेटक जाइ।
तहाँ जीव नाना संहरै। बिषय-भोग तिनके हित करै।
बिषय-भोग कबहूँ न अघाइ। यौंही नित-प्रति आवै जाइ।
इक दिन नृप निज मंदिर आयौ। रानी सौं अह-निसि मन लायौ।
ताके पुत्र-सुता बहु भए। बिषय-बासना नाना रए।
कान लागि केसनि[2] कह्यौ जाई। जरा काल-कन्या पुर आई।
"कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ?" "राजा, देखि, कहा धौं होइ।"
॥ नगर-द्वार तिन सबै गिराए। लोगनि नृप कौं आनि सुनाए।
॥ "कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ?" "राजा, देखि, कहा धौं होइ।"
॥ कान न सुनै आँखि नहिं सूझै। कहै और औरै कछु बूझै।
॥ "कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ?" "देखौ नृपति कहा धौं होइ।"
॥ तृष्ना करि कियौ चाहै भोग। भोग न होइ, होइ तन रोग।

---

① दुख सुख दुख सुख— १, ६, ८, १६। ② केसी—१८।
॥ ये चरण (वे) में नहीं हैं।

"कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ ?" "देखौ नृपति, कहा धौं होइ ।"
देह सिथिल भई, उठ्यौ न जाइ । मानौ दीन्यौ कोट[1] गिराइ ।
"कहौ प्रिया, अब कीजै सोइ ?" "देखौ नृपति, कहा धौं होइ ।"
पुनि जुरि दौ दीनी पुर लाइ । जरन लगे पुर-लोग - लुगाइ ।
"कह्यौ, प्रिया अब कीजै सोइ ?" "देखौ नृपति, काह धौं होइ ।"
मरन अवस्था कौं नृप जानै । तौ हू धरै न मन मैं ज्ञानै ।
मम कुटुंब की कहा गति होइ । पुनि-पुनि मूरख सोचै सोइ !
काल तहीं तिहिं पकरि निकार्‌यौ । सखा प्रानपति तउ न सँभार्‌यौ ।
रानी ही मैं मन रहि गयौ । मरि[2] बिदर्भ[3] की कन्या भयौ ।
बहुरौ तिन सत-संगति पाई । कहौं सो कथा, सुनौ चित लाई ।
मेघध्वज सौं भयौ बिवाह । बिष्नु-भक्ति कौ तिहिं उत्साह ।
ता संगति नव सुत तिन जाए । स्त्रवनादिक मिलि हरि-गुन गाए ।
इहिं बिधि तिन निज आयु बिताई । पूर्व-पाप सब गए बिलाई ।
मरन-अवस्था जब नियराई । ईस सखा कैं मन यह आई ।
बहुत जन्म इहिं बहु भ्रम कीन्हयौ । पै इन मोकौं कबहुँ न चीन्हयौ ।
तब दयालु ह्वै दरसन दीन्ह्यौ । कह्यौ, मूढ़ तैं मोहिं न चीन्हयौ ।
विषय-भोग ही मैं पगि रह्यौ । जान्यौ मोहिं और कहुँ गयौ ।
मैं तौ तिहरा सखारी रहौं । तेरे सहज सखा कौ रहौं ।

बहुरा तिन सत-सगात पाइ । कहा सा कथा, सुना चित लाइ ।
मेघध्वज सौं भयौ बिवाह । बिष्नु-भक्ति कौ तिहिं उत्साह ।
ता संगति नव सुत तिन जाए । स्त्रवनादिक मिलि हरि-गुन गाए ।
इहिं बिधि तिन निज आयु बिताई । पूर्व-पाप सब गए बिलाई ।

मैं जो कह्यौ सो देखि बिचार। बिन हरि-भजन नाहिँ निस्तार।
हरि की कृपा मनुष-तन पावै। मूरख बिषय-हेतु सो गँवावै।
तिन अंगनि कौ सुनौ बिवेक। खरचै लाख, मिलै नहिँ एक।
नैन दरस देखन कौँ दिए। मूढ़ देखि परनारी जिए।
स्रवन कथा सुनिबे कौँ दीन्हे। मूरख पर-निंदा-हित कीन्हे।
हाथ दए हरि-पूजा हेत। तिहिँ कर मूरख पर-धन लेत।
पग दिए तीरथ जैबैँ काज। तिन सौँ चलि नित करै अकाज।
रसना हरि-सुमिरन कौँ करी। तासौँ पर-निंदा उच्चरी।
यह सुनि नृप कीन्हौ अनुमान। मैं सोइ नृपति न दूसर आन।
नारद जू तुम कियौ उपकार। बूड़त मोहिँ उतार्‌यौ पार।
नृपति पाइ यह आतम-ज्ञान। राज छाँड़ि कै गयौ उद्यान।
यह लीला जो सुनै-सुनावै। सो हरि-कृपा ज्ञान कौँ पावै।
सुक ज्यौं राजा कौँ समुझायौ। सूरदास त्यौंही कहि गायौ ॥१२।
॥४०६॥

* राग बिलावल

अपुनपौ आपुन ही मैं पायौ।
सब्दहि सब्द भयौ उजियारौ, सतगुरु भेद बतायो।
ज्यौं कुरंग-नाभी कस्तूरी, ढूँढ़त फिरत भुलायौ।
फिरि चितयौ जब चेतन ह्वै करि, अपने[1] ही तन छायौ।

---

* (ना) धनाश्री। (का, ना, का, रा) नट।

(१) अपुन ही मैं चिन्हायौ–२।

राज-कुमारि[1] कंठ-मनि-भूषन भ्रम भयौ कहूँ गँवायौ।
दियौ बताइ और सखियनि[2] तब, तनु कौ ताप नसायौ।
सपने माहिँ नारि कौं भ्रम भयौ, बालक कहूँ हिरायौ।
जागि लख्यौ, ज्यौं कौ त्यौं ही है, ना कहुँ गयौ न आयौ।
सूरदास समुझे की यह गति, मनहीँ मन मुसुकायौ।
कहि न जाइ या सुख की महिमा, ज्यौं गूँगैँ गुर खायौ ॥१३॥
॥४०७॥

① कुँआर—१। कुमार—२, ६, ८, १६। कुँवर—३। कुँवार—१६। ② सतजन—१। संगिन—६, ८।

पंचम स्कंध

* राग बिलावल

हरि-हरि, हरि-हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
हरि-चरननि सुकदेव सिर नाइ। राजा सौं बोल्यौ या भाइ।
॥कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ[1]। सूर[2] तरौ हरि के गुन गाइ ॥१॥
॥४०८॥

ऋषभदेव-अवतार

* राग बिलावल

ज्यौं भयौ रिषभदेव-अवतार। कहौं, सुनौ सो अब चित धार।
सुक बरन्यौ जैसैं परकार। सूर कहै ताही अनुसार।
ब्रह्मा स्वायंभुव मनु जायौ। तातैं जन्म प्रियब्रत पायौ।
प्रियब्रत कैं अग्नीध्र[3] सु भयौ। नाभि जन्म ताही तैं लयौ।
नाभि नृपति सुत-हित जग कियौ। जज्ञ-पुरुष तब दरसन दियौ।
बिप्रनि अस्तुति बिबिध[4] सुनाई। पुनि कह्यौ सुनियै त्रिभुवनराई।

---

[1] (ना) बिभास।

॥ इसके उपरांत (बे, श्या) में ये चार चरण और हैं—
'ज्यौं भयौ रिषभदेव अवतार।
कहौं सुनौ सो अब चित धार।
सुक बरन्यौ जैसे परकार।
सूर कह्यौ ताही अनुसार ॥"

परंतु अन्य प्रतियों में ये चारों चरण "ऋषभदेव-अवतार" शीर्षक (संख्या २ के) पद के आरंभ में आये हैं। इस संस्करण में उन्हीं के अनुसार पाठ रक्खा गया है।

① धार—१, १६। ② जाते तरौ उदधि (अब्धि) संसार—१, १६।
(ना) भैरवी।
③ जु अगिनि धर—६, ८।
④ बेद—१, ६, ८, १६। बहुत—१६।

तुम सम पुत्र नाभि कैँ होइ । कह्यौ, मो सम जग और न कोइ ।
मैँ हरता - करता - संसार । मैँ लैहौं नृप-गृह अवतार ।
रिषभदेव तब जनमे आइ । राजा कैँ गृह[1] बजी बधाइ ।
बहुरौ रिषभ बड़े जब भए । नाभि राज दै बन कौं गए ।
रिषभ-राज परजा सुख पायौ । जस ताकौ सब जग मैँ छायौ ।
इंद्र देखि, इरषा मन लायौ । करि कै क्रोध न जल बरसायौ ।
रिषभदेव तबहीँ यह जानी । कह्यौ, इंद्र यह कहा मन आनी ?
निज बल जोग नीर बरसायौ । प्रजा लोग अतिहीँ सुख पायौ ।
रिषभ राज सब मन उतसाह । कियौ जयंती सौं पुनि ब्याह ।
तासौं सुत निन्यानबै भए । भरतादिक सब हरि-रँग रए ।
तिनमैँ नव नव-खँड-अधिकारी । नव जोगेस्वर ब्रह्म-बिचारी ।
असी-इक कर्म बिप्र कौ लियौ । रिषभ ज्ञान सबही कौं दियौ ।
दृस्यमान बिनास सब होइ । साच्छी ब्यापक, नसै न सोइ ।
ताही सौं तुम चित्त लगावहु । ताकौं सेइ परम गति पावहु ।
ज्ञानी-संगति उपजै ज्ञान । अज्ञानी - सँग बढ़ै अज्ञान ।
तातैँ संत-संग नित करना । संत-संग सेवौ हरि - चरना ।
बहुरौ भरतहिँ दै करि राज । रिषभ ममत्व देह कौ त्याज ।
उनमत की ज्यौँ बिचरन लागे । असन-बसन की सुरतिहिँ त्यागे ।
कोउ खवावै तौ कछु खाहिँ । नातरु बैठेहो[2] रहि जाहिँ ।
मूत्र - पुरीष अंग लपटावै । गंध बास दस जोजन छावै ।

---

① मन भई—१,२, ६, १३ ।
गृह भई—२,८ । ② भूखे—६ ।

अष्ट-सिद्धि बहुरौ तहँ आईं । रिषभदेव ते मुँह न लगाईं ।
राजा रहत हुतौ तहँ एक । भयौ स्रावगी रिषभहिँ देखि ।
बेद धर्म तजि कै न अन्हावै । प्रजा सकल कौं यहै सिखावै ।
अजहूँ स्रावग ऐसोहि करैं । ताही कौ मारग अनुसरैं ।
अंतर क्रिया रहति नहिँ जानैं । बाहर क्रिया देखि मन मानैं ।
बरन्यौ रिषभदेव - अवतार । सूरदास भागवतऽनुसार ॥२॥
॥४०६॥

जड़भरत-कथा * राग बिलावल

हरि-हरि, हरि-हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
रिषभदेव जब बन कौं गए । नव सुत नवौ-खंड-नृप भए ।
भरत सो भरत-खंड कौ राव । करै सदाही धर्मऽरु न्याव ।
पालै प्रजा सुतनि की[1] नाईं । पुरजन बसैं सदा सुख पाई ।
भरतहु दै पुत्रनि कौं राज । गए बन कौं तजि राज-समाज ।
तहाँ करी नृप हरि की सेव । भए प्रसन्न देवनि के देव ।
एक दिवस गंडकि-तट जाइ । करन लगे सुमिरन चित लाइ ।
गर्भवती हिरनी तहँ आई । पानी[2] सो पीवन नहिँ पाई ।
सुनि कै सिंह-भयान अवाज । मारि फलाँग चली सो भाज ।
कूदत ताकौ तन छुटि गयौ । ताके छौना सुंदर भयौ ।

---

* (ना) विभास । ६, ८ । (२) पानी कों पीवन सो
(१) के न्याइ—३ । के भाइ— धाई—२ ।

भरत दया ता ऊपर आई । ल्याए आस्रम ताहि लिवाई ।
पोषैं ताहि पुत्र की नाईं । खाहिं आप तब, ताहि खवाई ।
सोवैं तब जब वाहि सुवावैं । तासौं क्रीड़त बहु सुख पावैं ।
सुमिरन भजन बिसरि सब गयौ । इक दिन मृगछौना कहुँ गयौ ।
भरत मोह-बस ताकैं भयौ । सब दिन बिरह-अगिनि अति तयौ ।
संध्या समय निकट नहिं आयौ । ताके ढूँढन कौं उठि धायौ ।
पग कौ चिन्ह पृथी पर देख । कह्यौ, पृथी धनि जहँ पग-रेख ।
बहुरौ देख्यौ ससि की ओर । तामैं देखि स्यामता - कोर ।
कहन लग्यौ, मम सुत ससि-गोद । ता सेती[1] ससि करत बिनोद ।
ढूँढ़त-ढूँढ़त बहु स्रम पायौ । पै मृगछौना नहिं दरसायौ ।
मृग कौ ध्यान हृदय रहि गयौ । भरत देह तजि कै मृग भयौ ।
पूरब जनम ताहि सुधि रही । आप-आप सौं तब यौं कही ।
मैं मृगछौना मैं चित दयौ । तातैं मैं मृगछौना भयौ ।
अब काहू सौं संग न करौं । हरि - चरनारबिंद उर धरौं ।
संग मृगनिहू कौ नहिं करै । हरी घासहू सो नहिं चरै ।
सूखे पात और तृन खाइ । या बिधि डार्‌यौ जनम बिताइ ।
मृग-तन तजि, ब्राह्मन-तन पायौ । पूर्ब-जन्म-सुमिरन तहँ आयौ ।
मन मैं यहै बात ठहराई । होइ असंग भजौं जदुराई ।
पिता पढ़ावै सो नहिं पढै । मन मैं राम-नाम नित रढै ।
पिता सो तासु काल-बस भयौ । भ्रातनि हूँ स्रम बहु बिधि ठयौ ।
पै सो हरि-हरि सुमिरत रहै । और कछू बिद्या नहिं गहै ।

---

① ही सौं—२, १६ ।

जड़-स्वरूप सौं जहँ-तहँ फिरै। असन-बसन की सुधि नहिँ धरै।
जैसो देहिँ सो तैसो खाइ। नाहिँ तौ भूखौ ही रहि जाइ।
कृषि-रच्छक भाइनि तब कीन्हौ। उन तहँ हरि-चरननि-चित दीन्हौ।
तहँहौं अन्न देहिँ पहुँचाइ। जौ न देहिँ भूखौ रहि जाइ।
भील-राव निज लोगनि कह्यौ। मैं काली सौं यह प्रन गह्यौ।
तुव प्रसाद मम गृह सुत होइ। नर बलि देहुँ, भयौ बर सोइ।
तुम काहूँ धन दै लै आवहु। मेरे मन की आस पुजावहु।
ते खोजत-खोजत तहँ आए। जहँ जड़भरत कृषी मैं छाए।
देख्यौ भरत तरुन अति सुंदर। थूल सरीर, रहित सब दुंदर।
निज नृप पास बाँधि लै आए। नृप तिहिँ देखि बहुत सुख पाए।
बिप्रनि कह्यौ याहि अन्हवावहु। याकैं अंग सुगंध लगावहु।
देवी-मंदिर तिहिँ लै गए। खड्ग राव के कर मैं दए।
जब राजा तिहिँ मारन लग्यौ। देवी काली-मन डगडग्यौ[1]।
हरि-जन मारैं हत्या होइ। ज्यौं नहिँ मरै करौं अब सोइ।
देवी निकसि राव कौं मार्‌यौ। भरत-साथ यह बचन उचार्‌यौ।
जानैं बिना चूक यह भई। मैं उनसौं ऐसी नहिँ कही।
बिप्रनि बेद-धर्म नहिँ जान्यौ। तातैं उन ऐसौ बलि ठान्यौ।
यह सुनि ह्वाँ तैं भरत सिधायौ। राजा[2] सौं सुक कहि समुझायौ।
॥नहीं त्रिलोकी ऐसौ कोइ। ॥भक्तनि कौं दुख दै सकै जोइ।
ज्यौं सुक नृप सौं कहि समुझायौ। सूरदास त्यौं ही कहि गायौ ॥३॥
॥४१०॥

---

① धगधग्यौ—१, १३। (आश्रम) आयौ—६, ८। मैं नहीं है।
② हरि सुमिरत निज आसन ॥ ये दो चरण (का, ना)

जड़भरत-रहूगण-संवाद * राग बिलावल

हरि-हरि, हरि-हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
नृपति रहूगन कैं मन आई । सुनियै ज्ञान कपिल सौं जाई ।
चढ़ि सुख-आसन नृपति सिधायौ । तहाँ कहार एक दुख पायौ ।
भरत पंथ पर देख्यौ खरौ । वाकैं बदले ताकौं धरौ ।
तिहिं सौं भरत कछू नहिं कह्यौ । सुख-आसन काँधे पर गह्यौ ।
भरत चलै पथ जीव निहार । चलै नहीं ज्यौं चलैं कहार ।
नृपति कह्यौ मारग सम आहि । चलत न क्यौं तुम सूधैं राहि ।
कह्यौ कहारनि, हमैं न खोरि । नयौ कहार चलत पग[1] झोरि ।
कह्यौ नृपति मोटौ त आहि । बहुत पंथहू आयौ नाहिं ।
तू जो टेढ़ौ-टेढ़ौ चलत । मरिबे कौं नहिं हिय भय धरत ।
ऐसी भाँति नृपति बहु भाषी । सुनि जड़ भरत हृदय महँ राखी ।
मन मन लाग्यौ करन बिचार । हर्ष-सोक तनु कौ ब्यवहार ।
जैसौ करै सो तैसौ लहै । सदा आतमा न्यारौ रहै ।
नृप कह्यौ, मैं उत्तर नहिं पायौ । मेरौ कह्यौ न मन मैं ल्यायौ ।
नृप-दिसि देखि भरत मुसुकाइ । बहुरौ या बिधि कह्यौ समुझाइ ।
तुम कह्यौ, तौं है बहुत मोटायौ । अरु बहु मारग हू नहिं आयौ ।
टेढ़ौ-टेढ़ौ तू क्यौं जात । सुनौ नृपति, मोसौं यह बात ।
जिय करि कर्म, जन्म बहु पावै । फिरत-फिरत बहुतै स्रम आवै ।
अरु अजहूँ न कर्म परिहरै । जातैं याकौ फिरिबौ टरै ।

---

* (ना) भैरवी ।
(१) मग मोरि—२ । मग फोरि—३ । मग छोरि—६, ८ । मग टकटोरि—१६ ।

तन स्थूल अरु दूबर होइ । परमातम कौं ये नहिं दोइ ।
तनु मिथ्या, छन-भंगुर जानौ । चेतन जीव, सदा थिर मानौ ।
जिय कौं सुख-दुख तन सँग होइ । जौ[1] बिचरै तन कैं सँग सोइ ।
देहऽभिमानी जीवहिं जानै । ज्ञानी तन[2] अलिप्त करि मानै ।
तुम कह्यौ मरिबे की तोहिं चाह । सब काहू कौं है यह राह ।
कहा जानि तुम मोसौं कहयौ ? यह सुनि, रिषि-स्वरूप नृप लह्यौ ।
तजि सुखपाल रह्यौ गहि पाइ । मैं जान्यौ, तुम हौ रिषिराइ ।
भृगु, कै दुर्वासा तुम होहु । कपिल, कै दत्त, कहौ तुम मोहु ।
कबहूँ सुर, कबहूँ नर होइ । कबहूँ राव रंक जिय सोइ ।
जीव कर्म करि बहु तन पावै । अज्ञानी तिहिं देखि भुलावै ।
ज्ञानी सदा एक रस जानै । तन कैं भेद भेद नहिं मानै ।
आत्म[3], अजन्म सदा अबिनासी । ताकौं देह-मोह बड़ फाँसी ।
रिषभ-सुपुत्र, भरत मम नाम । राज छाँड़ि, लियौ बन-बिस्राम ।
तहँ मृगछौना सौं हित भयौ । नर-तन तजि कै मृग-तन लयौ ।
अब मैं जन्म बिप्र कौ पायौ । सब तजि, हरि-चरननि चित लायौ ।
तातैं ज्ञानी मोह न करै । तन-कुटंब सौं हित परिहरै ।
जब लगि भजै न चरन मुरारि । तब लगि होइ न भव-जल पार ।
भव-जल मैं नर बहु दुख लहैं । पै बैराग-नाव[4] नहिं गहैं ।
सुत-कलत्र दुर्बचन जो भाषै । तिन्हैं मोह-बस मन नहिं राखै ।

---

(१) जोर बिजोर तन के सँग सोइ (दोइ)—१, १८, १९ । जरब जोर.. —३ । (२) जीव अल्प—१९ । | ये दो चरण (का, ना) मैं नहीं हैं । (३) आतम जीव—२ । आतम सदा जनम—६, ८, १९ । (४) तबहुँ—१ । तऊ—२, ३, १९ ।

जो वै बचन और कोउ कहै। तिनकौं सुनि कै सहि नहिँ रहै।
पुत्र अन्याइ करै बहुतेरै। पिता एक अवगुन नहिँ हेरै।
और जो एक करै अन्याइ। तिहिँ बहु अवगुन देइ लगाइ।
इक मन अरु ज्ञानेंद्री पाँच। नर कौं सदा नचावैं नाच।
ज्यौं मग चलत चोर धन हरैं। त्यौं ये सुकृत-धनहिँ परिहरैं।
तस्कर ज्यौं सुकृित-धन लेहिँ। अरु हरि-भजन करन नहिँ देहिँ।
ज्ञानी इनकौ संग न करै। तस्कर जानि दूरि परिहरै।
नृप यह सुनि, भरताहिँ सिर नाइ। बहुरि कह्यौ या भाँति सुनाइ।
नर सरीर सुर ऊपर आहि। लहै ज्ञान कहियै कहा ताहि?
तातैं तुमकौं करत दँडौत। अरु सब नरहूँ कौ परिनौत।
सुक कह्यौ, सुनि यह नृपति सुजान। लह्यौ ज्ञान तजि देहऽभिमान।
जो यह लीला सुनै-सुनावै। सोऊ ज्ञान भक्ति कौं पावै।
सुकदेव ज्यौं दियौ नृपहिँ सुनाइ। सूरदास[1] कहयौ ताही भाइ ॥४॥

॥४११॥

(१) कह्यो ताही बिधि गाइ—२।

षष्ठ स्कंध

राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। आधे[1] पलकहुँ जनि बिसरौ।
सुक हरि-चरननि कौं सिर नाइ। राजा सौं बोल्यौ या भाइ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ। सूर तरौ हरि के गुन गाइ॥ १॥

॥ ४१२ ॥

परीक्षित-प्रश्न

राग बिलावल

‡ सुक सौं कह्यौ परीच्छित राइ[2]। भरत गयौ बन, राज[3] बिहाइ।
तहाँ जाइ मृग सौं चित लायौ। तातैं मरि फिरि मृग-तन पायौ।
जिनकौं पाप करत दिन जाइ। ते तौ परैं नरक मैं धाइ।
सो छूटै किहिं बिधि रिषिराइ। सूर कहौ मोसौं समुझाइ॥ २॥

॥ ४१३ ॥

श्रीशुक-उत्तर

राग बिलावल

§ सुकदेव कह्यौ, सुनौ हो[4] राउ। पतित-उधारन है हरि[5]-नाउ।
अंतकाल हरि हरि जिन कह्यौ। ततकालहिं[6] तिन हरि-पद लह्यौ।

---

† यह पद (का, ना, इ) में नहीं है।

① हरि-चरनारबिंद उर धरौ—१८, १६।

‡ यह पद (स, ल, का, ना, इ, रा) में है।

② राज—६, ८। ③ राजहिं त्याज—६, ८।

§ यह पद (स, ल, का, ना, इ, रा) में है।

④ तुम राइ—६, ८। ⑤ जदुराइ—६, ८। ⑥ तात-काल—६, ८, १८।

तिन[1] मैं कहौं एक की कथा। नारायन कहि उधरचौ जथा।
ताहि सुनै[2] जो कोउ चित लाइ। सूर तरै[3] सोऊ गुन गाइ॥३॥
॥४१४॥

अजामिलोद्धार * राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
हरि हरि कहत अजामिल तरचौ। जाकौ जस सब जग बिस्तरचौ।
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ। कहैं-सुनै सो नर तरि जाइ।
अजामिल बिप्र कनौज-निवासी। सो भयौ बृषली[4] कैं गृहबासी।
जाति-पाँति तिन सब बिसराई। भच्छ-अभच्छ सबै सो खाई।
ता भीलिनि कैं दस सुत भए। पहिले पुत्र भूलि तिहिं गए।
लघुसुत-नाम नरायन धरचौ। तासौं हेत अधिक तिन करचौ।
काल-अवधि जब पहुँची आइ। तब जम दीन्हे दूत पठाइ।
नारायन सुत-नाम उचारचौ। जम-दूतनि हरि-गननि निवारचौ।
दूतनि कह्यौ बड़ौ यह पापी। इन तौ पाप किए हैं धापी।
बिप्र जन्म इन जूवैं हारचौ। काहे तैं तुम हमैं निवारचौ?
गननि कह्यौ, इन नाम उचारचौ। नाम-महातम तुम न बिचारचौ।
जान-अजान नाम जो लेइ। हरि बैकुंठ-बास तिहिं देइ।
बिन जानैं कोउ औषध खाइ। ताकौ रोग सकल नसि जाइ।

---

① तातैं कहौं—६, ८। ② तरो हरि के गुन गाइ—६, ८। ④ भीलिन—२, ३, ६, ८।
सुनौ राजा चित लाइ—६, ८। ③ * (ना) विभास।

त्यौं जो हरि बिन जानैं कहै। सो सब अपने पापनि दहै।
अगिनि बिना जानैं जो गहै। तातकाल सो ताकौं दहै।
दोइ पुरुष कौ नाम इक होइ। एक पुरुष कौं बोलै कोइ।
दोऊ ताकी ओर निहारैं। हरिहू ऐसैं भाव बिचारैं।
हाँसी मैं कोउ नाम उचारै। हरि जू ताकौं सत्य बिचारैं।
भयहूँ करि कोउ लेइ जो नाम। हरि जू देहि ताहि निज-धाम।
जा बन कैहरि-सब्द सुनाइ। ता बन तैं मृग जाहिं पराइ।
नाम सुनत त्यौं पाप पराहिं। पापी हू बैकुंठ सिधाहिं।
यह सुनि दूत चले खिसियाइ। कह्यौ तिन धर्मराज सौं जाइ।
अब लौं हम तुमहीं कौं जानत। तुमहीं[1] कौं दँड-दाता मानत।
आजु गह्यौ हम पापी एक। तिन भय मान्यौ हमकौ[2] देख।
नारायन सुत-हेत उचारयौ। पुरुष चतुरभुज हमैं निवारयौ।
उनसौं हमरौ कछु न बसायौ। तातैं तुमकौं आनि सुनायौ।
औरौ दँड-दाता कोउ आहि। हमसौं क्यौं न बतावौ ताहि ?
धर्मराज करि हरि कौ ध्यान। निज दूतनि सौं कह्यौ बखान।
नारायन सबके करतार। पालत अरु पुनि करत सँहार।
ता सम दुतिया और न कोइ। जो[3] चाहै सो साजै सोइ।
ताकौ उन जब नाम उचारयौ। तब हरि-दूतनि तुम्हैं निवारयौ।
हरि के दूत जहाँ-तहाँ रहैं। हम तुम उनकी सोध न लहैं।
जो-जो मुख हरि-नाम उचारैं। हरि-गन तिहिं-तिहिं तुरत उधारैं।

---

① तुम बिनु और न धाता मानत—२। ② हमैं अनेख— ८। हमसौं नेंक—१६। ③ तासु भजे सबकी गति होइ—२, ६, ८।

नाम-महातम तुम नहिँ जानौ। नाम-महातम सुनौ, बखानौं।
ज्यौं-त्यौं कोउ हरि-नाम उच्चरै। निस्चय करि सो तरै पै तरै।
जाके गृह मैं हरि-जन जाइ। नाम-कीरतन करै सो गाइ।
जद्यपि वह हरि-नाम न लेइ। तद्यपि हरि तिहिँ निज-पद देइ।
कैसोहू पापी किन होइ। राम-नाम मुख उचरै सोइ।
तुम्हरो नहीं तहाँ अधिकार। मैं तुमसौं यह कहौं[1] पुकार।
अजामील हरि-दूतनि देखि। मन मैं कीन्हौ हर्ष बिसेषि।
जम-दूतनि कौं इनहिँ निवारचौ। वा भय तैं मोहिँ इनहिँ उबारचौ।
तब मन माहिँ आनि बैराग। पुत्र-कलत्र-मोह सब त्याग।
हरि-पद सौं उन ध्यान लगायौ। तातकाल बैकुंठ सिधायौ।
अंतकाल जो नाम उचारै। सो सब अपने पापनि जारै।
ज्ञान-बिराग तुरत तिहिँ होइ। सूर बिष्नु-पद पावै सोइ॥ ४॥
॥ ४१५ ॥

श्री गुरु-महिमा * राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
हरि-गुरु एक रूप नृप जानि। यामैं कछु संदेह न आनि।
गुरु प्रसन्न, हरि परसन होइ। गुरु कैं दुखित दुखित हरि जोइ।
कहौं सो कथा, सुनौ चित धार। कहै-सुनै सो तरै भव पार।

---

(१) कही—१, ६, ८, १६।

इंद्र एक दिन सभा मँझारि। बैठ्यौ हुतौ सिँहासन डारि।
सुर, रिषि, सब गँधर्ब तहँ आए। पुनि कुबेरहू तहाँ सिधाए।
सुर-गुरुहू तिहिँ औसर आयौ। इंद्र न तिहिँ उठि सीस नवायौ।
सुर-गुरु, जानि गर्व तिहिँ भयौ। तहं तैं फिरि निज आस्रम गयौ।
सुर-पति तब लाग्यौ पछितान। मैं यह कहा कियौ अज्ञान।
पुनि निज गुरु-आस्रम चलि गयौ। पै सुर-गुरु दरसन नहिँ दयौ।
यह सुनि असुर इंद्र-पुर आइ। कियौ इंद्र सौं जुद्ध बनाइ।
इंद्र-सहित तब सब सुर भागे। आस्रम अपने सबहिनि त्यागे।
पुनि सब सुर ब्रह्मा पै जाइ। कह्यौ बृत्तांत सकल, सिर नाइ।
ब्रह्मा कह्यौ, बुरौ तुम कियो। निज गुरु कौं आदर नहिँ दियो।
अब तुम बिस्वरूप गुरु करौ। ता प्रसाद या दुख कौं तरौ।
सुरपति बिस्वरूप पै जाइ। दोउ कर जोरि कह्यौ सिर नाइ।
कृपा करौ, मम प्रोहित होहु। कियौ बृहस्पति मो पर कोहु।
कह्यौ, पुरोहित होत न भलौ। बिनसि जात तेज[1]-तप सकलौ।
पै तुम बिनती बहु बिधि करी। तातैं मैं मन मैं यह धरी।
यह कहि इंद्रहिँ जज्ञ करायौ। गयौ राज अपनौ तिन पायौ।
असुरनि बिस्वरूप सौं कह्यौ। भलो भई, तू सुरगुरु भयौ।
तुव ननसाल माहिँ हम आहिँ। आहुति हमैं देत क्यों नाहिँ?
तिहिँ निमित्त तिन आहुति दई। सुरपति बात जानि यह लई।
करि कै कोध तुरत तिहिँ मारयौ। हत्या हित यह मंत्र बिचारयौ।
चारि अंस हत्या के किए। चारौं अंस बाँटि पुनि दिए।
एक अंस पृथ्वी कौं दयो। ऊसर तामैं तातैं भयौ।

एक अंस वृच्छनि कौं दीन्हौं। गोंद[1] होइ प्रकास तिन कीन्हौं।
एक अंस जल कौं पुनि दयौ। ह्वैकै काई जल कौं छयौ।
एक अंस सब नारिनि पायौ। तिनकौं[2] रजस्वला दरसायौ।
त्वष्टा बिस्वरूप कौ बाप। दुखित भयौ सुनि सुत-संताप।
क्रुद्ध होइ इक जटा उपारी। बृत्रासुर उपज्यौ बल भारी।
सो सुरपति कौं मारन धायौ। सुरपति हू ता सन्मुख आयौ।
जेतक सस्त्र सो किए प्रहार। सो करि लिए असुर आहार।
तब सुरपति मन मैं भय मान। गयौ तहाँ जहाँ श्री भगवान।
नमस्कार करि बिनय सुनाई। राखि राखि असरन-सरनाई।
कह्यौ भगवान, उपाय न आन। रिषी दधीचि-हाड़ लै दान।
ताकौ तू निज बज्र बनाउ। मरिहै असुर ताहि कैं घाउ।
तब सुरपति रिषि कैं ढिग जाइ। करी बिनय बहु सीस नवाइ।
बहुरि कही अपनी सब कथा। हरि जो कह्यौ, कह्यौ पुनि तथा।
तिन कह्यौ देह-मोह अति भारी। सुर-पति, त यह देखि बिचारी।
यह तन क्यौं हूँ दियौ न जावै। और देत कछु मन नहिं आवै।
पै यह अंत न रहिहै भाई। परहित देहु तौ होइ भलाई।
तन दैबे तैं नाहिंन भजौं। जोग धारना करि इहिं तजौं।
गउ चटाइ, मम त्वचा उपारौ। हाड़नि कौ तुम बज्र सँवारौ।
सुरपति रिषि की आज्ञा पाइ। लिए हाड़, कियौ बज्र बनाइ।

---

① बादा—८। ② तिनकौं ह्वै रजस्वला छायौ—१, ११।

गो-मुख असुचि तबहिँ तैँ भयो । रिषि सुकदेव नृपति सौँ कह्यो ।
इंद्र आइ तब असुर प्रचारचौ । कियो जुद्ध पै असुर न हारचौ ।
इंद्र-हाथ तैँ बज्र छिनाइ । मारचौ ऐरावत कौँ धाइ ।
ऐरावत घायल ह्वै गयो । तब बृत्रासुर कौँ सुख भयो ।
ऐरावत अंमृत कैँ प्याए[1] । भयो सचेत, इंद्र तब धाए ।
बृत्रासुर कौँ बज्र प्रहारचौ । तिन त्रिसूल सुरपति कौँ मारचौ ।
लगत त्रिसूल इंद्र मुरझायो । कर तैँ अपनो बज्र गिरायो ।
कह्यौ असुर, सुरपति संभारि । लै करि बज्र मोहिँ परहारि ।
जौ मरिहौं तौ सुरपुर जैहौं । जीते जगत माहिँ जस लैहौं ।
हार-जीति नहिँ जिय कैँ हाथ । कारन-करता आनहिँ नाथ ।
हमैँ-तुम्हैँ पुतरी कैँ भाइ । देखत कौतुक बिविध नचाइ ।
तब सुरपति लै बज्र सँहारचौ । जै-जै सब्द सुरनि उच्चारचौ ।
पै इंद्रहिँ संतोष न भयो । ब्राह्मन-हत्या कैँ दुख तयो ।
सो हत्या तिहिँ लागी धाइ । छिप्यौ सो कमलनाल मैँ जाइ ।
सुरगुरु जाइ तहाँ तैँ ल्यायो । तासौँ हरि-हित जज्ञ करायो ।
जज्ञ तैँ हत्या गई बिलाइ । पुनि[2] नृप भयो इंद्रपुर आइ ।
नृप यह सुनि सुक सौँ यौँ कही । ज्ञान-बुद्धि असुरहिँ क्यौँ भई ?
सुक कह्यौ सुनौ परीच्छित राइ । देहुँ तोहिँ बृत्तांत सुनाइ ।
चित्रकेतु पृथ्वीपति राउ । सुत-हित भयो तासु चित-चाउ ।
जद्यपि रानी बरी अनेक । पै तिनतैँ सुत भयो न एक ।
ता गृह रिषि अंगिरा सिधाए । अर्धासन दै तिन बैठाए ।

---

① ल्याए—१, ३, १६ ।
② यौं नृप बहुरि इंद्रपुर—१,१६ ।

रिषि सौं नृप निज बिथा सुनाई। कहौ मोहिं, सो करौं उपाई।
रिषि कह्यौ, पुत्र न तेरैं होइ। होइ कहूँ, तौ दुख दै सोइ।
नृप कह्यौ, एक बार सुत होइ। पाछैं होनी होइ सो होइ।
रिषि ता नृप सौं जज्ञ करायौ। दै प्रसाद यह बचन सुनायौ।
जा रानी कौं तू यह दैहै। ता रानी[1] सैंती सुत ह्वैहै।
[2]पटरानी कौं सो नृप दियौ। तिन प्रनाम करि भोजन कियौ।
रिषि-प्रसाद तैं तिन सुत जायौ। सुत लहि दंपति अति सुख पायौ।
बिप्र-जाचकनि दीन्हौ दान। कियौ उत्सव, कहा करौं बखान।
ता रानी सौं नृप-हित भयौ। और तियनि कौ मन अति तयौ।
तिन सबहिनि मिलि मंत्र उपायौ। नृपति-कुँवर कौं जहर पियायौ।
बहुत बार भई, कुँवर न जाग्यौ। दासी सौं रानी तब माँग्यौ[3]।
ल्याउ कुँवर कौं बेगि जगाइ। दूध प्याइ कै बहुरि सुवाइ।
दासी कुँवर जगावन आई। देख्यौ कुँवर मृतक की नाईं।
दासी बालक मृतक निहारि। परी धरनि पर खाइ पछारि।
रानी तब तहँ आई धाइ। सुत मृत देखि परी मुरछाइ।
पुनि रानी जब सुरति सँभारी। रुदन करन लागी अति भारी।
रुदन सुनत राजा तहँ आयौ। देखि कुँवर कौं अति दुख पायौ।
कबहूँ मुरछित ह्वै नृप परै। कबहुँक सुत कौं अंकम भरै।
रिषि नारद, अँगिरा तहँ आए। राजा सौं ये बचन सुनाए।
को तू, को यह, देखि बिचार। स्वप्न-स्वरूप सकल संसार।

---

① ही रानी सो—१६। रानी—३। ③ भाख्यौ—१, २,
② तब रानी—१, १६। लघु ३, १६।

सोयौ होइ सो इहिँ सत मानै। जो जागै सो मिथ्या जानै।
तातैँ मिथ्या-मोह बिसारि। श्रीभगवान-चरन उर धारि।
हम तुम सौँ पहिलैँ ही कही। नृप सो बात आज भई सही।
नृप कौँ सुनि उपज्यौ बैराग। बन कौँ गयौ राज सब त्याग।
बन मैँ जाइ तपस्या करी। मरि गंधर्ब-देह तिन धरी।
इक दिन सो कैलास सिधायौ। सिव कौ दरसन तहँ तिहिँ पायौ।
उमा नगन देखी तिहिँ[1] राइ। उन दियौ साप ताहि या भाइ।
तू अब असुर-देह धरि जाइ। मेरा कह्यौ न मिथ्या आइ।
उमा साप ताकौँ जब दयौ। बृत्रासुर सो या बिधि भयौ।
हरि की भक्ति बृथा नहिँ जाइ। जन्म-जन्म सो प्रगटै आइ।
तातैँ हरि-गुरु-सेवा कीजै। मेरौ बचन मानि यह लीजै।
ज्यौँ सुक नृप सौँ कहि समुझायौ। सूरदास त्यौँही कहि गायौ॥ ५॥
॥ ४१६ ॥

राग सारग

गुरु बिनु ऐसी कौन करै?
माला-तिलक मनोहर बाना, लै सिर छत्र धरै।
भवसागर तैँ बूड़त राखै, दीपक हाथ धरै।
सूर स्याम गुरु ऐसौ समरथ, छिन मैँ लै उधरै॥ ६॥
॥ ४१७ ॥

---

① तिन जाइ—१। बनराइ—३, ६, ८

सदाचार-शिक्षा (नहुष की कथा) राग बिलावल

† सुरपति कौं सँताप जब भयौ। सो सुरपुर भय तैं नहिँ गयौ।
नहुष नृपति पै रिषि सब आइ। कह्यौ सुर-राज करौ तुम राइ।
नहुष इंद्र-राजहिँ जब पायौ। इंद्रानी कौं देखि लुभायौ।
कह्यौ इंद्रानी मो पै आवै। नृप सौं ताकौ कहा बसावै।
सुरगुरु सौं यह बात सुनाई। अवधि करन तिहिँ कहि समुझाई।
सची नृपति सौं यह कहि भाषी। नृप सुनिकै हिरदै मैं राखी।
सची अग्नि कौं तुरत पठायौ। सुरपति दसा देखि सो आयौ।
इंद्रानी सुनि ब्याकुल भई। अवधि घरी व्यतीत ह्वै गई।
तब तिन ऐसी बुद्धि उपाई। इहिँ अंतर सो नहुष बुलाई।
कह्यौ तुम अस्वमेध नहिँ किए। रिषि-आज्ञा तैं सुरपति भए।
बिप्रनि पै चढि कै जौ आवहु। तौ तुम मेरौ दरसन पावहु।
नृपति रिषिनि पर ह्वै असवार। चल्यौ तुरंत सची कैं द्वार।
काम अंध कछु रहि न सँभारि। दुर्बासा रिषि कौं पग मारि।
सर्प-सर्प कह्यौ बारंबार। तब रिषि दीन्हौ ताकौं डार।
कह्यौ सर्प तैं भाष्यौ मोहिँ। सर्प रूप तूही नृप होहि।
जबै साप रिषि सौं नृप पायौ। तब रिषि-चरननि माथौ नायौ।
इहिँ सराप सौं मुक्ति ज्यौं होइ। रिषि कृपालु भाषौ अब सोइ।
कह्यौ जुधिष्ठिर देखै जोइ। तब उधार नृप तेरौ होइ।

---

† सूरसागर की प्राप्त प्रतियों में यह कथा नवम स्कंध की राम-कथा के उपरांत आई है। भागवत में भी सूर्य, चद्र आदि वशो के वर्णन-प्रसंग में यह नवम स्कध में ही रक्खी गई है। परंतु वास्तव में इसका उपयुक्त स्थान यहीं प्रतीत होता है।

नृप ऐसौ है परतिय-प्यार। मूरख करै सो बिना बिचार।
ज्यौं सुक नृप सौं कहि समुझायौ। सूरदास त्यौंही कहि गायौ॥ ७॥
॥ ४१८ ॥

इंद्र-अहिल्या-कथा राग बिलावल

† सुरपति गौतम-नारि निहारि। आतुर ह्वै गयौ बिना बिचार।
काग-रूप करि रिषि गृह आयौ। अर्धनिसा तिहिं बोल सुनायौ।
गौतम लख्यौ, प्रात है भयौ। न्हान काज सो सरिता गयौ।
तब सुरपति मन माहिँ बिचारी। पतिव्रता है गौतम-नारी।
गौतम-रूप बिना जौ जैयै। ताके साप अग्नि सौं तैयै।
गौतम-रूप धारि तहँ आयौ। मूर्च्छित भयौ अहिल्या पायौ।
कह्यौ अहिल्या, तू को आहि? बेगि इहाँ तैं बाहिर जाहि।
इहिँ अंतर गौतम गृह आयौ। इंद्र जानि यह बचन सुनायौ।
मूरख तैं पर-तिय मन लायौ। इंद्रानी तजिकै ह्याँ आयौ।
इक भग की तोहिँ इच्छा भई। भग सहस्र मैं तोकौं दई।
इंद्र सरीर सहस भग पाइ। छप्यौ सो कमल-नाल मैं जाइ।
काल बहुत ता ठौर बितायौ। सुरगुरु रिषिनि सहित तहँ आयौ।
जज्ञ कराइ प्रयाग न्हवायौ। तौहूँ पूरब तन नहिँ पायौ।

---

† यह पद भी सूरसागर की प्राप्त प्रतियों में नहुष-कथा के साथ नवम स्कंध में ही मिलता है। नहुष की कथा से इस कथा का संबंध यह प्रतीत होता है कि दोनों ही परस्त्री-प्रेम का प्रतिफल बुरा बतलाकर सदाचार की शिक्षा देते हैं। अतएव यह पद भी उपर्युक्त पद के साथ इस स्थान पर लाकर रक्खा गया है।

तब सब रिषिनि दई आसीस। भग तैँ नेत्र करौ जगदीस।
भग अस्थान नेत्र तब भए। रिषि इंद्रहिँ लै सुरपुर गए।
परतिय-मोह इंद्र दुख पायौ। सो नृप मैँ तोहिँ कहि समुझायौ।
परतिय-मोह करै जो कोइ। जीवत नरक परत है सोइ।
सुक नृप सौं ज्यौं कहि समुझायौ। सूरदास त्यौंहीं कहि गायौ॥ ८॥
॥४१६॥

सप्तम स्कंध

श्री नृसिंह-अवतार

राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
हरि-चरननि सुकदेव सिर नाइ । राजा सौं बोल्यौ या भाइ ।
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ । सूर तरौ हरि के गुन गाइ ॥१॥

॥ ४२० ॥

राग बिलावल

नरहरि, नरहरि, सुमिरन करौ । नरहरि-पद नित हिरदय धरौ ।
नरहरि-रूप धरयौ जिहिँ भाइ । कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ ।
हरि जब हिरन्याच्छ कौं मारयौ । दसन-अग्र पृथ्वी कौं धारयौ ।
हिरनकसिप सौं दिति कह्यौ आइ । भ्राता-बैर लेहु तुम जाइ ।
हिरनकसिप दुस्सह तप कियौ । ब्रह्मा आइ दरस तब दियौ ।
कह्यौ तोहिँ इच्छा जो होइ । माँगि लेहि हमसौं बर सोइ ।
राति-दिवस नभ-धरनि न मरौं । अस्त्र-सस्त्र-परहार न डरौं ।
तेरी सृष्टि जहाँ लगि होइ । मोकौं मारि सकै नहिँ कोइ ।
ब्रह्मा कह्यौ, ऐसियै होइ । पुनि हरि चाहै करिहै सोइ ।
यह कहि ब्रह्मा निज पुर आए । हिरनकसिप निज भवन सिधाए ।

---

† यह पद (ना, नां इं) में नहीं है ।

भवन आइ त्रिभुवनपति भए। इंद्र, बरुन, सबही भजि गए।
ताकौ पुत्र भयौ प्रहलाद। भयौ असुर-मन अति अहलाद।
पाँच बरस की भई जब आइ। संडामर्कहिँ लियौ बुलाइ।
तिनकैं सँग चटसार पठायौ। राम-नाम सौं तिन चित लायौ।
संडामर्क रहे पचि हारि। राजनीति कहि बारंबार।
कह्यौ प्रहलाद, पढत मैं सार। कहा पढ़ावत और जँजार।
जब पाँड़े इत-उत कहुँ गए। बालक सब इकठौरे भए।
कह्यौ, "यह ज्ञान कहाँ तुम पायौ?" "नारद माता-गर्भ सुनायौ।"
सबनि कह्यौ, देउ हमैं सिखाइ। सबहिनि कैं मन ऐसी आइ।
कह्यौ सबनि सौं तब समुझाइ। सब तजि, भजौ चरन रघुराइ।
रामहिँ राम पढौ रे भाई। रामहिँ जहँ-तहँ होत सहाई।
इहाँ कोउ काहू कौ नाहिँ। रिन-संबंध मिलन जग माहिँ।
काल-अवधि जब पहुँचै आइ। चलत बार कोउ संग न जाइ।
सदा सँघाती श्री जदुराइ। भजियै ताहि सदा लव लाइ।
हर्त्ता-कर्त्ता आपै सोइ। घट-घट ब्यापि रह्यौ है जोइ।
तातैं द्वितिया और न कोइ। ताके भजैं सदा सुख होइ।
दुर्लभ जन्म सुलभ ही पाइ। हरि न भजै सो नरकहिँ जाइ।
यह जिय जानि बिषय परिहरौ। रामहि-राम सदा उच्चरौ।
सत संबत मानुष की आइ। आधी तौ सोवत ही जाइ।
कछु बालापन ही मैं बीतै। कछु बिरधापन माहिँ बितीतै।
कछु नृप-सेवा करत बिहाइ। कछु इक बिषय-भोग मैं जाइ।
ऐसैं हीं जो जनम सिराइ। बिनु हरि-भजन नरक महँ जाइ।

बालपनौ गए ज्वानी आवै। बृद्ध भए मूरख पछितावै।
तीनौंपन ऐसैं हीं जाइ। तातैं अबहिं भजौ जदुराइ।
बिषै-भोग सब तन मैं होइ। बिनु नर-जन्म भक्ति नहिं होइ।
जौ न करै तौ पसु सम होइ। तातैं भक्ति करौ सब कोइ।
जब लगि काल न पहुँचै आइ। हरि की भक्ति करौ चित लाइ।
हरि ब्यापक है सब संसार। ताहि भजौ अब सोचि-बिचार।
सिसु, किसोर, बिरधौ तनु होइ। सदा एकरस आतम सोइ।
ऐसौ जानि मोह कौं त्यागौ। हरि-चरनारबिंद अनुरागौ।
माटी मैं ज्यौं कंचन परै। त्यौंहीं आतम तन संचरै।
कंचन लै ज्यौं माटी तजै। त्यौं तन-मोह छाँड़ि, हरि भजै।
नर-सेवा तैं जौ सुख होइ। छनभंगुर थिर रहै न सोइ।
हरि की भक्ति करौ चित लाइ। होइ परम सुख, कबहुँ न जाइ।
ऊँच-नीच हरि गिनत न दोइ। यह जिय जानि भजौ सब कोइ।
असुर होइ, भावै सुर होइ। जो हरि भजै पियारौ सोइ।
रामहिं राम कहौ दिन-रात। नातरु जन्म अकारथ जात।
सौ बातनि की एकै बात। सब तजि भजौ जानकी-नाथ।
सब चेटुअनि[1] मन ऐसी आई। रहे सबै हरि-पद चित लाई।
हरि-हरि नाम सदा उच्चारैं। बिद्या और न मन मैं धारैं।
तब संडामर्का संकाइ। कह्यौ असुर-पति सौं यौं जाइ।
तुव सुत कौं पढ़ाइ हम हारे। आपु पढ़ै नहिं, और बिगारै।
राम-नाम नित रटिबौ करै। राजनीति नहिं मन मैं धरै।

---

① चेटियन—१। चेते ऐसे बनि आई—२। जन ते ऐसी बनि आई—३। लरिकनि ऐसी मन भाई—८।

तातैं कही तुम्हैं हम आइ । करिबे होइ सु करौ उपाइ ।
हरिनकसिप तब सुतहिं बुलाइ । कछुक प्रीति, कछु डर दिखराइ ।
बहुरौ गोद माहिं बैठार । कह्यौ, पढ़े कहा बिद्या-सार ?
"सार बेद चारौं कौ जोइ । छैऊ सास्त्र-सार पुनि सोइ ।
'सर्व पुरान माहिं जो सार । राम नाम मैं पढ़्यौ बिचार ।"
कह्यौ, याहि लै जाउ उठाइ । सुमिरत मो रिपु कौं चित लाइ ।
मेरी ओर न कछू निहारौ । याकौं पावक भीतर डारौ ।
जौ ऐसी करतहुँ नहिं मरै । डारि देहु गज मैमत-तरैं ।
पर्वत सौं इहिं देहु गिराइ । मरै जौन बिधि मारौ जाइ ।
नृप-आज्ञा लयौ कुँवर उठाइ । कुँवर रह्यौ हरि-पद चित लाइ ।
असुर चले तब कुँवर लिवाइ । हरि जू ताकी करी सहाइ ।
असुरनि गिरि तैं दियौ गिराइ । राखि लियौ तहँ त्रिभुवनराइ ।
पुनि गज मैमत आगैं डारयौ । राम-नाम तब कुँवर उचारयौ ।
गज दोउ दंत टूटि धर परे । देखि असुर यह अचरज डरे ।
बहुरौ[1] दीन्हे नाग ढुकाइ[2] । जिनकी ज्वाला गिरि जरि जाइ ।
हरि जू तहँ हूँ करी सहाइ । नाग रहे सिर नीचैं नाइ ।
पुनि पावक मैं दियौ गिराइ । हरि जू ताकी करी सहाइ ।
करैं उपाइ सेा बिरथा जाइ । तब सब असुर रहे खिसिआइ ।
कह्यौ असुर-पति सौं उन जाइ । मरत नहीं बहु किए उपाइ ।

---

① बहुरौ नाग दयौ लप-टाइ—१ । ② धुकाइ—६ । डसाइ—८ ।

हम तौ बहुत भाँति पचिहारे। इन तौ रामहिँ नाम उचारे।
नृप कह्यौ, "मंत्र-जंत्र कछु आहि। कै छल करत कछू तू आहि?
'तोकौं कौन बचावत आइ। सो तू मोकौं देहि बताइ"।
"मंत्र-जंत्र मेरैं हरि-नाम। घट-घट मैं जाकौ बिस्राम।
'जहाँ-तहाँ सोइ करत सहाइ। तासौं तेरौ कछु न बसाइ"।
कह्यौ, "कहाँ सो मोहिँ बताइ। ना तरु तेरौ जिय अब जाइ"।
"सो सब ठौर", "खंभहूँ होइ?" कह्यौ प्रहलाद, "आहि, तू जोइ।"
हिरनकसिप क्रोधहिँ मन धारचौ। जाइ खंभ कौं मुष्टिक मारचौ।
फटि तब खंभ भयौ द्वै फारि। निकसे हरि नरहरि-बपु धारि।
देखि असुर चक्रित ह्वै गयौ। बहुरि गदा लै सन्मुख भयौ।
हरि तासौं कियौ जुद्ध बनाइ। तब सुर मुनि सब गए डराइ।
संध्या समय भयौ जब आइ। हरि जू ताकौं पकरचौ धाइ।
निज जंघनि पर ताहि पछारचौ। नख-प्रहार तिहिं उदर बिदारचौ।
जै-जैकार दसौं दिसि भयौ। असुर देह तजि, हरि-पुर गयौ।
ब्रह्मादिक सब रहे अरगाइ। क्रोध देखि कोउ निकट न जाइ।
बहुरौ ब्रह्मा सुरनि समेत। नरहरि जू कैं जाइ निकेत।
करि दंडवत बिनय उच्चारी। "तुम अनंत-बिक्रम बनवारी।
'तुमहीं करत त्रिगुन बिस्तार। उतपति, थिति, पुनि करत सँहार।
करौ छमा कियौ असुर-सँहार।" गयौ न क्रोध, गयौ सो निहार।
महादेव पुनि बिनय उचारी। "नमो-नमो भक्तनि-भयहारी।
'भक्त-हेत तुम असुर सँहारौ। श्री नरहरि, अब क्रोध निवारौ"।
क्रोध न गयौ, तब ऐसैं कह्यौ। "छमौ प्रलय कौ समय न भयौ"।

तबहूँ गयो न क्रोध-बिकार। महादेव हू फिरे निहार।
बहुरि इंद्र अस्तुति उच्चारी। "मुयो असुर, सुर भए सुखारी।
'ह्वैहैं जज्ञ अब देव मुरारी। छमिये क्रोध सुरनि सुखकारी"।
पुनि लछमी यौं बिनय सुनाई। "डरौं देखि यह रूप नवाई।
'महाराज, यह रूप दुरावहु। रूप चतुर्भुज मोहिं दिखावहु"।
बरुन, कुबेरादिक पुनि आइ। करी बिनय तिनहूँ बहु भाइ।
तौहूँ क्रोध छमा नहिं भयो। तब सब मिलि प्रहलादहिं कह्यो।
तुम्हरैं हेत लियो अवतार। अब तुम जाइ करौ मनुहार।
तब प्रहलाद निकट-हरि आइ। करि दंडवत परयो गहि पाइ।
तब नरहरि जू ताहि उठाइ। ह्वै कृपाल बोले या भाइ।
"कहु जो मनोरथ तेरौ होइ। छाँड़ि बिलंब करौं अब सोइ।"
"दीनानाथ, दयाल, मुरारि। मम हित तुम लीन्हौ अवतार।
'असुर असुचि है मेरी जाति। मोहिं सनाथ कियो सब भाँति।
'भक्त तुम्हारी इच्छा करैं। ऐसे असुर किते संहरैं।
'भक्तनि हित तुम धारी देह। तरिहैं गाइ-गाइ गुन एह।
'जग-प्रभुत्व प्रभु, देख्यो जोइ। सपन[1]-तुल्य छनभंगुर सोइ।
'इंद्रादिक जातैं भय करयो। सो मम पिता मृतक ह्वै परयो।
'साधु-संग प्रभु, मोकौं दीजै। तिहि संगति निज भक्ति करीजै।
'और न मेरी इच्छा कोइ। भक्ति अनन्य तुम्हारी होइ।
'और जो मो पर किरपा करौ। तौ सब जीवनि कौं उद्धरौ।

---

(१) सो बिन तुम—१, १६।

'जेा कहौ, कर्मभोग जब करिहैं। तब ये जीव सकल निस्तरिहैं।
'मम कृत इनके बदलैं लेहु। इनके कर्म सकल मोहिं देहु।
'मोकौं नरक माहिं लै डारौ। पै प्रभु जू, इनकौं निस्तारौ।"
पुनि कह्यौ, "जीव दुखित संसार। उपजत-बिनसत बारंबार।
'बिना कृपा निस्तार न होइ। करौ कृपा, मैं माँगत सोइ।
'प्रभु, मैं देखि तुम्हैं सुख पावत। पै सुर देखि सकल डर पावत।
'तातैं महा भयानक रूप। अंतर्धान करौ सुर-भूप।"
हरि कह्यौ, "मोहिं बिरद की लाज। करौ मन्वंतर लौं तुम राज।
'राज-लच्छमी-मद नहिं होइ। कुल इकीस लौं उधरै सोइ।
'जो मम भक्त के[1] मग मैं जाइ। होइ पवित्र ताहि परसाइ।
'जा कुल माहिं भक्त मम होइ। सप्त पुरुष लौं उधरै सोइ।"
पुनि प्रहलाद राज बैठाए। सब असुरनि मिलि सीस नवाए।
नरहरि देखि हर्ष मन कीन्हौ। अभयदान प्रहलादहिं दीन्हौ।
तब ब्रह्मा बिनती अनुसारी। "महाराज, नरसिंह, मुरारी।
'सकल सुरनि कौ कारज सरौ। अंतर्धान रूप यह करौ।"
तब नरहरि भए अंतर्धान। राजा सौं सुक कह्यौ बखान।
जो यह लीला सुनै-सुनावै। सूरदास हरि भक्ति सो पावै ॥२॥

॥ ४२१ ॥

---

① नरक में—१, ११। भक्तन मुख में—६, ८।

* राग रामकली

† पढौ भाइ[1], राम-मुकुंद-मुरारि ।
॥ चरन-कमल मन[2]-सनमुख राखौ, कहूँ न आवै हारि ।
कहै प्रहलाद सुनौ रे बालक, लीजै जनम सुधारि ।
को है हिरनकसिप अभिमानी, तुम्हैं[3] सकै जो मारि ?
॥ जनि डरपौ जड़मति काहू सौं, भक्ति करौ इकसारि ।
राखनहार अहै[4] कोउ औरै, स्याम धरे भुज चारि ।
सत्य[5] स्वरूप देव नारायन, देखौ हृदय बिचारि ।
सूरदास प्रभु[6] सबमैं व्यापक, ज्यौं धरनी मैं बारि ॥३॥
॥४२२॥

राग कान्हरौ

जो मेरे भक्तनि ुखदाई ।
सो मेरे इहिँ लोक बसौ जनि, त्रिभुवन छाँड़ि अनत कहुँ जाई ।
सिव-बिरंचि नारद मुनि देखत, तिनहुँ न मोकौं सुरति दिवाई ।
बालक, अबल, अजान रह्यौ वह, दिन-दिन देत त्रास अधिकाई ।
खंभ फारि, गल गाजि मत्त बल, क्रोधमान छबि बरनि न आई ।

---

* (ना) स्यामकल्यान । (का, ना) देवगंधार । (कौं, रा) सारंग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

॥ ये दोनो चरण (वे, ना, श्या) में नहीं हैं ।

(१) भैया कृष्न गोबिंद—१, २, १६ ।

(२) मानसमुख—८ । (३) जोर सकै तुम मारि—१, २, १६ । (४) वहै कोउ औरै—१ । और है कोई—३, ६, ८ । (५) कर्म रूप सु (कर्म स्वरूप) देव नारायन नहिँ दीजै सु बिसारि—१, १६ । (६) जो हरि से मीता कबहुँ न आवै हारि—१६ ।

नैन अरुन, बिकराल दसन अति, नख सौं हृदय बिदार्‌यौ जाई।
कर जोरे प्रहलाद जो बिनवै, बिनय सुनौ असरन-सरनाई।
अपनी रिस निवारि प्रभु, पितु मम अपराधी, सो परम गति पाई।
दीनदयाल, कृपानिधि, नरहरि, अपनौ जानि हियैं लियौ लाई।
सूरदास प्रभु पूरन ठाकुर, कह्यौ[1], सकल[2] मैं हूँ[3] नियराई ॥४॥
॥४२३॥

* राग धनाश्री

† तब लगि हौं बैकुंठ न जैहौं।
सुनि प्रहलाद प्रतिज्ञा मेरी, जब लगि तव सिर छत्र न दैहौं।
मन-बच-कर्म जानि जिय अपनै, जहाँ-जहाँ जन तहँ-तहँ ऐहौं।
निर्गुन-सगुन होइ सब देख्यौ, तोसौं भक्त कहूँ नहिं पैहौं।
मो देखत मो दास दुखित भयौ, यह कलंक हौं कहाँ गँवैहौं!
हृदय कठोर कुलिस तैं मेरौ, अब नहिं दीनदयालु कहैहौं।
गहि तन हिरनकसिप कौ चीरौं, फारि उदर तिहिं रुधिर नहैहौं।
यह[4] हित मनै कहत सूरज प्रभु, इहिं[5] कृति कौ फल तुरत चखैहौं ॥५॥
॥४२४॥

राग मारू

ऐसी को सकै करि बिनु मुरारी।
कहत प्रहलाद के धारि नरसिंह बपु, निकसि आए तुरत खंभ फारी।

---

① गह्यौ—६, ८। ② संकही में—१६। ③ हौं—२।
* (ना) बिलावल। (कां) कान्हरा।
† यह पद (रा) में नहीं है।
④ इहिं हित मते—१६।
⑤ जाकौ फल करि तोहिं दिखैहौं—२। या कृत कौ फल—१६।

हिरनकस्यप निरखि रूप चकित भयौ, बहुरि कर लै गदा असुर-धायौ ।
हरि गदा-जुद्ध तासौं कियौ भली बिधि बहुरि संध्या समय होन आयौ ।
गहि असुर धाइ, पुनि नाइ निज जंघ पर, नखनि सौं उदर डारयौ बिदारी ।
देखि यह सुरनि बर्षा करी पुहुप की, सिद्ध-गंधर्ब जय-धुनि उचारी ।
बहुरि बहु भाइ प्रहलाद अस्तुति करी, ताहि दै राज बैकुँठ सिधाए ।
भक्त कैं हेत हरि धरयौ नरसिंह-बपु, सूर जन जानि यह सरन आए ॥६॥
॥४२५॥

भगवान् का श्री शिव को साहाय्य-प्रदान

*राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
हरि ज्यौं सिव की करी सहाइ । कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ ।
एक समय सुर-असुर प्रचारि । लरे भई असुरनि की हारि ।
तिन ब्रह्मा कैं हित तप कीन्हौ । ब्रह्मा प्रगटि दरस तिन्ह दीन्हौ ।
तब ब्रह्मा सौं कह्यौ सिर नाइ । हमरी जय ह्वै है किहिं भाइ ?
ब्रह्मा तब यह बचन उचारौ । मय माया-मय कोट सँवारौ ।
तामैं बैठि सुरनि जय करौ । तुम उनके मारैं नहिं मरौ ।
असुरनि यह मय कौं समुझाई । तब मय दीन्हौ कोट बनाई ।
लोह तरैं, मधि रूपा लायौ । ताके ऊपर कनक लगायौ ।
जहँ लै जाइ तहाँ वह जाइ । त्रिपुर नाम सो कोट कहाइ ।
गढ़ कैं बल असुरनि जय पाइ । लियौ सुरनि सौं अमृत छिनाइ ।
सुर सब मिलि गए सिव-सरनाइ । सिव तब तिनकी करी सहाइ ।

---

*(ना) भैरवी ।

पै सिव जाकौं मारैं धाइ। अमृत प्याइ तिहिं लेहिं जिवाइ।
तब सिव कीन्हौ हरि कौ ध्यान। प्रगट भए तहँ श्रीभगवान।
सिव हरि सौं सब कथा सुनाई। हरि कह्यौ, अब मैं करौं सहाई।
सुंदर गऊ-रूप हरि कीन्हौ। बछरा करि ब्रह्मा सँग लीन्हौ।
अमृत-कुंड मैं पैठे जाइ। कह्यौ असुरनि, मारौ इहिं गाइ।
एकनि कह्यौ, याहि मत मारौ। याकौ सुंदर रूप निहारौ।
केतिक अमृत पिए यह भाई। हरि मति तिनकी यौं भरमाई।
हरि अमृत लै[1] गए अकास। असुर देखि यह भए उदास।
कह्यौ, इनहीं हिरनाच्छहिं मारचौ। हिरनकसिप इनहीं संहारचौ।
यासौं हमरौ कछु न बसाइ। यह कहि असुर रहे खिसियाइ।
बान एक हरि सिव कौं दियौ। तासौं सब असुरनि छय कियौ।
या बिधि हरि जू करी सहाइ। मैं सो तुमकौं दई सुनाइ।
सुक ज्यौं नृप कौं कहि समुझायौ। सूरदास जन त्यौंही गायौ॥ ७॥

॥४२६॥

नारद-उत्पत्ति-कथा

* राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि - चरनारबिंद उर धरौ।
हरि भजि जैसैं नारद भयौ। नारद ब्यासदेव सौं कह्यौ।
कहौं सो कथा, सुनौ चित धार। नीच-ऊँच हरि कैं इकसार।
गंधब ब्रह्मा - सभा मँझारि। हँस्यौ अप्सरा-ओर निहारि।
कह्यौ ब्रह्मा, दासी-सुत होहि। सकुच न करी देखि तैं मोहिं।

---

① पिय (पिइ)—१, १६। * (ना) बिभास।
पी—२।

भयौ दासी - सुत ब्राह्मन - गेह । तुरत छाँड़िकै गंधब - देह ।
ब्राह्मन-गृह हरि के जन छाए । दासी-दास सेव - हित लाए ।
हरि-जन हरि-चरचा जो करै । दासी-सुत सो हिरदैँ धरै ।
सुनत-सुनत उपज्यौ बैराग । कह्यौ, जाउँ क्यौं माता त्याग ।
ताकी माता खाई कारैँ । सो मरि गई साँप के मारैँ ।
दासी - सुत बन - भीतर जाइ । करो भक्ति हरि-पद चित लाइ ।
ब्रह्म-पुत्र तन तजि सो भयौ । नारद यौँ अपनैँ मुख कह्यौ ।
हरि की भक्ति करै जो कोइ । सूर नीच सौँ ऊँच सो होइ ॥ ८ ॥

॥४२७॥

अष्टम स्कंध

* राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि - चरनारबिंद उर धरौ।
हरि-चरननि सुकदेव सिर नाइ। राजा सौं बोल्यौ या भाइ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ। सूर तरौ[1] हरि के गुन गाइ॥ १॥

॥ ४१८ ॥

गज-मोचन-अवतार

* राग बिलावल

गज-मोचन ज्यौं भयौ अवतार। कहौं, सुनौ सो अब चित धार।
गंधब एक नदी मैं जाइ। देवल रिषि कौं पकरयौ पाइ।
देवल कह्यौ, ग्राह तू होहि। कह्यौ गंधर्ब, दया करि मोहिं।
जब गजेंद्र कौ पग तू गैहै। हरि जू ताकौ आनि छुटैहै।
भएँ अस्पर्स देव - तन धरिहै। मेरौ कह्यौ नाहिं यह टरिहै।
राजा इंद्रद्युम्न कियौ ध्यान। आए अगस्त्य, नहीं तिन जान।
दियौ साप गजेंद्र तू होहि। कह्यौ नृप, दया करौ रिषि मोहिं।
कह्यौ, तोहिं ग्राह आनि जब गैहै। तू नारायन सुमिरन कैहै।
याही बिधि तेरी गति होइ। भयौ त्रिकूट पर्बत गज सोइ।
कालहिं पाइ ग्राह गज गह्यौ। गज बल करि-करिकै थकि रह्यौ।
सुत पत्नीहू बल करि रहे। छूट्यौ नहीं ग्राह के गहे।

---

* (ना) विभास।

[1] दास—१, १६।

* (ना) विभास।

ते सब भूखे, दुःखित भए। गज कौ मोह छाँड़ि उठि गए।
तब गज हरि की सरनहिँ आयौ। सूरदास प्रभु ताहि छुड़ायौ॥ २॥
॥ ४२६ ॥

* राग बिलावल

माधौ जू, गज ग्राह तैँ छुड़ायौ।
निगमनि हूँ मन-बचन-अगोचर, प्रगट सो रूप दिखायौ।
सिव-बिरंचि देखत सब ठाढ़े, बहुत दीन[1] दुख पायौ।
बिन बदलै उपकार करै को, काहूँ करत न आयौ।
चितत ही चित मैँ चितामनि, चक्र लिए कर धायौ।
अति करुना-कातर करुनामय, गरुड़हु कौँ छुटकायौ।
सुनियत सुजस जो निज जन कारन कबहुँ न गहरु लगायौ।
ना जानौँ सूरहिँ इहिँ औसर, कौन दोष बिसरायौ॥ ३॥
॥ ४३० ॥

* राग बिलावल

हरबर[2] चक्र धरे हरि धावत।
गरुड़ समेत सकल सेनापति, पाछैँ लागे आवत।
चलि नहिँ सकत गरुड़ मन डरपत, बुधि बल बलहिँ बढावत।
मनहूँ[3] तैँ अति बेग अधिक करि, हरिजू चरन चलावत।

---

* (ना) नटनारायनी। (का, ना, क) धनाश्री। (का) सारंग।

① दिनन—२।

: (ना) बडहंस।

② हरि कर चक्र धरे धर धावत—१, ३, ६, ८, १६, १८, १६। ③ मनो पवन बस पत्र पुरातन अपनो चरन—१, ६, ८, १६।

को जानै प्रभु कहाँ चले हैं, काहूँ कछु न जनावत।
अति ब्याकुल गति देखि देव-गन, सोचि सकल दुख पावत।
गज-हित धावन, जन-मुकरावन, बेद बिमल जस गावत।
सूर समुझि, समुझाइ अनाथनि, इहिँ बिधि नाथ छुड़ावत॥ ४॥

॥ ४३१ ॥

* राग सारंग

† झाईँ[1] न मिटन[2] पाई, आए हरि आतुर ह्वै,
जान्यौ जब गज ग्राह लिए जात जल मैँ।
जादौपति[3], जदुनाथ, छाँड़ि खगपति-साथ,
जानि जन बिह्वल, छुड़ाइ लीन्हौ पल मैँ।
नीरहू तैँ न्यारौ कीनौ, चक्र नक्र-सीस छीनौ,
देवकी के प्यारे लाल ऐँचि लाए थल मैँ।
कहै सूरदास, देखि नैननि की मिटी प्यास,
कृपा कीन्ही गोपीनाथ, आए भुव-तल मैँ॥ ५॥

॥ ४३२ ॥

* राग बिलावल

‡ अब हौं सब दिसि हेरि रह्यौ।
राखत[4] नाहिँ कोउ करुनानिधि, अति बल ग्राह गह्यौ।

---

* (ना) कान्हरो।

† इस पद का पाठ बड़ा अस्त-व्यस्त था। समस्त प्रतियों की सहायता लेकर इसके सुधारने की चेष्टा की गई है।

① छापे न मिटन पाए—६, ८। ② मुनिन—२। ③ "यादव-पति यदुनाथ खगपति साथ जन जान्यौ बिहबल तब छाड़ि दियौ थल मैँ"—१।

* (का, ना) केदारा। (क) जैतश्री। (कौ) सारंग।

‡ यह पद (ना, स, ल, रा) मेँ नहीँ है।

④ तुम बिन कोऊ नाहिँ कृपानिधि—८।

सुर, नर, सब स्वारथ के गाहक, कत स्रम आनि करैं ?
उड़गन उदित तिमिर नहिँ नासत, बिन रवि रूप धरैं ।
इतनी बात सुनत करुनामय, चक्र गहे कर धाए ।
हति गज-सत्रु सूर के स्वामी, ततछन[1] सुख उपजाए ॥ ६ ॥

॥ ४३३ ॥

कूर्म-अवतार

* राग बिलावल

जैसैं भयौ कूर्म-अवतार । कहौं, सुनौ सो अब चित धार ।
नरहरि हिरनकसिप जब मारयौ । अरु प्रहलाद राज बैठारयौ ।
ताकौ पुत्र बिरोचन रयौ । ताकैं बहुरि पुत्र बलि भयौ ।
बलि सुरपति कौं बहु दुख दयौ । तब सुरपति हरि-सरनैं गयौ ।
हरि जू अपनौ बिरद सँभारयौ । सूरज-प्रभु कूरम-तनु धारयौ ॥ ७ ॥

॥ ४३४ ॥

* राग मारू

सुरनि हित हरि कछप-रूप धारयौ ।
मथन करि जलधि, अमृत निकारयौ ।
चतुर्मुख त्रिदसपति बिनय हरि सौं करी, बलि असुर सौं सुरनि दुःख पायौ ।
दीनबंधू, दयाकरन, असरन-सरन, मंत्र यह तिनहिँ निज मुख सुनायौ ।
बासुकी नेति अरु मंदराचल रई, कमठ मैं आपनी पीठि धारौं ।
असुर सौं हेत करि, करौ सागर मथन, तहाँ तैं अमृत कौं पुनि निकारौं ।
रतन चौदह तहाँ तैं प्रगट होहिँ तब, असुर कौं सुरा, तुम्हैं अमृत प्याऊँ ।
जीतिहौ तब असुर महा बलवंत कौं, मरैं नहिँ देवता, यौं जिवाऊँ ।

---

(१) ता छिन—१,१६ । * (ना) भैरवी । ☆ (ना) भैरव । (ना) बिलावल ।

इंद्र मिलि सुरनि बलि-पास आए बहुरि, उन कह्यौ, कहौ किहिँ काज आए ?
त्रिदसपति समुद के मथन के बचन जो, सेा सकल ताहि कहिकै सुनाए।
बलि कह्यौ, बिलँब अब नैंकु नहिँ कीजियै, मंदराचल अचल चले धाई।
दोउ इक मंत्र ह्वै जाइ पहुँचे तहाँ, कह्यौ, अब लीजियै इहिँ उचाई।
मंदराचल उपारत भयौ स्रम बहुत, बहुरि लै चलन कौँ जब उठायौ।
सुर-असुर बहुत ता ठौरही[1] मरि गए, दुहुनि कौ गर्व यौँ हरि नसायौ।
तब दुहुँनि ध्यान भगवान कौ धरि कह्यौ, बिन तुम्हारी कृपा गिरि न जाई।
बाम कर सौँ पकरि, गरुड़ पर राखि हरि, छीर कैँ जलधि तट धरचौ ल्याई।
कह्यौ भगवान अब बासुकी ल्याइयै, जाइ तिन बासुकी सौँ सुनायौ।
मानि भगवंत-आज्ञा सेा आयौ तहाँ, नेति करि अचल कौँ सिंधु नायौ।
मंदराचल समुद माहिँ बूड़न लग्यौ, तब सबनि बहुरि अस्तुति सुनाई।
कूर्म कौ रूप धरि, धरचौ गिरि पीठि पर, सुर-असुर सबनि कैँ मन बधाई।
पूछ[2] कौँ तजि असुर दौरिकै मुख गह्यौ, सुरनि तब पूँछ की ओर लीन्ही।
मथत भए छीन, तब बहुरि बिनती करी, श्रीमहाराज निज सक्ति दीन्ही।
भयौ हलाहल प्रगट प्रथमहीँ मथत जब, रुद्र कैँ कंठ दियौ ताहि धारी।
चंद्रमा बहुरि जब मथत आयौ निकसि, सेाउ करि कृपा दीन्हौ मुरारी।
कामनाधेनु पुनि सप्तरिषि कौँ दई, लई उन बहुत मन हर्ष कीन्हे।
अप्सरा, पारिजातक, धनुष, अस्व, गज स्वेत, ये पाँच सुरपतिहिँ दीन्हे।
संख, कौस्तुभमनी, लई पुनि आप हरि, लच्छमी बहुरि तहँ दइ दिखाई।
परम सुंदर, मनौ तड़ित है दूसरी[3], कमल की माल कर लियेँ आई।

---

① भार ते—६, ८। ② पूजि गनपति—२, ३। ③ दर्शनीय—१। दर्शनी—१६।

सकल भूषन मनिनि के बने सकल अँग, बसन बर अरुन सुंदर सुहायौ।
देखि सुर-असुर सब दौरि लागे गहन, कह्यौ मैं बर बरौं आप-भायौ।
जो चहै मोहिं मैं ताहि नाहौं चहौं, असुर कौ राज थिर नाहिं देखौं।
तपसियनि देखि कह्यौ, क्रोध इनमैं बहुत, ज्ञानियनि मैं न आचार पेखौं।
सुरनि कौं देखि कह्यौ, ये पराधीन सब, देखि बिधि कौं कह्यौ, यह बुढायौ।
चिरंजीवीनि कौं देखि कह्यौ निडर ये, लोक तिहुँ माहिं कोउ चित न आयौ।
बहुरि भगवान कौं निरखि सुंदर परम, कह्यौ, इन माहिं गुन हैं सुभाए।
पै न इच्छा इन्हैं है कछू बस्तु की, अरु न ये देखि कै मोहिं लुभाए।
कबहुँ कियैं भक्ति हू के न ये रीझहीं, कबहुँ कियैं बैर के रीझि जाहीं।
हरि कह्यौ, मम हृदय माहिं तू रहि सदा, सुरनि मिलि देव-दुंदुभि बजाई।
धन्य-धनि कह्यौ पुनि लच्छमी सौं सबनि, सिद्ध-गंधर्ब जय-ध्वनि सुनाई।
बहुरि धन्वंत्रि आयौ समुद सौं निकसि, सुरा अरु अमृत निज संग लायौ।
भयौ आनंद सुर-असुर कौं देखि कै, असुर तब अमृत करि बल छिनायौ।
सुरनि भगवान सौं आनि बिनती करी, असुर सब अमृत लै गए छिनाई।
॥कह्यौ भगवान्, चिंता न कछु मन धरौ, मैं करौं अब तुम्हारी सहाई।
॥परसपर असुर तब जुद्ध लागे करन, होइ बलवंत सोइ लै छिनाई।
मोहिनी रूप धरि स्याम आए तहाँ, देखि सुर-असुर सब रहे लुभाई।
आइ असुरनि कह्यौ, लेहु यह अमृत तुम, सबनि कौं बाँटि, मेटौ लराई।
हँसि कह्यौ, नहीं हम-तुम्हैं कछु मित्रता, बिना बिस्वास बाँट्यौ न जाई।
कह्यौ, तुम[1]-बाँटि पर हमैं बिस्वास है, देहु तुम बाँटि जो धर्म होई।

॥ ये दो चरण (ना, क, ना, श्या) में नहीं हैं।

① पुनि पायँ परि—२, ३।

कह्यो, सब सुर-असुर मथन कीन्ह्यो जलधि, सबनि देउँ बाँटि, है धर्म सोई ।
कह्यो, जो करौ सो हमैं परमान है, असुर-सुर पाँति करि तब बिठाई ।
असुर-दिसि चितै मुसुक्याइ मोहे सकल, सुरनि कौं अमृत दीन्हयौ पियाई ।
राहु ससि-सूर के बीच मैं बैठि कै, मोहिनी सौं अमृत माँगि लीन्ह्यौ ।
सूर-ससि कह्यो, यह असुर, तब कृष्नजू लै सुदरसन सु द्वै टूक कीन्ह्यो ।
राहु सिर, केतु धर कौ भयो तबहिं तैं, सूर-ससि कौं सदा दुःखदाई ।
करत भगवान रच्छा जो ससि-सूर की, होत है नित सुदरसन सहाई ।
करि अंतरधान हरि मोहिनी-रूप कौं, गरुड़ असवार ह्वै तहाँ आए ।
असुर चक्रित भए, गई वह नारि कहँ, सुर-असुर जुद्ध-हित दोउ धाए ।
सुरनि की जीति भई, असुर मारे बहुत, जहाँ-तहँ गए सबही पराई ।
सूर प्रभु जिहिं करै कृपा, जीतै सोई, बिनु कृपा जाइ उद्यम बृथाई ॥ ८ ॥

॥ ४३५ ॥

* राग बिहागरौ

† ऐसी को सकै करि तुम[1] बिनु मुरारी ।
सुरनि के कहत ही, धारि कूरम तनहिं, मंदराचल लियो पीठि धारी ।
सिधु मथि सुरासुर अमृत बाहर कियो, बलि असुर लै चल्यो सो छिनाई ।
मोहिनी-रूप तुम दरस तिनकौं दियो, आनि तब सबनि बिनती सुनाई ।
अमृत यह बाँटि कै देहु तुम सबनि कौं, कृपा करि रारि डारौ मिटाई ।
सुर-असुर-पाँति करि, सुरा असुरनि दई, सुरनि कौं अमृत दीन्हौ पियाई ।
राहु-सिर, केतु धर, भयो यह तबहिं तैं, सूर-ससि दियो ताकौं बताई ।

---

* (का, कां, रा) मारू । मे नही है ।
† यह पद (वे, ना, बृ, श्या) (१) बिना तुम—३, ६, ८, १८ ।

चक्र सौं काटि सिर, कियौ द्वै टूक तब, असुरहूँ देवगति तुरत पाई।
भक्तबच्छल, कृपाकरन, असरन-सरन, पतित-उद्धरन कहै बेद गाई।
चारिहूँ जुग करी कृपा परकार[1] जेहि, सूरहू पर करौ तेहिं सुभाई ॥ ६ ॥
॥ ४३६ ॥

मोहिनी-रूप, शिव-छलन राग मारू

हरि कृपा करै जिहिं, जितै सोई। वादि अभिमान जनि करौ कोई।
पाइ सुधि मोहिनी की सदासिव चले, जाइ भगवान सौं कहि सुनाई।
असुर अजितेंद्रि जिहिं देखि मोहित भए, रूप सो मोहिं दीजै दिखाई।
हरि कह्यौ, "ब्रह्म ब्यापक निराकार सौं[2] मगन तुम, सगुन लै कहा करिहौ" ?
पुनि कह्यौ, "बिनय मम मानि लीजै प्रभो, उमा देख्यौ चहति, कृपा धरिहौ" ?
हँसि कह्यौ, "तुम्हैं दिखराइहौं रूप वह, करौ बिस्राम इक ठौर जाई"।
बैठि एकांत जोहन लगे पंथ सिव, मोहिनी रूप कब दै दिखाई।
ह्वै अंतरधान हरि, मोहिनी रूप धरि, जाइ बन माहिं दीन्हें दिखाई।
सूर-ससि किधौं चपला परम सुंदरी, अंग-भूषननि छवि कहि न जाई।
हाव अरु भाव करि चलत, चितवत जबै, कौन ऐसौ जो मोहित न होई !
उमा कौं छाँड़ि अरु डारि मृगचर्म कौं, जाइकै निकट रहे[3] रुद्र जोई।
रुद्र कौं देखि कै मोहिनी लाज करि, लियौ अँचल, रुद्र तब अधिक मोह्यौ।
उमाहूँ देखि पुनि ताहि मोहित भई, तासु सम रूप अपनौ न जोह्यौ।
रुद्र तजि धीर जब जाइ ताकौं गह्यौ, सो चली आपु कौं तब छुड़ाई।
रुद्र कौ बीर्य खसि कै परचौ धरनि पर, मोहिनी रूप हरि लियौ दुराई।

---

① सुर संत पर—६, ८। ② सो निगुन—१, ६, ८, १६। ③ भयौ बिकल—२।

देखिकै उमा कौं रुद्र लज्जित भए, कह्यौ मैं कौन यह काम कीनौ।
इंद्रि-जित हौं कहावत हुतौ, आपु कौं समुझि मन माहिँ ह्वै रह्यौ खीनौ।
चतुरभुज रूप धरि आइ दरसन दियौ, कह्यौ, सिव सोच दीजै बिहाई।
सम तुम्हारे नहीं दूसरौ जगत मैं, कह्यौ तुम, रूप तब दियौ दिखाई।
नारि के रूप कौं देखि मोहै न जो, सो नहीं लोक तिहुँ माहिँ जायौ।
सूर स्वामी-सरन रहति माया सदा, को जगत जो न कपि ज्यौं नचायौ॥१०॥

॥ ४३७ ॥

सुंद-उपसुंद-वध — * राग मारू

† असुर द्वै हुते बलवंत भारी। [1]सुंद-उपसुंद स्वेच्छा-बिहारी।
भगवती तिन्हैं दीन्हीं दिखाई। देखि सुंदरि रहे दोउ लुभाई।
भगवती कह्यौ तिनकौं सुनाई। जुद्ध जीतै सो मोहिँ बरै आई।
तब दुहुँनि जुद्ध कीन्हौ बनाई। लरि मुए तुरत ही दोउ भाई।
देखिकै नारि मोहित जो होवै। आपनौ मूल या बिधि सो खोवै।
सुक नृपति पाहिँ जिहिँ बिधि सुनाई। सूर जनहूँ तिहीं भाँति गाई॥११॥

॥ ४३८ ॥

वामन-अवतार — राग बिलावल

जैसैं भयौ बावन अवतार। कहौं, सुनौ सो अब चित धार।
हरि जब अमृत सुरनि पियायौ। तब बलि असुर बहुत दुख पायौ।

---

* (वे) बिलावल।

† भागवत के इस स्कंध में सुद उपसुंद अथवा शुंभ-निशुंभ का कोई प्रसंग नहीं आया है। परंतु सूरसागर की सभी प्रतियों में यह इसी स्थान पर आता है। अत इस संस्करण में भी यहीं रक्खा गया है।

① सुभ अनसुंभ सुर जीत हारी—३, ६, ८।

सुक्र ताहि पुनि जज्ञ करायौ। सुर[1]-जय, राज-त्रिलोकी पायौ।
निन्यानबे जज्ञ जब किये। तब दुख भयौ अदिति के हिये।
हरि-हित उन पुनि बहु तप करयौ। सूर स्याम बामन-बपु धरयौ ॥१२॥
॥ ४३६ ॥

* राग मलार

द्वारैं ठाढे हैं द्विज[2] बावन।
चारौ[3] बेद पढत मुख आगर, अति [4]सुकंठ-सुर-गावन।
बानी सुनि बलि पूछन लागे, इहाँ बिप्र कत[5] आवन?
चरचित चंदन नील कलेवर, बरषत[6] बूँदनि सावन।
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौ, कह्यौ माँगु मन-भावन।
तीनि पैंड़ बसुधा हौं चाहौं, परनकुटी कौं छावन।
इतनौ कहा बिप्र तुम माँग्यौ, बहुत रतन देउँ गाँवन।
सूरदास प्रभु बोलि[7] छले बलि, धरयौ पीठि पद पावन ॥ १३ ॥
॥ ४४० ॥

* राग मलार

राजा, इक पंडित पौरि तुम्हारी।
चारौ बेद पढ़त मुख-आगर, ह्वै बावन-बपु-धारी।

---

① अजय राज तिरलोकी—२।

* (ना, का, ई, रा) बिलावल। (कां) सारंग।

② बलि—२, ३। ③ बेद पढत स्रवनन रुचि उपजत अति सुंदर सुर गावत—१६। ④ सुगध—१, ३, ६, ८। सुढग—१६। ⑤ करो—१, ३, ६, ८ १६। ⑥ बिधु मुख तिमिर नसावन—१६। ⑦ नवल छबीले—२, ३, ८।

* (ना) धनाश्री। (का, ई, रा) सोरठ। (कां) सारंग।

अपद-दुपद-पसु-भाषा बूझत, अबिगत अल्प-अहारी।
नगर सकल-नर-नारी मोहे, सूरज जोति बिसारी।
सुनि सानंद चले बलि राजा, आहुति जज्ञ बिसारी।
देखि सुरूप सकल कृष्नाकृति, कीनी चरन-जुहारी।
चलियै बिप्र जहाँ जग-बेदी, बहुत करी मनुहारी।
जो माँगौ सो देहुँ तुरतहीं, हीरा-रतन-भँडारी।
रहु-रहु राजा, यौं नहिं कहियै, दूषन लागै भारी।
तीन पैग बसुधा दै मोकौं, तहाँ रचौं धरमसारी।
सुक्र कह्यौ, सुनि हो बलि राजा, भूमि को दान निवारी।
ये तौ बिप्र होहिं नहिं राजा, आए छलन मुरारी।
कहि धौं सुक्र, कहा अब कीजै, आपुन भए भिखारी।
जब हीं उदक दियौ बलि राजा, बावन देह पसारी।
जै-जै-कार भयौ भुव मापत, तीनि पैंड़ भइ सारी।
आध पैंड़ बसुधा दै राजा, ना तरु चलि सत हारी।
अब सत क्यौं हारौं जग-स्वामी मापौ देह हमारी।
सूरदास बलि सरबस दीन्हौ, पायौ राज पतारी ॥१४॥
॥४४१॥

† हरि तुम बलि कौं छलि कहा लीन्यौ ?
बाँधन गए, बँधाए आपुन, कौन सयानप कीन्यौ ?

† यह पद केवल (ल) मे है। बलि-प्रसंग के अंत में रखना उचित समझकर इसे यहाँ स्थान दिया गया है।

लए लकुटिया द्वारैं ठाढ़े, मन अति रहत अधीन्यौ।
तीनि पैंड़ बसुधा कैं कारन, सरबस अपनौ दीन्यौ।
जो जस करै सो पावै तैसो, बेद पुरान कहीन्यौ।
सूरदास स्वामी-पन तजि कै, सेवक-पन रस भीन्यौ ॥१५॥
॥४४२॥

मत्स्य-अवतार * राग मारू

स्रुतिनि[1] हित हरि मच्छ रूप धारचौ। सदा ही भक्त-संकट निवारचौ।
चतरमुख कह्यौ, सँख असुर स्रुति लै गयौ, सत्यब्रत कह्यौ परलै दिखायौ!
भक्त-बत्सल, कृपाकरन, असरन-सरन, मत्स्य कौ रूप तब धारि आयौ।
स्नान करि अंजली जल जबै नृप लियौ, मत्स्य कौं देखि कह्यौ डारि दीजै।
मत्स्य कह्यौ, मैं गही आइ तुम्हरी सरन, करि कृपा मोहिं अब राखि लीजै।
नृप सुनत बचन, चक्रित प्रथम ह्वै रह्यौ, कह्यौ, मछ बचन किहिं भाँति भाष्यौ।
पुनि कमंडल धरचौ, तहाँ सो बढ़ि गयौ, कुंभ धरि बहुरि पुनि माट राख्यौ।
पुनि धरचौ खाड़, तालाब मैं पुनि धरचौ, नदी मै बहुरि पुनि डारि दीन्हौ।
बहुरि जब बढि गयौ, सिधु तब लै गयौ, तहाँ हरि-रूप नृप चीन्हि लीन्हौ।
कह्यौ करि बिनय तुम ब्रह्म जो अनंत हौ, मत्स्य कौ रूप किहिं काज कीन्हौ?
बेद बिधि चहत, तुम प्रलय देखन कहत, तुम दुहुँनि हेत अवतार लीन्हौ।
कबहुँ बाराह, नरसिंह कबहूँ भयौ, कबहुँ मैं कच्छ कौ रूप लीन्हौ।
कबहुँ भयौ राम, बसुदेव-सुत कबहुँ भयौ, और बहु रूप हित-भक्त कीन्हौ।
सातवैं दिवस दिखराइहौं प्रलय तोहिं, सप्त-रिषि नाव मैं बैठि आवैं।

---

* (ना) भैरव। (१) सुरनि—१, २, १६, १८, १६।

तोहिँ बैठारिहौं नाव मैँ हाथ गहि, बहुरि हम ज्ञान तोहिँ कहि सुनावैँ ।
सर्प इक आइहै बहुरि तुम्हरैँ निकट, ताहि सौं नाव मम स्रृंग बाँधौ ।
यहै कहि भए अँतरधान तब मत्स्य प्रभु, बहुरि नृप आपनौ कर्म साधौ ।
सातवैँ दिवस आयौ निकट जलधि जब, नृप कह्यौ अब कहाँ नाव पावैँ ।
आइ गइ नाव, तब रिषिनि तासौं कह्यौ, आउ हम नृपति तुमकौं बचावैँ ।
पुनि कह्यौ, मत्स्य हरि अब कहाँ पाइये, रिषिनि कह्यौ, ध्यान चित माहिँ धारौ ।
मत्स्य अरु सर्प तिहिँ ठौर परगट भए, बाँधि नृप नाव यौँ कहि उचारौ ।
ज्यौँ महाराज या जलधि तैँ पार कियौ, भव-जलधि पार त्यौँ करौ स्वामी ।
अहं-ममता हमैँ सदा लागी रहै, मोह-मद-क्रोध-जुत मंद कामी[1] ।
कर्म सुख-हित करत, होत तहँ दुःख नित, तऊ नर मूढ़ नाहीँ सँभारत ।
करन-कारन महाराज हैँ आप ही, ध्यान प्रभु कौ न मन माहिँ धारत ।
बिन तुम्हारी कृपा गति नहीँ नरनि की, जानि मोहिँ आपनौ, कृपा[2] कीजै ।
जनम अरु मरन मैँ सदा दुःखित रहत, देहु मोहिँ ज्ञान जिहिँ सदा जीजै ।
मत्स्य भगवान कह्यौ ज्ञान पुनि नृपति सौं, भयौ सो पुरान सब जगत जान्यौ ।
लह्यौ नृप ज्ञान, कह्यौ आँखि अब मीचि तू, मत्स्य जो कह्यौ सो नृपति मान्यौ ।
आँखि कौं खोलि जब नृपति देख्यौ बहुरि, कह्यौ, हरि प्रलय-माया दिखाई ।
कह्यौ जो ज्ञान भगवान, सो आनि उर, नृपति निज आयु इहिँ बिधि बिताई ।
बहुरि संखासुरहिँ मारि, बेदाऽनि दिए, चतुरमुख बिविध अस्तुति सुनाई ।
सूर के प्रभू की नित्य लीला नई, सकै कहि कौन, यह कछुक गाई ! ॥१६॥
॥४४३॥

---

① गामी—२, ३ ६, ८ । ② राखि लीजै—२ ।

* राग मारू

† ऐसी कौ सकै करि बिन मुरारी ।

कहत ही ब्रह्म के बेद-उद्धरन हित, गए पाताल तन-मत्स्य धारी ।
संखासुर मारि कै, बेद उद्धारि कै, आपदा चतुरमुख की निवारी ।
सुरनि आकास तैं पुहुप-बरषा करी, सूर सुनि सुजस कीरति उचारी॥१७॥

॥ ४४४ ॥

* (का) सारग

† यह पद (वे, ना, बृ, श्या) में नहीं है ।

रत्नाकर

ब्रजभाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि गोलोक-निवासी श्री जगन्नाथदास रत्नाकर' के समस्त काव्यो का यह अपूर्व संग्रह है। इनकी कविता के सबध मे विज्ञ साहित्यिका से निवेदन करने की आवश्यकता नहीं। कविता-कला का इतना उत्कृष्ट अभ्यासी इस युग मे कहीं देखने को नहीं मिलता। यत्र-तत्र बिखरे हुए उनके काव्य-रत्नो का यह संग्रह यथार्थ ही अपने नाम के अनुरूप हुआ है। 'रत्नाकर' मे ब्रजभाषा का प्रांजल मणि भावो की उज्ज्वलता से चौगुना चमक उठा है। अवसर के अनुकूल यत्र-तत्र चतुर चितेरों के एकरगे, तिरगे चित्रों तथा अनेकानेक उत्तमोत्तम डिजाइनो से इसकी कांति और भी खिल उठी है। मुद्रक ने भी इसे सर्वांग-सुदर बनाने मे कोई कोर-कसर नहीं रखी। जो पुस्तक-प्रेमी स्थायी महत्त्व के सुदर और सरस साहित्य को सुचारु और आकर्षक वेशभूषा मे देखने के इच्छुक हैं उनके मनस्तोष की अपूर्व सामग्री इसमे विद्यमान है। यह प्रत्येक साहित्यिक की आलमारी मे शोभा पाने की अधिकारिणी है और इसका अभाव अवश्य एक बडी कमी है। इसके दो सस्करण प्रकाशित किए गए हैं। आर्ट पेपर के रायल आठ पेजी साइज के ६०० पृष्ठो के इस ग्रथ के राज-सस्करण का मूल्य केवल ८) और साधारण सस्करण का ७) है। आशा है, साहित्य-प्रेमी इस पुस्तक को खरीदकर अपनी गुणज्ञता का परिचय देंगे।

बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास

इस पुस्तक मे रामायण-काल से लेकर आज तक का विवरण दिया गया है। इसमे पुराण, काव्य, कविता, इतिहास, गाथा, दतकथा, शिलालेख आदि इतिहास के लिये सहायक प्राय सभी साधनो से सहायता लेकर लेखक ने एक क्रमबद्ध निष्कर्ष निकाला है। बुदेलखड के इतिहास की कोई स्वतत्र पुस्तक नहीं थी। इसने इस कमी की पूर्ति की है। पृष्ठ-सख्या ४५०, मूल्य केवल ३)।

मआसिरुल उमरा

इतिहास-प्रेमियों को भली भाँति विदित है कि यह ग्रथ कितने महत्त्व का है। इसमे मुगल दरबार के जिन सरदारों की जीवनियाँ नवाब शाहनवाज खाँ समसामुद्दौला ने दी हैं, वे अत्यत प्रामाणिक और पक्षपात-रहित है। प्रथम भाग मे ९१ सरदारो की जीवनियाँ हैं। मूल्य केवल ४) रखा गया है।

ब्रजनिधि-ग्रंथावली

जयपुर-नरेश महाराज सवाई प्रतापसिहजी की समस्त रचनाओं का यह सग्रह है जो बहुत खोज और परिश्रम के अनंतर एकत्र किया गया है। पाद-टिप्पणियो मे कठिन शब्दो के अर्थ भी दिए गए हैं। प्रारभ मे विद्वान् सपादक पुरोहित हरिनारायणजी शर्मा की सुदीर्घ प्रस्तावना भी है। ४१९ पृष्ठो मे समाप्त इस पुस्तक का मूल्य केवल ३) है।

कोशोत्सव-स्मारक संग्रह

संपादक रायबहादुर महामहोपाध्याय पडित गौरीशकर हीराचद ओझा। देश तथा विदेश के अनेक प्रख्यात विद्वानो एव अनेकानेक लब्ध-प्रतिष्ठ कवियों की सर्वश्रेष्ठ कृतियो का अपूर्व सग्रह। मूल्य ५)।

द्विवेदी-अभिनंदन-ग्रथ

अनेक सज्जनों क सतत आग्रह पर सभा ने दो महीने के लिये इस ग्रंथ का मूल्य घटाकर आधा कर दिया था। इस अवधि मे इस पुस्तक की बहुतेरी प्रतियाँ बिकी। समय बीत गया, पर आर्डरों का ताँता लगा ही रहा और निरतर माँगे आती ही जा रही हैं। वस्तुत यह पुस्तक सभा ने आर्थिक लाभ की अभिलाषा से नहीं छापी थी। यह आचार्य महोदय के सम्मानार्थ प्रकाशित की गई थी। अत इस सदुद्देश की सिद्धि पूर्ण रीति से तभी होगी जब इस ग्रथ-रत्न की एक एक प्रति हिदी भाषा एव हिदी भाषा के मान्य आचार्य महोदय के प्रत्येक भक्त के पास पहुँच जाय। अत अनेक सज्जनो के आग्रह से सभा ने इस ग्रंथ का मूल्य पुन· ७॥) कर दिया है। यह रिआयत केवल उन्हीं लोगों के साथ की जायगी जो सभा मे ग्रथ का मूल्य ७॥) और पेकिंग तथा रजिस्टरी-व्यय ॥) कुल ८) मनीआर्डर से पेशगी भेज देंगे। ऐसे सज्जनों के पास यह ग्रथ बैरग रेलवे पार्सल से भेज दिया जायगा और रेल-भाडा उन्हें देना पडेगा। जो सज्जन डाक से यह ग्रंथ मँगवाना चाहते हो उन्हें ७॥) मूल्य क अतिरिक्त १॥।=) डाक-व्यय के लिये और भेजना चाहिए।

अभिनदन-ग्रथ मे विगत चालीस वर्षों के चुने हुए हिंदी-साहित्य के पडितो के अपूर्व निबंध और कवियो की मनोरम रचनाएँ हैं। साथ ही इसमे देश और विदेश क सर्वश्रेष्ठ कलाकारो के सुंदर-सुंदर चित्रों का अलबम सजा दिया गया है जिसका मूल्य कला-रसिक ही अच्छी तरह आँक सकते हैं। यह कहने मे अत्युक्ति न होगी कि साहित्य और चित्र-विद्या की ऐसी सयुक्त सुचारु प्रदर्शिनी कभी ही कभी सौभाग्य से देखने को मिलती है। जिस प्रकार 'गीता' या 'रामचरितमानस' के विषय में कहा जाता है कि सपूर्ण भारतीय साहित्य और सस्कृति के नष्ट हो जाने पर भी इन दो ग्रथो से उनकी पूर्ति हो सकती है उसी प्रकार इस बीसवीं शताब्दि के हिंदी-साहित्य की प्रगति की पूरी सामग्री आपको इस ग्रथ मे मिलेगी।

यदि आप अपने समय के साहित्य के साथ-साथ नहीं चल सके या उससे पूर्णत परिचित नहीं हो सके तो यह एक ऐसा अभाव है जिसके कारण आपके मन मे सकोच अवश्य होता होगा। अभिनंदन-ग्रथ खरीदकर आप उसकी पूरी पूरी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

आशा है, हिदी प्रेमी इस सुअवसर से लाभ उठावेंगे और इस ग्रंथ-रत्न की एक-एक प्रति तुरत मँगाकर बीसवीं सदी की निधि अपने घरों मे रख लेंगे।

पुस्तक-विक्रेताओं को १) प्रति कमीशन दिया जायगा।

प्रधान मंत्री,
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

नवम स्कंध

राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
सुकदेव हरि-चरननि सिर नाइ । राजा सौं बोल्यौ या भाइ ।
कहौं हरि-कथा, सुनौ चित लाइ । सूर तरौ हरि के गुन गाइ ॥ १ ॥

॥ ४४५ ॥

राजा पुरूरवा का वैराग्य

* राग बिलावल

सुकदेव कहयौ, सुनौ हो राव । नारी-नागिनि एक सुभाव ।
नागिनि के काटैं बिष होइ । नारी चितवत नर रहै भोइ[1] ।
नारी सौं नर प्रीति लगावै । पै नारी तिहिं मन नहिं ल्यावै ।
नारी संग प्रीति जो करै । नारी ताहि तुरत परिहरै ।
नरपति एक पुरुरवा भयौ । नारी-संग हेत तिन ठयौ ।
नृप सौं उन कटु बचन सुनाए । पै ताकैं मन कछू न आए ।
बहुरौ तिहिं उपज्यौ बैराग । कियौ उरबसी कौं सो त्याग ।
हरि की भक्ति करत गति पाई । कहौं सो कथा, सुनौ चित लाई ।
एक बार महा-परलै भयौ । नारायन आपुहिं रहि गयौ ।
नारायन जल मैं रहे सोइ । जागि कहयौ, बहुरौ जग होइ ।
नाभि-कमल तैं ब्रह्मा भयौ । तिन मन तैं मरीचि कौं ठयौ ।

---

† यह पद केवल (स, का, ना, इ, रा) में है ।

* (ना) भैरवी । (का, ना, इ, रा) भैरव ।

(१) सोइ—६ ।

पुनि मरीचि कस्यप उपजायौ। कस्यप की तिय सूरज जायौ।
सूरज[1] कैं बैवस्वत भयौ। सुत-हित सेा बसिष्ठ पै गयौ।
ताकी नारि सुता-हित भाष्यौ। सुनि बसिष्ठ अपनैं मन राख्यौ।
रिषि नृप सौं जग-बिधि करवाई। इला सुता ताकैं गृह जाई[2]।
नृप कह्यौ, पुत्र-हेत जग ठयौ। पुत्री भइ, यह अचरज भयौ।
रिषि कह्यौ, रानी पुत्री चही। मेरे मन मैं सोई रही।
तातैं पुत्री उपजी आइ। करिहैं पुत्र ताहि हरिराइ।
हरि ता पुत्री कौं सुत करचौ। नाम सुद्युम्न ताहि रिषि धरचौ।
एक दिवस सेा अखेटक गयौ। जाइ अंबिका-बन तिय भयौ।
बुध कैं आस्रम सेा पुनि आयौ। तासौं गंधब-ब्याह करायौ।
बहुरौ एक पुत्र तिन जायौ। नाम पुरुरवा ताहि धरायौ।
पुनि सुद्युम्न बसिष्ठ सौं कह्यौ। अंबा-बन मैं तिय ह्वै गयौ।
रिषि सिव सौं बहु बिनती करी। तब सिव यह बानी उच्चरी।
एक मास यह ह्वैहै नारि। दूजे मास पुरुष आकारि।
तब सुद्युम्न अपनैं गृह आयौ। राज-समाज माहिं सुख पायौ।
तीनि पुत्र तिन और उपाए। दच्छिन राज करन सेा पठाए।
दस सुत मनु के उपजे और। भयौ इच्छ्वाकु सबनि सिरमौर।
सूरजबंसी सेा कहवाए। रामचंद्र ताही कुल आए।
सेामबंस पुरुरवा सौं भयौ। सकल देस नृप ताकौं दयौ।
तासु बंस लियौ कृष्नऽवतार। असुर मारि, कियौ सुर-उद्धार।

---

① ता सुत स्राद्ध देव मनु भयौ—
१६। ② आई—१।

कहिहौं कथा सो करि बिस्तार । पुरुरवा-कथा सुनौ चित धार ।
पुरुरवा-गेह उरबसी आई । मित्रबरुन के सापहिं पाई ।
नृपति देखि तिहिं मोहित भयो । तिनि यह बचन नृपति सौं कह्यो ।
बिन रतिकाल नगन नहिं होवहु । अरु मम मेंढनि कौं मति खोवहु ।
तब लौं मैं तुम्हरो सँग करौं । बचन-भंग भए तैं परिहरौं ।
नृपति कह्यो, तुम कह्यो सो करिहौं । तुम्हरी आज्ञा मैं अनुसरिहौं ।
तासौं मिलि नृप बहु सुख माने । अष्ट[1] पुत्र तासौं उतपाने ।
सुरपुर तैं गंधब तब आए । उरबसि सौं यह बचन सुनाए ।
अब तुम इंद्रलोक कौं चलौ । तुम बिन सुरपुर लगत न भलौ ।
तिन्ह उरबसी कह्यो या भाइ । बल करि सकौ नहीं लै जाइ ।
मम चलिबे कौ यहै उपाव । छल करि मैंढ़नि निसि लै जाव ।
गंधब मेंढ़नि निसि लै धाए । सोवत नृप उरबसी जगाए ।
मम मेंढ़नि कौं लै गयो कोइ । देखौ ता[2] पुरुषहिं तुम जोइ ।
अर्द्ध-निसा नृप नाँगो धायो । पै मेंढ़नि कौं कहूँ न पायो ।
इत-उत देखि नृपति जब आयो । तब उरबसि यह बचन सुनायो ।
राजा, बचन तुम्हारो टर्‌यो । तातैं मैं तुमकौं परिहर्‌यो ।
यह कहिकै सो चली पराइ । जैसैं तड़ित अकासैं जाइ ।
ताकै बिरह नृपति बहु तयो । नगन पगन ता पाछैं गयो ।
भ्रमत-भ्रमत नृप बहु दुख पायो । बहुरो कुरुच्छेत्र मैं आयो ।
तहाँ उरबसी सखिनि समेत । आई हुती स्नान कैं हेत ।

---

① षष्ठ—१, ६, ८, १६ । तुम पुरषारथ जोइ—२, ३ ।
② तुम पुरुषै तिहिं जोइ—१, १६ ।

पै उनकौं कोउ देखै नाहिं । उनकौं सकल लोक दरसाहिं ।
उरबसि सौं तिलोत्तमा कह्यौ । कौन पुरुष तुम भुव मैं लह्यौ ।
ताके देखन की मोहिं चाह । कह्यौ, पुरुष वह ठाढ़ौ आह ।
नृप कौं देखि सो बिस्मित भई । कह्यौ, तव विरह नृप-सुधि गई ।
बहुत दुखित है तेरैं नेह । एक बेर इहिं दरसन देह ।
तिन माया आकरषन करी । तब वह दृष्टि नृपति कैं परी ।
राजा निरखि प्रफुल्लित भयौ । मानौ मृतक बहुरि जिय लह्यौ ।
उरबसि-निकट नृपति चलि आए । करि विनती तिहिं बचन सुनाए ।
तुम मोकौं काहैं बिसरायौ । मैं तुम बिन बहुतै दुख पायौ ।
तुम बिन भूख नींद नहिं आवै । पल-पल जुग सम मोहिं बिहावै ।
मेरैं गेह कृपा करि चलौ । वाही बिधि मोसौं हिलिमिलौ ।
कह्यौ, नेह हमैं कासौं आह ! बिना काम हमरैं नहिं चाह ।
हमसौं सहस बरष हित धरैं । हम तिनकौं छिन मैं परिहरैं ।
बिनु अपराध पुरुष हम मारैं । माया-मोह न मन मैं धारैं ।
हमैं कहौ केतौ किन कोइ । चाहैं करन करैं हम सोइ ।
नृप पुनि बिनती बहु बिधि करी । तब उरबसी बात उच्चरी ।
बरष सात बीतैं हौं ऐहौं । एक रात्रि तोकौं सुख दैहौं ।
बरष सात बीतैं सो आई । नृप तासौं मिलि रैनि बिताई ।
प्रात होत चलिबे कौं चह्यौ । तब राजा तासौं यौं कह्यौ ।
तू मोकौं छाँड़े कत जाइ । मोकौं तुव बिन छिन न सुहाइ ।
जब या भाँति नृपति बहु कह्यौ । तब उरबसि उत्तर यौं दयौ ।
यह तौ होनहार है नाहीं । सुरपुर छाँड़ि रहौं भुव माहीं ।

जौ तुम मेरी इच्छा धरौ। गंधर्बनि कैँ हित तप करौ।
तप कीन्हैँ सो दैहैँ आग। ता सेती तुम कीनौ जाग।
जज्ञ कियैँ गंधबपुर जैहौ। तहाँ आइ मोकौँ तुम पैहौ।
नृप जग करि तिहिँ लोक सिधायौ। मिलि उरबसी बहुत सुख पायौ।
जब या बिधि बहु काल गँवायौ। तब बैराग नृपति मन आयौ।
बहुतै काल भोग मैँ किए। पै संतोष न आयौ हिए।
श्रीनारायन कौँ बिसरायौ। बिषय-हेत सब जनम गँवायौ।
या बिधि जब बिरक्त नृप भयौ। छाँड़ि उरबसी, बन कौँ गयौ।
बन मैँ जाइ तपस्या करी। बिषय-बासना सब परिहरी।
हरि-पद सौँ नृप ध्यान लगायौ। मिथ्या तनु कौ मोह भुलायौ।
हरि ब्यापक सब जग मैँ जान। हरि-प्रसाद पायौ निरवान।
तातैँ बुध तिय-संगति तजैँ। श्रीनारायन कौँ नित भजैँ।
सुक जैसैँ नृप कौँ समुझाया। सूरदास त्यौँ ही कहि गायौ॥२॥

॥ ४४६ ॥

च्यवन ऋषि की कथा

* राग बिलावल

सुकदेव कह्यौ, सुनौ हो राव। जैसौ है हरि-भक्ति-प्रभाव।
हरि कौ भजन करै जो कोइ। जग-सुख पाइ मुक्ति लहै सोइ।
च्यवन रिषीस्वर बहु तप कियौ। ता सम और जगत नहिँ बियौ।
बामी ताकौँ लियौ छिपाइ। तासौँ रिषि नहिँ देइ दिखाइ।
ता आस्रम स्वजात नृप गयौ। तहाँ जाइ कै डेरा दयौ।

---

* (ना) बिभास। (६, ८)
भैरौ।

छाँड़ि तहीँ सब राज-समाज। राजा गयौ अखेटक-काज।
नृप-कन्या तहँ खेलन गई। रिषि-दृग चमकत देखत भई।
पै तिहिँ रिषि-दृग जाने नाहिँ। खेलत सूल दए तिन माहिँ।
रुधिर-धार रिषि-आँखिनि ढरी। नृप-कन्या सो देखत डरी।
सूल-व्यथा सब लोगनि भई। राजा कह्यौ, कहा भइ दई!
तहँ के बासी नृपति बुलाइ। बूझ्यौ, तब तिन कही सुनाइ।
च्यवन रिषी-आस्रम इहिँ राइ। बिनती उनसौँ कीजै जाइ।
नृप खोजत रिषि-आस्रम आयौ। रिषि-दृग देखत बहुत डरायौ।
कह्यौ, कियौ किन ऐसो काज? कन्या कह्यौ, सुनौ महराज।
मोतेँ बिन जानेँ यह भयौ। रिषि के दृगनि सूल हौँ दयौ।
नृप मनहीँ मन बहु पछितायौ। रिषि सौँ पुनि यह बचन सुनायौ।
महाराज, तुम तौ हौ साध। मम कन्या तेँ भयौ अपराध।
या कन्या कौँ प्रभु तुम बरौ। कटक-सूल किरपा करि हरौ।
लोग सकल नीके जब भए। नृप कन्या दै, गृह कौँ गए।
रिषि समाधि हरि-चरन लगाई। कन्या रिषि-चरननि लौ लाई।
सुरपति ताकेँ रूप लुभायौ। बहुरि कुबेर तहाँ चलि आयौ।
पै तिन तिहिँ दिसि देख्यौ नाहिँ। गए खिस्याइ दोउ मन माहिँ।
चौदह बरष भए या भाइ। तब रिषि देख्यौ सीस उठाइ।
हाड़-चाम तन पर रहि गए। कृपावंत रिषि तापर भए।
अस्विनि-सुत इहिँ अवसर आए। करि प्रनाम, यह बचन सुनाए।
जो कछु आज्ञा हमकौँ होइ। छाँड़ि बिलंब, करेँ अब सोइ।
कह्यौ, दृगनि कौ करौ उपाइ। तुरत नेत्र तिन दिए बनाइ।
कह्यौ, हम जज्ञ-भाग नहिँ पावत। बैद्य जानि हमकौँ बहरावत।

रिषि कह्यौ, मैं करिहौं जहँ जाग । दैहौं तुमहिं अवसि करि भाग ।
नृप-कन्या सौं रिषि यौं कह्यौ । तुव ऊपर प्रसन्न मैं भयौ ।
जद्यपि कछु इच्छा नहिं मेरैं । तदपि उपाइ करौं हित तेरैं ।
दुहुँ मिलि तीरथ माहिं नहाए । सुंदर रूप दुहूँ जन पाए ।
दासी सहस प्रगट तहँ भईं । इंद्रलोक-रचना रिषि ठई ।
तिय कौं सुख रिषि बहु बिधि दियौ । तासु मनोरथ पूरन कियौ ।
तब स्वजात रानी सौं कही । जब तैं कन्या रिषि कौं दई ।
तब तैं मैं सुधि कछू न पाई । बिनु प्रसंग तहँ गयौ न जाई ।
जग अरंभ करि, नृप तहँ गयौ । लखि रिषि-आस्रम बिस्मय भयौ ।
कह्यौ, यह बिभव कहाँ तैं आयौ ? किन यह ऐसौ भवन बनायौ ?
इहिं अंतर नृप-तनया आई । पिता देखि, मिलिबे कौं धाई ।
नृप ताकौं आदर नहिं दियौ । तैं यह कर्म कौन है कियौ ?
बृद्ध रिषीस्वर कौं कहा भयौ ? कुल कलंक तैं किहिं मिलि दयौ ?
कह्यौ, जोग-बल रिषि सब कीनौ । मोहिं सुख सकल भाँति कौ दीनौ ।
नृप प्रसन्न ह्वै रिषि पै आयौ । जग-प्रसंग कहिकै गृह ल्यायौ ।
रानी सुता देखि सुत मान्यौ । धन्य जन्म अपनौ करि जान्यौ ।
च्यवन नृपति कौं जज्ञ करायौ । अस्विनि-सुत-हित भाग उठायौ ।
इंद्र क्रोध ह्वै रिषि सौं कह्यौ । ताहि भाग तुम काहैं दयौ ?
पुनि मारन कौं बज्र उठायौ । पै रिषि कौं मारन नहिं पायौ ।
इंद्र-हाथ ऊपर रहि गयौ । तिन कह्यौ, दई कहा यह भयौ ?
कह्यौ, सुरनि तुम रिषिहिं सतायौ । तातैं कर रहि गयौ उचायौ ।
इंद्र बिनय रिषि सौं बहु करी । तब रिषि कृपा ताहि पर धरी ।

सुरपति-कर तब नीचैं आयौ । अस्त्रिनि-सुत बलि सुर मैं पायौ ।
ऐसौ है हरि-भक्ति-प्रभाव । बरनि कह्यौ मैं तुमसौं राव ।
हरि की भक्ति करै जो कोइ । दुहूँ लोक कौ सुख तिहिं होइ ।
सुक ज्यौं नृप सौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौं ही कहि गायौ ॥ ३ ॥
॥४४७॥

हलधर-विवाह * राग भैरौं

†रविबंसी[1] भयौ रैवत राजा । ता[2] सम जग दुतिया न बिराजा ।
ता गृह जन्म रेवती लयौ । ताकौं लै सो ब्रह्मपुर गयौ ।
बिधि तिहिं आदर दै बैठायौ । तब नृप मन मैं अति सुख पायौ ।
तहाँ देखि अप्सरा-अखारा । नृपति कछू नहिं बचन उचारा ।
जब अप्सरा नृत्य करि रही । तब राजा ब्रह्मा सौं कही ।
मम पुत्री बय-प्रापत आहि । आज्ञा होइ, देउँ तिहिं ब्याहि ।
ब्रह्मा कह्यौ, सुनौ नर-नाह । तुमसौं नृप जग मैं अब नाह ।
हलधर कौं तुम देहु बिवाहि । ब्याह-जोग अब सोई आहि ।
रैवत ब्याह कियौ भुवि आइ । आप कियौ तप बन मैं जाइ ।
हलधर-ब्याह भयौ या भाइ । सूरदास जन दियौ सुनाइ ॥४॥
॥ ४४८ ॥

---

* (ना) विभास ।
† यह पद (बृ, श्या) में नहीं है ।

① द्वारावति पति—१ । रूप तनै—६, ८ । ② ताकैं सौ बेटा सुख साजा—१६ ।

राजा अंबरीष की कथा * राग बिलावल

† हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
हरि-पद अंबरीष चित लायौ। रिषि-सराप तैं ताहि बचायौ।
रिषि कौं तापै फेरि पठायौ। सुक नृप कौं यौं कहि समुझायौ।
अंबरीष राजा हरि-भक्त। रहै सदा हरि-पद अनुरक्त।
स्रवन-कीरतन-सुमिरन करै। पद-सेवन-अरचन उर धरै।
बंदन दासपनौ सेा करै। भक्तनि सख्य-भाव अनुसरै।
काय-निवेदन सदा बिचारै। प्रेम-सहित नवधा बिस्तारै।
नौमी-नेम भली बिधि करै। दसमी कौं संजम बिस्तरै।
एकादसी करै निरहार। द्वादसि पोषै लै आहार।
पतिब्रता ता नृप की नारी। अह-निसि नृप की आज्ञाकारी।
इंद्री सुख कौं दोऊ त्यागि। धरैं सदा हरि-पद अनुराग।
ऐसी बिधि हरि पूजैं सदा। हरि-हित लावैं सब संपदा।
राज-काज कछु मन नहिं धरै। चक्र सुदरसन रच्छा करै।
घटिका दोइ द्वादसी जानि। रिषि आयौ, नृप कियौ सन्मान।
कह्यौ, भोजन कीजै रिषिराइ। रिषि कह्यौ, आवत हौं मैं न्हाइ।
यह कहिकै रिषि गए अन्हान। काल बितायौ करत स्नान।
राजा कह्यौ, कहा अब कीजै। द्विजनि कह्यौ, चरनोदक लीजै।
राजा तब करि देख्यौ ज्ञान। या बिधि होइ न रिषि-अपमान।
लै चरनोदक निज ब्रत साध्यौ। ऐसी बिधि हरि कौं आराध्यौ।
इहिं अंतर दुरबासा आए। अंबरीष सौं बचन सुनाए।

---

* (ना) भैरवी।

सुनि राजा, तेरौ व्रत टरौ। क्यौं करि तेरैं भोजन करौं?
कह्यौ नृपति, सुनियै रिषिराइ। मैं व्रत-हित यह कियौ उपाइ।
चरनोदक लै व्रत प्रतिपारचौ। अब लौं अन्न न मुख मैं डारचौ।
रिषि सक्रोध इक जटा उपारी। सो कृत्या भइ ज्वाला भारी।
जब नृप ओर दृष्टि तिहिं करी। चक्र सुदरसन सो संहरी।
पुनि रिषिहू कौं जारन लाग्यौ। तब रिषि आपन जिय लै भाग्यौ।
ब्रह्मा-रुद्र-लोकहूँ गयौ। उनहूँ ताहि अभय नहिं दयौ।
बहुरौ रिषि बैकुंठ सिधायौ। करि प्रनाम यह बचन सुनायौ।
मैं अपराध भक्त कौ कीनौ। चक्र सुदरसन अति दुख दीनौ।
और कहूँ मैं ठौर न पायौ। असरन-सरन जानि कै आयौ।
महाराज, अब रच्छा कीजै। मोकौं जरत राखि प्रभु लीजै।
हरि जू कह्यौ, सुनौ रिषिराइ। मो पै तू राख्यौ नहिं जाइ।
तैं अपराध भक्त कौ कीनौ। मैं निज भक्तनि कैं आधीनौ।
मम-हित भक्त सकल सुख तजैं। और सकल तजि मोकौं भजैं।
बिन मम चरन न उनकैं आस। परम दयालु सदा मम दास।
उनकैं मन नाहीं सत्राइ। तातैं कहौ उनहिं सौं जाइ।
तुमकौं लैहैं वेइ बचाइ। नाहीं या बिन और उपाइ।
इहाँ नृपति अतिहीं दुख छयौ। रिषि मम द्वारे तैं फिरि गयौ।
रिषि मग जोवत बर्ष बितायौ। पै भोजन तौहूँ न सिरायौ।
अंबरीष पै तब रिषि आयौ। हाथ जोरि पुनि सीस नवायौ।
रिषिहिं देखि नृप कह्यौ या भाइ। लेहु सुदरसन याहि बचाइ।
ब्राह्मन हरि हरि-भक्तनि प्यारौ। तातैं अब याकौं मति जारौ।

चक्र सुदरसन सीतल भयौ। अभय-दान दुरबासा लयौ।
पुनि नृप तिहिँ भोजन करवायौ। रिषि नृप सौं यह बचन सुनायौ।
मैं नहिँ भक्त महातम जान्यौ। अब तैं भली भाँति पहिचान्यौ।
सुक राजा सौं ज्यौं समुझायौ। सूरदास त्यौंही करि गायौ।
जो यह लीला सुनै-सुनावै। सो हरि-भक्ति पाइ सुख पावै॥ ५॥

॥ ४४६ ॥

* राग गूजरी

फिरत-फिरत बलहीन भयौ।
कहा करौं इहिँ त्रास कृपानिधि, जप-तप कौ अभिमान गयौ।
धायौ धर-सर-सैल, बिदिसि-दिसि, चक्र तहाँ हूँ जाइ लयौ।
जाँचे सिव-बिरंचि-सुरपति सब, नैंकु न काहूँ सरन दयौ।
भाज्यौ फिरचौ लोक-लोकनि मैं, पत्र पुरातन पवन हयौ।
सूरदास द्विज[1] दीन जानि प्रभु, तब निज जन सनमुख पठयौ॥ ६॥

॥ ४५० ॥

राग भोपाली

† जन कौ हौं आधीन सदाई।
दुरबासा बैकुंठ गए जब, तब यह कथा सुनाई।
बिदित बिरद ब्रह्मन्य देव, तुम करुनामय सुखदाई।
जारत हैं मोहिँ चक्र सुदरसन, हा प्रभु लेहु बचाई।
जिन तन-धन मोहिँ प्रान समरपे, सील, सुभाव, बड़ाई।
ताकौ बिषम बिषाद अहो मुनि मोपै सह्यौ न जाई।

---

* (ना) जैतश्री।
† यह पद केवल (ना) में है।
① मुनि—१।

उलटि जाहु नृप-चरन-सरन मुनि वहै राखिहै भाई।
सूरजदास दास की महिमा श्रीपति श्रीमुख गाई ॥ ७ ॥
॥ ४५१ ॥

सौभरि ऋषि की कथा * राग बिलावल

सुकदेव कह्यौ, सुनौ हो राव। जैसौ है हरि-भक्ति प्रभाव।
हरि को भजन करै जो कोइ। जग-सुख पाइ मुक्ति लहै सोइ।
सौभरि रिषि जमुना-तट गयौ। तहाँ मच्छ इक देखत भयौ।
सहित कुटुंब सो क्रीड़ा करै। अति उत्साह हृदय मैं धरै।
ताहि देखि रिषिकैं मन आई। गृह-आस्रम है अति सुखदाई।
तप तजि कै गृह-आस्रम करौं। कन्या एक नृपति की बरौं।
कह्यौ मानधाता सौं जाइ। पुत्री एक देहु मोहिं राइ।
नृप कह्यौ देखि बृद्ध रिषि-देह। हैं पचास पुत्री मम गेह।
अंतःपुर भीतर तुम जाहु। बरै तुम्हैं तिहिं[1] करौं बिवाहु।
तब रिषि मन मैं कियौ बिचार। बिरध पुरुष कौं बरै न नार।
तप-बल कियौ रूप अति सुंदर। गयौ तहाँ जहँ नृप कौ मंदिर।
सब कन्यनि सौभरि कौं बरचौ। रिषि बिवाह सबहिनि सौं करचौ।
रिषि तिनकैं हित गेह बनाए। तिनकैं भीतर बाग लगाए।
भोग समग्री भरे भँडार। दासी-दास गनत नहिं पार।
रिषि नारिनि मिलि बहु सुख पाए। सहस पचास पुत्र उपजाए।
तिनकैं बहुत भई संतान। कहँ लगि तिनकौं करौं बखान।
बहुत काल या भाँति बितायौ। पै रिषि मन संतोष न आयौ।

* (ना) भेरवी। (इ) भैरौ। ① सो देहुँ बिवाह—१, २, १६।

कह्यौ बिषय सौं तृप्ति न होइ । केतौ भोग करौ किन कोइ ।
या बिधि जब उपज्यौ बैराग । तब तप करि कीन्हौ तन-त्याग ।
सब नारिनि सहगामिनि कियौ । हरि जू तिनकौं निज पद दियौ ।
तातैं बुध[1] हरि-सेवा करैं । हरि-चरननि नितहीं चित धरैं ।
सुक नृप सौं ज्यौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौंही कहि गायौ ॥ ८ ॥
॥ ४५२ ॥

श्री गगा-आगमन * राग भैरौ

सुकदेव कह्यौ, सुनौ नर-नाह । गंगा ज्यौं आई जग माहँ ।
कहौं सो कथा, सुनौ चित लाइ । सुनै सो भव तरि हरि-पुर जाइ ।
सौवौं[2] जज्ञ सगर जब ठयौ । इंद्र अस्व कौं हरि लै गयौ ।
कपिलास्त्रम लै ताकौं राख्यौ । सगर-सुतनि तब नृप सौं भाष्यौ ।
हम तिहुँ लोक माहिँ फिरि आए । अस्व-खोज कतहूँ नहिँ पाए ।
आज्ञा होइ जाहिँ पाताल । जाहु, तिन्हैं भाष्यौ भूपाल ।
तिनके खोदैं सागर भए । कपिलास्त्रम कौं ते पुनि गए ।
अस्व देखि कह्यौ, धावहु-धावहु । भागि जाहि मति, बिलँब न लावहु ।
कपिल कुलाहल सुनि अकुलायौ । कोप-दृष्टि करि तिन्हैं जरायौ ।
सगर नृपति जब यह सुधि पाई । अंसुमान कौं दियौ पठाई ।
कपिल-स्तुति तिहिँ बहुबिधि कीन्ही । कपिल ताहि यह आज्ञा दीन्ही ।
जज्ञ के हेतु अस्व यह लेहु । पितर तुम्हारे भए जु खेहु ।
सुरसरि जब भुव ऊपर आवै । उनकौं अपनौ जल परसावै ।

---

① नर—६, ८ । ② शतमो—१ । सतम—२, ३, १८, १९ । सप्तम—६, ८ ।
* (ना) भैरवी । (शा, का) बिलावल ।

तबहीं उन सबकी गति होइ । ता बिन और उपाइ न कोइ ।
॥ अंसुमान राजा ढिग आइ । साठि सहस की कथा सुनाइ ।
॥ घोरा सगर राइ कौं दयौ । हर्ष-बिषाद हृदय अति भयौ ।
॥ सगर राज मष पूरन कियौ । राज सो अंसुमान कौं दियौ ।
अंसुमान पुनि राज बिहाइ । गंगा हेत कियौ तप जाइ ।
याही बिधि दिलीप तप कीन्हौ । पै गंगा जू बर[1] नहिं दीन्हौ ।
बहुरि भगीरथ तप बहु कियौ । तब गंगा जू दरसन दियौ ।
कह्यौ, मनोरथ तेरौ करौं । पै मैं जब अकास तैं परौं ।
मोकौं कौन धारना करै ? नृप कह्यौ, संकर तुमकौं धरै ।
तब नृप सिव की सेवा कीनी । सिव प्रसन्न ह्वै आज्ञा दीनी ।
गंगा सौं नृप जाइ सुनाई । तब गंगा भूतल पर आई ।
साठ सहस्र सगर के पुत्र । कीने सुरसरि तुरत पवित्र ।
गंग-प्रवाह माहिं जो न्हाइ । सो पवित्र ह्वै हरिपुर जाइ ।
गंगा इहिं बिधि भुव पर आई । नृप मैं तुमसौं भाषि सुनाई ।
सुक नृप सौं ज्यौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौं ही कहि गायौ ॥ ६ ॥

॥४५३॥

श्री गंगा-विष्णु-पादोदक-स्तुति * राग बिलावल

† पिउ[2] पद-कमल कौ मकरंद ।
मलिन-मति मन-मधुप, परिहरि, बिषय नीरस[3] मंद ।

॥ ये चरण केवल (शा) में हैं जो आवश्यक समझकर इस संस्करण में रक्खे गए हैं ।

① दरस न दीन्हौ—२ । हरि—६, ८ ।

* (ना) देवगंधार । (क) रामकली । (कां) सारंग ।

† यह पद (शा) में नहीं है ।

② हरि—१, ३, ६, ८, १६ ।

③ नीरस फंद—१, १६ । रस मति मंद—२ । रसमय फंद—३ ।

अमृत हूँ तैं अमल अति गुन, स्रवत[1] निधि-आनंद ।
परम सीतल जानि संकर, सिर धरचौ ढिग[2] चंद ।
नाग[3]-नर-पसु सबनि चाह्यौ सुरसरी कौ बुंद ।
सूर तीनौं[4] लोक परस्यौ, सुरसरी[5] जस[6]-छंद ॥ १० ॥

॥४५४॥

* राग भैरौ

† जय जय, जय जय, माधव-बेनी ।
जग हित प्रगट करी करुनामय, अगतिनि कौं गति दैनी ।
जानि कठिन कलिकाल कुटिल नृप, संग सजी अघ-सैनी ।
जनु[7] ता लगि तरवारि त्रिबिक्रम, धरि[8] करि कोप उपैनी ।
मेरु मूठि, बर-बारि पाल-छिति, बहुत बित्त की लैनी ।
सोभित अंग तरंग त्रिसंगम, धरी धार अति पैनी ।
जा[9] परसैं जीतैं जम-सैनी, जमन, कपालिक, जैनी ।
एकै[10] नाम लेत सब भाजै, पीर सो भव[11]-भय-सैनी ।
जा जल-सुद्ध निरखि सन्मुख ह्वै, सुंदरि सरसिज[12]-नैनी ।
सूर परस्पर करत कुलाहल, गर-स्रृग-पहरावैनी ॥ ११ ॥

॥४५५॥

---

① रूप—२, ३। ② तजि—१, ३, १४, १६। निज—२, ६, ८। ③ नाक सरबस लैन चाह्यौ सुरसरी कौ बिंद—१, १६। ④ पावन लोक त्रै जल—१४। ⑤ सुर असुर—१, १६। ⑥ जय—८।

* (ना) ईमन।

† यह पद (स, ल, शा, का, ना, रा) में नहीं है। इस पद का अर्थ कुछ अस्पष्ट है।

⑦ मनौ तमकि—२। ⑧ कीन्ही—२। ⑨ दरसन हू नासै (भाजै) जम सैनिक जिमि नेह (नुह) बालक सैनी—१, १६। ⑩ एक नाम के लेत तरे सब सो नर भूमि सु चैनी—२। ⑪ सु भूमि रसैनी—१, १६, १६। ⑫ सैना बैनी—१, १६।

राग बिलावल

† गंग-तरंग बिलोकत नैन ।
अतिहिं पुनीत बिष्नु-पादोदक, महिमा निगम पढ़त गुनि चैन[1] ।
परम पवित्र, मुक्ति की दाता, भागीरथहिं[2] भव्य बर दैन ।
द्वादस बर्ष सेए निसिबासर, तब संकर भाषी है लैन ।
त्रिभुवन-हार सिँगार भगवती, सलिल चराचर[3] जाके ऐन ।
सूरजदास बिधाता कैं तप प्रगट भई संतनि सुख दैन ॥१२॥
॥४५६॥

परशुराम-अवतार

* राग बिलावल

ज्यौं भयौ परसुराम अवतार । कहौं सो कथा, सुनौ चित धार ।
सहसबाहु रविबंसी भयौ । सरिता-तट इक दिन सो गयौ ।
निज भुज-बल तिन सरिता गही । बढ़ि गयौ जल, तब रावन कही ।
नृप तुम हमसौं करौ लराइ । कह्यौ, करौं मध्यान बिताइ ।
बहुरौ क्रोधवंत जुध चह्यौ । सहसबाहु तब ताकौं गह्यौ ।
बहुरौ नृप करिकै मध्यान । दोनौ ताकौं छाँडि निदान ।
फिरि नृप जमदग्न्यास्रम आयौ । कामधेनु बल करिकै धायौ ।
परसुराम जब यह सुधि पाई । मार्‌यौ ताहि तुरतहीं धाई ।
तासु सुतनि जमदग्निहिं मार्‌यौ । परसुराम रेनुका हँकार्‌यौ ।
मारे छत्री इकइस बार । यौं भयौ परसुराम अवतार ।

---

† यह पद केवल (वे, बृ, कीं, श्या) में है । (कीं) में इसका पाठ अधिक भ्रष्ट है । अतः इस संस्करण में अधिकांश (वे, श्या) का पाठ रक्खा गया है ।

① बैन—१६ । ② भागीरथी भई—१ । ③ जराए—१६ । बराबर—१६ ।

* (ना) भैरवी ।

सुक नृप सौं ज्यौं कहि समुझायौ । सूरदास त्यौंही कहि गायौ ॥ १३ ॥

॥ ४५७ ॥

* राग धनाश्री

परसुराम जमदग्नि-गेह लीनौ अवतारा ।
माता ताकी गई जमुन जल कौं इक बारा ।
लागी तहाँ अबार तिहिं, रिषि करि क्रोध अपार ।
परसुराम सौं यौं कही, माँकौं बेगि सँहार ।
और सुतनि तब कही, पिता, नहिं कीजै ऐसी ।
क्रोधवंत रिषि कह्यौ, करौ इनहूँ सौं वैसी ।
परसुराम तिन सबनि कौं, मारयौ खड्ग-प्रहार ।
रिषि कह्यौ होइ प्रसन्न, बर माँगौ देउँ, कुमार ।
परसुराम तब कह्यौ, यहै बर देहु तात अब ।
जानैं नाहिं न मुए, फेरिकै जीवैं ये सब ।
रिषि कह्यौ, यह बर दियौ मैं, इनकौं देहु उठाइ ।
परसुराम उनकौं दियौ, सोवत मनौ जगाइ ।
परसुराम बन गए, तहाँ दिन बहुत लगाए ।
सहसबाहु तिहिं समय जमदगिनि-आस्रम आए ।
कामधेनु जमदग्नि की, लै गयौ नृपति छिनाइ ।
परसुराम कौं बोलि रिषि दियौ बृत्तांत सुनाइ ।
परसुराम सुनि पिता-बचन, ताकौं संहारयौ ।
कामधेनु दइ आनि, बचन रिषि कौ प्रतिपारयौ ।

---

* (ना) परज ।

सहसबाहु के सुतनि पुनि, राखी घात लगाइ ।
परसुराम जब बन गयौ, मार्‌यौ रिषि कौं धाइ ।
रिषि की यह गति देखि, रेनुका रोइ पुकारी ।
परसुराम, तुम आइ लगत क्यौं नहीं गोहारी ।
यह सुनि कै आयौ तुरत, मारचौ तिन्हैं प्रचारि ।
बहुरौ जिय धरि क्रोध हते, छत्री इकइस बार ।
जग अराज ह्वै गयौ, रिषिनि तब अति दुख पायौ ।
लै पृथ्वी कौ दान, ताहि फिरि बनहिं पठायौ ।
बहुरि राज दियौ छत्रियनि, भयौ रिषिनि आनंद ।
सूरदास पावत हरष, गावत गुन गोबिंद ॥१४॥
॥ ४५८ ।

रामावतार * राग बिलावल

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ । हरि-चरनारबिंद उर धरौ ।
जय अरु बिजय पारषद दोइ । बिप्र-सराप असुर भए सोइ ।
एक बराह रूप धरि मारचौ । इक नरसिंह-रूप संहारचौ ।
रावन-कुंभकरन सोइ भए । राम जनम तिनकैं हित लए ।
दसरथ नृपति अजोध्या-राव । ताकैं गृह कियौ आविर्भाव[1] ।
नृप सौं ज्यौं सुकदेव सुनायौ । सूरदास त्यौंही कहि गायौ ॥१५॥
॥ ४५९ ॥

---

* (ग) भैरवी ।

(१) आदर भाव—२, ३, १३ । उर भाव—६, ८ ।

श्रीराम-जन्म (बालकांड) * राग कान्हरौ

आजु दसरथ कैँ आँगन भीर ।
ये भू-भार उतारन कारन प्रगटे स्याम-सरीर ।
फूले फिरत अजोध्या-बासी, गनत न त्यागत चीर ।
परिरंभन हँसि देत परसपर, आनँद-नैननि नीर ।
त्रिदस-नृपति, रिषि ब्योम-बिमाननि, देखत रह्यौ न धीर ।
त्रिभुवन-नाथ दयालु दरस दै, हरी सबनि की पीर ।
देत दान राख्यौ न भूप कछु, महा[1] बड़े नग हीर ।
भए निहाल सूर सब जाचक, जे जाँचे रघुबीर ॥ १६ ॥

॥४६०॥

* राग कान्हरौ

† अजोध्या बाजति आजु बधाई ।
गर्भ मुच्यौ[2] कौसिल्या माता, रामचंद्र निधि आई ।
गावैँ सखी परसपर मंगल, रिषि अभिषेक कराई ।
भीर भई दसरथ कैँ आँगन, सामबेद-धुनि छाई[3] ।
॥ पूछत रिषिहिँ अजोध्या कौ पति, कहियै जनम गुसाईँ ।
॥ भौम वार,[4] नौमी तिथि नीकी, चौदह भुवन बड़ाई ।
चारि पुत्र दसरथ कैँ उपजे, तिहूँ लोक ठकुराई ।
सदा-सर्बदा राज राम कौ, सूर दादि तहँ पाई ॥ १७ ॥

॥४६१॥

---

* (ना) धनाश्री । (श्या) बिलावल ।
① भाँडे मैँ—६, ८ ।
३ (ना, कौं) सारंग ।
† यह पद (ना, स, ल, रा) मेँ नहीँ है ।
② धरयौ—१६ । ③ गाई—१, ६, ८, १६ ।
॥ ये दो चरण (कौं) मेँ नहीँ हैँ ।
④ उदौ—६, ८ ।

* राग कान्हरौ

रघुकुल प्रगटे हैं रघुबीर ।
देस-देस तैं टीकौ आयौ, रतन-कनक-मनि-हीर ।
घर-घर मंगल होत बधाई, अति पुरबासिनि भीर ।
आनँद-मगन भए सब डोलत, कछू न सोध सरीर ।
मागध[1]-बंदी-सूत लुटाए, गो-गयंद-हय-चीर ।
देत असीस सूर, चिरजीवौ रामचंद्र रनधीर ॥ १८ ॥
॥४६२॥

शर-क्रीड़ा राग बिलावल

करतल-सोभित बान धनुहियाँ ।
खेलत फिरत कनकमय आँगन, पहिरे लाल पनहियाँ ।
दसरथ-कौसिल्या के आगें, लसत[2] सुमन की छहियाँ ।
मानौ चारि हंस सरवर तैं बैठे आइ सदेहियाँ ।
रघुकुल - कुमुद - चंद चिंतामनि, प्रगटे भूतल महियाँ ।
आए[3] ओप देन रघुकुल कौं, आनँद-निधि सब कहियाँ[4] ।
यह सुख तीनि लोक मैं नाहीं, जो पाए[5] प्रभु पहियाँ ।
सूरदास हरि बोलि भक्त कौं, निरबाहत गहि बहियाँ ॥१९॥
॥४६३॥

---

* (ना) सारंग ।
① हाटक बहु इच्छा सों— २, ३, १८ । मानिक बहु इच्छा सों—६, ८ । ② बसत—३ । ③ यहै देन आए—१ । ④ गहियाँ—१ । बहियाँ—२ । ⑤ आए प्रभु तहियाँ—२ ।

* राग बिलावल

धनुहीं-बान लए कर डोलत ।
चारौ बीर संग इक सोभित, बचन मनोहर बोलत ।
लछिमन भरत सत्रुहन सुंदर, राजिवलोचन राम ।
अति सुकुमार, परम पुरुषारथ, मुक्ति[1]-धर्म-धन-धाम[2] ।
कटि-तट पीत पिछौरी बाँधे, काकपच्छ धरे सीस ।
सर-क्रीड़ा दिन देखन आवत, नारद, सुर तैंतीस ।
सिव-मन सकुच, इंद्र-मन आनँद, सुख-दुख बिधिहिँ समान ।
दिति दुर्बल अति, अदिति हृष्टचित, देखि सूर संधान ॥२०॥

॥४६४॥

विश्वामित्र-यज्ञ-रक्षा राग सारंग

दसरथ सौं रिषि आनि कह्यौ ।
असुरनि सौं जग होन न पावत, राम-लषन तब संग दयौ ।
मारि ताड़ुका, यज्ञ करायौ, बिस्वामित्र अनंद भयौ ।
सीय-स्वयंबर जानि सूर-प्रभु कौं लै रिषि ता ठौर गयौ ॥ २१ ॥

॥ ४६५ ॥

अहल्योद्धार * राग सारंग

† गंगा-तट आए श्रीराम ।
तहाँ पषान रूप पग परसे, गौतम रिषि की बाम ।

---

* (ना) कल्यान ।
① अर्थ—२, ३ । ② काम—१, २, ३ ।
* (ना) अहीरी ।
† सभी प्राप्त प्रतियों में यह पद श्री रामचद्रजी की वन-यात्रा के प्रसंग में उनके गंगा तट पर पहुँचने के अवसर पर रक्खा गया है । पर रामायण में (अहिल्योद्धार) श्री रामचंद्रजी की जनकपुर-यात्रा के प्रसंग में आया है । अत इस संस्करण में यह जनकपुर-यात्रा के प्रसंग में ही रक्खा गया है ।

गई अकास देव तन धरिकै, अति सुंदर अभिराम।
सूरदास प्रभु पतित-उधारन-बिरद, कितौ यह काम ! ॥ २२ ॥
॥ ४६६ ॥

धनुष-भग राग सारंग

चितै रघुनाथ-बदन की ओर।
रघुपति सौं अब नेम हमारौ, बिधि सौं करति निहोर।
यह अति दुसह पिनाक पिता-प्रन, राघव-बयस किसोर।
इन पै दीरघ धनुष चढै क्यौं, सखि, यह संसय मोर।
सिय-अंदेस जानि सूरज-प्रभु, लियौ करज की कोर।
टूटत धनु नृप लुके जहाँ-तहँ, ज्यौं तारागन भोर ॥ २३ ॥
॥ ४६७ ॥

दशरथ का जनकपुर-आगमन * राग सारग

महाराज दसरथ तहँ आए।
बैठे जाइ जनक-मंदिर महँ, मोतिनि चौक पुराए।
बिप्र लगे धुनि बेद उचारन, जुवतिनि मंगल गाए।
सुर-गँधर्ब-गन कोटिक आए, गगन बिमाननि छाए।
राम-लषन अरु भरत-सत्रुहन ब्याह निरखि सुख पाए।
सूर भयौ आनंद नृपति-मन, दिवि दुंदुभी बजाए ॥ २४ ॥
॥ ४६८ ॥

* (ना) ईमन। (का, ना) धनाश्री।

कंकण-मोचन

* राग आसावरी

कर कंपै, कंकन नहिँ छूटै ।
राम सिया-कर-परस मगन भए, कौतुक निरखि सखी सुख लूटैँ ।
गावत नारि गारि सब दै दै, तात-भ्रात की कौन चलावै ।
तब कर डोरि छुटै रघुपति जू, जब कौसिल्या माता आवै ।
पूँगी-फल-जुत जल निरमल धरि, आनी भरि कुंडी जो कनक की ।
खेलत[1] जूप सकल जुवतिनि मैँ, हारे रघुपति, जिती जनक की ।
धरे निसान अजिर गृह मंगल, बिप्र बेद - अभिषेक करायौ ।
सूर अमित आनंद जनकपुर[2], सोइ सुकदेव पुराननि गायौ ॥२५॥

॥ ४६६ ॥

धनुष-भग; पाणिग्रहण

* राग नट

ललित गति राजत अति रघुबीर ।
नरपति-सभा-मध्य मनौ ठाढ़े, जुगल हंस मति धीर ।
अलख-अनंत-अपरिमित महिमा, कटि-तट कसे तुनीर ।
कर[3] धनु, काकपच्छ सिर सोभित, अंग[4]-अंग दोउ बीर ।
भूषन बिबिध बिसद अंबर जुत, सुंदर स्याम सरीर ।
देखत मुदित चरित्र[5] सबै सुर, ब्योम-बिमाननि भीर ।

---

* (ना) कल्यान ।

① खेलत सखिनि मधि अति सोभित दसरथ-सुत अरु सुता जनक की—३ । ② कुशल पुर—१ । कोसलपुर—२, ३, ८, १६, १८ ।

* (ना) आसावरी । (का, ना ई) धनाश्री ।

③ लघु—१, २, ३, ६, ८, १६ । ④ इक इक द्वै द्वै तीर—१, २, ३, १६, १८, १६ । ⑤ चरण परसैँ—१, १६ । सुमन बरसैँ—८ ।

प्रमुदित जनक निरखि मुख-अंबुज, प्रगट नैन मधि नीर।
तात-कठिन-प्रन जानि जानकी, आनति नहिँ उर धीर।
करुनामय जब चाप लियौ कर, बाँधि सुदृढ़ कटि-चीर।
भूभृत सीस नमित जो गर्बगत, पावक सौं च्यौ नीर।
डोलत[1] महि अधीर भयौ फनिपति, कूरम अति अकुलान।
दिग्गज चलित, खलित मुनि-आसन, इंद्रादिक भय मान।
रवि मग तज्यौ, तरकि[2] ताके हय, उत्पथ लागे जान।
सिव-बिरंचि ब्याकुल भए धुनि सुनि, जब तोर्‌यौ भगवान।
भंजन-सब्द प्रगट अति अद्‌भुत, अष्ट दिसा नभ-पूरि।
स्रवन-हीन सुनि भए अष्टकुल नाग गरब भय चूरि।
इष्ट[3]-सुरनि बोलत नर तिहिँ सुनि, दानव-सुर बड़ सूर।
मोहित बिकल जानि जिय सबहीँ, महा प्रलय कौ मूर।
पानि-ग्रहन रघुबर बर कीन्ह्यौ, जनकसुता सुख दीन।
जय-जय-धुनि सुनि करत अमरगन, नर-नारी लवलीन।
दुष्टनि दुख, सुख संतनि दीन्हौ, नृप-ब्रत पूरन कीन।
रामचंद्र दसरथहिँ बिदा करि सूरदास रस[4]-भीन ॥ २६ ॥

॥ ४७० ॥

दशरथ-विदा

* राग सारंग

† दसरथ चले अवध आनंदत।
जनकराइ बहु दाइज दै करि, बार-बार पद बंदत।

---

(१) डुलत महीधर भौ (भव) फनपति चल—१, १६। (२) तरफ ताके अति उतपथ गए किक्यान—१६। (३) अष्ट स्रवण पूरित ब्रह्मा सुनि सदा (दान) सुभट बड़भूर (पूर)—१, १६। (४) आधीन—१, ६, १६।

† यह पद (बृ) में (ना) विहाग। नहीँ है।

तनया जामातनि कौं समदत, नैन नीर भरि आए।
सूरदास दसरथ आनंदित, चले निसान बजाए॥ २७॥
॥ ४७१ ॥

परशुराम-मिलाप * राग सारंग

परसुराम तेहिं औसर आए।
कठिन पिनाक कहौ किन तोरयौ, क्रोधित बचन सुनाए।
बिप्र जानि रघुबीर धीर दीउ, हाथ जोरि, सिर नायौ।
बहुत दिननि कौ हुतौ पुरातन, हाथ छुअत उठि आयौ।
तुम तौ द्विज, कुल-पूज्य हमारे, हम-तुम कौन लराई?
क्रोधवंत कछु सुन्यौ नहीं, लियौ सायक-धनुष चढाई।
तबहूँ रघुपति क्रोध न कीन्हौ, धनुष न बान सँभारयौ।
सूरदास प्रभु-रूप समुझि, बन[1] परसुराम पग धारयौ॥ २८॥
॥ ४७२ ॥

अवधपुरी-प्रवेश ❀ राग सारंग

अवधपुर आए दसरथ राइ।
राम, लषन अरु भरत, सत्रुहन, सोभित चारौ भाइ।
घुरत निसान, मृदंग-संख-धुनि, भेरि-झाँझ-सहनाइ।
उमँगे लोग नगर के निरखत, अति सुख सबहिनि पाइ।
कौसिल्या आदिक महतारी, आरति करहिं बनाइ।
यह सुख निरखि मुदित सुर-नर-मुनि, सूरदास बलि जाइ॥२९॥
॥ ४७३ ॥

---

*(ना) भैरव। (१) पुनि—१, २, ६, ८, १९। ४(ना) श्री।

(अयोध्या कांड)

राम-वन-गमन

* राग सारंग

† महाराज दसरथ मन धारी ।
अवधपुरी कौ राज राम दै, लीजै ब्रत बनचारी ।
यह सुनि बोली नारि कैकई, अपनौ बचन सँभारौ ।
चौदह बर्ष रहैं बन राघव, छत्र भरत-सिर धारौ ।
यह सुनि नृपति भयौ अति ब्याकुल, कहत कछू नहिँ आई ।
सूर रहे समुझाइ बहुत, पै कैकई-हठ नहिँ जाई ॥ ३० ॥

॥ ४७४ ॥

* राग कान्हरौ

‡ महाराज दसरथ यौं सोचत ।
हा रघुनाथ, लछन, बैदेही, सुमिरि नीर दृग मोचत ।
त्रिया-चरित[1] मतिमंत न समुझत, उठि प्रछालि मुख धोवत ।
अति बिपरीत रीति कछु औरै, बार-बार मुख जोवत !
परम कुबुद्धि कह्यौ नहिँ समुझति, राम-लछन हँकराए ।
कौसिल्या सुनि परम दीन ह्वै, नैन-नीर ढरकाए ।
बिह्वल तन-मन, चकृत भई सो, यह प्रतच्छ सुपनाए !
गदगद-कंठ सूर कोसलपुर सोर सुनत दुख पाए ॥ ३१ ॥

॥ ४७५ ॥

---

* (ना) पट मंजरी ।

† यह पद (कां) में नहीं है ।

‡ (ना) बिहागरौ ।

‡ भिन्न भिन्न प्रतियों में इस पद का बड़ा पाठांतर मिलता है । सबको मिला-जुलाकर पाठ शुद्ध तथा संगत करने की चेष्टा की गई है ।

(१) चरित मैमंत—१, ६, ८, १६ । महा मैमंत—२ । मैमंत नाह नहिँ—३ ।

कैकेयी-वचन, श्रीराम के प्रति * राग सारंग

सकुचनि कहत नहीं महराज।
चौदह बर्ष तुम्हैं बन दीन्हौं, मम सुत कौं निज राज।
पितु-आयसु सिर धरि रघुनायक, कौसिल्या ढिग आए।
सीस नाइ बन-आज्ञा माँगी, सूर सुनत दुख पाए॥ ३२॥
॥ ४७६ ॥

दसरथ-विलाप ⊛ राग सारंग

† रघुनाथ पियारे, आजु रहौ (हो)।
चारि जाम बिस्राम हमारैं, छिन-छिन मीठे बचन कहौ (हो)।
बृथा होहु बर बचन हमारौ, कैकई जीव कलेस सहौ (हो)।
आतुर ह्वै अब छाँड़ि अवधपुर, प्रान-जिवन कित चलन कहौ (हो)।
बिछुरत प्रान पयान करैंगे, रहौ आजु पुनि पंथ गहौ (हो)।
अब सूरज दिन दरसन दुरलभ, कलित कमल कर कंठ गहौ (हो)॥३३॥
॥ ४७७ ॥

श्रीराम-वचन, जानकी के प्रति × राग गूजरी

तुम जानकी, जनकपुर जाहु।
कहा आनि हम संग भरमिहौ, गहबर बन दुख-सिंधु अथाहु।
तजि वह जनक-राज-भोजन-सुख, कत तृन-तलप, बिपिन-फल, खाहु!
ग्रीषम कमल-बदन कुम्हिलैहै, तजि सर निकट दूरि कित न्हाहु।

---

* (ना) देवगिरि (ना ३) नट।

⊛ (ना) भैरवी।

† भिन्न भिन्न प्रतियो में इस पद के पाठ में बड़ा अतर है। कुछ प्रतियो में यह पद कौशल्या का वचन मानकर बहुत कुछ बदल डाला गया है। कुछ में यह 'दशरथ-विलाप' शीर्षक के अंतर्गत आया है। इस संस्करण में इसे (वे) के अनुसार दशरथ विलाप का पद ही माना गया है।

× (ना) भैरवी। (कौं) सारंग।

जनि कछु प्रिया, सोच मन करिहौ, मातु-पिता-परिजन-सुख लाहु ।
तुम घर रहौ सीख मेरी सुनि, नातरु बन बसिकै पछिताहु ।
हौं पुनि मानि कर्म कृत रेखा, करिहौं तात-बचन-निरबाहु ।
सूर सत्य जो पतिव्रत राखौ, चलौ संग जनि, उतहीं जाहु ॥३४॥

॥ ४७८ ॥

जानकी-वचन, श्रीराम के प्रति — * राग केदारौ

ऐसो जिय न धरौ रघुराइ ।
तुम-सो प्रभु तजि मो सी दासी, अनत न कहूँ समाइ ।
तुम्हरो रूप अनूप भानु ज्यौं, जब नैननि भरि देखौं ।
ता छिन हृदय-कमल-प्रफुलित ह्वै, जनम सफल करि लेखौं ।
तुम्हरे चरन-कमल सुख-सागर, यह ब्रत हौं प्रतिपलिहौं ।
सूर सकल सुख छाँड़ि आपनौ, बन-बिपदा-सँग चलिहौं ॥ ३५ ॥

॥ ४७९ ॥

श्रीराम-वचन, लक्ष्मण के प्रति — ❀ राग गूजरी

तुम लछिमन निज पुरहिं सिधारौ ।
बिछुरन-भेंट देहु लघु बंधू, जियत न जैहै सूल तुम्हारौ ।
यह भावी कछु और काज है, को जो याकौ मेटनहारौ ।
याकौ कहा परेखौ-निरखौ[1], मधु[2] छीलर[3], सरितापति खारौ ।
तुम मति करौ अवज्ञा नृप की, यह दुख तौ आगे कौं भारौ ।
सूर सुमित्रा अंक दीजियो, कौसिल्याहिं प्रनाम हमारौ ॥३६॥

॥ ४८० ॥

---

* (ना) हम्मीर कल्यान । (ना) ईमन । ८ । ② मधुर झील—१६ । ③ झीलर—२ ।
(ना) गुर्जरी । (कां) सारंग । ① हरपौ—१, २, ३, ६,

लक्ष्मण का उत्तर * राग सारंग

लछिमन नैन नीर भरि आए।
उत्तर कहत कछू नहिँ आयौ, रहे चरन लपटाए।
अंतरजामी प्रीति जानि कै, लछिमन लीन्हे साथ।
सूरदास रघुनाथ चले बन, पिता-बचन धरि माथ॥ ३७॥

॥४८१॥

महाराज दशरथ का पश्चात्ताप ❀ राग कान्हरौ

फिरि-फिरि नृपति चलावत बात।
कहु री! सुमति कहा तोहिँ पलटी, प्रान-जिवन कैसैँ बन जात!
ह्वै बिरक्त, सिर जटा धरैँ, द्रुम-चर्म, भस्म सब गात।
हा हा राम, लछन अरु सीता, फल भोजन जु डसावैँ पात।
बिन रथ रूढ़, दुसह दुख मारग, बिन पद-त्रान चलैँ दोउ भ्रात।
इहिँ बिधि सोच करत अतिही नृप, जानकि-ओर निरखि बिलखात।
इतनी सुनत सिमिटि सब आए, प्रेम सहित धारे अँसुपात।
ता दिन सूर सहर सब चक्रित, सबर[1]-सनेह तज्यौ पितु-मात॥ ३८॥

॥ ४८२ ॥

राम-वन-गमन राग नट

† आजु रघुनाथ पयानो देत।
बिह्वल भए स्रवन सुनि पुरजन, पुत्र-पिता कौ हेत।

---

* (ना, ना ३) गुर्जरी। (का) केदारा।

❀ (ना) नट।

† यह पद केवल (शा, का, ना ३) में है।

[1] सब रस—१।

ऊँचे चढि दसरथ लोचन भरि सुत-मुख देखे लेत।
रामचंद्र से पुत्र बिना मैं भूँजब[1] क्यौं यह खेत।
देखत गमन नैन भरि आए, गात गह्यौ ज्यौं केत।
तात-तात कहि बैन उचारत, ह्वै गए भूप अचेत।
कटि तट तून, हाथ सायक-धनु, सीता बंधु समेत।
सूर गमन गह्वर कौ कीन्हौं जानत पिता अचेत॥ ३९॥

॥४८३॥

लक्ष्मण-केवट-संवाद * राग मारू

लै भैया केवट, उतराई।
महाराज रघुपति इत ठाढे, तैं कत नाव दुराई?
अबहिँ सिला तैं भई देव-गति, जब पग-रेनु छुवाई।
हौं कुटुंब काहेँ प्रतिपारौं, वैसी मति ह्वै जाई।
जाकी चरन-रेनु की महि[2] मैं, सुनियत अधिक बड़ाई।
सूरदास प्रभु अगनित महिमा, बेद पुरानन गाई॥ ४०॥

॥४८४॥

केवट-विनय * राग कान्हरौ

नौका हौं नाहीँ लै आऊँ।
प्रगट प्रताप चरन कौ देखौं, ताहि कहाँ पुनि[3] पाऊँ?
कृपासिंधु पै केवट आयौ, कंपत करत सो बात।
चरन परसि पाषान उड़त है, कत[4] बेरी उड़ि जात?

---

① भूँजि बयौ कुरुखेत—६, ८।
* (ना) पंचम।
② महिमा—१, २, ३, ६, ८, १४।
[1] (ना) रामकली। (का, ना ३) मारू। (कां) सारंग।
③ लौ गाऊँ—१, ६, ८, १६, १६।
④ मति मेरी—१। यह मेरी—२, ३, ६, ८।

जो यह बधू होइ काहू की, दारु-स्वरूप धरे।
छूटै देह, जाइ सरिता तजि, पग सौं परस करे।
मेरी सकल जीविका यामैं, रघुपति मुक्त न कीजै।
सूरजदास चढ़ौ प्रभु पाछैं, रेनु पखारन दीजै॥ ४१॥
॥४८५॥

* राग रामकली

† मेरी नौका जनि चढ़ौ त्रिभुवनपति राई।
मो देखत पाहन तरे, मेरी काठ की नाई।
मैं खेई ही पार कौं, तुम उलटि मँगाई।
मेरौ जिय यौंही डरै, मति होहि सिलाई।
मैं निरबल बित-बल नहीं, जो और गढ़ाऊँ।
मो कुटुंब याही लग्यौ, ऐसी कहँ पाऊँ?
मैं निर्धन, कछु धन नहीं, परिवार घनेरौ।
सेमर-ढाकहिं काटि कै, बाँधौं तुम बेरौ।
बार-बार श्रीपति कहैं, धीवर नहिं मानै।
मन प्रतीति नहिं आवई, उड़िबौ ही जानै।
नेरैं ही जलथाह है, चलौ तुम्हैं बताऊँ।
सूरदास की बीनती, नीकैं पहुँचाऊँ॥ ४२॥
॥४८६॥

---

* (का, ना) विभास।

† यह पद (ना, स, ल, कां, रा) में नहीं है।

पुरवधू-पश्न * राग रामकली

† सखी री, कौन निहारे जात ।
राजिवनैन धनुष कर लीन्हे, बदन मनोहर गात ?
लज्जित होहिँ पुरबधू पूछैँ, अंग-अंग मुसकात ।
अति मृदु चरन पंथ-बन-बिहरत, सुनियत अद्भुत बात ।
सुंदर तन, सुकुमार दोउ जन, सूर-किरिन कुम्हिलात ।
देखि मनोहर तीनौँ मूरति, त्रिबिध-ताप-तन जात ॥ ४३ ॥
॥४८७॥

राग गौरी

‡ अरी अरी सुंदरि नारि सुहागिनि, लागैँ तेरैँ पाउँ ।
किहिँ घाँ के तुम बीर बटाऊ, कौन तुम्हारो गाउँ ?
उत्तर दिसि हम-नगर अजोध्या, है सरजू कैँ तीर ।
बड़ कुल, बड़े भूप दसरथ सखि, बड़ो नगर गंभीर ।
कौनैँ गुन बन चली बधू तुम, कहि मोसौँ सति भाउ ।
वह घर-द्वार छाँडि कै सुंदरि, चली पियादे पाँउ !
सासु की सौति सुहागिनि सो सखि, अतिहीँ पिय की प्यारी ।
अपने सुत कौँ राज दिवायौ, हमकौँ देस निकारी ।
यह बिपरीति सुनी जब सबहीँ, नैननि ढारचौ नीर ।
आजु सखी चलु भवन हमारैँ, सहित दोउ रघुबीर ।

---

* (ना, का, ग्रा) धनाश्री । (श्या) केदारा ।
† यह पद (काँ) मे नहीँ है । ग्रा) मेँ है ।
‡ यह पद केवल (शा, का,

बरष चतुरदस भवन न बसिहैँ, आज्ञा दीन्ही राइ ।
उनके बचन सत्य करि सजनी, बहुरि मिलैँगे आइ ।
बिनती बिहँसि सरस मुख सुंदरि, सिय सौं पूछो गाथ[1] ।
कौन बरन तुम देवर सखि री, कौन तिहारो नाथ ?
कटि तट पट पीतांबर काछे, धारे धनु-तूनीर ।
गौर बरन मेरे देवर सखि, पिय मम स्याम सरीर ।
तीनि जने सोभा त्रिलोक की, छाँड़ि सकल पुरधाम ।
सूरदास-प्रभु-रूप चकित भए, पंथ चलत नर[2]-बाम ॥ ४४ ॥

॥४८८॥

* राग धनाश्री

कहि धौं सखी बटाऊ को हैँ ?
अद्भुत बधू लिए सँग डोलत, देखत त्रिभुवन मोहैँ ।
परम सुसील सुलच्छन जोरी, बिधि की रची न होइ ।
काकी तिनकौं उपमा दीजै, देह धरे धौं कोइ ।
इनमैँ को पति आहिँ तिहारे, पुरजनि पूछैँ धाइ ।
राजिवनैन मैन की मूरति, सैननि दियो[3] बताइ ।
गईँ सकल मिलि संग दूरि लौं, मन न फिरत पुर-बास ।
सूरदास स्वामी के बिछुरत, भरि भरि लेतिँ उसास ॥ ४५ ॥

॥ ४८९ ॥

---

① बात—६, ८ । ② श्रीराम—६, ८ । * (ना) भोपाली । (का, ना) कान्हरा । (का, श्या) सारंग । ③ माहिँ—१, २, ३ ।

दशरथ-तनु-त्याग — राग धनाश्री

† तात बचन रघुनाथ माथ धरि, जब बन गौन कियौ ।
मंत्री गयौ फिरावन रथ लै, रघुबर फेरि दियौ ।
भुजा छुड़ाइ, तोरि तृन ज्यौं हित, कियौ प्रभु निठुर हियौ ।
यह सुनि भूप तुरत तनु त्याग्यौ, बिछुरन-ताप-तयौ ।
सुरनि-साल-ज्वाला उर अंतर, ज्यौं पावकहिँ पियौ ।
इहिँ बिधि बिकल सकल पुरबासी, नाहिँन चहत जियौ ।
पसु-पंछी तृन-कन त्याग्यौ अरु बालक पियौ न पयौ ।
सूरदास रघुपति के बिछुरैँ, मिथ्या जनम भयौ ॥ ४६ ॥
॥ ४६० ॥

कौशल्या-विलाप, भरत-आगमन — * राग गूजरी

‡ रामहिँ राखौ कोऊ जाइ ।
जब लगि भरत अजोध्या आवैँ, कहति कौसिला माइ ।
पठवौ दूत भरत कौँ ल्यावन, बचन कह्यौ बिलखाइ[1] ।
दसरथ-बचन[2] राम बन गवने, यह कहियौ अरथाइ ।
आए भरत, दीन ह्वै बोले, कहा कियौ कैकइ माइ ?
हम सेवक वै त्रिभुवनपति, कत स्वान सिंह-बलि खाइ ।

---

† भिन्न भिन्न प्रतियों में इस पद के पाठ भिन्न भिन्न हैं। चरणों की संख्या में भी न्यूनाधिक्य है। सब प्रतियों के पाठों पर विचार कर इस संस्करण का पाठ निर्धारित किया गया है। अतएव पाठांतर नहीं दिए गए।

* (ना) सोरठि ।

‡ यह पद (कां) में नहीं है।

① शिर नाइ—१, २, ३, ६, ८, १६ । ② मरन—२, ३, ६, ८ ।

आजु अजोध्या जल नहिँ अँचवौं, मुख नहिँ देखौं माइ।
सूरदास राघव-बिछुरन[1] तैँ, मरन भलौ दव लाइ ॥४७॥

॥ ४६१ ॥

भरत-वचन, माता के प्रति * राग केदारौ

तैँ कैकई कुमंत्र कियौ।
अपने कर[2] करि काल हँकारचौ, हठ करि नृप-अपराध लियौ।
श्रीपति चलत रह्यौ कहि कैसैँ, तेरौ पाहन-कठिन हियौ।
मो अपराधी के हित कारन, तैँ रामहिँ बनबास दियौ।
कौन काज यह राज हमारैँ, इहिँ पावक परि कौन जियौ?
लोटत सूर धरनि दोउ बंधू, मनौ तपत-बिष बिषम पियौ ॥४८॥

॥ ४६२ ॥

❀ राग सोरठ

† राम जू कहाँ गए री माता?
सूनौ भवन, सिँहासन सूनौ, नाहीँ दसरथ ताता।
धृग तव जन्म, जियन धृग तेरौ, कही कपट-मुख बाता।
सेवक राज, नाथ बन पठए, यह कब लिखी बिधाता।
मुख अरबिंद देखि हम जीवत, ज्यौं चकोर ससि राता।
सूरदास श्रीरामचंद्र बिनु कहा अजोध्या नाता ॥ ४६ ॥

॥ ४६३ ॥

---

① के बिछुरे मरौं भवन दौ लाइ—१।
* (ना, का, ङ्गा) धनाश्री।
(कां) गौरी।
② मुख—१, १६, १६।
ॐ (का, ङ्गा) केदार। (कां, श्या) सारंग।
† यह पद (ना, स, ल, रा) में नहीँ है।

महाराज दशरथ की अंत्येष्टि

* राग कान्हरौ

गुरु बसिष्ठ भरतहिँ समुझायौ ।
राजा कौ परलोक सँवारौ, जुग-जुग यह चलि आयौ ।
चंदन अगर सुगंध और घृत, बिधि करि चिता बनायौ ।
चले बिमान संग गुरु-पुरजन, तापर नृप पौढ़ायौ ।
भस्म अंत तिल-अंजलि दीन्हीं, देव बिमान चढायौ ।
दिन दस लौं जलकुंभ साजि सुचि, दीप-दान करवायौ ।
जानि एकादस बिप्र बुलाए, भोजन बहुत करायौ ।
दीन्हौ दान बहुत नाना बिधि, इहिँ बिधि कर्म पुजायौ ।
सब करतूति[1] कैकई कैँ सिर, जिन यह[2] दुख उपजायौ ।
इहिँ बिधि सूर अजोध्या-बासी, दिन-दिन काल गँवायौ ॥ ५० ॥
॥४६४॥

भरत का चित्रकूट-गमन

* राग सारंग

राम पै भरत चले अतुराइ ।
मनहीं मन सोचत मारग मैँ, दई, फिरैँ क्यौं राघवराइ !
देखि दरस चरननि लपटाने, गदगद कंठ न कछु कहि जाइ ।
लीनौ हृदय लगाइ रू र प्रभु, पूछत भद्र भए क्यौँ भाइ ? ॥ ५१ ॥
॥४६५॥

× राग केदारौ

भ्रात[3]-मुख निरखि राम बिलखाने[4] ।
मुंडित केस-सीस, बिह्वल दोउ, उमँगि[5] कंठ लपटाने ।

---

* (ना) धनाश्री । (का, ना ३) केदारा ।
(१) अपराध—१६ । (२) अभिलाष उपायौ—१, २, ३ । अभिलाष पुजायौ—६, ८, १६ ।
* (ना) रामकली ।
× (ना) धनाश्री । (का, ना ३, कां) सारंग ।
(३) भरत—१, २, ३, ६, ८, १६ । (४) पछिताने—२, ३, ६, ८ । (५) अंग खेह लपटाने—६, ८ ।

तात-मरन सुनि स्रवन कृपानिधि, धरनि परे मुरझाइ ।
मोह-मगन, लोचन जल-धारा, बिपति न हृदय समाइ ।
लोटति धरनि परी सुनि सीता, समुझति नहिँ समुझाई ।
दारुन दुख दवारि ज्यौं तृन-बन, नाहिँ न बुझति बुझाई ।
दुरलभ भयौ दरस दसरथ कौ, सो अपराध हमारे ।
सूरदास स्वामी करुनामय, नैन न जात उघारे ॥ ५२ ॥
॥ ४९६ ॥

श्रीराम-भरत-संवाद * राग केदारौ

तुमहिँ बिमुख रघुनाथ, कौन बिधि जीवन कहा बनै ।
चरन-सरोज बिना अवलोके, को सुख धरनि गनै ।
हठ करि रहे, चरन नहिँ छाँड़े, नाथ, तजौ निठुराई ।
परम दुखी कौसल्या जननी, चलौ सदन रघुराई ।
चौदह बरष तात की आज्ञा, मोपै मेटि न जाई ।
सूर स्वामि की पाँवरि सिर धरि, भरत चले बिलखाई ॥ ५३ ॥
॥ ४९७ ॥

रामोपदेश, भरत-प्रति ❀ राग मारू

बंधू, करियौ राज सँभारे ।
राजनीति अरु गुरु की सेवा, गाइ-बिप्र प्रतिपारे ।
कौसल्या - कैकई - सुमित्रा - दरसन साँझ - सबारे ।
गुरु बसिष्ठ अरु मिलि सुमंत सौं, परजा-हेतु बिचारे ।

---

* (ना) बिलावल । (ना) गूजरी । (कौं) सारंग । सारंग ।

भरत गात सीतल ह्वै आयौ, नैन उमँगि जल ढारे।
सूरदास प्रभु दई पाँवरी, अवधपुरी पग धारे ॥ ५४ ॥

॥ ४६८ ॥

भरत-विदा * राग सारंग

† राम यौं भरत बहुत समुझायौ।
कौसिल्या, कैकई, सुमित्रहिँ, पुनि-पुनि सीस नवायौ।
गुरु बसिष्ठ अरु मिलि सुमंत सौं, अतिहीँ प्रेम बढायौ।
बालक प्रतिपालक तुम दोऊ, दसरथ-लाड़ लड़ायौ।
भरत-सत्रुहन कियौ प्रनाम, रघुबर तिन्ह[1] कंठ लगायौ।
गदगद गिरा, सजल अति लोचन, हिय सनेह-जल छायौ।
कीजै यहै बिचार परसपर, राजनीति समुझायौ।
सेवा मातु, प्रजा-प्रतिपालन, यह जुग-जुग चलि आयौ।
चित्रकूट तैँ चले खीन[2]-तन, मन बिस्राम न पायौ।
सूरदास बलि गयौ राम कौँ, निगम नेति जिहिँ गायौ ॥ ५५ ॥

॥ ४६९ ॥

(अरण्यकांड)

सूर्पणखा-नासिकोच्छेदन ⊛ राग मारू

दंडक बन आए रघुराई।
काम-बिवस ब्याकुल-उर-अंतर, राच्छसि एक तहाँ चलि आई।
हँसि कहि कछू राम सीता सौं, तिहिँ लछिमन कौँ निकट पठाई।
भृकुटी कुटिल, अरुन अति लोचन, अगिनि-सिखा-मुख कह्यौ फिराई।

---

* (ना) जैतश्री। (का,ज्ञा) मारू।

† यह पद (का) में नहीं है।

① हित—१, २, ३, ८। हित करि—६। ② तिहीं छन—६, ८।

⊛ (ना) धनाश्री।

री बौरी, सठ भई मदन-बस, मेरैं ध्यान चरन रघुराई।
बिरह-बिथा तन गई लाज छुटि, बारंबार उठै अकुलाई।
रघुपति कह्यौ, निलज्ज निपट तू, नारि राच्छसी ह्याँ तैं जाई।
सूरदास प्रभु इक पतिनीब्रत, काटी नाक गई खिसिआई॥ ५६॥

॥ ५०० ॥

खर-दूषण-बध

* राग सारग

खर-दूषण यह सुनि उठि धाए।
तिनकैं संग अनेक निसाचर, रघुपति-आस्रम आए।
श्रीरघुनाथ-लछन ते मारे, कोउ एक गए[1] पराए।
सूर्पनखा ये समाचार सब, लंका जाइ सुनाए।
दसकंधर-मारीच निसाचर, यह सुनि कै अकुलाए।
दंडक बन आए छल करि कै, सूर राम[2] लखि धाए॥ ५७॥

॥ ५०१ ॥

* राग सारंग

राम धनुष अरु सायक साँधे।
सिय-हित मृग पाछैं उठि धाए, बलकल बसन, फेंट दृढ बाँधे।
नव-घन, नील-सरोज बरन बपु, बिपुल बाहु, केहरि[3]-कल-काँधे।
इंदु-बदन, राजीव-नैन बर, सीस जटा सिव-सम सिर बाँधे।
पालत, सृजत, सँहारत, सैंतत, अंड अनेक अवधि पल आधे।
सूर भजन-महिमा दिखरावत, इमि अति[4] सुगम चरन आराधे॥ ५८॥

॥ ५०२ ॥

---

* (का) मारू।
① भागि—६, ८। ② ठग्यौ रघुराए—१। कह्यौ रघुराए—२।
✿ (का, ना) केदार। (का) रामकली।
③ छत्री गुन कांधे—१,१६। कैवर कौं साधैं—२। गहबर को साधे—३। ④ गति—२।

सीता-हरण

* राग केदारौ

सीता पुहुप-बाटिका लाई ।
बारंबार[1] सराहत तरुबर, प्रेम-सहित सींचे रघुराई ।
अंकुर-मूल भए सो पोषे[2], क्रम-क्रम[3] लगे फूल फल आई ।
नाना भाँति पाँति सुंदर मनौ कंचन की है लता बनाई ।
मृग-स्वरूप मारीच धरचौ तब, फेरि चल्यौ बारक[4] जो दिखाई ।
श्रीरघुनाथ धनुष कर लीन्हौ, लागत बान देव-गति पाई ।
हा लछिमन, सुनि टेर जानकी, बिकल भई, आतुर उठि धाई ।
॥ रेखा खैँचि, बारि बंधन मय, हा रघुबीर कहाँ हौ भाई ।
रावन तुरत बिभूति लगाए, कहत आइ, भिच्छा दै माई ।
दीन जानि, सुधि आनि भजन की, प्रेम सहित भिच्छा लै आई ।
हरि सीता लै चल्यौ डरत जिय, मानो रंक महानिधि पाई ।
सूर सीय पछितात यहै कहि, करम-रेख[5] मेटी नहिँ जाई ॥ ५६ ॥

॥ ५०३ ॥

* राग मारू

इहिँ बिधि बन बसे रघुराइ ।
डासि कै तृन भूमि सोवत, द्रुमनि के फल खाइ ।
जगत-जननी करी बारी, मृगा चरि चरि जाइ ।
कोपि कै प्रभु बान लीन्हौं, तबहिँ धनुष चढ़ाइ ।

---

* (ना) जैतश्री । (का, ना) मारू । (को) सारंग ।

① बार बार सोकादिक के तरु—१, १६ । बार बार सृग आदिक के तर—२, ६, ८ । ② नीके—२ । पेखे—६, ८, १६ । ③ कर्म भोग फल लागे—१, ६, ८, १६ । ④ मारग —१, ३, ६, ८, १६, १६ ।

॥ इस चरण का अर्थ स्पष्ट नहीं है ।

⑤ दसा—१, २, ३ । (ना) सोरठि ।

जनक-तनया धरी अगिनि मैं, छाया रूप बनाइ ।
यह न कोऊ भेद जानै, बिना श्री रघुराइ ।
कह्यौ अनुज सौं, रहौ ह्याँ तुम, छाँड़ि जनि कहुँ जाइ ।
कनक-मृग मारीच मारचौ, गिरचौ, लषन सुनाइ ।
गयौ सो दै रेख, सीता कह्यौ सो कहि नहिँ जाइ ।
तबहिँ निसिचर गयौ छल करि, लई सीय चुराइ ।
गीध ताकौं देखि धायौ, लरचौ सूर बनाइ ।
पंख काटैँ गिरचौ, असुर तब गयौ लंका धाइ ॥६०॥

॥ ५०४ ॥

सीता का अशोक-वन-वास राग सारंग

बन असोक मैं जनक-सुता कौं रावन राख्यौ जाइ ।
भृखऽरु प्यास, नींद नहिँ आवै, गई बहुत मुरझाइ ।
रखवारी कौं बहुत निसाचरि, दीन्हीं तुरत पठाइ ।
सूरदास सीता तिन्ह निरखत, मनहीं मन पछिताइ[1] ॥ ६१ ॥

॥ ५०५ ॥

राम-विलाप * राग केदारौ

रघुपति कहि प्रिय नाम पुकारत ।
हाथ धनुष लीन्हे[2], कटि भाथा, चकित भए दिसि-बिदिसि निहारत ।
निरखत सून भवन जड़ ह्वै रहे, खिन लोटत धर, बपु न सँभारत ।
हा सीता, सीता, कहि सियपति, उमड़ि नयन जल भरि-भरि ढारत ।

---

① सकुचाइ—१, ३, १६ । * (ना) सारंग । ② लिए मुक्त मृगहिँ किए—१,१६ ।

लगत सेष-उर बिलखि जगत गुरु, अद्भुत गति नहिँ परति बिचारत।
चितत चित्त सूर सीतापति[1], मोह-मेरु-दुख टरत न टारत ॥६२॥

॥ ५०६ ॥

* राग केदारौ

सुनौ अनुज, इहिँ बन इतननि मिलि जानकी प्रिया हरी।
कछु इक अंगनि की सहिदानी, मेरी दृष्टि परी।
कटि केहरि, कोकिल कल[2] बानी, ससि मुख-प्रभा धरी।
मृग मूसी नैननि की सोभा, जाति न गुप्त करी।
चंपक-बरन, चरन-कर कमललि, दाडिम दसन लरी।
गति मराल अरु बिंब अधर-छबि, अहि अनूप कबरी।
अति करुना रघुनाथ गुसाईं, जुग ज्यौं जाति धरी।
सूरदास प्रभु प्रिया-प्रेम-बस, निज महिमा बिसरी ॥६३॥

॥ ५०७ ॥

* राग केदारौ

फिरत प्रभु पूछत बन-द्रुम-बेली।
अहो बंधु, काहूँ अवलोकी इहिँ मग बधू अकेली?
अहो बिहंग, अहो पन्नग-नृप, या कंदर के राइ।
अबकैँ मेरी बिपति मिटावौ[3], जानकि देहु बताइ।
चंपक-पुहुप-बरन-तन-सुंदर, मनौ चित्र-अवरेखी।
हो रघुनाथ, निसाचर कैँ सँग अबै जात हौं देखी।

---

(१) सीता हित—१, २, ३। नहीँ है। मारू।
* (ना) सारंग। (२) बानी अरु—१,२,३,१६। (३) कटावौ—२,३। घटावौ
† यह पद (का, ना) में (ना) बिलावल। (कां) —६, ८। बँटावौ—१६।

यह सुनि धावत धरनि, चरन की प्रतिमा पथ मैं पाई ।
नैन-नीर रघुनाथ सानि सेा, सिव ज्यौं गात चढाई ।
कहुँ हिय-हार, कहूँ कर-कंकन, कहुँ नूपुर[1] कहुँ चीर ।
सूरदास बन-बन अवलोकत, बिलख बदन रघुबीर ॥ ६४ ॥
॥५०८॥

गृद्ध-उद्धरण * राग केदारौ

तुम लछिमन या कुंज-कुटी मैं देखेा जाइ निहारि ।
कोउ इक जीव नाम मम लै-लै उठत पुकारि-पुकारि ।
इतनी कहत कंध तैं कर गहि लीन्हेा धनुष सँभारि ।
कृपानिधान नाम हित धाए, अपनी बिपति बिसारि ।
अहेा बिहंग, कहेा अपनेा दुख, पूछत ताहि[2] खरारि ।
किहिँ मति मूढ हत्येा तनु तेरेा, किधौं बिछेाही नारि ?
श्रीरघुनाथ-रमनि, जग-जननी, जनक-नरेस-कुमारि ।
ताकौं हरन कियेा दसकंधर, हौं तिहिँ लग्यौ गुहारि ।
इतनी सुनि कृपालु केामल प्रभु, दियेा धनुष कर झारि[3] ।
मानेा सूर प्रान लै रावन गयेा देह कौं डारि ॥ ६५ ॥
॥ ५०९ ॥

गृद्ध हरि-पद-प्राप्ति * राग केदारौ

रघुपति निरखि गीध सिर नायेा ।
कहिकै बात सकल सीता की, तन तजि चरन-कमल चित लायेा ।

---

① अंचर—१, २, ६, ८ । ② तब जु मुरारि—१, ११ । (ना) धनाश्री ।
* (ना) बिलावल । ③ डारि— १,२, ३, ६, ८,११ ।

श्री रघुनाथ जानि जन अपनौ, अपनैं कर करि ताहि जरायौ।
सूरदास प्रभु दरस परस करि, ततछन हरि कैं लोक सिधायौ ॥ ६६ ॥
॥ ५१० ॥

शबरी-उद्धार * राग केदारौ

सबरी-आस्रम रघुबर आए। अरधासन दै प्रभु बैठाए।
खाटे फल तजि मीठे ल्याई। जूँठे भए सो सहज सुहाई।
अंतरजामी अति हित मानि। भोजन कीने, स्वाद बखानि।
जाति न काहू की प्रभु जानत। भक्ति-भाव हरि जुग-जुग मानत।
करि दंडवत भई बलिहारी। पुनि तन तजि हरि-लोक सिधारी।
सूरज प्रभु अति करुना भई। निज कर करि तिल-अंजलि दई ॥६७॥
॥५११॥

किष्किंधा कांड

सुग्रीव-मिलन ⊛ राग सारंग

रिष्यमूक परबत बिख्याता।
इक दिन अनुज-सहित तहँ आए, सीतापति रघुनाथा।
कपि सुग्रीव बालि के भय तैं बसत हुतौ तहँ आइ।
त्रास मानि तिहिं पवन-पुत्र कौं दीनौ तुरत पठाइ।
को ये बीर फिरैं बन बिचरत, किहिं कारन ह्याँ आए।
सूरज-प्रभु कैं निकट आइ कपि, हाथ जोरि सिर नाए ॥६८॥
॥५१२॥

---

* (ना) रामकली। ⊛ (ना) नट।

हनुमत-राम-सवाद * राग मारू

मिले हनु, पूछी प्रभु यह बात ।
महा मधुर प्रिय बानी बोलत, साखामृग, तुम[1] किहि के तात ?
अंजनि कौ सुत, केसरि कैं कुल पवन-गवन उपजायौ गात ।
तुम को बीर, नीर भरि लोचन, मीन हीन-जल ज्यौं मुरझात ?
दसरथ-सुत कोसलपुर-बासी, त्रिया हरी तातैं अकुलात ।
इहिं गिरि पर कपिपति सुनियत है, वालि-त्रास कैसैं दिन जात !
महादीन, बलहीन, विकल अति, पवन-पूत देखे[2] बिलखात ।
सूर सुनत सुग्रीव चले उठि, चरन गहे, पूछो कुसलात ॥६९॥

॥५१३॥

बालि-वध * राग मारू

बड़े भाग्य इहिं मारग आए ।
गदगद कंठ, सोक सौं रोवत, बारि बिलोचन छाए ।
महाधीर गंभीर बचन सुनि, जामवंत समुझाए ।
बढ़ी परस्पर प्रीति रीति तब, भूषन-सिया दिखाए ।
सप्त ताल सर साँधि, बालि हति, मन-अभिलाष पुजाए ।
सूरदास प्रभु-भुज के बलि-बलि, बिमल-बिमल जस गाए ॥७०॥

॥५१४॥

सुग्रीव को राज्य-प्राप्ति × राग सारंग

राज दियौ सुग्रीव कौं, तिन हरि-जस गायौ ।
पुनि अंगद कौं बोलि ढिग, या बिधि समुझायौ ।

---

* (ना) नट । (१) कौनै ते (के) तात—१, १६ । तुम कौने नात—६, ८ । (२) अति ही—६, ८ । (ना) गौरी । × (ना) विभास । (का, ना) बिलावल । (कां) मारू ।

होनहार सो होत है, नहिँ जात मिटायौ।
चतुरमास सूरज प्रभू, तिहिँ ठौर बितायौ ॥७१॥

॥५१५॥

सीता-शोध * राग सारंग

† श्री रघुपति सुग्रीव कौं, निज निकट बुलायौ।
लीजै सुधि अब सीय की, यह कहि समुझायौ।
जामवंत-अंगद-हनू, उठि माथौ नायौ।
हाथ मुद्रिका प्रभु दई, संदेस सुनायौ।
आए तीर समुद्र के, कछु सोध न पायौ।
सूर सँपाती तहँ मिल्यौ, यह बचन सुनायौ ॥७२॥

॥५१६॥

संपाती-वानर-सवाद * राग सारंग

बिछुरो मनौ संग तैं हिरनी।
चितवत रहत चकित चारौं दिसि, उपजी बिरह तन जरनी।
तरुवर-मूल अकेली ठाढी, दुखित राम की घरनी।
बसन कुचोल, चिहुर लपिटाने, बिपति[1] जाति नहिँ बरनी।
लेति उसास नयन जल भरि-भरि, धुकि सो परै धरि धरनी।
सूर सोच जिय पोच निसाचर, राम नाम की सरनी ॥७३॥

॥५१७॥

---

* (ना) बिभास। (का, ना) बिलावल। (कां) मारू।
† यह पद (रा) में नही है।
. (ना) रामकली। (का, ना) बिलावल।
(१) देह पीतांबर—१, १६।

देखत पीर न—२।

सुंदरकांड

* राग केदारौ

† तब अंगद यह बचन कह्यौ ।

को तरि सिंधु सिया-सुधि ल्यावै, किहिँ बल इतौ लह्यौ ?
इतनौ बचन स्रवन सुनि हरष्यौ, हँसि बोल्यौ जमुवंत ।
या दल मध्य प्रगट केसरि-सुत, जाहि नाम हनुमंत ।
वहै ल्याइहै सिय-सुधि छिन में, अरु आइहै तुरंत ।
उन प्रताप त्रिभुवन कौ पायौ, वाके बलहिँ न अंत ।
जौ मन करै एक बासर मैं, छिन आवै छिन जाइ ।
स्वर्ग-पताल माहिँ गम ताकौ, कहियै कहा बनाइ !
केतिक लंक, उपारि बाम कर, लै आवै उचकाइ ।
पवन-पुत्र बलवंत बज्र-तनु, कापैं[1] हटक्यौ जाइ ।
लियौ बुलाइ मुदित चित ह्वैकै, कह्यौ, तँबोलहिँ लेहु ।
ल्यावहु जाइ जनक-तनया-सुधि, रघुपति कौं सुख देहु ।
पैरि-पैरि प्रति फिरौ विलोकत, गिरि कंदर-बन-गेहु ।
समय बिचारि मुद्रिका दीजौ, सुनौ मंत्र सुत एहु ।
लियौ तँबोल माथ धरि हनुमत, कियौ चतुरगुन[2] गात ।
चढि गिरि-सिखर सब्द इक उचर्‌यौ, गगन उठ्यौ आघात ।
कंपत कमठ-सेष-बसुधा-नभ, रबि-रथ भयौ उतपात ।
मानौ पच्छ सुमेरहिँ लागे, उड़्यौ अकासहिँ जात ।
चक्रित सकल परस्पर बानर बीच परी किलकार ।
तहँ इक अदभुत देखि निसिचरी, सुरसा-मुख-बिस्तार ।

---

* (ना) सारग । (का, ना) धनाश्री ।

† (का) में इस पद के कुछ चरण कम हैं ।

① काके हिये समाय—२,३, ११ । ② बज्र को गात—६,८ ।

पवन-पुत्र मुख पैठि पधारे[1], तहाँ लगी कछु बार।
सूरदास स्वामी-प्रताप-बल, उतरचौ जलनिधि पार ॥७४॥
॥५१८॥

* राग धनाश्री

† लखि[2] लोचन, सोचै हनुमान।
चहुँ दिसि लंक-दुर्ग दानवदल, कैसैं पाऊँ जान।
सौ जोजन बिस्तार कनकपुरि, चकरी[3] जोजन बीस।
मनौ बिस्वकर्मा कर अपुनैं, रचि राखी गिरि-सीस।
गरजत रहत मत्त गज चहुँदिसि, छत्र-धुजा चहुँ दीस।
भरमित भयौ देखि मारुत-सुत, दियौ महाबल ईस!
उड़ि हनुमंत गयौ आकासहिं, पहुँच्यौ नगर मँझारि।
बन-उपबन, गम-अगम-अगोचर-मंदिर, फिरचौ निहारि।
भई पैज अब हीन हमारी, जिय मैं कहै बिचारि।
पटकि पूँछ, माथौ धुनि लोटै, लखी न राघव-नारि।
नाना रूप निसाचर अद्भुत, सदा करत मद-पान।
ठौर ठौर अभ्यास[4] महाबल करत कुंत-असि-बान।
जिय सिय-सोच करत मारुत-सुत, जियति न मेरैं जान।
कै वह भाजि सिंधु मैं डूबी, कै उहिं तज्यौ परान।
कैसैं नाथहिं मुख दिखराऊँ, जौ बिनु देखे जाउँ।

---

① बिदार्रा—२, ३, ६, ८।
* (ना) नट। (ना/३) केदारा।
† यह पद (कौं) में नहीं है।

② निरखि—२, ३, ६, ८, १८, १६। ③ ऊचौ जोजन तीस—६, ८। ④ अभ्यास महा मल्ल नट पेपने पुरान—१, १६। उपहास महाबल सूत जु लिखे पुरान—३।

बानर बीर हँसैंगे मोकौं, तैं बोरयौ पितु-नाउँ।
रिच्छप[1] तर्क बोलिहै मोसौं, ताकौं बहुत डराउँ।
भलैं राम कौं सीय मिलाई, जीति कनकपुर गाउँ!
जब मोहिं अंगद कुसल पूछिहै, कहा कहौंगो वाहि।
या जीवन तैं मरन भलौ है, मैं देख्यौ अवगाहि।
मारौं आजु लंक लंकापति, लै दिखराऊँ ताहि।
चौदह सहस जुवति अंतःपुर, लैहैं राघव चाहि।
॥ मंदिर की परछाया बैठ्यौ, कर मीजै पछिताइ।
॥ पहिलैं हूँ न लखी मैं सीता, क्यौं पहिचानी आइ।
॥ दुर्बल दीन-छीन चिंतित अति जपत नाइ रघुराइ।
॥ ऐसी बिधि देखिहौं जानकी, रहिहौं सीस नवाइ।
बहुरि बीर जब गयौ अवासहिं, जहाँ बसै दसकंध।
नगनि जटित मनि-खंभ बनाए, पूरन बात-सुगंध।
स्वेत छत्र फहरात सीस पर, मनौ लच्छि कौ बंध।
चौदह सहस नाग-कन्या-रति, परयौ सो रत मतिअंध।
बीना-झाँझ-पखाउज-आउज, और राजसी भोग।
पुहुप-प्रजंक परी नवजोबनि, सुख-परिमल-संजोग।
¶ जिय[2] जिय गढ़ै, करै बिस्वासहिं, जानै लंका लोग।
¶ इहिं सुख-हेत[3] हरी है सीता, राघव बिपति-बियोग!

---

① ते सब—१, १६। इच्छा—३। लछमन जबै—८।
॥ ये चार चरण केवल (का, ना) में हैं।
¶ ये दो चरण (ना, स) में नहीं हैं।
② जय जय कहौं करै सिव ऐसी [illegible] लंका जोग (लोग)—६, ८। ③ सेज परी—१, २, ३, १६। सेज हरी—६, ८।

पुनि आयौ सीता जहँ बैठी, बन असोक के माहिँ ।
चारौं ओर निसिचरी घेरे, नर जिहिँ देखि डराहिँ ।
॥ बैठ्यौ जाइ एक तरुबर पर, जाकी सीतल छाहिँ ।
॥ बहु निसाचरी मध्य जानकी, मलिन बसन तन माहिँ ।
बारंबार बिसूरि सूर दुख, जपत नाम रघुनाहु ।
ऐसी भाँति जानकी देखी, चंद गह्यौ ज्यौं राहु ॥ ७५ ॥
॥ ५१६ ॥

राग मारू

गयौ कूदि हनुमंत जब सिंधु-पारा ।
सेष के सीस लागे कमठ पीठि सौं, धँसे गिरिबर सबै तासु भारा ।
लंक गढ माहिँ आकास मारग गयौ, चहूँ दिसि बज्र लागे किवारा ।
पौरि सब देखि सो असोक बन मैं गयौ, निरखि सीता छप्यौ बृच्छ-डारा ।
सोच लाग्यौ करन, यहै धौं जानकी, कै कोऊ और, मोहिँ नहिँ चिन्हारा ।
सूर आकासबानी भई तबै तहँ, यहै[1] बैदेहि है, करु जुहारा ॥ ७६ ॥
॥ ५२० ॥

निशिचरी-वचन, जानकी-प्रति

* राग मारू

† समुझि अब निरखि जानकी मोहिँ ।
बड़ौ[2] भाग गुनि, अगम दसानन, सिव बर दीनौ तोहिँ ।

॥ ये दो चरण (ना, स) में नहीं हैं ।
(१) है यहै है यहै—१, ११ । यही है जानकी—२ ।
* (ना) नट ।
† यह पद (कां) में नहीं है ।
(२) बड़े भाग अब अगम दिसा तैं—२, ३, ६, ८ ।

केतिक राम कृपन, ताकी पितु-मातु घटाई कानि ।
तेरौ पिता जो जनक जानकी, कीरति कहौं बखानि ।
बिधि संजोग टरत नहिँ टारैँ, बन दुख देख्यौ आनि ।
अब रावन घर बिलसि सहज[1] सुख, कह्यौ हमारौ मानि ।
इतनौ बचन सुनत सिर धुनिकै, बोली सिया रिसाइ ।
अहो ढोठ, मति[2] मुग्ध निसिचरी, बैठी सनमुख आइ ।
तब रावन कौ बदन देखिहौं, दससिर-स्रोनित न्हाइ ।
कै तन देउँ मध्य पावक के, कै बिलसैँ रघुराइ ।
जौ पै पतिब्रता ब्रत तेरैँ, जीवति बिछुरी काइ ?
तब किन मुई, कहौ तुम मोसौं भुजा गही जब राइ ?
अब झूठौ अभिमान करति हौ, झुकति जो उनकैँ नाउँ ।
सुखही रहसि मिलौ रावन कौं, अपनैँ सहज सुभाउ ।
जौ तू रामहिं दोष लगावै, करौं प्रान[3] कौ घात ।
तुमरे[4] कुल कौं बेर न लागै, होत भस्म संघात ।
उनकैँ क्रोध जरै लंकापति, तेरैँ हृदय समाइ ।
तौ पै सूर पतिब्रत साँचौ, जौ देखौं रघुराइ ॥७७॥

॥५२१॥

निशिचरी-रावण-संवाद * राग धनाश्री

† सुनौ किन कनकपुरी के राइ ।
हौं बुधि-बल-छल करि पचि हारी, लख्यौ न सीस उचाइ ।

---

① सेज—२, ३ । ② जड़ मूल—२, ३, १८ । ③ निछावर प्रान—६ । ④ मेरी निसा सखी है मानौ कब देखौं परभात—२, ३, १८ । उनके क्रोध घने घर जैहैं तू अपने जिय जान—६, ८ ।

* (ना) केदारा । (का, ज्ञा) मारू ।

† यह पद (कां) में नहीं है ।

डोलै गगन सहित सुरपति अरु पुहुमि पलटि जग परई[1]।
नसै धर्म मन बचन काय करि, सिंधु[2] अचंभौ करई।
अचला चलै, चलत पुनि थाकै, चिरंजीवि सो मरई।
श्री रघुनाथ-प्रताप पतिब्रत, सीता-सत नहिँ टरई।
ऐसी तिया हरत क्यौं आई, ताकौ यह सतिभाउ।
मन-बच-कर्म और नहिँ दूजौ, बिन रघुनंदन राउ।
उनकैँ क्रोध भस्म ह्वै जैहौ, करौ न सीता चाउ।
तब तुम काकी सरन उबरिहौ, सो बलि मोहिँ बताउ?
"जौ सीता सत तैँ बिचलै तौ श्रीपति काहि सँभारै?
'मोसे मुग्ध महापापी कौँ कौन क्रोध करि तारै[3]?
'ये जननी, वै प्रभु[4] रघुनंदन, हौँ सेवक प्रतिहार।
'सीता-राम सूर संगम बिनु कौन उतारै पार?" ॥ ७८ ॥

॥५२२॥

रावण-बचन, सीता-प्रति * राग मारू

जनकसुता, तू समुझि चित्त मैँ, हरषि मोहिँ तन हेरि।
चौदह सहस किन्नरी जेती, सब दासी हैँ तेरी।
कहै तौ जनक गेह दै पठवौँ, अरध लंक कौ राज।
तोहिँ देखि चतुरानन मोहै, तू सुंदरि-सिरताज।
छाँड़ि राम तपसी के मोहैँ, उठि आभूषन साजु।
चौदह सहस तिया मैँ तोकौँ, पटा बँधाऊँ आजु।
कठिन बचन सुनि स्रवन जानकी, सकी न बचन[5] सँभारि।

---

① जाइ—१, १६। टरई १६। ③ मारै—२, ३। ④ पितु—६, ८। * (ना) केदारो।
१। ② शंभु अचंभु कराइ—१, ⑤ नैकु—३।

तृन-अंतर दै दृष्टि तरौंधी, दियौ नयन जल ढारि।
पापी, जाउ जीभ गरि तेरी, अजुगुत बात बिचारी।
सिंह कौ भच्छ स्रृगाल न पावै, हौं समरथ की नारी।
॥ चौदह सहस सेन खरदूषन, हती राम इक बान।
॥ लछिमन-राम-धनुष-सन्मुख परि, काके रहिहैं प्रान?
मेरौ हरन मरन है तेरौ, स्यौं कुटुंब-संतान।
जरिहै लंक कनकपुर[1] तेरौ, उदवत रघुकुल-भान।
॥ तोकौं[2] अबध कहत सब कोऊ, तातैं सहियत बात।
॥ बिना प्रयास मारिहौं तोकौं, आजु रैनि कै प्रात।
यह राकस की जाति हमारी, मोह न उपजै गात।
परतिय रमैं, धर्म कहा जानैं, डोलत मानुष खात।
॥ मन मैं डरी, कानि जिनि तोरै, मोहिं अबला जिय जानि।
॥ नख-सिख-बसन पँभारि, सकुच तनु, कुच-कपोल गहि पानि।
रे दसकंध, अंधमति, तेरी आयु तुलानो आनि।
सूर राम की करत अवज्ञा, डारैं सब भुज भानि ॥ ७६ ॥

॥५२३॥

त्रिजटा-सीता-संवाद * राग मारू

त्रिजटी सीता पै चलि आई।
मन मैं सोच न करि तू माता, यह कहि कै समुझाई।

॥ ये चरण (ना, स) में नहीं हैं।
① पत्र पुरइनि ज्यौं—६,८।
② तेरी अवधि—१, १६।
* (ना) विहागरो। (कां) सारंग।

नलकूबर कौ साप रावनहिँ, तो पर बल न बसाई।
सूरदास मनु जरी सजीवनि श्री रघुनाथ पठाई ॥ ८० ॥

॥ ५२४ ॥

* राग कान्हरौ

सो दिन त्रिजटी, कहु कब ऐहै ?

जा दिन चरनकमल रघुपति के हरषि जानकी हृदय लगैहै।
कबहुँक लछिमन पाइ सुमित्रा, माइ-माइ कहि मोहिँ सुनैहै।
कबहुँक कृपावंत कौसिल्या, बधू-बधू कहि मोहिँ बुलैहै।
जा दिन कंचनपुर प्रभु ऐहैँ बिमल ध्वजा रथ पर फहरैहै।
ता दिन जनम सफल करि मानौँ, मेरी हृदय-कालिमा जैहै।
जा दिन राम रावनहिँ मारैँ, ईसहिँ लै दससीस चढैहैँ।
ता दिन सूर राम पै सीता सरबस वारि बधाई दैहै ॥ ८१ ॥

॥ ५२५ ॥

* राग सारंग

मैँ तौ राम-चरन चित दीन्हौँ।

मनसा, बाचा और कर्मना, बहुरि मिलन कौँ आगम कीन्हौँ।
डुलै सुमेरु, सेष-सिर कंपै, पच्छिम उदै करै बासर-पति।
सुनि त्रिजटी, तौहूँ नहिँ छाड़ौँ मधुर मूर्त्ति रघुनाथ-गात-रति।
सीता करति बिचार मनहिँ मन, आजु-काल्हि कोसलपति आवैँ।
सूरदास स्वामी करुनामय, सो कृपालु मोहिँ क्यौँ बिसरावैँ ! ॥ ८२ ॥

॥ ५२६ ॥

---

* (ना) बिहागरौ। (का, ना, कौं) मारू।

५ (ना) कान्हरा। (का, ना, कौं, श्या) मारू।

त्रिजटा-स्वप्न; हनुमान-सीता-मिलन * राग धनाश्री

† सुनि सीता, सपने की बात ।
रामचंद्र-लछिमन मैं देखे, ऐसी बिधि परभात ।
कुसुम-बिमान बैठी बैदेही, देखी राघव पास ।
स्वेत छत्र रघुनाथ-सीस पर, दिनकर-किरन-प्रकास ।
भयौ पलायमान दानवकुल, ब्याकुल सायक-त्रास ।
पजरत धुजा, पताक, छत्र, रथ, मनिमय कनक-अवास ।
रावन-सीस पुहुमि पर लोटत, मंदोदरि बिलखाइ ।
कुंभकरन-तन पंक लगाई, लंक[1] बिभीषन पाइ ।
प्रगट्यौ आइ लंक दल कपि कौ, फिरी रघुबीर दुहाइ ।
या सपने कौ भाव सिया सुनि, कबहुँ बिफल नहिँ जाइ ।
त्रिजटी बचन सुनत बैदेही अति दुख लेति उसास ।
॥ हा हा रामचद्र, हा लछिमन, हा कौसिल्या सास !
॥ त्रिभुवननाथ नाह जो पावै, सहै सो क्यौं बनबास ?
हा कैकई[2], सुमित्रा जननी, कठिन निसाचर-त्रास !
कौन पाप मैं पापिनि कीन्हौ, प्रगट्यौ जो इहिँ बार ।
धिक धिक जीवन है अब यह तन, क्यौं न होइ जरि छार ।

---

* (ना) केदारौ । (का ना) मारू ।

† यह पद (कां) में नहीं है । (ना, स, का, ना) में यह दो पदों में विभक्त किया गया है । परंतु (वे, रा, श्या) में वे दोनों पद एकही में मिला दिए गए हैं, जो उपयुक्त प्रतीत होता है । वही क्रम इस संस्करण में भी ग्रहण किया गया है । भिन्न भिन्न प्रतियों में इसके चरणों की संख्या भी समान नहीं है तथा पाठों में भी भेद है । इस संस्करण में विशेषत (वे, श्या) का अनुसरण किया गया ।

① विभिखन दई बड़ाई—२, ३ । ② कौसिला—२, ३ ।

द्वै अपराध मोहिँ ये लागे, मृग-हित दियौ हथियार।
जान्यौ नहीँ निसाचर को छल, नाघ्यौ धनुष-प्रकार।
पंछी एक सुहृद जानत हौँ, करचौ निसाचर भंग।
तातैँ बिरमि रहे रघुनंदन, करि मनसा-गति पंग।
इतनौ कहत नैन उर फरके, सगुन जनायौ अंग।
आजु लहौँ रघुनाथ सँदेसौ, मिटै बिरह दुख संग।
तिहिँ छिन पवन-पूत तहँ प्रगट्यौ, सिया अकेली जानि।
"श्री दसरथकुमार दोउ बंधू, धरे धनुष-सर पानि।
'प्रिया-बियोग फिरत मारे मन, परे सिंधु-तट आनि।
'ता सुंदरि-हित मोहिँ पठायौ, सकौँ न हौँ पहिचानि।"
बारंबार निरखि तरुबर तन, कर मीड़ति पछिताइ।
दनुज, देव, पसु, पच्छी, को तू, नाम लेत रघुराइ?
बोल्यो नहीँ, रह्यो दुरि बानर, द्रुम मैँ देहि छपाइ।
कै अपराध ओड़ि तू मेरौ, कै तू देहि दिखाइ।
तरुवर त्यागि चपल साखामृग, सन्मुख बैठ्यौ आइ।
माता, पुत्र जानि दै उत्तर, कहु किहिँ बिधि बिलखाइ?
किन्नर-नाग देवि सुर-कन्या, कासौँ[1] हुति उपजाइ?
कै तू जनक-कुमारि जानकी, राम-बियोगिनि आइ?
राम नाम सुनि उत्तर दीन्हौ, पिता बंधु मम होहि।
मैँ सीता, रावन हरि ल्यायौ, त्रास दिखावत मोहिँ।

---

(१) काके डरनि डराइ—६, ८।

अब मैं मरौं, सिंधु मैं बूड़ौं, चित मैं आवै कोइ ।
सुनौ बच्छ, धिक जीवन मेरौ, लछिमन-राम-बिछोइ ।
कुसल जानकी, श्रीरघुनंदन, कुसल लच्छिमन भाइ ।
तुम-हित नाथ कठिन ब्रत कीन्हौ, नहिं जल-भोजन खाइ ।
मुरै न अंग कोउ जो काटै, निसि-बासर सम जाइ ।
तुम घट प्रान देखियत सीता, बिना प्रान रघुराइ ।
बानर बीर चहूँ दिसि धाए, ढूँढैं गिरि-बन-झार[1] ।
सुभट अनेक सबल दल साजे, परे सिंधु के पार ।
उद्यम मेरौ सफल भयौ अब, तुम[2] देख्यौ जो निहारि ।
अब रघुनाथ मिलाऊँ तुमकौं, सुंदरि सोक निवारि[3] ।
यह सुनि सिय मन संका उपजी, रावन-दूत बिचारि ।
छल करि आयौ निसिचर कोऊ, बानर रूपहिं धारि ।
स्रवन मूँदि, मुख आँचर ढाँप्यौ, अरे निसाचर, चोर !
काहे कौं छल करि-करि आवत, धर्म बिनासन मोर ?
पावक परौं, सिंधु महँ बूड़ौं, नहिं मुख देखौं तोर ।
पापी क्यौं न पीठि दै मोकौं, पाहन सरिस कठोर ।
जिय अति डरचौ, मोहिं मति सापै, ब्याकुल बचन कहंत ।
मोहिं बर दियौ सकल देवनि मिलि, नाम धरचौ हनुमंत ।
अंजनि-कुँवर राम कौ पायक, ताकैं बल गर्जत ।
जिहिं अंगद-सुग्रीव उबारे, बध्यौ बालि बलवंत ।

---

① बारि—६, ८, १६ । ② मैं देख्यौ तुम आइ—१, ६, ८, १६ । ③ सिराइ—१, ६, ८, १६ ।

लेहु मातु, सहिदानि मुद्रिका, दई प्रीति करि नाथ ।
सावधान ह्वै सोक निवारहु, ओड़हु दच्छिन हाथ ।
॥ खिन मुँदरी, खिनहीं हनुमत सौं, कहति बिसूरि-बिसूरि ।
॥ कहि मुद्रिके, कहाँ तैं छाँड़े मेरे जीवन-मूरि ?
॥ कहियौ बच्छ, सँदेसौ इतनौ जब हम वै इक थान ।
॥ सोवत काग छुयौ तन मेरौ, बरहहिँ कीनौ बान ।
॥ फोरचौ नयन, काग नहिँ छाँड़चौ सुरपति के बिदमान !
॥ अब वह कोप कहाँ रघुनंदन, दससिर-बेर बिलान ?
निकट बुलाइ बिठाइ निरखि मुख, अंचर लेत बलाइ ।
चिरजीवौ सुकुमार पवन-सुत, गहति दीन ह्वै पाइ ।
बहुत भुजनि बल होइ तुम्हारैं, ये अमृत फल खाहु ।
अब की बेर सूर प्रभु मिलवहु, बहुरि प्रान किन जाहु ॥ ८३ ॥

॥ ५२७ ॥

हनुमान-कृत सीता-समाधान * राग मारू

जननी, हौं अनुचर रघुपति कौ ।
मति माता करि कोप सरापै, नहिँ दानव ठग मति[1] कौ ।
आज्ञा होइ, देउँ कर-मुँदरी, कहौं सँदेसौ पति[2] कौ ।
मति हिय बिलख करौ सिय, रघुबर हतिहैँ कुल दैयत कौ ।
कहौ तौ लंक उखारि डारि देउँ, जहाँ पिता संपति कौ ।
कहौ तौ मारि-सँहारि निसाचर, रावन करौं अगति कौ ।

॥ ये चरण (ना स) में नहीं हैं ।
* (ना) ललित ।
① धृगमति—१, २, ८, १६, १६ । ② उत—२, ६, ८ । रति—१६, १६ ।

सागर-तीर भीर बनचर की, देखि कटक रघुपति कौ।
अबै[1] मिलाऊँ तुम्हैं सूर प्रभु, राम-रोष डर अति कौ ॥८४॥

॥ ५२८ ॥

* राग मारू

अनुचर रघुनाथ कौ[2] तव दरस-काज आयौ।
पवन-पूत कपि-स्वरूप, भक्तनि मैं गायौ।
॥ आयसु जौ होइ जननि, सकल असुर मारौं।
॥ लंकेस्वर बाँधि राम-चरननि तर डारौं।
तपसी तप करैं जहाँ, सोई बन-झाँखौ।
जाकी तुम बैठी छाहँ, सोई द्रुम राखौं।
चढ़ि चलौ जौ पीठि मेरी, अबहिं लै मिलाऊँ।
सूर श्री रघुनाथ जू की, लीला नित[3] गाऊँ ॥८५॥

॥ ५२९ ॥

* राग मारू

तुम्हैं पहिचानति नाहीं बीर।
इन नैननि कबहूँ नहिं देख्यौ, रामचंद्र[4] कैं तीर।
लंका बसत दैत्य अरु दानव, उनके अगम सरीर।
तोहिं देखि मेरौ जिय डरपत, नैननि आवत नीर।

---

① लै मिलऊँ (मिलाउँ) हौं अबहिं—३, ६, ८, १६, १९। * (ना) रामकली।
② तेरे—१, ६, ८, १९। ॥ ये दो चरण (ना स, का, ई, रा) में नहीं हैं।
③ गुन—१, २, ३। * (ना) मलार।
④ रामलषन—६, ८।

तब कर काढि अँगूठी दीन्हीं, जिहिँ[1] जिय उपज्यौ धीर।
सूरदास प्रभु लंका-कारन, आए सागर-तीर॥ ८६॥

॥ ५३० ॥

* राग सारंग

जननी, हौं रघुनाथ पठायौ।
रामचंद्र आए की तुमकौं देन बधाई आयौ।
हौं हनुमंत, कपट जिनि समझौ, बात कहत सतभाई।
मुँदरी दूत धरी लै आगैं, तब प्रतीति जिय आई।
अति सुख पाइ उठाइ लई तब, बार-बार उर भेंटै।
ज्यौं मलयागिरि पाइ आपनो जरनि हृदै की मेटै।
लछिमन पालागन कहि पठयौ, हेत बहुत करि माता!
दई असीस तरनि-सन्मुख ह्वै, चिरजीवौ दोउ भ्राता।
बिछुरन कौ संताप हमारौ, तुम दरसन दै काट्यौ।
ज्यौं रबि-तेज पाइ दसहूँ दिसि, दोष कुहर कौ फाट्यौ।
ठाढौ बिनती करत पवन-सुत, अब जो आज्ञा पाऊँ।
अपनैं देखि चले कौ यह सुख, उनहूँ जाइ सुनाऊँ।
कल्प-समान एक छिन राघव, क्रम-क्रम करि हैं बितवत।
तातैं हौं अकुलात, कृपानिधि ह्वैहैं पैंड़ो चितवत।
॥ रावन हति, लै चलौं साथही, लंका धरौं अपूठी।
॥ यातैं जिय सकुचात, नाथ[2] की होइ प्रतिज्ञा झूठी।

---

① तौ—१,३,६, ८, १६।
॥ ये दो चरण (ना, स, रा) ६, ८, १६, १६। में नहीं हैं।
* (ना) सोरठि। (का, ना) कान्हरा।
② कृपानिधि करौं —१,

अब ह्याँ की सब दसा हमारी, सूर सो कहियो जाइ ।
बिनती बहुत कहा कहौं, जिहिँ बिधि देखौं रघुपति-पाइ ॥ ८७ ॥

॥ ५३१ ॥

* राग मलार

बनचर, कौन देस तैं आयो ?
कहाँ वै राम, कहाँ वै लछिमन, क्यौं करि मुद्रा पायो ?
हौं हनुमंत, राम कौ सेवक, तुम सुधि लैन पठायो ।
रावन मारि, तुम्हैं लै जातौ, रामाज्ञा नहिँ पायो ।
तुम जनि डरपौ मेरी माता, राम जोरि दल ल्यायो ।
सूरदास रावन कुल-खोवन, सोवत सिंह जगायो ॥ ८८ ॥

॥ ५३२ ॥

* राग सारंग

कहौ कपि, कैसैं उतरे पार ?
दुस्तर अति गंभीर बारि-निधि, सत जोजन बिस्तार ।
इत उत दैत्य क्रुद्ध मारन कौं, आयुध धरे अपार ।
हाटकपुरी कठिन पथ, बानर, आए कौन अधार ?
राम-प्रताप, सत्य सीता कौ, यहै नाव[1]-कनधार ।
तिहिँ अधार छिन मैं अवलंघ्यौ, आवत भई न बार ।
पृष्ठभाग चढि जनक-नंदिनी, पौरुष देखि हमार ।
सूरदास लै जाउँ तहाँ, जहँ रघुपति कंत तुम्हार ॥ ८९ ॥

॥ ५३३ ॥

---

* (ना) रामकली । मारू ।
* (ना) अहीरी । (का, ३) (१) नाव गुन धार—६, ८ ।

* राग मारू

हनुमत, भली करी तुम आए ।
बारंबार कहति बैदेही, दुख-संताप मिटाए ।
श्री रघुनाथ और लछिमन के समाचार सब पाए ।
अब परतीति भई मन मेरैं, संग मुद्रिका लाए ।
क्यौं करि सिधु-पार तुम उतरे, क्यौं करि लंका आए ।
सूरदास रघुनाथ जानि जिय, तव बल इहाँ पठाए ॥ ९० ॥
॥ ५३४ ॥

* राग कान्हरौ

†सुनु कपि, वै रघुनाथ नहीं ?
जिन रघुनाथ पिनाक पिता-गृह तोरचौ निमिष महीं ।
जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति-गति डारी काटि तहीं ।
जिन रघुनाथ-हाथ खर-दूषन-प्रान हरे सरहीं ।
कै रघुनाथ तज्यौ प्रन अपनौ, जोगिनि दसा गही ?
कै रघुनाथ दुखित कानन, कै नृप भए रघुकुलहीं ।
कै रघुनाथ अतुल बल राच्छस दसकंधर डरहीं ?
छाँड़ी नारि बिचारि पवन-सुत, लंक बाग बसहीं ।
कै हौं कुटिल, कुचील, कुलच्छनि, तजी कंत तबहीं !
सूरदास स्वामी सौं कहियौ, अब बिरमाहि नहीं ॥ ९१ ॥
॥ ५३५ ॥

---

* (ना) अहीरी ।
: (ना) धनाश्री ।
† यह पद (कां) में नहीं है ।

सीता-संदेश, श्रीराम-प्रति राग कान्हरौ

यह गति देखे जात, सँदेसौ कैसैं कै जु कहौं ?
सुनु कपि, अपने प्रान कौ पहरौ, कब लगि देति रहौं ?
ये अति चपल, चल्यौ चाहत हैं, करत न कछू बिचार ।
कहि धौं प्रान कहाँ लौं राखौं, रोकि देह मुख द्वार ?
इतनी[1] बात जनावति तुमसौं, सकुचति हौं हनुमंत ।
नाहीं सूर सुन्यौ दुख कबहूँ, प्रभु करुनामय कंत ! ॥ ९२ ॥
॥ ५३६ ॥

* राग मारू

†कहियौ कपि, रघुनाथ राज सौं सादर यह इक बिनती मेरी ।
नाहीं सही परति मोपै अब, दारुन त्रास निसाचर केरी ।
यह तौ[2] अंध बोसहूँ लोचन, छल-बल करत आनि मुख हेरो[3] ।
आइ सृगाल सिंह बलि[4] चाहत, यह मरजाद जाति प्रभु तेरो ।
जिहिं भुज परसुराम बल करष्यौ, ते भुज क्यौं न सँभारत फेरी ?
सूर सनेह जानि करुनामय, लेहु छुड़ाइ जानकी चेरो ॥ ९३ ॥
॥५३७॥

* राग मारू

मैं परदेसिनि नारि अकेली ।
बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, मातु-पिता न सहेली ।

---

① अपनी—१, १३ । है । ६, ८, १३ ।
* (ना) काफी । ② जो—१, २, ६, ८, १३ । * (ना) कल्यान ।
† यह पद (कौं) में नहीं ③ नेरी—२, ३ । ④ भष—

रावन भेष धरचौ तपसी कौ, कत मैं भिच्छा मेली ।
अति अज्ञान मूढ़-मति मेरी, राम-रेख पग पेली ।
बिरह-ताप तन अधिक जरावत, जैसैं दव द्रुम बेली ।
सूरदास प्रभु बेगि मिलावौ, प्रान जात[1] हैं[2] खेली ॥ ६४ ॥

॥ ५३८ ॥

सीता परितोष — राग मारू

† तू जननी अब दुख जनि मानहि ।
रामचंद्र नहिँ दूरि कहूँ, पुनि भूलिहु चित चिंता नहिँ आनहि ।
अबहिँ लिवाइ जाउँ सब रिपु हति, डरपत हौं आज्ञा-अपमानहिँ ।
॥ राख्यौ सुफल सँवारि, सान दै, कैसैं निफल करौं वा बानहिँ ?
॥ हैं केतिक ये तिमिर-निसाचर, उदित एक रघुकुल के भानहिँ ।
॥ काटन दै दस सीस बीस भुज, अपनौ कृत येऊ जो जानहिँ ।
॥ देहिँ दरस सुभ नैननि कहँ प्रभु, रिपु कौं नासि सहित संतानहिँ ।
सूर सपथ मोहिँ, इनहिँ दिननि मैं, लै जु आइहौं कृपानिधानहिँ ॥६५॥

॥ ५३९ ॥

अशोक-वन भग — * राग मारू

हनुमत बल प्रगट भयौ, आज्ञा[3] जब पाई ।
जनक-सुता-चरन बंदि, फूल्यौ न समाई ।
अगनित तरु-फलसुगंध-मृदुल-मिष्ट-खाटे ।
मनसा करि प्रभुहिँ अर्पि, भोजन करि डाटे ।

---

① जायँगे—१६, १६ । ② अब—३ । पुनि—६, ८ ।
† यह पद (का) में नहीं है ।
॥ ये चरण (रा) में नहीं हैं ।
* (ना) धनाश्री ।
③ सीता—१,२,३,६,८,१८, १६ ।

द्रुम गहि उतपाटि लिए, दै-दै किलकारी।
दानव बिन प्रान भए, देखि चरित भारी।
बिह्वल-मति कहन[1] गए, जोरे सब हाथा।
बानर बन बिघन कियौ, निसिचर[2]-कुल-नाथा!
॥वह निसंक, अतिहिँ ढीठ, बिडरै नहिँ भाजै।
॥ मानौ बन-कदलि-मध्य उनमत गज गाजै।
॥ भानै मठ, कूप, बाइ, सरवर कौ पानी।
॥ गौरि-कंत पूजत[3] जहँ नूतन जल आनी।
पहुँची तब असुर-सैन साखामृग जान्यौ।
मानौ जल-जीव सिमिटि जाल मैं समान्यौ।
तरुवर तब इक उपाटि हनुमत कर लीन्यौ।
किकर[4] कर पकरि बान तीनि खंड कीन्यौ।
जोजन बिस्तार सिला पवन-सुत उपाटी।
किकर करि बान लच्छ अंतरिच्छ काटी।
॥ आगर इक लोह जटित, लोन्हो बरिवंड।
॥ दुहूँ करनि असुर हयौ, भयौ मांस-पिंड।
॥ दुर्धर परहस्त-संग आइ सैन भारी।
॥ पवन-पूत दानव-दल ताड़े दिसिचारी।
रोम-रोम हनूमंत लच्छ[5]-लच्छ बान।
जहाँ-तहाँ दीसत, कपि करत राम-आन।

---

① हीन—१, १६। ② त्रिभुवन के नाथा—१, २, ३, १६।

॥ ये आठ चरण (ना, स, रा) में नहीं है।

③ की दुहाइ नैं कहू न मानी—६, ८। ④ किन्नर—२, ६, ८। ⑤ बल छल कुल बान (बाना)—६, ८।

मंत्री-सुत पाँच सहित अछयकुँवर सूर ।
॥सैन सहित सबै हते झपटि कै लँगूर ।
चतुरानन-बल सँभारि मेघनाद आयौ ।
मानौ घन पावस मैं नगपति[1] है छायौ ।
देख्यौ जब, दिव्यबान[2] निसिचर[3] कर तान्यौ ।
छाँड़्यौ तब सूर हनू ब्रह्म-तेज मान्यौ ॥९६॥

॥ ५४० ॥

हनुमान-रावण-संवाद

* राग मारू

सीतापति-सेवक तोहिँ देखन कौँ आयौ ।
काकैँ बल बैर तैँ जु राम तैँ बढायौ ?
जे-जे तुव सूर सुभट, कीट सम न लेखौँ ।
तोकौँ दसकंध अंध, प्राननि बिनु देखौँ ।
नख-सिख ज्यौँ मीन-जाल, जड़्यौ अंग-अंगा ।
अजहुँ नाहिँ संक धरत, बानर मति-भंगा !
जोइ सोइ मुखहिँ कहत, मरन निज न जानै ।
जैसैँ नर सन्निपात भऐँ बुध बखानैँ ।
तब तू गयौ सून भवन, भस्म अंग पोते ।
करते बिन प्रान तोहिँ, लछिमन जौ होते ।

॥ इसके उपरांत ये दो चरण केवल (का, ना) में हैं —
चहुँ दिसि भयौ असुर सोर सीता कैँ भीरा ।
पावक भयौ पवन-पूत दानव-दल कीरा ।

① नागनि बपु—२,३ । ② दे —३ । दृष्टि—६, ८, १६ । ③ नागफांस आन्यौ—१ । निश करि जान्यौ—२, ३ ।

* (ना) भैरौ । (ना)कान्हरा

पाछे तैं हरी सिया, न मरजाद राखी।
जौ पै दसकंध बली, रेख क्यौं न नाखी ?
अजहूँ[1] सिय सौंपि नतरु बीस भुजा भानै।
रघुपति यह पैज करी, भूतल धरि पानैं[2]।
ब्रह्मबान कानि करी, बल करि नहिँ बाँध्यौ।
कैसैं परताप घटै, रघुपति आराध्यौ !
देखत कपि बाहु दंड तन प्रस्वेद छूटे।
जै-जै रघुनाथ कहत, बंधन सब टूटे।
देखत बल दूरि करयौ, मेघनाद गारौ।
आपुन भयौ सकुचि सूर बंधन तैं न्यारौ ॥६७॥

॥ ५४१ ॥

लंका-दहन

* राग मारू

मंत्रिनि नीकौ मंत्र बिचारयौ।
राजन कहौ, दूत काहू कौ, कौन नृपति है मारयौ ?
इतनी सुनत बिभीषन बोले, बंधू पाइ परौं।
यह अनरीति सुनी नहिँ स्रवननि, अब नई कहा करौ ?
हरी बिधाता बुद्धि सबनि की, अति आतुर ह्वै धाए।
सन अरु सूत, चीर - पाटंबर, लै लंगूर बँधाए।
तेल - तूल - पावक - पुट धरिकै, देखन चहैं जरौ।
कपि मन कह्यौ भली मति दीनी, रघुपति-काज करौ।

---

① आजुहिँ लै जाऊँ सिया मानै — ३, ६, १८।
बीस भुजा भानौ — ६, ८। ② * (ना) बिलावल।

बंधन तोरि, मोरि मुख असुरनि, ज्वाला प्रगट करो।
रघुपति-चरन-प्रताप सूर तब, लंका सकल जरो॥ ९८॥
॥५४२॥

* राग धनाश्री

सोचि जिय पवन-पूत पछिताइ।
अगम अपार सिंधु दुस्तर तरि, कहा कियौ मैं आइ?
सेवक कौ सेवापन एतौ, आज्ञाकारी होइ।
बिन आज्ञा मैं भवन पजारे, अपजस करिहैं लोइ।
वै रघुनाथ चतुर कहियत हैं, अंतरजामी सोइ।
या भयभीत देखि लंका मैं, सीय जरी मति होइ।
इतनो कहत गगनबानी भई, हनू सोच कत करई?
चिरंजीवि सीता तरुवर तर, अटल न कबहूँ टरई।
फिरि अवलोकि सूर सुख लीजै, पुहुमी रोम न परई।
जाकैं हिय-अंतर रघुनंदन, सो क्यौं पावक जरई॥ ९९॥
॥ ५४३ ॥

* राग मारू

लंका हनूमान सब जारी।
राम-काज सीता की सुधि लगि, अंगद-प्रीति बिचारी।
॥ जा रावन की सकति तिहूँ पुर, कोउ न आज्ञा टारी।
॥ ता रावन कैं अछत अछयसुत-सहित सैन संहारी।

---

* (ना) नट। (का, ना) मारू। (का) सारंग।
* (ना) सूही।
॥ ये दो चरण (ना, स, रा) में नहीं हैं।

पूँछ बुझाइ गए सागर-तट, जहँ सीता की बारी।
करि दंडवत प्रेम पुलकित ह्वै, कह्यौ, सुनि राघव-प्यारी।
तुम्हरेहिँ तेज-प्रताप रही बचि, तुम्हरो यहै अटारो।
सूरदास स्वामी के आगैं, जाइ कहौं सुख भारी॥ १००॥

॥५४४॥

सीता का चूड़ामणि-प्रदान * राग सारंग

मेरी कैंती[1] बिनती करनी।
पहिलैं करि प्रनाम, पाइनि परि, मनि रघुनाथ हाथ लै धरनी।
मंदाकिनि-तट फटिक-सिला पर, मुख-मुख जोरि तिलक की करनी।
कहा कहौं, कछु[2] कहत न आवै, सुमिरत प्रीति होइ उर अरनी।
तुम हनुमंत, पवित्र पवन-सुत, कहियौ जाइ जोइ मैं बरनी।
सूरदास प्रभु आनि मिलावहु, मूरति दुसह दुःख-भय-हरनी॥ १०१॥

॥ ५४५॥

हनुमान-प्रत्यागमन ❀ राग मारू

हनूमान अंगद के आगैं लंक-कथा सब भाषी।
अंगद कही, भली तुम कीनो, हम सबकी पति राखी।
हरषवंत ह्वै चले तहाँ तैं मग मैं बिलम न लाई।
पहुँचे आइ निकट रघुबर कैं, सुग्रिव आयो धाई।
सबनि प्रनाम कियौ रघुपति कौं, अंगद बचन सुनायौ।
सूरदास प्रभु-पद-प्रताप करि, हनू सीय सुधि ल्यायौ॥ १०२॥

॥ ५४६॥

---

* (ना) बिलावल। (का, ना) कान्हरा।

(१) कोतै—२, ६, ८, १६। कोटे—३। (२) कपि—१, ६, ८, १६।

❀ (ना) बिलावल।

* राग मारू

हनु, तैं सबको काज सँवार्‌यौ।
बार-बार अंगद यौं भाषै, मेरौ प्रान उबार्‌यौ।
तुरतहिं गमन कियौ सागर तैं, बीचहिं बाग उजार्‌यौ।
कीन्हौ मधुबन चौर चहूँदिसि, माली जाइ पुकार्‌यौ।
धनि हनुमत, सुग्रीव कहत हैं, रावन कौ दल मार्‌यौ।
सूर सुनत रघुनाथ भयौ सुख, काज आपनौ सार्‌यौ ॥१०३॥
॥५४७॥

हनुमान-राम-सवाद

* राग मारू

कहौ कपि, जनक-सुता-कुसलात।
आवागमन सुनावहु अपनौ, देहु हमैं सुख-गात।
सुनौ पिता, जल-अंतर ह्वै कै रोक्यौ मग इक नारि।
धर-अंबर लौं रूप निसाचरि, गरजी बदन पसारि।
तब मैं डरपि कियौ छोटौ तनु, पैठ्यौ उदर-मँझारि।
खरभर[1] परी, दियौ उन पैंड़ौ, जीती पहिली रारि।
गिरि मैनाक उदधि मैं अद्‌भुत, आगैं रोक्यौ जात।
पवन-पिता कौ मित्र न जान्यौ, धोखैं मारी लात।
तबहूँ और रह्यौ सरितापति आगैं जोजन सात।
तुव प्रताप परली दिसि पहुँच्यौं, कौन बढ़ावै बात।
लंका पौरि-पौरि मैं ढूँढी अरु बन-उपबन जाइ।
तरु[2] असोक-तर देखि जानकी, तब हौं रह्यौ लुकाइ।

---

* (ना) धनाश्री। * (ना) जयतश्री।
(१) खरहर परी देव आनदे —१, २, ३, १८, १९। (२) तरुवर तर अवलोकि—१, २, ३, १८, १९।

रावन कह्यौ सो कह्यौ न जाई, रह्यौ क्रोध अति छाइ।
तब ही अबध जानि[1] कै राख्यौ मंदोदरि समुझाइ।
पुनि हौं गयौ सुफलबारी मैं, देखी दृष्टि पसारि।
असी सहस किंकर-दल तेहि के, दौरे मोहिँ निहारि।
तुव प्रताप तिनकौं छिन भीतर जूझत लगी न बार।
उनकौं मारि तुरत मैं कोन्ही मेघनाद सौं रार।
ब्रह्म-फाँस उन लई हाथ करि, मैं चितयौ कर जोरि।
तज्यौ कोप मरजादा राखी, बँध्यौ आपही भोरि[2]।
रावन पै ले गए सकल मिलि, ज्यौं लुब्धक पसु जाल।
करुवौ बचन स्रवन सुनि मेरौ, अति रिस गही भुवाल।
आपुन[3] ही मुगदर लै धायौ, करि लोचन बिकराल।
चहुँदिसि सूर सोर करि धावैं, ज्यौं करि[4] हेरि सृगाल ॥१०४॥
॥५४८॥

* राग मारू

कैसैं पुरी जरी कपिराइ।
बड़े दैत्य कैसैं कै मारे, अंतर[5] आप बचाइ?
प्रगट कपाट बिकट[6] दीन्हे हे, बहु जोधा रखवारे।
तैं तिस कोटि देव बस कीन्हे, ते तुमसौं क्यौं हारे?

---

① जानकी—६, ८। ② मोर—१, ३, १६। बोर—२। मोरि—६, ८। ③ अपने कर मैं—३, १८। ④ केहरिहिं सियाल—१, १६। गज हतै सयाल—३।

* (ना) जैतश्री। (स्या) सारंग।

⑤ ईश्वर तुम्हैं बचाइ (सहाइ)—१, १६। अंतर तुम्हैं बचाइ—२, ३। ⑥ बडे—१, २, ३, १६।

तीनि लोक डर जाकैं काँपै, तुम[1] हनुमान न[2] पेखे ?
तुम्हरैं क्रोध, स्राप सीता कैं, दूरि[3] जरत हम देखे[4] ।
हौ जगदीस, कहा कहौं तुमसौं, तुम बल-तेज मुरारी ।
सूरजदास सुनौ सब संतौ, अबिगत की गति न्यारी ॥ १०५ ॥
॥५४६॥

(लंका कांड)

सिंधु तट-वास राग मारू

सीय-सुधि सुनत रघुबीर धाए ।
चले तब लखन, सुग्रीव, अंगद, हनू, जामवँत, नील, नल सबै आए ।
भूमि अति डगमगी, जोगिनी सुनि जगी, सहस-फन सेस कौ सीस काँप्यौ ।
कटक अगिनित जुर्‌यौ, लंक खरभर पर्‌यौ, सूर कौ तेज धर-धूरि-ढाँप्यौ ।
जलधि-तट आइ रघुराइ ठाढ़े भए, रिच्छ-कपि गरजि कै धुनि सुनायौ ।
सूर रघुराइ चितए हनूमान-दिसि, आइ तिन तुरत ही सीस नायौ ॥१०६॥
॥५५०॥

हनुमंत-वचन * राग केदारौ

राघौ जू, कितिक बात, तजि[5] चित ।
केतिक रावन-कुंभकरन-दल, सुनियै देव अनंत ।
कहौ तौ लंक लकुट ज्यौं फेरौं, फेरि कहूँ लै डारौं ।
कहौ तौ परबत चाँपि चरन तर, नीर-खार मैं गारौं ।

---

① मैं—६ ८ । ② बिबकी—२, ३, ६ । बिसेषी—८ । ③ धूरि—६, ८ । ④ देखी—२, ३, ६, ८ । ⑤ निज—२, ३, ६, ८ ।
* (ना) सारंग । (को) मारू ।

कहौ तौ असुर लँगूर लपेटौं, कहौ तौ नखनि बिदारौं।
कहौ तौ सैल उपारि पेड़ि तैं, दै सुमेरु सौं मारौं।
जेतिक सैल-सुमेरु धरनि मैं, भुज भरि आनि मिलाऊँ।
सप्त समुद्र देउँ छाती तर, एतिक देह बढाऊँ।
चली जाउ सैना सब मोपर धरौ चरन रघुबीर।
मोहिं असीस जगत-जननी की, नवत[1] न बज्र-सरीर।
जितिक बोल बोल्यौ तुम आगैं, राम, प्रताप तुम्हारैं।
सूरदास प्रभु की सौं साँचे, जन करि पैज पुकारैं॥ १०७॥
॥ ५५१॥

* राग मारू

रावन से[2] गहि कोटिक मारौं।
जो तुम आज्ञा देहु कृपानिधि, तौ यह परिहस सारौं।
कहौ तौ जननि जानकी ल्याऊँ, कहौ तौ लंक बिदारौं[3]।
कहौ तौ अबहीं पैठि सुभट हति, अनल सकल पुर जारौं।
कहौ तौ सचिव[4]-सबंधु सकल अरि, एकहिं एक पछारौं।
कहौ तौ तुव प्रताप श्री रघुबर, उदधि पखाननि तारौं[5]।
कहौ तौ दसौ सीस, बीसौ भुज, काटि छिनक[6] मैं डारौं।
कहौ तौ ताकौं तृन गहाइ कै, जीवत पाइनि पारौं।

---

① तुव तन—१, १६। तो तन—२, ३।
* (ना) नट।
② संख कोटि इक—२, ३।
③ उदारौं—१, ३, ६, ८, १६।
④ संजुग बाधि सकल उर—६, ८। ⑤ पारौ—२। ⑥ धरनि पर—३।

॥ कहौ तौ सेना चारु रचौं कपि, धरनी-ब्योम-पतारौ ।
॥ सैल-सिला-द्रुम बरषि, ब्योम चढि, सत्रु-समूह सँहारौं ।
बार-बार पद परसि कहत हौं, हौं कबहूँ नहिँ हारौं ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे बचन लगि, सिव-बचननि कौं टारौं ॥ १०८ ॥

॥ ५५२ ॥

राग मारू

† हौं प्रभु जू कौ आयसु पाऊँ ।
अबहीँ जाइ, उपारि लंक गढ, उदधि[1]-पार लै आऊँ ।
अबहीँ जंबू द्वीप इहाँ तैँ लै लंका पहुँचाऊँ ।
सोखि[2] समुद्र, उतारौं कपि-दल, छिनक बिलंब न लाऊँ ।
अब आवैँ रघुबीर जीति दल, तौ हनुमंत कहाऊँ ।
सूरदास सुभ पुरी अजोध्या, राघव सुबस[3] बसाऊँ ॥ १०९ ॥

॥ ५५३ ॥

* राग सारंग

रघुपति, बेगि जतन अब कीजै ।
बाँधै सिंधु सकल सैना मिलि, आपुन[4] आयसु दीजै ।
तब लौं तुरत एक तौ बाँधौ, द्रुम-पाखाननि छाइ ।
द्वितिय सिंधु सिय-नैन-नीर ह्वै, जब लौं मिलै न आइ ।

॥ ये दो चरण (ना, स) मेँ नहीँ हैँ ।
† यह पद (ना, स, ल, रा) मेँ नहीँ है ।
① यहै—१६ । ② सुखै— ६, ८ । ③ सुयश—१ ।
* (ना) ललित । (का, ना) धनाश्री ।
④ जो प्रभु—२ ।

यह बिनती हौं करौं कृपानिधि, बार-बार अकुलाइ।
सूरजदास अकाल प्रलय प्रभु, मेटौ दरस दिखाइ॥ ११०॥

॥ ५५४ ॥

विभीषण-रावण-संवाद * राग मारू

लंकपति कौं अनुज सीस नायौ।
परम गंभीर, रनधीर दसरथ-तनय, कोप करि सिंधु कैं तीर आयौ।
सीय कौं लै मिलौ, यह मतौ है भलौ, कृपा करि मम बचन मानि लीजै।
ईस कौ ईस, करतार संसार[1] कौ, तासु पद-कमल पर सीस दीजै।
कह्यौ लंकेस दै ठेस[2] पग की तबै, जाहि मति-मूढ़, कायर, डरानौ।
जानि असरन-सरन सूर के प्रभु कौं, तुरतहीं आइ द्वारैं तुलानौ॥ १११॥

॥५५५॥

❀ राग सारंग

आइ विभीषन सीस नवायौ।
देखत ही रघुबीर धीर, कहि[3] लंकापती, बुलायौ।
कह्यौ सो बहुरि कह्यौ नहिं रघुबर, यहै बिरद चलि आयौ।
भक्तबछल करुनामय प्रभु कौ, सूरदास जस गायौ॥ ११२॥

॥ ५५६ ॥

राम-प्रतिज्ञा × राग मारू

तब हौं नगर अजोध्या जैहौं।
एक बात सुनि निस्चय मेरी, राज्य बिभीषन दैहौं।

---

* (ना) गौड़ मलार। १, १६।
① करुनामई—१, २, १६।
② शीश (सीस) पग तासु कै—१, १६।
(ना) मालकौश। (का, ना) मारू।
③ कहि लकपती तिहिं नाम—१, २, ६, ८, १६।
× (ना) गूजरी।

कपि-दल जोरि और सब सैना, सागर सेतु बँधैहौं ।
काटि दसौ सिर, बीस भुजा, तब दसरथ-सुत जु कहैहौं ।
छिन इक माहिं लंक गढ़ तोरौं, कंचन-कोट ढहैहौं ।
सूरदास प्रभु कहत बिभीषन, रिपु हति सीता लैहौं ॥ ११३ ॥
॥ ५५७ ॥

रावण-मदादरी-संवाद * राग मारू

वै लखि आए राम रजा ।
जल कैं निकट आइ ठाढे भए, दीसति बिमल ध्वजा ।
सोवत कहा चेत रे रावन, अब क्यौं खात दगा ?
कहति मँदोदरि, सुनु पिय रावन, मेरी बात अगा ।
तृन दसननि लै मिलि दसकंधर, कंठनि मेलि पगा ।
सूरदास प्रभु रघुपति आए, दहपट होइ लँका ॥ ११४ ॥
॥ ५५८ ॥

@ राग मारू

सरन परि मन-बच-कर्म बिचारि ।
ऐसौ और कौन त्रिभुवन मैं, जो अब लेइ उबारि ?
सुनु सिव कंत, दंत तृन धरि कै, स्यौं परिवार सिधारौ ।
परम पुनीत जानकी सँग लै, कुल-कलंक किन टारौ !
ये दससीस चरन पर[1] राखौ, मेटौ सब अपराध ।
हैं प्रभु कृपा करन रघुनंदन, रिस न गहैं पल आध ।

---

* (ना) मलार । (का, ना) धनाश्री ।
(ना) सारंग । (का, ना) धनाश्री ।
① तर—१, ६, ८, १६ ।

तोरि धनुष, मुख मोरि नृपनि[1] कौ, सीय स्वयंबर कीनौ।
छिन इक मैं भृगुपति-प्रताप-बल करषि[2], हृदय धरि[3] लीनौ।
लीला करत कनक-मृग मार्‌यौ, बध्यौ बालि अभिमानी।
सोइ दसरथ-कुलचंद अमित बल, आए सारँग पानी।
जाकैं दल सुग्रीव सुमंत्री, प्रबल जूथपति भारी।
महा सुभट रनजीत पवन-सुत, निडर बज्र-बपु-धारी
करिहैं लंक पंक छिन भीतर, बज्र-सिला लै धावै।
कुल-कुटुंब-परिवार सहित तोहिं बाँधत बिलम न लावै।
अजहूँ बल जनि करि संकर कौ, मानि बचन हित मेरौ।
जाइ मिलौ कोसल-नरेस कौं भ्रात[4] बिभीषन तेरौ।
कटक सोर अति घोर दसौं दिसि, दीसति बनचर-भीर।
सूर समुझि, रघुबंस-तिलक दोउ उतरे सागर-तीर ॥११५॥

॥५५६॥

* राग मारू

काहे कौं परतिय हरि आनी ?
यह सीता जो जनक की कन्या, रमा आपु रघुनंदन-रानी।
रावन मुग्ध, करम के हीने, जनक-सुता तैं तिय करि मानी !
जिनकैं[5] क्रोध पुहुमि-नभ पलटै, सूखै सकल सिंधु कर पानी !

---

① सकनि—२, १६। ② हरषि—२, ३, ६, ८। ③ भरि—२। हरि—३, ८। ④ है न—६, ८। अनुज—१६।
* (ना) टोड़ी। (का, ई) मलार।
⑤ जाके क्रोध भूमि जल पटकै कहा कहेगो सिंधुज पानी—१, १६।

मूरख[1] सुख निद्रा नहिँ आवै, लैहैँ लंक बीस भुज भानी।
सूर न मिटै भाल की रेखा, अल्प मृत्यु तुव आइ तुलानी ॥११६॥
॥५६०॥

* राग मारू

तोहिँ कवन मति रावन आई ?
जाकी नारि सदा नवजोबन, सो क्यौँ हरै पराई !
लंक सौ कोट देखि जनि गरवहि, अरु समुद्र सी खाई।
आजु-काल्हि, दिन चारि-पाँच मेँ, लंका होति पराई।
जाकैँ हित सेना सजि आए, राम लछन दोउ भाई।
सूरदास प्रभु लंका तोरैँ, फेरैँ राम-दुहाई। ११७॥
॥ ५६१ ॥

* राग मारू

आयौ रघुनाथ बली, सीख सुनौ मेरी।
सीता लै जाइ मिलौ बात[2] रहै तेरो।
तैँ जु बुरौ कर्म कियौ, सीता हरि ल्यायौ।
घर बैठे बैर कियौ, कोपि राम आयौ।
चेतत क्यौँ नाहिँ मूढ[3], सुनि सुबात मेरो।
अजहूँ नहिँ सिंधु बँध्यौ, लंका है तेरो।
सागर कौ पाज बाँधि, पार उतरि आवैँ।
सेना कौ अंत नाहिँ, इतनौ दल ल्यावैँ।

---

① मूरख सुखहिँ नी द--१, १६। मुख सूखै निद्रा—२, ३।
* (ना) सारग।
५ (ना) चरचरी।
② पति जु—१, ६, ८, १६।
③ एक—१, २, ३, १६।

देखि तिया कैसो बल, करि तोहिँ दिखराऊँ ।
रीछ कीस[1] बस्य करौं, रामहि गहि ल्याऊँ ।
जानति हौं, बली बालि सौं न छूटि पाई ।
तुम्हैं कहा दोष दीजै, काल-अवधि आई ।
बलि जब बहु जज्ञ किए, इंद्र सुनि सकायो ।
छल करि लइ छीनि मही, बामन ह्वै धायो ।
हिरनकसिप अति प्रचंड, ब्रह्मा बर पायो ।
तब नृसिंह रूप धरचौ, छिन न बिलँब लायो ।
पाहन सौं बाँधि सिंधु, लंका गढ़ घेरै[2] ।
सूर[3] मिलि बिभीषनै दुहाइ राम फेरैं ॥ ११८ ॥

॥ ५६२ ॥

* राग धनाश्री

† रे पिय, लंका बनचर आयो ।
करि परपंच हरी तैं सीता, कंचन-कोट ढहायो ।
तब तैं मूढ मरम नहिँ जान्यो, जब मैं कहि समुझायो ।
बेगि न मिलो जानकी लै कै, रामचंद्र चढि आयो ।
ऊँची धुजा देखि रथ ऊपर, लछिमन धनुष चढायो ।
गहि पद सूरदास कहै भामिनि, राज बिभीषन पायो ॥ ११९ ॥

॥ ५६३ ॥

---

① बंदर बस करौं—२, ३, १८, १९ । ② तोरैं—१, २, ३, ६, ८, १९ । ③ सूरदास मिलि बिभीषण राम देहि फेरैं—१ । सूरदास मिलन नीकैं राम ध्वाइ फेरैं—२ ।

* (कां) मारू ।

† यह पद केवल (ना, शा, कां) में है ।

* राग सारंग

सुक-सारन द्वै दूत पठाए ।
बानर-बेष फिरत सैना मैं, जानि बिभीषन तुरत बँधाए ।
बीचहिं मार परी अति भारी, राम-लछन तब दरसन पाए ।
दीनदयालु बिहाल देखि कै, छोरी भुजा, कहाँ तैं आए ?
हम लंकेस-दूत प्रतिहारी, समुद-तीर कौं जात अन्हाए ।
सूर कृपाल भए करुनामय, अपनैं[1] हाथ दूत पहिराए ॥१२०॥

॥ ५६४ ॥

राम-सागर-सवाद

* राग धनाश्री

रघुपति जबै सिधु-तट आए ।
कुस-साथरो बैठि इक आसन, बासर तीनि बिताए ।
सागर गरब धर्‌यौ उर भोतर[2], रघुपति नर करि जान्यौ ।
तब रघुबीर धीर अपनैं कर, अगिनि-बान गहि तान्यौ ।
तब जलनिधि[3] खरभर्‌यौ त्रास गहि, जंतु उठे अकुलाइ ।
कह्यौ, न नाथ बान मोहिं जारौ, सरन पर्‌यौ हौं आइ ।
आज्ञा होइ, एक छिन भोतर, जल इक[4] दिसि करि डारौं ।
अंतर मारग होइ, सबनि कौं इहिं बिधि पार उतारौं ।
और मंत्र जो करौं देवमनि, बाँध्यौ सेतु बिचार ।
दीन जानि, धरि चाप, बिहँसि कै, दियौ कंठ तैं हार ।

---

* (ना) विभास । (का, ना) मारू ।

१६ । (कौं) सारंग ।

धर—१, ३, ६, १६, १६ । ⑧ दस १ । दिसि—२, ३, ६, १६ ।

① पत्र लखन दै दूत पठाए– ② अतर—१६ । ③ जल-

यहै मंत्र सबहीं परधान्यो[1], सेतु बंध प्रभु कीजै।
सब दल उतरि होइ पारंगत, ज्यौं न कोउ इक छीजै।
यह सुनि दूत गयो लंका मैं, सुनत नगर अकुलानो।
रामचंद्र-परताप दसौं दिसि, जल पर तरत पखानो।
दस सिर बोलि निकट बैठायो, कहि धावन सति भाउ।
उद्यम कहा होत लंका कौं, कौनैं कियो उपाउ?
जामवंत-अंगद बंधू मिलि, कैसैं इहिं पुर ऐहैं।
मो देखत जानकी नयन भरि, कैसैं देखन पैहैं।
हौं सति भाउ कहौं लंकापति, जौ जिय आयसु[2] पाऊँ।
सकल भेव[3] ब्यवहार कटक कौ, परगट[4] भाषि सुनाऊँ।
बार-बार यौं कहत सकात न, तोहिं हति लैहैं प्रान।
मेरैं जान कनकपुरि फिरिहै रामचंद्र की आन।
कुंभकरन हूँ कह्यो सभा मैं, सुनो आदि उतपात।
एक दिवस हम ब्रह्म-लोक मैं चलत सुनो यह बात।
काम-अंध ह्वै सब कुटुंब-धन, जैहै एकै बार।
सो अब सत्य होत इहिं औसर, को है मेटनहार।
और मंत्र अब उर नहिं आनौं, आजु बिकट रन माँड़ौं।
गहौं बान रघुपति कैं सन्मुख ह्वै करि यह तन छाँड़ौं।
यह जस जीति परम पद पावौं, उर संसै सब खोइ।
सूर सकुचि जौ सरन सँभारौं, छत्री-धर्म न होइ ॥१२१॥

॥५६५॥

---

① मन आयौ—१, १६, १६। ② उत्तम मानौं (जानौं)—१, १६, १६। ③ कहो—१, २, ३, १६। ④ कपि उमहे सो मानो (जानो)—१, १६। गति अरु मतिहिं सुनाऊँ—३।

सेतु-बंधन * राग धनाश्री

रघुपति चित बिचार करचौ।
नातौ मानि सगर सागर सौं, कुस-साथरी परचौ।
तीनि जाम अरु बासर बीते, सिधु गुमान भरचौ।
कीन्हौ कोप कुँवर कमलापति, तब कर धनुष धरचौ।
ब्रह्म-बेष आयौ अति ब्याकुल, देखत बान डरचौ।
द्रुम-पषान प्रभु बेगि मँगायौ, रचना सेतु करचौ।
नल अरु नील बिस्वकर्मा-सुत, छुवत पषान तरचौ।
सूरदास स्वामी प्रताप तैं, सब संताप हरचौ॥ १२२॥
॥ ५६६॥

* राग मारू

आपुन तरि तरि औरनि तारत।
अस्म अचेत[1] प्रगट पानी मैं, बनचर लै-लै डारत।
इहिं बिधि उपजै[2] तरत पात ज्यौं, जदपि सैल[3] अति भारत।
बुद्धि[4] न सकति सेतु रचना रचि. राम-प्रताप बिचारत।
जिहिं जल तृन, पसु, दारु[5] बूड़ि, अपनैं सँग औरनि पारत[6]।
तिहिं जल गाजत महाबीर सब, तरत आँखि[7] नहिं मारत।
रघुपति-चरन-प्रताप प्रगट सुर, ब्योम बिमाननि गावत।
सूरदास क्यौं बूड़त कलऊ, नाम न बूड़न पावत॥१२३॥
॥५६७॥

---

* (ना) नट। (नाइ) मारू।
* (ना) नट। (नाइ) सारंग।
(१) अनक—१६। (२) उपजी (उपजे) उतर पात—२, ३। ऊँची बाट पाटि क सेना आप निहारत—८। (३) सेन—१, १६। (४) अति बुधि सकति—२। अदभुत सक्ति—३। (५) बार—१, २। वारि—३, १६। (६) बोरत—१, २, ३, ६, १६। (७) अंग नहिं मोरत—१, २, ३।

जलनिधि-तरण * राग धनाश्री

सिंधु-तट उतरे राम उदार ।
रोष[1] बिषम कीन्हौ रघुनंदन, सिय[2] की बिपति बिचार ।
सागर पर गिरि, गिरि पर अंबर, कपि घन कैं आकार ।
गरज किलक आघात उठत, मनु दामिनि पावक झार ।
परत फिराइ पयोनिधि भीतर, सरिता उलटि बहाईं ।
मनु रघुपति भयभीत सिंधु पत्नी प्यौसार पठाई ।
बाला-बिरह दुसह सबही कौं, जान्यौ राजकुमार ।
बान बृष्टि, स्रोनित करि सरिता, व्याहत लगी न बार ।
सुबरन[3] लंक-कलस-आभूषन, मनि-मुक्ता-गन हार ।
सेतु-बंध करि तिलक, सूर प्रभु रघुपति उतरे पार ॥१२४॥
॥५६८॥

मंदोदरी-वचन रावण प्रति ❀ राग धनाश्री

देखि रे, वह सारँगधर आयौ ।
सागर-तीर भीर बानर की, सिर पर छत्र तनायौ ।
संख-कुलाहल सुनियन[4] लागे, लीला-सिंधु बँधायौ ।
सोवत कहा लंक गढ भीतर, अति[5] कै कोप दिखायौ ।
पदुम कोटि जिहिं[6] सैना सुनियत, जंतु जु एक पठायौ ।
सूरदास हरि बिमुख भए जे, तिनि केतिक सुख पायौ ! ॥१२५॥
॥५६९॥

---

* (ना) गुनकली । (का, ना) । सारंग (कां) मारू ।
① रोहा भेष कियौ रघुनंदन—२, ३, १८ । ② सब बिपरीत—१,३,१६ । सुरपति संभु—६ । सब सुरपति ब्यौहार—१८ । ③ स्रवननि कनक - १, १६ ।
❀ (ना) कामोद । (का) मारू ।
④ सुनियत—१ । ⑤ आछौ ठाठ ठठायौ—२ । ⑥ जाकी सेना सो—३ ।

* राग मारू

मो[1] मति अजहुँ जानकी दीजै ।
लंकापति-तिय कहति पिया सौं, यामैं कछू न छीजै ।
पाहन तारे, सागर बाँध्यो, तापर चरन न भीजै ।
बनचर एक लंक तिहिं जारी, ताकी सरि क्यौं कीजै ?
चरन टेकि दोउ हाथ जोरि कै, बिनती क्यौं नहिं कीजै ?
वै त्रिभुवन पति, करहिं कृपा अति, कुटुँब-सहित सुख[2] जीजै ।
आवत देखि बान रघुपति के, तेरौ मन न पतीजै ।
सूरदास प्रभु लंक जारि कै, राज बिभीषन दीजै ॥१२६॥
॥५७०॥

रावण-वचन मंदोदरी-प्रति — राग मारू

कहा तू कहति तिय, बार बारो ?
कोटि तैंतीस सुर सेव अहनिसि करैं, राम अरु लच्छमन हैं कहा री ।
मृत्यु कौं बाँधि मैं राखियौ कूप मैं, देहि आवन, कहा डरति नारी !
कहति मंदोदरी, मेटि को सकै तिहिं, जो रची सूर प्रभु होनहारी ॥१२७॥
॥५७१॥

अंगद-दूतत्व — राग मारू

† लंकपति पास अंगद पठायौ ।
सुनि अरे अध दसकंध, लै सीय मिलि, सेतु करि बंध रघुबीर आयौ ।

---

* (ना) देवगिरि । १६ । ② जुग—२ ।
① मेरे जान—१, २, ३, † यह पद (ल) में नहीं है ।

यह सुनत परजर्‌यौ, बचन नहिँ मन धर्‌यौ, कहा तैँ राम सौँ मोहिँ डरायौ?
सुर-असुर जीति मैँ सब किए आप बस, सूर मन सुजस तिहुँ लोक छायौ[1] ॥१२८॥
॥५७२॥

* राग मारू

† बालि-नंदन बली, बिकट बनचर महा, द्वार रघुबीर कौ बीर आयौ।
पौरि तैँ दौरि दरवान, दससीस सौँ जाइ सिर नाइ, यौँ कहि सुनायौ।
सुनि स्रवन, दस-बदन सदन-अभिमान, कै नैन की सैन अंगद बुलायौ।
देखि लंकेस कपि भेष हर हर हँस्यौ, सुनौ भट, कटक कौ पार पायौ!
बिबिध आयुध धरे, सुभट सेवत खरे, छत्र की छाहँ निरभय जनायौ।
देव-दानव-महाराज-रावन-सभा, कहन कौँ मंत्र इहँ कपि पठायौ!
रंक रावन, कहा[2] ऽतंक तेरौ इतौ, दोउ कर जोरि बिनती उचारौँ।
परम अभिराम रघुनाथ के नाम[3] पर, बीस भुज सीस दस वारि डारौँ।
झटकि हाटक मुकुट, पटकि भट भूमि सौँ, झारि तरवारि तव सिर सँहारौँ।
जानकीनाथ कैँ हाथ तेरौ मरन, कहा मति-मंद तोहिँ मध्य मारौँ।
पाक पावक करै, बारि सुरपति भरै, पौन पावन करै द्वार मेरे।
गान नारद करै, बार[4] सुरगुरु कहै, बेद ब्रह्मा पढ़ै पौरि टेरे[5]।

---

① गायौ—१, २, १६।

* (ना) सारंग।

† (वे, ना, स, ल, का, वृ, ना, श्या) में यह पद रावण वध तथा सीता परीक्षा के परचात् मिलता है। पर (शा) में यह अंगद संवाद में रक्खा है। अंतिम चार चरणों को छोड़कर यह पद पूर्णतया अगद-रावण-संवाद से ही संबधित है। अंत की चार पक्तियां पीछे से जोड़ी जान पड़ती हैं। (वे) में वे चारों एक स्वतंत्र पद के रूप में अलग एकत्र कर दी गई हैं। उक्त प्रक्षिप्त पक्तियों के अतिरिक्त शेष पद की अंतिम पक्ति में कवि का नाम भी आ गया है जिससे उपर्युक्त अनुमान और भी दृढ़ होता है। इस संस्करण में यह पद यहीं रक्खा गया है और वे चार चरण पाद-टिप्पणी में दे दिए गए हैं।

② टेक—१, ३। संक—२।
③ रोम—१, २, ३, १८, १६।
④ ज्ञान—१। तार सुरगुरु गहै—२। नाद—१६ ⑤ घेरे—६, ८।

जच्छ, मृतु, बासुकी नाग, मुनि, गंधरब, सकल बसु, जीति मैं किए चेरे।
सुनि अरे संठ, दसकंठ कौं कौन डर, राम तपसी दए आनि डेरे।
तप बली, सत्य तापस बली, तप बिना, बारि पर कौन पाषान तारै?
कौन ऐसो बली सुभट जननी जन्यौ, एकहीं बान तकि बालि मारै!
परम गंभीर, रनधीर दसरथ-तनय, सरन गएँ कोटि अवगुन बिसारैं।
जाइ मिलि अंध दसकंध, गहि दंत तृन, तौ भलैं मृत्यु-मुख तैं उबारैं।
कोपि करबार गहि कह्यौ लंकाधिपति, मूढ, कहा राम कौं सीस नाऊँ?
संभु की सपथ, सुनि कुकपि कायर कृपन, स्वास आकास बनचर उड़ाऊँ।
होइ सनमुख भिरौं, संक नहिं मन धरौं, मारि सब कटक सागर बहाऊँ।
कोटि तैंतीस मम सेव निसिदिन करत, कहा अब राम नर सौं डराऊँ?
परैं भहराइ भभकंत रिपु धाइ सौं, करि कदन रुधिर भैरौं अघाऊँ।
॥ सूर साजौं सबै, देहुँ डौंड़ो अबै, एक तैं एक रन करि बताऊँ॥ १२६॥
॥ ५७३॥

* राग मारू

रावन तब लौं ही[1] रन गाजत।
जब लौं सारँगधर[2]-कर नाहीं सारँग-बान बिराजत।
जमहु कुबेर इंद्र है[3] जानत, रचि रचि कै रथ साजत?
रघुपति-रवि-प्रकास सौं देखौं, उडुगन ज्यौं तोहिं भाजत।

॥ इसके पश्चात् ये चार चरण प्राय: सभी प्रतियों में प्राप्त होते हैं। परंतु ये प्रक्षिप्त प्रतीत होते हैं—

चढ़्यो रावन सुन्यो, सेष तब सिर धुन्यो, उमड़ि रणरग रघुबीर आए
मुंड भकरु ड धुकि परत धर धरनि पर रुधिर सरिता नहीं पार पाए।
राम सर लागि मनु आगि गिरि पर जरी उछरि छिन छिन सरनि भानु छाए।
मारि दसकध थपि बंधु कौं सूर प्रभु नैन राजीव घर सीय ल्याए।

* (ना) काफी। (ना॰) सारग।

(१) है—१, ३, ६, १६। (२) कर सारँगपानी के नाही बान—१, १६। (३) ही—२। है।—८।

ज्यौं सहगमन सुंदरी कैं सँग बहु बाजन हैं बाजत ।
तैसें सूर असुर आदिक[1] सब, सँग तेरे हैं गाजत[2] ॥ १३० ॥
॥ ५७४ ॥

अंगद-कथित श्रीराम संदेश * राग मारू

जानौं हौं बल तेरौ रावन !
पठवौं कुटुँब-सहित जम-आलय, नैं कु देहि धौं मोकौं आवन ।
अगिनि-पुंज सित[3] बान धनुष धरि, तोहिं असुर-कुल-सहित जरावन ।
दारुन[4] कीस सुभट बर सन्मुख, लैहौं संग त्रिदस-बल पावन ।
करिहौं नाम अचल पसुपति कौ, पूजा-बिधि कौतुक दिखरावन ।
दस[6] मुख छेदि सुपक नव फल ज्यौं, संकर-उर दससीस चढ़ावन ।
दैहौं राज बिभीषन जन कौं, लंकापुर रघु[7]-आन चलावन ।
सूरदास निस्तरिहैं यह जस करि[8] करि दीन-दुखित जन गावन ॥ १३१ ॥
॥ ५७५ ॥

* राग मारू

मोकौं राम रजायसु नाहीं ।
नातरु सुनि दसकंध निसाचर, प्रलय करौं छिन माहीं ।

---

① अनेक—२, ३, ८, १६ । ② लाजत—१, १६ । गाजत—२, ३ ।
* (ना) भोपाली । (ना) केदार ।

③ रघुबीरहिं—६, ८ । ④ सत—२, ६, ८ । सह—३ । ⑤ डारौं सीस तोरि प्रभु (हरि)—२, ३ । ⑥ छेदि असुर मुख पाक सेा फल ज्यौं अरु संकर—३ । ⑦ प्रभु—३ । ⑧ कृपन दीन जन नव यश गावन—१ ।
* (ना) भोपाली ।

पलटि धरौं नव खंड पुहुमि तल[1], जौ बल भुजा सम्हारौं।
राखौं मेलि भँडार सूर-ससि, नभ कागद ज्यौं फारौं।
जारौं लंक, छेदि दस मस्तक, सुर-संकोच निवारौं।
श्रीरघुनाथ-प्रताप-चरन करि[2] उर तैं भुजा उपारौं।
रे रे चपल, बिरूप, ढीठ, तू बोलत बचन अनेरौ।
चितवै[3] कहा पानि-पल्लव-पुट, प्रान प्रहारौं तेरौ।
केतिक[4] संख जुगै जुग बीते मानव असुर-अहेरौ।
तीनि लोक बिख्यात[5] बिसद जस, प्रलय नाम है मेरौ।
रे रे अंध बोसहू लोचन, पर-तिय-हरन बिकारी।
सूनैं भवन गवन तैं कीन्हौ, सेष-रेख नहिं टारी।
अजहूँ कह्यौ सुनै जौ मेरौ, आए निकट मुरारी।
जनक-सुता तैं चलि, पाइनि परि, श्रीरघुनाथ-पियारी।
"संकट परैं जो सरन पुकारौं, तौ छत्री न कहाऊँ।
जन्महि तैं तामस आराध्यौ, कैसैं हित उपजाऊँ?
अब तौ सूर यहै बनि आई, हर कौ[6] निज पद पाऊँ।
ये दससीस ईस-निरमायल, कैसैं चरन छुवाऊँ"? ॥१३२॥

॥५७६॥

---

① पर—१, २, ३, ६, ८, १६। ② ते—१, १६। गहि—६, ८। ③ जियत जाहु कहि मो आगे तैं—६, ८। ④ गए सशंक जुगल बंधू बन जान्यौ—१, १६। कै सुर संग जुगल बंधू बिनु मानहु असुर अहेरी—६। ⑤ मैं गावत है सब प्रबल नामना मेरी—६, ८। ⑥ हरि—१, २, ३, १६।

* राग मारू

मूरख, रघुपति-सत्रु कहावत ?
जाके नाम, ध्यान, सुमिरन तैं, कोटि जज्ञ-फल पावत।
नारदादि सनकादि महामुनि, सुमिरत मन-बच ध्यावत।
असुर[1] तिलक प्रहलाद, भक्त बलि, निगम नेति जस गावत।
जाकी घरनि हरी छल-बल करि, लायो[2] बिलँब न आवत।
दस अरु आठ पदुम बनचर लै, लीला सिंधु बँधावत!
जाइ मिलौ कौसल-नरेस कौं, मन अभिलाष बढ़ावत।
दै सीता अवधेस[3] पाइँ परि, रहु[4] लंकेस कहावत।
तू भूल्यौ दससीस बीस भुज, मोहिँ गुमान दिखावत।
कंध उपारि डारिहौं भूतल, सूर सकल सुख[5] पावत ॥ १३३ ॥
॥ ५७७ ॥

* राग मारू

रे कपि, क्यौं पितु-बैर बिसारयौ ?
तो[6] समतुल कन्या किन उपजी, जो कुल-सत्रु न मारयौ!
ऐसौ सुभट नहीं महिमंडल देख्यौ बालि-समान।
तासौं कियो[7] बैर मैं हारयौ, कीन्हीं पैज प्रमान।
ताकौ बध कीन्हौ इहिँ रघुपति, तुव देखत बिदमान।
ताकी सरन रह्यौ क्यौं भावै, सब्द न[8] सुनियै कान!

---

* (ना) देवगिरि।
(१) अंबरीष—१, ६, ८, १६। (२) ताते बिलम न लावत—१। ताते पलक न लावत—६, ८। (३) लकेश—१, २, ६, ८, १८, १६। (४) तब—१, २, ६, ८, १६। (५) दुख—१, २, ६, ८, १६। (ना) देवसाख। (६) तासु तुल्य—३। (७) कैउ बेर—२। (८) सुनौ दै कान—१, ६, ८।

"रे दसकंध, अंध-मति, मूरख, क्यौं भूल्यौ इहिँ रूप ?
सूझत नहीँ बीसहू लोचन, परयौ तिमिर कैँ कूप !
धन्य पिता, जापर परफुल्लित राघव-भुजा अनूप।
वा प्रतापि की मधुर बिलोकनि पर[1] वारौँ सब भूप"।
"जौ तोहिँ नाहिँ बाहु-बल-पौरुष, अर्ध राज देउँ लंक।
मो समेत ये सकल निसाचर, लरत न मानैँ संक।
जब रथ साजि चढौँ रन-सन्मुख, जीय न आनौँ तंक।
राघव सैन समेत सँहारौँ, करौँ रुधिरमय पंक"।
"श्रीरघुनाथ-चरन-व्रत उर धरि, क्यौं नहिँ लागत पाइ ?
सबके ईस, परम करुनामय, सबही कौँ सुखदाइ।
हौँ जु कहत, लै चलौ जानकी, छाँड़ौ[2] सबै ढिठान[3]।
सनमुख होइ सूर के स्वामी, भक्तनि कृपा-निधान" ॥१३४॥
॥५७८॥

राग मारू

लंकपति इंद्रजित कौँ बुलायौ।
कह्यौ तिहिँ, जाइ रनभूमि दल साजि कै, कहा भयौ राम कपि जोरि ल्यायौ।
कोपि अंगद कह्यौ, धरौँ धर चरन मैँ, ताहि जो सकै कोऊ उठाई।
तौ बिना जुद्ध कियेँ जाहिँ रघुबीर फिरि, सुनत यह उठे जोधा रिसाई।
रहे पचिहारि, नहिँ टारि कोऊ सक्यौ, उठ्यौ तब आपु रावन खिस्याई।
कह्यौ अंगद, कहा मम चरन कौँ गहत, चरन रघुबीर गहि क्यौँ न जाई ?

---

① गहि—१, २, ३, १६। ② छांड़ि सबै ढंभान—१। ③ डफान—६, ८।

सुनत यह सकुचि कियौ गवन निज भवन कौं, बालि-सुतहू तहाँ तैं सिधायौ।
सूर के प्रभू कौं नाइ सिर यौं कह्यौ, अंध दसकंध कौ काल आयौ ॥१३५॥

॥ ५७६ ॥

राग मारू

बालि-नंदन आइ सीस नायौ।
अंध दसकंध कौं काल सूझत न प्रभु, ताहि मैं बहुत बिधि कहि जनायौ[1]।
इंद्रजित चढ़्यौ निज सैन सब साजि कै, रावरी सैनहूँ साज कीजै।
सूर प्रभु मारि दसकंध, थपि बंधु तिहिं, जानकी छोरि जस जगत लीजै॥१३६॥

॥ ५८० ॥

लक्ष्मण-वचन * राग मारू

रघुपति, जौ न इंद्रजित मारौं।
तौ न होउँ चरननि कौ चेरौ, जौ न प्रतिज्ञा पारौं।
॥ यह दृढ़ बात जानियै प्रभु[2] जू, एकहिं बान निवारौं।
॥ सपथ राम परताप तिहारैं, खंड-खंड करि डारौं।
कुंभकरन, दससीस बीसभुज, दानव-दलहिं बिदारौं।
तबै सूर संधान सफल हौं[3], रिपु कौ सीस उतारौं ॥ १३७ ॥

॥ ५८१ ॥

लक्ष्मण-युद्धगमन राग मारू

लखन दल संग लै लंक घेरी।
पृथी[4] भइ षष्ट अरु अष्ट आकास भए, दिसि-बिदिस कोउ नहिं जात हेरी।

---

① सुनायौ—२, १६। * (ना) गौड़। ॥ ये दो चरण केवल (वे, कौं, श्या) में हैं। ② श्रीपति तुच्छ निसाचर भारौ—१६। ③ है—१। मम —३। ④ पृथी खरभरत अरु अम्बित आकास भइ—२।

रीछ लंगूर[1] किलकारि लागे[2] करन, आन रघुनाथ की जाइ फेरी।
पाट गए टूटि, परी लूटि सब नगर मैं, सूर दरवान कह्यौ जाइ टेरी॥१३८॥

॥ ५८२ ॥

मंदोदरी-वचन रावण के प्रति

* राग मारू

रावन, उठि निरखि देखि, आजु लंक घेरी।
कोटि जतन करि रही, सिख मानी नहिँ मेरी।
गहगहात[3] किलकिलात, अंधकार आयौ।
रबि कौ रथ सूझत नहिँ, धरनि[4]-गगन छायौ।
पैरि[5]-पाट टूटि परे, भागे दरवाना।
लंका मैं सोर[6] परयौ, अजहुँ तैं न जाना!
फोरि फारि, तोरि तारि, गगन होत[7] गाजैं।
सूरदास लंका पर चक्र संख बाजैं॥ १३९॥

॥ ५८३ ॥

* राग मारू

† लंका फिरि गइ राम-दुहाई।
कहति मँदोदरि सुनि पिय रावन, तैं कहा कुमति कमाई?
दस मस्तक मेरे बीस भुजा हैं, सौ जोजन की खाई।
मेघनाद से पुत्र महाबल, कुंभकरन से भाई।

---

① पलवंग—१, १६। कपि बंक—३। ② पुर घेरि कै—६, ८।
* (ना) विभास।
③ कुहक रीछ किलकत कपि अधकार आयौ—६, ८। ④ धूरि—६, ८। ⑤ तोरि पाट लूटि परी—१, १६। ⑥ रोर—६, ८। ⑦ जोति—२, ३, ६, ८।
* (ना) सोरठ।
† यह पद (ना, स, ल, रा) में नहीं है।

रहि रहि अबला बोल न बोलै, उनकी करति बड़ाई ।
तीनि लोक तैं पकरि मँगाऊँ, वै तपसी दोउ भाई ।
तुम्हैं मारि महिरावन मारैं, देहिं बिभीषन राई ।
पवन कौ पूत महाबल जोधा, पल मैं लंक जराई !
जनकसुता-पति हैं रघुबर से, सँग लछिमन से भाई ।
सूरदास प्रभु कौ[1] जस प्रगट्यौ, देवनि बंदि छुडाई ॥१४०॥
॥५८४॥

* राग मारू

मेघनाद ब्रह्मा-बर पायौ ।
आहुति अगिनि जिँवाइ सँतोषी, निकस्यौ रथ बहु रतन बनायौ ।
आयुध धरैं समस्त[2] कवच सजि, गरजि चढ्यौ, रन-भूमिहिं आयौ ।
मनौ मेघनायक रितु पावस, बान-बृष्टि करि सैन[3] कँपायौ ।
कीन्हौ कोप कुँवर कौसलपति, पंथ अकास सायकनि छायौ ।
हँसि-हँसि नाग-फाँस सर साँधत, बंधन बंधु-समेत बँधायौ ।
नारद स्वामी कह्यौ निकट ह्वै, गरुड़ासन काहैं बिसरायौ ?
भयौ तोष दसरथ के सुत कौं, सुनि नारद कौ ज्ञान लखायौ ।
सुमिरन ध्यान जानि कै[4] अपनौ, नाग-फाँस तैं सैन छुड़ायौ ।
सूर बिमान चढे सुरपुर सौं[5], आनँद अभय-निसान बजायौ ॥१४१॥
॥५८५॥

---

① तुम्हैं मारि कै दैहैं बदि छुड़ाई—६, ८ ।
* (ना) कल्यान ।
② समेत—१, २, १८, १६ । ③ सैन खपायो—१, १६ । सबनि जतायौ—६ । ④ ऐसौ प्रभु—२ । आयौ प्रभु—६, ८ । अपनौ प्रभु—१६, १८ । ⑤ लौ—१, ३ । यो—२ । को—६ । सो—१८ ।

कुंभकरण-रावण-संवाद * राग मारू

लंकपति अनुज सोवत जगायौ ।
लंकपुर आइ रघुराइ डेरा दियौ, तिया जाकी सिया मैं लै आयौ ।
तैं बुरो बहुत कीन्ही, कहा तोहिं कहौं, छाँड़ि जस, जगत[1] अपजस बढ़ायौ ।
सूर अब डर न करि, जुद्ध कौ साज करि, होइहै सोइ जो दई-भायौ ॥ १४२ ॥
॥ ५८६ ॥

* राग गारू

लछन कह्यौ, करवार[2] सम्हारौं ।
कुंभकरन अरु इंद्रजीत कौं टूक-टूक करि डारौं ।
महाबली रावन जिहिं बोलत, पल मैं सीस सँहारौं ।
सब राच्छस रघुबीर-कृपा तैं, एकहिं बान निवारौं ।
हँसि-हँसि कहत बिभीषन सौं प्रभु, महाबली रन भारौ ।
सूर सुनत रावन उठि धायौ, क्रोध अनल उर[3] धारौ ॥ १४३ ॥
॥ ५८७ ॥

× राग मारू

रावन चल्यौ गुमान भरचौ ।
श्रीरघुनाथ अनाथबंधु सौं, सनमुख खेत[4] खरचौ ।
कोप करचौ रघुबीर धीर तब, लछिमन पाइ परचौ ।
तुम्हरैं तेज-प्रताप नाथ जू, मैं कर-धनुष धरचौ ।

---

* (ना) कल्यान ।
① अजस जग मैं—६, ८ ।
* (ना) गूजरी ।
② करबान—३ । ③ तन —१ । जल—२,३,६,१८, १६ ।
④ कहत—१,२, ३, ६, ८, १६ ।
× (ना) नट ।

सारथि सहित अस्व[1] बहु मारे, रावन क्रोध जरचौ।
इंद्रजीत लीन्ही तब सक्ती[2], देवनि हहा करचौ।
टूटी बिज्जु[3]-रासि वह मानौ, भूतल बंधु परचौ।
॥ करुना करत सूर कोसलपति, नैननि नीर झरचौ॥ १४४॥
॥५८८॥

* राग मारू

निरखि मुख राघव धरत न धीर।
भए[4] अति अरुन, बिसाल कमल-दल-लोचन मोचत नीर।
बारह बरष नींद है साधी, तातैं बिकल सरीर।
बोलत नहीं मौन कहा साध्यौ, बिपति-बँटावन बीर!
दसरथ-मरन, हरन सीता कौ, रन बैरिनि की भीर।
दूजौ सूर सुमित्रा-सुत बिनु, कौन धरावै धीर?॥ १४५॥
॥ ५८९॥

* राग मारू

अब हौं कौन कौ मुख हेरौं?
रिपु-सैना-समूह-जल उमड़्यौ, काहि संग लै फेरौं[5]?

---

① असुर—१, २, १६। ② सेंथी (सेंथी)—१, २, ६, १८, १६। सांगी—१६। ③ तेज—२। तेअराज—३।

॥ यह पद (स, रा) में इसी चरण पर, इसी प्रकार, समाप्त किया गया है, किंतु (वे, ना, का, ना२, श्या) में इस चरण में 'सूर' के स्थान पर 'कुँवर' करके दो चरण और बढा दिए गए हैं। वे इस प्रकार हैं—

सूरदास हनुमान दीन ह्वै
अंजलि जोरि खरयौ।
आज्ञा देहु(हे/इ)सजीवनि लाऊँ
गिरि(दौ)उचाइ सिगरयौ।

ये दोनों चरण असंगत प्रतीत होने के कारण इस संस्करण में नहीं रक्खे गए।

* (ना) ईमनि।

④ भए अरुन बिकराल—१।

* (ना) परज।

⑤ घेरौं—२, ३, ६, ८।

दुख-समुद्र जिहिँ वार-पार नहिँ, तामैँ नाव चलाई ।
केवट[1] थक्यो, रही[2] अधबीचहिँ, कौन आपदा आई ?
नाहीँ भरत-सत्रुघन सुंदर, जिनसौँ[3] चित्त लगायौ[4] ।
बीचहिँ भई और की औरै, भयौ सत्रु कौ भायौ[5] ।
मैँ निज प्रान तजौँगौ सुनि कपि, तर्जाह जानकी सुनिकै ।
ह्वैहै कहा बिभीषन की गति, यहै[6] सोच जिय गुनि कै ।
बार बार सिर लै लछिमन कौ, निरखि गोद पर राखैँ ।
सूरदास प्रभु दीन[7] बचन यौँ, हनूमान सौँ भाषैँ ॥१४६॥

॥५६०॥

* राग मारू

† कहाँ गयौ मारुत-पुत्र कुमार ।

ह्वै अनाथ रघुनाथ पुकारे, संकट-मित्र हमार ।
॥ इतनी बिपति भरत सुनि पावैँ, आवैँ साजि[8] बरूथ ।
॥ कर गहि धनुष जगत कौँ जीतैँ, कितिक निसाचर जूथ ।
॥ नाहिँ न और बियौ कोउ समरथ, जाहि पठावौँ दूत ।
॥ को[9] अब है पौरुष दिखरावै, बिना पौन के पूत ?

---

① पेवट—६, १६ । ② रह्यो—१, २, ३, १६ । ③ जासौँ—१,१६ । तिनसौँ—२, ६, ८ । ④ लगाऊँ—२, ६, १८ । ⑤ भाऊँ—२, ६ । ठाऊँ—१८ । ⑥ भयो—६, ८ । ⑦ बार बार यौँ—२, ३, ६, ८, १८ ।

* (ना) जैतश्री ।

† (ना, स) मेँ यह पद राम-राज्याभिषेक के प्रसंग मेँ रक्खा गया है और उसमेँ केवल ४ ही चरण ग्रहण किए गए हैँ । (का) मेँ इस पद के केवल ॥ चिह्नित चरण मिलते हैँ । (वे, ना, का, श्या) मेँ दोनो को मिलाकर एक पद के रूप मेँ इसी प्रसंग मे रक्खा गया है । इस संस्करण मे भी इसे यहीँ प्रासंगिक मानकर स्थान दिया गया है ।

॥ ये चरण (ना, स) मेँ नहीँ हैँ ।

⑧ दलहिँ सजूथ—१,१६ । बेगि सजूथ—६, ८ । ⑨ वह अबही पौरुष दिखरावै रोह पवन को—१, १६ ।

रत्नाकर

ब्रजभाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि गोलोक-निवासी श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के समस्त काव्यों का यह अपूर्व संग्रह है। इनकी कविता के सबध मे विज्ञ साहित्यिकों से निवेदन करने की आवश्यकता नहीं। कविता-कला का इतना उत्कृष्ट अभ्यासी इस युग मे कहीं देखने को नहीं मिलता। यत्र-तत्र बिखरे हुए उनके काव्य-रत्नों का यह संग्रह यथार्थ ही अपने नाम के अनुरूप हुआ है। 'रत्नाकर' मे ब्रजभाषा का प्राजल मणि भावों की उज्ज्वलता से चौगुना चमक उठा है। अवसर के अनुकूल यत्र-तत्र चतुर चितेरों के एकरगे, तिरगे चित्रों तथा अनेकानेक उत्तमोत्तम डिजाइनो से इसकी काति और भी खिल उठी है। मुद्रक ने भी इसे सर्वांग-सुदर बनाने मे कोई कोर-कसर नहीं रखी। जो पुस्तक-प्रेमी स्थायी महत्त्व के सुदर और सरस साहित्य का सुचारु और आकर्षक वेशभूषा मे देखने के इच्छुक हैं उनके मनस्तोष की अपूर्व सामग्री इसमे विद्यमान है। यह प्रत्येक साहित्यिक की आलमारी मे शोभा पाने की अधिकारिणी है और इसका अभाव अवश्य एक बडी कमी है। इसके दो सस्करण प्रकाशित किए गए हैं। आर्ट पेपर के रायल आठ पेजी साइज के ६०० पृष्ठों के इस ग्रथ के राज-सस्करण का मूल्य केवल ८) और साधारण सस्करण का ७) है। आशा है, साहित्य-प्रेमी इस पुस्तक को खरीदकर अपनी गुणज्ञता का परिचय देंगे।

बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास

इस पुस्तक मे रामायण-काल से लेकर आज तक का विवरण दिया गया है। इसमे पुराण, काव्य, कविता, इतिहास, गाथा, दतकथा, शिलालेख आदि इतिहास के लिये सहायक प्राय सभी साधनों से सहायता लेकर लेखक ने एक क्रमबद्ध निष्कर्ष निकाला है। बुंदेलखड के इतिहास की कोई स्वतंत्र पुस्तक नहीं थी। इसने इस कमी की पूर्ति की है। पृष्ठ-सख्या ४५०, मूल्य केवल ३)।

मआसिरुल उमरा

इतिहास-प्रेमियों को भली भाँति विदित है कि यह ग्रथ कितने महत्त्व का है। इसमे मुगल दरबार के जिन सरदारों की जीवनियाँ नवाब शाहनवाज खाँ समसामुद्दौला ने दी हैं, वे अत्यत प्रामाणिक और पक्षपात-रहित है। प्रथम भाग मे ९१ सरदारों की जीवनियाँ हैं। मूल्य केवल ४) रखा गया है।

ब्रजनिधि-ग्रंथावली

जयपुर-नरेश महाराज सवाई प्रतापसिहजी की समस्त रचनाओं का यह सग्रह है जो बहुत खोज और परिश्रम के अनंतर एकत्र किया गया है। पाद-टिप्पणियों मे कठिन शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं। प्रारभ मे विद्वान् सपादक पुरोहित हरिनारायणजी शर्मा की सुदीर्घ प्रस्तावना भी है। ४१९ पृष्ठों मे समाप्त इस पुस्तक का मूल्य केवल ३) है।

कोशोत्सव-स्मारक संग्रह

संपादक रायबहादुर महामहोपाध्याय पंडित गौरीशंकर हीराचद ओझा। देश तथा विदेश के अनेक प्रख्यात विद्वानों एव अनेकानेक लब्ध-प्रतिष्ठ कवियों की सर्वश्रेष्ठ कृतियों का अपूर्व संग्रह। मूल्य ५)।

द्विवेदी-अभिनंदन-ग्रंथ

अनेक सज्जनों के सतत आग्रह पर सभा ने दो महीने के लिये इस ग्रंथ का मूल्य घटाकर आधा कर दिया था। इस अवधि मे इस पुस्तक की बहुतेरी प्रतियाँ बिकी। समय बीत गया, पर आर्डरों का ताँता लगा ही रहा और निरतर माँगें आती ही जा रही हैं। वस्तुत· यह पुस्तक सभा ने आर्थिक लाभ की अभिलाषा से नहीं छापी थी। यह आचार्य महोदय के सम्मानार्थ प्रकाशित की गई थी। अत इस सदुद्देश की सिद्धि पूर्ण रीति से तभी होगी जब इस ग्रंथ-रत्न की एक एक प्रति हिदी भाषा एव हिदी भाषा के मान्य आचार्य महोदय के प्रत्येक भक्त के पास पहुँच जाय। अत अनेक सज्जनो के आग्रह से सभा ने इस ग्रंथ का मूल्य पुन· ७॥) कर दिया है। यह रिआयत केवल उन्हीं लोगों के साथ की जायगी जो सभा मे ग्रथ का मूल्य ७॥) और पेकिंग तथा रजिस्टरी-व्यय ॥) कुल ८) मनीआर्डर से पेशगी भेज देगे। ऐसे सज्जनों के पास यह ग्रंथ बैरग रेलवे पार्सल से भेज दिया जायगा और रेल-भाडा उन्हें देना पडेगा। जो सज्जन डाक से यह ग्रंथ मँगवाना चाहते हों उन्हें ७॥) मूल्य के अतिरिक्त १॥।=) डाक-व्यय के लिये और भेजना चाहिए।

अभिनंदन-ग्रथ मे विगत चालीस वर्षों के चुने हुए हिदी-साहित्य के पंडितो के अपूर्व निबंध और कवियो की मनोरम रचनाएँ हैं। साथ ही इसमे देश और विदेश के सर्वश्रेष्ठ कलाकारो के सुंदर-सुंदर चित्रों का अलबम सजा दिया गया है जिसका मूल्य कला-रसिक ही अच्छी तरह आँक सकते हैं। यह कहने मे अत्युक्ति न होगी कि साहित्य और चित्र-विद्या की ऐसी सयुक्त सुचारु प्रदर्शिनी कभी ही कभी सौभाग्य से देखने को मिलती है। जिस प्रकार 'गीता' या 'रामचरितमानस' के विषय मे कहा जाता है कि सपूर्ण भारतीय साहित्य और सस्कृति के नष्ट हो जाने पर भी इन दो ग्रथों से उनकी पूर्ति हो सकती है उसी प्रकार इस बीसवीं शताब्दि के हिंदी-साहित्य की प्रगति की पूरी सामग्री आपको इस ग्रथ मे मिलेगी।

यदि आप अपने समय के साहित्य के साथ-साथ नहीं चल सके या उससे पूर्णत· परिचित नहीं हो सके तो यह एक ऐसा अभाव है जिसके कारण आपके मन मे सकोच अवश्य होता होगा। अभिनंदन-ग्रथ खरीदकर आप उसकी पूरी पूरी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

आशा है, हिदी प्रेमी इस सुअवसर से लाभ उठावेंगे और इस ग्रंथ-रत्न की एक-एक प्रति तुरत मँगाकर बीसवीं सदी की निधि अपने घरों मे रख लेंगे।

पुस्तक-विक्रेताओं को १) प्रति कमीशन दिया जायगा।

प्रधान मंत्री,
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

*

॥ इतनौ बचन स्रवन सुनि हरष्यौ, फूल्यौ अंग न मात ।
॥ लै-लै चरन-रेनु निज प्रभु की, रिपु कैँ स्रोनित न्हात ।
॥ अहो पुनीत मीत केसरि-सुत, तुम हित बंधु हमारे ।
॥ जिह्वा रोम-रोम-प्रति नाहीँ, पौरुष गनौँ तुम्हारे !
जहाँ-जहाँ जिहिँ काल सँभारे, तहँ-तहँ त्रास निवारे ।
सूर सहाइ कियौ बन बसि कै, बन[1]-बिपदा-दुख टारे ॥ १४७ ॥
॥ ५६१ ॥

हनुमान-वचन श्रीराम-प्रति * राग मारू

रघुपति, मन संदेह न कीजै ।
मो देखत लछिमन क्यौँ मरिहैँ, मोकौँ आज्ञा दीजै ।
कहौ तौ सूरज उगन देउँ नहिँ, दिसि-दिसि बाढै ताम ।
कहौ तौ गन समेत ग्रसि खाऊँ, जमपुर जाइ न, राम !
कहौ तौ कालहिँ खंड-खंड करि, टूक-टूक करि काटौँ ।
कहौ तौ मृत्युहिँ मारि डारि कै, खोदि[2] पतालहिँ पाटौँ ।
कहौ तौ चंद्रहिँ लै अकास तैँ, लछिमन मुखहिँ निचोरौँ ।
कहौ तौ पैठि सुधा कैँ सागर, जल समस्त[3] मैँ बोरौँ[4] ।
श्रीरघुबर, मोसौँ जन जाकैँ, ताहि कहा सँकराई ?
सूरदास मिथ्या नहिँ भाषत, मोहिँ रघुनाथ-दुहाई ॥१४८॥
॥ ५६२ ॥

---

① पुनि—६, ८ । * (ना) कान्हरौ । १८, १६ । ③ समेत—१, २,
॥ येचरण(ना, स) मे नहीँ हैँ । ② खोज—२, ३, ६, ८, १६ । ④ बोरौँ—६, ८ ।

* राग मा

कह्यौ तब हनुमत सौं रघुराई ।
दौनागिरि पर आहि सँजीवनि, बेद[1] सुषेन बताई ।
तुरत जाइ लै आउ उहाँ तैं, बिलँब न करि मेा भाई ।
सूरदास प्रभु-बचन सुनतहीं, हनुमत चल्यौ अतुराई ॥१४६।

॥ ५६३

* राग मा

दौनागिरि हनुमान सिधायौ ।
संजीवनि कौ भेद न पायौ, तब सब सैल उठायौ ।
चितै रह्यौ तब भरत देखि कै, अवधपुरी जब आयौ ।
॥ मन मैं जानि उपद्रव भारी, बान अकास चलायौ ।
॥ राम-राम यह कहत पवन-सुत, भरत निकट तब आयौ ।
पूछ्यौ सूर कौन है कहि तू, हनुमत नाम सुनायौ ॥१५०।

॥ ५६४ ।

× राग मा

कहौ कपि रघुपति कौ संदेस ।
कुसल बंधु लछिमन, बैदेही, श्रीपति सकल-नरेस ।
जनि पूछौ तुम कुसल नाथ की, सुनौ भरत बलबीर ।
बिलख-बदन, दुख भरे[2] सिया के, हैं जलनिधि कैं तीर ।

---

* (ना) बिहागरौ ।
① सुषेन चेति—२, ८, ६, ८ ।
१६ । मृतक जियत सेा पाई—
(ना) बिहागरौ ।
॥ ये दो चरण (का) मे नहीं हैं ।
× (ना) भैरौ ।
② धरे सिया को—१ ।

बन मैं बसत, निसाचर छल करि, हरी सिया मम मात।
ता कारन लछिमन सर लाग्यौ, भए राम बिनु भ्रात।
यह[1] सुनि कौसिल्या सिर ढोरचौ, सबनि पुहुमि तन जोयौ।
त्राहि-त्राहि कहि, पुत्र-पुत्र कहि, मातु[2] सुमित्रा रोयौ।
धन्य सुपुत्र पिता-पन राख्यौ, धनि[3] सुबधू कुल-लाज।
॥ सेवक धन्य अंत अवसर जो आवै प्रभु कैं काज।
पुनि धरि धीर कह्यौ, धनि लछिमन, राम काज जो आवै।
सूर जियै तौ जग जस पावै, मरि सुरलोक सिधावै ॥ १५१ ॥
॥ ५६५ ॥

* राग मारू

धनि जननी जो सुभटहिं जावै।
भीर परैं रिपु कौ दल दलि-मलि, कौतुक करि दिखरावै।
कौसिल्या सौं कहति सुमित्रा, जनि[4] स्वामिनि दुख पावै।
लछिमन जनि हौं भई सपूती, राम-काज जो आवै।
जीवै तौ सुख बिलसै जग मैं, कीरति लोकनि गावै।
मरै तौ मंडल भेदि भानु कौ, सुरपुर जाइ बसावै।
लोह[5] गहैं लालच करि जिय कौ, औरौ सुभट लजावै।
सूरदास प्रभु जीति सत्रु कौं, कुसल-छेम घर आवै ॥ १५२ ॥
॥ ५६६ ॥

---

① इतनौ बचन स्रवन सुनि सुनि कै—१,६,८,१६,१६। ② लोटि—१। तबहिं—२,३, १८। ③ धन्य सुकुल जिहिं—१,१६। धन्य सुकुल तिय राज—६, ८।

॥ इसके उपरांत (वे, का, नं, श्या) में ये दो चरण और मिलते हैं—
तब रघुनाथ मूरि कैं कारन
मोकौं लैन पठावै।

थक्यौ सो मध्य, अर्द्धनिसि बीती
को लछिमनहिं जियावै ॥
* (ना) धनाश्री।

④ तू जिनि मन—२। ⑤ मोह—६, ८।

* राग मारू

† सुनौ कपि, कौसिल्या की बात ।
इहिँ पुर जनि आवहिँ[1] मम बत्सल, बिनु लछिमन लघु भ्रात ।
छाँड़्यौ[2] राज-काज, माता-हित, तुव[3] चरननि चित लाइ ।
ताहि[4] बिमुख जीवन धिक रघुपति, कहियौ कपि समुझाइ ।
लछिमन सहित कुसल[5] बैदेही, आनि राज पुर कीजै ।
नातरु सूर सुमित्रा-सुत पर वारि अपुनपौ दीजै ॥ १५३ ॥
॥ ५६७ ॥

राग मारू

‡ बिनती कहियौ जाइ पवनसुत, तुम रघुपति के आगे ।
या पुर जनि आवहु बिनु लछिमन, जननी-लाजनि-लागे ।
मारुतसुतहिँ सँदेस सुमित्रा ऐसैँ कहि समुझावै ।
सेवक जूझि परै रन भीतर, ठाकुर तउ घर आवै ।
जब तैँ तुम गवने कानन कौँ, भरत भोग सब छाँड़े ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, दुख-समूह उर गाड़े ॥ १५४ ॥
॥ ५६८ ॥

* राग मारू

§ पवन-पुत्र बोल्यौ सतिभाइ ।
जानि सिराति राति बातनि मैँ, सुनौ भरत, चित लाइ ।

---

* (ना) नट ।

† यह पद (स, ल, रा) मेँ नहीँ है ।

① आवहु बिन लछमन सुनेा बच्छ रघुनाथ (तात)—१, १६ ।

② जिन तज्यौ—१, ६, ८, १६ ।

③ तुम चरननि चित मानै—१, ६, ८, १६ । ④ कहा कहौं कछु कहत न आवै सज्जन होइ सु जानै —१, ६, ८, १६ । ⑤ सज्ज सेनापति—१, ६, ८, १६ ।

‡ यह पद (ना, स, ल, रा) मेँ नहीँ है ।

: (ना) केदारा ।

§ यह पद अन्य प्रतियेाँ मेँ

श्रीरघुनाथ सँजीवनि कारन, मोकौं इहाँ पठायौ।
भयौ अकाज अर्द्धनिसि बीती, लछिमन-काज नसायौ।
स्यौं परबत सर बैठि पवनसुत, हौं प्रभु पै पहुँचाऊँ।
सूरदास प्रभु-पाँवरि मम सिर इहिँ बल भरत कहाऊँ॥ १५५॥
॥ ५६६॥

* राग सारंग

हनूमान संजीवनि ल्यायौ।
महाराज रघुबीर धीर कौं हाथ जोरि सिर नायौ।
परबत आनि धरचौ सागर-तट, भरत सँदेस सुनायौ।
सूर सँजीवनि दै लछिमन कौं मूर्छित फेरि जगायौ॥ १५६॥
॥ ६००॥

* राग टोड़ी

दूसरैं कर बान न लैहौं।
सुनि सुग्रीव, प्रतिज्ञा मेरी, एकहिँ बान असुर सब हैहौं।
सिव-पूजा जिहिँ भाँति करी है, सोइ[1] पद्धति परतच्छ दिखैहौं।
दैत्य प्रहारि पाप-फल[2]-प्रेरित, सिर-माला सिव-सीस चढैहौं।
मनौ तूल-गन परत अगिनि-मुख, जारि जड़नि जम-पंथ पठैहौं।
करिहौं नाहिँ बिलंब कछू[3] अब, उठि रावन सन्मुख ह्वै धैहौं।

'धनि जननी जो सुभटहिँ जावै' के पश्चात् मिलता है परंतु इस संस्करण में वह अन्य दो पदों के उपरांत, यथास्थान, रक्खा गया है।

* (ना) रामकली।

१ (ना) गूजरी।

① सोई सक्ति—२, ३। बधत ताहि—६, ८। ② फल बर्जित सिर माला कुल सहित चढैहौं—१। कलि बरजित तीनि जनम जम पथ पठैहौं—२। ③ कछू इक जौ रावन सनमुख करि पैहौं—२, ३। आपु उठि रावन मुख हौ सबै ढहैहौं—८।

इमि दमि दुष्ट देव-द्विज मोचन, लंक बिभीषन, तुमकौं दैहौं।
लछिमन, सिया समेत सूर कपि, सब सुख सहित अजोध्या जैहौं ॥१५७॥

॥६०१॥

* राग मारू

आजु अति कोपे हैं रन राम।
ब्रह्मादिक आरूढ बिमाननि, देखत हैं संग्राम।
घन तन दिब्य कवच सजि करि अरु कर धारयौ सारंग।
सुचि करि सकल बान सुधे करि, कटि-तट कस्यौ निषंग।
सुरपुर तैं आयौ रथ सजि कै, रघुपति भए सवार।
काँपी भूमि कहा अब ह्वैहै, सुमिरत नाम मुरारि।
छोभित सिंधु, सेष-सिर कंपित, पवन भयौ गति पंग।
इंद्र हँस्यौ, हर[1] हिय बिलखान्यौ, जानि बचन कौ भंग।
धर-अंबर, दिसि-बिदिसि, बढे अति सायक किरन-समान।
मानौ महा-प्रलय के कारन, उदित उभय षट भान।
टूटत धुजा-पताक-छत्र - रथ, चाप - चक्र - सिरत्रान[2]।
जूझत[3] सुभट जरत ज्यौं दव द्रुम बिनु साखा बिनु पान।
स्रोनित छिंछ[4] उछरि आकासहिं, गज-बाजिनि-सिर लागि।
मानौ[5] निकरि तरनि रंधनि तैं, उपजी है अति आगि।

---

* (ना) धनाश्री।

① हर हँसि—१, १८, १६। ब्रह्मा—६, ८। ② असि त्रान—२। सर त्रान—६, ८, १६। ③ सोभित—३। ④ छिछ (छित) उछरति अकास लौं—२, १८। छींट—१६। ⑤ मनौ नगर रन तननि धरनि तैं—१। मानौ निकरति रन रनधीरन—२। मानौ निकरत रन अहार ते—३।

॥ परि[1] कबंध भहराइ रथनि तैं, उठत मनौ भर जागि ।
॥ फिरत सृगाल सज्यौ[2] सब काटत, चलत सो सिर लै भागि ।
रघुपति रिस पावक प्रचंड अति, सीता-स्वास समीर ।
रावन-कुल अरु कुंभकरन बन सकल सुभट रनधीर ।
भए भस्म कछु बार न लागी, ज्यौं ज्वाला पट चीर ।
सूरदास प्रभु आपु बाहुबल कियौ निमिष मैं कीर ॥१५८॥

॥ ६०२ ॥

* राग मारू

† रघुपति अपनौ प्रन प्रतिपार्‌यौ ।
तोर्‌यौ कोपि प्रबल गढ, रावन टूक-टूक करि डार्‌यौ ।
कहुँ भुज, कहुँ धर, कहुँ सिर लोटत, मानौ मद-मतवारौ ।
¶भभकत, तरफत स्रोनित मैं तन, नाहीं परत निहारौ ।
छोरे और सकल सुख-सागर, बाँधि उदधि जल खारौ ।
सुर-नर-मुनि सब सुजस बखानत, दुष्ट दसानन मारौ ।
डरपत बरुन-कुबेर-इंद्र-जम, महा सुभट पन धारौ ।
रह्यौ मांस कौ पिंड, प्रान लै गयौ बान अनियारौ !
नव ग्रह परे रहैं पाटी-तर, कूपहिं काल उसारौ ।
सो रावन रघुनाथ छिनक मैं कियौ गीध कौ चारौ !

---

① उठि कबंध भहरात भीत ह्वै निकसति है जर जागि—१, १६ ।
② सुभट तन काटत चलत सब्द सुनि भागि—१६ ।
॥ ये दो चरण (स, रा) में नहीं हैं ।

* (ना) आसावरी ।

† इस पद की चरण-संख्या तथा उनके क्रम में भिन्न भिन्न प्रतियों में भेद है और पाठांतर भी हैं । इस संस्करण में (का, ना) के चरणों का क्रम अधिक संगत समझकर स्वीकार किया गया है ।

¶ यह चरण (वे, श्या) में नहीं है । इसके बदले उनमें यह चरण पद के अंत में मिलता है—"बंधु सहित जानकी संग लै अवधपुरी पग धारौ ।"

सिर सँभारि लै गयौ उमापति, रह्यौ रुधिर कौ गारौ ।
दियौ बिभीषन राज सूर प्रभु, कियौ सुरनि निस्तारौ ॥ १५६ ॥
॥ ६०३ ॥

* राग मारू

करुना करति मँदोदरि रानी ।
चौदह सहस सुंदरी उमहीँ[1], उठै न कंत महा अभिमानी ।
बार-बार बरज्यौ, नहिँ मान्यौ, जनक-सुता तैँ कत घर आनी ।
ये जगदीस ईस कमलापति, सीता तिय करि तैँ कत जानी ?
लीन्हे गोद बिभीषन रोवत, कुल कलंक ऐसी मति ठानी ।
चोरी करी, राजहूँ खोयौ, अल्प मृत्यु तव आइ तुलानी ।
कुंभकरन समुझाइ रहे पचि, दै सीता, मिलि सारँगपानी ।
सूर सबनि का कह्यौ न मान्यौ, त्यौं[2] खोई अपनी रजधानी ॥१६०॥
॥६०४॥

* राग मारू

लछिमन सीता देखी जाइ ।
अति कृस, दीन, छीन-तन प्रभु बिनु, नैननि नीर बहाइ[3] ।
जामवंत - सुग्रीव - बिभीषन करी दंडवत आइ ।
आभूषन बहुमोल पटंबर, पहिरौ मातु बनाइ ।
बिनु रघुनाथ मोहिँ सब फीके, आज्ञा मेटि न जाइ ।
पुहुप बिमान बैठी बैदेही, त्रिजटी सब पहिराइ ।

---

* (ना) गूजरी ।
① ऊभी—१, ६, १६ ।
ठाढी—२ । ② तौ—२, ३, ६, ८, १६ ।
* (ना) सारंग ।
③ भराइ—६, ८ ।

देखत दरस राम मुख मोरचौ, सिया परी मुरझाइ।
सूरदास स्वामी तिहुँ पुर के, जग-उपहास डराइ ॥१६१॥
॥६०५॥

* राग सोरठ

लछिमन, रचौ हुतासन भाई !
यह सुनि हनूमान दुख पायौ, मोपै लख्यौ न जाई।
आसन एक हुतासन बैठी, ज्यौं कुंदन-अरुनाई।
जैसैं रवि इक पल घन भीतर बिनु मारुत दुरि जाई।
लै[1] उछंग उपसंग हुतासन, "निहकलंक रघुराई !"
लई बिमान चढ़ाइ जानकी, कोटि मदन छबि छाई।
दसरथ कह्यौ देवहू भाष्यौ, ब्योम[2] बिमान टिकाई।
सिया राम लै चले अवध कौं, सूरदास बलि जाई ॥१६२॥
॥६०६॥

राग मारू

सुरपतिहिं बोलि रघुबीर बोले।
अमृत की बृष्टि रन-खेत ऊपर करौ, सुनत तिन अमिय-भंडार खोले।
उठे कपि-भालु ततकाल जै-जै करत, असुर भए मुक्त, रघुबर निहारे।
सूर प्रभु अगम-महिमा न कछु कहि परति, सिद्ध गंधर्ब जै-जै उचारे ॥१६३॥
॥६०७॥

---

* (ना) नट। (नाइ) मारू।
(१) लई उछग अब लाग—३। (२) ब्योम बिमान निकाई—१,१६, १६। ब्योम बिमान थकाई—२,३। भूमि बिमान लगाई—६, ८।

राग सारंग

† बैठी जननि करति सगुनौती ।
लछिमन-राम मिलैं अब मोकौं, दोउ अमोलक मोती ।
इतनी कहत, सुकाग उहाँ तैं हरी डार उड़ि बैठ्यौ ।
अंचल गाँठि दई, दुख भाज्यौ, सुख जु आनि उर पैठ्यौ ।
जब लौं हौं जीवौं जीवन भर, सदा नाम तव जपिहौं ।
दधि-ओदन दोना भरि दैहौं, अरु भाइनि मैं थपिहौं ।
अब कैं जौ परचौ करि पावौं अरु देखौं भरि आँखि[1] ।
सूरदास सोने कैं पानी मढौं चोंच अरु पाँखि[2] ॥१६४॥
॥६०८॥

* राग मारू

हमारो जन्मभूमि यह गाउँ ।
सुनहु सखा सुग्रीव-विभीषन, अवनि अजोध्या नाउँ ।
देखत बन-उपबन-सरिता-सर, परम मनोहर ठाउँ ।
अपनी प्रकृति लिए बोलत हौं, सुरपुर मैं न रहाउँ[3] ।
ह्याँ के बासी अवलोकत हौं, आनँद उर न समाउँ[4] ।
सूरदास जौ बिधि न सँकोचै, तौ बैकुंठ न जाउँ ॥ १६५ ॥
॥ ६०९ ॥

❀ राग बसंत

राघव आवत हैं अवध आज । रिपु जीते, साधे देव-काज ।
प्रभु कुसल बंधु-सीता समेत । जस सकल देस आनंद देत ।

---

† यह पद (ना, स, ल, रा) में नहीं है ।
① आंखी—१, १६, १६ ।
② पाँखी—१, १६, १६ ।
* (ना) धनाश्री ।
③ समाउँ—२, ३ । ④ छवाउँ—२, ३ ।
❀ (ना) भैरो । (ना२) मारू ।

कपि सोभित सुभट अनेक संग। ज्यौं पूरन ससि सागर-तरंग।
सुग्रीव - विभीषन - जामवंत। अंगद - सुषेन - केदार संत।
नल-नील- द्विविद-केसरि[1]-गवच्छ। कपि कहे कछुक, हैं बहुत लच्छ।
जब कही पवन-सुत बंधु-बात। तब उठी सभा सब हरष-गात।
ज्यौं पावस रितु घन-प्रथम-घोर। जल जीवक, दादर रटत मोर।
जब सुन्यौ भरत पुर-निकट भूप। तब रची नगर-रचना अनूप।
प्रति-प्रति-गृह तोरन-ध्वजा - धूप। सजे सजल कलस अरु कदलि-यूप।
दधि - दूब - हरद, फल-फूल-पान। कर कनक-थार तिय करतिं गान।
सुनि भेरि-वेद-धुनि संख-नाद। सब निरखत पुलकित अति प्रसाद।
देखत प्रभु की महिमा अपार। सब बिसरि गए मन-बुधि-विकार।
जे-जे दसरथ-कुल -कमल- भान। जे कुमुद-जननि-ससि, प्रजा-प्रान।
जे दिवि[2] भूतल सोभा समान। जे-जे-जे सूर, न सब्द आन ॥१६६॥

॥६१०॥

* राग मारू

† वै देखौ रघुपति हैं आवत।
दूरिहिं तैं दुतिया के ससि ज्यौं, ब्योम विमान महा छवि छावत।
सीय सहित वर वीर विराजत, अवलोकत आनंद बढ़ावत।
चारु चाप कर परस सरस सिर मुकुट धरे सोभा अति पावत।
निकट नगर जिय जानि धँसे धर, जन्मभूमि की कथा चलावत।
ये मम अनुज परे दोउ पाइनि, ऐसी बिधि कहि कहि समुझावत।

---

① कंतर—३। ② दोउ—६, ८।

* (ना) गूजरी। † यह पद (वे, शा, वृ, कां स्था) में नहीं है।

ये बसिष्ट कुल-इष्ट हमारे, पालागन कहि सखनि सिखावत।
ये स्वामी, सुग्रीव-विभीषन, भरतहुँ तैं हमकौं जिय भावत।
रिपु-जय, देव-काज, सुख-संपति सकल सूर इनही तैं पावत।
ये अंगद हनुमान कृपानिधि पुर पैठत जिनकौ जस गावत ॥१६७॥

॥ ६११ ॥

राग मारू

देखौ कपिराज, भरत वै आए।

मम पाँवरो सीस पर जाकैं, कर-अँगुरी रघुनाथ बताए।
छीन सरीर बीर के बिछुरैं, राज-भोग चित तैं बिसराए।
तप[1] अरु लघु-दीरघता, सेवा, स्वामि-धर्म सब जगहिँ सिखाए।
पुहुप विमान दूरिहीं छाँड़े, चपल चरन आवत प्रभु धाए।
आनँद-मगन पगनि[2] केकइ-सुत कनक-दंड ज्यौं[3] गिरत उठाए।
भेँटत आँसू परे पीठि पर, बिरह-अगिनि मनु जरत बुझाए।
ऐसेहिँ मिले सुमित्रा-सुत कौं, गदगद गिरा नैन जल छाए।
जथाजोग भेँटे पुरबासी, गए सूल, सुख-सिंधु नहाए।
सिया-राम-लछिमन मुख निरखत, सूरदास के नैन सिराए ॥१६८॥

॥६१२॥

* राग मारू

अति सुख कौसिल्या उठि धाई।
उदित बदन मन[4] मुदित सदन तैं, आरति साजि सुमित्रा ल्याई।

---

① लघु दीरघ तपसा अरु सेवा—१, १६। ② सदन सुत कैकयि—१, १६। दुहुनि के ऐसे—२, ३। दुहुनि को ऐसो—८। ③ मनो करहिँ उठाए—२। ④ अरु—१, २, ६, ८, १६, १८, १६।

* (ना) बिलावल।

जनु सुरभी बन बसति बच्छ बिनु, परबस पसुपति[1] की बहराई।
चली साँझ समुहाइ स्रवत थन, उमँगि मिलन जननी दोउ आई।
दधि-फल-दूब कनक-कोपर भरि, साजत सौंज बिचित्र बनाई।
अमी-बचन सुनि होत कुलाहल, देवनि दिवि दुंदुभी बजाई।
बरन[2]-बरन पट परत पाँवड़े, बीथिनि सकल सुगंध सिँचाई।
पुलकित-रोम, हरष-गदगद-स्वर, जुवतिनि मंगल-गाथा गाई।
निज मंदिर मैं आनि तिलक दै, द्विज-गन मुदित असीस सुनाई।
सिया-सहित सुख बसौ इहाँ तुम, सूरदास नित उठि बलि जाई ॥१६६॥

॥६१३॥

राम-दर्शन

* राग बिलावल

† देखन कौं मंदिर आनि चढो।
रघुपति-पूरनचंद बिलोकत, मनु[3] पुर-जलधि-तरंग बढ़ी।
प्रिय-दरसन-प्यासी अति आतुर, निसि-बासर गुन-ग्राम रढ़ी।
रही न लोक-लाज मुख निरखत, सीस नाइ आसीस पढ़ी।
भई देह जो खेह करम-बस, जनु तट गंगा अनल दढ़ी।
सूरदास प्रभु दृष्टि सुधानिधि, मानौ फेरि बनाइ गढ़ी ॥१७०॥

॥६१४॥

---

① पसुपति के फिरि जाई—१६। पसुपति खिन—१८। ② सुरंग—६। स्वरन—८।

* (ना) सूहौ। (ना) मारू। (क) पूर्वी।

† यह पद (ल, श, का, ना, कां) में दो स्थानों पर है। एक तो यहाँ और एक उस स्थान पर जहाँ राम-लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ जनकपुर गए हैं। परंतु यह इसी स्थान के उपयुक्त समझकर रक्खा गया है।

③ मानौ उदधि—१, २, ३, १६।

* राग मारू

मनिमय आसन आनि धरे।
दधि-मधु-नीर कनक के कोपर आपुन[1] भरत भरे।
प्रथम भरत बैठाइ बंधु कौं, यह कहि पाइ परे।
हौं[2] पावौं प्रभु-पाइ पखारन, रुचि करि सेा पकरे।
निज कर चरन पखारि प्रेम-रस आनँद-आँसु ढरे।
जनु[3] सीतल सौं तप्त सलिल दै, सुखित समोइ करे।
परसत पानि-चरन-पावन, दुख अँग-अँग सकल हरे।
सूर सहित आमोद[4] चरन-जल लै करि सीस धरे ॥१७१॥
॥६१५॥

* राग आसावरी

बिनती किहिँ बिधि प्रभुहिँ सुनाऊँ ?
महाराज रघुबीर धीर कौं, समय न कबहूँ पाऊँ !
जाम रहत जामिनि के बीतैं, तिहिँ औसर उठि धाऊँ।
सकुच होत सुकुमार नींद मैं, कैसैं प्रभुहिँ जगाऊँ।
दिनकर-किरनि-उदित, ब्रह्मादिक-रुद्रादिक इक ठाऊँ।
अगनित भीर अमर-मुनि[5] गन की, तिहिँ तैं ठौर न पाऊँ।
उठत सभा दिन मधि[6], सैनापति-भीर देखि, फिरि आऊँ।
न्हात-खात सुख करत साहिबी, कैसैं करि अनखाऊँ।

---

* (ना) सूहो बिलावल।
① आने—३, ६, ८। ② हौं पावन प्रभु चरन पखारौं—१, २, ११। ③ ज्यौं सीतल संताप सलिल दै सुद्धि (सुखद) समूह करे—१, ११। ④ पुर लोग—१६।
* (ना) अहीरी। (ना) मारू।
⑤ मँगतन की—२। ⑥ मध्य सिया पति देखि भीर—१।

रजनी-मुख आवत गुन-गावत, नारद तुंबुर नाऊँ।
तुमहीँ कहौ कृपानिधि[1] रघुपति, किहिँ[2] गिनती मैँ आऊँ?
एक उपाउ करौ कमलापति[3], कहौ तौ कहि समुझाऊँ।
पतित-उधारन नाम सूर प्रभु, यह रुक्का[4] पहुँचाऊँ ॥१७२॥
॥६१६॥

कच-देवयानी-कथा राग भैरौ

अविगत-गति कछु समुझि न परै। जो कछु प्रभु चाहै सो करै।
जिव कौ कियौ कछू नहिँ होइ। कोटि उपाव करौ किन कोइ।
एक बार सुरपति मन आई। सुक्र असुर[5] कौँ लेत जिवाई।
मम गुरुहू विद्या पढ़ि आवै। मृतक सुरनि कौँ फेरि जिवावै।
निज गुरु सौँ भाष्यौ तिन जाइ। सुक्र असुर कौँ लेत जिवाइ।
तुमहूँ यह विद्या पढ़ि आवौ। मृतक सुरनि कौँ तुमहुँ जिवावौ।
तब तिन कच कौँ दियौ पठाइ। कह्यौ सुक्र कौँ तिन सिर नाइ।
मैँ आयौ तुम पै रिषिराइ। तुम मोहिँ विद्या देहु पढ़ाइ।
सुक्र कह्यौ तासौँ या भाइ। दैहौँ विद्या तोहिँ पढाइ।
विद्या पढै करै गुरु-सेव। सब बिधि सोधै ताकी टेव।
सुक्र-सुता देवयानी नाम। सब गुन-पूर्न रूप-अभिराम।
सुरगुरु-सुत कौँ देखि लुभाई। देखै ताहि पुरुष की नाईँ।
काल बितीत कितिक जब भयौ। गाइ चरावन कौँ सो गयौ।
असुरनि मिलि यह कियौ बिचार। सुरगुरु-सुत कौँ डारैँ मार।

---

① कृपन हौं—१, २, ३, १८, १६। ② किहि बिधि दुख समु- झाऊँ—१। ③ कमला सौं श्री- मुख भेद सुनाऊँ—३। ④ कागद —१। कागर—१६। ⑤ असुरनि—२, ३, ६, ८, १६।

जौ यह संजीवनि पढ़ि जाइ। तौ हम-सत्रुनि लेइ जिवाइ।
यह बिचार करि कच कौं मारयौ। सुक्र-सुता दिन पंथ निहारयौ।
साँझ भएँ हूँ जब नहिँ आयौ। सुक्र पास तिनि जाइ सुनायौ।
सुक्र हृदय मैं कियौ बिचार। कह्यौ असुरनि उहिँ डारयौ मार।
सुता कह्यौ तिहिँ फेरि जिवावौ। मेरे जिय कौ सोच मिटावौ।
सुक्र ताहि पढ़ि मंत्र जिवायौ। भयौ तासु तनया कौ भायौ।
पुनि हति मदिरा माहिँ मिलाइ। दियौ दानवनि रिषिहिँ पियाइ।
तब तैं हत्या मद कौं लागी। यहै जानि सब सुर[1]-मुनि त्यागी।
साप दियौ ताकौं इहिँ भाइ। जो तोहिँ पियै सो नरकहिँ जाइ।
कच बिनु सुक्र-सुता दुख पायौ। तब रिषि तासौं कहि समुझायौ।
मारयौ कच कौं असुरनि धाइ। मदिरा मैं मोहिँ दियौ पियाइ।
ताहि जिवाऊँ तौ मैं मरौं। जो तुम कहौ सो अब मैं करौं।
कह्यौ बिनय करि सुनु रिषिराइ। दोउ जीवैं सो करौ उपाइ।
संजीवनि तब कचहिँ पढ़ाई। तासौं पुनि यौं कह्यौ बुझाई।
जब तुम निकसि उदर तैं आवहु। या विद्या करि मोहिँ जिवावहु।
उदर फारि तिहिँ बाहर कियौ। मिरतक कच ऐसी बिधि जियौ।
सो जब उदर तैं बाहर आयौ। संजीवनि पढ़ि सुक्र जिवायौ।
बहुतक काल बीति जब गयौ। कच रिषि रिषि-तनया सौं कह्यौ।
अब मैं तुम्हरी आज्ञा पाइ। तात-मातु कौं देखौं जाइ।

---

(१) देवनि—१,१६। रिषिन तियागी—२, ३।

रिषि-तनया कह्यौ मोहिँ बिवाहि । कच कह्यौ तू गुरु-भगिनी आहि ।
तब तिन साप दियौ या भाइ । विद्या पढी सेा बिरथा जाइ ।
कचहूँ ताहि कही या भाइ । बिप्र[1] पुरुष तोहिँ मिलै[2] न आइ ।
यह कहि कच अपनैँ गृह आयौ । पिता - पास वृत्तांत सुनायौ ।
सुक नृप सौँ ज्यौँ कहि समुझायौ । सूरदास त्यौँही कहि गायौ ॥१७३॥

॥ ६१७ ॥

देवयानी-ययाति-विवाह राग भैरौं

दानव बृषपर्वा बल भारी । नाम स्रमिष्ठा तासु कुमारी ।
तासु देवयानो सौँ प्यार । रहै न तासौँ पल भर न्यार ।
एक बार ताकैँ मन आई । न्हावन-काज तड़ाग[3] सिधाई ।
ता सँग दासी गईँ अपार । न्हान लगीं सब बसन[4] उतार ।
अँधियारी आई तहँ भारी । दनुज-सुता तिहिँ तैँ न निहारी ।
बसन सुक्र-तनया के लीन्हे । करत उतावलि परे न चीन्हे ।
सुक्र-सुता जब आई बाहर । बसन न पाए तिन ता ठाहर ।
असुर-सुता कौँ पहिरे देखि । मन मेँ कीन्हौ क्रोध बिसेषि ।
कह्यौ मम बसन नहीँ तुव जोग । तुम दानव, हम तपसी लोग ।
मम पितु दियौ राज नृप करत । तू मम बसन हरत नहिँ डरत ।
तिन कह्यौ, तुव पितु भिच्छा खात । बहुरि कहति हमसौँ यौँ बात !
या बिधि कहि, करि क्रोध अपार । दीन्यौ ताहि कूप मेँ डार ।

---

① राजा पुरुष मिलै तोहिँ— मिलिहै—८ । ② वरै—३ । ④ कपरे डारि—१, १६ ।
६ । नृपति पुरुष तोहिँ ③ प्रयाग—१, ३, ६, ८, १६ ।

नृपति जजाति अचानक आयौ। सुक्र-सुता कौ दरसन पायौ।
दियौ तब बसन आपनौ डारि। हाथ पकरि कै लियौ निकारि।
बहुरि नृपति निज गेह सिधायो। सुता सुक्र सौं जाइ सुनायो।
सुक्र क्रोध करि नगरहिं त्याग्यौ। असुर नृपति सुनि रिषि-सँग लाग्यौ।
जब बहु भाँति बिनय नृप करी। तब रिषि यह बानी उच्चरी।
मम कन्या प्रसन्न ज्यौं होइ। करौ असुर-पति अब तुम सोइ।
सुक्र-सुता सौं कह्यौ तिन आइ। आज्ञा होइ सो करौं उपाइ।
जो तुम कहौ करौं अब सोइ। तव पुत्री मम दासी होइ।
नृप पुत्री दासी करि ठई। दासी सहस ताहि सँग दई।
सो सब ताकी सेवा करैं। दासी भाव हृदय मैं धरैं।
इक दिन सुक्र-सुता मन आई। देखौं जाइ फूल फुलवाई।
लै दासिनि फुलवारी गई। पुहुप-सेज रचि सोवत भई।
असुर-सुता तिहिं व्यजन डुलावै। सोवत सेज सो अति सुख पावै।
तिहिं अवसर जजाति नृप आयौ। सुक्र-सुता तिहिं बचन सुनायौ।
नृप मम पानि-ग्रहन तुम करौ। सुक्र-सँकोच हृदय मति धरौ।
कच कौं प्रथम दियौ मैं साप। उनहूँ मोहिं दियौ करि दाप।
ताकौं[1] कोउ न सकै मिटाइ। तातैं ब्याह करौ तुम राइ।
नृप कह्यौ, कहौ सुक्र सौं जाइ। करिहौं जो कहिहैं रिषिराइ।
तब तिनि कह्यौ सुक्र सौं जाइ। कियो ब्याह रिषि नृपति बुलाइ।
असुर-सुता ताकैं सँग दई। दासी सहस ताहि सँग भई।

---

(१) ब्राह्मन वर मोहिं मिलै न राइ—१६।

दंपति भोग करत सुख पाए। सुक्र-सुता पुनि द्वै सुत जाए।
कह्यौ स्वमिष्ठा अवसर पाइ। रति कौ दान देहु मोहिँ राइ।
नृप ताहू सौं कीन्यौ भोग। तीनि पुत्र भए बिधि-संजोग।
सुक्र-सुता तिन पुत्रनि देखि। मन मैं कीन्यौ क्रोध बिसेषि।
कह्यौ, सरमिष्ठा सुत कहँ पाए? उनि कह्यौ, रिषि-किरपा तैं जाए।
बहुरि कह्यौ, रिषि कौ कहि नाम? कह्यौ, स्वप्न देख्यौ अभिराम[1]।
पुनि पुत्रनि उन पूछ्यौ जाइ। पिता-नाम मोहिँ कहौ बुझाइ।
बड़ैं पुत्र भाष्यौ यौं ताहि। नृपति जजाति पिता मम आहि।
सुनि नृप सौं कियौ जुद्ध बनाइ। बहुरि सुक्र सेंती कह्यौ जाइ।
पाछे तैं जजातिहूँ आयौ। रिषि तासौं यह बचन सुनायौ।
तैं जोबन मद तैं यह कीन्यौ। तातैं साप तोहिँ मैं दीन्यौ।
जरा अबहिँ तोहिँ व्यापै आइ। बिरध भयौ तब कह्यौ सिर नाइ।
रिषि, तुम तौ सराप मोहिँ दयौ। पूरनकाम नाहिँ मैं भयौ।
तातैं जो मोहिँ आज्ञा होइ। आयसु मानि करौं अब सोइ।
कह्यौ, जरा तेरी सुत लेइ। अपनौ तरुनापौ तोहिँ देइ।
भोगि मनोरथ तब तू पावै। मेरौ बचन बृथा नहिँ जावै।
बड़े पुत्र जदु सौं कह्यौ आइ। उन कह्यौ, बृद्ध भयौ नहिँ जाइ।
नृप कह्यौ, तोहिँ राज नहिँ होइ। बृद्धपनौ लै राजा सोइ।
औरनिहूँ सौं नृप जब भाष्यौ। नृपति बचन काहूँ नहिँ राख्यौ।

---

① निसि बाम—२, ८। ६। वसुनाम—११।
निसिताम—३। निसिवास—

लघु सुत नृपति-बुढ़ापौ लयौ। अपनौ तरुनापौ तिहिँ दयौ।
बरष सहस्र भोग नृप किये। पै संतोष न आयौ हिये।
कह्यौ, बिषय तैँ तृप्ति न होइ। भोग करौ कितनौ किन कोइ।
तब तरुनापौ सुत कौं दीन्हौ। बृद्धपनौ अपनौ फिरि लीन्हौ।
बन मैँ करी तपस्या जाइ। रह्यौ हरि-चरननि सौँ चित लाइ।
या बिधि नृपति कृतारथ भयौ। सो राजा मैँ तुमसौँ कह्यौ।
सुक ज्यौँ नृप कौं कहि समुझायौ। सूरदास त्यौँही कहि गायौ ॥१७४॥

॥ ६१८ ॥

*

दशम स्कंध

* राग सारंग

† ब्यास कह्यौ सुकदेव सौं, श्रीभागवत बखानि ।
द्वादस[1] स्कंध परम सुभ[2], प्रेम-भक्ति की खानि ।
नव स्कंध नृप सौं कहे[3], श्रीसुकदेव सुजान ।
सूर कहत अब दसम कौं, उर धरि[4] हरि कौ ध्यान ॥ १ ॥

॥ ६१६ ॥

* राग बिलावल

‡ हरि-हरि, हरि-हरि, सुमिरन करौ । हरि - चरनारबिंद उर धरौ ।
जय अरु बिजय पारषद दोइ । बिप्र-सराप असुर भए सोइ ।
दोउ जन्म ज्यौं हरि उद्धारे[5] । सो तौ मैं तुमसौं उच्चारे[6] ।
दंतबक्र - सिसुपाल जो भए । बासुदेव ह्वै सो पुनि हुए ।
औरौ लीला बहु बिस्तार । कीन्हौ जीवनि[7] कौ निस्तार ।
सो अब तुमसौं सकल बखानौं । प्रेम सहित सुनि हिरदै आनौ ।
जो यह कथा सुनै चित लाइ । सो भव तरि बैकुंठहिं जाइ ।
जैसैं सुक नृप कौं समुझायौ । सूरदास त्यौंहीं कहि गायौ ॥ २ ॥

॥६२०॥

---

* (ना) बिलावल ।
† यह पद (के) में नहीं है ।
(१) दशम—१६ । (२) सुभग—१, २, ६, ११, १५ । (३) कही—१, ११ । (४) में धरि हरि—१, ११, १५ । धरि कै हरि—१६ ।
५ (कौं, रा, स्या) सारंग ।
‡ यह पद (के) में नहीं है ।
(५) उद्धारी—१, ११, १५ । (६) उच्चारी—१, ११, १५ । (७) जीवन ज्यौं—१ । ज्यौ कौ त्यौं—३ । ज्यौं गोपनु—६ ।

* राग गौड़ मलार

† आदि सनातन, हरि अबिनासी। सदा निरंतर घट-घट-बासी।
पूरन ब्रह्म, पुरान बखानैं। चतुरानन, सिव[1], अंत न जानैं।
गुन[2]-गन अगम, निगम नहिं पावै। ताहि जसोदा गोद खिलावै।
एक निरंतर ध्यावै ज्ञानी[3]। पुरुष पुरातन सो निर्बानी।
जप-तप-संजम-ध्यान न आवै। सोइ नंद कैं आँगन धावै।
लोचन-स्रवन न रसना-नासा। बिनु[4] पद-पानि करै परगासा।
बिस्वंभर निज नाम कहावै। घर-घर गोरस सोइ चुरावै।
सुक-सारद से करत बिचारा। नारद से पावहिं नहिं पारा।
अबरन[5], बरन सुरति नहिं धारै। गोपिनि के सो बदन निहारै।
जरा-मरन तैं रहित, अमाया। मातु, पिता, सुत, बंधु न जाया।
ज्ञान-रूप हिरदै मैं बोलै। सो बछरनि के पाछैं डोलै।
जल, धर, अनिल, अनल, नभ, छाया। पंचतत्त्व तैं[6] जग उपजाया।
माया प्रगटि सकल जग मोहै। कारन-करन करै सो सोहै।
सिव[7]-समाधि जिहि अंत न पावै। सोइ[8] गोप की गाइ चरावै।
अच्युत[9] रहै सदा जल-साई। परमानंद परम सुखदाई।
लोक रचै राखै अरु मारै। सो ग्वालनि सँग लीला धारै।

---

* (ना) बिभास। (कां) सारंग। (रा, श्या) आसावरी।

† भिन्न-भिन्न प्रतियों में इस पद के चरणों की संख्या तथा क्रम में बड़ा भेद है। यहाँ अधिकांश (वे, गो) के अनुसार क्रम तथा संख्या रक्खी गई है। कुछ प्रतियों में यह पद ब्रह्म स्तुति के अंतर्गत पाया जाता है। परंतु (ना, स, का, कां, रा, श्या) में यह दशम स्कंध के आरंभ में स्तुति रूप से रक्खा है। इसका दशम स्कंध के आरंभ में ही होना विशेष संगत समझकर हमने भी इसको यहीं रक्खा है।

① हूँ—१४। ② महिमा अगम निगम जिहिं गावै—२, ३, ६, १६। ③ ध्यानी—१। ④ ना पद पानि न गुन परकासा—१। ⑤ अरुन असित (हरित) सित बरन न धारै—२, ३, ६, १६। ⑥ मिलि जगत उपायौ—१। ⑦ ब्रह्मादिक—१, १७। ⑧ सो गोकुल में गाइ—१, १७। ⑨ आदि न अंत रहै सेष साई—२, ३।

काल डरै जाकैं डर भारी। सो ऊखल बाँध्यौ महतारी।
गुन अतीत, अविगत, न जनावै। जस अपार, स्रुति पार न पावै।
जाकी महिमा कहत न आवै। सो गोपिनि सँग रास रमावै।
जाकी माया लखै न कोई। निर्गुन-सगुन धरै वपु सोई।
चौदह भुवन पलक मैं टारै। सो बन-बीथिनि कुटी सँवारै।
चरन-कमल नित रमा पलोवै। चाहति नैंकु नैन भरि जोवै।
अगम, अगोचर, लीला-धारी। सो राधा-बस कुंज-बिहारी।
बड़भागी वै सब ब्रजवासी। जिनकैं सँग खेलैं अबिनासी।
॥ जो रस ब्रह्मादिक नहिं पावैं। सो रस गोकुल-गलिनि बहावैं।
॥ सूर सुजस कहि कहा बखानै। गोबिंद की गति गोबिंद जानै ॥३॥

॥ ६२१ ॥

* राग सारंग

† बाल-बिनोद भावती लीला, अति पुनीत मुनि भाषी।
सावधान ह्वै सुनौ परीच्छित, सकल देव-मुनि साखी।
कालिंदी कैं कूल बसत[1] इक मधुपुरि नगर रसाला।
कालनेमि अरु उग्रसेन - कुल, उपज्यौ कंस भुवाला।
आदि - ब्रह्म - जननी, सुर-देवी, नाम देवकी बाला।
दई बिवाहि कंस बसुदेवहिं, दुख[2]-भंजन, सुख-माला।

॥ ये चरण (के, क) में नहीं हैं।

* (ना) आसावरी। (रा) बिलावल।

† कुछ प्रतियों में इस 'पद के कई चरण अधिक मिलते हैं, जो प्रक्षिप्त प्रतीत होते हैं। जान पड़ता है, कथा प्रसंग को देखकर किसी ने बढ़ा दिए हैं। किंतु उनकी शब्द-योजना में बहुत भिन्नता है और कुछ की तो अर्थ-संगति भी नहीं बैठती। इसलिये वे निकाल दिए गए हैं।

① प्रगट—२, १६। निकट—३, ६। ② अघभजन उरमाल। (उरशाला)—१, १४।

हय - गय - रतन - हेम - पाटंबर, आनँद - मंगलचारा ।
समदत भई अनाहत बानी, कंस - कान झनकारा ।
याकी कोखि औतरै जो सुत, करै प्रान - परिहारा ।
रथ तैं उतरि, केस गहि राजा, कियौ खड्ग पटतारा ।
तब बसुदेव दीन ह्वै भाष्यौ, पुरुष न तिय-बध करई ।
मोकौं भई अनाहत बानी, तातैं सोच न टरई ।
आगैं बृच्छ फरै जो बिष-फल, बृच्छ बिना किन सरई[1] ।
याहि मारि, तोहिं और बिवाहौं, अग्र[2]-सोच क्यौं मरई !
यह[3] सुनि सकल देव-मुनि भाष्यौ, राय, न ऐसी कीजै ।
तुम्हरे मान्य बसुदेव-देवकी, जीव-दान इहिं दीजै ।
कीन्यौ जज्ञ होत है निष्फल, कह्यौ[4] हमारौ कीजै ।
याकैं[5] गर्भ अवतरैं जे सुत, सावधान ह्वै लीजै ।
पहिलौ पुत्र देवकी जायौ, लै बसुदेव दिखायौ ।
बालक देखि कंस हँसि दीन्यौ, सब अपराध छमायौ ।
कंस कहा लरिकाई कीनी, कहि नारद समुझायौ ।
जाकौ[6] भरम करत हौ राजा, मति पहिलैं सो आयौ !
यह सुनि कंस पुत्र फिरि माँग्यौ[7], इहिं बिधि सबनि सँहारौ ।
तब देवकी भई अति ब्याकुल, कैसैं प्रान प्रहारौं ।
कंस बंस कौ नास करत है, कहँ लौं जीव[8] उबारौं ।
यह बिपदा कब मेटहिं श्रीपति, अरु हौं काहिं पुकारौं ।

---

① सरियै—२, ३ । ② कौन सोच जिय जरियै—२, ३ । कौन (कहा) सोच दुख जरई—६, १६ । ③ बालक काज धर्म जिनि छाँड़ौ—१, ११, १४ । ④ वेद भंग नहिं कीजै—१, ६, ११, १६ । ⑤ याकी कोप औतरै जो सुत—२, ३, ६, १६ । ⑥ जाके डर तुम करत हौ अपडर—२, ३, १६, १८, १६ । ⑦ मारयौ—१, १५ । ⑧ धीरज धारौं—२ ।

धेनु-रूप धरि पुहुमि पुकारी, सिव-बिरंचि कैँ द्वारा।
सब मिलि गए जहाँ पुरुषोत्तम, जिहिँ गति अगम अपारा।
छीर-समुद्र - मध्य तैँ यौँ हरि, दीरघ बचन उचारा।
उधरौँ धरनि, असुर-कुल मारौँ, धरि नर-तन-अवतारा।
सुर, नर, नाग तथा पसु-पच्छी, सब कौँ आयसु दीन्हौ।
गोकुल जनम लेहु सँग मेरैँ, जो चाहत सुख कीन्हौ।
जेहिँ माया बिरंचि-सिव मोहे, वहै[1] बानि करि चीन्हौ।
देवकि गर्भ अकर्षि रोहिनी, आप[2] बास करि लीन्हौ।
हरि कैँ गर्भ-बास जननी कौ बदन उजारौ लाग्यौ।
मानहुँ सरद-चंद्रमा प्रगट्यौ, सोच-तिमिर तन भाग्यौ।
तिहिँ छन कंस आनि भयौ ठाढ़ौ, देखि महातम जाग्यौ।
अबकी बार आपु आयौ है अरी, अपुनपौ त्याग्यौ।
दिन दस गऐँ देवकी अपनौ बदन बिलोकन लागी।
कंस-काल जिय जानि गर्भ मेँ, अति आनंद सभागी।
सुर-नर-देव बंदना आए[3], सोवत तैँ उठि जागी।
अबिनासी कौ आगम जान्यौ, सकल देव अनुरागी।
कछु दिन गऐँ गर्भ कौ आलस[4], उर-देवकी जनायौ।
कासौँ कहौँ सखी कोउ नाहिँन, चाहति गर्भ दुरायौ।
बुध - रोहिनी - अष्टमी - संगम, बसुदेव निकट बुलायौ।
सकल लोकनायक, सुखदायक, अजन, जन्म धरि आयौ।

---

① सोइ ब्रह्म करि चीन्हो— १४। ② आपुन अंस जो लीन्हो— १, २, ३, ११। आपुन आसन लीन्हो—६। ③ कीन्हौ वसुदेव सोअत जाग्यो—६। ④ आगम— १, २, ३, ११, १४, १६।

माथैं मुकुट, सुभग पीतांबर, उर सोभित भृगु-रेखा।
संख-चक्र-गदा-पद्म बिराजत, अति प्रताप सिसु-भेषा।
जननी निरखि भई तन ब्याकुल, यह न चरित कहुँ देखा।
बैठो सकुचि, निकट पति बोल्यौ, दुहुँनि पुत्र-मुख पेखा।
सुनि देवकि, इक आन जन्म की, तोकौं कथा सुनाऊँ।
तैं माँग्यौ, हौं दियौ कृपा करि, तुम सौ बालक पाऊँ।
सिव-सनकादि आदि ब्रह्मादिक ज्ञान ध्यान नहिं आऊँ।
भक्तबछल बानौ है मेरौ, बिरुदहिं कहा लजाऊँ।
यह कहि मया मोह अरुझाए, सिसु ह्वै रोवन लागे।
अहो बसुदेव, जाहु लै गोकुल, तुम हौ परम सभागे।
घन-दामिनि धरती लौं[1] कौंधै, जमुना-जल सौं पागे।
आगैं जाउँ जमुन-जल गहिरौ[2], पाछैं सिंह जु लागे।
लै बसुदेव धँसे दह सूधे, सकल[3] देव अनुरागे।
जानु, जंघ, कटि, ग्रीव, नासिका, तब[4] लियौ स्याम उछाँगे।
चरन पसारि परसी कालिंदी, तरवा नीर तियागे।
सेष सहस फन ऊपर छायौ, लै गोकुल कौं भागे।
पहुँचे जाइ महर-मंदिर मैं, मनहिं न संका कीनी।
देखी परी जोगमाया, बसुदेव गोद करि लीनी।
लै बसुदेव मधुपुरी पहुँचे प्रगट सकल पुर कीनी।

---

① मिलि गरजै महा कठिन दुख भारे—१, ६, १४। ② बूड़ौं पाछे सिंह दहारे—१ ६, १४। ③ तिहूँ लोक उजियारे—१, ११, १४। ④ वसुदेव मनहिं बिचारे—१, ११, १४।

देवकी-गर्भ भई है कन्या, राइ न बात पतीनी।
पटकत सिला गई आकासहिँ, दोउ भुज चरन लगाई।
गगन गई, बोली सुरदेवी, कंस, मृत्यु नियराई।
जैसेँ मीन जाल मैँ क्रीड़त, गनै न आपु लखाई।
तैसेँहि, कंस, काल उपज्यौ है, ब्रज मैँ जादवराई।
यह सुनि कंस देवकी आगैँ रह्यौ चरन सिर नाई।
मैँ अपराध कियौ, सिसु मारे, लिख्यौ न मेट्यो जाई।
काकैँ[1] सत्रु जन्म लीन्यौ है, बूझै मतौ बुलाई।
चारि पहर सुख-सेज परे निसि, नैँकु नींद नहिँ आई।
जागी महरि, पुत्र-मुख देख्यौ, आनँद-तूर बजायौ।
कंचन-कलस, होम, द्विज-पूजा, चंदन भवन लिपायौ।
बरन-बरन[2] रँग[3] ग्वाल बने, मिलि गोपिनि मंगल गायौ।
बहु[4] बिधि ब्योम कुसुम सुर बरषत, फूलनि गोकुल छायौ।
आनँद भरे करत कौतूहल, प्रेम[5]-मगन नर-नारी।
निर्भय अभय-निसान बजावत, देत महरि कौँ गारी।
नाचत महर मुदित मन कीन्हे, ग्वाल बजावत तारी।
सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे, मथुरा-गर्व-प्रहारो॥ ४॥
॥ ६२२॥

---

(१) आठैँ गर्भ श्रौत-रैगो सुत बूझै (पूछे) मुनी बुलाई—२, १८। (२) बारन बंदनवार बँधाए जुवतिनि—१६। (३) बनवार बनाए जुवतिनि—२। (४) दिसि दिसि तैँ बरषे सुमननि सुर पुसपनि—२, ३। (५) उदित मुदित—२, ३, ६, ६, १७, १८, १६।

* राग बिलावल

† हरि-मुख देखि हो बसुदेव !
कोटि-काम-स्वरूप सुंदर[1], कोउ न जानत भेव ।
चारि भुज जिहिँ चारि आयुध, निरखि कै[2] न पत्याउ !
अजहुँ मन परतीति नाहीँ नंद-घर लै जाउ[3] ।
स्वान[4] सूते, पहरुवा सब, नींद उपजी[5] गेह ।
निसि अँधेरी, बीजु चमकै, सघन बरषै मेह ।
बंदि बेरी सबै छूटी, खुले बज्र - कपाट ।
सीस धरि श्रीकृष्न लीने, चले गोकुल-बाट ।
सिंह-आगैँ, सेष पाछैँ, नदी भइ भरिपूरि ।
नासिका लौं नीर बाढ्यौ, पार पैलो दूरि ।
सीस तैँ हुंकार कीनी, जमुन जान्यौ भेव ।
चरन परसत थाह दीन्ही, पार गए बसुदेव ।
महरि-ढिग उन जाइ राखे, अमर अति आनंद ।
॥ सूरदास बिलास ब्रज-हित, प्रगटे आनँद-कंद ॥ ५ ॥

॥६२३॥

---

* (ना, का, कां, रा) केदारा । (क) सोरठ ।

† यह पद (के, पू) मेँ नहीँ है ।

① बालक—३, ६, १४, १६, १९ । ② लै कर ताउ—१, ११, १५ । लै नृप ताहि—३ । ③ जाहि—३ । ④ झरे तारे परे पहरू—३, ६, १४ १९ । ⑤ आई—१४ ।

॥ (ना, स, का, क, श्या) मेँ इस पद की समाप्ति यहीँ होती है, पर (वे, गो, जै, रा) मेँ चार चरण और हैँ जो प्रक्षिप्त प्रतीत होते है । वे इस संस्करण मेँ नहीँ दिए गए ।

* राग बिलावल

† आनदै आनंद बढ्यौ अति ।
देवनि दिवि दुंदुभी बजाई, सुनि मथुरा प्रगटे जादवपति ।
विद्याधर-किन्नर कलोल मन उपजावत मिलि कंठ अमित गति ।
गावत[1] गुन गंधर्व पुलकि तन, नाचतिँ सब सुर-नारि रसिक अति ।
बरषत सुमन सुदेस सूर सुर[2], जय-जयकार करत, मानत रति ।
सिव-बिरंचि-इंद्रादि अमर मुनि, फूले सुख न समात मुदित-मति ॥ ६ ॥
॥ ६२४ ॥

* राग बिलावल

‡ कमल-नैन ससि-बदन मनोहर, देखौ हो पति अति बिचित्र गति ।
स्याम सुभग तन, पीत-बसन-दुति, सोहैं बनमाला अदभुत अति ।
नव[3]-मनि-मुकुट-प्रभा अति उदित, चित्त-चकित अनुमान[4] न पावति ।
अति प्रकास निसि विमल, तिमिर छर[5], कर मलि-मलि निज पतिहिँ जगावति ।
दरसन-सुखी, दुखी अति सोचति, षट सुत-सोक-सुरति उर आवति ।
सूरदास प्रभु होहु पराकृत[6], अस कहि भुज के चिह्न दुरावति ॥ ७ ॥
॥ ६२५ ॥

---

* (ना) सूहो । (पू) भूपाली ।

† यह पद (के) में नहीं है ।

① गावत गगन धरनि धुनि सुनियत गरजत घन तेहि काल जतन जति—१, ११, १४, १५ ।

② घन गरजत थेई थेई ताल जतन जति—१६ ।

* (का) बिहागरो ।

‡ यह पद (वे, स, का गो, जै, रा) में है परतु इन सब प्रतियों में पाठ भिन्नता के कारण एक छद नहीं मिलता । इस संस्करण मे छद की एकता कर दी गई है ।

③ नख—१, १५ । सुख—१८ । ④ उपमान—१८ । ⑤ छुटि—१ । छुटि— ६, १५ । ⑥ शुद्ध शब्द 'प्राकृत' है किंतु छंद की सुविधा के लिये 'पराकृत' किया गया ।

* राग बिहागरौ

† देवकी मन-मन चकित भई ।

देखहु आइ पुत्र-मुख काहे न, ऐसी कहुँ देखी न दई ।
सिर पर मुकुट, पीत उपरैना, भृगु-पद उर, भुज चारि धरे ।
पूरब कथा सुनाइ कही हरि, तुम माँग्यौ इहिँ भेष करे ।
छोरे निगड़, सोआए पहरू, द्वारे कौ कपाट उघरचौ ।
तुरत मोहिँ गोकुल पहुँचावहु, यह कहि कै सिसु बेष धरचौ ।
तब बसुदेव उठे यह सुनतहिँ, हरषवंत नँद-भवन गए ।
बालक धरि, लै सुरदेवी कौं, आइ सूर मधुपुरी ठए ॥ ८ ॥

॥ ६२६ ॥

* राग केदारौ

अहो पति सो उपाइ कछु कीजै ।

जिहिँ उपाइ[1] अपनौ यह बालक, राखि कंस सौं लीजै ।
मनसा, बाचा, कहत कर्मना, नृप कबहूँ न पतीजै ।
बुधि[2], बल, छल, कल, कैसेँहु करिकै, काढ़ि अनतहीँ दीजै ।
नाहिँ न इतनौ भाग जो यह रस, नित लोचन-पुट पीजै ।
सूरदास[3] ऐसे सुत कौ जस, स्रवननि सुनि-सुनि जीजै ॥ ९ ॥

॥६२७॥

---

* (ना) गुनकली । (का, क) केदारो ।

† यह पद (के, पू) में नहीँ है ।

* (ना) मालकौस ।

① तिहिँ विधि दुराइ—१, ११, १२ । ② छल बल करि उपाय कैसैहूँ—२, ३, १६ ।

③ सुनहु सूर ऐसे सुत कौ मुख निरखि निरखि जग जीजै—१, ६, ११, १४, १५ ।

* राग केदारौ

सुनि देवकी को हितू हमारे !
असुर कंस अपबंस बिनासन, सिर ऊपर बैठे रखवारे ।
ऐसौ को समरथ त्रिभुवन मैं, जो यह बालक नैकु उबारै ।
खड़ग धरे आवै, तुव देखत, अपनैं कर छिन माहँ पछारै ।
यह सुनतहिं अकुलाइ गिरी धर, नैन नीर भरि-भरि दोउ ढारै ।
दुखित देखि बसुदेव-देवकी, प्रगट भए धरि कै भुज चारै ।
बोलि उठे परतिज्ञा करि प्रभु, मोतैं उबरै तब मोहिं मारै ।
अति दुख मैं सुख दै पितु-मातहिं, सूरज-प्रभु नँद-भवन सिधारे ॥१०॥
॥६२८॥

* राग केदारौ

भादौं की अध-राति अँध्यारी ।
द्वार-कपाट-कोट भट रोके, दस[1] दिसि कंत कंस-भय भारी ।
गरजत मेघ, महा डर लागत, बीच बढी जमुना जल-कारी ।
तातैं यहै सोच जिय मोरैं, क्यौं दुरिहै ससि[2]-बदन-उज्यारी ।
तब[3] कत कंस रोकि राख्यौ पिय, बरु वाही दिन काहैं न मारो ।
कहि, जाकौ ऐसौ सुत बिछुरै, सो कैसैं जीवै महतारी ?
सुनि[4]-सुनि दीन बचन जननी के, दीनबंधु भक्तनि भयहारी ।
छोरे निगड़, कपाट उघारे, सूर सु[5] मघवा बृष्टि निवारी ॥११॥
॥६२९॥

---

* (ना) मालकौस। (का, के, क, पू) बिहागरौ। (रा) भैरव।
* (ना) सूहो। (कां) धनाश्री।
① दुहुँ—६, १४। ② सिसु—३। ③ कत पिय बोल वचन करि राखी—१, ६, ११, १५। ④ करि न विलाप देवकी सों कहि दीनदयाल भक्त भयहारी —१, ६, ११, १५। ⑤ सुमति दै बिपति निवारी—१, ६, ११, १५।

* राग धनाश्री

अँधियारी भादौं की रात ।
बालक-हित बसुदेव-देवकी, बैठि बहुत पछितात ।
बीच नदी, घन गरजत बरषत, दामिनि कौंधति जात ।
बैठत-उठत सेज-सोवत मैं कंस-डरनि अकुलात ।
गोकुल बाजत सुनी बधाई, लोगनि हियैं सुहात ।
सूरदास आनंद नंद कैं, देत कनक नग दात ॥ १२ ॥
॥ ६३० ॥

* राग बिलावल

† गोकुल प्रगट भए हरि आइ ।
अमर[1]-उधारन, असुर-सँहारन, अंतरजामी त्रिभुवनराइ ।
माथैं धरि बसुदेव जु ल्याए, नंद-महर-घर गए पहुँचाइ ।
जागो महरि, पुत्र-मुख देख्यौ, पुलकि अंग उर मैं न समाइ ।
गदगद कंठ, बोल नहिं आवै, हरषवंत ह्वै नंद बुलाइ ।
आवहु कंत, देव परसन भए, पुत्र भयौ, मुख देखौ धाइ ।
दौरि नंद गए, सुत-मुख देख्यौ, सो सुख मोपै बरनि न जाइ ।
सूरदास पहिलैं ही माँग्यौ, दूध-पियावन जसुमति माइ ॥ १३ ॥
॥ ६३१ ॥

---

* (ना) गुनकली । (का) केदारा । (के, पू) मलार । (कां) देवगधार ।

(ना) रामकली । (क) आसावरी ।

† यह पद (के, पू) में नहीं है ।

① अधम—६ ।

* राग गांधार

† उठौं सखी सब मंगल गाइ ।
जागु जसोदा, तेरैं बालक उपज्यौ, कुँवर[1] कन्हाइ ।
जो तू रच्यौ-सच्यौ या दिन कौं, सो सब देहि मँगाइ ।
देहि दान बंदी जन गुनि-गन, ब्रज-बासिनि पहिराइ ।
तब हँसि कहति जसोदा ऐसैं, महरहिं लेहु बुलाइ ।
प्रगट भयौ पूरब तप कौ फल, सुत-मुख देखौ आइ ।
आए नंद हँसत तिहिं औसर, आनँद उर न समाइ ।
सूरदास ब्रज बासी हरषे, गनत न राजा-राइ ॥ १४ ॥
॥ ६३२ ॥

* राग नायकी

‡ जसुदा, नार न छेदन दैहौं ।
मनिमय जटित हार ग्रीवा कौ, वहै आजु हौं लैहौं ।
औरनि के हैं गोप-खरिक बहु, मोहिं गृह एक तुम्हारौ ।
मिटि जु गयौ संताप जनम कौ, देख्यौ नंद-दुलारौ ।
बहुत दिननि की आसा लागी, झगरिनि झगरौ कीनौ ।
मन मैं बिहँसि तबै नँदरानी, हार हिये कौ दीनौ ।
जाकैं नार आदि ब्रह्मादिक, सकल - बिस्व-आधार ।
सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे, मेटन कौं भू - भार ॥ १५ ॥
॥ ६३३ ॥

---

* (रा) गौरी ।
† यह पद केवल (स, शा, गो, रा) में है ।
① त्रिभुवन राइ — ११, १८ । (कां) देवगंधार ।
‡ यह पद केवल (गो, कां) में है ।

* राग देवगंधार

† झगरिनि तैं हौं बहुत खिझाई ।
कंचन-हार दिऐं नहिं मानति, तुहीं अनोखी दाई ।
बेगिहिं नार छेदि बालक कौ, जाति बयारि भराई ।
सत संजम, तीरथ-व्रत कीन्हैं, तब यह संपति पाई ।
मेरौ चीत्यौ भयौ नँदरानी, नंद-सुवन सुखदाई ।
दीजै बिदा, जाउँ घर अपनैं, काल्हि साँझ की आई ।
इतनी सुनत मगन ह्वै रानी बोलि लए नँदराई ।
सूरदास कंचन के अभरन लै झगरिनि पहिराई ॥ १६ ॥
॥ ६३४ ॥

* राग धनाश्री

‡ जसुमति लटकति पाइ परै ।
तेरौ भलौ मनैहौं झगरिनि, तू मति मनहिं डरै ।
दीन्हौ हार गरैं, कर कंकन, मोतिनि थार भरै ।
सूरदास स्वामी प्रगटे हैं, औसर पै[1] झगरै ॥ १७ ॥
॥ ६३५ ॥

राग बिहागरौ

§ हरि कौ नार न छीनौं माई ।
पूत भयौ जसुमति रानी कैं, अर्द्धरात हौं आई ।

---

* (कां) कान्हरा ।
† यह पद केवल (गो, कां) में है ।
‡ यह पद केवल (वे, गो, जौ, का) में है ।
§ यह पद केवल (गो) में है ।
[1] पाइ—१, ११, १२ ।

अपने मन कौ भायौ लैहौं, मोतिनि थार भराई ।
यह औसर कब ह्वैहै फिरि कै, पायौ देव मनाई ।
उठी रोहिनी परम अनंदित, हार-रतन लै आई ।
नार छीनि तब सूर स्याम कौ, हँसि-हँसि देति बधाई ॥ १८ ॥
॥६३६॥

* राग बिलावल

नंदराइ कैं नवनिधि आई ।
माथैं मुकुट, स्रवन मनि-कुंडल, पीत बसन, भुज चारि सुहाई ।
बाजत ताल-मृदंग जंत्र-गति, चरचि अरगजा अंग चढाई ।
अच्छत दूब लिये रिषि[1] ठाढे, बारनि बंदनवार बँधाई ।
छिरकत हरद दही, हिय हरषत, गिरत[2] अंक भरि लेत उठाई ।
सूरदास सब मिलत परस्पर, दान देत नहिं नंद अघाई ॥१९॥
॥६३७॥

* राग बिलावल

आजु बन कोऊ वै जनि जाइ ।
सब गाइनि बछरनि समेत, लै आनहु चित्र बनाइ ।
ढोटा[3] है रे भयौ महर कैं, कहत सुनाइ-सुनाइ ।
सबहि घोष मैं भयो कुलाहल, आनँद उर न समाइ ।

---

* (ना) जैतश्री (के, पू) केदारा (गो क) आसावरी (कां, रा) कान्हरा ।

① द्विज—६ । ② अरत परत पुनि देत—२, ३ । उलटि (पलटि) परत अरु—६, १७ ।

* (ना, के, कां, पू, रा) आसावरी (का) देवगधार (क) गूजरी ।

③ बेटा—६ । बालक—१६, १८, १९ ।

कत हौ गहर करत बिन[1] काजैं, बेगि चलौ उठि धाइ ।
अपने-अपने मन कौ चीत्यौ, नैननि देख्यौ आइ ।
एक फिरत दधि दूब धरत[2] सिर, एक रहत गहि पाइ ।
एक परस्पर देत बधाई, एक उठत हँसि गाइ ।
बालक-बृद्ध-तरुन-नरनारिनि, बढ्यौ चौगुनौ चाइ ।
सूरदास सब प्रेम-मगन भए, गनत न राजा-राइ ॥ २० ॥

॥ ६३८ ॥

* राग रामकली

† हौं इक नई बात सुनि आई ।
महरि जसोदा ढोटा जायौ, घर[4]-घर होति बधाई ।
द्वारैं भोर गोप-गोपिनि की, महिमा बरनि न जाई ।
अति आनंद होत गोकुल मैं, रतन भूमि सब छाई ।
नाचत बृद्ध, तरुन अरु बालक, गोरस-कीच मचाई ।
सूरदास स्वामी[5] सुख-सागर, सुंदर स्याम कन्हाई ॥ २१ ॥

॥ ६३९ ॥

* राग रामकली

† हौं सखि, नई चाह इक[6] पाई ।
ऐसे दिननि नंद कैं सुनियत, उपज्यौ पूत कन्हाई ।

---

① रे भैया—१, ११ । ② बँधावत—१, ११ । लिए कर—९ ।

* (नी) मलार (क) धनाश्री (कां) सारंग (रा) बिलावल ।

† यह पद (के, पू) में नहीं है ।

③ आजु इक भली बात—२, ३, १६, १८, १९ । ④ आगन बजति—२, ३, १६, १८, १९ । ⑤ प्रभु अंतरजामी नंद-सुवन सुखदाई—२, ३, १६, १८ १९ ।

* (ना) मलार ।

‡ यह पद (के, पू) में नहीं है ।

⑥ सुनि आई—२, ३, १८ १९ ।

बाजत पनव-निसान पंचबिध, रुंज - मुरज-सहनाई ।
महर-महरि ब्रज[1]-हाट लुटावत, आनँद उर न समाई ।
चलौ सखी, हमहूँ मिलि जैऐ, नैंकु करौ अतुराई ।
कोउ भूषन पहिरचौ, कोउ पहिरति, कोउ वैसैंहि उठि धाई ।
कंचन-थार दूब-दधि-रोचन, गावति चारु बधाई ।
भाँति-भाँति बनि चलीं जुवति जन, उपमा बरनि न जाई ।
अमर बिमान चढे सुख देखत, जै-धुनि-सब्द सुनाई ।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत-हित, दुष्टनि के दुखदाई ॥ २२ ॥
॥ ६४० ॥

* राग गूजरी

सखि री, काहैं गहरु लगावति ?
सब कोऊ ऐसो सुख सुनि कै, क्यौं नाहिंन उठि धावति ।
आजु सो बात बिधाता कीन्ही, मन जो हुती अति भावति ।
सुत कौ जन्म जसोदा कैं गृह, ता लगि तुम्हैं बुलावति ।
कनक-थार भरि, दधि-रोचन लै, बेगि चलौ मिलि गावति ।
साँचैंहि सुत भयो नँद-नायक कैं, हौं[2] नाहीं बौरावति ।
आनँद[3] उर अचल न सम्हारति, सीस सुमन बरषावति ।
सूरदास सुनि[4] जहाँ-तहाँ तैं आवत सोभा पावति ॥२३॥
॥६४१॥

---

(१) दोउ हाट—२, ३, १८ । दोउ हाथ—१६ ।

* (ना) ललित (के, कौ) आसावरी (रा) धनाश्री ।

(२) काहे कौं—२, ३, १८, १६ । (३) अचरा उडत सिथिल चोटी सिर सुमन सुधा बरषावति—३ । अचल उड़त सिथिल कबरी सीसु सुमन सघन बरषावति—१६ । (४) सोभा (सोभित) तिहिं औसर जहां तहा तैं आवति—१, ११, १५ ।

राग आसावरी

ब्रज भयो महर कैँ पूत, जब यह बात सुनी ।
सुनि आनंदे सब लोग, गोकुल-गनक-गुनी ।
अति पूरन पूरे पुन्य, रोपी सुथिर[1] थुनी ।
ग्रह-लगन-नषत-पल[2] सोधि, कीन्हो बेद-धुनी ।
सुनि धाईँ सब ब्रजनारि, सहज सिँगार किये ।
तन पहिरे नूतन चीर, काजर नैन दिये ।
कसि कंचुकि, तिलक लिलार, सोभित हार हिये ।
कर-कंकन, कंचन-थार, मंगल-साज लिये ।
सुभ स्रवननि तरल तरौन, बेनी सिथिल गुही ।
सिर बरषत सुमन सुदेस, मानौ मेघ फुही ।
मुख मंडित रोरी रंग, सेँदुर माँग छुही ।
उर अचल उड़त न जानि, सारी सुरँग सुही ।
ते अपनैँ-अपनैँ मेल, निकसीँ भाँति भली ।
मनु लाल-सुनैयनि पाँति, पिँजरा[3] तोरि चली ।
गुन गावत मंगल-गीत, मिलि दस पाँच अली ।
मनु भोर भएँ रवि देखि, फूलीँ कमल-कली ।
पिय[4]-पहिलैँ पहुँचीँ जाइ अति आनंद भरीँ ।
लइँ भीतर भवन बुलाइ, सब सिसु-पाइ परीँ ।
इक बदन उघारि निहारि, देहिँ असीस खरी ।
चिरजीवौ जसुदा-नंद, पूरन-काम करी ।

---

① अटल—१, ११, १४ । बल—१, ११, १६ । सब—६ । १५ । पिँजरा जोरि—२, १८ । सुघर—२ । सुफल—६ । ② ③ पि जर चूरि—१, ६, ११, ④ इक—२, ३, ६, १८ ।

धनि दिन है, धनि यह राति, धनि-धनि पहर घरी।
धनि-धन्य महरि की कोख, भाग-सुहाग भरी।
जिनि जायौ ऐसौ पूत, सब सुख-फरनि फरी।
थिर थाप्यौ सब परिवार, मन की मूल हरी।
सुनि ग्वालनि गाइ बहोरि, बालक बोलि लए।
गुहि गुंजा घसि बनधातु, अंगनि चित्र ठए।
सिर दधि-माखन के माट, गावत गोत नए।
डफ-झाँझ-मृदंग बजाइ, सब नँद-भवन गए।
मिलि नाचत करत कलोल, छिरकत हरद-दही।
मनु बरषत भादौं मास, नदी घृत-दूध बही।
जब जहाँ-जहाँ चित जाइ, कौतुक तहीं-तहीं।
सब आनँद-मगन गुवाल, काहूँ बदत[1] नहीं।
इक धाइ नंद पै जाइ, पुनि-पुनि पाइ परैं।
इक आपु आपुहीं माहिं, हँसि-हँसि मोद भरैं।
इक अभरन लेहिं उतारि, देत न संक करैं।
इक दधि-गोरोचन-दूब, सबकैं सीस धरैं।
तब न्हाइ नंद भए ठाढ, अरु कुस हाथ धरे।
नांदीमुख पितर पुजाइ, अंतर सोच हरे।
घसि चंदन चारु मँगाइ, बिप्रनि तिलक करे।
द्विज-गुरु-जन कौं पहिराइ, सब कैं पाइ परे।

---

(१) गनत—१८।

तहँ गैयाँ गनो न जाहिँ, तरुनी बच्छ बढ़ाँ ।
जे चरहिँ जमुन कैँ तीर, दूनैँ दूध चढ़ाँ ।
खुर ताँबैँ, रूपैँ पीठि, सोनैँ सींग मढ़ाँ ।
ते दीन्हाँ द्विजनि अनेक, हरषि असीस पढ़ाँ ।
सब इष्ट मित्र अरु बंधु, हँसि-हँसि बोलि लिये ।
मथि मृगमद-मलय-कपूर, माथैँ तिलक किये ।
उर मनि-माला पहिराइ, बसन बिचित्र दिये ।
दै दान-मान-परिधान, पूरन-काम किये ।
बंदीजन - मागध - सूत, आँगन - भौन भरे ।
ते बोलैँ लै-लै नाउँ, नहिँ हित कोउ बिसरे ।
मनु बरषत मास अषाढ, दादुर-मोर ररे ।
जिन जो जाँच्यौ सोइ दीन, अस नँदराइ ढरे ।
तब अंबर और मँगाइ, सारो सुरँग चुनी ।
ते दीनी बधुनि बुलाइ, जैसी जाहि बनी ।
ते निकसीँ देति असीस, रुचि अपनी-अपनो ।
बहुरीँ सब अति आनंद, निज गृह गोप-धनी ।
पुर घर-घर भेरि-मृदंग, पटह-निसान बजे ।
बर बारनि बंदनवार, कंचन कलस सजे ।
ता दिन तैँ वै ब्रज लोग, सुख-संपति न तजे ।
सुनि सबकी गति यह सूर, जे हरि-चरन भजे ॥ २४ ॥

॥ ६४२ ॥

* राग धनाश्री

† आजु नंद के द्वारैं भीर।
इक आवत, इक जात बिदा ह्वै, इक ठाढे मंदिर कैं तीर।
कोउ केसरि कौ तिलक बनावति, कोउ पहिरति कंचुकी सरीर।
एकनि कौं गौ-दान समर्पत, एकनि कौं पहिरावत चीर।
एकनि कौं भूषन पाटंबर, एकनि कौं जु देत नग हीर।
एकनि कौं पुहुपनि की माला, एकनि कौं चंदन घसि नीर।
एकनि माथैं दूब-रोचना, एकनि कौं बोधति दै धीर।
सूरदास धनि स्याम सनेही, धन्य जसोदा पुन्य-सरीर॥ २५॥

॥ ६४३ ॥

राग गौरी

‡ बहुत नारि सुहाग-सुंदरि और गोप कुमारि।
सजन-प्रीतम-नाम लै-लै, दै परसपर गारि।

---

* (ना, रा) बिलावर। (कां) सारंग।

† यह पद (ल का, के, पू) में नहीं है।

‡ इस पद के आरंभ में तीन चरण और प्रायः सभी प्रतियों में मिलते हैं। वे ये हैं—

"गोपी गावहिं मंगलचार
बधायो ब्रजराज के।
अब भयौ अमर सब साज
बधायो ब्रजराज के।
रानी जायौ है मोहन पूत
बधायो ब्रजराज के।"

परंतु इन तीनों चरणों का छंद शेष पद के छंद से भिन्न है। यह प्रतीत होता है कि ये तीनों चरण किसी अन्य ही पद के होंगे, जिसके शेष कुछ चरण लुप्त हो गए हैं। इस संस्करण में ये तीनों प्रक्षिप्त चरण इस पद के साथ नहीं रक्खे गए।

अनंद अतिसै भयौ घर-घर, नृत्य ठावँहिँ-ठावँ।
नंद-द्वारैँ भेँट लै-लै उमह्यौ गोकुल गावँ।
चौक चंदन लीपि कै, धरि आरती संजोइ।
कहति घोष-कुमारि, ऐसौ अनँद जौ नित होइ!
द्वार सथिया देति स्यामा, सात सीँक बनाइ।
नव किसोरी मुदित ह्वै-ह्वै गहति जसुदा-पाइ।
करि[1] अलिगन[2] गोपिका, पहिरैँ अभूषन-चीर।
गाइ-बच्छ सँवारि ल्याए, भई ग्वारनि भीर।
मुदित मंगल सहित लीला करैँ गोपी-ग्वाल।
हरद, अच्छत, दूब, दधि लै, तिलक करैँ ब्रजबाल।
एक एक न गनत काहूँ, इक खिलावत गाइ।
एक हेरी देहिँ, गावहिँ, एक भेँटहिँ धाइ।
एक बिरध-किसोर-बालक, एक जोबन जोग।
कृष्न-जन्म सु प्रेम-सागर, क्रीड़ैँ[3] सब ब्रज-लोग।
प्रभु मुकुंद कैँ हेत नूतन होहिँ घोष-बिलास।
देखि ब्रज की संपदा कौँ, फूलै सूरजदास ॥२६॥

॥६४४॥

---

① घर घर तेँ आईँ गोपिका पहिरि अभूषन चीर—१८। ② अलंकृत—१, ६, ११, १५। ③ क्रीड़त—१, ३, ११, १५। तरत —२। परत—१६।

* राग धनाश्री

† आजु बधायौ नंदराइ कैं, गावहु मंगलचार।
आईं मंगल-कलस साजि कै, दधि फल नूतन-डार।
उर मेले नंदराइ कैं, गोप-सखनि मिलि हार।
मागध-बंदी-सूत अति करत कुतूहल बार।
आए पूरन आस कै, सब मिलि देत असीस।
नंदराइ कौ लाड़िलौ, जीवै कोटि बरीस।
तब ब्रज-लोगनि नंद जू, दीने बसन बनाइ।
ऐसी सोभा देखि कै, सूरदास बलि जाइ॥ २७॥

॥ ६४५ ॥

राग गौरी

‡ धनि-धनि नंद-जसोमति, धनि जग पावन रे।
धनि हरि लियौ अवतार, सु धनि दिन आवन रे।
दसएँ मास भयो पूत, पुनीत सुहावन रे।
संख-चक्र-गदा[1]-पद्म, चतुरभुज भावन रे।

---

* (ना) देवगिरी। (का) जैतश्री।

† इस पद के पाठ में बड़ी भिन्नता पाई जाती है। (वे, का, गो, जौ) में इसका क्रम एक कोटि का है और (ना, स, कां, रा, श्या) में दूसरा कोटि का। किंतु पूर्व प्रतियों का क्रम सर्वत्र शुद्ध नहीं है। छंद सदोष है। चरणों की संख्या भी समान नहीं है। (ना, स, का, रा, श्या) का पाठ शुद्ध तथा चरण संख्या एक पाई जाती है अत उन्हीं प्रतियों का पाठ इस संस्करण में ग्रहण किया गया है।

‡ यह पद (ना, स, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

[1] सारंग चतुरभुज–१,११,१४

बनि ब्रज-सुंदरि चलीं, सु गाइ बधावन रे।
कनक-थार रोचन-दधि, तिलक बनावन रे।
नंद-घरहिं चलि गईं, महरि जहँ पावन रे।
पाइनि परि सब बधू, महरि बैठावन रे।
जसुमति धनि यह कोखि, जहाँ रहे वावन रे।
भलैं सु दिन भयौ पूत, अमर अजरावन रे।
जुग-जुग जीवहु कान्ह, सबनि मन भावन रे।
गोकुल-हाट-बजार करत जु लुटावन रे।
घर-घर बजे निसान, सु नगर सुहावन रे।
अमर-नगर उतसाह, अप्सरा-गावन[1] रे।
ब्रह्म लियो अवतार, दुष्ट के दावन रे।
दान सबै जन देत, बरषि जनु सावन रे।
मागध, सूत, भाँट, धन लेत जुरावन रे।
चोवा - चंदन - अबिर, गलिनि छिरकावन रे।
ब्रह्मादिक, सनकादिक, गगन भरावन रे।
कस्यप रिषि सुर-तात, सु लगन गनावन रे।
तीनि - भुवन - आनंद, कंस - डरपावन रे।
सूरदास प्रभु जनमे, भक्त-हुलसावन रे॥ २८॥

॥६४६॥

(१) चावन—६, ८, ११, १४।

राग कल्यान

† सोभा-सिंधु न अंत रही री।
नंद-भवन भरि पूरि उमँगि चलि, ब्रज की बीथिनि फिरति बही री।
देखी जाइ आजु गोकुल मैं, घर-घर बेंचति फिरति दही[1] री।
कहँ लगि कहौं बनाइ बहुत विधि, कहत न मुख सहसहुँ निबही री।
जसुमति-उदर-अगाध-उदधि तैं, उपजी ऐसी सबनि कही री।
सूरस्याम[2] प्रभु इंद्र-नीलमनि, ब्रज-बनिता उर लाइ गही री॥ २६॥
॥६४७॥

* राग काफी

‡ आजु हो निसान बाजै, नंद जू महर के।
आनँद-मगन नर गोकुल सहर के।
आनंद भरी जसोदा उमँगि अंग न माति[3], आनंदित भईं गोपी गावतिं चहर के।
दूब-दधि-रोचन कनक-थार लै लै चली, मानौ इंद्र-बधू जुरीं पाँतिनि बहर के।
आनंदित ग्वाल-बाल, करत बिनोद ख्याल, भुज भरि-भरि धरि अंकम महर[4] के।
आनंद-मगन धेनु स्रवैं थनु पय-फेनु, उमँग्यौ जमुन-जल उछलि लहर के।
अंकुरित तरु-पात, उकठि रहे जे गात, बन-बेली प्रफुलित कलिनि कहर के।
आनदित विप्र, सूत, मागध, जाचक-गन, उमँगि असीम देत सब[5] हित हरि के।

---

† यह पद (ना, स, बृ, क, का, रा, श्या) में नहीं है।

① महीं—६, १७। ② सूरदास प्रभु जनमे गोकुल आनंद घर घर सबनि लही री— १७।

* (पू) जैजैवंती।

‡ यह पद (ना, स, बृ, को, रा, श्या) में नहीं है।

③ समाति—१, ११, १२। ४ देव करके—११। दे करके—१४, १७। ⑤ तरह तरह हरि के—१। तरह तरह के—१,११,१५

आनँद-मगन सब अमर गगन छाए पुहुप बिमान चढे पहर पहर के।
सूरदास प्रभु आइ गोकुल प्रगट भए, संतनि हरष, दुष्ट-जन-मन धरके ॥३०॥

॥ ६४८ ॥

राग काफी

† (माई) आजु हो बधायौ बाजै नंद गोप-राइ कै।
जदुकुल-जादौराइ जनमे हैं आइ कै।
आनंदित गोपी-ग्वाल, नाचैं कर दै-दै ताल, अति अहलाद भयो जसुमति माइ कै।
सिर पर दूब धरि, बैठे नंद सभा-मधि, द्विजनि कौं गाइ दीनी बहुत मँगाइ कै।
कनक कौ माट लाइ, हरद-दही मिलाइ, छिरकैं परसपर छल-बल धाइ कै।
आठैं कृष्न पच्छ भादौं, महर कैं दधि कादौं, मोतिनि बँधायौ बार महल मैं जाइ कै।
ढाढी औ ढाढिनि गावैं, ठाढे हुरके बजावैं, हरषि असीस देत मस्तक नवाइ कै।
जोइ-जोइ माँग्यौ जिनि, सोइ-सोइ पायौ तिनि, दीजै सूरदास[1] दर्स भक्तनि बुलाइकै ३१

॥६४९॥

* राग जैतश्री

‡ आजु बधाई नंद कैं माई। ब्रज की नारि सकल जुरि आईं॥
सुंदर नंद महर कैं मंदिर। प्रगटयौ पूत सकल सुख-कंदर।

---

† यह पद (वे, ल, का, गो, जा) में है।

* (ना) कामोद।

‡ यह पद (का, के, पू) में नहीं है।

॥ यह चरण केवल (स) में है।

(१) दास—६, १२।

जसुमति-ढोटा ब्रज की सोभा। देखि सखी, कछु औरै गोभा[1]।
लछिमी-सी जहँ मालिनि बोलै। बंदन-माला बाँधत डोलै।
द्वार बुहारति फिरतिँ अष्ट सिधि। कौरनि सथिया चोततिँ नव निधि।
गृह-गृह तेँ गोपी गवनीँ जब। रंग-गलिनि बिच भीर भई तब।
सुबरन-थार रहे हाथनि लसि। कमलनि चढि आए मानौ ससि।
उमँगी प्रेम-नदी-छबि पावैँ। नंद-सदन-सागर कौँ धावैँ।
कंचन-कलस जगमगैँ नग के। भागे सकल अमंगल जग के।
डोलत ग्वाल मनौ रन जीते। भए सबनि के मन के चीते।
अति आनंद नद रस भीने। परबत सात रतन के दीने।
कामधेनु तेँ नैँकु[2] न[3] हीनी। द्वै लख धेनु द्विजनि कौँ दीनी[4]।
नंद-पौरि जे जाँचन आए। बहुरौ फिरि जाचक न कहाए।
घर के ठाकुर कैँ सुत जायौ। सूरदास तब सब सुख पायौ ॥३२॥

॥ ६५० ॥

* राग बिलावल

† आजु गृह नंद महर कैँ बधाइ।
प्रात समय मोहन-मुख निरखत, कोटि चंद-छबि पाइ।
मिलि ब्रज-नागरि मंगल गावतिँ, नंद-भवन मेँ आइ।
देतिँ असीस, जियौ जसुदा-सुत कोटिनि बरष कन्हाइ।

---

(१) लोभा—१, १२। ओभा —३। (३) नवीने—१, ११। * (ना) ललित।
—३। वोभा—११। (२) एक (४) दीने—१, ११। † यह पद (का के पू) में नहीं है।

अति आनंद बढ्यौ गोकुल मैं, उपमा कही न जाइ।
सूरदास धनि नँद की घरनी, देखत नैन सिराइ॥ ३३॥
॥६५१॥

राग जैजैवती

†(माई) आजु तौ बधाइ बाजै मँदिर महर के।
फूले फिरैं गोपी-ग्वाल ठहर ठहर के।
फूली फिरैं धेनु धाम, फूली गोपी अँग अँग,
फूले फरे तरवर आनँद लहर के।
फूले बंदीजन द्वारे, फूले फूले बंदवारे,
फूले जहाँ जोइ सोइ गोकुल सहर के।
फूले फिरैं जादोकुल आनँद समूल मूल,
अंकुरित पुन्य फूले पाछिले पहर के।
उमँगे जमुन-जल, प्रफुलित कुंज-पुंज,
गरजत कारे भारे जूथ जलधर के।
नृत्यत मदन फूले, फूली रति अँग अँग,
मन के मनोज फूले हलधर[1] वर के।
फूले द्विज-संत-वेद, मिटि गयौ कंस-खेद,
गावत बधाइ सूर भोतर-बहर के।
फूलो है जसोदा रानी, सुत जायौ सार्ङ्गपानी,
भूपति उदार फूले भाग[2] फरे घर के॥ ३४॥
॥६५२॥

† यह पद केवल (वे, शा, गो, जै) में है। (१) हरि हलधर के—११ (२) भार—१, १५।

* राग जैतश्री

(नंद जू) मेरैं मन आनंद भयौ, मैं गोबर्धन तैं आयौ।
तुम्हरैं पुत्र भयौ, हौं सुनि कै, अति आतुर उठि धायौ।
बंदीजन अरु भिच्छुक सुनि-सुनि दूरि[1]-दूरि तैं आए।
इक पहिलैं ही आसा लागे, बहुत दिननि तैं छाए।
ते पहिरे कंचन-मनि-भूषन, नाना बसन अनूप।
मोहिं मिले मारग मैं, मानौ जात कहूँ के भूप।
तुम तौ परम उदार नंद जू, जो माँग्यौ[2] सो दीन्हौ।
ऐसौ और कौन त्रिभुवन मैं, तुम[3] सरि साकौ कीन्हौ!
कोटि देहु तौ रुचि[4] नहिं मानौं, बिनु देखे नहिं जैहौं।
नंदराइ, सुनि बिनती मेरी, तबहिं बिदा भल ह्वैहौं।
दीजै मोहिं कृपा करि सोई, जो हौं आयौ माँगन।
जसुमति-सुत अपनैं पाइनि चलि, खेलत आवै आँगन।
जब हँसि कै मोहन कछु बोलै, तिहिं सुनि कै घर जाऊँ।
हौं तौ तेरे घर कौ ढाढ़ी, सूरदास मोहिं नाऊँ॥ ३५॥

॥ ६५३ ॥

* राग जैतश्री

मैं तेरे घर कौ हौं ढाढ़ो, मो सरि कोउ न आन।
सोइ लैहौं जो मो मन भावै, नंद महर की आन।

---

* (ना, को, रा) आसावरी।

① देस देस—२, १६, १८, १६। जहा तहां—१७। ② मागौ सो दीजै—२, ३। ③ जासौं टेरि कहीजै—२। जासौं पटतर कीजै—३। ④ परथौ रहौंगौ—२, ३, १६।

(ना) आसावरी। (रा) धनाश्री।

धन्य नंद, धनि धन्य जसोदा, जिन जायौ अस पूत।
धन्य भूमि, ब्रजबासी धनि - धनि, आनँद करत अकूत।
घर-घर होत अनंद बधाए, जहँ - तहँ मागध-सूत।
मनि-मानिक, पाटंबर-अंबर, लेत न बनत बिभूत[1]।
हय-गय खोलि भँडार दिए सब, फेरि भरे ता भाँति।
जबहिँ देत तबहीं फिरि देखत, संपति घर न समाति।
ते मोहिँ मिले जात घर अपनैं, मैं बूझी तब जाति।
हँसि-हँसि दौरि मिले अंकम भरि, हम तुम एकै ज्ञाति।
संपति देहु, लेहुँ नहि एकौ, अन्न-वस्त्र किहिँ काज?
जो मैं तुम सौं माँगन आयौ, सो लैहौं नँदराज।
अपने सुत कौ बदन दिखावहु, बड़े महर सिरताज।
तुम साहब, मैं ढाढो तुम्हरौ, प्रभु मेरे ब्रजराज।
चंद्र-बदन-दरसन-संपति दै, सो मैं लै घर जाउँ।
जो संपति सनकादिक दुरलभ, सो है तुम्हरैं ठाउँ।
जाकौं नेति नेति स्रुति गावत, तेइ कमल-पद ध्याउँ।
हौं तेरौ जनम-जनम कौ ढाढो, सूरज दास कहाउँ॥ ३६॥

॥ ६५४ ॥

* राग धनाश्री

†(नंद जू) दुःख गयौ, सुख आयौ सबनि कौं, देव[2]-पितर भल मान्यौ।
तुम्हरौ पुत्र प्रान सबहिनि कौ, भुवन चतुर्दस जान्यौ।

---

(१) बहूत—१,२,६,११,१२। * (ना) देवसाख।

† यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है।

(२) दियौ पुत्र फल मानो—१,११,१२

हौं तौ तुम्हरे घर कौ ढाढ़ी, नाउँ सुनैं सचु पाऊँ।
गिरि गोबर्धन बास हमारौ, घर तजि अनत न जाऊँ।
ढाढ़िनि मेरी नाचै-गावै, हौंहूँ ढाढ़ बजाऊँ।
हमरौ चीत्यौ भयौ तुम्हारैं, जो माँगौं सो पाऊँ।
अब तुम मोकौं करौ अजाची, जो कहुँ[1] कर न पसारौं।
द्वारैं रहौं, देहु इक मंदिर, स्याम-सुरूप निहारौं।
हँसि ढाढ़िनि ढाढ़ी सौं बोली, अब तू बरनि बधाई।
ऐसौ दियौ न देहि सूर कोउ, जसुमति हौं पहिराई॥ ३७॥

॥ ६५५ ॥

* राग धनाश्री

† ढाढी दान-मान के भाई !

नंद उदार भए पहिरावत, बहुत भली बनि आई।
जब-जब नाम धरौं ढाढ़ी कौ, जनम-करम-गुन गाऊँ।
अर्थ-धर्म-कामना-मुक्ति-फल, चारि पदारथ पाऊँ।
लै ढाढ़िनि कंचन-मनि-मुक्ता, नाना बसन अनूप।
हीरा-रतन-पटंबर हमकौं दीन्हे ब्रज के भूप।
अब तौ भली भई, नारायन-दरस निरखि, निधि पाई।
जहँ-तहँ बंदनवार बिराजित, घर-घर बजति बधाई।

---

(१) गृह गेह बिसारो—१। घर गेह बिसारो—३, ११, १२।
* (ना) देसकार।
† यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है।

जो जाँच्यौ सोई तिन पायौ, तुम्हरो[1] भई बड़ाई।
भक्ति देहु, पालनैं झुलाऊँ, सूरदास बलि जाई ॥ ३८ ॥

॥६५६॥

राग केदारौ

† नंद-उदौ सुनि आयौ हो, वृषभानु कौ जगा।
देवे कौं बड़ौ महर, देत न लावै गहर, लाल की बधाई पाऊँ लाल कौ झगा।
प्रफुलित ह्वै कै आनि, दीनी है जसोदा रानी, झोनीये झगुलि तामैं कंचन-तगा।
नाचै फूल्यो अँगनाइ, सूर बकसीस पाइ, माथे कै चढाइ लीनौ लाल कौ बगा॥३६॥

॥६५७॥

* राग सारंग

‡ गौरि[2] गनेस्वर बीनऊँ (हो), देवी सारद तोहिं।
गावौं हरि कौ सोहिलौ (हो), मन-आखर दै मोहिं।
हरषि[3] बधावा मन भयौ (हो), रानी जायौ पूत।
घर-बाहर माँगैं सबै (हो), ठाढ़े मागध-सूत।
आठ मास चंदन पियौ (हो), नवएँ पियौ कपूर।
दसएँ मास मोहन भए (हो), आँगन बाजै तूर।
हरषौं पास-परोसिनैं (हो), हरष नगर के लोग।
हरषौं सखी-सहेलरी (हो), आनँद भयौ सुभ[4]-जोग।

---

(१) तुमरिउ भई बिदाई—१,११। † यह पद केवल (वे, गो, जौ) में है। * (ना) आसावरी। ‡ यह पद (के, पू) में नहीं है। (२) गुरू—२, ३, १६। (३) बधावौ हरि कौ मन रहिबो रानी जायौ है माहन पूत—१, ११, १४। बधावा हरि कौ मन भयौ रानी जायौ पूत—२, ३। (४) सुख—१, २, ३, ११, १५।

बाजन बाजैं गहगहे (हो), बाजैं मंदिर भेरि।
मालिनि बाँधै तोरना (रे), आँगन रोपैं केरि।
अनगढ़ सोना ढोलना (गढ़ि), ल्याए चतुर सुनार।
बीच-बीच हीरा लगे (नँद)लाल-गरे कौ हार।
जसुमति भाग-सुहागिनी (जिनि), जायौ हरि सौ पूत।
करहु ललन की आरती (री), अरु दधि काँदौ सूत।
नाइनि बोलहु नव रँगी (हो), ल्याउ महावर वेग।
लाख टका अरु झूमका (देहु), सारी दाइ कौं नेग।
अगरु चँदन कौ पालनौ (रँगि), ईंगुर ढार-सुढार।
लै आयौ गढि डोलना (हो), विसकर्मा सुतहार।
धनि सो दिन, धनि सेा घरी (हो), धनि-धनि जोतिष-जाग।
धन्य-धन्य मथुरापुरी (हो), धन्य महर कौ भाग।
धनि-धनि माता देवकी (हो), धनि बसुदेव सुजान।
धनि-धनि भादौं अष्टमी (हो), जनम लियौ जब कान्ह।
काढ़ौ कोरे कापरा (अरु), काढ़ौ घी के मौन।
जाति-पाँति पहिराइ कै (सब), समदि छतीसौ पौन।
ाजर-रोरी आनहू (मिलि), करौ छठी कौ चार।
ऐपन की[1]सी पूतरी (सब), सखियनि कियौ सिँगार[2]।
क्रीट मुकुट सोभा बनी (सुभ), अंग बनी बनमाल।
सूरदास गोकुल प्रगट (भए) मोहन मदन गोपाल ॥ ४० ॥

॥ ६५८ ॥

---

(१) मिलि के—१६, १६। (२) व्यौहार—१६, १०।

* राग काफी

† पालनौ अति सुंदर गढि ल्याउ रे बढ़ैया ।
सीतल चंदन कटाउ, धरि खराद रंग लाउ,
विविध चौकरी बनाउ, धाउ रे बनैया ।
पँच रँग रेसम लगाउ, हीरा मोतिनि मढाउ,
बहु बिधि जरि करि जराउ, ल्याउ रे जरैया ।
विसकर्मा सूतहार, रच्यौ काम ह्वै सुनार,
मनिगन लागे अपार, काज महर-छैया ।
आनि धरचौ नंद-द्वार, अतिहीं सुंदर सुढार,
ब्रज-बधु कहैं बार-बार धन्य रे गढ़ैया ।
पालनौ आन्यौ बनाइ, अति मन मान्यौ सुहाइ,
नीकौ सुभ दिन सुधाइ, झूलौ हो झुलैया ।
सखियनि मंगल गवाइ, बहु बिधि बाजे बजाइ,
पौढायौ महल जाइ, बारौ रे कन्हैया ।
सूरदास प्रभु की माइ जसुमति, पितु नंदराइ,
जोइ जोइ माँगत सोइ देत हैं बधैया ॥ ४१ ॥

॥ ६५६ ॥

---

* (ना) संकराभरन । (पृ) रामकली ।

† यह पद यद्यपि सब प्रतियो में है पर उनके पाठो में बडी भिन्नता है । किसी का भी पाठ पूर्णतया सार्थक एव सुछद नहीं है । अत इसके संशोधन में बड़ी कठिनाई उठानी पड़ी । कोई भाग किसी प्रति का, कोई भाग किसी प्रति का लेकर, पाठ को शुद्ध तथा सुबोध बनाने की चेष्टा की गई है ।

* राग जैतश्री

† कनक-रतन-मनि पालनौ, गढ्यौ काम सुतहार ।
बिबिध खिलौना भाँति के (बहु) गज-मुक्ता चहुँधार ।
जननी उबटि न्हवाइ कै (सिसु) क्रम सौं लीन्हे गोद ।
पौढ़ाए पट पालनै (हँसि) निरखि जननि-मन-मोद ।
अति कोमल दिन सात के (हो) अधर चरन कर लाल ।
सूर स्याम छबि अरुनता (हो) निरखि हरष ब्रज-बाल ॥४२॥

॥ ६६० ॥

* राग धनाश्री

जसोदा हरि पालनैं झुलावै ।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोइ-सोइ कछु गावै ।
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया, काहैं न आनि सुवावै ।
तू काहैं नहिं बेगिहिं आवै, तोकौं कान्ह बुलावै ।
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावै ।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि-करि सैन बतावै ।
इहिं अंतर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरैं गावै ।
जो सुख सूर अमर-मुनि दुरलभ, सो नँद-भामिनि पावै ॥ ४३ ॥

॥ ६६१ ॥

---

* (ना) अडाना । (का, के, क, का, पू, रा) आसावरी ।

† यह पद सब प्रतियों में है, सं० १७५३ की लिखी प्रति में भी है । श्री तुलसीदासजी की गीतावली में भी पालन का एक पद ऐसा ही है । उसके कुछ चरण इसके कुछ चरणों से मिलते जुलते हैं । (१, ६, ११, १२) में इस पद के आरंभ में ये टेक के चरण मिलते हैं—ब्रज को जीवन नंदलाल । असुर-निकंदन भक्तपाल । परंतु वे इस संस्करण में नहीं रक्खे गए ।

* (ना) रामकली ।

② न बेगि सी—१ ११, १२, १६, १६ ।

* राग कान्हरौ

† पलना स्याम झुलावति जननी

अति अनुराग परस्पर गावति, प्रफुलित मगन होति नँद-घरनी।
उमँगि-उमँगि प्रभु भुजा पसारत, हरषि जसोमति अंकम भरनी।
सूरदास प्रभु मुदित जसोदा, पूरन भई पुरातन करनी॥ ४४॥
॥ ६६२॥

* राग बिलावल

‡ पालनैं गोपाल झुलावैं

सुर-मुनि-देव कोटि तैंतीसौ, कौतुक अंबर छावैं।
जाकौ अंत न ब्रह्मा जानै, सिव-सनकादि न पावैं।
सो अब देखौ नंद-जसोदा, हरषि-हरषि हलरावैं।
हुलसत, हँसत, करत किलकारी, मन अभिलाष बढ़ावैं।
सूर स्याम भक्तनि हित कारन, नाना भेष बनावैं॥ ४५॥
॥ ६६३॥

× राग गौरी

हालरौ हलरावै माता। बलि-बलि जाउँ बेष-सुख-दाता।
जसुमति अपनौ पुन्य बिचारै। बार-बार सिसु-बदन निहारै।

---

* (के) केदारा।
† यह पद (ना, स, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।
‡ (ना) देवगिरि।
‡ यह पद (स, बृ, का, रा, श्या) में नहीं है।
× (ना) ललित। (का, के, पू) गौड़। (कां) मलार। (रा) गौड़मलार।

अँग फरकाइ अलप मुसुकाने । या छवि की[1] उपमा को जाने[2] ।
हलरावति गावति कहि प्यारे । बाल-दसा के कौतुक भारे ।
महरि निरखि मुख हिय हुलसानी । सूरदास प्रभु सारँगपानी ॥४६॥

॥ ६६४ ॥

राग धनाश्री

† कन्हैया हालरु रे ।
गढि-गुढि ल्यायौ बाढ़ई, धरनी पर डोलाइ, बलि हालरु रे ।
॥ इक लख माँगे बाढ़ई, दुइ लख नंद जु देहिँ, बलि हालरु रे ।
रतन जटित बर पालनौ, रेसम लागी डोर, बलि हालरु रे ।
कबहुँक झूलै पालना, कबहुँ नंद की गोद, बलि हालरु रे ।
झूलैं सखी झुलावहीं, सूरदास बलि जाइ, बलि हालरु रे ॥ ४७ ॥

॥ ६६५ ॥

* राग बिहागरा

‡ कंसराइ जिय सोच परी ।
कहा करौं, काकौं ब्रज पठवौं, बिधना कहा करी ।
बारंबार बिचारत मन मैं, नींद भूख बिसरी ।
सूर बुलाइ पूतना सौं कह्यो, करु न बिलंब घरी ॥ ४८ ॥

॥ ६६६ ॥

---

① पर—१, २, ३, ६, १६ ।
② आने—१६ ।
† यह पद केवल (वे, ल, गो, जौ) में है ।
॥ इस चरण के पश्चात् सब प्रतियों में यह एक और पंक्ति मिलती है —"काहे कौ तेरौ पालनौ बलि हालरु रे, काहैं लागी डोर ।" परंतु यह अनावश्यक प्रतीत होती है और इसके रहने से पद की पंक्तियों की संख्या विषम हो जाती है ।
* (ना) बिलावल । (रा) आसावरी ।
‡ यह पद (का, के, पू) में नहीं है ।

पूतना-वध

* राग धनाश्री

आजु हौं राज-काज करि आऊँ ।
वेगि सँहारौं सकल घोष-सिसु, जौ मुख आयसु पाऊँ ।
मोहन-मुर्छन-बसीकरन पढि, अगमति[1] देह बढाऊँ ।
अग सुभग सजि, ह्वै मधु[2]-मूरति, नैननि माहँ समाऊँ ।
घसि कै[3] गरल चढाइ उरोजनि, लै रुचि सौं पय प्याऊँ ।
सूरज[4] सोच हरौं मन अबहीं, तौ पूतना कहाऊँ ॥ ४६ ॥

॥६६७॥

* राग धनाश्री

† रूप मोहिनी धरि ब्रज आई ।
अद्भुत साजि सिँगार मनोहर, असुर कंस दै पान पठाई ।
कुच विष बाँटि लगाइ कपट करि, बाल-घातिनी परम सुहाई ।
बैठी हुती जसोदा मंदिर, दुलरावति सुत कुँवर[5] कन्हाई ।
प्रगट भई तहँ आइ पूतना, प्रेरित काल अवधि नियराई ।
आवत पीढा बैठन दीनौ, कुसल बूझि अति निकट बुलाई ।
पौढाए हरि सुभग पालनैं, नंद-घरनि कछु काज सिधाई ।
बालक लियौ उछंग दुष्टमति, हरषित अस्तन-पान कराई ।

---

* (ना) सूहो । (के, पू) जैतश्री । (क) विहागरौ । (रा) गौरी ।

(१) गहि मति हेरिनि (हेरन) छाऊँ—२, ३, १८ । गति मति हर न छाऊँ—८ । (२) विधु—२, ३, १६ । (३) ककोल—६ । (४) सूरदास प्रभु जीवत ल्याऊँ—१, ११, १५, १६ ।
(ना) सूहो । (के, पू) जैतश्री । (क) विहागरौ ।

† यह पद (बृ, कौ, श्या) में नहीं है ।

(५) स्याम—१, ३, ६, ११, १५ ।

बदन निहारि प्रान हरि लीनौ, परी राच्छसी जोजन ताईं ।
सूरज दै जननी-गति ताकौं, कृपा करी निज धाम पठाई ॥ ५० ॥
॥ ६६८ ॥

* राग धनाश्री

प्रथम कंस पूतना पठाई ।
नंद-घरनि जहँ सुत लिये बैठी, चली-चली तिहिँ धामहिं आई ।
अति मोहिनी रूप धरि लीनौ, देखत सबहिनि कैं मन भाई ।
जसुमति रही देखि वाकौ मुख, काकी बधू, कौन धौं आई ।
नंद-सुवन तबहीं पहिचानी, असुर-घरनि, असुरनि की जाई ।
आपुन बज्र-समान भए हरि, माता दुखित भई, भरमाई ।
अहो महरि पालागन मेरौ, मैं तुमरौ सुत देखन आई ।
यह कहि गोद लियौ अपनी[1] तब, त्रिभुवन-पति मन-मन मुसुकाई ।
मुख चूम्यौ, गहि कंठ लगायौ, बिष लपट्यौ अस्तन मुख नाई ।
पय सँग प्रान ऐंचि[2] हरि लीनौ, जोजन एक परी मुरझाई ।
त्राहि-त्राहि कहि ब्रज-जन धाए, अब[3] बालक क्यौं बचै कन्हाई !
अति आनंद सहित सुत पायौ, हिरदै माँझ रहे लपटाई ।
करवर बड़ी टरी मेरे की, घर-घर आनँद करत बधाई ।
सूर स्याम पूतना पछारी, यह सुनि जिय डरप्यौ नृपराई ॥ ५१ ॥
॥ ६६९ ॥

---

* (ना के, पू) जैतश्री । (का, क, कौ, रा) आसावरी ।

① अपन—१, ६, ११, १२, १७, १९ । ② अचे—२, ३, ६, १४, १९ । ③ अति—१ ६, ११, १५, १९ ।

* राग सारंग

† कपट करि ब्रजहिँ पूतना आई ।
अति सुरूप, बिष अस्तन लाए, राजा कंस पठाई ।
मुख चूमति अरु नैन निहारति, राखति कंठ लगाई ।
भाग बड़े तुम्हरे नँदरानी, जिहिँ के कुँवर कन्हाई ।
कर गहि छीर पियावति अपनौ, जानत केसवराई ।
बाहर ह्वै कै असुर पुकारी, अब बलि लेहु छुडाई ।
गइ मुरछाइ, परी धरनी पर, मनौ भुवंगम ग्वाई ।
सूरदास प्रभु तुम्हरी लीला, भक्तनि गाइ सुनाई ॥ ५२ ॥

॥ ६७० ॥

* राग धनाश्री

देखौ यह विपरीत भई ।
अदभुत रूप नारि इक आई, कपट हेत क्यौं[1] सहै दई ?
कान्हैँ[2] लै जसुमति कोरा तैँ, रुचि करि कंठ लगाए ।
तब वह देह धरी जोजन लौँ, स्याम रहे लपटाए !
बड़े भाग्य हैँ नंद महर के, बडभागिनि नँदरानी ।
सूर स्याम उर ऊपर[3] उबरे, यह सब घर-घर जानी ॥ ५३ ॥

॥६७१॥

---

* (ना) गूजरी ।
† यह पद (ल, का, म, पू) में नहीं हैं ।
(ना) अहीर । (का) बिलावल । (के, कां, रा) सोरठी । (क) विहागरौ ।
① कोन पठई—२ । ② काहे तैँ जसुमति बौरानी—२, ३ । ③ याके—११ ।

राग कान्हरौ

† जसुमति बिकल भई, छिन कल ना ।
लेहु उठाइ पूतना-उर तैं, मेरौ सुभग साँवरौ ललना ।
गोपी लै उठाइ जसुमति कौं, दीन्यौ अखिल असुर के दलना ।
सूरदास प्रभु कौ मुख चूमति, हृदय लाइ पौढाए पलना ॥ ५४ ॥
॥ ६७२ ॥

* राग बिहागरौ

† नैंकु गोपालहिं मोकौं दै री ।
देखौं बदन कमल नीकैं[1] करि, ता पाछैं तू कनियाँ लै री ।
अति कोमल कर-चरन-सरोरुह, अधर-दसन-नासा सोहै री ।
लटकन सीस, कंठ मनि भ्राजत, मनमथ कोटि वारनैं गै[2] री ।
बासर-निसा बिचारति हौं सखि, यह सुख कबहुँ न पायौ मैं री ।
निगमनि-धन, सनकादिक-सरबस, बड़े भाग्य पायौ है तैं री ।
जाकौ रूप जगत के[3] लोचन, कोटि चंद्र-रवि लाजत भै री ।
सूरदास बलि जाइ जसोदा, गोपिनि-प्रान, पूतना-बैरी ॥ ५५ ॥
॥ ६७३ ॥

---

† यह पद केवल (गो) में है ।
* (ना) रामकली । (रा) बिलावल ।
‡ यह पद (बृ, कां, श्या) में नहीं है ।
① नैनन भरि—२ । ② दै—३, ६, १४, १७ । ③ को—२, ३ ।

* राग जैतश्री

† कन्हैया[1] हालरौ हलरोइ ।
हौं वारी तव इंदु-वदन पर, अति छबि अलस[2] भरोइ ।
कमल-नयन कौं कपट किए माई, इहिँ ब्रज आवै जोइ ।
पालागौं बिधि ताहि बकी ज्यौं, तू तिहिँ तुरत बिगोइ ।
सुनि देवता बड़े, जग-पावन, तू पति या[3] कुल कोइ ।
पद पूजिहौं, बेगि यह बालक करि दै मोहिँ बड़ोइ ।
दुतिया के ससि लौं बाढ़ै सिसु, देखै[4] जननि जसोइ ।
यह सुख सूरदास कैँ नैननि, दिन-दिन दूनौ होइ[5] ॥ ५६ ॥

॥ ६७४ ॥

श्रीधर—अंगभंग

* राग बिलावल

‡ श्रीधर[6] बाँभन करम कसाई । कह्यौ कंस सौं बचन सुनाई ।
प्रभु, मैँ तुम्हरौ आज्ञाकारी । नंद-सुवन कौं आवौं मारी ।
कंस कह्यौ, तुमतैँ यह होइ । तुरत जाहु, करौ बिलँब न कोइ ।
श्रीधर नंद-भवन चलि आयौ । जसुदा उठि कै माथ नवायौ ।
करौ रसोई मैँ बलि जाऊँ । तुम्हरे हेत जमुन-जल ल्याऊँ ।
यह कहि जसुदा जमुना गई । श्रीधर कही भली यह भई ।

---

* (ना) गूजरी । (रा) धनाश्री ।

† यह पद (ल) मेँ नहीं है ।

(१) कन्हैया हालरो हो—२, ३, ६, १६ । कन्हैया हालरो हौं वारी—१४ । (२) अलसनि रोई—१, ११ । अस तरो—२ । आसुन रो—३ । अलसनि रो—६, १७ । अलसनि मारी—१४ । लाल न रो—१६ । लालन रोई—१६ । (३) गोकुल—२, ३, १६, १८ । (४) देखै जो जिन जो—२ । देवै जननी हो—३ । जननी देखै सोइ—१६ । (५) हो—२, ३ । (ना) जैतश्री ।

‡ यह पद (ल, का, के, पू) मेँ नहीं है ।

(६) सिद्धर—१ । सीधर—२ ।

उन अपनैं मन मारन ठान्यौ । हरि जू ताकौं तबहीं जान्यौ ।
बाँभन मारैं नहीं भलाई । अँग याकौ मैं देउँ नसाई ।
जबहीं बाँभन हरि ढिग आयौ । हाथ पकरि हरि ताहि गिरायौ ।
गुदी चाँपि लै जीभ मरोरी । दधि ढरकायौ भाजन फोरी ।
राख्यौ कछु तिहिं मुख लपटाइ । आपु रहे पलना पर आइ ।
रोवन लागे कृष्न बिनानी । जसुमति आइ गई लै पानी ।
रोवत देखि कह्यौ अकुलाई । कहा करचो तैं बिप्र अन्याई ?
बाँभन कैं मुख बात न आवै । जीभ होइ तौ कहि समुझावै !
बाँभन कौं घर बाहर कीन्हौ । गोद उठाइ कृष्न कौं लीन्हौ ।
ब्रजबासी सब देखन आए । सूरदास हरि के गुन गाए ॥ ५७ ॥

॥ ६७५ ॥

* राग बिलावल

† सुन्यौ कंस, पूतना[2] सँहारी । सोच भयौ ताकैं जिय भारी[3] ।
कागासुर कौं निकट बुलायौ । तासौं कहि सब भेद सुनायौ ।
मम आयसु तुम माथैं धरौ । छल-बल करि मम कारज करौ ।
यह सुनि कै तेहिं माथौ नायौ । सूर तुरत ब्रज कौं उठि धायौ ॥ ५८ ॥

॥ ६७६ ॥

---

① गोड़—१, ११ । * (ना) जैतश्री । (का) सारग ।

† यह पद (के, पू) में नहीं है ।

② पूतना मारी—१, २ ३, ६, ११ । सीधर जब मारचो—१६, १६ । ③ भारो—१६, १६ ।

कागासुर-वध राग सारग

काग-रूप इक दनुज धरयौ।
नृप-आयसु लै धरि माथे पर, हरषवंत उर गरब भरयौ।
कितिक बात प्रभु तुम आयसु तैं, वह जानौ मो जात मरयौ[1]।
इतनो कहि गोकुल उडि आयौ, आइ नंद-घर-छाज रह्यौ[2]।
पलना पर पौढे हरि देखे, तुरत आइ नैननिहिं अरयौ।
कंठ चाँपि बहु बार फिरायौ, गहि फटक्यौ[3], नृप पास परयौ।
तुरत कंस पूछन तिहिं लाग्यौ, क्यौं आयौ, नहिं काज करयौ[4]?
बातैं जाम बोलि तब आयौ, सुनहु कंस, तब आइ सरयौ[5]।
धरि अवतार महाबल कोऊ, एकहिं कर मेरौ गर्व हरयौ।
सूरदास प्रभु कंस-निकंदन, भक्त-हेत अवतार धरयौ॥ ५६॥

॥ ६७७ ॥

* राग बिलावल

मथुरापति जिय अतिहिं डरान्यौ।
सभा माँझ असुरनि के आगैं, सिर धुनि-धुनि पछितान्यौ।
ब्रज-भीतर उपज्यौ मेरौ रिपु, मैं जानी यह बात।
दिनहीं दिन वह बढत जात है, मोकौं करिहै घात।
दनुज-सुता पूतना पठाई, छिनकहिं मांझ सँहारी।
घौंच मरोरि, दियौ कागासुर मेरैं ढिग फटकारो।

---

① करयौ—२, ३, १६। पटक्यौ—१, ६, ६, १४, १६। २, १६। ⑤ गरयौ—१६।
② अरयौ—२, १६। ③ फेंक्यौ—३। ④ सरयौ—२, * (ना) सारग।

अबहीं तैं यह हाल करत है, दिन-दिन होत प्रकास।
सेनापतिनि सुनाइ बात यह, नृप मन भयौ उदास।
ऐसौ कौन, मारिहै ताकौं, मोहिं कहै सो आइ!
वाकौं मारि अपुनपौ राखै, सूर ब्रजहिं सो जाइ॥ ६०॥

॥ ६७८॥

सकटासुर-वध

* राग गौड़ मलार

नृपति बचन यह सबनि सुनायौ।
मुहाँचुही सैनापति कीन्ही, सकटैं[1] गर्व बढायौ।
देउ कर जोरि भयौ उठि ठाढौ, प्रभु-आयसु मैं पाऊँ।
ह्याँ तैं जाइ तुरतहीं मारौं, कहौ तौ जीवत ल्याऊँ।
यह सुनि नृपति हरष मन कीन्हौ, तुरतहिं बीरा दीन्हौ।
बारंबार सूर कहि ताकौं, आपु प्रसंसा कीन्हौ॥ ६१॥

॥ ६७९॥

* राग गौड़ मलार

पान लै चल्यौ नृप आन कीन्हौ।
गयौ सिर नाइ मन गरबहिं बढ़ाइ कै, सकट कौ रूप धरि असुर लीन्हौ।
सुनत घहरानि ब्रजलोग चक्रित भए, कहा आघात धुनि[2] करत आवै!
देखि आकास, चहुँपास, दसहूँ दिसा, डरे नर-नारि तन-सुधि भुलावै।
आपु गयौ तहाँ जहँ प्रभु परे पालनैं, कर गहे चरन अँगुठा चचोरैं।

---

* (ना) नट। (के,क,कौं) सूहौ। (रा) बिलावल।

(१) सकटासुर मन गर्व बढ़ायौ—१, ११। सकटासुर सुनि गर्व बढायौ—२, ३, ६, १४, १६।

* (ना) मारू।

(२) धौं होतु—२, १६।

किलकि किलकत हँसत, बाल-सोभा लसत, जानि यह[1] कपट, रिपु आयौ भोरैं।
नैंकु फटक्यौ लात, सबद भयौ आघात, गिरचौ भहरात सकटा सँहारचौ।
सूर प्रभु नँद-लाल, मारचौ दनुज ख्याल, मेटि जंजाल ब्रज-जन उबारचौ ॥६२॥

॥ ६८० ॥

* राग बिलावल

कर पग गहि, अँगुठा मुख मेलत।
प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले, हरषि[2]-हरषि अपनैं रँग खेलत।
सिव सोचत, बिधि बुद्धि बिचारत, बट बाढ़्यौ सागर-जल झेलत।
बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत।
मुनि मन भीत भए, भुव कंपित, सेष सकुचि सहसौ फन पेलत।
उन[3] ब्रज-बासिनि बात न जानी, समुझे सूर सकट पग ठेलत ॥६३॥

॥ ६८१ ॥

* राग बिलावल

चरन गहे अँगुठा मुख मेलत।
नंद-घरनि गावति, हलरावति, पलना[4] पर हरि खेलत।
जे चरनारबिंद श्री-भूषन, उर तैं नैंकु न टारति।
देखौं धौं का रस चरननि मैं, मुख मेलत करि आरति।
जा चरनारबिंद के रस कौं सुर-मुनि करत बिषाद।
सो रस है मोहूँ कौं दुरलभ, तातैं लेत सवाद।

---

① रिपु गर्ब आयौ बहोरै—२। * (ना) धनाश्री। ② हँसि-हँसि अपनी रुचि सौं खेलत—२। ③ सो सुख सूर भयौ सब गोकुल कान्ह सकल संकट पग ठेलत—३। सो सुख सूर भयौ सब गोकुल किलकत कान्ह सकट पग ठेलत—१४। सब बिधि सुख पावत ब्रजवासी सूर सकल संकट पग पेलत—१६। (ना) धनाश्री। ④ पलना पर किलकत हरि खेलत—१, २, ३, ६, ११, १४।

उछरत सिंधु, धराधर काँपत, कमठ पीठ अकुलाइ।
सेष सहसफन डोलन लागे, हरि पीवत जब पाइ।
बढ़्यौ बृच्छ बट, सुर अकुलाने, गगन भयौ उतपात।
महाप्रलय के मेघ उठे करि जहाँ-तहाँ आघात।
करुना करी, छाँड़ि पग दीन्हौ, जानि सुरनि मन संस।
सूरदास[1] प्रभु असुर-निकंदन, दुष्टनि कैं उर गंस ॥ ६४ ॥
॥ ६८२ ॥

* राग बिहागरौ

जसुदा मदन गुपाल सोवावै[2]।
देखि सयन-गति त्रिभुवन कंपै, ईस बिरंचि भ्रमावै[3]।
असित-अरुन-सित आलस लोचन उभय पलक परि[4] आवै।
॥ जनु[5] रवि गत[6] संकुचित कमल जुग, निसि अलि उड़न न पावै।
स्वास उदर उससित यौं, मानौ दुग्ध-सिंधु छबि पावै।
नाभि-सरोज प्रगट पदमासन उतरि नाल पछितावै।
कर सिर-तर करि स्याम मनोहर, अलक अधिक सोभावै।
सूरदास मानौ पन्नगपति, प्रभु ऊपर फन छावै ॥६५॥
॥ ६८३ ॥

---

① हूँहा गूँगाँ रटत सूर प्रभु सुर मुनि करत प्रसस—२, ३, ६, ३, १५, १७।

* (ना, कां) बिलावल।

② झुलावत—११। ③ डरपावत—१७। ④ मिलि—३, १७।

॥ इस चरण के आगे (वे, का, गो, कां, पू) में दो चरण और हैं जो भिन्न भिन्न प्रकार के हैं। प्रति (वे) का पाठ नीचे दिया जाता है—चौंकि चौंकि सिसु दसा प्रगट करि छवि मन में नहिं आवै। जानौ निसिपति धरि करि अमृत स्रुति भंडार भरावै ॥

⑤ जनु बिगसत बारिज सकुचति निसि—३, १७। ⑥ ससि गति होत महानिसि दुग्ध सिंधु—३।

राग बिलावल

† अजिर प्रभातहिँ स्याम कौं, पलिका पौढ़ाए ।
आप चली गृह-काज कौं, तहँ नंद बुलाए ।
निरखि हरषि मुख चूमि कै, मंदिर पग धारी ।
आतुर नँद आए तहाँ, जहँ ब्रह्म मुरारी ।
हँसे तात मुख हेरि कै, करि पग-चतुराई ।
किलकि झटकि उलटे परे, देवनि-मुनि-राई ।
सो छबि नंद निहारि कै, तहँ महरि बुलाई ।
निरखि चरित गोपाल के, सूरज बलि जाई ॥ ६६ ॥

॥ ६८४ ॥

राग रामकली

‡ हरषे नंद टेरत महरि ।
आइ सुत-मुख देखि आतुर, डारि दै दधि-डहरि[1] ।
मथति दधि जसुमति मथानी, धुनि रही घर-घहरि ।
स्रवन सुनति न महर-बातैं, जहाँ-तहँ गइ चहरि ।
यह सुनत तब मातु धाई, गिरे जाने झहरि ।
हँसत नँद-मुख देखि धीरज तब कर्‌यौ ज्यौं ठहरि ।
स्याम उलटे परे देखे, बढ़ी सोभा लहरि ।
सूर प्रभु कर सेज टेकत, कबहुँ टेकत ढहरि ॥६७॥

॥ ६८५ ॥

† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जौ) में है ।

‡ यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जौ) में है ।

① ढहरि—१ ।

* राग रामकली

† महरि मुदित उलटाइ कै, मुख चूमन लागी ।
चिरजीवौ मेरौ लाड़िलौ, मैं भई सभागी ।
एक पाख त्रय-मास कौ, मेरौ भयौ कन्हाई ।
पटकि रान उलटौ परयौ, मैं करौं बधाई ।
नंद-घरनि आनँद भरी, बोलीं ब्रजनारी ।
यह सुख सुनि आईं सबै, सूरज बलिहारी ॥६८॥

॥ ६८६ ॥

राग रामकली

‡ जो सुख ब्रज मैं एक घरी ।
सो सुख तीनि लोक मैं नाहीं, धनि यह घोष-पुरी ।
अष्टसिद्धि-नवनिधि कर जोरे, द्वारैं रहतिं खरी ।
सिव-सनकादि-सुकादि-अगोचर, ते अवतरे हरो ।
धन्य-धन्य बड़भागिनि जसुमति, निगमनि सही परी ।
ऐसैं सूरदास के प्रभु कौं, लीन्हौ अंक भरी ॥६९॥

॥ ६८७ ॥

* राग रामकली

§ यह सुख सुनि हरषीं ब्रजनारी । देखन कौं धाईं बनवारी ।
कोउ जुवती आई, कोउ आवति । कोउ उठि चलति, सुनत सुख पावति ।
घर-घर होति अनंद-बधाई । सूरदास प्रभु की बलि जाई ॥७०॥

॥ ६८८ ॥

---

* (का, गो, जै) बिलावल ।
† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जै) में है ।

‡ यह पद केवल (ल, शा, का) में है ।

* (का, गो, जै) बिलावल ।
§ यह पद (वे, ल, शा का, गो, जै) में है ।

राग रामकली

† जननी देखि छबि, बलि जाति ।
जैसैं निधनी धनहिँ पाऐं, हरष दिन अरु राति ।
बाल-लीला निरखि हरषति, धन्य धनि ब्रजनारि ।
निरखि जननी-बदन किलकत, त्रिदस-पति दै तारि ।
धन्य नँद, धनि धन्य गोपी, धन्य ब्रज कौ बास ।
धन्य धरनी - करन - पावन - जन्म सूरजदास ॥ ७१ ॥
॥ ६८६ ॥

राग बिलावल

‡ जसुमति भाग-सुहागिनी, हरि कौं सुत जानै !
मुख-मुख जोरि बत्यावई, सिसुताई ठानै ।
मो निधनी कौ धन रहै, किलकत मन मोहन ।
बलिहारी छबि पर भई, ऐसी बिधि जोहन ।
लटकति बेसरि जननि की, इकटक चख लावै ।
फरकत बदन उठाइ कै, मनहीं मन भावै ।
महरि मुदित हित उर भरै, यह कहि, मैं वारी ।
नंद-सुवन के चरित पर, सूरज बलिहारी ॥ ७२ ॥
॥ ६९० ॥

राग आसावरी

§ गोद लिए हरि कौं नँदरानी, अस्तन पान करावति हैं ।
बार-बार रोहिनि कौं कहि-कहि, पलिका अजिर मँगावति हैं ।

---

† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जौ) में है ।
‡ यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जौ) में है ।
§ यह पद (वे, ल, शा, का गो, जौ) में है ।

प्रात समय रवि-किरनि कौंवरी, सेा कहि, सुतहिँ बतावति है।
आउ घाम मेरे लाल कैँ आँगन, बाल-केलि कौं गावति है।
रुचिर सेज लै गइ मोहन कौं, भुजा उछंग सेावावति है।
सूरदास प्रभु सेाए कन्हैया, हलरावति-मल्हरावति है ॥७३॥

॥ ६६१ ॥

राग बिलावल

† नंद-घरनि आनँद भरी, सुत स्याम खिलावै।
कबहिँ घुटुरुवनि चलहिँगे, कहि, बिधिहिँ मनावै।
कबहिँ दँतुलि द्वै दूध की, देखौं इन नैननि!
कबहिँ कमल-मुख बोलिहैँ, सुनिहौं उन बैननि।
चूमति कर-पग-अधर-भ्रू[1], लटकति लट चूमति।
कहा बरनि सूरज कहै, कहँ पावै सेा मति ॥७४॥

॥ ६६२ ॥

* राग बिलावल

नान्हरिया गेापाल लाल, तू बेगि बड़ौ किन होहि।
इहिँ मुख मधुर बचन हँसिकै धौं, जननि कहै कब मोहिँ।
यह लालसा अधिक मेरैँ[2] जिय जेा जगदीस कराहिँ।
मेा देखत कान्हर[3] इहिँ आँगन, पग द्वै धरनि धराहिँ।
खेलहिँ[4] हलधर-संग रंग-रुचि, नैन निरखि सुख पाऊँ।

---

† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जौ) में है।

(१) पान—१, ६, ११, १५।

* (ना) टेाड़ो। (के, क, रा) सेारठ। (कां) धनाश्री।

(२) दिन दिन प्रति कबहूँ ईस करै—१, ११। (३) माधौ—१, ११। कबधौं मेरो मोहन—११, १३। (४) हलधर सहित फिरै जब आँगन चरन सबद सुख पाऊँ—१, ११।

छिन-छिन छुधित[1] जानि पय कारन, हँसि-हँसि[2] निकट बुलाऊँ।
जाकौ[3] सिव-बिरंचि-सनकादिक मुनिजन ध्यान न पाव।
सूरदास जसुमति[4] ता सुत-हित, मन अभिलाष बढ़ाव ॥७५॥

॥ ६६३ ॥

तृणावर्त-वध

* राग बिलावल

जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरौ लाल घुटुरुवनि रेँगै, कब धरनी पग द्वैक धरै।
कब द्वै दाँत दूध के देखौं, कब तोतरैँ मुख बचन झरै।
कब नंदहिँ बाबा कहि बोलै, कब जननी कहि मोहिँ ररै।
कब मेरौ अँचरा गहि मोहन, जेाइ-सोइ कहि मोसौं झगरै।
कब धौं तनक-तनक कछु खैहै, अपने कर सौं मुखहिँ भरै।
कब हँसि बात कहैगौ मोसौं, जा छबि तैँ दुख दूरि हरै।
स्याम अकेले आँगन छाँड़े, आपु गई कछु काज घरै।
इहिँ अंतर अँधवाह उठ्यौ इक, गरजत गगन सहित घहरै।
सूरदास ब्रज-लोग सुनत धुनि, जो जहँ-तहँ सब अतिहिँ[5] डरै ॥७६॥

॥ ६६४ ॥

* राग सूहौ

अति बिपरीत तृनावर्त आयौ।
बात-चक्र-मिस ब्रज ऊपर परि, नंद-पैारि कैँ भीतर धायौ।

---

① आरि करै मनमोहन हँसि हँसि कंठ लगाऊँ—१४। ② हौं हठि—१। ③ आगम निगम नेति कहि गायौ सिव उनमान न पायौ—१, ११। ④ बालक रस लीला मन अभिलाष बढायौ—१, ११।

* (ना) केदारौ। (के, क)। सोरठ (कां, रा) नट।

⑤ हहरै—६, १७।

* (ना) नट।

पौढ़े स्याम अकेले[1] आँगन, लेत उड़्यौ, आकास चढ़ायौ।
अंधाधुंध भयौ सब गोकुल, जो जहँ रह्यौ सो तहीं छपायौ।
जसुमति धाइ आइ जो देखै, स्याम-स्याम कहि[2] टेर लगायौ।
धावहु नंद गोहारि लगौ किन, तेरौ सुत अँधवाह उड़ायौ।
इहिं अंतर अकास तैं आवत, परबत सम कहि सबनि बतायौ।
मारयौ असुर सिला सौं पटक्यौ, आपु चढ़्यौ ता ऊपर भायौ।
दौरे नंद, जसोदा दौरी, तुरतहिं लै हित कंठ लगायौ।
सूरदास यह कहति जसोदा, ना जानौं विधनहिं[3] का भायौ ॥७७॥

॥ ६६५ ॥

राग बिलावल

† सोभित सुभग नंद जू की रानी।
अति आनँद आँगन मैं ठाढ़ी, गोद लिए सुत सारँगपानी।
तृनावर्त की सुरति आनि जिय, पठयौ असुर कंस अभिमानी।
गरू भए, महि मैं बैठाए, सहि न सकी जननी अकुलानी।
आपुन गई भवन मैं दौरी, कछु इक काज रही लपटानी।
बौंडर महा भयावन आयौ, गोकुल सबै प्रलय करि मानी।
महा दुष्ट लै उड़्यौ गुपालहिं, चल्यौ अकास कृष्न यह जानी।
चापि ग्रीव हरि प्रान हरे, दृग-रकत-प्रवाह चल्यौ अधिकानी।
पाहन सिला निरखि हरि डारयौ, ऊपर खेलत स्याम बिनानी।
ब्रज-जुवतिनि उपवन मैं पाए, लयौ उठाइ कंठ लपटानी।

---

① नंद के—२, ३, १६। १२। ③ विधना का ठायौ—१६। ५) में है।
② करि सोर उठायौ—१,६,११, † यह पद (वे, का, गो, जौ,

लै आईं गृह चूमति-चाटति, घर-घर सबनि बधाई मानी।
देतिं अभूषन वारि-वारि सब, पीवतिं सूर वारि सब पानो ॥७८॥

॥ ६६६ ॥

* राग धनाश्री

उबरचौ स्याम, महरि बड़भागी।
बहुत दूरि तैं आइ परचौ धर, धौं कहुँ चोट न लागी।
रोग लेउँ बलि जाउँ कन्हैया, यह कहि कंठ लगाइ[1]।
तुमही हौ ब्रज के जीवन-धन देखत नैन सिराइ[2]।
भली नहीं यह प्रकृति जसोदा, छाँड़ि अकेलौ जाति।
गृह कौ काज इनहुँ तैं प्यारौ, नैकहुँ नाहिं डराति।
भली भई अबकैं हरि बाँचे, अब तौ सुरति सम्हारि।
सूरदास खिझि कहति ग्वालिनी, मन मैं महरि बिचारि ॥७९॥

॥ ६६७ ॥

राग बिलावल

† अब हौं बलि[3] बलि जाउँ हरी।
निसिदिन रहति बिलोकति हरि-मुख, छाँड़ि सकति नहिं एक घरी।
हौं अपने गोपाल लड़ैहौं, भौन-चाड़ सब रहौ धरी।
पाऊँ कहां खिलावन कौ सुख, मैं दुखिया, दुख कोखि[4] जरी।
जा सुख कौं सिव-गौरि मनाई, तिय-ब्रत-नेम अनेक करी।
सूर स्याम पाए पैंड़े मैं, ज्यौं पावै निधि रंक परी ॥८०॥

॥ ६६८ ॥

---

* (ना, पु) कान्हरौ। (के, क, कां, रा) बिलावल।

१। (२) सिराए—२। सिरायौ—३।

† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जौ) में है।

(३) स्याम—१, ११, १२।

(४) कोटि भरी—१, ११, १२।

* राग धनाश्री

हरि किलकत जसुदा की कनियाँ ।
निरखि-निरखि मुख कहति लाल सौं, मेा निधनी के धनियाँ ।
अति कोमल तन चितै स्याम कौ, बार-बार पछितात ।
कैसैं बच्यौ, जाउँ बलि तेरी, तृनावर्त कैं घात ।
ना जानौं धौं कौन पुन्य तैं, को करि लेत सहाइ ।
वैसौ काम पूतना कीन्हौ, इहिं ऐसौ कियौ आइ ।
माता दुखित जानि हरि बिहँसे, नान्हो दँतुलि दिखाइ ।
सूरदास प्रभु माता चित तैं दुख डार्‌यौ बिसराइ ॥ ८१ ॥

॥ ६६६ ॥

* राग धनाश्री

सुत-मुख देखि जसोदा फूली ।
हरषित देखि दूध की दँतियाँ, प्रेम-मगन तन की सुधि भूली ।
बाहिर तैं तब नंद बुलाए, देखौ धौं सुंदर सुखदाई ।
तनक-तनक सी दूध-दँतुलिया, देखौ, नैन सफल करौ आई ।
आनँद सहित महर तब आए, मुख चितवत दोउ नैन अघाई ।
सूर स्याम किलकत द्विज[1] देख्यौ, मनौ कमल पर बिज्जु जमाई ॥ ८२ ॥

॥ ७०० ॥

× राग देवगंधार

† हरि किलकत जसुमति की कनियाँ ।
मुख मैं तीनि लोक दिखराए, चकित भई नँद-रनियाँ ।

---

* (ना) टोड़ी ।
* (ना) देवगंधार ।
(१) द्युति—२ । मुख—१६ ।
× (कां, रा) धनाश्री ।
† यह पद (वे, का, गो, जौ) में नहीं है ।

घर-घर हाथ दिवावति डोलति, बाँधति गरैं बघनियाँ।
सूर स्याम की अदभुत लीला नहिँ जानत मुनिजनियाँ ॥८३॥

॥ ७०१ ॥

रागिनी श्रीहठी

† जननी बलि जाइ हालरु हालरौ गोपाल।
दधिहिँ बिलोइ सदमाखन राख्यौ, मिश्री सानि चटावै नँदलाल।
कंचन खंभ, मयारि, मरुवा-डाड़ी, खचि हीरा बिच लाल-प्रवाल।
रेसम बनाइ नव रतन पालनौ, लटकन बहुत पिरोजा-लाल।
मोतिनि झालरि नाना भाँति खिलौना, रचे बिस्वकर्मा सुतहार।
देखि-देखि किलकत दँतियाँ द्वै राजत क्रीड़त बिबिध बिहार।
कठुला कंठ बज्र केहरि-नख, मसि-बिंदुका सु मृग-मद भाल।
देखत देत असीस नारि-नर, चिरजीवौ जसुदा तेरौ लाल।
सुर नर मुनि कौतूहल फूले, झूलत देखत नंद कुमार।
हरषत सूर सुमन बरषत नभ, धुनि छाई है जै-जैकार ॥८४॥

॥ ७०२ ॥

नाम-करण

* राग बिलावल

महर-भवन रिषिराज गए।
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौ, अरघासन करि हेत दए।
धन्य आज बड़भाग हमारे, रिषि आए, अति कृपा करी।
हम कहा धनि, धनि नंद-जसोदा, धनि यह ब्रज जहँ प्रगट हरी।

---

† यह पद केवल (वे, गो, जा) में है।

* (ना) देवगंधार।

आदि अनादि रूप-रेखा नहिँ, इनतैँ नहिँ प्रभु और बियो।
देवकि उर अवतार लेन कह्यौ, दूध पिवन तुम माँगि लियो।
बालक करि इनकौँ जनि जानौ, कंस[1] बधन येई करिहैँ।
सूर देह धरि सुरनि[2] उधारन, भूमि-भार येई हरिहैँ ॥८५॥

॥ ७०३ ॥

राग धनाश्री

† (नंद जू) आदि जोतिषी तुम्हरे घर कौ, पुत्र-जन्म सुनि आयौ।
लगन सोधि सब जोतिष गनिकै, चाहत तुमहिँ सुनायौ।
संवत सरस बिभावन, भादौँ, आठैँ तिथि, बुधवार।
कृष्न पच्छ, रोहिनी, अर्द्ध निसि, हर्षन जोग उदार।
बृष है लग्न, उच्च के निसिपति, तनहिँ बहुत सुख पैहैँ।
चौथैँ सिंह रासि के दिनकर, जीति सकल महि लैहैँ।
पचऐँ बुध कन्या कौ जौ है, पुत्रनि बहुत बढ़ैहैँ।
छठऐँ सुक्र तुला के सनि जुत, सत्रु रहन नहिँ पैहैँ।
ऊँच नीच जुवती बहु करिहैँ, सतऐँ राहु परे हैँ।
भाग्य-भवन मैँ मकर महीसुत, बहु ऐस्वर्य बढ़ैहैँ।
लाभ-भवन मैँ मीन बृहस्पति, नवनिधि घर मैँ ऐहैँ।
कर्म-भवन के ईस सनीचर, स्याम बरन तन ह्वैहैँ।
आदि सनातन परब्रह्म प्रभु, घट-घट अंतरजामी।
सो तुम्हरैँ अवतरे आनि कै, सूरदास के स्वामी ॥८६॥

॥ ७०४ ॥

---

① कंस कौ बध ये--१, ६, ११, १५। कंसै बध--३। ② असुर सँहारन--१३।
† यह पद केवल (शा) में है।

* राग बिलावल

धन्य जसोदा भाग तिहारौ, जिनि ऐसौ सुत जायौ।
जाकैं दरस-परस सुख तन-मन, कुल[1] कौ तिमिर नसायौ।
बिप्र-सुजन-चारन-बंदीजन, सकल नंद-गृह आए।
नूतन[2] सुभग दूब-हरदी-दधि, हरषित[3] सीस बँधाए।
गर्ग निरूपि कह्यौ सब लच्छन, अबिगत हैं अबिनासी।
सूरदास प्रभु[4] के गुन सुनि-सुनि, आनंदे ब्रजबासी ॥ ८७ ॥

॥ ७०५ ॥

अन्नप्राशन

* राग बिलावल

कान्ह कुँवर की करहु पासनी, कछु दिन घटि षट मास गए।
नंद महर यह सुनि पुलकित जिय, हरि अनप्रासन जोग भए।
बिप्र बुलाइ नाम लै बूझ्यो, रासि सोधि इक सुदिन धरचौ।
आछौ दिन सुनि महरि जसोदा, सखिनि बोलि सुभ गान करचौ।
जुवति महरि कौं गारी गावतिं, और महर कौ नाम लिए।
ब्रज-घर-घर आनंद बढ़्यौ अति, प्रेम पुलक न समात हिए।
जाकौं नेति-नेति स्रुति गावत, ध्यावत सुर-मुनि ध्यान धरे।
सूरदास तिहिं कौं ब्रज-बनिता, झकझोरतिं उर अंक भरे ॥ ८८ ॥

॥ ७०६ ॥

× राग सारंग

आजु कान्ह करिहैं अनप्रासन।
मनि-कंचन के थार भराए, भाँति-भाँति के बासन।

---

* (ना) बिहाग। (के, पू) गौरी। (का, कां, रा) आसावरी।
(१) गोकुल—२, ३, १८, ११। (२) करि तन सुभग दूब हरदी दधि हरषि असीस बँधायौ—६। (३) हरषि असीस बधाए—६, १७। (४) सुनतै जस हरिके—१। (ना) गूजरी।
× (ना) जैतश्री।

नंद-घरनि ब्रज-बधू बुलाईं, जे सब अपनी पाँति।
कोउ ज्यौनार करति, कोउ घृत-पक, षटरस के बहु भाँति।
बहुत प्रकार किए सब ब्यंजन, अमित बरन मिष्टान।
अति उज्ज्वल-कोमल-सुठि-सुंदर, देखि महरि मन मान।
जसुमति नंदहिँ बोलि कह्यौ तब, महर, बुलावहु जाति।
आपु गए नँद सकल[1] -महर-घर, लै आए सब ज्ञाति।
आदर करि बैठाइ सबनि कौं, भीतर गए नँदराइ।
जसुमति उबटि न्हवाइ कान्ह कौं, पट-भूषन पहिराइ।
तन झँगुली, सिर लाल चौतनी, चूरा दुहुँ कर-पाइ।
बार-बार मुख निरखि जसोदा, पुनि[2]-पुनि लेति बलाइ।
घरी जानि सुत-मुख-जुठरावन नँद बैठे लै गोद।
महर बोलि बैठारि मंडली, आनँद करत बिनोद।
कनक-थार भरि खीर धरी लै, तापर घृत-मधु नाइ।
नँद लै-लै हरि मुख जुठरावत, नारि उठीं सब गाइ।
षटरस के परकार जहाँ लगि, लै-लै अधर छुवावत।
बिस्वंभर जगदीस जगत-गुरु, परसत मुख करुवावत।
तनक-तनक जल अधर पोंछि कै, जसुमति पै पहुँचाए।
हरषवंत जुवती सब लै-लै, मुख चूमतिँ उर लाए।
महर गोप सबही मिलि बैठे, पनवारे परसाए।
भोजन करत अधिक रुचि उपजी, जो जाकैं मन भाए।

---

① महर सबनि कै--२, ② हँसि-हँसि--१६, १८।
१८ १६। सबके घर घर--१७

इहिँ बिधि सुख बिलसत ब्रजबासी, धनि गोकुल नर-नारी।
नंद-सुवन की या छबि ऊपर, सूरदास बलिहारी ॥ ८६ ॥
॥ ७०७ ॥

* राग सारंग

† हरि कौ मुख माइ, मोहिँ अनुदिन अति भावै।
चितवत[1] चित नैननि की मति-गति बिसरावै।
ललना[2] लै-लै उछंग अधिक लोभ लागैँ।
निरखतिँ निंदति निमेष करत ओट आगैँ।
सोभित सु-कपोल-अधर, अलप-अलप दसना।
किलकि[3]-किलकि बैन कहत, मोहन मृदु रसना।
नासा, लोचन बिसाल, संतत सुखकारी।
सूरदास धन्य भाग, देखतिँ ब्रजनारी ॥ ६० ॥
॥ ७०८ ॥

* राग सारंग

ललन हौँ या छबि ऊपर वारी।
बाल गोपाल लगौ इन नैननि, रोग-बलाइ तुम्हारी।
लट[4] लटकनि, मोहन मसि-बिँदुका-तिलक भाल सुखकारी।
मनौ कमल-दल[5] सावक पेखत, उड़त मधुप छबि न्यारी।

---

* (ना) रामकली।

† यह पद (वृ, कौं, रा, श्या) मेँ नहीँ है।

① चितवत ब्रज जुवतिनि के सब कृत बिसरावै—२, ३, ६, १४। ② बार-बार लै उछंग रहत लोभ लागे—३, १४। ③ किलकत बिहँसत सुदेश मोहन मृदु रसना—३, १४।

‡ (ना) ईमन। (का, के, गो, जौ, कौं, पू, रा) धनाश्री।

④ कुटिल अलक मोहन मुख बिहँसन भृकुटी बिकट नियारी—३। ⑤ अलि सावक पगति—१, ६, ६, ११, १५, १७। दल सावक पंगति—३, ११, १८।

लोचन ललित, कपोलनि काजर, छबि उपजति अधिकारी।
सुख मैं सुख औरै रुचि बाढ़ति, हँसत देत किलकारी।
अलप दसन,[1] कलबल करि बोलनि, बुधि नहिं परत बिचारी।
बिकसति ज्योति अधर-बिच, मानौ बिधु मैं बिज्जु उज्यारी।
सुंदरता कौ पार न पावति, रूप देखि महतारी।
सूर सिंधु की बूँद भई मिलि मति-गति-दृष्टि हमारी॥ ६१॥

॥ ७०६ ॥

* राग जैतश्री

† लानन, वारी या मुख ऊपर।
माई मेरिहि दीठि न लागै, तातैं मसि-बिंदा दियौ भ्रू पर।
सरबस[2] मैं पहिलैं ही वार्‌यौ, नान्हीं-नान्हीं दँतुली दू पर।
अब कहा करौं[3] निछावरि, सूरज सोचति अपनैं लालन जू पर॥ ६२॥

॥ ७१० ॥

राग जैतश्री

‡ लाल हौं वारी तेरे मुख पर।
कुटिल अलक, मोहनि-मन बिहँसनि, भृकुटी बिकट ललित नैननि पर।
दमकति दूध-दँतुलिया बिहँसत, मनु सीपज घर कियौ बारिज पर।
लघु-लघु लट सिर घूँघरवारी, लटकन लटकि रह्यौ माथैं पर।
यह उपमा कापै कहि आवै, कछुक कहौं सकुचति हौं जिय पर।

---

① बचन—३।
* (ना) ललित। (के) बिलावल। (कां) धनाश्री।
† यह पद (स) में नहीं है।
② तो मैं नितही वारौं—१८, १६। ③ नेाछावरि करि दीजै सूर अपने ललन लालू पर—१६।
‡ यह पद (ना, बृ, कां, पू, रा, श्या) में नहीं है।

नव-तन-चंद्र-रेख-मधि राजत, सुरगुरु-सुक्र-उदोत परसपर।
लोचन[1] लोल कपोल ललित अति, नासा कौ मुकता रदछद पर।
सूर कहा न्यौछावर करियै अपने लाल ललित लरखर पर॥ ६३॥

॥ ७११ ॥

वर्ष-गाँठ * राग बिलावल

आजु भोर तमचुर के रोल।
॥ गोकुल मैं आनंद होत है, मंगल-धुनि महराने[2] टोल।
फूले फिरत नंद अति सुख भयो, हरषि मँगावत फूल-तमोल।
फूली फिरति जसोदा तन-मन, उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल।
तनक बदन, दोउ तनक-तनक कर, तनक चरन, पोंछति पट झोल।
कान्ह गरैं सोहति मनि-माला, अंग अभूषन अँगुरिनि गोल।
सिर चौतनी, डिठौना दीन्हो, आँखि आँजि पहिराइ निचोल।
स्याम[3] करत माता सौं झगरौ, अटपटात कलबल करि बोल।
दोउ कपोल गहि कै मुख चूमति, बरष-दिवस कहि करति कलोल।
सूर स्याम ब्रज-जन-मन-मोहन-बरष-गाँठि कौ डोरा खोल॥ ६४॥

॥ ७१२ ॥

❀ राग धनाश्री

† अरी, मेरे लालन की आजु बरष-गाँठि, सबै
सखिनि कौं बुलाइ मँगल-गान करावौ।

---

(१) मैं या छबि पर तन मन वारे तनक घुटुरुवहु (होत है) भू पर—६, १४।
* (ना) रामकली।
॥ (के) में इस पद की कोई टेक नहीं है। दूसरे चरण के स्थान में यह पंक्ति है—आजु भोरही तमचुर के सुर मंगल धुनि महराने टोल।
(२) घहराने ढोल—१४।
(३) करत आरि मैया सौं झगरत बोलत कछुक तोतरे बोल—१७।
(क) बिलावल।
† यह पद (ना, शा, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है। इसका पाठ सभी प्राप्त प्रतियों में बड़ा अस्तव्यस्त है। केवल (के) और (पू) का पाठ कुछ ठीक ज्ञात होता है। अतः इन्हीं का पाठ किंचित संशोधन करके इस संस्करण में दिया गया है।

चंदन आँगन लिपाइ, मुतियनि चौकैँ पुराइ,
उमँगि अँगनि आनँद सौं, तूर बजावौ।
मेरे कहैँ बिप्रनि बुलाइ, एक सुभ घरी धराइ,
बागे चीरे बनाइ, भूषन पहिरावौ।
अछत-दूब दल बँधाइ, लालन की गँठि जुराइ,
इहैं मोहिँ लाहौ नैननि दिखरावौ।
पँचरँग सारी मँगाइ, बधू जननि पैहराइ,
नाचैँ सब उमँगि अंग, आनँद बढ़ावौ।
नँदरानी ग्वारिनि बुलाइ, इहै रीति कहि सुनाइ,
बेगि करौ किन, बिलंब काहैँ लगावौ।
जसुमति तब नँद बुलावति, लाल लिए कनियाँ दिखरावति,
लगन घरी आवति, या तैँ, न्हवाइ बनावौ।
सूर स्याम छबि निहारति, तन-मन जुवति जन वारति,
अतिहीँ सुख धारति, बरष-गाँठि जुरावौ॥ ६५॥

॥ ७१३ ॥

* राग आसावरी

† उमँगीँ ब्रजनारि सुभग, कान्ह बरष-गाँठि उमँग, चहतिँ बरष बरषनि।
गावहिँ मंगल सुगान, नीके सुर नाकी तान, आनँद अति हरषनि।

---

* (ना) संकराभरण।

† यह पद (बृ, कां, श्या) में नहीं है। शेष प्रतियों में इसका पाठ अर्थ और छंद की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है। बहुमत से निर्धारित करके ऊपर का पाठ रक्खा गया है।

कंचन-मनि-जटित-थार, रोचन, दधि, फूल-डार, मिलिबे की तरसनि।
प्रभु बरष-गाँठि जोरति, वा छबि पर तृन तोरति, सूर अरस परसनि ॥६६॥

॥ ७१४ ॥

घुटुरुवाँ चलना

* राग धनाश्री

खेलत नँद[1]-आँगन गोबिंद।
निरखि-निरखि जसुमति सुख पावति, बदन मनोहर इंदु[2]।
कटि किंकिनी चंद्रिका[3] मानिक, लटकन लटकत भाल।
परम सुदेस कंठ केहरि-नख, बिच-बिच बज्र प्रवाल।
कर पहुँची, पाइनि मैं नूपुर, तन राजत[4] पट पीत।
घुटुरुनि चलत, अजिर[5] महँ बिहरत, मुख मंडित नवनीत।
सूर बिचित्र चरित्र स्याम के रसना कहत न आवैं।
बाल दसा अवलोकि सकल मुनि, जोग बिरति बिसरावैं ॥ ६७ ॥

॥ ७१५ ॥

* राग आसावरी

घुटुरुनि चलत स्याम मनि-आँगन, मातु-पिता दोउ देखत री।
कबहुँक किलकि तात-मुख हेरत, कबहुँ मातु[6]-मुख पेखत री।
लटकन लटकत ललित भाल पर, काजर-बिंदु भ्रुव-ऊपर री।
यह सोभा नैननि भरि देखैं, नहिं उपमा तिहुँ भू पर री।
कबहुँक दौरि घुटुरुवनि लपकत[7], गिरत, उठत पुनि धावै रो।

---

* (ना) अहीरी। (का, के, क) बिलावल। (कां, रा, श्या) कान्हरा।

① ब्रज—२, १६। गृह—१७। ② चंद—१, ३, ११, १५। ③ कंठ मनि की दुति लट मुक्ता भरि भाल—१। चद्रमनि मानिक अरु मुकतनि की माल—२। चद्रमणि की लट मुक्तावली भलि भाल—१४। ④ रजित रज पीत—१, ६, ११, १५। ⑤ बच्छ सँग बिहरत—२, १६, १८, १६।

(रा) बिलावल।

⑥ जननि—१, ३, ६, ६, ११, १४, १६। ⑦ लटकत—१, ३, ६, ११, १४, १५, १७। ऐंगत—२, १६, १८, १६।

इत तैं नंद बुलाइ लेत हैं, उततैं जननि बुलावै री।
दंपति होड़ करत आपुस मैं, स्याम खिलौना कीन्हौ री।
सूरदास प्रभु ब्रह्म सनातन, सुत हित करि दोउ लीन्हौ री॥ ६८॥

॥ ७१६ ॥

* राग बिलावल

सोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, मुख दधि लेप किए।
चारु कपोल, लोल लोचन, गोरोचन-तिलक दिए।
लट-लटकनि मनु मत्त मधुप-गन मादक मधुहिँ पिए।
कटुला-कंठ, बज्र केहरि-नख, राजत रुचिर हिए।
धन्य सूर एकौ पल इहिँ सुख, का सत कल्प जिए॥ ६६॥

॥ ७१७ ॥

* राग रामकली

† खीझत जात माखन खात।
अरुन लोचन, भौंह टेढ़ी, बार-बार जँभात।
कबहुँ रुनझुन चलत घुटुरुनि, धूरि धूसर गात।
कबहुँ झुकि कै अलक खैंचत, नैन जल भरि जात।
कबहुँ तोतरे बोल बोलत, कबहुँ बोलत तात।
सूर हरि की निरखि सोभा, निमिष तजत न मात॥ १००॥

॥ ७१८ ॥

---

* (ना) गूजरी। (क) आसावरी।

(क तथा कल्पद्रुम) बिलावल।

† यह पद केवल (गो, क, तथा राग-कल्पद्रुम) में है।

राग ललित

† (माई) बिहरत गोपाल राइ, मनिमय रचे अंगनाइ
लरकत पररिगनाइ, घूटुरूनि डोलै।
निरखि निरखि अपनौ प्रति-बिंब, हँसत किलकत औ,
पाछैं चितै फेरि-फेरि मैया-मैया बोलै।
ज्यौं अलिगन सहित बिमल जलज जलहिं धाइ रहै,
कुटिल अलक बदन की छबि, अवनी परि लोलै।
सूरदास छबि निहारि, थकित रहीं घोष नारि
तन-मन-धन देतिं वारि, बार-बार ओलै॥ १०१॥

॥ ७१६ ॥

* राग बिलावल

बाल बिनोद खरो जिय भावत।
मुख प्रतिबिंब पकरिबे कारन हुलसि घुटुरुवनि धावत।
अखिल[1] ब्रह्मंड-खंड की महिमा, सिसुता माहिं दुरावत।
सब्द जोरि[2] बोल्यौ चाहत हैं, प्रगट बचन नहिं आवत।
कमल-नैन माखन माँगत हैं करि[3]-करि सैन बतावत।
सूरदास[4] स्वामी सुख-सागर, जसुमति-प्रीति बढ़ावत॥ १०२॥

॥ ७२० ॥

---

† यह पद केवल (वे, स, ल, शा, गो, जौ) में है। इनमें इसका पाठ ऐसा भ्रष्ट है कि न तो छंद ही ठीक रह गया है और न अर्थ ही। अंतिम चरण से छंद का कुछ पता लगाकर इसकी मात्राएँ समान कर दी गई हैं।

* (ना) ईमन। (क) आसावरी। (कां) धनाश्री। (रा) सारंग।

① छिनक माझ त्रिभुवन की लीला—१, ६, ११। कृत ब्रह्म ड—२। ② एक—१, ६, ६, ११। ③ ग्वालिनि—१, २, ६, ११, १५, १६। ④ सूर स्याम सु सनेह मनोहर—१, ६, ११। सूरदास स्वामी ब्रजबासी नैननि कौ फल पावत—२, १६, १८, १६।

राग सारंग

† मैं बलि स्याम, मनोहर नैन।
जब[1] चितवत मो तन करि अँखियनि, मधुप देत मनु सैन!
कुंचित अलक, तिलक गोरोचन, ससि[2] पर हरि के ऐन।
कबहुँक खेलत[3] जात घुटुरुवनि, उपजावत सुख चैन।
कबहुँक रोवत-हँसत बलि गई, बोलत मधुरे बैन।
कबहुँक ठाढ़े होत टेकि कर, चलि न सकत इक गैन।
देखत बदन करौं न्यौछावरि, तात-मात सुख-दैन।
सूर बाल-लीला के ऊपर, वारौं कोटिक मैन॥ १०३॥
॥ ७२१॥

* राग कान्हरौ

‡ आँगन खेलत घुटुरुनि धाए।
नील-जलद-अभिराम[4] स्याम तन, निरखि जननि दोउ निकट बुलाए।
बंधुक-सुमन-अरुन पद-पंकज, अंकुस प्रमुख चिह्न बनि आए।
नूपुर-कलरव मनु हंसनि सुत रचे नीड़, दै बाहँ बसाए।
कटि किंकिनि बर हार ग्रीवदर, रुचिर बाहु भूषन पहिराए।
उर श्रीबच्छ मनोहर हरि-नख, हेम-मध्य मनि-गन बहु लाए।

---

† यह पद (वे, स, ज, शा, का, गो, जौ) में है।
① अब (जब) चितवत मोहन की—१, ३, ६, ११, १५।
② ससि परिहरि से ऐन—३।
③ खेलन—३, ६।
* (क) आसावरी।
‡ यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है। गोस्वामी तुलसीदासजी कृत 'गीतावली' में भी यह पद प्राय इसी रूप में मिलता है। केवल दूसरी पंक्ति में 'स्याम' के स्थान पर 'राम' और 'दोउ' के स्थान पर 'मुख' कर दिया गया है तथा अंतिम पंक्ति 'सूरदास क्यौं करि बरनै जो छबि निगम नेति कहि गाए' के बदले 'तुलसिदास रघुनाथ रूप गुन तौ कहौं जौ बिधि होहिं बनाए' रक्खी गई है। (गीतावली, ना० प्र० स० पद २३, पृ० २८८)
④ तनु स्याम मुख—१। स्याम राम मुख—३, ६, ९, ११, १४, १७।

सुभग चिबुक, द्विज-अधर-नासिका, स्रवन-कपोल मोहिँ सुठि भाए।
भ्रुव सुंदर, करुना-रस-पूरन लोचन मनहु जुगल जल-जाए।
भाल बिसाल ललित लटकन मनि, बाल-दसा के चिकुर सुहाए।
मानौ गुरु-सनि-कुज आगैं करि, ससिहिँ मिलन तम के गन आए।
उपमा एक अभूत भई तब, जब जननी पट पीट उढ़ाए।
नाल जलद पर[1] उडुगन निरखत, तजि सुभाव मनु तड़ित छपाए।
अंग-अंग-प्रति मार-निकर मिलि, छबि-समूह लै-लै मनु छाए।
सूरदास सो क्यौं करि बरनै, जो छबि निगम नेति करि गाए॥ १०४॥

॥ ७२२ ॥

* राग धनाश्री

हौं बलि जाउँ छबीले लाल की।

धूसर धूरि घुटुरुवनि रेँगनि, बोलनि बचन रसाल की।
छिटकि रहीं चहुँ दिसि जु लटुरियाँ, लटकन-लटकनि भाल की।
मोतिनि सहित नासिका नथुनी, कंठ-कमल-दल-माल की।
कछुक हाथ, कछु मुख माखन लै, चितवनि नैन बिसाल की।
सूरदास प्रभु-प्रेम-मगन भईं, ढिग न तजनि ब्रजबाल की॥ १०५॥

॥ ७२३ ॥

राग कान्हरौ

† आदर सहित बिलोकि स्याम-मुख, नंद अनंद-रूप लिए कनियाँ।

---

① ऊपर जौ निरखत—३, ६, ११, १४। ऊपर यौ निरखत—६।

* (ना) अडानो। (के, क, पू) बिलावल। (कौं, रा, श्या) सारग।

† यह पद (ना, वृ, कौं, रा, श्या) में नहीं है। गोस्वामी तुलसीदास की गीतावली में भी यह पद किंचित् शाब्दिक हेर-फेर से आया है। संवत् १७२३ की प्रति में भी, जो सूरसागर की प्राप्त प्रतियों में सबसे प्राचीन है, यह पद प्राप्त है। (तुलसी-ग्रंथावली, नागरी-प्रचारिणी सभा, पद ३१, पृष्ठ २६२)।

सुंदर स्याम-सरोज-नील-तन, अँग-अँग सुभग सकल सुखदनियाँ।
अरुन चरन[1] नख-जोति जगमगति, रुन-झुन करति पाइँ पैजनियाँ।
कनक-रतन-मनि-जटित-रचित कटि-किंकिनि कुनित[2] पीतपट तनियाँ[3]।
पहुँची करनि, पदिक उर हरि-नख, कठुला कंठ मंजु गज-मनियाँ।
रुचिर चिबुक-द्विज-अधर नासिका अति सुंदर राजति सुबरनियाँ[4]।
कुटिल भृकुटि, सुख की निधि आनन, कल कपोल की छबि न उपनियाँ।
भाल तिलक मसि-बिंदु बिराजत, सोभित सीस लाल चौतनियाँ।
मन-मोहिनी तोतरी बोलनि, मुनि-मन हरनि सु हँसि मुसुकनियाँ।
बाल सुभाव बिलोल बिलोचन, चोरति चितहिँ चारु चितवनियाँ।
निरखतिँ ब्रज-जुवती सब ठाढ़ी, नंद-सुवन-छबि चंद-वदनियाँ।
सूरदास प्रभु निरखि मगन भए, प्रेम-बिवस कछु सुधि न अपनियाँ॥१०६॥७२४॥

* राग कान्हरौ

† गोद[5] लिए जसुदा नँद-नंदहिँ।
पोत झँगुलिया की छबि छाजति, बिज्जुलता सोहति मनु कंदहिँ।
बाजीपति[6] अग्रज अंबा तेहिँ, अरक-थान-सुत माला गुंदहिँ।
मानौ स्वर्गहिँ तें सुरपति-रिपु-कन्या-सौति आइ ढरि सिंदहिँ[7]।
आरि करत कर चपल चलावत, नंद-नारि-आनन छुवै मंदहिँ।
मनौ भुजंग अमी-रस-लालच, फिरि-फिरि चाटत सुभग सुचंदहिँ।
गूँगी बातनि यौं अनुरागति, भँवर गुंजरत कमल मौं बंदहिँ।
सूरदास स्वामी धनि तप किए, बड़े भाग जसुदा अरु नंदहिँ॥१०७॥७२५॥

---

① तरनि—१। तरुन—३। तरन—११। ② कलित—१, ६, ११। ③ झनियाँ—३, ११, १४। ④ सोवनियाँ—१, ३, ६, ९, १७।

* (शा) बिलावल।

† यह पद केवल (वे, ल, शा, गो, जौ) में है।

⑤ बोलि लिए जसुमति जदु-नंदहिँ—१, ११, १५। ⑥ बाजा पति अग्रज अंबा ते अरज—१, ११, १५। ⑦ सिंधहिँ—११।

* राग धनाश्री

कहाँ लौं बरनौं सुंदरताई ?

खेलत कुँवर कनक-आँगन मैं नैन निरखि छबि[1] पाई ।
कुलही लसति सिर स्यामसुंदर[2] कैं, बहु बिधि सुरँग[3] बनाई ।
मानौ नव घन ऊपर राजत मघवा धनुष चढ़ाई ।
अति सुदेस मृदु हरत चिकुर मन मोहन-मुख बगराई ।
मानौ प्रगट कंज पर मंजुल अलि-अवली फिरि आई ।
नील, सेत, अरु पीत, लाल मनि लटकन भाल रुलाई[4] ।
सनि, गुरु-असुर, देवगुरु मिलि मनु भौम सहित समुदाई ।
दूध-दंत-दुति कहि[5] न जाति कछु अदभुत उपमा पाई ।
किलकत-हँसत दुरति प्रगटति मनु, घन मैं बिज्जु छटाई[6] ।
खंडित बचन देत पूरन सुख अलप-अलप जलपाई ।
घुटुरुनि चलत रेनु-तन-मंडित, सूरदास बलि जाई ॥ १०८ ॥७२६॥

राग नटनारायन

† हरि जू की बाल-छबि कहौं बरनि ।
सकल सुख की सींव, कोटि-मनोज-सोभा-हरनि ।
भुज भुजंग, सरोज नैननि, बदन बिधु जित लरनि ।
रहे बिबरनि, सलिल, नभ, उपमा अपर दुरि[7] डरनि ।

---

१ (ना) बिहागरौ । (को, रा, स्या) नट ।

① छबि छाई—१, ११ । सुखदाई—२, ६, १६ । ② सुभग अति—१, ३, ६, ११, १५ । ③ नगनि—२, १६ । ④ रुनाई—१, ११ । डराई ६ १७ । ⑤ देत अधिक छबि अदभुत इह उपमाई—६, १७ । ⑥ छपाई—१ । लनाई—२, ६, १७, १६ ।

† यह पद (ना, बृ, को, स्या) में नहीं है । यह भी गोस्वामीजी की गीतावली में 'रघुबर बाल छबि कहौं बरनि' शीर्षक पद के रूप में मिलता है । बहुत थोड़ा अंतर, जो अनिवार्य था, पाया जाता है । (गीतावली ना० प्र० स०, पद २४)

⑦ दुति—१, ३, ६, ११, १४, १५, १७ ।

मंजु मेचक मृदुल तनु, अनुहरत भूषन भरनि ।
मनहुँ सुभग सिँगार-सिसु-तरु, फरयौ अदभुत फरनि ।
चलत पद-प्रतिबिंब मनि आँगन घुटुरुवनि करनि[1] ।
जलज-संपुट-सुभग-छबि भरि लेति उर जनु धरनि ।
पुन्य फल अनुभवति सुतहिँ बिलोकि कै नँद-घरनि ।
सूर प्रभु की उर बसी किलकनि ललित लरखरनि ॥१०६॥७२७॥

* राग धनाश्री

किलकत कान्ह घुटुरुवनि आवत ।
मनिमय कनक नंद कैं आँगन, बिंब पकरिबैं धावत ।
कबहुँ निरखि हरि आपु छाहँ कौं, कर सौं पकरन चाहत ।
किलकि हँसत राजत[2] द्वै दतियाँ, पुनि-पुनि तिहिँ अवगाहत ।
कनक-भूमि पर कर-पग-छाया, यह उपमा इक राजति ।
करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा, कमल बैठकी साजति ।
बाल-दसा-सुख निरखि जसोदा, पुनि-पुनि नंद बुलावति ।
अँचरा तर लै ढाँकि, सूर के प्रभु कौं दूध पियावति ॥११०॥७२८॥

* राग बिलावल

नंद-धाम खेलत हरि डोलत ।
जसुमति करति रसोई भीतर, आपुन किलकत बोलत ।
टेरि उठी जसुमति मोहन कौं, आवहु काहैं[3] न धाइ ।
बैन सुनत माता पहिचानी, चले घुटुरुवनि पाइ ।

---

① चलनि–३ । * (ना) देसकार । (गो) नटनारायन ।

② दँतुली दुति राजति पुनि- पुनि यह अवगाहत––२ । (ना) देवगिरि । (क) धनाश्री ।

③ घुटुरुनि धाइ––१, ३, ६, ११, १४, १५, १७ । चरन चलाइ––१६ ।

लै उठाइ अंचल गहि पोंछै, धूरि भरी सब देह।
सूरज प्रभु जसुमति रज झारति, कहाँ भरी यह खेह? १११॥७२६॥

पाँवों चलना

* राग सूहौ बिलावल

धनि जसुमति बड़भागिनी, लिए कान्ह[1] खिलावै।
तनक-तनक भुज पकरि कै, ठाढौ होन सिखावै।
लरखरात गिरि परत हैं, चलि घुटुरुनि धावैं।
पुनि क्रम-क्रम भुज टेकि कै, पग द्वैक चलावैं।
अपने पाइनि कबहिँ लौं, मोहिँ देखन धावै।
सूरदास जसुमति इहै बिधि सौं जु मनावै॥ ११२॥ ७३०॥

* राग कान्हरौ

हरि कौ बिमल जस गावति गोपँगना।
मनिमय आँगन नंदराइ कौ, बाल गोपाल करैं तहँ रँगना।
गिरि-गिरि परत घुटुरुवनि रेंगत, खेलत हैं दोउ छगना-मगना।
धूसरि धूरि दुहूँ तन मंडित, मातु जसोदा लेति उछँगना।
बसुधा त्रिपद करत नहिँ आलस तिनहिँ कठिन भयौ देहरी उलँघना?
सूरदास प्रभु ब्रज-बधु निरखतिँ, रुचिर हार हिय सोहत बघना॥ ११३॥७३१॥

× राग सूहौ बिलावल

चलन[2] चहत पाइनि गोपाल।
लए लाइ अँगुरी नँदरानी, सुंदर[3] स्याम तमाल।
डगमगात गिरि परत पानि पर, भुज भ्राजत नँदलाल।

---

* (ना) आसावरी। (१) गोद—२ १६, १८, १६।
१. (ना) गुनकली।
× (ना, गो, को, श्या) बिलावल। (के, क, पू) सूहौ। (रा) भैरव।
(२) चलन पैयां सिखवति गोपाल—२, १६, १८, १६। (३) मोहन—१, ३, ६, ११, १७।

जनु[1] सिर पर ससि जानि अधोमुख, धुकत नलिनि नमि नाल।
धूरि-धौत तन, अंजन नैननि, चलत लटपटी चाल।
चरन[2] रनित नूपुर-धुनि, मानौ बिहरत बाल मराल।
लट[3] लटकनि सिर चारु चखौड़ा, मुठि सोभा सिसु भाल।
सूरदास ऐसौ सुख निरखत, जग जीजै बहु काल ॥११४॥७३२॥

* राग बिलावल

सिखवति चलन जसोदा मैया।
अरबराइ कर पानि गहावत, डगमगाइ धरनी धरै पैया।
कबहुँक[4] सुंदर बदन बिलोकति, उर आनँद भरि लेति बलैया।
कबहुँक कुल-देवता मनावति, चिरजीवहु मेरौ कुँवर[5] कन्हैया।
कबहुँक बल कौं टेरि बुलावति, इहिँ आँगन खेलौ दोउ भैया।
सूरदास[6] स्वामी की लीला, अति प्रताप बिलसत नँदरैया ॥११५॥७३३॥

* राग सूहौ बिलावल

मनिमय आँगन नंद कैं, खेलत दोउ भैया।
गौर-स्याम जोरी बनी, बलराम[7] कन्हैया।
लटकतिँ ललित लटूरियाँ, मसि-बिंदु-गोरोचन।
हरि-नख उर अति राजहीँ, संतनि दुख मोचन।

---

① जनु सरवर ससि जानि अधरमुख धुकत मनो तम नाल—२। जनु श्रीधर श्रीधरत अधोमुख झुकत धरनि (मानौ) नमि नाल—३, ६, ११, १४, १५, १७। ज्यौं सरसिज वर जात अधोमुख दु खित होत मृनाल—१६। ② जनु पग धरि उपजी बिसरी गति बहुरत (बिहरत) बाल मराल—२, १६। ③ अलक तिलक अरु चारु चखौड़ा सुठि सोभा भ्रु भाल—१६।

* (कां, रा, श्या) देवगधार।

④ कबहुँक ठाढी मुख तन चितवति मन उछाह हँसि लेति बलैया—२, ३, १६। ⑤ बाल—१, ६, ११। लाल—१४। ⑥ सूरदास प्रभु सब सुखदायक अति प्रताप बालक नँदरैया—१, ११, १५।

* (ना) रामकली।

⑦ बल कुँवर—२, ३, १४ १७, १८, १६।

सँग-सँग जसुमति-रोहिनी, हितकारिनि मैया।
चुटकी देहिं[1] नचावहीं, सुत जानि नन्हैया।
नील-पीत पट ओढ़नो[2] देखत जिय भावै।
बाल-बिनोद अनंद सौं, सूरज जन गावै॥ ११६॥

॥७३४॥

* राग धनाश्री

† आँगन खेलैं नंद के नंदा। जदुकुल-कुमुद-सुखद-चारु-चंदा।
संग-संग बल-मोहन सोहैं। सिसु-भूषन भुव[3] कौ मन मोहैं।
तन-दुति मोर-चंद जिमि झलकै। उमँगि-उमँगि अँग-अँग छबि छलकै।
कटि किंकिनि, पग पैं जनि[4] बाजै। पंकज पानि पहुँचिया राजै।
कठुला कंठ बघनहाँ नीके। नैन-सरोज मैन-सरसी के।
लटकतिं ललित ललाट लटूरी। दमकतिं दूध[5] दतुरियाँ रूरी।
मुनि-मन हरत मंजु मसि-बिंदा। ललित बदन बल-बालगुबिंदा।
कुलही चित्र-बिचित्र झँगूली। निरखि जसोदा-रोहिनि फूली।
गहि मनि-खंभ डिंभ[6] डग डोलैं। कल-बल बचन तोतरे बोलैं।
निरखत झुकि, झाँकत प्रतिबिंबहिं। देत परम सुख पितु अरु अंबहिं।
ब्रज-जन निरखत हिय हुलसाने। सूर स्याम-महिमा को जाने॥११७॥

॥ ७३५ ॥

---

① दर्दै—२। ② बपु बने—२। पेहनी—१६, १६।

* (ना) गूजरी। (रा) बिलावल।

† यह पद भी तुलसी-गीतावली में आया है। अतर उतना ही जितना कृष्ण-कथा को राम-कथा के रूप में परिणत कर देने के लिये अनिवार्य था। प्रथम द्वितीय और अंतिम पंक्तियों में ही कुछ परिवर्तन मिलता है, शेष प्राय ज्यों की त्यों है।

③ सब—१, ११, १५। ④ नूपर—१, ६, ११, १५। ⑤ द्वै द्वै—१, ११, १४। दोय—२, १६। द्वै क—३। ⑥ देह—२, १६।

* राग नटनारायन

बलि गइ बाल-रूप मुरारि ।
पाइ-पैंजनि रटति[1] रुन-झुन, नचावति नँद-नारि ।
कबहुँ हरि कौं[2] लाइ अँगुरी, चलन सिखवति ग्वारि ।
कबहुँ हृदय लगाइ हित करि, लेति अंचल डारि ।
कबहुँ हरि कौं चितै चूमति, कबहुँ गावति गारि ।
कबहुँ लै पाछे दुरावति, ह्याँ नहीं बनवारि ।
कबहुँ अँग भूषन बनावति, राइ-लोन उतारि ।
सूर सुर-नर[3] सबै मोहे, निरखि यह अनुहारि ॥ ११८ ॥
॥ ७३६ ॥

* राग बिलावल

भावत हरि कौ बाल-बिनोद ।
स्याम[4]-राम-मुख निरखि-निरखि, सुख-मुदित रोहिनी, जननि जसोद ।
आँगन[5]-पंक-राग तन सोभित, चल नूपुर-धुनि सुनि मन मोद ।
परम सनेह बढावत मातनि,[6] रबकि-रबकि हरि बैठत गोद ।
आनँद[7]-कंद, सकल सुखदायक, निसि-दिन रहत केलि-रस ओद ।
सूरदास[8] प्रभु अबुंज-लोचन, फिरि-फिरि चितवत ब्रज-जन-कोद ॥ ११९ ॥
॥ ७३७ ॥

---

* (ना) देवगिरि ।

① चलत—२, १६ । रुरत—६ । बजति—११ । ② की पकरि—१६, १८, १६ । ③ मुनि—२, ३, ६, १४ ।

४ (ना) गौरी । (कां, रा, श्या) कान्हरा ।

④ लै लै गोद निरखि मुख हरषति—१६ । ⑤ आंगन पंक परस तन मंडित चलत कुनित (बनत) नूपुर मन मोद—३, ६, १४, १७ । ⑥ पाइनि रीगि रीगि करि बैठत गोद – २ । मन मन निर्विकार बैठत चढ़ि गोद—३, ६, १४ । बातनि रेगि रेगि कै—१६ । ⑦ अतिसय चपल—१, ११, १६, १८, १६ । ⑧ सूर स्याम अबुज दल लोचन फिरि चितवत ब्रज बनिता कोद—१, ११, १२ ।

राग सूहौ

† सूच्छम चरन चलावत बल करि ।
अटपटात, कर देति सुंदरी, उठत तबै[1] सुजतन तन-मन धरि ।
मृदु पद धरत धरनि ठहरात न, इत-उत भुज जुग लै-लै भरि-भरि ।
पुलकित सुमुखी भई स्याम-रस ज्यौं जल मैं काँची गागरि गरि ।
सूरदास सिसुता-सुख जलनिधि, कहँ लौं कहौं नाहिँ कोउ समसरि ।
बिबुधनि[2] मन तर मान रमत ब्रज, निरखत जसुमति सुख छिन-पल-घरि ॥ १२० ॥

॥ ७३८ ॥

* राग बिलावल

बाल-बिनोद आँगन की[3] डोलनि ।
मनिमय भूमि नंद[4] कैं आलय, बलि-बलि जाउँ तोतरे बोलनि ।
कठुला कंठ कुटिल केहरि-नख, बज्र-माल बहु लाल अमोलनि ।
बदन सरोज तिलक गोरोचन, लट लटकनि मधुकर-गति डोलनि ।
कर[5] नवनीत परस आनन सौं, कछुक खात, कछु लग्यौ कपोलनि ।
कहि[6] जन सूर कहाँ लौं बरनौं, धन्य नंद जीवन जग तोलनि ॥ १२१ ॥ ७३९ ॥

* राग बिलावल

गहे अँगुरिया ललन[7] की, नँद चलन सिखावत ।
अरबराइ गिरि परत हैं, कर टेकि उठावत ।

---

† यह पद केवल (ना स, ल मैं है ।

① जननि मुख इदु मौन धरि--३ । ② विविधिन मन मानै क्रश्न सुमति के ब्रज छिन पल धरि--२ । विविधन मुनि नर मानि रमसि ब्रज जसुमति छिन घर--३ ।

* (ना) देवसाख ।

③ मधि--२, १८ । मैं--१७, १६ । ④ सुभग नँद आलय-१४ । ⑤ लौनी कर आनन परसत हैं कछुक खाइ--१, ११, १५ । ⑥ यह सुख सूर कहाँ लौं बरनौ धनि जसुमति--२, १६, १८, १६ ।

(ना) गौरी । (रा) धनाश्री ।

⑦ तात--१, ११, १५ । सुवन--३, १४, १७, १८, १६ ।

रत्नाकर

व्रजभाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि गोलोक-निवासी श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के समस्त काव्यों का यह अपूर्व सग्रह है। इनकी कविता के सबध मे विज्ञ साहित्यिकों स निवेदन करने की आवश्यकता नहीं। कविता-कला का इतना उत्कृष्ट अभ्यासी इस युग मे कहीं देखने को नहीं मिलता। यत्र-तत्र बिखरे हुए उनके काव्य-रत्नों का यह सग्रह यथार्थ ही अपने नाम के अनुरूप हुआ है। 'रत्नाकर' मे व्रजभाषा का प्राजल मणि भावों की उज्ज्वलता से चौगुना चमक उठा है। अवसर के अनुकूल यत्र-तत्र चतुर चितेरों के एकरगे, तिरगे चित्रों तथा अनेकानेक उत्तमोत्तम डिजाइनों से इसकी कांति और भी खिल उठी है। मुद्रक ने भी इसे सर्वांग-सुंदर बनाने मे कोई कोर-कसर नहीं रखी। जो पुस्तक-प्रेमी स्थायी महत्त्व के सुदर और सरस साहित्य को सुचारु और आकर्षक वेशभूषा मे देखने के इच्छुक हैं उनके मनस्तोष की अपूर्व सामग्री इसमे विद्यमान है। यह प्रत्येक साहित्यिक की आलमारी मे शोभा पाने की अधिकारिणी है और इसका अभाव अवश्य एक बडी कमी है। इसके दो सस्करण प्रकाशित किए गए है। आर्ट पेपर के रायल आठ पेजी साइज के ६०० पृष्ठों के इस ग्रथ के राज-संस्करण का मूल्य केवल ८) और साधारण सस्करण का ७) है। आशा है, साहित्य-प्रेमी इस पुस्तक को खरीदकर अपनी गुणज्ञता का परिचय देगे।

बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास

इस पुस्तक मे रामायण-काल से लेकर आज तक का विवरण दिया गया है। इसमे पुराण, काव्य, कविता, इतिहास, गाथा, दतकथा, शिलालेख आदि इतिहास के लिये सहायक प्राय सभी साधनों से सहायता लेकर लेखक ने एक क्रमबद्ध निष्कर्ष निकाला है। बुदेलखड के इतिहास की कोई स्वतत्र पुस्तक नहीं थी। इसने इस कमी की पूर्ति की है। पृष्ठ-सख्या ४५०, मूल्य केवल ३)।

मआसिलरुल उमरा

इतिहास-प्रेमियों को भली भाँति विदित है कि यह ग्रथ कितने महत्त्व का है। इसमे मुगल दरबार के जिन सरदारों की जीवनियाँ नवाब शाहनवाज खाँ समसामुद्दौला ने दी है, वे अत्यत प्रामाणिक और पक्षपात-रहित है। प्रथम भाग मे ९१ सरदारों की जीवनियाँ है। मूल्य केवल ४) रखा गया है।

ब्रजनिधि-ग्रंथावली

जयपुर-नरेश महाराज सवाई प्रतापसिहजी की समस्त रचनाओ का यह सग्रह है जो बहुत खोज और परिश्रम के अनतर एकत्र किया गया है। पाद-टिप्पणियों मे कठिन शब्दों के अर्थ भी दिए गए है। प्रारभ मे विद्वान् सपादक पुरोहित हरिनारायणजी शर्मा की सुदीर्घ प्रस्तावना भी है। ४१९ पृष्ठों मे समाप्त इस पुस्तक का मूल्य केवल ३) है।

कोशोत्सव-स्मारक संग्रह

सपादक रायबहादुर महामहोपाध्याय पडित गौरीशकर हीराचद ओझा। देश तथा विदेश के अनेक प्रख्यात विद्वानों एव अनेकानेक लब्ध-प्रतिष्ठ कवियों की सर्वश्रेष्ठ कृतियों का अपूर्व सग्रह। मूल्य ५)।

*

द्विवेदी-अभिनंदनग्रंथ

अनेक सज्जनों के सतत आग्रह पर सभा ने दो महीने के लिये इस ग्रंथ का मूल्य घटाकर आधा कर दिया था। इस अवधि मे इस पुस्तक की बहुतेरी प्रतियाँ बिकी। समय बीत गया, पर आर्डरों का ताँता लगा ही रहा और निरंतर माँगे आती ही जा रही है। वस्तुत यह पुस्तक सभा ने आर्थिक लाभ की अभिलाषा से नहीं छापी थी। यह आचार्य महोदय के सम्मानार्थ प्रकाशित की गई थी। अत इस सदुद्देश की सिद्धि पूर्ण रीति से तभी होगी जब इस ग्रथ-रत्न की एक एक प्रति हिंदी भाषा एव हिंदी भाषा के मान्य आचार्य महोदय के प्रत्येक भक्त के पास पहुँच जाय। अत अनेक सज्जनों के आग्रह से सभा ने इस ग्रथ का मूल्य पुन ७।।) कर दिया है। यह रिआयत केवल उन्हीं लोगों के साथ की जायगी जो सभा से ग्रथ का मूल्य ७।।) और पेकिंग तथा रजिस्टरी-व्यय ।।) कुल ८) मनीआर्डर से पशगी भेज देगे। ऐसे सज्जनों के पास यह ग्रथ बैरंग रेलवे पार्सल से भेज दिया जायगा और रेल-भाडा उन्हे देना पडेगा। जो सज्जन डाक से यह ग्रथ मँगवाना चाहते हों उन्हे ७।।) मूल्य के अतिरिक्त १।।।=) डाक-व्यय के लिये और भेजना चाहिए।

अभिनदन-ग्रथ मे विगत चालीस वर्षों के चुने हुए हिंदी-साहित्य के पडितों के अपूर्व निबध और कवियों की मनोरम रचनाएँ है। साथ ही इसमे देश और विदेश के सर्वश्रेष्ठ कलाकारो के सुंदर-सुंदर चित्रो का अलबम सजा दिया गया है जिसका मूल्य कला-रसिक ही अच्छी तरह आँक सकते है। यह कहने मे अत्युक्ति न होगी कि साहित्य और चित्र-विद्या की ऐसी सयुक्त सुचारु प्रदर्शिनी कभी ही कभी सौभाग्य से देखने को मिलती है। जिस प्रकार 'गीता' या 'रामचरितमानस' के विषय मे कहा जाता है कि सपूर्ण भारतीय साहित्य और सस्कृति के नष्ट हो जाने पर भी इन दो ग्रथों से उनकी पूर्ति हो सकती है उसी प्रकार इस बीसवीं शताब्दि के हिंदी-साहित्य की प्रगति की पूरी सामग्री आपको इस ग्रथ मे मिलेगी।

यदि आप अपने समय के साहित्य के साथ-साथ नहीं चल सके या उससे पूर्णत परिचित नहीं हो सके तो यह एक ऐसा अभाव है जिसके कारण आपके मन मे सकोच अवश्य होता होगा। अभिनदन ग्रथ खरीदकर आप उसकी पूरी पूरी जानकारी प्राप्त कर सकते है।

आशा है, हिंदी-प्रेमी इस सुअवसर से लाभ उठावेगे और इस ग्रथ-रत्न की एक-एक प्रति तुरत मँगाकर बीसवीं सदी की निधि अपने घरो मे रख लेगे।

पुस्तक-विक्रेताओं को १) प्रति कमीशन दिया जायगा।

प्रधान मंत्री,
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

नागरीप्रचारिणी ग्रंथमाला—३५

सूरसागर

[दूसरा खंड]

गोलोकवासी जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के निश्चित सिद्धांतों के अनुसार
सूर-समिति की तत्त्वावधानता में संपादित

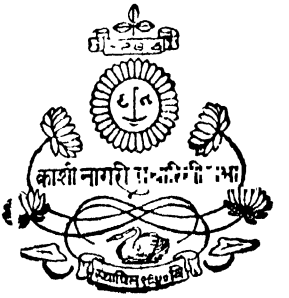

और

काशी-नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

प्रथम संस्करण] संवत् १९९३ [मूल्य ५) रुपये

सूर-समिति के सदस्य

श्रीअयोध्यासिंह उपाध्याय — श्रीरामचंद्र शुक्ल

श्रीकेशवप्रसाद मिश्र — श्रीसभा के साहित्य-मंत्री

श्रीनंददुलारे वाजपेयी

सूचना

सूरसागर का पहला खंड मूल पुस्तक के प्रकाशित हो जाने पर प्रकाशित होगा। उसमें भूमिका, प्रस्तावना और प्रतीकानुक्रमणिका आदि रहेगी।

संपादन-कार्य में सूर-सागर की जिन प्राचीन प्रतियों से सहायता ली गई है उनका संकेत—

प्रति-सख्या	सकेताक्षर	विवरण	प्रति सख्या	सकेताक्षर	विवरण
(१)	(वे)	यह वेकटेश्वर प्रेस, बबई की सवत् १९६४ की छपी हुई प्रति है।	(८)	(ना) २	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति काशी नागरी-प्रचारिणी सभा, की है। यह सवत् १९०९ में राजा सूवासिह के पढने के लिये लिखी गई थी।
(२)	(ना)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति सवत् १८८० की लिखी काशी नागरी-प्रचारिणी सभा की है।	(९)	(के)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति श्रीयुक्त बाबू केशवदास शाह, रईस,काशी की है। यह स० १७५३ में लिखी गई। इससे अधिक प्राचीन प्रति अब तक देखने में नहीं आई। यह प्रति कुछ समय के लिये ही प्राप्त हुई थी। यथोचित उपयोग करके यह शीघ्र ही लौटा दी गई।
(३)	(स)	यह भी सभा की प्रति है। यह सवत् १९१६ की लिखी हुई है।			
(४)	(ल)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति लखनऊ-निवासी स्व० श्रीयुत लाला श्यामसुदरदास जी अग्रवाल वैश्य, मशकगज के पास है। यह सवत् १८६६ ज्येष्ठ शुक्ल ५ बृहस्पतिवार को मोदी गगाराम जी के पठनार्थ लिखी गई। सपादन कार्य में इस प्रति से अधिक सहायता नहीं मिली। केवल उसके अधिक पदों का सग्रह मात्र ही किया जा सका है।	(१०)	(कृ)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति श्रीयुक्त राय कृष्णदास जी, रईस, बनारस की है। यह सवत् १९२६ में श्री गयाप्रसाद जी वैश्य की पत्नी के लिये प० नाथूराम जी गौड द्वारा लिखी गई।
(५)	(शा)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति जिला शाहजहाँपुर, ग्राम पवायाँ के प० लालमणि जी मिश्र, वैद्य की है। इस प्रति से सपादन में अधिक सहायता नहीं मिली। केवल अधिक पद ही लिखे जा सके। इसके पश्चात् पुस्तक लौटा देनी पड़ी।	(११)	(गो)	यह पत्राकार प्रति काशी के रईस बाबू गोकुलदास जी की है। इसके अक्षर बहुत सुदर और पक्के हैं। कहीं भी वे अस्पष्ट नहीं हैं।
			(१२)	(जा)	यह पुस्तकाकार प्रति काशी के जानीमल खानचद जी की है। यह सवत् १९०२ में लिखी गई थी।
(६)	(का)	यह पत्राकार हस्तलिखित प्रति 'कालाकाँकर' राज्य पुस्तकालय की है। कुँवर ब्रजेशसिंह के द्वारा प्राप्त हुई है। यह प्रति सवत् १८८९ में लिखी गई।	(१३)	(स) २	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति काशी नागरी प्रचारिणी सभा, की है।
(७)	(वृ)	यह वृंदावनवाली प्रति सवत् १८१३ में लिपिबद्ध हुई।	(१४)	(क)	यह प्रति कलकत्ता लखनऊ दोनों स्थानों में सन् १८८९ की छपी हुई है।

प्रति-सख्या	सकेताक्षर	विवरण	प्रति सख्या	सकेताक्षर	विवरण
(१५)	(जौ)	यह जानपुर की पत्राकार हस्त लिखित प्रति प० गणेशविहारी जी (मिश्र-बधुओं में बड़े) द्वारा प्राप्त हुई है। यह सवत् १८५४ में लिखी गई थी।			कि हिंदी की सभी प्रतियो के पाठों से निराश होना पड़ा है, इसने शुद्ध पाठ बताकर पुनः आशा प्रदान की है। यह सवत् १८८२ में लिपिबद्ध हुई।
(१६)	(कां)	यह कांकरौली राज्य की पुस्तक पुराने देशी कागज पर लिखी हुई है। यह गोकुल के किन्हीं रण-छोड़मल जी के लिये लिखी गई थी। इसके लेखक हैं गोकुलदास ब्राह्मण। उन्होंने इसे श्रावण शुक्ला पचिमा ११ सवत् १६१२ को लिखा था।	(१६)	(श्या)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति आरभ में रायबहादुर श्याम-सुदरदास जी के द्वारा प्राप्त हुई थी, इसलिये यह उन्हीं के नाम से इस सस्करण में व्यक्त की गई है। अब यह सभा की सपत्ति है।
(१७)	(पू)	यह पुस्तकाकार हस्तलिखित प्रति कलकत्ता के श्रीयुक्त बा० पूर्ण-चद्र जी नाहर की है। इसके पाठ अच्छे हैं। अनेक बार इससे बहुमूल्य सहायता प्राप्त हुई है। इसके अक्षर कई प्रकार के लिखे गए हैं, पर सब सुपाठ्य हैं।	(२०)		"राग-कल्पद्रुम" नामक ग्रथ में, जो ३ बड़े भागों में समाप्त हुआ है, महाकवि सूरदास के बहुत से पद प्राप्त होते हैं। इनमें कुछ ऐसे भी हैं जो अन्य ग्रथों में नहीं मिलते। उनमें से जो प्रामाणिक समझे गए वे इस सस्करण में ग्रहण किए गए हैं। इस विशालकाय ग्रथ के सग्रह-कार प्रसिद्ध सगीतज्ञ 'रागसागर' श्रीकृष्णानद व्यास महोदय हैं। इसका प्रकाशन वगीय साहित्य-परिषद् की ओर से नागरी और बँगला दोनों लिपियों में किया गया है।
(१८)	(रा)	यह हस्तलिखित पुस्तक दरियाबाद के प्रसिद्ध रईस श्रीयुक्त राय राजेश्वरबली जी की है। यह फारसी लिपि में लिखी गई है। इसकी लिखावट सुदर है। इसमें नीचे-ऊपर नुकतों का प्राय अभाव है। इससे इसके पढ़ने में कठिनाई पड़ती है परतु इसके कारण पाठ निर्धारण में बड़ी सहायता प्राप्त हुई है। ऐसे समय में जब		◡	यह चिह्न जिन दीर्घ अक्षरों के नीचे हो उन्हें ह्रस्व की भाँति पढ़ना चाहिए।

Printed by A Bose, at the Indian Press, Ltd,
Benares-Branch

बार-बार बकि[1] स्याम सौं, कछु बोल बुलावत ।
दुहुँघाँ द्वै दँतुली भईं, मुख अति छबि पावत ।
कबहुँ कान्ह-कर छाँड़ि नँद, पग द्वैक रिँगावत ।
कबहुँ धरनि पर बैठि कै[2], मन मैं कछु गावत ।
कबहुँ उलटि चलैं धाम कौं, घुटुरुनि करि धावत ।
सूर स्याम-मुख लखि महर, मन हरष बढ़ावत ॥ १२२ ॥ ७४० ॥

* राग धनाश्री

कान्ह चलत पग द्वै-द्वै धरनी ।
जो मन मैं अभिलाष करति ही, सो देखति नँद-घरनी ।
रुनुक-झुनुक नूपुर पग बाजत, धुनि[3] अतिहीं मन-हरनी ।
बैठि जात पुनि उठत तुरतहीं, सो छबि जाइ न बरनी ।
ब्रज-जुवती सब देखि थकित भइँ, सुंदरता की सरनी ।
चिरजीवहु जसुदा कौ[4] नंदन, सूरदास कौं तरनी ॥ १२३ ॥ ७४१ ॥

* राग बिलावल

चलत स्यामघन राजत, बाजति पैंजनि पग-पग चारु मनोहर ।
डगमगात डोलत आँगन मैं, निरखि बिनोद[5] मगन सुर-मुनि-नर ।
उदित[6] मुदित अति जननि जसोदा, पाछैं फिरति गहे अँगुरी कर ।
मनौ धेनु तृन छाँड़ि बच्छ-हित, प्रेम द्रवित चित[7] स्रवत पयोधर ।

---

① बलि--३ । कहि--१६ । ② जात मन मैं कछु आवत--३, ६, ६, १४, १७, १६ ।
* (ना) कल्यान । (के, पु) बिलावल ।
③ यह अति है--१, ११, १५ । यह अति मन है--२ । यह है अति--३ । यह गति है--६ । है यह अति--१६ । ④ नँद--६ ।
* (ना) कामोद । (कौं) केदार । (रा) कान्हरा ।
⑤ निरखि मोहे मुनि सुर नर--२ । ⑥ अरु मन मुदित जसोदा जननी--१, ६, ११, १४ । ⑦ जौ द्रवत--२, ३ । चित परत--६, १७ । चित द्रवत--१४ । अति--१६ ।

कुंडल लोल कपोल बिराजत, लटकति ललित लटुरिया भ्रू पर।
सूर स्याम-सुंदर अवलोकत[1] बिहरत बाल-गोपाल नंद-घर ॥१२४॥७४२॥

राग गौरी

भीतर तैं बाहर लौं[2] आवत।
घर-आँगन अति चलत सुगम भए, देहरि अँटकावत।
गिरि-गिरि परत, जात नहिं उलँघी, अति स्रम होत नघावत[3]।
अहुँठ[4] पैग[5] बसुधा सब कीनी, धाम अवधि बिरमावत।
मनहीं मन बलबीर कहत हैं, ऐसे रंग बनावत।
सूरदास-प्रभु-अगनित-महिमा, भगतनि कैं मन भावत ॥१२५॥७४३॥

* राग धनाश्री

चलत देखि जसुमति सुख पावै।
ठुमुकि-ठुमुकि पग[6] धरनी रेंगत, जननी देखि दिखावै।
देहरि लौं चलि जात, बहुरि फिरि-फिरि इतहीं कौं आवै।
गिरि-गिरि परत, बनत नहिं नाँघत सुर-मुनि सोच करावै।
कोटि ब्रह्मंड करत छिन भीतर, हरत बिलंब न लावै।
ताकौं लिए नंद की रानी, नाना खेल[7] खिलावै।
तब जसुमति कर टेकि स्याम कौ, क्रम-क्रम करि उतरावै।
सूरदास प्रभु देखि[8]-देखि, सुर-नर-मुनि-बुद्धि भुलावै ॥१२६॥७४४॥

---

① अवलोकनि--६, १४, १७। ② कौं--२, ६, १७। पुनि-१६। ③ नकावत--३, ६, १४, १७। न धावत--६। लखावत-१६। ④ हुँठ--२, ३, १६। ⑤ पैर--१, ११, १५। परग--२। पैंड--१६।
* (ना) अल्हैया बिलावल।
⑥ धरनीधर--१, २, ११, १५। धर धरनी--३। धरि धरनी--६। ⑦ रूप--१, ३, ६, ६, ११, १५, १७। ⑧ देखत सुर मुनि मन बुधि बात न आवै--१६।

* राग भैरव

सो बल कहा[1] भयौ भगवान ?

जिहिँ बल मीन-रूप जल थाह्यौ, लियौ निगम, हति असुर-परान ।
जिहिँ बल कमठ-पीठि पर[2] गिरि धरि, सजल सिंधु मथि कियौ बिमान ।
जिहिँ बल रूप बराह दसन पर, राखी[3] पुहुमी पुहुप समान ।
जिहिँ बल हिरनकसिप-उर फार्‌यौ, भए भगत कौँ कृपानिधान ।
जिहिँ बल बलि बंधन करि पठयौ, बसुधा त्रैपद करी प्रमान ।
जिहिँ बल बिप्र तिलक दै थाप्यौ, रच्छा करी आप बिदमान ।
जिहिँ बल रावन के सिर काटे, कियौ बिभीषन नृपति निदान ।
जिहिँ बल जामवंत-मद[4] मेट्यौ, जिहिँ बल भू[5]-बिनती सुनी कान ।

सूरदास अब धाम-देहरी चढ़ि न सकत प्रभु खरे अजान ! ॥१२७॥७४५॥

राग आसावरी

† देखौ अद्‌भुत अबिगत की गति, कैसौ रूप धर्‌यौ है (हो) !
तीनि[6] लोक जाकैँ उदर-भवन, सो सूप कैँ कोन पर्‌यौ है (हो) !
जाकैँ[7] नाल भए ब्रह्मादिक, सकल जोग ब्रत साध्यौ (हो) !
ताकौ नाल छीनि ब्रज-जुवती, बाँटि तगा सौँ बाँध्यौ (हो) !
जिहिँ[8] मुख कौँ समाधि सिव साधी आराधन ठहराने (हो) !
सो मुख चूमति महरि जसोदा, दूध-लार लपटाने (हो) !
जिन स्रवननि[9] जन की बिपदा सुनि, गरुड़ासन तजि धावै (हो) !

---

* (ना, रा) धनाश्री । (कां, श्या) बिलावल ।

① कहा गयौ—१, ११, १५ । ② गिरि राख्यौ सि धुहिँ मथि कीन्हौ परमान—१८, १६ । ③ धरी धरा करि—३, ६, १४, १७ । ④ प्रन राख्या—२, ६, १८, १६ । मद मरयो—१४, १७ । ⑤ भूर विपति—३, १४, १७ ।

† यह पद (ना, वृ, श्या) में नहीं है ।

⑥ जल थल पच चतुर त्रै उदर सु सूप के कोन परयो है—३, १४, १७ । ⑦ जिनके खोज बिरचि बिकल नहिँ अत कहूँ स्रम साध्यो हो—३, ६, १४ । ⑧ जा मुख को ब्रह्मादिक लोचन समु समाधि लगाए हो—१४ । ⑨ कानन गज सकट सुनि के गरुड़ासन बिसरावै—१ ।

तिन स्रवननि[1] ह्वै निकट जसोदा, हलरावै अरु गावै (हो) !
विस्व-भरन-पोषन, सब समरथ, माखन-काज अरे हैं (हो) !
रूप बिराट कोटि प्रति रोमनि, पलना माँझ परे हैं (हो) !
जिहिं भुज बल प्रहलाद उबारचौ, हिरनकसिप उर फारे (हो) !
सो भुज पकरि कहति ब्रजनारी, ठाढ़े होहु लला रे (हो) !
जाकौ ध्यान न पायौ सुर-मुनि, संभु[2] समाधि न टारी (हो) !
सोई[3] सूर प्रगट या ब्रज मैं, गोकुल-गोप-बिहारी (हो) ! ॥१२८॥७४६॥

राग अहीरी

† साँवरे बलि-बलि बाल-गोबिद । अति सुख पूरन परमानंद ।
तीनि पैंड़ जाके धरनि न आवै । ताहि जसोदा चलन सिखावै ।
जाकी चितवनि काल डराई । ताहि महरि कर-लकुटि दिखाई ।
जाकौ नाम कोटि भ्रम टारै । तापर राई - लोन उतारै ।
सेवक सूर कहा कहि गावै । कृपा भई जो भक्तिहिं पावै ॥१२९॥७४७॥

* राग आसावरी

आनँद-प्रेम उमंगि जसोदा, खरी गुपाल खिलावै ।
॥ कबहुँक हिलकै-किलकै जननी मन-सुख-सिधु बढ़ावै ।
दै करताल बजावति, गावति, राग अनूप मल्हावै ।
कबहुँक पल्लव पानि गहावै, आँगन माँझ रिँगावै ।

---

① कानन--१ । ② शेष सहस मुख गाए हो--१४ । सो ठाकुर हे सूरदास कौ--३, ६ । ③ ते अब प्रगट भए प्रभु ब्रज मैं सूरदास बलिहारी हे--६ । सोई सूर देह धरि आए गोकुल गोप कहाए हो--१४ ।

† यह पद केवल (ना) में है ।

* (ना) केदारो ।

॥ (ना, श्या) में इस चरण के स्थान पर यह पंक्ति मिलती है—'वसुधा अटल-सुकृत कीन्यौ है मन मैं मोद बढ़ावै ।' अन्य प्रतियों में यह चरण सातवें स्थान पर है परंतु इसका प्रसंग यहीं ठीक बैठता है । अतएव इसे यहीं रक्खा गया है ।

सिव, सनकादि, सुकादि, ब्रह्मादिक, खोजत अंत न पावैं ।
गोद लिए ताकौं हलरावै, तोतरे बैन बुलावै ।
मोहे सुर, नर, किन्नर, मुनिजन, रवि रथ नाहिं चलावै ।
मोहि रहीं ब्रज की जुवती सब, सूरदास जस गावै ॥१३०॥७४८॥

* राग कान्हरौ

† हरि[1] हरि, हँसत मेरौ माधैया ।
देहरि चढ़त परत गिरि-गिरि, कर-पल्लव गहति जु मैया ।
भक्ति-हेत जसुदा के आगैं[2], धरनी चरन धरैया ।
जिनि चरननि छलियौ बलि राजा, नख गंगा जु बहैया ।
जिहिं सरूप मोहे ब्रह्मादिक, रवि-ससि कोटि उगैया ।
सूरदास तिन प्रभु चरननि की, बलि-बलि मैं बलि जैया ॥ १३१ ॥७४९॥

‡ झुनक स्याम की[3] पैजनियाँ ।
जसुमति-सुत कौं चलन सिखावति, अँगुरी गहि-गहि दोउ जनियाँ ।
स्याम बरन पर पीत झँगुलिया, सीस कुलहिया चौतनियाँ ।
जाकौ ब्रह्मा पार न पावत, ताहि खिलावति ग्वालिनियाँ ।
दूरि न जाहु निकटहीं खेलौ, मैं बलिहारी रे गनियाँ ।
सूरदास जसुमति बलिहारी, सुतहिं खिलावति लै कनियाँ ॥१३२॥७५०॥

§ चलत लाल पैजनि के चाइ ।
पुनि-पुनि होत नयौ-नयौ आनँद, पुनि-पुनि निरखत पाइ ।

---

* (ना) रामकली । (का) बिलावल सूहौ । (जौ, रा) कान्हरा । (को) धनाश्री ।

† यह पद (ल, के, पू) में नहीं ह ।

(१) हरि हित--१, ११, १५ । हरि हरि हित--२ । (२) आए--१, ११, १५ ।

‡ यह पद केवल (ल, शा) में है ।

(३) तेरी--४ ।

§ यह पद केवल (ल) में है ।

छोटो बदन छोटियै भिँगुली, कटि किंकिनी-बनाइ ।
राजत जंत्र - हार, केहरि - नख, पहुँची रतन - जराइ ।
भाल तिलक पख स्याम चखौड़ा, जननी लेति बलाइ ।
तनक लाल नवनीत लिए कर, सूरज बलि-बलि जाइ ॥१३ ॥७५१॥

* राग सूहौ

आँगन स्याम नचावहीँ, जसुमति नँदरानी ।
तारी दै-दै गावहीँ, मधुरो[1] मृदु बानी ।
पाइनि नूपुर बाजई, कटि किंकिनि कूजै ।
नान्हीँ एड़ियनि अरुनता, फल-बिंब न पूजै ।
जसुमति गान सुनै स्रवन, तब आपुन गावै ।
तारो बजावत देखई, पुनि आपु बजावै ।
केहरि-नख उर पर रुरै, सुठि सोभाकारी ।
मनौ स्याम घन मध्य मैँ, नव ससि-उजियारी ।
गभुआरे सिर केस हैँ, बर घूँघरवारे ।
लटकन लटकत भाल पर, बिधु मधि गन तारे ।
कठुला कंठ चिबुक-तरैँ, मुख दसन[2] बिराजैँ ।
खंजन बिच सुक आनि कै, मनु परचौ दुराजैँ ।
जसुमति सुतहिँ नचावई, छबि देखति जिय तैँ ।
सूरदास प्रभु स्याम कौ, मुख[3] टरत न हिय तैँ ॥१३४॥७५२॥

---

* (ना) ललित । (का) बिलावल सूहो । (कां) धनाश्री । (रा) बिलावल ।

① मधुरे सुर--२, ३, १७, १४ १७, १६ । १८, १६ । ② हँसनि--१, ११ ।

③ सुख--१, २, ६, ६, ११,

राग आसावरी

†मैं देख्यौ जसुदा कौ नंदन, खेलत आँगन बारौ री।
ततछन प्रान पलटि गयौ मेरौ, तन-मन ह्वै गयौ कारौ री।
देखत आनि सँच्यौ उर अंतर, दै पलकनि कौ तारौ री।
मोहिँ भ्रम भयौ सखी, उर अपनैं, चहुँ[1] दिसि भयौ उज्यारौ री।
जौ गुंजा सम तुलत सुमेरहिँ, ताहू तैं अति भारौ री।
जैसैं बूँद परत बारिधि मैं, त्यौं गुन ज्ञान हमारौ री।
हौं उन माहँ कि वै मोहिँ महियाँ, परत न देह सँभारौ री।
तरु मैं बीज कि बीज माहँ तरु, दुहुँ मैं एक न न्यारौ री।
जल[2]-थल-नभ-कानन-घर-भीतर, जहँ लौं दृष्टि पसारौ री।
तितही तित मेरे नैननि आगैं निरतत नंद-दुलारौ री।
तजी[3] लाज कुलकानि लोक की, पति गुरुजन प्यौसारौ री।
जिनकी सकुच देहरी दुर्लभ, तिनमैं मूँड़ उघारौ री!
टोना-टामनि जंत्र मंत्र करि, ध्यायौ[4] देव-दुआरौ री।
सासु-ननद घर-घर लिए डोलति, याकौ रोग बिचारौ री!
कहौं[5] कहा कछु कहत न आवै, ओ रस लागत खारौ री।
इनहिं[6] स्वाद जो लुब्ध सूर सोइ जानत चाखनहारौ री॥१३५॥७५३॥

* राग आसावरी

‡जब तैं आँगन खेलत देख्यौ, मैं जसुदा कौ पूत री।
तब तैं गृह सौं नातौ टूट्यौ, जैसैं काँचौ सूत री।

---

† यह पद केवल (ना, गो) में है।

① दुहुँ—११। ② भवन बगर—२। ③ लोक राज कुल-कानि बीच डरु पति पुरजन—२। ④ धावै—२। ⑤ सोभा सिंधु अगाध अब निधि पर मति नहीं करारौ री—२। ⑥ स्वाद लुब्ध हरि सूर भिखारी जानै चाखन-हारौ री—२।

* (जौ) बिलावल। (रा) केदारा।

‡ यह पद (ना, बृ, काश्या) में नहीं है।

अति बिसाल बारिज-दल-लोचन, राजति काजर-रेख री।
इच्छा[1] सौं मकरंद लेत मनु अलि गोलक के बेष री।
स्रवन सुनन[2] उतकंठ रहत हैं, जब बोलत तुतरात री।
उमँगै प्रेम नैन-मग ह्वै कै, कापै रोक्यौ जात री।
दमकतिँ दोउ दूध की दतियाँ, जगमग जगमग होति री।
मानौ[3] सुंदरता-मंदिर मैं रूप रतन की ज्योति री।
सूरदास देखैं सुंदर मुख, आनँद उर न समाइ री।
मानौ कुमुद कामना-पूरन, पूरन इंदुहिँ पाइ री ॥१३६॥ ७५४॥

राग आसावरी

अदभुत इक[4] चितयौ हौं सजनी, नंद महर कैं आँगन री।
सेा मैं निरखि अपुनपौ खेायौ, गई मथानी माँगन री।
बाल-दसा मुख-कमल बिलेाकत, कछु जननी सौं बेालै री।
प्रगटति हँसत दँतुलि, मनु सीपज दमकि दुरे दल ओलै री।
सुंदर भाल-तिलक गेारेाचन, मिलि मसि-बिँदुका लाग्यौ री।
मनु[5] मकरंद अँचै रुचि कै, अलि-सावक सेाइ न जाग्यौ रो।
कुंडल[6] लेाल कपेालनि झलकत, मनु दरपन मैं झाईं री।
रही बिलेाकि बिचारि चारु छबि, परमिति कहूँ न पाई री।
मंजुल तारनि की चपलाई, चित चतुराई करषै री।
मनेा सरासन धरे कर स्मर, भेाँह चढ़ै सर बरषै री।

---

① राखे दै मकरद पान मनेा—३। ② सुनत उतकट जबै कछु बेालत है—३। ③ मनेा मनेाहर बिंबुमंडल मैं सीप रतन की—१४, १७। ④ एक चितै धेा—२, ३ १४, १७, १८, १६। ⑤ मानौ ससि पर अलि सुत सेायेा पीय पऊष नहि जाग्यौ री—२। ⑥ झलकति कुचित अलक कपेालनि ज्यौ—२।

जलधि थकित जनु काग पोत कौ कूल न कबहूँ आयौ री।
ना जानौं किहिँ अंग मगन मन, चाहि रही नहिँ पायौ री।
कहँ लगि कहौं बनाइ बरनि छबि,[1] निरखत मति-गति हारी री।
सूर स्याम के एक रोम पर देउँ प्रान बलिहारी री ॥१३७॥ ७५५॥

* राग धनाश्री

† जसोदा, तेरौ चिरजीवहु गोपाल।
बेगि बढै बल सहित बिरध लट, महरि मनोहर बाल।
उपजि परयौ सिसु[2] कर्म-पुन्य-फल, समुद-सीप ज्यौं लाल।
सब गोकुल कौ प्रान-जीवन-धन, बैरिनि[3] कौ उर-साल।
सूर कितौ सुख[4] पावत लोचन, निरखत घुटुरुनि[5] चाल।
झारत[6] रज लागै मेरी[7] अँखियनि रोग-दोष-जंजाल ॥१३८॥ ७५६॥

* राग आसावरी

‡ आजु गई हौं नंद-भवन मैं, कहा कहौं गृह-चैन री।
चहूँ ओर चतुरंग लच्छमी, कोटिक दुहियत धैन री।
घूमि रहीं जित-तित दधि मथनी, सुनत मेघ-धुनि लाजै री।
बरनौं कहा सदन की सोभा, बैकुंठहुँ तैं राजै री।
बोलि लई नव बधू जानि जहँ, खेलत कुँवर कन्हाई री।
मुख देखत मोहिनी सी लागी, रूप न बरन्यौ जाई री।

---

① जितनी छबि निरखत—१, ११।

* (ना) गौरी। (के) आसावरी। (रा) बिलावल।

† यह पद (बृ, का, श्या) में नहीं है।

② इहि कोष कर्म बस मुदी सीप ज्यौं लाल—१। ③ असुरन—१८। ④ मन सुख पावत है देखे स्याम तमाल—१, ११। सुचि पावत हौं देखत स्याम तमाल—२। ⑤ स्याम तमाल—६, १५, १८। ⑥ रुजि आरति लागो—१, ११। आरत रज लागौ इनि आंखिनि—२। ⑦ मेरे उर—३।

* (का) बिलावल। (का, रा, श्या) सारंग।

‡ यह पद (ल, के, पू) में नहीं है।

लटकन लटकि रहे भ्रू-ऊपर, रँग-रँग मनि-गन पोहे री।
मानहुँ गुरु-सनि-सुक्र एक ह्वै, लाल भाल पर सोहे री।
गोरोचन कौ तिलक, निकटहीं काजर-बिंदुका लाग्यौ री।
मनौ कमल कौ पी पराग, अलि-सावक सोइ न जाग्यौ री।
बिधु-आनन पर दीरघ लोचन, नासा लटकत मोती री।
मानौ सोम संग करि लोने, जानि आपने गोती री।
सीपज-माल स्याम-उर सोहै, बिच बघ-नहँ छबि पावै री।
मनौ द्वैज ससि नखत सहित हैं, उपमा कहत न आवै री।
सोभा-सिंधु अंग[1] अंगनि प्रति, बरनत नाहिंन ओर री।
जित[2] देखौं मन भयो तितहिं कौ, मनौ भरे कौ[3] चोर री।
बरनौं[4] कहाँ अंग-अँग-सोभा, भरी भाव जल-रास री।
लाल गोपाल बाल-छबि बरनत, कबि-कुल करिहै हास री।
जो मेरी अँखियनि रसना होती कहती रूप बनाइ री।
चिरजीवहु जसुदा कौ ढोटा, सूरदास बलि जाइ री ॥१३६॥७५७॥

† मैं मोही तेरैं लाल री।
निपट निकट ह्वै कै तुम निरखौ, सुंदर नैन बिसाल री।
चंचल दृग अंचल-पट-दुति-छबि, झलकत चहुँ दिसि झालरी।
मनु सेवाल कमल पर अरुझे, भँवत भ्रमर भ्रम-चाल री।
मुक्ता-बिद्रुम-नील-पीत-मनि, लटकत लटकन भाल[5] री।

---

① अगाध बोध बुध उपमा—१, ११, १२। ② रूप देखि तन थकित रही हौ भई भरे कौ चोर री—१, ११, १२। ③ घर—६। ④ इतनी कहौं जितनी मति मेरी क्यों रोको—३, ६, १८, १६।

† यह पद केवल (स) में है। इस प्रति में रागो का नाम नहीं लिखा।

⑤ नाल—।

मानौ सुक्र-भौम-सनि-गुरु मिलि, ससि कैं बीच रसाल री।
उपमा बरनि न जाइ सखी री, सुंदर मदन-गोपाल री।
सूर स्याम के ऊपर वारैं तन-मन-धन ब्रजबाल री ॥१४०॥७५८॥

राग बिलावल

† कल बल कै हरि आरि[1] परे।
नव रँग बिमल नवीन जलधि[2] पर, मानहुँ द्वै ससि आनि अरे।
जे गिरि कमठ सुरासुर सर्पहिं धरत न मन मैं नैंकु डरे।
ते भुज-भूषन-भार परत कर गोपिनि के आधार धरे।
सूर स्याम दधि-भाजन-भीतर निरखत मुख मुख तैं न टरे।
बिवि[3] चंद्रमा मनौ मथि काढे, बिहँसनि मनहुँ प्रकास करे॥१४१॥७५९॥

* राग बिलावल

‡ जब[4] दधि-मथनी टेकि अरै।
आरि करत मटुकी गहि मोहन, बासुकि संभु डरै।
मंदर डरत, सिंधु पुनि काँपत, फिरि जनि मथन करै।
प्रलय होइ जनि गहौ मथानी, प्रभु मरजाद टरै।
सुर अरु असुर ठाढे सब चितवत, नैननि नीर ढरै।
सूरदास मन मुग्ध जसोदा, मुख दधि-बिंदु परै॥१४२॥७६०॥

राग बिलावल

§ जब दधि-रिपु हरि हाथ लियौ।
खगपति-अरि डर, असुरनि[5]-संका, बासर-पति आनंद कियौ।

---

† यह पद (ना शा, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।
(१) हार—१, ३, ६, ११, १५, १७। (२) जलद—१, ३, ६, ११, १५, १७। (३) चंद्र बदन मानो मथि काढयौ—१, ११ १५। बि ब बदन मानौ मथि काढयौ—६, ६, १४, १७।
* (ना) देवगिरि।
† यह पद (का, के, क, पू) में नहीं है।
(४) मथत—१, ११, १५।
५ यह पद केवल (बे, के, गो, जै, पू) में है।
(५) सुर लै सकत—१५।

बिदुखि[1] सिंधु सकुचत, सिव सोचत, गरलादिक किमि जात पियो ?
अति अनुराग संग[2] कमला-तन, प्रफुलित अँग[3] न समात हियो ।
एकनि दुख, एकनि सुख उपजत, ऐसो[4] कौन बिनोद कियो ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे गहत ही एक-एक तैं होत बियो ॥१४३॥७६१॥

* राग धनाश्री

जब[5] मोहन कर गही मथानी ।
परसत[6] कर दधि, माट, नेति, चित उदधि, सैल, बासुकि भय मानी ।
कबहुँक तीनि पैग भुव मापत, कबहुँक देहरि उलँघि न जानी !
॥ कबहुँक सुर-मुनि ध्यान न पावत, कबहुँ खिलावति नंद की रानी ।
कबहुँक अमर[7] -खीर नहिँ भावत, कबहुँक दधि-माखन रुचि मानी ।
सूरदास प्रभु[8] की यह लीला, परति न महिमा सेष बखानी ॥१४४॥७६२॥

* राग बिलावल

नंद जू के बारे कान्ह, छाँड़ि दै मथनियाँ ।
† बार-बार कहति मातु जसुमति नँदरनियाँ ।
नैंकु रहौ माखन देउँ मेरे प्रान - धनियाँ ।
आरि जनि करौ, बलि बलि जाउँ हौं निधनियाँ[9] ।

---

(१) विधि सिर धुनि—१,११, १५ । (२) सकि—१७ । (३) अग न अमित हियो—१, ११, १५ । (४) को ऐसो न बिनोद हियो—१, ११, १५ । कौन बिनाद गुपाल कियो—१७ ।

* (का, के, क, जौ) बिलावल । (कौ, रा, श्या) आसावरी ।

(५) तुम जिनि मोहन गहो—२, १६, १८, १६ । (६) दही बिलोवन देहु नँद सुत मानि बबा की आनी—१६, १६ ।

॥ इस चरण के आगे (वे, का, गो, जौ) में ये दो चरण और हैं—

"कबहुँक अमर खीर नहिँ भावत कबहुँ मेखला उदर समानी ।
कबहुँक आर करत माखन की कबहुँक भेष दिखाइ बिनानी ।"

(७) जग्गि में त्रपिति न मानत—२ । खाउ खीर—६ । (८) बलि-बलि बिनोद की रूप रास रचना बहु ठानी—२, १६, १८, १६ ।

(ना) रामकली ।

† यह चरण (के) में नहीं है । इसके स्थान पर उसमें अंतिम पंक्ति यह है—"संग सखा सोभित है नंद के नँदनियाँ ।"

(९) न्यौछनियाँ—२, ३, ६, १४, १७, १८ ।

जाकौ[1] ध्यान धरैं सबै, सुर-नर-मुनि जनियाँ।
ताकौ नँदरानी मुख चूमै लिए कनियाँ।
सेष[2] सहस आनन गुन गावत नहिँ बनियाँ।
सूर स्याम देखि सबै भूलीं गोप-धनियाँ ॥१४५॥७६३॥

* राग बिलावल

जसुमति दधि मथन करति, बैठी बर धाम अजिर,
ठाढे हरि हँसत नान्हि दँतियनि छबि छाजै।
चितवत चित लै चुराइ, सोभा बरनी न जाइ,
मनु मुनि-मन-हरन-काज मोहिनी दल साजै।
जननि कहति नाचौ तुम, दैहौं नवनीत मोहन
रुनुक-झुनुक चलत पाइ, नूपुर-धुनि बाजै।
गावत गुन सूरदास, बाढ़्यौ जस भुव-अकास,
नाचत त्रैलोकनाथ माखन के काजै ॥१४६॥७६४॥

* राग आसावरी

† (एरी) आनँद सौं दधि मथति जसोदा, घमकि[3] मथनियाँ घूमै।
निरतत लाल[4] ललित मोहन,[5] पग परत अटपटे भू मैं।
चारु चखौड़ा पर[6] कुंचित कच, छबि[7] मुक्ता ताहू मैं।
मनु मकरंद-बिंदु लै मधुकर, सुत-प्यावन-हित झूमै।

---

(१) सुर नर जाको ध्यान धरैं गावै (गावत) मुनि जनियाँ—१, ३, ११। (२) सहसानन लखि छबि गुन बरनत नहिँ बनियाँ—२।

* (ना) चरचरी।

* (क) बिलावल।

† यह पद केवल (स, शा, गो, क) में है।

(३) झनक—३। कनक—१४। (४) कान्ह—३, १४। (५) लोचन—३, १४। (६) मध्य कुटिल—३, १४। (७) स्रम—३, १४।

बोलत स्याम तोतरी बतियाँ, हँसि-हँसि दतियाँ दूमैं।
सूरदास वारी छबि[1] ऊपर, जननि कमल-मुख चूमैं ॥१४७॥७६५॥

राग बिलावल

†त्यौं-त्यौं मोहन[2] नाचै ज्यौं-ज्यौं रई-घमरकौ होइ (री)।
तैसियै किंकिनि-धुनि पग-नूपुर, सहज[3] मिले सुर दोइ (री)।
कंचन कौ कठुला मनि-मोतिनि, बिच बघनहँ रह्यौ पोइ (री)।
देखत बनै, कहत नहिँ आवै, उपमा कौं नहिँ कोइ (री)।
॥ निरखि-निरखि मुख नंद-सुवन कौ, सुर-नर आनँद होइ (री)।
सूर भवन कौ तिमिर नसायौ, बलि गइ जननि जसोइ (री)॥१४८॥७६६॥

राग बिलावल

‡ प्रात समय दधि मथति जसोदा, अति सुख[4] कमल-नयन-गुन गावति।
अतिहिँ मधुर गति,[5] कंठ सुघर अति, नंद-सुवन-चित[6] हितहिँ करावति।
नील बसन तनु, सजल जलद मनु, दामिनि बिवि[7] भुज-दंड चलावति।
चंद्र बदन लट लटकि छबीली, मनहुँ अमृत रस ब्यालि[8] चुरावति।
गोरस मथत नाद इक उपजत, किंकिनि-धुनि सुनि स्रवन[9] रमावति।
सूर स्याम अँचरा धरि ठाढे, काम कसौटी कसि दिखरावति ॥१४९॥७६७॥

* राग बिलावल

(माधव) तनक सौ बदन, तनक से चरन-भुज,
तनक से कर पर तनक सौ माखन।

---

① मुख—३। पल पल पर—११।

† यह पद (के, पू) में नहीं है।

② नाचो री मन मोहन धाम मधुर सुर होइ—१, ११। ③ रसहि—१, ३, ६, ११, १५, १६।

‖ (ना, स) में इस चरण के स्थान पर यह है—जसुदा गोपी ग्वाल बालहू मगन भए सब लोइ री।

† यह पद (ना, ल, बृ, का, रा, श्या) में नहीं है।

④ सुर—३। ⑤ के चितहि बढावति—१४। ⑥ बिच—१४। ⑦ राहु—१, ३, ११, १५। ⑧ सुवन—३, १७।

* (का, रा, श्या) केदारा।

तनक सी बात कहै तनक तनकि रहै,
तनक सौ रीझि रहै तनक से साधन।
तनक कपोल, तनक सी दँतुली,
तनक हँसनि पर[1] हरत सबनि मन।
तनकहि तनक जु सूर निकट आवै,
तनक कृपा[2] कै दीजै तनकहि सरन ॥१५०॥७६८॥

राग ललित

‡ छोटी-छोटी गोडियाँ, अँगुरियाँ छबीली छोटी,
नख-ज्योती, मोती मानौ कमल[3]-दलनि पर।
ललित आँगन खेलै, ठुमुकि-ठुमुकि डोलै,
झुनुक-झुनुक बोलै पैजनी मृदु[4] मुखर ॥
किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि,
मृदु कर-कमलनि पहुँची रुचिर बर।
पियरी पिछौरी झीनी, और उपमा न भीनी,
बालक दामिनि मानौ ओढे बारौ बारि-धर ॥
उर बघ-नहाँ, कंठ कठुला, झँडूले बार,
बेनी लटकन मसि-बुंदा मुनि-मनहर।
अंजन रंजित नैन, चितवनि चित चोरै,
मुख-सोभा पर वारौं अमित असम-सर ॥

---

① हरि लेत तनक मन—२, ३। ② मया—१४, १७।

‡ यह पद (ना, शा, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है। गोस्वामी तुलसीदासजी की गीतावली (पृष्ठ २६२, पद ३०) में भी यह प्रायः इसी रूप में मिलता है।

③ कज—१, ६, ११, १४। ④ पगन पर—३।

चुटुकी बजावति नचावति जसोदा[1] रानी
बाल-केलि गावति मल्हावति सुप्रेम[2] भर।
किलकि-किलकि हँसैं, द्वै-द्वै दँतुरियाँ लसैं,
सूरदास मन बसैं तोतरे बचन बर ॥ १५१ ॥ ७६६ ॥

* राग बिलावल

† (माधव) तनक चरन अरु तनक-तनक भुज, तनक बदन बोलै तनक सौ बोल।
तनक कपोल, तनक सी दतियाँ, तनक हँसनि पर लेत हैं मोल।
तनक करनि पर तनक माखन लिए, देखत तनक जाकैं सकल भुवन।
तनक सुनैं सुजस पावत परम गति, तनक कहत तासौं नँद के सुवन।
तनक रोझ पै देत सकल तन, तनक चितै चित बित के हरन।
तनकहिं तनक तनक करि आवै सूर, तनक कृपा[3] कै दीजै तनक सरन ॥ १५२ ॥
॥ ७७० ॥

* राग कान्हरौ

‡ गोद खिलावति कान्ह सुनी, बड़भागिनि हो नँदरानी।
आनँद की निधि मुख जु लाल कौ, छबि नहिं जाति बखानी।
गुन अपार बिस्तार परत नहिं कहि निगमागम-बानी।
सूरदास प्रभु कौं लिए जसुमति, चितै-चितै मुसुकानी ॥ १५३ ॥ ७७१ ॥

---

(१) नदघरनि—१, ६, ११।
(२) प्रेम सुघर—१, ११। प्रेम सो भर—६, १४।
* (ना) सुघराई।
† यह पद (का) में नहीं है।
(३) तनक—१, २, ६, ६, ११, १४।
* (क) बिलावल।
‡ यह पद (ना, शा, वृ, का, रा, श्या) में नहीं है। जिन प्रतियो में यह पद है उन सबों में इसका पाठ बडा गडबड हो गया है, जिससे अर्थ तथा छद दोनों बिगड़ गए हैं। (के) में छद कुछ ठिकाने से है। उसी के आधार पर यह पाठ रक्खा गया है।

राग गौरी

† मेरे माई, स्याम मनोहर जीवन ।
निरखि नैन भूले जु बदन-छबि, मधुर हँसनि पय-पीवन ।
कुंतल कुटिल, मकर कुंडल, भ्रुव नैन-बिलोकनि बंक ।
सुधा-सिधु[1] तैं निकसि नयौ ससि, राजत मनु मृग-अंक ।
सोभित सुमन मयूर-चंद्रिका, नील नलिन तनु स्याम ।
मनहुँ नछत्र-समेत इंद्र-धनु, सुभग मेघ अभिराम ।
परम कुसल कोबिद लीला-नट, मुसुकनि मन हरि लेत ।
कृपा-कटाच्छ कमल-कर फेरत, सूर जननि सुख देत ॥१५४॥ ७७२॥

* राग देवगधार

‡ कहन लागे मोहन मैया-मैया ।
नंद महर सौं बाबा-बाबा, अरु हलधर सौं भैया ।
ऊँचे चढ़ि-चढ़ि कहति जसोदा, लै-लै नाम कन्हैया ।
दूरि खेलन[2] जनि जाहु लला रे, मारैगी काहु की गैया ।
॥ गोपी ग्वाल करत कौतूहल, घर-घर बजति बधैया ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस कौं, चरननि की[3] बलि जैया[4] ॥१५५॥७७३॥

राग बिलावल

§ माखन खात हँसत किलकत हरि, पकरि स्वच्छ घट देख्यौ ।
निज प्रतिबिंब निरखि रिस मानत, जानत आन परेख्यौ ।

---

† यह पद (ना, शा, वृ, का, रा, श्या) में नहीं है ।
① मनौ सध्या—६ । सूर सुता—६ ।
* (ना) नट ।
‡ यह पद (ल, का, के, क, पू) में नहीं है ।
② कहूँ—१, २, ११, १५ ।
॥ इस चरण के आगे (वे, गो, जै) में दो चरण और हैं—
"मनि खभनि प्रतिबिब बिलोकत पुनि नवनीत कुँवर हरि पैया । नद जसोदा जू के उर तैं यह छबि अनत न जैया ।"
③ पर—१६ । ④ गइया—१, २, ११, १५ ।
§ यह पद केवल (शा) में है ।

मन मैं माष करत, कछु बोलत, नंद बबा पै आयौ।
वा घट मैं काहू कैं लरिका, मेरौ माखन खायौ।
महर कंठ लावत, मुख पोंछत, चूमत तिहिं ठाँ आयौ।
हिरदै दिए लख्यौ वा सुत कौं, तातैं अधिक रिसायौ।
कह्यौ जाइ जसुमति सौं ततछन, मैं जननी सुत तेरौ।
आजु नंद सुत और कियौ, कछु कियौ न आदर मेरौ।
जसुमति बाल बिनोद जानि जिय, उहीं ठौर लै आई।
दोउ कर पकरि डुलावन लागी, घट मैं नहिं छबि पाई।
कुँवर हँस्यौ आनंद-प्रेम-बस, सुख पायौ नँदरानी।
सूरज प्रभु की अद्भुत लीला, जिन जानी तिन जानी ॥१५६॥७७४॥

* राग आसावरी

† बेद-कमल-मुख परसति जननी, अंक लिए सुत रति करि स्याम।
परम सुभग जु[1] अरुन कोमल-रुचि, आनंदित मनु पूरन-काम।
आलंबित जु पृष्ठ बल सुंदर, परसपरहिं चितवत हरि-राम।
झाँकि-उझकि बिहँसत दोऊ सुत, प्रेम-मगन भइ इकटक जाम।
देखि सरूप न रही कछू सुधि, तोरे[2] तबहिं कंठ तैं दाम।
सूरदास प्रभु सिसु लीला-रस, आवहु देखि नंद सुख-धाम ॥१५७॥७७५॥

* राग गौरी

सोभा मेरे स्यामहिं पै सोहै।
बलि-बलि जाउँ छबीले मुख की, या उपमा कौं को है।

---

* (ना) देवगिरी।
† यह पद केवल (वे, ना, गो, जौ) में है।
① जो अरुन कमल—२।
② टूटी—११।
(कां) बिलावल।
(ना, के) कान्हरा।

या छबि की पटतर दीबे कौं सुकबि कहा टकटोहै ?
देखत अंग-अंग-प्रति बानक, कोटि मदन-मन छोहै[1] ।
ससि-गन गारि रच्यौ बिधि आनन, बाँके[2] नैननि जोहै ।
सूर[3] स्याम सुंदरता निरखत, मुनि-जन कौ मन मोहै ॥१५८॥७७६॥

* राग सारंग

बाल गुपाल खेलौ मेरे तात ।
॥ बलि-बलि जाउँ मुखारबिंद की, अमिय-बचन बोलौ तुतरात ।
दुहुँ[4] कर माट गह्यौ नँदनंदन, छिटकि बूँद-दधि परत अघात ।
मानौ गज-मुक्ता मरकत पर, सोभित सुभग साँवरे गात ।
जननी पै माँगत जग-जीवन, दै माखन-रोटी उठि प्रात ।
लोटत सूर स्याम पुहुमी पर, चारि पदारथ जाकैं हाथ ॥१५९॥७७७॥

* राग बिलावल

† पलना झूलौ मेरे लाल पियारे ।
सुसकनि की बागे हौं बलि-बलि, हठ[5] न करहु तुम नंद-दुलारे ।
काजर हाथ भरौ जनि मोहन, ह्वैहैं नैना अति रतनारे ।
सिर कुलही, पग पहिरि पैजनी, तहाँ जाहु जहँ नंद बबा रे ।

---

① मोहै—१, २, ३, १६ । ② बंक भौंह मिलि जो है—१, ६, ११, १५ । बंक नैन जो सोहै—६, १४, १७ । ③ सूरदास बलि बलि सुंदरता जो मुनि जन मन मोहै—२, ३ । सूरदास बलि जाइ निरखि सब सुर नर मन जो मोहै—६, १४ ।

* (का, क, जौ, का, पू) बिलावल ।

॥ इस चरण के उपरांत (वे, का, गो, जौ) में ये दो चरण और हैं —"उनि दे नैन बिसाल की सोभा कहत न कहि आवै कछु बात । द्वार खरे सब सखा पुकारैं नैन मींड़ि आए परभात ।"

④ छाड़ौ माट मथौं दधि मोहन उचटि बूँद तन परत अघात—३, १६, १७, १८, १६ । (का) सारग । (के) केदारा ।

† यह पद (ना, स, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

⑤ तिल तिल हठ न करहु जु दुलारे—१, ६, ११, १५ ।

देखत यह बिनोद धरनीधर, मात पिता बलभद्र ददा रे।
सुर-नर-मुनि कौतूहल भूले, देखत सूर सबै[1] जु कहा रे ॥१६०॥७७८॥

राग बिलावल

† क्रीड़त प्रात समय[2] दोउ बीर।
माखन माँगत, बात न मानत, झँखत जसोदा-जननी-तीर।
जननी मधि, सनमुख संकर्षन, खैं चत कान्ह खस्यौ सिर[3]-चीर।
मनहुँ सरस्वति संग उभय दुज, कल मराल अरु नील कँठीर।
सुंदर[4] स्याम गहो कवरी कर, मुक्ता माल गही बलबीर।
॥ सूरज भष लैबे अप अपनौ, मानहुँ लेत निबेरे सीर ॥१६१॥७७९॥

राग बिलावल

‡ कनक-कटोरा प्रातहीं, दधि घृत सु मिठाई।
खेलत खात गिरावहीं, झगरत दोउ भाई।
अरस परस चुटिया गहैं, बरजति है माई।
महा ढीठ मानैं नहीं, कछु लहुर-बड़ाई।
हँसि कै बोली रोहिनी, जसुमति मुसुकाई।
जगन्नाथ धरनीधरहिं, सूरज बलि जाई ॥१६२॥७८०॥

* राग बिलावल

§ गोपालराइ[5] दधि माँगत अरु रोटी।
माखन सहित देहि मेरी मैया, सुपक सुकोमल[6] रोटी।

---

(१) स्याम हैं कारे—१, ६, १५।
† यह पद (वे, स, ल, का, गो, क, जौ) में है।
(२) युगल यदुबीर—१४।
(३) तन—१, १५। (४) सूरज स्याम—१।
|| सभी प्रतियों में यह पद यहीं समाप्त हो जाता है परंतु (क) में इसके पश्चात् नीचे की दो पंक्तियाँ और हैं—
"सूर सु छबि यह बरनि न आवै उपमा कही परति नहिं धीर।
सनक सनंदन नित उठि ध्यावत अरु गावत जाकौ मुनि कीर।"
‡ यह पद केवल (स, ल, शा, वृ, का, श्या) में है।
* (ना) विभास।
§ यह पद (के, पू) में नहीं है।
(५) कान्ह माइ मागत है दधि रोटी—१४। (६) सुमगल—१, ३, ११, १५। समगल—२।

कत हौ आरि करत मेरे मोहन तुम आँगन मैं लोटी ?
जो चाहौ[1] सो लेहु तुरतहीं, छाँड़ौ यह मति खोटी।
करि[2] मनुहारि कलेऊ दीन्हौ, मुख चुपर्‌यौ अरु चोटी।
सूरदास[3] कौ ठाकुर ठाढौ, हाथ लकुटिया छोटी ॥१६३॥७८१॥

राग बिलावल

† हरि कर राजत माखन-रोटी।
मनु बारिज ससि बैर जानि जिय, गह्यौ सुधा ससुधौटी।
मेली सजि मुख-अंबुज-भीतर, उपजी उपमा मोटी।
मनु बराह भूधर-सह-पुहुमी धरी दसन की कोटी।
नगन गात मुसुकात तात-ढिग, नृत्य करत गहि चोटी।
सूरज प्रभु की लहै[4] जु जूठनि, लारनि ललित लपोटी[5] ॥१६४॥७८२॥

राग बिलावल

‡ दोउ भैया मैया पै माँगत, दै री मैया, माखन रोटो।
सुनत भावती बात सुतनि की, झूठहिं धाम के काम अगोटी।
बल जू गह्यौ नासिका-मोती, कान्ह कुँवर गही दृढ़ करि चोटी।
मानौ हंस मोर भष लीन्हे, कबि उपमा बरनै कछु[6] छोटी।
यह छबि देखि[7] नंद-मन आनँद, अति सुख हँसत जात हैं लोटी।
सूरदास मन[8] मुदित जसोदा, भाग बड़े, कर्मनि की मोटी ॥१६५॥७८३॥

---

① माँगहु सो देहुँ मनोहर यहै बात तेरी खोटी—१, २, ३, ६, ११, १६। ② प्रातकाल उठि देहुँ कलेऊ बदन चुपरि अरु चोटी १, ११, १५। ③ सूरदास ठाकुर कौ भावत—२, ३, १६।

† यह पद केवल (वे, ल, शा, का, गो, जौ) में है।

④ इहै—१, ६, १५। ⑤ पलोटी—६।

‡ यह पद (का, जौ) में नहीं है।

⑥ अति—२। ⑦ निरखि नंद आनदे प्रेम मगन भए लोटक पोटी—१४। ⑧ जसुमति सुख बिलसति—१४।

* राग आसावरी

† तनक दै रो माइ, माखन तनक दै रो माइ।
तनक कर पर तनक रोटी, माँगत चरन चलाइ।
कनक-भू पर रतन रेखा, नेति पकरचौ धाइ।
कँप्यौ गिरि अरु सेष संक्यौ, उदधि चल्यौ अकुलाइ।
तनक मुख की तनक बतियाँ, बोलत हैं तुतराइ।
जसोमति के प्रान-जीवन, उर लियौ लपटाइ।
मेरे मन कौ तनक मोहन, लागु मोहिँ बलाइ।
स्याम सुंदर नँद कुँवर पर, सूर बलि-बलि जाइ ॥१६६॥७८४॥

* राग बिलावल

‡ नैकु रहौ, माखन द्यौं तुमकौं।
ठाढ़ो मथति जननि[1] दधि आतुर, लौनी नंद-सुवन कौं।
मैं बलि जाउँ स्याम-घन सुंदर, भूख लगी तुम्हैं[2] भारी।
बात कहूँ की बूझति स्यामहिँ, फेर करत महतारी।
कहत बात[3] हरि कछू न समुझत, झूठहिं भरत[4] हुँकारी।
सूरदास प्रभु कैं गुन तुरतहिं, बिसरि गई नँद-नारी ॥१६७॥७८५॥

× राग बिलावल

§ बातनि ही सुत लाइ लियौ।
तब लौं मथि दधि जननि जसोदा, माखन करि हरि-हाथ दियौ।

---

* (क) रामकली।
† यह पद केवल (वे, शा, गो, क, जै।) में है।
(ना) धनाश्री।
† यह पद (शा, का) में नहीं है।
① जसोदा—२, ३, १६।
② कछु—२, ३, १६, १८, १६। ③ माय—३। ④ देत—१, २, ११।
× (ना) धनाश्री।
† यह पद (का) में नहीं है।

लै-लै अधर-परस करि जेँवत, देखत फूल्यौ मात[1]-हियौ।
आपुहिँ खात प्रसंसत आपुहिँ, माखन-रोटी बहुत प्रियौ।
जो प्रभु सिव-सनकादिक-दुर्लभ, सुत-हित जसुमति[2] नंद कियौ।
यह सुख निरखत सूरज प्रभु कौ, धन्य-धन्य पल[3] सुफल जियौ॥१६८॥७८६॥

बाल-छवि-वर्णन

* राग बिलावल

† बरनौं बाल-बेष मुरारि।
थकित जित-तित अमर-मुनि-गन, नंद-लाल निहारि।
केस सिर बिन बपन के, चहुँ दिसा छिटके झारि।
सीस पर धरि[4] जटा, मनु सिसु-रूप कियौ त्रिपुरारि।
तिलक ललित ललाट केसरि-बिंदु सोभाकारि।
रोष-अरुन तृतीय लोचन, रह्यौ जनु रिपु जारि।
कंठ कठुला नील मनि, अंभोज-माल सँवारि।
गरल ग्रीव, कपाल उर, इहिँ भाइ भए मदनारि।
कुटिल हरि-नख हिऐँ हरि[5] के हरषि निरखति नारि।
ईस जनु रजनीस राख्यौ भाल तैँ जु उतारि।
सदन[6]-रज तन स्याम सोभित, सुभग इहिँ अनुहारि।
मनहुँ अंग-बिभूति-राजित संभु सो मधुहारि।
त्रिदस-पति-पति[7] असन कौँ, अति जननि सौँ करै आरि।
सूरदास बिरंचि जाकौँ जपत निज[8] मुख चारि॥१६९॥७८७॥

---

(१) गात—१, ११, १५। (२) बस करि नंद त्रियो—१, ६, ११, १४। (३) बलि—२, ३।

* (ना) सोरठ। (का, क) नटनारायन। (रा) केदारा।

† यह पद (बृ, का, श्या) में नहीं है।

(४) बर—३, १४। (५) सोभित सुभग इहै अनुहारि—१७। (६) लसित चंदन स्याम के अँग देखि हरषित नारि—६, १७। (७) तब जसुमती सौं असन कौं करै रारि—२। (८) है—२, ६। जस—३, १४।

* राग बिलावल

सखि री, नंद-नंदन देखु ।
धूरि-धूसर जटा जुटली, हरि किए हर-भेषु ।
नील पाट[1] पिरोइ मनि-गन, फनिग धोखैं जाइ ।
खुनखुना कर, हँसत[2] हरि, हर नचत डमरु बजाइ ।
जलज-माल गुपाल पहिरे, कहा कहौं बनाइ ।
मुंड-माला मनौ हर-गर, ऐसी सोभा पाइ ।
स्वाति-सुत-माला बिराजत स्याम तन इहिं भाइ ।
मनौ गंगा गौरि-डर हर लई कंठ लगाइ ।
केहरी-नख निरखि हिरदै, रहीं नारि बिचारि ।
बाल-ससि मनु भाल तैं लै, उर धरयौ त्रिपुरारि ।
देखि अंग अनंग झझक्यौ[3], नंद-सुत हर[4] जान ।
सूर[5] के हिरदै बसौ नित, स्याम-सिव कौ ध्यान ॥१७०॥७८८॥

राग सारंग

† हरि-हर संकर, नमो नमो ।
अहिसायो, अहि-अंग-बिभूषन; अमित-दान, बल-बिष-हारी ।
नीलकंठ, बर नील कलेवर; प्रेम-परस्पर, कृतहारी ।
चंद्रचूड़, सिखि-चंद्र-सरोरुह; जमुना-प्रिय, गंगा-धारी ।
सुरभि-रेनु-तन, भस्म बिभूषित; बृष-बाहन, बन-बृष-चारी ।

---

* (ना) सोरठ । (का, क) नटनारायन । (के, का, रा, श्या) केदारा ।

(१) कठुला पोइ मनि गन फनिग ज्यौं लपटाइ—३, १४ । (२) लिए मोहन—२, १६ । (३) डरप्यौ—१, ६, ११, १५ । लज्जित—२, १६ । (४) को—१, ६, ११, १५ । (५) सूरदास के हृदय बसि रह्यौ—१, ६, ११, १५ ।

† यह पद केवल (स, बृ, का, श्या) में है ।

अज-अनीह-अबिरुद्ध-एकरस, यहै अधिक ये अवतारी।
सूरदास सम, रूप-नाम-गुन अंतर अनुचर-अनुसारी ॥१७१॥७८६॥

* राग बिलावल

† देखौ[1] माई दधि-सुत मैं दधि जात।
एक अचंभौ देखि सखी री, रिपु मैं रिपु जु समात।
दधि पर कीर, कीर पर पंकज, पंकज के द्वै पात।
यह सोभा देखत पसु-पालक, फूले अँग न समात।
बारंबार बिलोकि सोचि चित, नंद महर मुसुक्यात।
यहै[1] ध्यान मन आनि स्याम कौ, सूरदास बलि जात ॥१७२॥७६०॥

* राग धनाश्री

‡ दधि-सुत जामे नंद-दुवार।
निरखि नैन अरुझ्यौ मनमोहन, रटत देहु कर बारंबार।
दीरघ मोल कह्यौ ब्यौपारी, रहे ठगे सब कौतुक हार।
कर ऊपर लै राखि रहे हरि, देत[2] न मुक्ता परम सुढार।
गोकुलनाथ भए जसुमति के आँगन भीतर, भवन मँझार।
साखा-पत्र भए जल मेलत, फूलत-फरत न लागी बार।
जानत नहीं मरम सुर-नर-मुनि, ब्रह्मादिक नहिं परत बिचार।
सूरदास प्रभु की यह लीला, ब्रज-बनिता पहिरे गुहि हार ॥१७३॥७६१॥

---

* (ना) सोरठ। (के, पू) सा ंग।

† यह पद (स) में नहीं है।

① देखौ मैं—१, ३, ११, १५। देखौ—२।

* (गो, कां) बिलावल। (रा) नट।

‡ यह पद (ना, शा, वृ, श्या) में नहीं है।

② देखत—३।

* राग धनाश्री

† कजरी को पय पियहु लाल, जासौं तेरी बेनि[1] बढ़ै ।
जैसैं देखि और ब्रज बालक, त्यौं बल-बैस चढ़ै ।
यह सुनि कै हरि पीवन लागे, ज्यौं त्यौं लयौ लढ़ै ।
अँचवत पय तातौ जब लाग्यौ, रोवत जीभि डढ़ै ।
पुनि पीवत हीं कच टकटोरत, झूठहिं जननि रढ़ै ।
सूर निरखि मुख हँसति जसोदा, सो सुख उर न कढ़ै ॥१७४॥७६२॥

* राग रामकली

मैया[2], कबहिं बढ़ैगी चोटी ?
किती[3] बार मोहिं दूध पियत भई, यह अजहूँ है छोटी !
तू जो कहति बल की बेनी ज्यौं, ह्वैहै लाँबी-मोटी ।
काढ़त-गुहत-न्हवावत जैहै[4] नागिनि सी भुइं लोटी ।
काँचो[5] दूध पियावति पचि-पचि,[6] देति न माखन-रोटी ।
सूरज[7] चिरजीवौ दोउ भैया, हरि-हलधर की जोटी ॥१७५॥७६३॥

× राग सारंग

‡ मैया, मोहिं बड़ौ करि लै री ।
दूध-दही-घृत-माखन-मेवा, जो माँगौं सो दै री ।

---

* (ना) देवगधार ।
† यह पद (बृ, कां, श्या) में नहीं है ।
① चोटी—१, ११, १२ ।
* (ना) देवगधार । (का) धनाश्री । (कां) बिलावल ।
② जसोदा—१, ६, ११, १२ । ③ कितौ बेर—३, १४ । किते दिवस मोहिं दूध पियत भए—१६, १८, १६ । ④ औंछत—१, ६, ११, १२ । ⑤ धूति-धूति मुहि दूध पिवायौ—१६ । ⑥ है मोहि—३ । ⑦ सूर बाल रस त्रिभुवन मोहे—२, ३, १६ । सूरदास त्रिभुवन मन मोहन—१, १७ ।
× (ना, क) बिलावल ।
‡ यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है ।

कछू हौंस राखै जनि मेरी, जोइ-जोइ मोहिँ रुचै री ।
होउँ बेगि मैं सबल सबनि मैं, सदा रहौं निरभै री ।
रंगभूमि मैं कंस पछारौं, घोसि[1] बहाऊँ बैरी ।
सूरदास स्वामी की लीला, मथुरा राखौं जै री ॥१७६॥७६४॥

* राग रामकली

हरि अपनैं आँगन[2] कछु गावत ।
तनक-तनक चरननि सौं नाचत, मनहीं[3] मनहिँ रिझावत ।
बाहँ उठाइ[4] काजरी-धौरी गैयनि टेरि बुलावत ।
कबहुँक बाबा नंद पुकारत, कबहुँक घर मैं आवत ।
माखन तनक आपनैं कर लै, तनक-बदन मैं नावत ।
कबहुँ चितै प्रतिबिंब खंभ मैं, लौनी लिए[5] खवावत ।
दुरि देखति जसुमति यह लीला, हरष अनंद बढावत ।
सूर स्याम के बाल-चरित, नित नितही देखत भावत ॥१७७॥७६५॥

* राग बिलावल

आजु सखी, हौं प्रात समय दधि मथन उठी अकुलाइ ।
भरि भाजन मनि-खंभ निकट धरि, नेति लई कर जाइ ।
सुनत सब्द तिहिं छिन समीप मम हरि हँसि आए धाइ ।
मोह्यौ बाल-बिनोद-मोद अति, नैननि नृत्य दिखाइ ।
चितवनि चलनि हर्‌यौ चित चंचल, चितै रही चित लाइ ।

---

(१) कहाँ कहा लौं मैं री—१, ११ । कहति कहा तू मेरी—२ । केसि—१६ ।
* (ना) कल्यान ।

(२) आगे—१, ३, ११, १५ । अगनि—२ । (३) मन हरि लेत—१७ । (४) उचाइ—१, ११ । (५) लै दिखरावत—१४ ।

(के, पू) केदारा । (क) ललित । (का, रा) आसावरी ।

पुलकत[1] मन प्रतिबिंब देखि कै, सबही अंग सुहाइ।
माखन पिंड बिभागि दुहूँ कर, मेलत[2] मुख मुसुकाइ।
सूरदास-प्रभु-सिसुता[3] कौ सुख, सकै न हृदय समाइ ॥१७८॥७६६॥

* राग बिलावल

बलि-बलि जाउँ मधुर सुर गावहु[4]।
अबकी बार मेरे कुँवर कन्हैया, नंदहिँ नाचि दिखावहु।
तारी[5] देहु आपने कर की, परम प्रीति उपजावहु।
आन जंतु-धुनि सुनि कत डरपत, मो भुज कंठ लगावहु।
जनि संका जिय करौ लाल मेरे, काहे कौं भरमावहु।
बाहँ उचाइ काल्हि की नाईं, धौरी धेनु बुलावहु।
नाचहु नैंकु, जाउँ बलि तेरी, मेरी साध पुरावहु।
रतन-जटित किंकिनि पग-नूपुर, अपनैं रंग बजावहु।
कनक-खंभ प्रतिबिंबित सिसु इक, लवनी ताहि खवावहु।
सूर[6] स्याम मेरे उर तैं कहुँ टारे नैंकु न भावहु ॥१७६॥७६७॥

कनछेदन

* राग धनाश्री

† कान्ह कुँवर कौ कनछेदन है, हाथ सोहारी भेली गुर की।
बिधि बिहँसत, हरि हँसत हेरि हरि, जसुमति की धुकधुकी सु उर की।

---

① भूलि सु तन प्रतिबि ब बिलोकत रीझी सहज सुभाइ—६, ६, १७। ② आपत—१, ११, १५। ③ ता सुत के सुख—१, ११, १५, १६, १६। या सुत कौ सुख सखी, हृदय न समाइ—२।

* (ना) कान्हरा।

④ गाउ—२, १६, १८। ⑤ हेरी देउ पिता के आगे प्रेम—१६। ⑥ परमानद सूर के उर तैं यह छबि अत न जाउ—२, १६, १८, १६। परम दयाल सूर के उर ते हरि टारे नहिं भावहु—१४।

' (ना) टोड़ी।

† यह पद (वे, ना, गो, जौ, का, रा, श्या) में 'घुटुरुवनि-चलन' लीला के पूर्व में पाया जाता है परतु (स, का, के, क, पू) में यह इसी स्थान पर मिलता है। यहीं यह संगत भी जान पड़ता है।

रोचन भरि लै देत सीँक सौँ, स्रवन-निकट अतिही चातुर की ।
कंचन के द्वै दुर मँगाइ लिए, कहौँ कहा छेदनि आतुर की ।
लोचन भरि-भरि दोऊ माता, कनछेदन देखत जिय मुरकी ।
रोवत देखि जननि अकुलानी, दियौ तुरत नौआ कौँ घुरकी[1] ।
हँसत नंद, गोपी सब बिहँसीँ, झमकि चलीँ सब[2] भीतर दुरकी[3] ।
सूरदास नँद करत बधाई, अति आनंद बाल ब्रज-पुर की ॥१८०॥७६८॥

* राग धनाश्री

जबहिँ भयौ कनछेदन हरि कौ ।
सुर-बनिता सब कहतिँ परस्पर, ब्रजबासी-दासी-समसरि को ?
गोपी मगन भईँ सब गावति, हलरावति सुत लेति महरि कौ ।
जो सुख मुनि जन ध्यान न पावत, सो सुख करत नंद सब खरिकौ ।
मनि-मुकता-गन करत निछावरि, तुरतहिँ देत बिलंब न घरि कौ ।
सूर नंद ब्रज-जन पहिरावत, उमँगि चल्यौ[4] सुखसिंधु लहरि कौ॥१८१॥७६६

राग धनाश्री

† पाहुनी, करि दै तनक मह्यौ ।
हौँ लागी गृह-काज-रसोई, जसुमति बिनय कह्यौ ।
आरि करत मनमोहन मेरौ, अंचल आनि गह्यौ ।
ब्याकुल मथति मथनियाँ रीती, दधि भुव ढरकि रह्यौ ।
माखन जात जानि नँदरानी, सखी सम्हारि कह्यौ ।
सूर स्याम-मुख निरखि मगन भई, दुहुनि सँकोच सह्यौ॥१८२॥८००॥

---

① झुरकी—३,१६ । हुरकी—१६ । † यह पद (ना, शा, बृ, ६, १७ । ② छबि—२, ३, ६, (कां) सारंग । कां, रा, श्या) में नहीं है ।
१४, १६ । ③ दुरकी—१, २, ④ बढ्यौ—३, ६ ।

† कान्हर[1], बलि आरि न कीजै। जोइ[2]-जोइ भावै सोइ लीजै।
यह कहति जसोदा रानी। को खिझवै सारँगपानी।
जो मेरैं लाल खिझावै। सो अपनौ कीनौं पावै।
तिहिं देहौं देस-निकारौ। ताकौ ब्रज नाहिंन गारौ।
अति रिसही तैं तनु छीजै। सुठि कोमल अंग पसीजै।
बरजत-बरजत बिरुझाने। करि क्रोध मनहिं अकुलाने।
कर[3] धरत धरनि पर लोटै। माता कौ चीर निखोटै[4]।
अँग-आभूषन सब तोरै। लवनी-दधि-भाजन फोरै।
देखत सुतहि जल तरसै। जसुदा के पाइनि परसै।
तब महरि बाहँ गहि आनै। लै तेल उबटनौ सानै।
तब गिरत-परत उठि भागै। कहुँ नैंकु निकट नहिं लागै।
तब नंद-घरनि चुचकारै। आवहु बलि जाउँ तुम्हारै।
नहिं आवहु तौ भलैं लाला। समुझौगे मदन गोपाला।
तुम मेरी रिस नहिं जानौ। मोकौं नहिं तुम पहिचानौ।
मैं आजु तुम्हैं गहि बाँधौं। हा-हा करि-करि अनुराधौं।
बाबा नँद उत तैं आए। कौनैं हरि अतिहिं खिझाए?
मुख चूमि हरषि लै आए। लै जसुमति पै पहुँचाए।
मोहन कत खिझत अयानौ। लिए लाइ हिऐं नँदरानी।

---

† यह पद (ना, बृ, का, रा, श्या) में नहीं है।

① कान्ह बलि जावँ ऐसी आरि न कीजै—१, ११। कान्ह बलि गई आरि न कीजै हो—३, ६, १४। ② जोइ जोइ भावै सोइ सोइ लीजै—१, ११। जोई जोई भावै सोई सोई लीजै हो—३, ६, १४। ③ धरत धरनि पर लोटै—१, ११। धरत-धरत भुइ लोटै—३, ६, १४। ④ निझोटै—३। झझौटै—६।

क्यौं हूँ जतन-जतन करि पाए। तन उबटन तेल लगाए।
तातौ जल आनि समोयौ। अन्हवाइ दियौ, मुख[1] धोयौ।
अति सरस बसन तन पोंछे। लै कर मुख-कमल अँगोछे।
अंजन दीउ दृग भरि दीन्हौ। भ्रुव चारु चखोड़ा कीन्हौ।
आभूषन अँग जे बनाए। लालहिँ क्रम-क्रम पहिराए।
ऐसी रिस करौ न कान्हा। अब खाहु कुँवर कछु नान्हा।
तुतरात कह्यौ का है री। जो मोहिँ भावै सो दै री।
जोइ-जोइ भावै मेरे प्यारे। सोइ-सोइ तोहिँ देहुँ लला रे।
है करयौ सिरावन सीरा। कछु हठ न करहु बलबीरा।
सद दधि-माखन द्यौं आनी। ता पर मधु मिसिरी सानी।
खोवा-मय मधुर मिठाई। सो देखत अति रुचि पाई।
कछु बलदाऊ कौं दीजै। अरु दूध अधावट पीजै।
सब हेरि धरी है साढो। लई ऊपर-ऊपर काढ़ी।
अति प्यौसर सरस बनाई। तिहिँ सोंठ-मिरिच रुचि नाई।
दधि दूध बरा दहिरौरी। सो खात अमृत पक्कौरी[2]।
सुठि सरस जलेबी बोरी। जिहिँ जेँवत रुचि नहिँ थोरी।
अरु खुरमा सरस सँवारे। ते परसि धरे हैँ न्यारे।
सक्करपारे सद-पागे। ते जेँवत परम सभागे।
सेव लाडू रुचिर सँवारे। जे मुख मेलत सुकुमारे।

---

① अँग—३, ६, १७। ② इक कौरी हो—१, ६, ६, ११, १४, १५, १७।

सुठि मोती लाडू मीठे। वै खात न कबहुँ उबीठे।
खिर-लाडु लवंगनि नाए। ते करि बहु जतन बनाए।
गूझा बहु पूरन पूरे। भरि-भरि कपूर रस चूरे।
अरु तैसियै गाल मसूरी। जो खातहिँ मुख-दुख दूरी।
अरु हेसमि सरस सँवारी। अति स्वाद परम सुखकारी।
बाबर बरने नहिँ जाई। जिहिँ देखत अति सुख पाई।
मृदु मालपुआ मधु साने। जे तुरत तपत करि आने।
सुंदर अति सरस अँदरसे। ते घृत-दधि-मधु मिलि सरसे।
घेवर अति घिरत-चभोरे। लै खाँड़ सरस रस बोरे।
मधुरी अति सरस खजूरी[1]। सद परसि धरी घृत-पूरी।
जब पूरी सुनि हरि हरष्यौ। तब भोजन पर मन करष्यौ।
सुनि तुरत जसोदा ल्याई। अति रुचि समेत हरि खाई।
बलदाऊ टेरि बुलाए। यह सुनि हलधर तहँ आए।
षटरस परकार मँगाए। जे बरनि जसोदा गाए।
मनमोहन हलधर बीरा। जेँवत रुचि राख्यौ सीरा।
सीतल जल लियौ मँगाई। भरि झारी जसुमति ल्याई।
अँचवत तब नैन जुड़ाने। दोउ हरषि हरषि मुसुकाने।
हँसि जननी चुरू भराए। तब कछु-कछु मुख पखराए।
तब बीरो तनक मुख नायौ। अति लाल अधर ह्वै आयौ।
छबि सूरदास बलिहारी। माँगत कछु जूठनि थारी।
हरि तनक-तनक कछु खायौ। जूठनि सब भक्तनि पायौ ॥१८३॥

॥८०१॥

---

(१) खजूरी—१, ६, ११।

* राग नट नारायन

† बिहरत बिबिध बालक-संग ।
डगनि[1] डगमग पगनि डोलत, धूरि-धूसर अंग ।
चलत मग, पग बजति पैजनि, परसपर किलकात ।
मनौ मधुर मराल-छौना बोलि बैन सिहात ।
॥ तनक कटि पर कनक-करधनि, छीन[2] छबि चमकाति[3] ।
॥ मनौ कनक कसौटिया पर, लीक सी लपटाति ।
दुर दमंकत सुभग स्रवननि, जलज जुग डहडहत ।
मनहुँ बासव बलि पठाए, जीव-कबि कछु कहत ।
ललित लट छिटकाति मुख पर, देति सोभा दून ।
मनु मयंकहिँ अंक लीन्हौ सिंहिका कैँ सून ।
कबहुँ द्वारैँ दौरि आवत, कबहुँ नंद-निकेत ।
सूर प्रभु कर गहति ग्वालिनि, चारु-चुंबन-हेत[4] ॥१८४॥८०२॥

राग बिलावल

‡ मोहन, आउ तुम्हैँ अन्हवाऊँ ।
जमुना तैँ जल भरि लै आऊँ, ततिहर तुरत चढ़ाऊँ ।
केसरि कौ उबटनौ बनाऊँ, रचि-रचि मैल छुड़ाऊँ ।
सूर कहै कर नैँकु जसोदा, कैसैँहु पकरि न पाऊँ ॥१८५॥८०३॥

* राग आसावरी

जसुमति जबहिँ कह्यौ अन्हवावन, रोइ गए हरि लोटत रो ।

---

* (ना) सारग । (जौ) नट । (का, श्या) कान्हरो । (रा) केदारा ।

† यह पद (के, पू) मेँ नहीँ है ।

① डगर—१, ६, ११, १५ ।

‖ ये दो चरण (बे, का, गो जौ) मेँ नहीँ हैँ ।

② अग सुभग सोहात—३ ।

③ छपि जात—१६, १८, १९ ।

④ लेत—१९ ।

‡ यह पद केवल (शा) मेँ है ।

५ (ना) ललित । (गो) बिलावल ।

तेल उबटनौ लै आगैं धरि, लालहिं चोटत-पोटत री।
मैं बलि जाउँ न्हाउ जनि मोहन, कत रोवत बिनु काजैं री।
पाछैं धरि राख्यौ छपाइ कै उबटन-तेल-समाजैं री।
महरि बहुत बिनती करि राखति, मानत नहीं कन्हैया रो।
सूर स्याम अतिहीं बिरुझाने, सुर-मुनि अत न पैया री ॥१८६॥८०४॥

राग सूहौ बिलावल

† देखि माई हरि जू की लोटनि।

यह छबि निरखि रही[1] नँदरानी, अँसुवा ढरि-ढरि परत करोटनि।
परसत आनन मनु रबि-कुंडल, अंबुज स्रवत सीप-सुत जोटनि।
चंचल अधर, चरन-कर चंचल, मंचल[2] अंचल गहत बकोटनि।
लेति छुडाइ महरि कर सौं कर, दूरि भई देखति दुरि ओटनि।
सूर निरखि मुसुकाइ जसोदा, मधुर-मधुर बोलति मुख होटनि ॥१८७॥८०५॥

चन्द्र-प्रस्ताव

* राग कान्हरौ

ठाढी अजिर जसोदा अपनैं, हरिहिं लिए चंदा दिखरावत।
रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी, देखौ धौं भरि नैन जुड़ावत।
चितै रहे तब आपुन ससि-तन, अपने कर लै-लै जु बतावत।
मीठौ लगत किधौं यह खाटौ, देखत अति सुंदर मन भावत।
मनहीं मन हरि बुद्धि करत हैं माता सौं कहि ताहि मँगावत।
लागी भूख, चंद मैं खैहौं, देहि-देहि रिस करि बिरुझावत।
जसुमति कहति कहा मैं कीनौ, रोवत मोहन अति दुख पावत।
सूर[3] स्याम कौं जसुमति बोधति, गगन चिरैयाँ उड़त दिखावत ॥१८८॥८०६॥

---

† यह पद केवल (स, ल, गो, क) में है।

① निरखि—३, ११, १४।

② मंजुल—३।

* (ना) केदारा। (रा) बिलावल।

③ ता सुख देखत सुर मुनि भूले सूरदास जस हहै जु गावत—१७।

* राग कान्हरौ

किहिँ बिधि करि कान्हहिँ समुझैहौं ?
मैँ ही भूलि चंद दिखरायौ, ताहि कहत[1] मैँ खैहौं !
अनहोनी कहुँ भई[2] कन्हैया, देखी-सुनी न बात ।
यह तौ आहि खिलौना सबकौ, खान कहत तिहिँ तात !
यहै देत लवनी नित मोकौं, छिन-छिन साँझ-सवारे ।
बार-बार तुम माखन माँगत, देउँ कहाँ तैँ प्यारे ?
देखत रहौ खिलौना चंदा, आरि न करौ कन्हाई ।
सूर स्याम लिए हँसति जसोदा, नंदहिँ कहति बुझाई[3] ॥१८६॥८०७॥

* राग धनाश्री

† (आछे मेरे) लाल हो, ऐसी आरि न कीजै ।
मधु - मेवा - पकवान - मिठाई, जोइ भावै सोइ लीजै ।
सद माखन घृत दह्यौ सजायौ, अरु[4] मीठौ पय पीजै ।
पालागौं[5] हठ अधिक करौ जनि, अति रिस तैँ तन छीजै ।
आन[6] बतावति, आन दिखावति, बालक तौ न पतीजै ।
खसि-खसि परत कान्ह कनियाँ तैँ, सुसुकि सुसुकि मन खीजै ।
जल-पुट आनि धर्‌यौ आँगन मैँ, मोहन नैँकु तौ लीजै ।
सूर स्याम हठि चंदहिँ माँगै, सु[7] तौ कहाँ तैँ दीजै ॥१९०॥८०८॥

---

* (ना) ईमन ।
① दै—६ । ② होत—१, ११, १५ । होइ—१६ । ③ बुलाई—१६ ।
† (ना) ईमन । (कं, पू) कान्हरा ।
† यह पद (बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।
④ काजरि का—२ । ⑤ कमलनैन बलि आरि करौ जिन खीझत तन मन—१७ । ⑥ वह बावरो इती कह जानै बलरामहिँ न—२ । ⑦ चद—१, ३, ६, ११ ।

* राग कान्हरौ

बार-बार जसुमति सुत बोधति, आउ चंद तोहिँ लाल बुलावै ।
मधु-मेवा-पकवान-मिठाई, आपुन खैहै, तोहिँ खवावै ।
हाथहिँ पर तोहिँ लीन्हे खेलै, नैँकु नहीँ धरनी बैठावै ।
जल-बासन[1] कर लै जु उठावति, याही मैँ तू तन धरि आवै ।
जल-पुट आनि धरनि पर राख्यौ, गहि आन्यौ वह चंद दिखावै ।
सूरदास प्रभु हँसि मुसुक्याने, बार-बार दोऊ कर नावैँ ॥१६१॥८०६॥

* राग रामकली

! (मेरौ[2] माई) ऐसौ हठी बाल गोबिदा ।
अपने[3] कर गहि गगन बतावत खेलन कौँ माँगै चंदा ।
बासन[4] मैँ जल धर्‌यौ जसोदा, हरि कौँ आनि दिखावै ।
रुदन करत, ढूँढ़त नहिँ पावत, चंद धरनि क्यौँ आवै !
मधु[5] - मेवा - पकवान - मिठाई, माँगि लेहु मेरे छौना ।
चकई[6]-डोरि पाट के लटकन, लेहु मेरे लाल खिलौना ।
संत-उबारन, असुर-सँहारन, दूरि करन दुख - दंदा ।
सूरदास बलि गई जसोदा, उपज्यौ कंस-निकंदा ॥१६२॥८१०॥

राग केदारौ

‡ मैया, मैँ तौ चंद-खिलौना लैहौँ ।
जैहौँ लोटि धरनि पर अबहीँ, तेरी गोद न ऐहौँ ।

---

* (रा) केदारौ ।
① भाजन—१, ११ । (का) बिलावल ।
† यह पद (ना, के, क, पू, रा) मेँ नहीँ है ।
② अरटो री मेरो—१,१६ । मेरो माई औ हठ—६ । अरट्यौ री मेरौ—१६ । ③ कर पल्लव गहि गहि देखरावत खेलन माँगै चदा—१, १६ । ④ भाजन मैँ जल धारि जसोमति या बिधि चद-१, १६ । ⑤ दूध दही पकवान मिठाई जु (जे) कछु मांगु मेरे छौना—१, ६, ११, १५ । ⑥ मोरा चकई लाल पाट को ले डुआ मागु खिलौना—१, ६, ११ १५ ।
‡ यह पद केवल (शा) मेँ है ।

सुरभी कौ पय पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहैहौं।
ह्वैहौं पूत नंद बाबा कौ, तेरौ सुत न कहैहौं।
आगैं आउ, बात सुनि मेरी, बलदेवहिं न जनैहौं।
हँसि समुझावति, कहति जसोमति, नई दुलहिया दैहौं।
तेरो सौं, मेरी सुनि मैया, अबहिं बियाहन जैहौं।
सूरदास ह्वै कुटल बराती, गीत सुमंगल गैहौं॥१६३॥८११॥

* राग रामकली

† मैया[1] री मैं चंद लहौंगौ।
कहा करौं जलपुट भीतर कौ, बाहर ब्यौंकि[2] गहौंगौ।
यह तौ झलमलात झकझोरत, कैसैं कै जु लहौंगौ।
वह तौ निपट निकटहीं देखत, बरज्यौ हौं न रहौंगौ।
तुम्हरौ[3] प्रेम प्रगट मैं जान्यौ, बौराएँ न बहौंगौ।
सूर स्याम कहै कर गहि ल्याऊँ, ससि[4]-तन-दाप दहौंगौ॥१६४॥८१२॥

* राग धनाश्री

लै लै मोहन[5], चंदा लै।
कमल नैन बलि जाउँ[6] सुचित ह्वै, नीचैं नैंकु चितै।
जा कारन तैं सुनि सुत सुंदर, कीन्ही इती अरै।
सोइ सुधाकर[7] देखि कन्हैया,[8] भाजन माहिं परै।

---

* (ना) ईमन।

† यह पद (बृ, का, रा, श्या) में नहीं है।

① लै हौं री मो चंदा ल्यौंगौ—३, ६, ६। ② ओकि-१, ६, ११। आग—२। चौकि—१४। ③ तेरो प्रेम उदित भयौ माता—२। ④ अबिध ताप—२। ससि तन ताप—१७। (ना, कां) का-हरो। (रा) केदारा।

⑤ माधौ—२। ⑥ जाइ जसोदा नीचे—१, ३, ६, ११। ⑦ सुधि करि तू देखि—६। ⑧ मनोहर—२।

नभ तैं निकट आनि राख्यौ है, जल-पुट जतन जुगै।
लै अपने कर काढि चंद कौं, जो भावै सो कै।
गगन-मँडल तैं गहि आन्यौ है, पंछी एक पठै।
सूरदास प्रभु इती बात कौं, कत मेरौ लाल हठै ॥१६५॥८१३॥

* राग बिहागरौ

† तुव मुख देखि डरत ससि भारी।
कर करि कै हरि हेरचौ चाहत, भाजि पताल गयौ अपहारी[1]।
वह ससि तौ कैसैं हु नहिं आवत, यह ऐसी कछु बुद्धि बिचारी।
बदन देखि बिधु बुधि सकात मन, नैन कंज कुंडल उजियारी।
सुनौ स्याम, तुमकौं ससि डरपत, यहै कहत मैं सरन तुम्हारी।
सूर स्याम बिरुझाने सोए, लिए लगाइ छतिया महतारी ॥१६६॥८१४॥

* राग केदारौ

जसुमति लै पलिका पौढ़ावति।
मेरौ[2] आजु अतिहिं बिरुझानौ, यह कहि कहि मधुरैं सुर गावति।
पौढि गई हरुऐं करि आपुन, अग मोरि तब हरि जँभुआने।
कर सौं ठाँकि सुतहिं दुलरावति, चटपटाइ बैठे अतुराने।
पौढौ लाल, कथा इक कहिहौं, अति मीठी, स्रवननि कौं प्यारी।
यह सुनि सूर स्याम मन हरषे, पौढि गए हँसि देत हुँकारी ॥१६७॥८१५॥

---

* (का, के, क, पू) बिलावल।

† यह पद (ना, बृ, का, रा, श्या) में नहीं ह।

(१) अवहारी—६। (ना) ईमन। (रा) कान्हरा।

(२) आजु कान्ह अतिही—३। (३) मधुरे सुर सौं—६, १७, १६।

* राग केदारौ

† सुनि सुत, एक कथा कहौं प्यारी ।
कमल-नैन मन आनँद उपज्यौ, चतुर सिरोमनि देत हुँकारी ।
दसरथ नृपति हुतौ रघुबंसी, ताकैं प्रगट भए सुत चारी ।
तिनमैं मुख्य राम जो कहियत, जनक-सुता ताकी बर नारी ।
तात-बचन लगि राज तज्यौ तिन, अनुज, घरनि सँग भए बनचारी ।
धावत कनक-मृगा के पाछैं, राजिव-लोचन परम उदारी ।
रावन हरन सिया कौ कीन्हौ, सुनि नँद-नंदन नींद निवारी ।
चाप-चाप करि उठे सूर प्रभु, लछिमन देहु, जननि भ्रम भारी ॥१६८॥८१६॥

* राग बिहागरौ

‡ नंद-नँदन, इक[1] सुनौ कहानी ।
पहिली कथा पुरातन सुनौ[2] हरि जननि-पास[3] मुख बानी ।
रामचंद्र दसरथ-सुत, ताकी जनक-सुता गृह-रानी ।
कहैं[4] तात के, पंचबटी बन, छाँड़ि चले रजधानी ।

---

* (ना) कान्हरौ । (कां) सारंग । (रा) कल्यान ।

† यह पद सभी प्रतियों में प्राप्त है । परंतु इसके चरणों की संख्या तथा पाठ में बड़ा भेद है । ६ से लेकर २० चरण तक इसमें पाए जाते हैं । कुछ प्रतियों में १८ चरण मिलते हैं और (के) में २० हैं । परंतु जिन प्रतियों में ८ से अधिक चरण हैं उन्हें देखने से यह स्पष्ट लक्षित होता है कि किसी न कथा को विस्तृत करने के निमित्त मनमानी गढ़त की है । (ना, कां, रा, श्या) में इसमें ८ चरण मिलते हैं और वही सूरदास-कृत प्रतीत होते हैं । अत इन्हीं प्रतियों के अनुसार इस संस्करण में चरणों की संख्या तथा पाठ रक्खे गए हैं । नवलकिशोर प्रेस के सूरसागर तथा राग-कल्पद्रुम में इस पद के अंतिम चरण पर परमानंददासजी की छाप है । वह चरण इस प्रकार है—"परमानँद प्रभु चाप रटत कर लक्ष्मण देहु जननि भ्रम भारी ।"

(रा) कल्यान ।

‡ यह पद (स, बृ, के, क, कां, पू, श्या) में नहीं है ।

① तुम—१, ६, ११, १५ । ② सुनियत—२ । ③ बात मुख जानी—२ । ④ कहि पचतत्त्व अरु पचवटी—१, ६, ११, १५ । कहूँ गगतट पचवटी—२ ।

तहाँ बसत सीता हरि लीन्ही, रजनीचर अभिमानी।
लछिमन, धनुष देहु[1], कहि उठे हरि, जसुमति सर डरानी ॥१९९॥८१७॥

* राग केदारौ

जसुमति मन-मन यहै बिचारति।
झझकि उठ्यौ सोवत हरि अबहीं, कछु पढ़ि-पढ़ि तन-दोष निवारति।
खेलत मैं कोउ दीठि लगाई, लै-लै राई-लौन उतारति।
साँझहिं तैं अतिहीं[2] बिरुझानौ, चंदहिं देखि करी अति आरति।
बार-बार कुलदेव मनावति, दोउ कर जोरि सिरहिं[3] लै धारति।
सूरदास जसुमति नँदरानी, निरखि बदन, त्रयताप बिसारति[4]॥२००॥८१८॥

* राग ललित

† नाहिंनै जगाइ सकति, सुनि सुबात सजनी।
अपनैं जान अजहुँ कान्ह मानत हैं रजनी।
जब-जब हौं निकट जाति, रहति लागि लोभा।
तन की गति बिसरि जाति, निरखत मुख-सोभा।
बचननि कौं बहुत करति, सोचति जिय ठाढ़ी।
नैननि न[5] बिचारि परत देखत रुचि बाढ़ी।
इहिं बिधि बदनारबिंद, जसुमति जिय भावै।
सूरदास सुख की रासि, कापै[6] कहि आवै ॥२०१॥८१९॥

---

① देहु करि उठि—१, ६, ११, १२। बान लै धावहु—२
* (ना) बिहागरौ।
② मेरो—१, ११। ③ सीस—३। ④ निवारति—२, ३, ६, १४, १६।
(ना, रा) भैरो। (क) विभास। (जौ) केदार। (का, श्या) बिलावल।
† यह पद (का) में नहीं है।
⑤ न विचार करत—३। विचार करति (करत)—११, १४। सुविचार करति—१७। ⑥ कहत न बनि—१, ११, १२।

* राग बिलावल

जागिए, ब्रजराज कुँवर, कमल-कुसुम फूले।
कुमुद-बृंद सँकुचित भए, भृंग लता भूले[1]।
तमचुर खग-रोर[2] सुनहु, बोलत बनराई।
रँभति गो खरिकनि मैं, बछरा हित धाई।
बिधु मलीन रबि प्रकास गावत नर[3] नारी।
सूर स्याम प्रात उठौ[4], अंबुज-कर-धारी ॥२०२॥८२०॥

* राग रामकली

† प्रात समय उठि, सोवत सुत कौ बदन उघारयौ नंद।
रहि न सके अतिसय[5] अकुलाने, बिरह निसा कैं द्वंद।
स्वच्छ सेज मैं तैं मुख निकसत, गयौ तिमिर मिटि मंद।
मनु पय-निधि सुर मथत फेन फटि, दयौ दिखाई चंद।
धाए चतुर चकोर सूर सुनि, सब सखि-सखा सुछंद।
रही न सुधि सरीर अरु[6] मन की, पावत किरनि[7] अमंद ॥२०३॥८२१॥

× राग बिलावल

भोर भऐं निरखत हरि कौ मुख, प्रमुदित जसुमति, हरषित नंद।
दिनकर-किरन कमल[8] ज्यौं बिकसत, निरखत उर उपजत आनंद।
बदन उघारि जगावति जननी, जागहु बलि गई आनँद-कंद।

---

* (ना, रा) भैरो। (क) बिभास।
(१) फूले—१, १४। (२) सोर—२, १७, १९। (३) ब्रज—२, ३, ६, १४, १७। (४) उठे—३, १६।
* (जौ, रा) बिलावल। (कां) नट।
† यह पद (ना) में नहीं है। किसी-किसी प्रति में इसमें ये दो चरण अधिक हैं और किसी में इनमें से एक ही है—"सारस बदन अलक छबि ज्यौ अलि पान करत मकरद। सूरदास यह सोभा प्रभु की देखत भयौ अनंद॥"
(५) देखन कौ आतुर नैन निसा के द्वंद—१, ३, ६, ११, १५, १७
(६) धीर मन—१, ११, १५। (७) किरनि मकरद—१, ११, १५, १६। मकरद—१७।
× (ना, का, रा, श्या) बिभास।
(८) नलिनि—१, ११, १५, १६।

मनहुँ मथत सुर सिधु, फेन फटि, दयौ दिखाई पूरन[1] चंद।
जाकौं[2] ईस-सेष-ब्रह्मादिक, गावत नेति-नेति स्रुति छंद।
सोइ[3] गोपाल ब्रज मैं सुनि सूरज, प्रगटे पूरन परमानंद ॥२०४॥८२२॥

* राग ललित

† जागिए गोपाल लाल, आनँद-निधि[4] नंद-बाल,
जसुमति कहै बार-बार, भोर भयौ प्यारे।
नैन कमल-दल बिसाल, प्रीति-बापिका-मराल,
मदन ललित बदन उपर कोटि वारि डारे।
उगत अरुन बिगत सर्वरी, ससांक किरन-हीन,
दीपक सु मलीन, छीन-दुति समूह तारे।
मनौ ज्ञान-घन-प्रकास, बीते सब भव-बिलास,
आस-त्रास-तिमिर तोष-तरनि-तेज जारे।
बोलत खग-निकर मुखर, मधुर होइ[5] प्रतीति सुनौ,
परम प्रान-जीवन-धन मेरे तुम बारे।
मनौ बेद बंदीजन[6] सूत-बृंद मागध-गन,
बिरद बदत जै जै जै जैति कैटभारे।
बिकसत कमलावली, चले प्रपुंज[7]-चंचरीक,
गुंजत कलकोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे।

---

① नूतन—३, १४। ② जाकौ जस ब्रह्मादिक मुनिगन नेति नेति गावत स्रुति छंद—१, ६, ११, १६। ③ सोइ गोपाल सु गोकुल भीतर सूर सु प्रगटे परमानंद—३, १४।

* (ना) चर्चरी। (कां) बिलावल। (रा) भैरो।

† यह पद कतिपय शब्दों के हेर-फेर से श्रीतुलसीदासजी की गीतावली में भी प्राप्त है। परतु यह सूरसागर की सभी उपस्थित प्रतियों में विद्यमान है। यहां तक कि (के) अर्थात् सं० १७२३ की लिखी हुई प्रति में भी है। (गीतावली, पृष्ठ २३४, पद न० ३६, ना० प्र० स०)

④ लाल—२, १६। ⑤ होइ प्रीति—२। ⑥ मुनि—१, ६, ६, ११, १४। ⑦ प्रफद—१, २, ३, ६, ६, ११।

मानौ[1] बैराग पाइ, सकल सोक[2]-गृह बिहाइ,
प्रेम-मत्त फिरत भृत्य, गुनत गुन तिहारे।
सुनत बचन प्रिय रसाल, जागे अतिसय दयाल,
भागे जंजाल-जाल, दुख-कदंब टारे।
त्यागे भ्रम-फंद-द्वंद निरखि कै मुखारबिंद,
सूरदास अति अनंद, मेटे[3] मद भारे॥ २०५॥८२३॥

* राग ललित

† प्रात भयौ, जागौ गोपाल।
नवल सुंदरी आईं, बोलत तुमहिं सबै ब्रजबाल।
प्रगट्यौ भानु, मंद भयौ उड़पति फूले तरुन तमाल।
दरसन कौं ठाढ़ी ब्रजबनिता, गूँथि कुसुम बनमाल।
मुखहिं धोइ सुंदर बलिहारी, करहु कलेऊ लाल।
सूरदास प्रभु आनँद के निधि, अंबुज-नैन बिसाल॥२०६॥८२४॥

* राग ललित

‡ जागौ, जागौ हो गोपाल।
नाहिंन इतौ सोइयत सुनि सुत, प्रात परम सुचि काल।
फिरि-फिरि जात निरखि मुख छिन-छिन, सब गोपनि के बाल।
बिन[4] बिकसे कल कमल-कोष तैं मनु मधुपनि की माल।

---

① मनो विराग पाइ सकल सोक कूप गृह बिहाइ—३,६,१४। ② कूल—१, ११, १५। ③ मिटे मद भारे—२, ३, ६।

* (ना) रामकली। (गो, जौ, का, रा, श्या) बिलावल।

† यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है। (ना, के, पू) रामकली। (क) बिभास।

‡ यह पद (बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

④ दिन बिकसत मनौ कमल कोष प्रति (छबि) ज्यौं मधुपन के माल—१, ११, १५।

जो तुम मोहिँ न पत्याहु सूर प्रभु, सुंदर स्याम[1] तमाल।
तो तुमहीँ देखौ आपुन तजि निद्रा नैन बिसाल ॥ २०७॥८२५ ॥

राग भैरव

उठौ[2] नँदलाल भयौ भिनुसार, जगावति नंद की रानी।
झारी कौँ जल बदन पखारौ, सुख[3] करि सारँगपानी।
माखन-रोटी अरु मधु-मेवा, जो भावै लेउ आनी।
सूर स्याम मुख निरखि जसोदा, मनहीँ मन जु सिहानो ॥२०८॥८२६॥

राग बिलावल

† तुम जागौ मेरे लाड़िले, गोकुल-सुखदाई।
कहति जननि आनंद सौँ, उठौ कुँवर कन्हाई।
तुमकौँ माखन-दूध-दधि, मिस्री हौँ ल्याई।
उठि कै भोजन कीजिऐ, पकवान मिठाई।
सखा द्वार परभात सौँ, सब टेर लगाई।
बन कौँ चलिऐ साँवरे, दयौ तरनि दिखाई।
सुनत बचन अति मोद सौँ, जागे जदुराई।
भोजन करि बन कौँ चले, सूरज बलि जाई ॥२०९॥८२७॥

* राग बिलावल

नंद कौ लाल उठत जब सोइ।
निरखि मुखारबिंद की सोभा, कहि, काकैँ मन धीरज होइ ?
मुनि-मन हरत, जुवति-जन[4] केतिक, रतिपति-मान जात सब खोइ।

---

① नँद के लाल—२। ② उठौ नंदकुमार—१, २, ३, ११, १५, १६। ③ कहि-कहि—१, ११, १४। सुत कहि—६।
† यह पद केवल (क) में है।
* (ना) देवगिरि। ④ को बपुरी—१६।

ईषद हास दंत-दुति बिगसति, मानिक[1]-मोती धरे जनु पोइ ।
नागर नवल[2] कुँवर बर सुंदर, मारग जात लेत मन गोइ ।
सूरदास[3] प्रभु मोहनि-मूरति, ब्रजबासी मोहे सब लोइ ॥२१०॥८२८॥

कलेवा-वर्णन राग भैरव

† उठिऐ स्याम, कलेऊ कीजै । मनमोहन-मुख निरखत जीजै ।
खारिक, दाख, खोपरा, खीरा । केरा, आम, ऊख-रस, सीरा ।
श्रीफल मधुर, चिरौंजी आनी । सफरी चिउरा, अरुन खुबानी ।
बेवर-फेनी और सुहारी । खोवा-सहित खाहु, बलिहारी ।
रचि पिराक लाडू दधि आनौं । तुमकौं भावत पुरी सँधानौं ।
तब तमोल रचि तुमहिं खवावौं । सूरदास पनवारौ पावौं ॥२११॥८२९॥

* राग बिलावल

कमल-नैन हरि करौ कलेवा ।
माखन-रोटी, सद्य[4] जम्यौ दधि, भाँति भाँति के मेवा ।
खारिक, दाख, चिरौंजी, किसमिस, उज्वल गरी बदाम ।
सफरी, सेब, छुहारे, पिस्ता, जे तरबूजा नाम ।
अरु मेवा बहु भाँति-भाँति हैं षटरस के मिष्टान्न[5] ।
सूरदास प्रभु करत कलेवा, रीझे स्याम सुजान ॥२१२॥८३०॥

---

① मनिगन आपि धरे जनु पोइ—१, ६, ९, ११, १५ । ② नवल किसोर कुँवर प्रभु—२, ३, १३ । नँद सुवन सुनि सजनी—१४ । ③ सूर स्याम मन हरन मनोहर गोकुल बस—१, ६, ९, ११, १५, १७ । सूर स्याम हरि मोहन मूरति गोकुल बसि ३ ।

† यह पद (वे, ल, शा, का गो, जौ) में हैं ।

* (ना) सुघरई । (के, पू, रा) धनाश्री । (क) भैरव । (का) आसावरी ।

④ सद यह जे वौ—२ । संग सजो दधि—३ । ⑤ सिय-रान—२ । मिस्रान—१७ ।

क्रीड़न * राग रामकली

खेलत स्याम ग्वालनि संग ।
सुबल हलधर अरु श्रीदामा, करत नाना रंग ।
हाथ तारी देत भाजत, सबै करि करि होड़ ।
बरजै हलधर, स्याम, तुम जनि चोट लागै गोड़ ।
तब कह्यौ मैं दौरि जानत, बहुत बल मो गात ।
मेरी जोरी है श्रीदामा, हाथ मारे जात ।
उठे[1] बोलि तबै श्रीदामा, जाहु तारी मारि ।
आगैं हरि पाछैं श्रीदामा, धरचौ स्याम हँकारि ।
जानिकै मैं रह्यौ ठाढौ, छुवत कहा जु मोहिं ।
सूर हरि खीझत सखा सौं, मनहिं कीन्हौ कोह ॥२१३॥८३१॥

* राग गौरी

सखा कहत हैं स्याम खिसाने ।
आपुहिं आपु[2] बलकि[3] भए ठाढ़े, अब तुम कहा रिसाने ?
बीचहिं बोलि उठे हलधर तब याके माइ न बाप ।
हारि-जीत कछु नैंकु न समुझत[4], लरिकनि लावत पाप ।
आपुन हारि सखनि सौं झगरत यह कहि दियौ पठाइ ।
सूर स्याम उठि चले रोइ कै, जननी पूछति[5] धाइ ॥२१४॥८३२॥

---

* (ना) सुघराई । (के, पू) गौरी ।
(ना) बिलावल ।
(१) कहि उठे तबही—१६ ।
(२) आनि—१, ३, ११, १६ ।
(३) ललकि—१, ११ ।
बिलग—२, १६ । (४) जानत—१, ११ । (५) पूँछन—१६ ।

* राग गौरी

मैया मोहिँ दाऊ बहुत खिझायौ ।
मोसौं कहत मोल कौ लीन्हौ, तू जसुमति कब जायौ ?
कहा करौं इहि रिस के मारैं खेलन हौं नहिं जात ।
पुनि-पुनि कहत कौन है माता, को है तेरौ तात ।
गोरे नंद, जसोदा गोरी, तू[1] कत स्यामल गात ।
चुटकी दै-दै ग्वाल[2] नचावत, हँसत सबै मुसुकात ।
तू मोही कौं मारन सीखी, दाउहिं कबहुँ न खीझै ।
मोहन[3]-मुख रिस की ये बातैं, जसुमति सुनि-सुनि रीझै ।
सुनहु कान्ह, बलभद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत ।
सूर स्याम मोहि गोधन की सौं, हौं माता तू पूत ॥२१५॥८३३॥

* राग नट

† मोहन, मानि मनायौ मेरौ ।
हौं बलिहारी नंद-नँदन की, नैंकु इतै हँसि हेरौ ।
कारौ कहि-कहि तोहिं[4] खिझावत, बरजत खरौ[5] अनेरौ ।
इंद्रनील[6] मनि तैं तन सुंदर, कहा कहै बल चेरौ ?
न्यारौ जूथ हाँकि लै अपनौ न्यारी गाइ निबेरौ ।
मेरौ सुत सरदार सबनि कौ, बहुतै कान्ह[7] बड़ेरौ ।

---

* (ना) धनाश्री । (क, रा) सारंग ।

① तुम कत स्याम सरीर—१, ६, ११, १६ । ② हँसत ग्वाल सब सिखै देत बलबीर—१, ६, ११, १६ । ③ मोहन कौ मुख रिस समेत लखि—११ । मोहन कौ मुख रिस समेत ये बातैं सुनि सुनि रीझै—१, १४ । (ना) सारंग ।

† यह पद (का, के, पू) में नहीं है ।

④ मोहिँ—१, ११, १२ । ⑤ खेरा तेरो—३ । ⑥ आनँद बिमल ससि तैं तन सुंदर—१, ११, १२ । ⑦ गाइ बहेरो—२

बन मैं जाइ करौ कौतूहल, यह अपनौ है खेरौ।
सूरदास द्वारैं गावत है, बिमल-बिमल जस तेरौ ॥ २१६ ॥८३४॥

* राग गौरी

खेलन अब मेरी जाइ[1] बलैया।
जबहिं मोहिं देखत लरिकनि सँग तबहिं खिझत बल भैया।
मोसौं कहत तात[2] बसुदेव कौ, देवकि तेरी मैया।
मोल लियौ कछु दै करि तिनकौं, करि-करि जतन बढैया।
अब बाबा कहि कहत नंद सौं, जसुमति सौं कहै मैया।
ऐसैं कहि सब मोहिं खिझावत, तब उठि चल्यौ खिसैया।
पाछैं नंद सुनत हे ठाढे, हँसत हँसत उर लैया।
सूर नंद बलरामहिं धिरयौ, तब मन हरष कन्हैया ॥ २१७ ॥८३५॥

* राग रामकली

† खेलन चलौ[3] बाल गोबिंद।
सखा प्रिय द्वारैं[4] बुलावत, घोष-बालक-बृंद।
तृषित हैं सब दरस-कारन, चतुर चातक दास।
बरषि छबि नव बारिधर तन, हरहु लोचन-प्यास।
बिनय बचननि सुनि कृपानिधि, चले मनहर चाल।
ललित लघु-लघु चरन-कर, उर-बाहु-नैन-बिसाल।
अजिर पद-प्रतिबिंब राजत, चलत उपमा-पुंज।
प्रति चरन मनु हेम बसुधा, देति आसन कंज[5]।

---

* (ना) नट। (क) बिलावल।
(ना) देवगिरी। (रा) बिलावल।
† यह पद तुलसीदासजी की गीतावली में (पृ० २६५, पद ३८) प्रायः इसी रूप में मिलता है।
① जात—१, ६, ११ ② पुत्र—११।
③ चलिए—१ ११। ४ सब द्वार बोलत—६। ⑤ कुंज—३, १४।

सूर प्रभु की निरखि सोभा, रहे सुर अवलोकि।
सरद चंद चकोर मानौ, रहे थकित बिलोकि॥ २१८ ॥ ८३६ ॥

* राग धनाश्री

खेलन कौं हरि दूरि गयौ री।
संग-संग धावत डोलत हैं, कह धौं बहुत अबेर भयौ री।
पलक ओट भावत नहिं मोकौं, कहा कहौं तोहिं बात!
नंदहिं तात-तात कहि बोलत, मोहिं कहत हैं मात।
इतनी कहत स्याम-घन आए, ग्वाल सखा सब[1] चीन्हे।
दौरि जाइ उर लाइ सूर प्रभु, हरषि जसोदा लीन्हे॥२१९ ॥८३७॥

* राग बिहागरौ

खेलन दूरि जात कत कान्हा?
आजु सुन्यौ मैं[2] हाऊ आयौ, तुम नहिं जानत नान्हा।
इक लरिका अबहीं भजि आयौ, रोवत[3] देख्यौ ताहि।
कान तोरि वह लेत सबनि के, लरिका जानत जाहि।
चलौ न, बेगि सबारैं जैयै, भाजि आपनैं धाम।
सूर स्याम यह बात सुनतही बोलि लिए बलराम॥ २२० ॥ ८३८ ॥

× राग जैतश्री

दूरि खेलन जनि जाहु लला मेरे[4], बन मैं आए हाऊ!
तब हँसि बोले कान्हर, मैया, कौन[5] पठाए हाऊ?

---

* (ना) सारंग।
① सँग—२, ६ १३।
(ना) बिलावल। (१६, १८, १६) धनाश्री।
② बन—१, ११। ③ बोलि बुझावहु ताहि—१, ११।
× (ना) केदारा।
④ बन मेरे हाऊ आयौ हैं—१, ११, १५। मेरे हाऊ आए हैं—२, ३, ६, १४। बन हाऊ आए हैं—६। ⑤ किनहिं पठायौ है—१, ११। किनहि पठाए हैं—२, ३, ६, १४।

अब डरपत सुनि-सुनि ये बातैं, कहत हँसत बलदाऊ।
सप्त रसातल सेषासन रहे, तब की सुरति भुलाऊ?
चारि बेद लै गयौ संखासुर, जल[1] मैं रह्यौ लुकाऊ।
मीन रूप धरि कै जब[2] मारचौ, तबहिं रहे कहँ हाऊ?
मथि समुद्र सुर असुरनि कैं हित, मंदर जलधि धसाऊ[3]।
कमठ रूप धरि धरचौ पीठि पर, तहाँ[4] न देखे हाऊ!
जब हिरनाच्छ जुद्ध अभिलाष्यौ, मन मैं अति गरबाऊ।
धरि बाराह रूप सो[5] मारचौ, लै छिति दंत-अगाऊ।
बिकट रूप अवतार धरचौ जब, सो प्रहलाद[6] बचाऊ।
हिरनकसिप[7] बपु नखनि बिदारचौ, तहाँ न देखे हाऊ!
बामन रूप धरचौ बलि छलि कै, तीनि परग बसुधाऊ।
स्रम जल ब्रह्म-कमंडल राख्यौ, दरसि चरन परसाऊ।
मारचौ मुनि बिनहीं अपराधहिं, कामधेनु लै आऊ।
इकइस बार निछत्र करी छिति, तहाँ न देखे हाऊ!
राम-रूप रावन जब मारचौ, दस-सिर बीस-भुजाऊ।
लंक जराइ छार जब कीनी, तहाँ न देखे हाऊ!
भक्त-हेत अवतार धरे सब असुरनि मारि बहाऊ।
॥ सूरदास प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाऊ ॥२२१॥८३६॥

---

(१) तिनके उर न डराऊ--२। (२) तिहिं मारयौ तहाँ न देखे हाऊ-२। (३) धराऊ--२। (४) सुख पायो सहराऊ (सहिराऊ)--१, ३, ११, १५, १७, १८। सुर राऊ--६। (५) रिपु--१, ३, ६, ११, १४। (६) प्रहलादहि नाऊँ--१, ११। प्रहलाद बताऊ--२, ६, १४। प्रहलाद हिताऊ--६। (७) धरि नृसिंह जब असुर--१, ३, ६, ११, १४। धरि नृसिंह बपु असुर--१६।

॥ कुछ प्रतियों में ये ६ चरण और हैं परंतु ये प्रक्षिप्त प्रतीत होते हैं -माटी के मिस बदन बिकास्यौ, जब जननी डरपाऊ। मुख भीतर त्रैलोक्य दिखाए, तऊ प्रतीत न आऊ। जमुना कैं तट धेनु चरावत, जहा सघन बन झाऊ। पैठि पताल व्याल गहि नाथ्यौ, तहा न देखे हाऊ। नृपति भीम सौ जुद्ध परस्पर, तहँ वह भाव बताऊ। तुरत चीर द्वै टूक कियौ धर, ऐसे त्रिभुवन राऊ॥

* राग रामकली

जसुमति कान्हहिँ यहै[1] सिखावति ।
सुनहु स्याम, अब बड़े भए तुम, कहि[2] स्तन-पान छुड़ावति ।
ब्रज-लरिका तोहिँ पीवत देखत, हँसत, लाज नहिँ आवति ।
जैहैँ बिगरि दाँत ये आछे, तातैँ[3] कहि समुझावति ।
अजहूँ छाँड़ि, कह्यो करि मेरौ, ऐसी बात न भावति ।
सूर स्याम यह सुनि मुसुक्याने, अंचल मुखहिँ लुकावत ॥२२२॥८४०॥

* राग सारंग

नंद बुलावत हैँ गोपाल ।
आवहु बेगि बलैया लेउँ हौं, सुंदर[4] नैन बिसाल ।
परस्यौ थार धर्‌यौ मग जोवत, बोलति[5] बचन-रसाल ।
भात सिरात तात दुख पावत, बेगि[6] चलौ मेरे लाल ।
हौं[7] वारी नान्हे पाइनि की दौरि दिखावहु चाल ।
छाँडि देहु तुम लाल अटपटी,[8] यह गति-मंद-मराल ।
सो राजा जो अगमन[9] पहुँचै, सूर सु भवन उताल ।
जौ जैहैँ बलदेव पहिलैँ[10] ही, तौ हँसिहैँ सब ग्वाल ॥२२३॥८४१॥

---

* (ना) देवगधार ।

① यह समुझावति—२, ३ ६ १६ । ② अस्तन पान छुडावति—१ । यह कहि चूची छुड़ावति—२, ६, १६, १७, १८, १६ । चूँची पियन छुडावति—६, ११ १५ । यह कहि स्त न छुड़ावति—१४ । ③ बातैँ कहि बहरावति—१६ ।

(ना) ललित । (का, रा, श्या) धनाश्री ।

④ हो घनस्याम तमाल—३ । मोहन स्याम तमाल - १४ । ⑤ बेगि चलौ तुम लाल—१, ११, १४ । सुनि घनस्याम तमाल—२, १०, १८, १६ । ⑥ क्यौ न चलौ ततकाल—१, ११, १५ । ⑦ हौं वारी इन विवि चरननि की—२ । हौ वारी इन प्रिय पाइनि की (पर)- ३, १४ । ⑧ लटपटी—१६ । ⑨ आगम दौर—१ । पहिले पहुचै—२, १६ । अगमन दौरे—६, ११ । ⑩ अगमनै—२, ६, १४, १६ ।

* राग सारंग

जेँवत कान्ह नंद इकठौरे।
कछुक खात लपटात[1] दोउ[2] कर बालकेलि अति भोरे।
बरा[3] कौर मेलत मुख भीतर, मिरिच दसन टकटौरे।
तीछन लगी नैन भरि आए, रोवत बाहर दौरे।
फूँकति बदन रोहिनी ठाढ़ी, लिए लगाइ अँकोरे।
सूर स्याम कौं मधुर कौर दै कीन्हे तात निहोरे॥ २२४॥ ८४२॥

* राग नट

† हरि के बाल-चरित अनूप।
निरखि रहीँ ब्रजनारि इकटक अंग-अँग-प्रति रूप।
बिथुरि अलकैँ रहीं मुख[4] पर बिनहिँ बपन[5] सुभाइ।
देखि कंजनि चंद के बस मधुप करत सहाइ।
सजल लोचन चारु नासा परम रुचिर बनाइ।
जुगल खंजन करत[6] अबिनति, बीच कियौ[7] बनराइ।
अरुन अधरनि दसन झाईं कहौं उपमा थोरि।
नील पुट बिच मनौ मोती धरे बंदन[8] बोरि।
सुभग बाल मुकुंद की छबि बरनि कापै जाइ।
भृकुटि पर मसि-बिंदु सोहै सकै सूर न गाइ॥ २२५॥ ८४३॥

---

* (ना) धनाश्री। (का, रा, श्या) बिलावल।
(१) लपटावत--२। (२) दुहुँ--१, २, ११, १४। (३) बड़ो--१, ११।
(क) बिलावल।
† यह पद (ना, शा, का, का, रा, श्या) में नहीं है।
(४) बदन--१, २, ६, ११, १४। (५) बिपिनि--१, ३, ६, ११। पवन--१४। (६) लरत--१, ११। (७) कियौ बनाइ--११। (८) चदन--१, ६, ११, १५।

* राग कान्हरौ

साँझ भई घर आवहु प्यारे ।
दौरत कहा चोट लगिहै कहुँ पुनि खेलिहौ[1] सकारे ।
आपुहिँ जाइ बाहँ गहि ल्याई, खेह[2] रही लपटाइ ।
धूरि झारि तातौ जल ल्याई, तेल परसि अन्हवाइ ।
सरस बसन तन पोँछि स्याम कौ, भोतर गई लिवाइ ।
सूर स्याम कछु करौ बियारी[3], पुनि राखौँ पौढाइ ॥२२६॥८४४॥

* राग बिहागरौ

कमल-नैन हरि[4] करौ बियारी ।
लुचुई लपसी, सद्य जलेबी, सोइ जेँवहु जो लगै पियारी ।
घेवर, मालपुआ, मोतिलाडू, सधर सजूरी सरस सँवारी ।
दूध बरा, उत्तम दधि बाटी, गाल-मसूरी की रुचि न्यारी ।
आछौ दूध औटि धौरी कौ, लै[5] आई रोहिनि महतारी ।
सूरदास बलराम स्याम दोउ जेँवहु जननि जाइ बलिहारी॥२२७॥८४५॥

× राग बिहागरौ

बल-मोहन दोउ करत बियारी ।
प्रेम सहित दोउ सुतनि जिवावतिँ, रोहिनि अरु जसुमति महतारी ।
दोउ भैया मिलि खात एक सँग, रतन-जटित कंचन की थारी ।
आलस सौँ कर कौर उठावत, नैननि नीँद झमकि रही भारी ।

---

* (ना) जैतश्री ।
① खेलौगे होत सकारे--१, २, ३, ६, ११, १६ । ② कठ रहे--१६ । ③ बियारू--१, ६, ११, १६ । (ना) रामकली । (का) बिलावल । (रा) विभास ।
④ कछु--१, ६, ११, १२ । ⑤ ल्याई हे--, । मैं ल्याई--११ ।
× (ना) ईमन । (का, ग्या) केदारा ।

दोउ माता निरखत आलस मुख, छबि पर तन-मन डारतिँ वारो।
बार-बार जसुहात सूर प्रभु, इहिँ उपमा कबि कहै कहा री! ॥२२८॥८४६॥

* राग केदारौ

कीजै[1] पान लला रे यह लै आई दूध जसोदा मैया।
॥ कनक-कटोरा भरि लीजै, यह पय पीजै, अतिँ सुखद कन्हैया।
॥ आछैँ ओट्यौ मेलि मिठाई, रुचि करि अँचवत क्यौं न नन्हैया।
बहु[3] जतननि ब्रजराज लड़ैते, तुम कारन राख्यौ बलभैया।
फूँकि-फूँकि जननी पय प्यावति, सुख पावति जो[4] उर न समैया।
सूरज[5] स्याम राम पय पीवत दोऊ जननी लेतिँ बलैया ॥२२९॥८४७॥

राग केदारौ

बल-मोहन दोऊ अलसाने।
कछु[6]-कछु खाइ दूध अँचयौ तब जम्हात जननी जाने
उठहु लाल कहि मुख पखरायो, तुमकौँ लै पौढाऊँ
तुम सोवौ मैँ तुम्हैँ सुवाऊँ कछु मधुरैँ सुर गाऊँ
तुरत जाइ पौढे दोउ भैया, सोवत आई निद।
सूरदास जसुमति सुख पावति पौढ़े बालगोबिद ॥ २३० ॥ ८४८ ॥

---

* (ना) कान्हरा।

(१) कीज पय पान लला रे ल्याई हे दूध जसुमति मैया—१, ११। ॥ य दा चरण (के) में नहीं हैं।

(२) अति सुख दीज कन्हया—१, १०। अति सुख दय कन्हया—१४।

(३) बहुत जतन करि राख्यौ ब्रजराज लड़ैते तुम कारन बल भैया—१, ३, ६, १४। बहुत जतन राख्यौ तुम कारन अरु बलिदाऊ भइया—२।

(४) आनँद उर न समेया—१, ३, ६, ११, १४। आनेद उर बस मैया—२। (५) सूरदास प्रभु पय पीवत दोउ जननी लेति बलइया—२।

(६) कछुक खाइ दूध लै अचयौ मुख जम्हात जननी जिय जाने—१, ११, १५। कछु-कछु खाइ दूध लै अचया मुख जम्हात जननी जिय जाने—२, ३। कछु-कछु खाइ दूध अँचयो मुख जम्हात जननी जिय जाने—६। कछु-कछु खाइ दूध लै आऊ मुख जम्हात जननी जिय जाने—१४।

* राग सूहौ

† माखन बाल गोपालहिँ भावै ।

भूखे छिन न रहत मन मोहन, ताहि बदौँ जो गहरु लगावै ।
आनि मथानी दह्यौ बिलोवौँ, जौ लगि लालन उठन न पावै ।
जागत ही उठि रारि[1] करत है, नहिँ माने जो इंद्र मनावै ।
हौँ यह जानति बानि स्याम[2] की, अँखियाँ मीचे बदन चलावै ।
नंद-सुवन की लगौँ बलैया, यह जूठनि कछु सूरज पावै ॥२३१॥८४६॥

* राग बिलावल

भोर भयौ मेरे लाड़िले, जागौ कुँवर कन्हाई ।
सखा द्वार ठाढे सबै, खेलौ जदुराई ।
मोकौँ मुख दिखराइ कै, त्रय-ताप नसावहु ।
तुव मुख-चंद चकोर[3]-दृग मधु पान करावहु ।
तब हरि मुख-पट दूरि कै, भक्तनि सुखकारी[4] ।
हँसत उठे प्रभु सेज तैँ, सूरज बलिहारी ॥ २३२ ॥८५० ॥

× राग बिलावल

‡ भोर भयो जागे नँदनंदन । संग सखा ठाढ़े जग-बंदन ।
सुरभी[5] पय हित बच्छ पियावैँ । पंछी तरु तजि दुहुँ दिसि धावैँ[6] ।
अरुन[7] गगन तमचुरनि पुकारयौ । सिथिल धनुष रति-पति गहि डारयौ ।

---

* (ना, के) जैतश्री । (जो) सुहाग । (रा) सारंग ।

† यह पद (स, बृ, का, श्या) में नहीं है ।

(१) रारि--२ । (२) कन्हा--६ ।

(ना) विभास । (क) सूहो बिलावल । (पू) सूहो

(३) चकोरनी--२ । चकोर नैन--१, ३, ६, ११, १४, १६ । (४) भयहारी--२ । हित-कारी--२ ।

× (के, पू) सारंग ।

‡ यह पद (बे, ल, का, के गो, जौ, पू) में हैं । इससे मिलता-जुलता एक पद गोस्वामी तुलसीदासजी की गीतावली में भी है जिसमें इसकी कई पंक्तियों का भाव पाया जाता है । (पृ० २६३, पद ३८) ।

(५) सुरभिन सिसु पय पान कराए--६, १७ । (६) धाए--२, १७ । (७) मुनि सरगत--६ १७

निसि निघटी रवि-रथ रुचि साजी। चंद मलिन चकई रति-राजी।
कुमुदिनि सकुची[1] बारिज फूले। गुंजत फिरत अली-गन झूले।
दरसन देहु मुदित नर नारी। सूरज[2] प्रभु दिन देव मुरारी ॥२३३॥८५१॥

* राग नट

खेलत स्याम अपनैं रंग।
नंद-लाल निहारि सोभा, निरखि थकित अनंग।
चरन की छबि देखि डरप्यौ अरुन[3], गगन छपाइ।
जानु करभा की सबै छबि, निदरि, लई छड़ाइ।
जुगल जंघनि खंभ-रंभा, नाहिं समसरि ताहि।
कटि निरखि केहरि लजाने, रहे बन-घन चाहि।
हृदय हरि-नख अति बिराजत, छबि न बरनी जाइ।
मनौ बालक बारिधर नव, चंद दियौ दिखाइ।
मुक्त-माल बिसाल उर पर, कछु कहौं उपमाइ।
मनौ तारा-गननि[4] बेष्टित गगन निसि रह्यौ छाइ।
अधर अरुन, अनूप नासा, निरखि जन-सुखदाइ।
मनौ सुक, फल बिंब कारन, लेन बैठ्यौ आइ।
कुटिल अलक बिना बपन के, मनौ अलि-सिसु-जाल।
सूर प्रभु की ललित सोभा, निरखि रहीं[5] ब्रज-बाल ॥२३४॥८५२॥

* राग सारंग

न्हात नंद सुधि करी स्याम की, ल्यावहु बोलि कान्ह बलराम।

---

① सकुचि अबुज दल फूले—१, १७। ② सूर सु दीनदयाल मुरारी—१, १७।
* (ना) सोरठ।
③ गगन रह्यौ—१६। ④ गगन पृष्ठित गगन रह्यौ छपाइ—१, ११, १५। गगन निसरत निसि गगन रह्यौ छाइ—२। गनन बे निसि गगन रह्यौ छपाइ—३। गण निवेखित—६। गगन वेष्टित—१४। ⑤ बस—२। रहीं—१४।
* (ना) टोड़ी। (का, गो, कां, पू, रा, श्या) सोरठि। (क) बिलावल।

खेलत बड़ी[1] बार कहुँ लाई, ब्रज-भीतर, काहू कैं धाम।
मेरैं संग आइ दोउ बैठैं, उन बिनु भोजन कौने काम।
जसुमति सुनत चली अति[2] आतुर, ब्रज-घर-घर टेरति लै नाम।
आजु अबेर भई कहुँ खेलत, बोलि[3] लेहु हरि कौं कोउ बाम।
ढूँढ़ि फिरी नहिं पावति हरि कौं, अति अकुलानी, तावति[4] घाम।
बार-बार पछितति जसोदा, बासर बीति गए जुग जाम।
सूर स्याम कौं कहूँ न पावति, देखे बहु बालक के[5] ठाम ॥२३५॥८५३॥

* राग सारंग

कोउ माई बोलि लेहु गोपालहिं।
मैं अपने कौ पंथ निहारति, खेलत बेर भई नँदलालहिं।
टेरत[6] बड़ी बार भई मोकौं, नहिं पावति घनस्याम तमालहिं।
सिध जेंवन सिरात, नँद बैठे, ल्यावहु बोलि कान्ह ततकालहिं।
भोजन करैं नंद सँग मिलि कै, भूख लगी ह्वैहै मेरे बालहिं।
सूर स्याम-मग जोवति जननी,[7] आइ गए सुनि बचन रसालहिं ॥२३६॥८५४॥

* राग नटनारायन

हरि कौं टेरति है नँदरानी।
बहुत अबार भई कहँ खेलत, रहे मेरे सारँग पानी?
सुनतहिं टेर, दौरि तहँ आए, कब के निकसे लाल।

---

① कान्ह बार बहि लागी—१, ११, १५। ② आतुर ह्वै—१, ११। ③ टेरि—३। ④ आवति घाम—१, ११। बतावति घाम—६। चितवत घाम—१४। ⑤ इक—१, ३, ११, १४, १६।

* (ना) गौरी। (का, के, क, पू) नटनारायन। (कां, रा, श्या) नट।

⑥ हेरत—१, ११, १५। ⑦ जसोदा—१, ११। जसुमति—२, ३, १६।

(ना) सारग। (का, कां, रा, श्या) नट। (क) बिलावल।

जेँवत नहीँ नंद तुम्हरे बिनु, बेगि चलौ, गोपाल ।
स्यामहिँ ल्याई महरि जसोदा, तुरतहिँ पाइँ पखारे ।
सूरदास प्रभु संग नंद कैँ बैठे हैँ दोउ बारे ॥ २३७ ॥ ८५५ ॥

* राग सारंग

जेँवत स्याम[1] नंद की कनिया ।
कछुक खात, कछु धरनि गिरावत, छबि निरखनि नँद-रनियाँ ।
बरी, बरा, बेसन, बहु भाँतिनि, ब्यंजन बिबिध, अगनिया ।
डारत, खात, लेत अपनैँ कर, रुचि मानत[2] दधि दोनियाँ[3] ।
मिस्रो, दधि, माखन मिस्रित करि, मुख नावत छबि धनिया[4] ।
आपुन खात, नंद-मुख नावत, सो छबि कहत न बनिया ।
॥ जो रस नंद-जसोदा बिलसत, सो नहिँ तिहूँ भुवनिया ।
भोजन करि नँद अचमन लीन्हौ, माँगत सूर जुठनिया ॥२३८ ॥ ८५६॥

* राग कान्हरौ

बोलि लेहु हलधर भैया कौँ ।
मेरे आगैँ खेल करौ कछु, सुख[5] दीजै मैया कौँ ।
मैँ मूँदौँ हरि आँखि तुम्हारी, बालक रहैँ लुकाई ।
हरषि स्याम सब सखा बुलाए खेलन आँखि मुँदाई ।
हलधर कह्यौ आँखि को मूँदै, हरि कह्यौ मातु जसोदा ।
सूर स्याम लए जननि खिलावति, हरष सहित मन मोदा ॥२३९॥८५७॥

---

* (ना) टोडी ।
(१) कान्ह—३, ६, १४ । (२) माखन दधि दुनियाँ—२, ३ ६, १४ । (३) दनिया—६ । (४) गनिया—२ । छनिया—३ ।
॥ यह चरण (स) मेँ नहीँ है ।
** (ना) गौरी । (क) सारग ।
(५) नैननि सुख—१, २, ३, ६, ११, १४, १६ ।

* राग गौरी

हरि तब अपनी आँखि मुँदाई।
सखा सहित बलराम छपाने, जहँ-तहँ गए भगाई।
कान लागि कह्यो जननि जसोदा, वा घर मैं बलराम।
बलदाऊ कौं आवन दैहौं, श्रीदामा सौं काम।
दौरि-दौरि बालक सब आवत, छुवत महरि कौ गात।
सब आए रहे सुबल श्रीदामा, हारे अब[1] कैं तात।
सोर[2] पारि हरि सुबलहिं धाए, गह्यो श्रीदामा जाइ।
दै-दै सौहैं नंद बबा की, जननी पै लै आइ।
हँसि हँसि तारी देत सखा सब, भए श्रीदामा चोर।
सूरदास हँसि कहति जसोदा, जीत्यो है सुत मोर ॥२४०॥८५८॥

* राग केदारौ

चलौ लाल कछु करौ बियारो।
रुचि नाहीं काहू पर मेरो, तू कहि, भोजन करौं कहा रो?
बेसन मिले सरस[3] मैदा सौं, अति कोमल पूरी है भारी।
जेंवहु स्याम मोहिं सुख दीजै, तातैं[4] करी तुम्हें ये प्यारी।
निबुआ, सूरन, आम, अथानो[5] और करौंदनि की रुचि न्यारी।
बार-बार यौं कहति जसोदा, कहि, ल्यावै रोहिनि महतारी।
जननी सुनत तुरत लै आई, तनक-तनक धरि कंचन-थारो।
सूर स्याम कछु[6]-कछु लै खायो, अरु अँचयो जल बदन पखारी॥२४१॥८५९॥

---

* (ना) ईमन। (क) कान्हरौ। (को) केदारा।
(१) एकै बात—२। (२) भोर पारि—३, ६, १४। बहुरि दौरि-२। बहुरि बार—१६। (ना) कल्यान। (३) उरस—२। (४) ताती करी तुम्हें हित बयारी—२। ताती लगति तुम्हें अति प्यारी—१६। (५) सेंधान।—१। (६) कछु यक—२, ३।

* राग केदारौ

पौढिऐ[1] मैं रचि सेज बिछाई ।
अति उज्वल है सेज तुम्हारी, सोवत मैं[2] सुखदाई ।
खेलत तुम निसि अधिक गई, सुत, नैननि नींद झँपाई[3] ।
बदन जँभात, अंग ऐंडावत, जननि पलोटति पाई ।
मधुरैं सुर गावत केदारौ, सुनत स्याम चित लाई ।
सूरदास प्रभु नंद-सुवन कौं नींद गई तब आई ॥२४२॥८६०॥

* राग सारंग

खेलन जाहु बाल[4] सब टेरत ।
यह सुनि कान्ह भए अति आतुर, द्वारैं तन फिरि हेरत ।
बार-बार हरि मातहिं बूझत[5], कहि चौगान कहाँ है ।
दधि-मथनी के पाछैं देखौ, लै मैं धरयौ[6] तहाँ है ।
लै चौगान-बटा[7] अपनैं कर, प्रभु आए घर[8] बाहर ।
सूर स्याम पूछत[9] सब ग्वालनि, खेलौगे किहिं ठाहर ॥२४३॥८६१॥

× राग सारंग

खेलत बनै घोष निकास ।
सुनहु स्याम, चतुर सिरोमनि, इहाँ है घर पास ।
कान्ह हलधर बीर दोऊ, भुजा[10] बल अति जोर ।

---

* (ना) कान्हरो ।

(१) पौढिऐ लाल मैं रचि सेज बिछाई—१, २, ३, ११, १४ । पौढिऐ लाल मैं रुचि करि सेज बिछाई—६ । पौढिऐ लाल मैं रचि-रचि सेज बिछाई—६ ।

(२) अति—२, ३, ६, ६, १४ ।

(३) झमाई—१, ३, ६, ११, १६ । जम्हाई—२ ।

* (ना) रामकली ।

(४) ग्वाल तोहिं—२, ३, १६ । (५) कहि कहि मेरी—१, ११, १५ । (६) धरी—१ ११, १५ । (७) बटा करि आगे—१, ११, १५ । (८) जब—१, ११, १५ । (९) बूझत—२, ३, ६, १४ ।

× (ना) गूजरी । (का, के, क, का, पू, श्या) नट ।

(१०) अति भुजा दुहूँ जोर—२, ६, १४ । अति दुहुँन भुज जोर—३ ।

सुबल, श्रीदामा, सुदामा वै भए इक ओर।
और सखा बँटाइ[1] लीन्हे, गोप-बालक-बृंद।
चले ब्रज की खोरि खेलत, अति उमँगि नँद-नंद।
बटा धरनी डारि दीनौ, लै चले ढरकाइ।
आपु अपनी घात निरखत, खेल जम्यौ[2] बनाइ।
सखा जीतत स्याम जाने, तब करो कछु पेल।
सूरदास कहत सुदामा, कौन ऐसो खेल ॥२४४॥८६२॥

* राग सारंग

† खेलत मैं को काको गुसैयाँ।
हरि[3] हारे, जीते श्रीदामा, बरबस हीं कत करत रिसैयाँ[4]।
जाति-पाँति हमतैं बड नाहीं, नाहीं बसत तुम्हारो छैयाँ।
अति अधिकार जनावत यातैं जातैं[5] अधिक तुम्हारैं गैयाँ!
रुहठि[6] करै तासौं को खेलै, रहे बैठि[7] जहँ-तहँ सब ग्वैयाँ।
सूरदास प्रभु खेल्यौइ चाहत, दाउँ दियौ[8] करि नंद-दुहैयाँ ॥२४५॥८६३॥

* राग कान्हरौ

आवहु, कान्ह, साँझ की बेरिया।
गाइनि माँझ भए हौ ठाढे, कहति जननि, यह बड़ो कुबेरिया।
लरिकाई कहुँ नैकु न छाँडत, सोइ रहौ सुथरी सेजरिया।
आए हरि यह बात सुनतहीं, धाइ लए जसुमति महतरिया।

---

(१) बराइ—११, १५। (२) मच्यौ—३।
* (का, के, क, कौ, पु, श्या) बिलावल।
† यह पद (ना) में नहीं है।
(३) खेलन में कह बडो बड़ाई जासा कहत खिसैया—६। (४) रुसैया—१६। (५) अधिक तुम्हारे हैं कछु गैया—१, ११, १५। (६) रोट करे ३, १६। रोइठी करे—६। रूठि करे—१४।
(७) पोढि—१, ११, १५। (८) दवा—१, १५। दवी—११।
(ना, का) गौरी। (जौ) सारंग। (रा) बिलावल। (श्या) आसावरी।

लै पौढो आँगन हीं सुत कौं, छिटकि रही आछी उजियरिया।
सूर स्याम[1] कछु कहत-कहत ही बस करि लीन्हे[2] आइ निंदरिया॥२४६॥८६४॥

* राग कान्हरौ

† आँगन मैं हरि सोइ गए री।
दोउ जननी मिलि कै, हरुऐं करि, सेज सहित तब भवन लए री।
नैंकु नहीं घर मैं बैठत हैं, खेलहिं के अब रंग रए री।
इहिं बिधि स्याम कबहुँ नहिं सोए, बहुत नींद के बसहिं भए री।
कहति रोहिनी सोवन देहु न, खेलत दौरत हारि गए री।
सूरदास प्रभु कौ मुख निरखत हरषत जिय नित नेह नए री॥२४७॥८६५॥

पाँड़े-आगमन

* राग धनाश्री

महराने[3] तैं पाँड़े आयौ।
ब्रज घर-घर बूझत नँद-राउर पुत्र भयौ, सुनि कै, उठि धायौ।
पहुँच्यौ आइ नंद के द्वारैं, जसुमति देखि अनंद बढायौ।
पाँइ धोइ भीतर बैठारचो, भोजन कौं निज भवन लिपायौ।
जो भावै सो भोजन[4] कीजै, बिप्र मनहिं अति हर्ष बढायौ।
बड़ी बेस बिधि भयौ दाहिनौ, धनि जसुमति ऐसौ सुत जायौ।
धेनु दुहाइ, दूध लै आई, पाँड़े रुचि करि खीर चढ़ायौ।
घृत, मिष्टान्न, खीर मिस्रित करि, परुसि कृष्न-हित ध्यान लगायौ।
नैन उघारि बिप्र जौ देखै, खात कन्हैया देखन[5] पायौ।
देखौ आइ जसोदा, सुत कृति, सिद्ध पाक इहिं आइ जुठायौ।

---

① दास--१, ३, ११, १२। ② लिए आइ नीदरिया—१, २, ६, ११, १२।
* (ना) श्री। (के, पू) केदारा।
† यह पद (शा) में नहीं है।
③ मथुरा तैं पांडे इक आयो—६, १७। ④ जेवन लीजै—६, १७। ⑤ भोजन--२।
१ (ना) मालकौस।

महरि बिनय करि दुहुँ कर जोरे, घृत-मधु-पय फिरि बहुत मँगायौ।
सूर स्याम कत करत अचगरो, बार-बार बाम्हनहिँ खिझायो ॥२४८॥८६६॥

* राग रामकली

पाँड़े[1] नहिँ भोग लगावन पावै।
करि-करि पाक जबै अर्पत है, तबही[2] तब छ्वै आवै।
इच्छा करि मैं बाम्हन न्योत्यौ, ताकौं[3] स्याम खिझावै।
वह अपने ठाकुरहिँ जिँवावै, तू ऐसैं[4] उठि धावै।
जननी[5] दोष देति कत मोकौं, बहु बिधान करि ध्यावै।
नैन मूँदि, कर जोरि, नाम लै बारहिँ बार बुलावै।
कहि[6], अतर क्यौं होइ भक्त सौं, जो मेरैं मन भावै?
सूरदास बलि[7]-बलि बिलास[8] पर, जन्म-जन्म जस गावै ॥२४९॥८६७।

* राग बिलावल

सफल जन्म, प्रभु[9] आजु भयौ।
धनि गोकुल धनि नंद[10]-जसोदा, जाकैं हरि अवतार लयौ।
प्रगट भयौ अब पुन्य[11]-सुकृत-फल, दीन-बंधु[12] मोहिँ दरस दयौ।
बारंबार नंद कैं आँगन, लोटत द्विज आनंद[13] मयौ।
मैं अपराध कियौ बिनु जानैं, को जानै किहिँ भेष[14] जयौ[15]।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत-बस जसुमति-गृह[16] आनंद लयौ[17] ॥२५०॥८६८॥

---

* (ना) बिलावल। (का) सारंग। (श्या) सोरठ।

① पाडे भोग न लावन पावै—३, ६, १४, १६, १६। ② तबही छ्वै छ्वै आवै—२। तबहिँ ताहि छ्वै आवै—३, ६, १४। ③ तू गोपाल खिझावै—१, ११। ताहि गोपाल—२। ④ तबही छ्वै आवै—३। ⑤ जननी दोष देहु जनि मोकौं करि बिधान बहु ध्यावै—१, ११। ⑥ ऐसी भक्ति करत बड़भागी माधौजी जिय भावत—२। ⑦ बलि-बलि हौं ताकी जो जनम पाइ जस गावै (गावत)—१, ३, ११, १५। ⑧ नँद-सुत—२।

** (ना) देवगिरी।

⑨ हरि—२, ३ १६। ⑩ महरि—३। ⑪ तो—२। ⑫ जानि—६। ⑬ आनंद भयौ—१, २, ११, १५। ⑭ भाँति—१६, १६। ⑮ छयो—२। ⑯ हित—१ ३, ६, ११, १४, १५। ⑰ नयो—६।

* राग धनाश्री

अहो नाथ जेइ-जेइ सरन आए तेइ-तेइ भए पावन ।
महा पतित-कुल-तारन, एक नाम अघ जारन, दारुन[1] दुख बिसरावन ।
मोतैं को हो अनाथ, दरसन तैं भयौ सनाथ, देखत नैन जुड़ावन ।
भक्त-हेत देह धरन, पृथुमो कौ भार-हरन, जनम[2]-जनम मुक्तावन ।
दीनबंधु, असरन के सरन, सुखनि जसुमति के कारन देह धरावन ।
हित कै चित की मानत सबके जिय की जानत सूरदास मन भावन॥२५१॥८६९

* राग बिलावल

† मया करिऐ कृपाल, प्रतिपाल संसार उदधि जंजाल तैं परौं पार ।
काहू के ब्रह्मा, काहू के महेस, प्रभु मेरे तौ तुमहीं अधार ।
दीन के दयाल हरि, कृपा मोकौं करि, यह कहि-कहि लोटत बार-बार ।
सूर स्याम अंतरजामी स्वामी जगत के, कहा कहौं करौं निरवार॥२५२॥८७०

पाटी-भक्षण-प्रसंग

× राग बिलावल

खेलत स्याम पौरि कैं बाहर, ब्रज लरिका सँग[3] जोरी ।
तैसेई आपु तैसेई लरिका, अज्ञ[4] सबनि मति थोरी ।
गावत, हाँक देत, किलकारत, दुरि देखति नँदरानी ।
अति पुलकित गदगद मुख[5] बानी मन[6]-मन महरि[7] सिहानो ।
माटी लै मुख मेलि दई हरि, तबहिं जसोदा जानी ।

---

* (ना) मालकौस ।
① कारन—१, ३, ६, ११, १५, १७ । तारन—६, १६, १६ ।
② जन्म-जन्म जम को मुक्तावन—१, ६, १८ ।
(ना) श्री । (का, के, कौ, पू, रा, स्या) कान्हरा । (क) धनाश्री ।
† प्राय सभी प्राप्त प्रतियो में इस पद का छद शुद्ध नहीं था । कई चरणों में अनावश्यक शब्द जुड गए थे । इस सस्करण मे उन्हें निकालकर शुद्ध पाठ रखने की चेष्टा की गई है ।
× (ना) सारग ।
③ सोहत सँग जोरी—१, २, ३, ६, ६, ११, १६ । ④ सब अति अज्ञ—१, २, ३, ६, ६, ११, १६ । ⑤ मृदुबानी—१, ११, १५ । ⑥ मन मैं—२ । ⑦ हरषि—११, १४, १५ ।

साँटो लिए दौरि भुज पकरयौ, स्याम लँगरई ठानी।
लरिकनि कौं तुम सब दिन झुठवत, मोसौं कहा कहौगे।
मैया मैं माटो नहिं खाई, मुख देखैं निबहौगे।
बदन उघारि दिखायौ त्रिभुवन, बनघन-नदी-सुमेर।
नभ-ससि-रवि मुख भीतर हीं सब सागर-धरनी-फेर।
यह देखत जननी मन व्याकुल, बालक-मुख कहा आहि।
नैन उघारि, बदन हरि मूँद्यौ, माता-मन अवगाहि।
झूठैं लोग लगावत मोकौं, माटो मोहिं न सुहावै।
सूरदास तब कहति जसोदा, ब्रज-लोगनि यह भावै ॥२५३॥८७१॥

* राग धनाश्री

मोहन काहैं[1] न उगिलौ माटी।
बार-बार अनरुचि उपजावति, महरि हाथ लिए साँटी।
महतारी सौं[2] मानत नाहीं, कपट-चतुरई ठाटी।
बदन उघारि[3] दिखायौ अपनौ, नाटक की परिपाटी।
बड़ी बार भई, लोचन उघरे,[4] भरम-जवनिका[5] फाटी।
सूर निरखि[6] नँदरानि[7] भ्रमित[8] भई, कहति न मीठी-खाटी ॥२५४॥८७२॥

* राग रामकली

मो देखत जसुमति तेरैं ढोटा,[9] अबहीं माटी खाई।
यह सुनि कै रिस करि उठि धाई, बाहँ पकरि लै आई।

---

* (ना) सारंग। (का) केदारा।
① क्यौं नहिं—६, १४, १७। ② को कह्यो न मानत—१, ११, १५। ③ पसारि—१, २, ११, १५। ④ मूँदै—३, ६, १४, १७। ⑤ या मन की—१, ११, १५। तजि तन मन—३। जामिनि सी—६। जननि मन—१७। ⑥ दास—१, ११। ⑦ नँदनारि—६, १७। ⑧ चकित—३, ६, १७। थकित—१४॥
९ (ना) नट।
⑨ बालक—२, १६।

इक कर सौं भुज गहि गाढ़ैं करि, इक कर लीन्ही[1] साँटी।
मारति हौं तोहिं अबहिं कन्हैया, बेगि न उगिलै माटी।
ब्रज-लरिका सब तेरे आगैं, झूठी कहत बनाइ।
मेरे कहैं नहीं तू मानति, दिखरावौं मुख बाइ।
अखिल ब्रह्मंड-खंड की महिमा, दिखराई मुख माँहि।
सिंध-सुमेर-नदी-बन-पर्बत चकित भई मन चाहि[2]।
कर तैं साँटि गिरत नहिं जानी, भुजा छाँड़ि अकुलानी।
सूर कहै जसुमति मुख मूँदौ, बलि गई सारँगपानी॥२५५॥८७३॥

* राग सारंग

नंदहिं कहति जसोदा रानी।
माटी कैं मिस मुख दिखरायौ, तिहूँ लोक रजधानी।
स्वर्ग, पताल, धरनि, बन, पर्बत, बदन माँझ रहे आनी।
नदी सुमेर देखि चाकृत भई, याकी अकथ कहानी।
चितै रहे तब नंद जुवति-मुख मन-मन करत बिनानी।
सूरदास तब कहति जसोदा गर्ग कही यह बानी॥२५६॥८७४॥

* राग सोरठ

कहत नंद जसुमति सौं[4] बात।
कहा[5] जानिऐ, कह तैं देख्यौ, मेरैं कान्ह रिसात।

---

① लीन्हे—१, ६, ११, १५, १७। ② माहीं—१, २, ३, ६, ११, १६।

* (ना) बिहागरो। (का, के, क, पू) धनाश्री। (का, रा श्या) सोरठ।

③ बदन दिखायौ—२, ३, १६।

(वे) बिलावल। (ना) कदारा।

④ सुनु (न) बौरी—१, ३, ६, ११, १४, १६। ⑤ ना जानिए कहा तैं देख्यौ मेरे कान्हहिं बाबति खोरी (ठौरी)। १, ३, ६, ११, १४, १६।

पाँच बरष का मेरौ नन्हैया[1], अचरज तेरी बात ।
बिनहीं काज साँटि लै धावति, ता पाछैं बिलखात ।
कुसल रहैं बलराम स्याम दोउ, खेलत-खात-अन्हात ।
सूर स्याम कौं कहा लगावति, बालक कोमल-गात ॥२५७॥८७५॥

* राग बिलावल

† देखौ री जसुमति बौरानी ।
घर-घर हाथ दिखावति[2] डोलति, गोद लिए गोपाल बिनानी ।
जानत नाहिं जगतगुरु माधौ, इहिं आए आपदा नसानी ।
जाकौ नाउँ, सक्ति पुनि जाकी, ताकौं देत मंत्र पढि पानी ।
अखिल ब्रह्मंड उदर गत जाकैं, जाकी जोति जल-थलहिं समानी ।
सूर सकल साँची मोहिं लागति, जो कुछ कही गर्ग मुख बानी॥२५८॥८७६॥

राग धनाश्री

‡ गोपाल राइ चरननि हौं काटी ।
हम अबला रिस बाँचि न जानी, बहुत लागि गई साँटी ।
वारौं कर जु कठिन अति, कोमल नयन जरहु जिनि डाँटी ।
मधु, मेवा, पकवान छाँड़ि कै, काहैं खात हौ माटी ।
सिगरोइ दूध पियौ मेरे मोहन, बलहिं न दैहौं बाँटी ।
सूरदास नँद लेहु दोहिनी, दुहहु लाल की नाटी ॥ २५९ ॥ ८७७ ॥

---

(१) कन्हैया—१, २, ३, १४ ।
* (ना) भोपाली ।
† यह पद (स, ल, का, के पू) में इस स्थान पर नहीं है। परतु उलूखल-बंधन के प्रसंग में मिलता है । (वे, ना, गो, जै, श्या) आदि में यह दोनो स्थानो पर पाया जाता ह । इस संस्करण में यहीं रक्खा गया है ।
(२) दिखावति—२ ।
‡ यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जै) में है ।

शालिग्राम-प्रसंग

* राग रामकली

† करि अस्नान नंद घर आए ।
लै जल जमुना कौ झारी भरि, कंज[1] सुमन बहु ल्याए ।
पाइँ धोइ मंदिर पग धारे, प्रभु-पूजा जिय दीन्ह[2] ।
अस्थल लीपि, पात्र सब धोए, काज देव के कीन्ह[3] ।
बैठे नंद करत हरि-पूजा, बिधिवत औ[4] बहु भाँति ।
सूर स्याम खेलत तैँ आए, देखत पूजा न्याति ॥ २६० ॥ ८७८ ॥

* राग गूजरी

‡ नंद करत पूजा, हरि देखत ।
घंट बजाइ देव अन्हवायौ, दल चंदन लै भेटत[5] ।
पट अंतर दै भोग लगायौ, आरति करी बनाइ ।
कहत कान्ह, बाबा तुम अरप्यौ, देव नहौं कछु खाइ ।
चितै रहे तब नंद महरि-मुख सुनहु कान्ह की बात ।
सूर स्याम देवनि कर जोरहु, कुसल रहै जिहिँ[6] गात ॥२६१॥८७९॥

× राग धनाश्री

§ जसुदा देखति है ढिग ठाढो ।
बाल दसा अवलोकि स्याम की, प्रेम-मगन चित बाढ़ो ।

---

* (ना) सूहौ । (रा) बिलावल ।

† यह पद (वे, जौ) में नहीं है ।

① कुंज—१६ । ② जानि—२, ३, ६, ११, १४ । ③ गान—२ । कानि—३ ६, १४ । ④ सौ—२, ३, ६ । सो—११, १७ । ⑤ (ना) धनाश्री । (रा) बिलावल ।

‡ यह पद (वे, गो) में नहीं है ।

⑤ भेपत—२, ३ ६, ११ । लेपत—१४ । ⑥ यह—२ । जैसे—३, १४ ।

× (ना) बिलावल । (रा केदारा) ।

§ यह पद (वे, जौ) में नहीं है ।

पूजा करत नंद रहे बैठे, ध्यान समाधि लगाई।
चुपकहिँ आनि कान्ह मुख मेल्यौ, देखौं देव-बड़ाई।
खोजत नंद चकित चहुँ दिसि तैँ अचरज सौ कछु भाई।
कहाँ गए मेरे इष्ट[1] देवता को लै गयौ उठाई।
तब[2] जसुमति सुत-मुख दिखरायौ, देखौं बदन कन्हाई।
मुख[3] कत मेलि देवता राख्यौ, घाले सबै नसाई।
बदन[4] पसारि सिला जब दीन्ही[5], तीनौ लोक दिखाए।
सूर[6] निरखि मुख नंद चकित भए, कछू बचन नहिँ आए ॥२६२॥८८०॥

* राग टोड़ी

† हँसत गोपाल नंद के आगैँ, नंद सरूप न जान्यौ।
निर्गुन ब्रह्म[1] सगुन लीलाधर, सोई सुत करि मान्यौ।
एक समय पूजा कैँ अवसर, नंद समाधि लगाई।
सालिग्राम मेलि मुख भीतर, बैठि रहे अरगाई।
ध्यान बिसर्जन कियौ नंद जब, मूरति आगैँ नाहीँ।
कह्यौ गोपाल देवता कह भयौ, यह बिसमय मन माहीँ।
मुख तैँ काढि तबै जदुनंदन, दियौ नंद कैँ हाथ।
सूरदास स्वामी[7] सुख-सागर खेल रच्यौ ब्रज-नाथ ॥२६३॥८८१॥

---

① आगे ही तैँ—३। ② झलकत देखि बदन तैँ भीतर हरि महरि महर मुसुकाई—६, ११। ③ सुनहु लाल बलि जाइ जननि सुत उगिलहु कुँवर कन्हाई—६, १५। ④ कमलनैन मोहन हँसि बोले कहा व्याकुल हौ तात—६, ११। ⑤ देख्यौ—२, १८। ⑥ सूर स्याम कछु कहत न आवै इह अचरज की बात—६, ११।

* (ना) बिलावल। (क) आसावरी। (का, रा, श्या) धनाश्री।

† यह पद (वे, जौ) में नहीं है।

⑥ रूप—३। ⑦ लीला दिखराई अविगत गति ब्रज-नाथ—१६।

प्रथम माखन-चोरी

*राग गौरी

मैया री, मोहिँ माखन भावै ।
जो मेवा पकवान कहति तू, मोहिँ नहीँ रुचि आवै ।
ब्रज-जुवती इक पाछैँ ठाढी, सुनत स्याम की बात ।
मन-मन कहति कबहुँ अपनैँ[1] घर, देखौँ[2] माखन खात ।
बैठैँ जाइ मथनियाँ कैँ ढिग, मैँ तब रहौँ[3] छपानी ।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, ग्वालिनि मन की जानी ॥२६४॥८८२॥

* राग गौरी

गए स्याम तिहिँ ग्वालिनि कैँ घर ।
देख्यौ द्वार नहीँ कोउ, इत-उत चितै, चले तब[4] भोतर ।
हरि आवत गोपी जब[5] जान्यौ, आपुन रही छपाइ ।
सूनैँ सदन मथनियाँ कैँ ढिग, बैठि रहे अरगाइ ।
माखन भरो कमोरी देखत, लै-लै लागे खान ।
चितै रहे मनि-खंभ-छाहँ-तन, तासौँ करत सयान ।
प्रथम आजु मैँ चोरी आयौ, भलौ बन्यौ है[6] संग ।
आपु खात, प्रतिबिंब खवावत, गिरत कहत, का रंग ?
जौ चाहौ सब देउँ कमोरी, अति मोठौ कत डारत ।
तुमहिँ देखि मैँ अति सुख पायौ, तुम जिय कहा बिचारत ?
सुनि-सुनि बात स्याम के मुख की, उमँगि हँसी ब्रजनारी[7] ।
सूरदास प्रभु निरखि ग्वालि-मुख तब भजि चले मुरारी ॥२६५॥८८३॥

---

* (ना) गूजरी ।
① मेरे—१, २, ३, ६, ६, ११, १३ । ② देखो—२, ११ । ③ रही—१, २, १४
(ना) देवगधार ।
④ घर—१, ११, १५ । ⑤ तब—१, ११, १५ । मन—२, ३, ६, १७ । ⑥ यह—२, ३, १६ । ⑦ तब नारी—२, ६, १७ । बर—३ । सुकुमारी—१४ ।

* राग गौरी

फूली फिरति ग्वालि मन मैं री।
पूछतिं सखी परस्पर बातैं, पायो परचो कछू कहुँ तैं री?
पुलकित रोम-रोम, गदगद, मुख बानी कहत न आवै।
ऐसौ कहा आहि सो सखि री, हमकौं क्यौं न सुनावै।
तन न्यारौ, जिय एक हमारौ, हम तुम एकै रूप।
सूरदास कहै ग्वालि सखिनि सौं; देख्यौ रूप अनूप ॥२६६॥८८४॥

* राग गूजरी

आजु[1] सखी मनि-खंभ-निकट हरि,[2] जहँ गोरस कौं गो री।
निज प्रतिबिंब सिखावत ज्यौं सिसु, प्रगट करै जनि चोरी।
अरध विभाग आजु तैं हम-तुम, भली बनी है जोरी।
माखन खाहु कतहिं डारत हौ, छाँड़ि देहु मति भोरी।
बाँट न लेहु, सबै चाहत हौ, यहै बात है थोरी।
मीठौ अधिक, परम रुचि लागै, तौ[3] भरि देउँ कमोरी।
प्रेम[4] उमँगि धीरज न रह्यौ, तब प्रगट हँसी मुख मोरी।
सूरदास प्रभु सकुचि निरखि मुख, भजे कुंज की खोरी ॥२६७॥८८५॥

× राग बिलावल

प्रथम करी हरि माखन-चोरी।
ग्वालिनि मन इच्छा करि पूरन, आपु भजे ब्रज-खोरी।
मन मैं यहै बिचार करत हरि, ब्रज-घर-घर सब जाउँ[5]।

---

* (ना) अहीरी।
१ (ना) बगाली। (कां, रा, श्या) बिलावल।
(१) देखि—२, १६, १८, १६।
(२) ह्वै—२, १६, १८, ३१६।
(३) दैहौं काढि कमोरी—१, २, ३, ६।
(४) सुनि प्रभु बचन—१६, १८, १६। सुनि प्रिय बचन—१७।
× (ना) गौड़। (के, पू) गूजरी।
(५) गाऊँ—१। गाउँ—२, ६, ११, १४। गावँ—३।

गोकुल जनम लियौ सुख-कारन, सबकैं माखन खाउँ ।
बाल-रूप जसुमति मोहिँ जानै, गोपिनि मिलि सुख भोग[1] ।
सूरदास प्रभु कहत प्रेम सौं, ये[2] मेरे ब्रज-लोग ॥२६८॥८८६॥

* राग रामकली

करैं हरि ग्वाल संग बिचार ।
चोरि माखन खाहु सब मिलि, करहु बाल-बिहार ।
यह सुनत सब सखा हरषे, भली कही कन्हाइ ।
हँसि परस्पर देत तारी, सौंह करि नँदराइ ।
कहाँ तुम यह बुद्धि पाई, स्याम चतुर सुजान ।
सूर प्रभु मिलि ग्वाल-बालक, करत हैं अनुमान ॥२६९॥८८७॥

* राग गौरी

सखा सहित गए माखन-चोरी ।
देख्यौ स्याम गवाच्छ-पंथ ह्वै, मथति एक दधि भोरी ।
हेरि मथानी धरी माट तैं, माखन हो उतरात ।
आपुन गई कमोरो माँगन, हरि पाई ह्याँ घात ।
पैठे सखनि सहित घर सूनैं, दधि माखन सब खाए ।
छूछी छाँड़ि मटुकिया दधि की, हँसि सब बाहिर आए ।
आइ गई कर लिए कमोरी, घर तैं निकसे ग्वाल ।
माखन कर, दधि मुख लपटानौ, देखि रही नँदलाल ।
कहँ आए ब्रज-बालक सँग लै, माखन मुख लपटान्यौ ।
खेलत तैं उठि भज्यौ सखा यह, इहिँ घर आइ छपान्यौ ।

---

(१) भोगू—१ । (२) घेरो रे ब्रज लोगू—१ ।

* (ना) सोरठि ।
* क) बिलावल ।

भुज गहि लियौ कान्ह इक बालक, निकसे ब्रज की खोरि ।
सूरदास ठगि रही ग्वालिनी, मन हरि लियौ अँजोरि ॥२७०॥८८८॥

* राग गौरी

† चकित भई ग्वालिनि-तन हेरौ ।
माखन छाँड़ि गई मथि वैसैंहि, तब तैं कियौ अबेरौ ।
देखै[1] जाइ मटुकिया रीती, मैं राख्यौ कहुँ[2] हेरि ।
चकित भई ग्वालिनि मन अपनैं, ढूँढ़ति घर फिरि फेरि ।
देखति पुनि-पुनि घर के बासन, मन हरि लियौ गोपाल ।
सूरदास रस भरी ग्वालिनी, जानै हरि कौ ख्याल ॥२७१॥८८९॥

* राग बिलावल

ब्रज घर-घर प्रगटी यह बात ।
दधि-माखन चोरी करि लै हरि, ग्वाल-सखा सँग खात ।
ब्रज-बनिता यह सुनि मन हरषित, सदन हमारैं आवैं ।
माखन खात अचानक पावैं, भुज भरि उरहिं छुवावैं ।
मनहीं मन अभिलाष करति सब हृदय धरति यह ध्यान ।
सूरदास प्रभु कौं घर तैं लै, दैहौं माखन खान ॥२७२॥८९०॥

× राग कान्हरौ

चली ब्रज घर-घरनि यह बात ।
नंद-सुत, सँग सखा लीन्हे, चोरि माखन खात ।
कोउ कहति, मेरे भवन भीतर, अबहिं पैठे धाइ ।

---

* (क) बिलावल ।
† यह पद (ना. वृ, का, रा, श्या) में नहीं है ।
① देखौ—१ । ② कहुँ है री—१, ११ । बहु हेरि – ३ । (श्या) रामकली ।
× (ना) नट । (के, कीं, पू) बिलावल ।

कोउ कहति, मोहिँ देखि द्वारैं, उतहिँ गए पराइ।
कोउ कहति, किहिँ भाँति हरि कौं, देखौं अपने धाम।
हेरि माखन देउँ आछौ, खाइ जितनौ स्याम।
कोउ कहति, मैं देखि पाऊँ, भरि धरौं अँकवारि।
कोउ कहति, मैं बाँधि राखौं, को सकै निरवारि!
सूर प्रभु के मिलन कारन, करतिं बुद्धि बिचार।
जोरि कर बिधि कौं मनावतिं, पुरुष नंद-कुमार ॥२७३॥८६१॥

* राग सारंग

गोपालहिँ माखन खान दै।
सुनि री सखी, मौन[1] ह्वै रहिऐ, बदन दही लपटान दै।
गहि[2] बहियाँ हौं लैकै जैहौं, नैननि तपति बुझान दै।
याकौं[3] जाइ चौगुनौ लैहौं, मोहिं जसुमति लौं जान दै।
तू जानति हरि कछू न जानत, सुनत मनोहर कान दै।
सूर[4] स्याम ग्वालिनि बस कीन्हौ, राखतिँ तन-मन-प्रान दै॥२७४॥८६२॥

* राग कल्यान

ग्वालिनि घर गए जानि साँझ की अँधेरी।
मंदिर मैं गए समाइ, स्यामल तनु लखि न जाइ,
देह गेह रूप, कहौ को सकै निबेरो?

---

* (के, जौ) बिलावल। ① कोउ जनि बोलै—१, ११, १२। ② बाँह पकरि लै जैहौं उन पै—६, १७। ③ वापै जाइ—१, ११। वाको चाहि चौगुनौ लैहौ अब जसुदा तू दान दै—६, १७। ④ सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन को राखोगी—१, ११, १२। सूरदास स्वामी के प्रभु कौ राखो—१६।

* (के, क, पू, रा) बिलावल। (को, श्या) गौरी।

दीपक गृह दान करचौ, भुजा चारि प्रगट धरचौ,
देखत भई चकित ग्वालि इत-उत कौं हेरी।
स्याम हृदय अति बिसाल, माखन-दधि-बिंदु-जाल,
मोह्यौ मन नंदलाल, बाल[1] हीं बझे री।
जुवती अति भई बिहाल, भुज भरि दै अंकमाल,
सूरदास प्रभु कृपाल, डारचौ तन फेरी।
कर सौं कर लै लगाइ, महरि पै गई लिवाइ,
आनँद उर नहिं समाइ, बात है अनेरी ॥२७५॥८६३॥

* राग कल्यान

जसुमति धौं देखि आनि, आगैं ह्वै लै पिछानि,
बहियाँ गहि ल्याई कुँवर और कौ कि तेरौ ?
अब लौं मैं करा कानि, सही दूध-दही-हानि,
अजहूँ जिय जानि मानि, कान्ह है अनेरौ।
दीपक मैं धरयौ बारि, देखत भुज भए चारि,
हारी हौं धरति करति दिन-दिन कौ झेरौ।
देखियत नहिं भवन माँझ, जैसोइ तन तैसि साँझ,
छल सौ कछु करत फिरत महरि कौ जिठेरौ
गोरस तन छाँटि रह्यौ, सोभा नहिं जाति कह्यौ,
मानौ जल-जमुन बिंब उड़गन पथ[2] केरौ।

---

① बाल ही बुझे री—१, ११। बाल ही बझे री—२। बाल ही बझे री—३। बालक ही बेरी—१४।

* (के, क, कौं, पू, रा) बिलावल।

② पथ फेरौ—१, ६, ६, ११, १५, १७। रथ फेरौ—३, १६, १८, १६।

उरहन दिन देउँ काहि, कहैं तू इतौ रिसाइ,
नाहीं ब्रज-बास, सास, ऐसी बिधि मेरौ।
गोपी निरखति सुमार[1], जसुमति कौ है कुमार,
भूलीं भ्रम रूप मनौ आन कोउ हेरौ।
मन-मन बिहँसत गोपाल, भक्त-पाल, दुष्ट-साल,
जानै को सूरदास चरित कान्ह केरौ! ॥२७६॥८६४॥

* राग गौरी

देखि फिरे हरि ग्वाल दुवारैं।
तब इक बुद्धि रची अपनैं मन, गए[2] नाँघि पिछवारैं।
सूनैं भवन कहूँ कोउ नाहीं, मनु याही कौ राज।
भाँड़े धरत, उघारत, मूँदत दधि माखन कैं काज।
रैनि जमाइ धरचौ हो[3] गोरस, परचौ स्याम कैं हाथ।
लै-लै खात अकेले आपुन, सखा नहीं कोउ साथ।
आहट सुनि जुवती घर आई, देख्यौ नंदकुमार।
सूर स्याम मंदिर अँधियारैं, निरखति बारंबार ॥२७७॥८६५॥

* राग गौरी

अँधियारैं घर स्याम रहे दुरि।
अबहीं मैं देख्यौ नँदनंदन, चरित भयौ सोचति झुरि।
पुनि-पुनि चकित होति अपनैं जिय, कैसी है यह बात।
मटुकी कैं ढिग बैठि रहे हरि, करैं आपनी घात।

---

① मुरारि—६। १५। भीतर गए ताकि—२। भीतर १४। ③ सो—१, १५।
* (ना) केदारौ। गए नाक—६। भीतर माक्त ✡ (ना) काफी।
② भीतर साँक परे—१, परे—११। भीतर नाधि परे—

सकल जीव जल-थल के स्वामी, चींटी दई उपाइ ।
सूरदास[1] प्रभु देखि ग्वालिनी, भुज पकरे दोउ[2] आइ ॥२७८॥८६६॥

* राग गौरी

स्याम[3] कहा चाहत से डोलत ?
पूछे[4] तैं तुम बदन दुरावत, सूधे[5] बोल न बोलत ।
पाए[6] आइ अकेले घर मैं दधि-भाजन मैं हाथ ।
अब[7] तुम काकौ नाउँ लेउगे, नाहिंन कोऊ साथ !
मैं जान्यौ यह मेरौ[8] घर है, ता धोखैं मैं आयौ ।
देखत हौं गोरस मैं चींटी, काढन कौं कर नायौ ।
॥सुनि[9] मृदु बचन, निरखि मुख-सोभा, ग्वालिनि मुरि मुसुकानी ।
॥सूर[10] स्याम तुम हौ अति नागर बात तिहारी जानी ॥२७९॥८६७॥

* राग सारंग

जसुदा[11] कहँ लौं कीजै कानि ।
दिन-प्रति कैसैं सही परति[12] है, दूध[13]-दही की हानि ।
अपने या बालक की करनी, जौ तुम देखौ आनि ।
गोरस खाइ, खवावै[14] लरिकनि, भाजत भाजन भानि ।

---

① सूर स्याम तब—२, ३, ६, १४ । ② तब—१, ११ ।

* (ना) पचम । (को) केदारा ।

③ कान्ह कहा चाहत हौ डोलत—२, ३, १६ । ④ चूके हूते—१, ६, ११, १४, १५ । ⑤ सूधे नाहीं बोलत—२, ३ । बोल अटपटे बोलत—६, १७ । ⑥ सूने निपट अँध्यारे मंदिर—१, ६, ११, १४, १५, १७ । ⑦ अब कहि कहा बनैहौ उत्तर—१, ६, ११, १५ । अब काको तुम उत्तर करिहौ—६, १४, १७ । ⑧ अपनौ—१, ११, १५ ।

॥ इन दोनों चरणों के बीच (पू) में ये दो पंक्तियाँ और हैं —कोमल कमल समीप जु आनन गजगति राजत आनी । जलरुह मानौ बैरी बिसरयौ लजित सुमन मन हानी ॥

⑨ ये सब बचन कहे मन-मोहन—२, ३ । सुनि-सुनि बचन चतुर मोहन क—६, १४, १७ ⑩ सूरदास प्रभु चतुर-सिरोमनि जाहु जाहु मैं (हम) जानी—२, ३, १६, १८, १६ ।

(ना) गोरी । (को, रा) देवगधार ।

⑪ जसोदा—१, ३, ११ । ⑫ जाति—२, ३ । ⑬ दधि गोरस-६ । ⑭ ढूढ़ि सब बासन भली करी यह बानि—१, ६, ११, १५ ।

मैं अपने मंदिर के कोनैं[1], राख्यौ माखन छानि[2]।
सोई जाइ तिहारैं ढोटा[3], लोन्हौ है पहिचानि।
बूझि[4] ग्वालि निज गृह मैं आयौ, नैंकु न संका मानि।
सूर स्याम यह उतर बनायौ, चींटी काढ़त पानि ॥२८०॥८९८॥

* राग सारंग

† माई हौं तकि लागि रही।
जब[5] घर तैं माखन लै निकस्यौ, तब मैं बाहँ गही।
तब[6] हँसि कै मेरौ मुख चितयौ, मीठी बात कही।
रही ठगी, चेटक सौ लाग्यौ, परि गई प्रीति सही।
बैठौ[7] कान्ह, जाउँ बलिहारी, ल्याऊँ और दही।
सूर स्याम पै ग्वालि सयानी सरबस दै निबही ॥२८१॥८९९॥

* राग गौरी

आपु गए हरुऐं सूनैं घर।
सखा सबै बाहिर ही छाँड़े, देख्यौ दधि माखन हरि भीतर।
तुरत मथ्यौ दधि-माखन पायौ, लै-लै खात, धरत अधरनि पर।
सैन देइ सब सखा बुलाए, तिनहिं देत भरि-भरि अपनैं कर।
छिटकि रही दधि-बूँद हृदय पर, इत-उत चितवत करि मन मैं डर।
उठत ओट लै लखत सबनि कौं, पुनि लै खात लेत ग्वालनि बर।

---

① कौरा—१९। ② जानि—१, २, ३, ६, ११। ③ लरिका—१, ११, १५। ④ बूझी ग्वालिनि घर मैं आयौ नैकु न संका मानी—१, ११, १५। पूछे बात न मानै क्यौं हूँ यही सक्ति करि जानि—२, ३, १९।

* (ना) गूजरी।

† यह पद केवल (ना, स, ल, गो, पू) में है।

⑤ जब घर में ते लै निकस्यौ दधि—२, ३। ⑥ हँसि दीन्हौ—११। ⑦ ठाढे होहु—११

८ (ना) नट।

अंतर भई ग्वालि यह देखति, मगन भई, अति उर आनँद भरि ।
सूर स्याम मुख निरखि थकित भई, कहत न बनै, रही मन दै[1] हरि ॥

॥२८२॥६००॥

* राग धनाश्री

† गोपाल दुरे हैं माखन खात ।

देखि सखी सोभा जु बनी है, स्याम मनोहर गात ।
उठि[2], अवलोकि ओट ठाढ़े ह्वै, जिहिं बिधि हैं लखि लेत ।
चकित नैन[3] चहूँ दिसि चितवत, और सखनि कौं देत ।
सुंदर कर आनन समीप, अति राजत ईहिं आकार ।
जलरुह[4] मनौ बैर बिधु सौं तजि, मिलत लए उपहार ।
गिरि-गिरि परत बदन तैं उर[5] पर हैं[6] दधि-सुत के बिंदु ।
मानहुँ सुभग सुधाकन बरषत प्रियजन[7] आगम इंदु ।
बाल-बिनोद बिलोकि सूर प्रभु सिथिल[8] भईं ब्रजनारि ।
फुरै न बचन बरजिबैं कारन, रहीं बिचारि-बिचारि ॥२८३॥६०१॥

राग कल्यान

‡ माखन चोराइ बैठ्यौ, तौलौं गोपी आई ।
देखे तब बोल्यौ कान्ह, उतर यौं बनाई ।

---

(१) दै थिर--२ । मैं थिर—३ । मैं घर—६ । मैं घर–१४ ।

* (ना) सूहो । (के, पु) बिलावल ।

† यह पद (बृ, कां, रा, श्या) मे नही है ।

(२) उठि अवलोकि ओट ठाढ़ी होइ इहि बिधि ही लखि लेत–२ । हँसि मुसुकाइ ओट ह्वै ठाढी कौनी बिधि लखि लेत—६, १७ । (३) वदन—१, ११, १५ । (४) मनु सरोज बिधु बैर बँचि करि लिए मिलत उपहार—६, १७ । (५) ऊपर—१, २, ६, ११, १५ । (६) ह्वै—१, २, ३, १४, १५ । ह्वै—११ । (७) बिज मो आगम इंदु—१ । ब्रज के आगन इंदु–६, १७ । प्रियतम आगम-बिंदु–१४ । (८) थकित—१४ ।

‡ यह पद केवल (ना) में है ।

आँखैं भरि लोनी उराहनौ देन लाग्यौ।
तेरौ री सुवन मेरी मुरली लै भाग्यौ।
दै री मोकौं ल्याइ बेनु, कहि, कर गहि रोवै।
ग्वालिनी डराति जियहिँ, सुनै जनि जसोवै।
तू जो कह्यौ ऐसौ बेनु, इहाँ नाहिँ तेरौ।
मुरली मैं जीव-प्रान बसत अहै मेरौ।
मेवा मिष्टान्न और बंसी इक दीनी।
लागी तिय चरन औ बलैया झुकि[1] लीनो ॥२८४॥६०२॥

* राग सारंग

ग्वालिनि जौ घर देखै आइ।
माखन खाइ चोराइ स्याम सब[2], आपुन रहे छपाइ।
ठाढ़ो भई मथनियाँ कैं ढिग, रोती परी कमोरो।
अबहिँ गई, आई इनि पाइनि, लै गयौ को करि चोरी?
भीतर गई, तहाँ हरि पाए, स्याम रहे गहि पाइ।
सूरदास प्रभु ग्वालिनि आगैं, अपनौ नाम सुनाइ ॥२८५॥६०३॥

* राग गौरी

जौ तुम सुनहु जसोदा गोरी।
नंद-नँदन मेरे मंदिर मैं आजु करन गए चोरी।
हौं भई जाइ अचानक ठाढी, कह्यौ भवन मैं को री ॥

---

① एक। ② तब—१, २, ३, ६, ७ (ना) काफी। (कां, रा, ख्या) * (ना) गौरी। (के, पु) धनाश्री। ११, १६। देवगधार।

रहे[1] छपाइ, सकुचि, रंचक ह्वै, भई सहज[2] मति भोरी।
मोहिँ भयौ माखन पछितावौ, रीती देखि कमोरी।
जब गहि बाहँ कुलाहल कीनी, तब गहि चरन निहोरो।
लागे लैन नैन जल भरि-भरि, तब मैं कानि न तोरी।
सूरदास प्रभु देत दिनाहीं[3] दिन ऐसियै लरिक-सलोरी ॥२८६॥६०४॥

* राग सारंग

† जानि जु पाए हौं हरि नीकैं।
चोरि-चोरि दधि-माखन मेरौ, नित प्रति गोधि रहे[4] हौं छीकैं।
रोक्यौ भवन-द्वार ब्रज-सुंदरि, नूपुर मूँदि अचानक ही कैं।
अब कैसैं जैयतु अपनैं बल, भाजन भाँजि, दूध दधि पी कैं?
सूरदास प्रभु भलैं परे फँद, देउँ न जान भावते जी कैं।
भरि गंडूष, छिरक दै नैननि, गिरिधर भाजि चले दै की कैं॥२८७॥६०५॥

* राग रामकली

‡ माखन-चोर री मैं पायौ।
बहुत दिवस मैं कोरैं लागी, मेरी घात न आयौ।

---

① हेरि छपाय सकुचि तर्जि गहि मनौ भई मति भोरी—३। रहे छपाय तनक मेचक (मृचुक) ह्वै भई सहज मति भोरी—६,११। ② मनहुँ—६,१४,१७। सकल—१६। ③ निसा दिन हरि गुन सकल समोरी—२। निसा दिन ऐसिऐ अलक सकोरी—३। निसा दिन ऐसिऐ अलक सलोरी—६, १४, १७।

* (ना) गूजरी। (जौ) कान्हरा।

† यह पद (के, पू) में नहीं है।

④ या छीके—१,६,११,१५। (ना) सारंग। (जौ) गौरी।

‡ (वे, का, गो, जौ, का, स्था) में इस पद का पाठ कुछ भिन्नता लिए हुए है। इन प्रतियों के पाठों में कोई विशेष अंतर नहीं है। नीचे (गो) के अनुसार पाठ दिया जाता है—

माषनचोर री मैं पायो।
मैं जु कही सखी होतु कहा है,
भाजन लगत भुँकायो।
जो चाहौ तौ जान क्यौं पावै
बहुत दिननु हौं पायो।
बार-बार हौं छूँका लागी,
मेरी घात न आयो।
नोइ नेत की करौं चमोटी,
घूँघट मैं डरवायो।
बिहसत निकसि रही दोउ दतिया
तब लै कंठ लगायो।
मेरे लाल का मारि सकै को
रोहिनि गहि हलरायो।
सूरदास प्रभु बालक लीला
बिमल-बिमल जस गायो॥

नित प्रति रोती देखि कमोरी मोहिं अति लगत झुँझायौ।
तब मैं कह्यौ, जानि हौं पाई कौन चोर है आयौ।
जब कर सौं कर गह्यौ, कह्यौ तब, मैं नहिं माखन खायौ।
बिहँसत उघरि गईं दँतियाँ, लै सूर स्याम उर लायौ ॥२८८॥६०६॥

* राग नट

देखी ग्वालि जमुना जात।
आपु ता घर गए पूछत, कौन है, कहि बात।
जाइ देखे भवन भीतर[1], ग्वाल-बालक दोइ।
भीर देखत अति डराने, दुहुँनि दीन्हौ रोइ।
ग्वाल के काँधैं चढे तब, लिए छाँके उतारि।
दह्यौ-माखन खात सब मिलि, दूध दीन्हौ डारि।
बच्छ लै सब छोरि दीन्हे, गए बन समुहाइ[2]।
छिरकि लरिकनि मही सौं भरि[3], ग्वाल दए चलाइ।
देखि आवत सखी घर कौं, सखिनि[4] कह्यौ जु दौरि।
आनि देखे स्याम घर मैं, भई ठाढी पौरि।
प्रेम अंतर, रिस भरे मुख, जुवति बूझति बात।
चितै मुख तन सुधि बिसारी, कियौ उर नख-घात।
अतिहिं रस[5]-बस भई ग्वालिनि, गेह देह बिसारि।
सूर प्रभु भुज गहे ल्याई, महरि पै[6] अनुसारि ॥२८९॥६०७॥

---

* (ना) गूजरी।
① बैठे—१६। ② समुदाइ —१। ③ तब—१। ④ सखनि कीन्हौ दौरि—६ १७। ⑤ रिस—१, ३, ६, ११, १२। ⑥ सौं अनुहारि—१, ३, ६, ११।

* राग गौरी

महरि तुम मानौ मेरो बात ।
ढूँढि[1]-ढाँढि गोरस सब घर को, हरयौ तुम्हारैं तात ।
कैसैं[2] कहति लियौ छीं के तैं, ग्वाल-कंध दै लात ।
घर नहिं पियत दूध धौरी को, कैसैं तेरैं खात ?
असंभाव बोलन आई है, ढोठ ग्वालिनी प्रात ।
‖ ऐसौ नाहिं अचगरौ मेरौ, कहा बनावति बात ।
का मैं कहौं कहत सकुचति हौं, कहा दिखाऊँ गात !
हैं[4] गुन बड़े सूर के प्रभु के, ह्याँ लरिका ह्वै जात ॥२६०॥६०८॥

राग गौरी

† साँवरेहिं बरजति क्यौं जु नहीं ।
कहा करौं दिन[5] प्रति की बातैं, नाहिं न परतिं सही[6] ।
माखन खात, दूध लै डारत, लेपत देह दही ।
ता पाछैं घरहू के लरिकनि, भाजत[7] छिरकि मही ।
जो कछु धरहिं दुराइ, दूरि लै, जानत ताहि तहीं ।
सुनहु[8] महरि, तेरे या सुत सौं, हम पचि हारि रहीं ।
¶ चोरी अधिक चतुरई सीखी जाइ न कथा कही ।
ता पर सूर बछुरुवनि ढोलत, बन-बन फिरतिं बहो ॥२६१॥६०९॥

---

* (स, क, को, रा, श्या) बिलावल । (जौ) नट ।

① ढूँढि-ढूँढि—१, १४ । ② और काढि सीके तें लीनो—१, ११, १५ । और कहति सीके कौ लीनौ—२, ३ । ③ दुष्ट भाव बोलन तू आई—६, १७ । कपट भरी—१६ ।

‖ (वे, का, गो, जो) में इस चरण के पश्चात् यह एक पंक्ति अधिक है—चितवत चकृत ओट भए ठाढे जसुदा तन मुसुकात ।

④ ह्वा—३ ।

५ (ना) सूहा ।

† यह पद (बृ, को, रा, श्या) में नहीं है ।

⑤ तू—११ । ⑥ नित—२ । ⑦ कही—२ । ⑧ मारत—१४ । ⑨ कहा करैं—२ ।

¶ इस चरण के पश्चात् (स क) में ये दो चरण और हैं—जब बन जात छपाइ (छुड़ाइ) मटुकिया रचि-रचि बात कही । अपने जिय के डरते तब जो कछू कही सा सही ॥

* राग कान्हरौ

† अब ये झूठहु बोलत लोग ।
पाँच बरष अरु कछुक दिननि कौ, कब भयौ चोरो जोग ।
इहिं[1] मिस देखन आवति ग्वालिनि, मुँह फाटे जु गँवारि ।
अनदोषे[2] कौं दोष लगावति, दई[3] देइगो टारि[4] ।
॥ कैसैं करि याकी भुज पहुँची, कौन बेग ह्याँ आयो ?
॥ ऊखल ऊपर आनि, पीठि दै, तापर सखा चढायो ।
जौ न पत्याहु चलौ सँग जसुमति देखौ नैन निहारि ।
सूरदास प्रभु नेंकु न बरजौ, मन मैं महरि बिचारि ॥२६२॥६१०॥

* राग देवगंधार

मेरौ[5] गोपाल तनक सौ, कहा करि जानै दधि की चोरी ।
हाथ नचावत आवति ग्वारिनि, जीभ करै किन थोरी ।
कब सीकैं[6] चढि माखन खायौ, कब दधि-मटुकी फोरी ।
अँगुरी करि[7] कबहूँ नहिं चाखत, घरहीं भरी कमोरी ।
इतनी सुनत घोष की नारी, रहसि[8] चली मुख मोरो ।
सूरदास जसुदा कौ नंदन, जो कछु करै सो थोरो ॥२६३॥६११॥

---

* (बों, श्या) बिलावल ।
† यह पद (ना, रा) में नहीं है ।
(१) दिन प्रति दोष लगावति आवति—१६, १६ । (२) अन-देखे—१ । (३) गोद्यौ दै दै गारि—१६, १६ । (४) ढारि—११ ।
|| ये दो चरण (का, श्या) मे नहीं हैं ।
(ना) बिलावल ।
† यह पद (के, पू) में नहीं है ।
(५) कहा करि जानै कान्हर चारी—२, ३, १६, १८, १६ । (६) तेरे घर—२, ३, १६ । (७) भरि—२, ३, १६ । (८) बिहँसि—१, ६, ११, १५ ।

राग सारंग

† कहै जनि ग्वारिनि झूठी बात ।
कबहूँ नहिँ मनमोहन मेरौ, धेनु चरावन जात ।
बोलत है बतियाँ तुतरौहीँ, चलि चरननि न सकात ।
कैसैँ करै माखन की चोरी, कत चोरी दधि खात ।
देहीँ लाइ तिलक केसरि कौ, जोबन-मद इतराति ।
सूरज दोष देति गोबिँद कौं, गुरु लोगनि न लजाति ॥२६४॥६१२॥

* राग नटनारायन

‡ मेरे[1] लाड़िले हो तुम जाउ न कहूँ ।
तेरेही काजैँ गोपाल, सुनहु लाडिले लाल, राखे हैँ भाजन भरि सुरस छहूँ ।
काहे कौँ पराऐँ जाइ, करत इते उपाइ, दूध-दही-घृत अरु माखन तहूँ[2] ।
करतिँ कछू न कानि, बकति हैँ कटु बानि, निपट निलज बैन बिलखि सहूँ ।
ब्रज की ढीठो[3] गुवारि, हाट की बेचनहारि, सकुचैँ न देत गारि झगरत[4] हूँ ।
कहाँ लगि सहौं रिस, बकत भई हौं कृस, इहिँ मिस सूर स्याम-बदन चहूँ ॥
॥२६५॥६१३॥

* राग कान्हरौ

§ इन अँखियनि आगैँ तैँ मोहन, एकौ पल जनि होहु नियारे ।
हौं[5] बलि गई, दरस देखैँ बिनु, तलफत हैँ नैननि के तारे ।

---

† यह पद केवल (रा) में है, जो फारसी लिपि में लिखी हुई है। अतः इसका शुद्ध पाठ कठिनता से निर्धारित किया जा सका है।

* (ना) टोड़ी।

‡ यह पद (स, बृ, का, रा, श्या) में नहीं है।

① मेरे लाडिले हो जननी कहति जिनि जाहु कहूँ—१, ११, १५। सावरे हो तुम जिनि जाउ कहूँ—२। मेरे लाड़िले हो जनि जाहु कहूँ—६, १७। ② चहूँ—२, ६, १४, १७। ③ माती—२। बाढ़ी—६, १४, १७। टेढी—११। ④ झगरि कहूँ—१। झगर गहूँ—६, ११ १७।

५ (ना) केदारो।

⑤ बलि बलि जाउँ (गई) मुखारबिंद की तरसत हैँ नैननि के तारे—२, ३। बलि बलि जाउँ बदन देखे बिनु तरसत हैँ नैनन के तारे—१, १४, १७।

औरो सखा बुलाइ आपने, इहिं आँगन खेलौ मेरे बारे ।
निरखति[1] रहौं फनिग की मनि ज्यौं, सुंदर बाल-बिनोद तिहारे ।
मधु, मेवा, पकवान, मिठाई, ब्यंजन खाटे, मीठे, खारे ।
सूर स्याम[2] जोइ-जोइ तुम चाहौ, सोइ-सोइ माँगि लेहु मेरे बारे ॥२६६॥

॥ ६१४ ॥

* राग धनाश्री

चोरी करत कान्ह धरि पाए ।
निसि-बासर मोहिं बहुत सतायौ अब हरि हाथहिं आए ।
माखन-दधि मेरो सब खायौ, बहुत अचगरी कीन्ही ।
अब तौ घात[3] परे हौ लालन, तुम्हैं भलैं मैं चीन्ही ।
दोउ भुज पकरि, कह्यौ कहँ जैहौ, माखन लेउँ मँगाइ ।
तेरो सौं मैं नैंकु न खायौ[4], सखा गए सब खाइ ।
मुख तन चितै, बिहँसि हरि दीन्हौ, रिस तब गई बुझाइ ।
लियौ स्याम उर लाइ ग्वालिनी, सूरदास बलि जाइ ॥२६७॥६१५॥

राग धनाश्री

† मथति ग्वालि हरि देखो जाइ ।
गए हुते माखन की चारो, देखत छबि रहे नैन लगाइ ।
डोलत तनु सिर-अंचल उघर्‌यौ, बेनी पीठि दुलति[5] इहिं भाइ ।
बदन-इंदु पय-पान करन कौं, मनहुँ उरग उडि[6] लागत धाइ ।

---

① चितवति—१६ । ② दास प्रभु जो मन इच्छा १,६,११,१५ । ③ आय—२ । ④ चाख्यौ—१, ६, ११, १५ । ⑤ दुरत—३ । ⑥ उठि—४ । * (ना) भोपाली । † यह पद (ना, बृ, का, रा, ग्या) में नहीं है । १, ६, १७ ।

निरखि स्याम-अँग-अँग-प्रति-सोभा, भुज भरि धरि, लीन्हो उर लाइ।
चितै रही जुवती हरि कौ मुख, नैन-सैन दै, चितहिं चुराइ।
तन-मन की गति-मति बिसराई, सुख दीन्हो कछु माखन खाइ।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि तुम्हरी लीला को कहै गाइ ॥२९८॥९१६॥

* राग बिलावल

† दधि लै मथति ग्वालि गरबीली।
रुनक-झुनक कर कंकन बाजे, बाहँ डुलावत ढीली।
भरी गुमान बिलोवति ठाढी, अपनैं रंग रँगीली।
छबि की उपमा कहि न परति है, या छबि की जु छबीली।
अति बिचित्र गति कहि न जाइ अब, पहिरे सारी नीली।
सूरदास प्रभु माखन माँगत, नाहिँन देति हठीली ॥२९९॥९१७॥

राग ललित

‡ देखी[1] हरि मथति ग्वालि दधि ठाढी।
जोबन मदमाती इतराती, बेनि दुरति कटि लौं, छबि बाढी।
दिन थोरी, भोरी, अति गोरी[2], देखत ही जु स्याम भए चाढी।
करषति है, दुहुँ करनि मथानी, सोभा-रासि भुजा सुभ काढी।
इत-उत अंग मुरत झकझोरत, अँगिया बनी कुचनि सौं माढी[3]।
सूरदास प्रभु रीझि थकित भए मनहुँ काम साँचे भरि काढी ॥३००॥९१८॥

---

* (के, पू) रामकली।

† यह पद केवल (के, गो, पू) में है।

‡ यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

① देखी हरि मथति ग्वालि दधि भेद सो ठाढी—१, ३, ६, ११, १४, १७। ② कोरी—१, ३, ६, ११, १४, १७। ③ गहि गाढी—१, ६, ११, १४, १५। जो काढी—३, १७। ④ गाढी—३, ६, १४, १७। ⑤ सौं—३।

राग बिलावल

† गए स्याम तिहिँ ग्वालिनि कैँ घर ।
देखी जाइ मथति दधि ठाढ़ी, आपु लगे खेलन द्वारे पर ।
फिरि चितई, हरि दृष्टि गए परि, बोलि लए हरुएँ सूनैँ[1] घर ।
लिए लगाइ कठिन कुच कैँ बिच, गाढैँ चाँपि रही अपनैँ कर ।
उमँगि अंग अँगिया उर दरकी, सुधि बिसरी तन की तिहिँ औसर ।
तब भए स्याम बरष द्वादस के, रिझै लई जुवती वा छबि पर ।
मन हरि लियौ तनक से ह्वै गए देखि रही सिसु-रूप मनोहर ।
माखन लै मुख धरति स्याम कैँ सूरज प्रभु रति-पति नागर-बर ॥३०१॥६१६॥

राग रामकली

‡ देखौ मेरे भाग की सुभ घरी ।
नवल रूप, किसोर मूरति, कंठ लै भुज भरी ।
जाके चरन-सरोज गंगा, संभु लै सिर धरी ।
जाके चरन-सरोज परसत, सिला सुनियत तरी ।
जाके बदन-सरोज निरखत आस सिगरी भरी ।
सूर प्रभु के संग बिलसत सकल कारज सरी ॥ ३०२॥६२० ॥

* राग बिलावल

§ ग्वालिनि उरहन कैँ मिस आई ।
नंद-नँदन तन-मन हरि लीन्हौ, बिनु देखैँ छिन रह्यौ न जाई ।

---

† यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) मेँ नहीँ है ।
‡ यह पद केवल (स, क) मेँ है ।
§ यह पद (ना, बृ, कां, श्या) मेँ नहीँ है ।
① भीतर—६ ।
* (रा) गौरी ।

सुनहु महरि अपने सुत के गुन, कहा कहौं किहि भाँति बनाई ।
चोली फारि, हार गहि तोरयौ, इन बातनि कहौ[1] कौन बड़ाई ।
माखन खाइ, खवायौ ग्वालनि, जो उबरयौ सो दियौ लुढ़ाई ।
सुनहु सूर, चोरी सहि लीन्ही, अब कैसैं सहि जाति ढिठाई[2] ॥३०३॥६२१॥

राग सारंग

† झूठेहिं मोहिं लगावति ग्वारि ।
खेलत तैं मोहिं बोलि लियौ इहिं, दोउ भुज भरि दोन्ही अँकवारि ।
मेरे कर अपनैं उर[3] धारति, आपुन ही चोली धरि फारि ।
माखन आपुहिं मोहिं खवायौ, मैं धौं कब दीन्हौ है डारि ।
कह जानै मेरौ बारौ भोरौ, झुकी महरि दै-दै मुख गारि ।
सूर स्याम ग्वालिनि मन मोह्यौ, चितै रही इकटकहिं निहारि ॥३०४॥६२२॥

* राग गौरी

कबहिं करन गयौ माखन चोरी ।
जानै[4] कहा कटाच्छ तिहारे, कमल नैन मेरौ इतनक सो री ।
दै-दै दगा बुलाइ भवन मैं भुज भरि भेंटति उरज-कठोरी ।
उर नख चिन्ह दिखावत डोलति, कान्ह चतुर भए[5] तू अति भोरी ?
आवति नित-प्रति उरहन कैं मिस, चितै रहति ज्यौं चंद चकोरी ।
सूर सनेह ग्वालि[6] मन अँटक्यौ अतर प्रीति जाति नहिं तोरी ॥३०५॥६२३॥

---

① कह होत - ३, ६, ६, १४, १७ । ② खुटाई—६, १५ । टुटाई— १७ । झुटाई—१८ ।

† यह पद (ना, बृ, को, रा, श्या) में नहीं है ।

③ कुच—१, ६, ११, १५ ।

* (ना) बिलावल । (कां, रा, श्या) सारग ।

④ जानति हौं जु—१, ६, ११, १५ । ⑤ भए राधा—२ । ग्वारिनि तुम—३ । राधा तुम गोरी—१६ । ⑥ जात नहिं हटक्यौ नैननि—१, ११, १५ स्याम—२, ३ ।

* राग गौरी

†कहा कहौं हरि के गुन तोसौं।
सुनहु महरि अबहीं मेरैं घर, जे रँग कीन्हे मो सौं।
मैं दधि मथति आपनैं मंदिर, गए तहाँ इहिं भाँति।
मो सौं कह्यौ बात सुनु मेरी, मैं सुनि कै मुसुकाति।
बाहँ पकरि चोली गहि फारी, भरि लोन्ही अँकवारि।
कहत न बनै सकुच की बातैं, देखौ हृदय उघारि।
माखन खाइ निदरि नीकी बिधि, यह तेरे सुत की घात।
सूरदास प्रभु तेरे आगैं, सकुचि तनक ह्वै जात ॥३०६॥६२४॥

* राग गौड़ मलार

‡स्याम तन देखि री आपु तन देखिऐ।
भीति जौ होइ तौ चित्र अवरेखिऐ!
कहाँ मेरे कुँवर पाँचही बरष के, रोइ अजहूँ सु पै-पान माँगैं।
तू[1] कहाँ ढीठ, जोबन-प्रमत सुंदरी, फिरति इठलाति गोपाल आगैं।
कहाँ मेरे कान्ह की तनक सी आँगुरी, बड़े बड़े नखनि के चिह्न तेरैं।
मष्ट[2] करु, हँसैंगे लोग, अँकवारि भरि[3] भुजा पाई कहाँ स्याम मेरैं।
नैननि[4] झुकी सु मन मैं हँसी नागरी, उरहनौ देत रुचि अधिक बाढ़ी।
सुनि[5] सखी सूर सरबस हर्‌यौ साँवरैं, अनउतर महरि कैं द्वार ठाढ़ी॥३०७॥६२५

---

* (रा) जैतश्री।

†यह पद (ना, बृ, कां, श्या) में नहीं है।
(ना) सोरठि।

‡यह पद (बृ, का, रा, श्या) में नहीं है।

① तू महामस्त अति ढीठ सी सुंदरी, फिरति ऐंडाति गोपाल आगै—१४। ② कहा गोपाल कह देखि तू आपको कहा तैं लगावत है कान्ह मेरे—६, १७। ③ को—२, १४। ④ टग टगै मुख झुकी नैनहू नागरी—१, ११ १५। मुख रिसानी नैननि हँसी नागरी—२। ठग ठगै नैन बैननि हँसी ग्वालिनी मुख देखै सोभा—१४। ⑤ इक सुनेा सूर सरबस हर्‌यौ साँवरे अनउतर सुनति हरि को जु ठाढी—६, १७।

* राग गौरी

कत हो कान्ह काहु कैं जात ।
ये सब ढीठ गरब गोरस कैं, मुख सँभारि बोलतिं नहिं बात ।
जोइ-जोइ रुचै सोइ तुम मोपै माँगि लेहु किन तात ।
ज्यौं-ज्यौं बचन सुनौं मुख अमृत, त्यौं-त्यौं सुख पावत सब गात ।
कैसी टेव परी इन गोपिनि, उरहन कैं मिस आवतिं प्रात ।
सूर सु[1] कत हठि दोष लगावतिं घरहो कौ माखन नहिं खात ॥ ३०८ ॥ ६२६ ॥

† घर गोरस जनि जाहु पराए ।
दूध भात भोजन घृत अंमृत अरु आछौ करि दह्यौ जमाए ।
नव लख धेनु खरिक घर तेरैं, तू कत माखन खात पराए ।
निलज ग्वालिनी देतिं उरहनौ, वै झूठैं करि बचन बनाए ।
लघु-दीरघता कछू न जानैं, कहुँ बछरा कहुँ धेनु चराए ।
सूरदास प्रभु मोहन नागर, हँसि-हँसि जननी कंठ लगाए ॥ ३०९ ॥ ६२७ ॥

* राग बिलावल

‡ (कान्ह कौं) ग्वालिनि दोष लगावति जोर[2] ।
इतनक दधि माखन कैं कारन कबहिं गयौ तेरो ओर ।
तू तौ धन-जोबन की माती, नित[3] उठि आवति भोर ।
लाल कुँवर मेरौ कछू न जानै, तू है तरुनि किसोर ।

---

* (ना) देवगिरि। (के, पू) नट। (कां, रा, श्या) बिलावल ।
① सकति—१, ६, ६, १७ । बकति—२ । सहज—३ । मटकि—११ । सक्कि—१६ ।
† यह पद केवल (ल) में है ।
,, (ना) देवगिरि । (कां, रा, श्या) गौरी ।
‡ यह पद (ल, शा, का, के, पू) में नहीं है ।
② चोर—१, ११, १५। ③ निलज भई उठि आवति भोर—१, २, ३, ११, १६ ।

कापर नैन चढ़ाए डोलति, ब्रज[1] मैं तिनुका तोर।
सूरदास जसुदा अनखानी, यह जीवन-धन मोर ॥३१०॥६२८॥

* राग देवगंधार

† कान्हहिं बरजति किन[2] नँदरानी।
एक गाउँ कै बसत कहाँ लौं, करैं नंद की कानी।
तुम जो कहति हौ, मेरो कन्हैया, गंगा कैसो पानी।
बाहिर तरुन किसोर बयस बर, बाट घाट का दानी।
बचन बिचित्र, कमल-दल-लोचन, कहत सरस बर[3] बानी।
अचरज महरि तुम्हारे आगैं, अबै जीभ तुतरानी।
कहँ मेरो, कान्ह कहाँ तुम ग्वारिनि, यह बिपरीति न जानी।
आवति सूर उरहने कैं मिस, देखि कुँवर मुसुकानी ॥३११॥६२९॥

राग धनाश्री

‡ माखन माँगि[4] लियो जसुमति सौं।
माता सुनत तुरत लै आई, लगी[5] खवावन रति सौं।
मैया मैं अपनैं कर खैहौं, धरि दै मेरैं हाथ।
माखन खात चले उठि खेलन, सखा जुरे सब साथ।
मथुरा जात ग्वालिनी देखी, चरचि लई हरि आइ।
सूर स्याम ता घर के पाछैं, बैठि रहे अरगाइ ॥३१२॥६३०॥

---

① या ब्रज में तिनुका सो तोर—१, २, ३, ११, १६।
* (ना) सूहो।
† यह पद (का, के, पु) में नहीं है।
② क्यों न—१, २, ३, ११।
③ रस—१६।
‡ यह पद (ना, बृ, का, श्या) में नहीं है।
④ मांगत है—१, ११, १५। ⑤ देति खवाय मगन मन रति सों—१, ३, ६, ११, १५।

* राग धनाश्री

मथुरा जाति हौं बेचन दहियौ ।
मेरे घर कौ द्वार, सखी री, तब लौं देखति रहियौ ।
॥ दधि-माखन द्वै माट अछूते[1] तोहिं सौंपति हौं सहियौ ।
और नहीं या ब्रज मैं कोऊ, नंद[2]-सुवन सखि लहियौ ।
॥ ये[3] सब बचन सुने मन-मोहन, वहै राह मन गहियौ ।
सूर पैारि लौं गई न ग्वालिनि, कूदि परे दै धहियौ[4] ॥३१३॥६३१॥

राग नट

† देख्यौ जाइ स्याम घर भीतर ।
अबहीं निकसि कहत भई सोई, फिरि आई तुम्हरैं घर ।
सखा साथ के चमकि गए सब, गह्यौ स्याम कर धाइ ।
औरनि जानि जान मैं दीन्हौ, तुम कहँ जाहु पराइ ?
बहुत अचगरी करत फिरत हौ, मैं पाए करि घात ।
बाहँ पकरि लै चली महरि पै, करत रहत उतपात ।
देखौ महरि, आपने सुत कौं, कबहूँ नहिं पतियाति ।
बैठे स्याम भवन हीं अपनैं, चितै-चितै पछिताति ।
बाहँ पकरि तू ल्याई काकौं, अति बेसरम गँवारि ।
सूर स्याम मेरे आगैं[5] खेलत, जोबन-मद-मतवारि ॥३१४॥६३२॥

---

* (ना) ललित । (कां, श्या) देवगधार । (रा) बिलावल ।

|| ये दो चरण (कां, रा) में नहीं हैं ।

① भरे हैं—६, १४, १७ । ② नँद कौ आवत लहियौ—२, ३, १६ । ③ ये सुभ बचन निकट ह्वै मोहन सुनि कर उर सब गहियो—१, ११, १५ । वाके बचन सुनत हैं बैठे मनही मन दै बहियो—६, १४, १७ । ④ ठहियो—३ । बहियौ—१६ ।

† यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

⑤ आंगन—३ ।

* राग सारग

† जसुदा तू जो कहति ही मोसौं ।
दिन प्रति देत उरहनौ आवति, कहा तिहारैं कोसौं ।
वहै उरहनौ सत्य करन कौं, गोबिंदहिं गहि ल्याई ।
देखन चली जसोदा सुत कौं ह्वै गए सुता पराई ।
तेरे नैन, हृदय, मति नाहीं, बदन देखि पहिचानै ।
सुनु[1] री सखी कहति डोलति है या कन्या सौं कान्है ।
तैं तौ नाम स्याम मेरे कौ, सूधौ करि है पायौ ।
सूरदास प्रभु[2] देखि खरिक तैं अबहीं आपै[3] आयौ ॥३१५॥६३३॥

* राग गौरी

‡ रही ग्वालि हरि कौ मुख चाहि ।
कैसे चरित किए हरि अबहीं बार-बार सुमिरति करताहि ।
बाहँ पकरि घर तैं लै आई, कहा चरित कीन्हे हैं स्याम ।
जात[4] न बनै कहत नहिं आवै, कहति महरि तू ऐसी बाम ।
जानी बात तिहारी सबकी, जसुमति कहति इहाँ तैं जाहि ।
सूरदास प्रभु के गुन ऐसे, बुधि[5] बल करि को जीतै ताहि ॥३१६॥६३४॥

× राग गौरी

§ गए स्याम ग्वालिनि घर सूनैं[6] ।
माखन खाइ, डारि सब गोरस, बासन फोरि किए[7] सब चूनैं ।

---

* (ना) काफी । (का, रा, श्या) धनाश्री ।
† यह पद (के, पू) में नहीं है ।
① देखौ—३ । ② स्वामी यह देखौ तुरत त्रिया ह्वै आयौ—१, ६, ११, १५ । स्वामी नटनागर देखि खरिक तैं—१६ । ③ है यह—३ ।
(क) नट ।
‡ यह पद (ना, बृ, का, रा श्या) में नहीं है ।
④ जानत—६ । ⑤ बुद्धि करी तब जीतौ ताहि—१, ३, ६, ११, १४ ।
× (रा) धनाश्री ।
§ यह पद (बृ, कां, श्या) में नहीं है ।
⑥ सूनो—१, २, ११, १५ । ⑦ सोरु हठ दूना—१ । सूर हठ कीने—३ । सबै दुरि कूने—६,

बड़ौ माट इक बहुत दिननि कौ, ताहि[३] करयौ दस टूक।
सोवत लरिकनि छिरकि मही सौं, हँसत चले दै कूक।
आइ गई ग्वालिनि तिहिँ औसर, निकसत हरि धरि पाए।
देखे घर बासन सब फूटे, दूध दही ढरकाए।
दोउ भुज धरि गाढ़ै करि लोन्हे, गई महरि के आगैं।
सूरदास अब बसै कौन ह्याँ, पति रहिहै ब्रज त्यागैं ॥३१७॥६३५॥

राग बिलावल

† ऐसो हाल मेरैं घर कीन्हौ, हौं ल्याई तुम पास पकरिकै।
फोरि[१] भाँड़ दधि माखन खायौ, उबरयौ सो डारयौ रिस करिकै।
लरिका छिरकि मही सौं देखे, उपज्यौ पूत सपूत महरि कै।
बड़ौ माट घर धरयौ जुगनि कौ, टूक-टूक कियौ सखनि पकरि कै।
पारि सपाट चले तब पाए, हौं ल्याई तुमहीं[३] पै धरि कै।
सूरदास प्रभु कौं[४] यौं राखौ, ज्यौं राखिए गज मत्त जकरि कै॥३१८॥६३६॥

राग कान्हरौ

‡ करत कान्ह ब्रज-घरनि अचगरी।
खोझति महरि कान्ह सौं पुनि-पुनि, उरहन लै आवति हैं सगरी।
बड़े बाप के पूत कहावत, हम वै बास बसत इक बगरी।
नंदहु तैं ये बड़े कहैहैं फेरि बसैहैं यह ब्रज नगरी।

१७। सोर हठि कीनो—११। मौंरहू कूने—१४। ③ तासु—१, ११, १५।

† यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

① फोरे सब बासन घर के दधि माखन खायौ जो उबरयौ सो डारयौ रिस करि कै—१, ३, ६, ११। ② सोऊ टूक पांच दस करि कै—१, ६, ११, १५। ③ तुम पास पकरि कै—१, ११। तुम ही पै पकरि कै—१४। ④ ऐसे राखौ जैसे राखत गज मद जकरि कै—६, १७।

‡ यह पद (ना, ल, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

जननी कैँ खीझत हरि रोए, झूठहिँ मोहिँ लगावति धगरी।
सूर स्याम मुख पोँछि जसोदा, कहति सबै जुवती हैँ लँगरी ॥३१६॥६३७॥

राग सारंग

† नितही नित उठि आवति भोर।
मेरे बारेहिँ दोष लगावति, ग्वालिनि जोबन जोर।
दूध दही माखन कैँ कारन, कब गयौ तेरी ओर।
धन माती इतराती डोलै, सकुच नहीँ करै सोर।
मेरौ कन्हैया कहाँ तनक सौ, तू है कुचनि कठोर।
तेरे मन कौ यहाँ कौन है, लह्यौ[1] कटक कौ छोर।
का पर नैन चलावति आवति, जाति[2] न तिनका तोर।
सुनौ सूर ग्वालिनि की बातैँ, त्रासति कान्ह[3] जु मोर ॥३२०॥६३८॥

राग नट

‡ मेरौ माई कौन कौ दधि चोरै ।
मेरैँ बहुत दई कौ दीन्हौ लोग पियत हैँ औरै।
कहा भयौ तेरे भवन गए जो पियौ तनक लै भोरै।
ता ऊपर काहेँ गरजति है, मनु आई चढ़ि घोरै।
माखन खाइ, मह्यौ सब डारै, बहुरौ भाजन फोरै।
सूरदास यह रसिक ग्वालिनी, नेह नवल सँग जोरै ॥३२१॥६३९॥

---

† यह पद (ना, ल, बृ, का, रा, श्या) मेँ नहीँ है।

(१) पायौ आजु कटक कौ छोर—१, ३, ६, ११। (२) जाति नहीँ ब्रज तिनका तोर—१, ३, ६, ११। (३) कान्ह जीवन धन मोर—१, ३, ६, ११।

‡ यह पद (बे, ल, शा, का, गो, जौ) मेँ है।

राग रामकली

अपनौ गाउँ लेउ नँदरानी ।
बड़े बाप की बेटी,[1] पूतहिँ भली पढ़ावति बानी ।
सखा-भीर लै पैठत घर मैं आपु खाइ तौ सहिऐ ।
मैं जब चली सामुहैं पकरन, तब के गुन कहा कहिऐ ।
भाजि गए दुरि देखत कतहूँ, मैं घर पौढी आइ ।
हरैं-हरैं बेनी गहि पाछैं, बाँधी पाटी लाइ ।
सुनु मैया, याके गुन मोसौं, इन मोहिँ लयौ बुलाई ।
दधि मैं पड़ी सेंत की मोपै चीटी सबै कढ़ाई ।
टहल करत मैं याके घर की यह पति सँग मिलि सोई ।
सूर बचन सुनि हँसी जसोदा, ग्वालि रही मुख गोई[2] ॥३२२॥६४०॥

राग सारंग

† महरि तैं ब्रज चाहति कछु और ।
बात एक मैं कही कि नाहीं, आपु लगावति झौर ।
जहाँ बसैं पति नाहिँ आपनी, तजन कह्यौ सो ठौर ।
सुत के भऐं बधाई पाई, लोगनि देखत[3] हौर ।
कान्ह पठाइ देति घर लूटन, कहति करौ यह गौर ।
ब्रज घर समुझि लेहु महरैटी,[4] कहत सूर कर जोर ॥३२३॥६४१॥

---

① बेटी तातैं पूतहिं भले (भली) पढ़ावति बानी—१, ६, १०, १४। ② जोइ—२।
† यह पद (बृ, का, श्या) में नहीं है।
③ देखति हौर—१। खेदति हौर—६, १७। खेदत होर—१४। ④ महरि जू हहा करति कर जोरी—१। महरेठी कहत किए कर जोर—३। महरेटी हहा करति कर जोर—६, ११, १५। महरि जो कहत किए कर जोर—१४।

राग नटनारायन

† लोगनि कहत[1] झुकति तू बौरी।
दधि-माखन गाँठी दै राखति, करत फिरत सुत चोरी।
जाके घर की हानि होति नित, सो नहिँ आनि कहै री?
जाति-पाँति के लोग न देखति, और बसैहै नैरी।
घर-घर कान्ह खान कौं डोलत, बड़ी कृपन तू है री।
सूर स्याम कौं जब जोइ भावै, सोइ तबहीँ तू दै री॥३२४॥६४२॥

* राग मलार

महरि तैँ बड़ी कृपन है माई।
दूध-दही बहु बिधि कौ दीनौ, सुत सौं धरति छपाई।
बालक बहुत नहीँ री तेरैँ, एकै कुँवर कन्हाई।
सोऊ तौ घरही घर डोलतु, माखन खात चोराई।
बृद्ध बयस, पूरे पुन्यनि तैँ, तैँ बहुतै निधि पाई।
ताहू के खैबे-पीबे कौं, कहा करति[2] चतुराई।
सुनहु न बचन चतुर नागरि के जसुमति[3] नंद सुनाई।
सूर[4] स्याम कौं चोरी कैँ मिस, देखन है यह आई॥३२५॥६४३॥

* राग नट

अनत[5] सुत गोरस कौं कत जात?
घर[6] सुरभी कारी धौरी कौ माखन माँगि न खात।

---

† यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) मे ँ नही ँ है।

① कतहि बुझावत—३। कतहि झुकत—६, १७।

* (ना) नट (क) रामकली (कां, रा, श्या) सोरठ।

② इती—२, ३, ६, १४, १७। ③ नंद महरि मुसुकाई—१६, १८। नद नारि मुसुकाई—१६। ④ सूरदास प्रभु के देखन कौ इहिँ मिस ग्वालिनि आई—२।

* (ना) टोड़ी। (कां, रा, श्या) धनाश्री।

⑤ कान्ह प्रातही ँ है कित जात—२। कान्ह पराए हौ कत जात—३, १६, १८, १६। ⑥ घर सुरभी नव लाख दुधारी और गनी नहिँ जात—१, ३, ६, ११, १४, १७।

दिन प्रति सबै उरहने कैं मिस, आवति हैं उठि प्रात।
अनलहते[1] अपराध लगावतिं; बिकट बनावतिं बात।
निपट निसंक बिवादतिं सम्मुख, सुनि-सुनि[2] नंद रिसात।
मोसौं कहतिं कृपन तेरैं घर ढोटाहू न अघात।
करि मनुहारि उठाइ गोद लै, बरजति सुत कौं मात।
सूर स्याम नित सुनत उरहनौ, दुख पावत तेरौ[3] तात ॥३२६॥६४४॥

* राग बिलावल

† भाजि गयौ मेरे भाजन फोरि।
लरिका सहस एक सँग लीन्हे, नाचत फिरत साँकरी खोरि।
मारग[4] तौ कोउ चलन न पावत, धावत गोरस लेत अँजोरि।
सकुचं न करत, फाग सी खेलत, तारी[5] देत, हँसत मुख मोरि।
बात कहौं तेरे ढोटा की, सब ब्रज बाँध्यो प्रेम की डोरि।
टोना सौ पढि नावत सिर पर, जो भावत सो लेत[6] है छोरि।
आपु खाइ सो[7] सब हम मानैं, औरनि देत सिकहरैं तोरि।
सूर सुतहिं[8] बरजौ नँदरानी, अब तोरत चोली-बँद-डोरि[9] ॥३२७॥६४५॥

* राग नट

‡ हरि सब भाजन फोरि पराने।
हाँक देत पैठे दै पेला, नैंकु न मनहिं डराने।

---

① अनसमुझे—१, २, ११। अनली-हे—६, १७। बिन समझे—१६। ② मोहिं—१६। ③ मैं—१६।

* (गो) नट (क) धनाश्री।

† यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

④ माखन खाइ जगाइ बाल-कनि बनचर सहित बछरुवन छोरि—१, ११, १२। ⑤ गारी—१, ११, १२। ⑥ लेत अजोरी—१, ११, १२। ले है छोरि—३।

⑦ तौ—१, ११, १२। ⑧ सुनहु—३। ⑨ जोरी—१, ३, ११, १२।

(क) बिलावल।

‡ यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है।

सौंके छोरि, मारि लरिकनि कौं, माखन-दधि सब खाइ ।
भवन मच्यौ दधि काँदौ, लरिकनि रोवत पाए जाइ ।
सुनहु-सुनहु सबहिनि के लरिका, तेरौ सौ कहुँ नाहिं ।
हाटनि-बाटनि, गलिनि कहूँ कोउ, चलत नहीं डरपाहिं ।
रितु आए कौ खेल, कन्हैया सब दिन खेलत फाग ।
रोकि रहत गहि गली साँकरी, टेढ़ो बाँधत पाग ।
बारे तैं सुत ये ढँग लाए, मनहीं मनहिं सिहाति ।
सुनैं[1] सूर ग्वालिनि की बातैं, सकुचि महरि पछिताति ॥३२८॥६४६॥

* राग सारंग

† कन्हैया[2] तू नहिं मोहिं डरात ।
षटरस धरे[3] छाँड़ि कत पर घर, चोरी करि करि खात ।
बकत-बकत तोसौं पचिहारी, नैंकुहुँ लाज न आई ।
ब्रज-परगन-सिकदार[4] महर, तू, ताकी करत नन्हाई ।
पूत सपूत भयौ कुल मेरैं, अब मैं जानी बात ।
सूर स्याम अब लौं तुहिं बकस्यौ, तेरी जानी घात ॥३२९॥६४७॥

* राग गौरी

‡ सुनु री ग्वारि कहौं इक बात ।
मेरी सौं तुम याहि मारियौ, जबहीं पावौ घात ।
अब मैं याहि जकरि बाँधौंगी, बहुतै मोहिं खिझायौ ।

---

① सुनहु—१, ६, ११, १७ । सुनौ—३ ।
* (ना) धनाश्री ।
† यह पद (बृ, को, श्या) में नहीं है ।
② कन्हेया तू ताकी करत न बात—३ । ③ धरयौ—३, ६, १७ । परेउ—१४ । ④ सिरदार—१, ११, १५ ।
, (ना) जैतश्री । (गो) बिलावल । (रा) केदारा ।
‡ यह पद (बृ, को, श्या) में नहीं है ।

साँटिनि मारि करौं पहुनाई, चितवत कान्ह डरायौ ।
अजहूँ मानि, कह्यौ करि मेरौ, घर-घर तू जनि जाहि ।
सूर स्याम कह्यौ, कहूँ न जैहौं, माता मुख-तन चाहि॥३३०॥६४८॥

* राग बिलावल

† तेरैं लाल मेरौ माखन खायौ ।
दुपहर दिवस जानि[1] घर सूनौ, ढूँढ़ि-ढँढोरि आपही आयौ ।
खोलि किवार, पैठि मंदिर मैं, दूध-दही सब सखनि खवायौ ।
ऊखल[2] चढ़ि, सीं के कौ लीन्हौ, अनभावत भुइँ मैं ढरकायौ ।
दिन प्रति हानि होति गोरस की, यह ढोटा कौनैं ढँग लायौ ।
सूर[3] स्याम कौं हटकि न राखै, तैं ही पूत अनोखौ जायौ ॥३३१॥६४९॥

राग बिलावल

‡ हौं वारी रे मेरे तात ।
काहे कौं लाल पराए घर कौ, चोरि-चोरि दधि माखन खात ?
गहि-गहि पानि मटुकिया रीती, उरहन कैं मिस आवत-जात ।
करि मनुहार, कोसिबे कैं डर, भरि-भरि देति जसोदा मात ।
फूटी चुरी गोद भरि ल्यावैं, फाटे चीर दिखावैं गात ।
सूरदास स्वामी की जननी, उर लगाइ हँसि पूछति बात ॥३३२॥६५०॥

* राग रामकली

§ माखन खात पराए घर कौ ।
नित प्रति सहस मथानी मथिऐ, मेघ-सब्द दधि-माट घमरकौ ।

---

* (ना) टोड़ी । (कां, रा, श्या) सारंग ।

† यह पद (के, पू) में नहीं है ।

① देखि—२, ३ । ② सीं के तैं काढ़ि खाट चढ़ि मोहन कछु खायौ कछु लै ढरकायौ—१, ६, ११, १५ । ③ सूरदास कहतीं ब्रजनारी पूत अनोखौ तैं ही जायौ—६, १५ ।

‡ यह पद केवल (शा) में है ।

* (के, क, पू) धनाश्री ।

§ यह पद (ना, वृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

|| कितने अहिर जियत मेरैं घर, दधि मथि लै बेंचत महि मरकौ[1]।
नव लख धेनु दुहत हैं नित प्रति, बड़ो नाम है नंद महर कौ।
ताके पूत कहावत हौ तुम, चोरी करत उघारत फरकौ।
सूर स्याम कितनौ तुम खैहौ, दधि-माखन मेरैं जहँ-तहँ ढरकौ॥३३३॥६५१॥

राग रामकली

† मैया मैं नहिं[2] माखन खायो।
ख्याल परैं ये सखा सबै मिलि, मेरैं मुख लपटायो।
देखि तुही सींके पर भाजन, ऊँचैं धरि[3] लटकायो।
हौं[4] जु कहत नान्हे कर अपने मैं कैसैं करि पायो।
मुख दधि पोंछि, बुद्धि[5] इक कीन्ही, दोना पीठि[6] दुरायो।
डारि साँटि, मुसुकाइ[7] जसोदा,[8] स्यामहिं कंठ लगायो।
बाल-बिनोद-मोद[9] मन मोह्यो, भक्ति-प्रताप दिखायो।
सूरदास जसुमति कौ यह सुख, सिव[10] बिरंचि नहिं पायो॥३३४॥६५२॥

राग बिलावल

‡ तेरी सौं सुनु सुनु मेरी मैया
आवत उबटि परयौ ता ऊपर, मारन कौं दौरी इक गैया।
ब्यानी गाइ बछरुवा चाटति, हौं पय पियत पतूखिनि लैया।
यहै देखि मोकौं बिजुकानी, भाजि चल्यौ कहि दैया दैया।

|| यह 'चरण' (स) में नहीं है।

① ढरको—१४।

† यह पद (ना, बृ, का, रा, श्या) में नहीं है।

② नाहीं दधि—१, ६, ११, १५। ③ घर—१, ६, १४। ④ तहा निरखि तू नान्हे पाइन कहु कैसे करि पायौ—६, १७। ⑤ कहत नँदनंदन—१, ६, ११, १५। ⑥ पालु—६, १४, १७। ⑦ मुख चूमि—१४। ⑧ तबहि गहि सुत कौ—१, ६, ११, १५। ⑨ भाव करि मोह्यौ (मोहन) माता मनहिं रिझायौ—३, ६, १४, १७। ⑩ सिव बिरचि बौरायौ—१, ६, ११, १५। देवनि दुर्लभ पायौ—३। देवनि दुर्लभ गायौ—१४।

‡ यह पद केवल (शा) में है।

दोउ सींग बिच ह्वै हौं आयौ, जहाँ न कोऊ हो रखवैया।
तेरौ पुन्य सहाय भयौ है, उबरयौ बाबा नंद-दुहैया।
याके चरित कहा कोउ जानै, बूझौ धौं संकर्षन भैया।
सूरदास स्वामी की जननी, उर लगाइ हँसि लेति बलैया॥३३५॥६५३॥

राग रामकली

† जसुमति तेरौ बारौ कान्ह अतिही जु अचगरौ।
दूध - दही - माखन लै डारि देत सगरौ।
भोरहिं नित प्रतिही उठि, मोसौं करत झगरौ।
ग्वाल - बाल संग लिए घेरि रहै डगरौ।
हम - तुम सब बैस एक, कातैं को अगरौ।
लियौ दियौ सोई कछु, डारि देहु झगरौ।
सूर स्याम तेरौ अति, गुननि माहिं अगरौ।
चोली अरु हार तोरि छोरि लियौ सगरौ॥३३६॥६५४॥

* राग गौरी

‡ ह्याँ लगि नैं कु चलौ नँदरानी।
मेरे सिर की नई बहनियाँ, लै गोरस मैं सानी।
हमैं-तुम्हैं रिस-बैर कहाँ कौ, आनि दिखावत ज्यानी।
देखौ आइ पूत कौ करतब, दूध मिलावत पानी।
या ब्रज कौ बसिबौ हम छाँड़्यौ, सो अपनैं जिय जानी।
सूरदास ऊसर की बरषा थोरे जल उतरानी॥३३७॥६५५॥

---

† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जै, श्या) में है।
* (रा) बिलावल।
‡ यह पद केवल (शा, रा) में है।

राग रामकली

† देखौ माई या बालक[1] की बात ।
बन-उपबन, सरिता-सर[2] मोहे, देखत[3] स्यामल गात ।
मारग चलत अनीति करत है, हठ करि माखन खात ।
पीतांबर[4] वह सिर तैं ओढ़त, अंचल दै मुसुकात ।
तेरी सौं कहा कहौं जसोदा, उरहन देति लजात ।
जब हरि आवत तेरे आगैं सकुचि तनक ह्वै जात ।
कौन-कौन गुन कहौं स्याम के, नैंकु न काहुँ[5] डरात ।
सूर[6] स्याम मुख निरखि जसोदा, कहति कहा यह बात ॥३३८॥६५६॥

* राग बिलावल

† सुनि-सुनि री तैं महरि जसोदा तैं सुत बड़ौ[7] लड़ायौ ।
इहिं ढोटा लै ग्वाल भवन मैं, कछु बिथरचौ कछु खायौ ।
काकैं नहीं अनोखौ ढोटा, किहिं न कठिन करि जायौ ।
मैं हूँ अपनैं औरस पूतैं बहुत दिननि मैं पायौ ।
तैं जु गँवारि पकरि भुज याकी बदन दह्यौ लपटायौ ।
सूरदास[8] ग्वालिनि अति झूठी[9] बरबस कान्ह बँधायौ ॥३३९॥६५७॥

* राग नट

§ नंद-घरनि सुत भलौ पढ़ायौ ।
ब्रज-बीथिनि, पुर-गलिनि, घरै-घर, घाट-बाट सब सोर मचायौ ।

---

† यह पद (ना, बृ, कौ, रा, श्या) में नहीं है ।
① ढोटा—३ । लरिका—६, १७ । ② सब—१, ३, ६, ११ । ③ मोहे ऊखल पात—३ । मोहे खग मृग गात—६, १७ । ④ पीत पिछोरी ओढ़ि लेत है—६, १७ । ⑤ कहूँ—६ । ⑥ सूरदास प्रभु ठगी ग्वारिनी बरजे है जु रिसात—३ ।
* (कौ) सूहौ ।
‡ यह पद (ना, के, क, पू, रा) में नहीं है ।
⑦ अधिक—३ । भलो—६, ११ । खरो—१६, १६ । ⑧ सूरदास ग्वालिनी बरबट कान्ह बाह धर लायौ—३ । ⑨ रूठी—१, ११, १५ । छूटी—१६ ।
* (क) बिलावल ।
§ यह पद (ना, बृ, कौ, रा, श्या) में नहीं है ।

लरिकनि मारि भजत काहू के, काहू कौ दधि-दूध लुटायौ ।
काहू कैँ घर करत भँड़ाई,[1] मैँ ज्यौं त्यौं करि पकरन पायौ ।
अब तौ इन्हैँ जकरि धरि[2] बाँधौं, इहि सब तुम्हरौ गाउँ भजायौ[3] ।
सूर स्याम भुज गही नँदरानी, बहुरि कान्ह अपनैँ ढँग[4] लायौ॥३४०॥६५८॥

उलूखल-बधन * राग गौरी

† ऐसी रिस मैँ जौ धरि पाऊँ ।
कैसे हाल करौँ धरि हरि के, तुमकौं प्रगट दिखाऊँ ।
सँटिया लिए हाथ नँदरानी, थरथरात रिस[5] गात ।
मारे बिना आजु जौ छाँड़ौँ, लागै मेरैँ तात ।
इहिँ अंतर ग्वारिनि इक औरै, धरे बाँह हरि ल्यावति ।
भली महरि सूधौ सुत जायौ, चोली-हार बतावति ।
रिस मैँ रिस अतिहीँ उपजाई, जानि जननि अभिलाष ।
सूर स्याम भुज गहे जसोदा, अब बाँधौं कहि माष[6] ॥३४१॥६५९॥

* राग सोरठ

‡ जसुमति रिस करि-करि रजु करषै ।
सुत हित क्रोध देखि माता कैँ, मनहीँ मन हरि हरषै ।
उफनत छीर जननि करि ब्याकुल, इहिँ बिधि भुजा छुड़ायौ ।
भाजन फोरि दही सब डार्‌यौ, माखन कीच' मचायौ ।

---

① बड़ाई—१, ३, ११ । ② बाधौगी—१, ११, १५ । कै बाधौ—३ । ③ भँड़ायौ—१, ११, १५ । मँगायौ—१४ । ④ ढिग आयौ—१, ११, १४, १५ । हठि आयौ—६, १७ ।

* (क) बिलावल ।

† यह पद (ना, ब, का, रा, श्या) में नहीं है ।

⑤ सब—३, १४ । ⑥ भाष—३, ६, ६, १७ । (ना) ललित । (का) सारंग । (क) धनाश्री ।

‡ यह पद (वे, ना, स, शा, वृ, गो, जै, कां, रा, श्या) में किंचित् रूपांतर से दो स्थानों पर मिलता है । किंतु इस संस्करण में यह एक ही स्थान पर रक्खा गया है ।

⑦ मुँह लपटायौ—१, ११, १५ । मुह लपटायौ—६, १७, १६ ।

लै आई जेंवरि अब बाँधौं, गरब जानि न बँधायौ ।
अंगुर द्वै घटि होति सबनि सौं, पुनि-पुनि और मँगायौ ।
नारद-साप भए जमलार्जुन, तिनकौं अब जु उधारौं ।
सूरदास प्रभु कहत भक्त-हित जनम[1] -जनम तनु धारौं॥३४२॥६६०॥

राग रामकली

† जसोदा एतौ कहा रिसानी ।
कहा भयौ जौ अपने सुत पै, महि ढरि परी मथानी ?
रोषहिं[2] रोष भरे दृग तेरे,[3] फिरत पलक पर पानी ।
मनहुँ सरद के कमल कोष पर मधुकर मीन सकानी ।
स्रम जल किंचित निरखि बदन पर, यह छबि अति[4] मन मानी ।
मनौ चंद नव उमँगि सुधा, भुव ऊपर बरषा ठानी ।
गृह-गृह गोकुल दई दाँवरी बाँधति भुज नँदरानी ।
आपु बँधावत, भक्तनि छोरत, बेद बिदित भई बानी ।
गुन लघु चरचि करति स्रम जितनौ, निरखि बदन मुसुकानी ।
सिथिल अंग सब देखि सूर प्रभु-सोभा-सिंधु-तिरानी॥३४३॥६६१॥

* राग सारंग

बाँधौं आजु कौन[5] तोहिं छोरै ।
बहुत लँगरई कीन्हौ मोसौं, भुज गहि रजु ऊखल सौं जोरै ।
जननी अति रिस जानि बँधायौ, निरखि बदन, लोचन जल ढोरै ।
यह सुनि ब्रज-जुवतीं सब धाईं कहतिं कान्ह अब क्यौं नहिं छोरै[6] ।

---

(१) जुग-जुग मैं—१, ११ ।
† यह पद (बे, ल, शा, का, बृ, के, गो, क, जौ) में है ।
(२) रोस रोस भरे अग तेरे किरत पयलरा पानी—११ । (३) तारे—६ । (४) कहत मन मानी—१ । कहत न मानी—११ ।
* (क) धनाश्री ।
(५) तोहि को छोरै—२ । (६) चोरै—१, ३, ११, १४ ।

ऊखल सौं गहि बाँधि जसोदा, मारन कौं साँटी कर तोरै।
साँटो देखि ग्वालि पछितानी, बिकल भई जहँ-तहँ मुख मोरै।
सुनहु महरि ऐसी न बूझिऐ सुत बाँधति माखन दधि थोरैं।
सूर स्याम कौं बहुत सतायौ, चूक[1] परी हम तैं यह भोरैं ॥३४४॥९६२॥

* राग आसावरी

जाहु चली अपनैं-अपनैं घर।
तुम[2]हीं सबनि मिलि ढीठ करायौ, अब आईं छोरन बर।
मोहिं अपने बाबा की सौंहैं, कान्हहिं अब न पत्याउँ।
भवन जाहु अपनैं-अपनैं सब, लागति हौं मैं पाउँ।
मोकौं जनि बरजौ जुवती कोउ, देखौ हरि के ख्याल।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा, बड़े नंद के लाल ॥३४५॥९६३॥

* राग सोरठ

जसुदा तेरौ मुख हरि जोवै।
कमलनैन हरि हिचिकिनि[3] रोवै, बंधन छोरि जसोवै।
जौ तेरौ सुत खरौ अचगरौ, तऊ कोखि कौ जायौ।
कहा भयौ जौ घर कैं ढोटा, चोरी माखन खायौ।
कोरी[4] मटुकी दह्यौ जमायौ, जाख[5] न पूजन पायौ।

---

① कित री हम नैननि ही फोरै—२।

* (ना) गूजरी। (का, श्या) सोरठ। (रा) बिहागरा।

② तुमहीं सब मिलि ढीठ करयौ अति अब आई बधन छोरे पर—२।

(ना, रा) ललित। (के, कौं, पु, श्या) नट। (क) बिलावल।

③ सुसुकनि—२। ④ तुरत दोहनी।—२, ३, १६, १७, १८, १९। ⑤ जापु—१। चाप—३। चोकु—६, १७, १८। जाबन—१४।

तिहिँ[1] घर देव पितर काहे कौं, जा घर कान्हर[2] आयौ।
जाकौ नाम लेत भ्रम छूटै, कर्म-फंद सब काटै।
सोई इहाँ जेँवरी बाँधे, जननि साँटि लै डाँटै।
दुखित जानि दोउ सुत कुबेर के, ऊखल आपु बँधायौ।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत ही देह धारि कै आयौ ॥३४६॥६६४॥

* राग बिहागरौ

† देखौ माई कान्ह हिलकियनि रोवै।
इतनक मुख माखन लपटान्यौ, डरनि आँसुवनि धोवै।
माखन लागि उलूखल बाँध्यौ, सकल लोग ब्रज जोवै।
निरखि कुरुख उन बालनि की दिस, लाजनि अँखियनि गोवै।
ग्वाल कहैँ धनि जननि हमारी, सुकर सुरभि नित नोवै।
बरबस[3] ही बैठारि गोद मैं, धारैं बदन निचोवै।
ग्वालि कहैँ या गोरस कारन, कत सुत की पति खोवै?
आनि देहिँ अपने घर तैँ हम, चाहति जितौ जसोवै।
जब-जब बंधन छोरचौ चाहतिँ, सूर कहै यह को वै।
मन माधौ-तन, चित गोरस मैं, इहिँ बिधि महरि बिलोवै ॥३४७॥६६५॥

राग सारंग

‡ (माई) नैँ कुहूँ न दरद करति, हिलकिनि हरि रोवै।
बज्रहु तैँ कठिन हियौ, तेरौ है जसोवै।

---

① ता—२, ३, ६, १४, १७। ② ऐसौ जायौ—३, ६, १४, १७।

* (ना) मलार।

† यह पद (वे, ना, शा, गो, जौ) में है।

③ चटपट—११।

‡ यह पद (ना, बृ, कां, रा श्या) में नहीं है।

पलना पौढ़ाइ जिन्हैं बिकट बाउ काटै।
उलटे भुज बाँधि तिन्हैं लकुट लिए डाँटै।
नैं कुहूँ न थकत पानि, निरदई अहीरी।
अहो नंदरानि, सीख कौन पै लही री।
जाकौं सिव सनकादिक सदा रहत लोभा।
सूरदास प्रभु कौ मुख निरखि देखि सोभा ॥३४८॥६६६॥

* राग बिहागरौ

कुँवर जल लोचन भरि-भरि लेत।
बालक[1] बदन बिलोकि जसोदा, कत रिस करति अचेत।
छोरि उदर[2] तैं दुसह दाँवरी, डारि कठिन कर बेंत।
कहि धौं[3] री तोहिं क्यौं करि आवै, सिसु पर तामस एत।
मुख आँसू अरु माखन-कनुका, निरखि नैन छबि देत।
मानौ स्रवत सुधानिधि मोती, उडुगन अवलि समेत।
ना जानौं किहिं पुन्य प्रगट भए इहिं ब्रज नंद-निकेत।
तन-[4]मन-धन न्योछावरि कीजै सूर स्याम कैं हेत ॥३४९॥६६७॥

* राग केदारौ

हरि के बदन तन धौं चाहि।
तनक दधि कारन जसोदा इतौ कहा रिसाहि।
लकुट कैं डर डरत ऐसैं[5] सजल सोभित डोल।

---

* (ना) पचम। (कां) कल्यान। (रा, श्या) नट।

① सुंदर—२, ३, १६, १८, १९। बारिज—१४। ② कमर—१, ११, १५। ③ तोकों कैसैं आवत है—१, ११, १५। ④ सरबस तौ—१, ११, १५। सरबस नित—६, १७। (ना, पु) नट नारायनी—(के क) नट।

⑤ जैसै—१, ११, १५, १७।

नील-नीरज-दल[1] मनौ अलि-अंसकनि[2] कृत लोल।
बात बस समृनाल जैसैं प्रात पंकज कोस।
नमित मुख इमि अधर सूचत, सकुच मैं कछु रोस।
कितिक गोरस हानि, जाकौं करति हैं अपमान।
सूर ऐसे बदन ऊपर वारिऐ तन[3]-प्रान ॥३५०॥६६८॥

* राग केदारो

मुख-छबि देखि हो नँद-घरनि।
सरद निसि कौ अंसु अगनित इंदु आभा हरनि।
ललित श्री गोपाल-लोचन-लोल-आँसू-ढरनि।
मनहुँ बारिज बिथकि[4] बिभ्रम, परे पर-बस परनि।
कनक-मनि-मय-जटित-कुंडल-जोति जगमग करनि।
मित्र-मोचन मनहुँ आए, तरल गति द्वै तरनि।
कुटिल कुंतल, मधुप मिलि मनु, कियौ चाहत लरनि।
बदन कांति बिलोकि सोभा सकै सूर न बरनि ॥३५१॥६६९॥

राग केदारौ

† मुख-छबि कहा कहौं बनाइ।
निरखि निसि-पति बदन-सोभा, गयौ गगन दुराइ।
अमृत अलि मनु पिवन आए, आइ रहे लुभाइ।
निकसि सर तैं मीन मानौ, लरत कीर छुराइ।

---

(१) दृग—१। (२) अंस-कन कृत लोल—१, ११ १०, १५। सकत कृत जो डोल—६, १७। (३) धन—१, ११, १५।

* (ना) नट नारायनी। (गो) रामकली। (क) नट। (कां, श्या) बिलावल।

(४) बिलखि—१, ६, ११, १५, १८, १८, १६।

† यह पद केवल (गो) में है।

कनक-कुंडल-स्रवन बिभ्रम कुमुद निसि[1] सकुचाइ ।
सूर हरि की निरखि सोभा कोटि काम लजाइ ॥३५२॥६७०॥

राग केदारौ

† हरि-मुख देखि हो नंद-नारि ।
महरि ऐसे सुभग सुत सौं, इतौ कोह निवारि ।
सरद[2]-मंजुल-जलज-लोचन लोल, चितवनि दीन ।
मनहुँ खेलत हैं परस्पर, मकरध्वज द्वै मीन ।
ललित कन-संजुत कपोलनि लसत कज्जल अंक ।
मनहुँ राजत रजनि, पूरन कलापति[3] सकलंक ।
बेगि बंधन छोरि, तन-मन वारि, लै हिय लाइ ।
नवल स्याम किसोर ऊपर, सूर जन बलि जाइ ॥३५३॥६७१॥

* राग बिहागरो

कहौ तौ माखन ल्यावैं घर तैं ।
जा कारन तू छोरति नाहीं, लकुट न डारति कर तैं ।
सुनहु[4] महरि ऐसी न बूझियै, सकुचि गयौ मुख डर तैं ।
ज्यौं[5] जल-रुह ससि-रस्मि पाइ कै, फूलत नाहिं न सर तैं ।
ऊखल लाइ भुजा धरि बाँधी,[6] मोहनि मूरति बर तैं ।
सूर स्याम-लोचन जल बरषत जनु मुकुता हिमकर तैं ॥३५४॥६७२॥

---

① मिस ।

† यह पद (वे, ल, शा, का, गो, जै) में है ।

② जलज मंजुल लोल लोचन सरद—१, ६, ११, १५ ।

③ कला अति अकलंक—१, ११, १५ । ससि कला निकलंक—६ । (ना) देवसाख । (के, पू) कान्हरा । (क) धनाश्री । (का, रा, श्या) नट ।

④ महरि तोहिं ऐसी न बूझिऐ स्रमित भ्रमित तो डर तैं —६ । देखि जसोदा बदन कमल की शोभा चढ़ी जो तेरे डर तें—१६, १६ । ⑤ मनहुँ कमल दधि सुत समयो तकि—१, ३, ६, ११, १५, १७ । ⑥ बाँधे मोहन—१, ३, ६, ११, १५, १७ ।

* राग कल्यान

कहन लगीं अब बढ़ि-बढ़ि बात ।
ढोटा मेरौ तुमहिँ बँधायौ, तनकहिँ माखन खात ।
अब मोहिँ माखन देतिँ मँगाए, मेरैँ घर कछु नाहिँ !
उरहन कहि-कहि साँझ-सबारैँ, तुमहिँ बँधायौ याहि ।
रिसही मैं मोकौं गहि दीन्हौ, अब लागीं पछितान ।
सूरदास अब[1] कहति जसोदा, बूझ्यौ सबकौ ज्ञान ॥३५५॥६७३॥

* राग धनाश्री

† कहा भयौ जौ घर कैँ लरिका चोरी माखन खायौ ।
अहो जसोदा कत त्रासति हौ यहै कोखि कौ जायौ ।
बालक अजौं अजान न जानै केतिक दह्यौ लुठायौ ।
तेरौ[2] कहा गयौ ? गोरस कौ गोकुल अत न पायौ ।
हा हा लकुट त्रास दिखरावति, आँगन[3] पास बँधायौ ।
रुदन करत दोउ नैन रचे हैँ, मनहुँ कमल-कन[4] छायौ ।
पैाढि रहे धरनी पर तिरछैँ बिलखि बदन मुरझायौ ।
सूरदास प्रभु रसिक-सिरोमनि, हँसि करि कंठ लगायौ ॥३५६॥६७४॥

× राग धनाश्री

‡ चित दै चितै तनय मुख ओर ।
सकुचत सीत भीत जलरुह ज्यौं, तुव कर लकुट निरखि सखि घोर ।

---

*(ना) देसकार । (क) धनाश्री ।
① हँसि—१, ११, १५ ।
[2] (ना) देवसाख । (कां) नट ।
† यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है ।
② तेरो सखि कह खायौ—१, ११, १५ । तेरौ कह खायौ—१६ । ③ आपन—१, २, ११, १५ । ④ तन—१, ११, १५ । बन—३ ।
× (ना) कल्यान ।
‡ यह पद (बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

‖ आनन ललित स्रवत जल सोभित, अरुन चपल लोचन की कोर।
¶ कमल-नाल तैं मृदुल ललित भुज ऊखल बाँधे दाम कठोर।
लघु अपराध देखि बहु[1] सोचति, निरदय हृदय बज्र सम तोर।
सूर[2] कहा सुत पर इतनी रिस कहि[3] इतनै कछु माखन-चोर ॥३५७॥६७५॥

* राग बिलावल

† जसुदा देखि सुत की ओर।
बाल बैस रसाल पर, रिस इती कहा कठोर।
बार बार निहारि[4] तुव तन, नमित[5]-मुख दधि-चोर।
तरनि किरनहिं परसि मानौ, कुमुद सकुचत भोर।
त्रास तैं अति चपल गोलक, सजल सोभित छोर।
मीन मानौ बेधि बंसी, करत जल झकझोर।
% देत छवि अति गिरत उर पर अंबु-कन के जोर।
≒ ललित हिय जनु मुक्त-माला, गिरति[6] टूटैं डोर।
⊥ नंद-नंदन जगत-बंदन करत आँसू कोर।
दास[7] सूरज मोहिं सुख-हित निरखि नंदकिसोर ॥३५८॥६७६॥

‖ इस चरण के उपरांत कुछ प्रतियों में यह एक चरण और मिलता है—डारत मनौ गहूप सुधा भरि बिधु मंडल तैं उभय चकोर।

¶ इस चरण के पश्चात् भी कुछ प्रतियों में यह अतिरिक्त चरण मिलता है—मनहुँ भुजग फिरत बाँबी पर उरझि रहे कचुरि के जोर।

① मन सोचत है सम कुलिस कठिन उर तोर—३, ६, १४। ② सूरदास सुखरासि जगत गुरु बरबस कहति जु माखन चोर—२। ③ बिलपति कहत न माखन चोर—३, ६, १४, १७।

* (ना) भैरव।

† यह पद (बृ, के, का, पू, रा, श्या) में नहीं है।

④ डरात तो तैं—३।

⑤ निमिष दधि मुख = चोर—१, १५। भीत दधि मुख चोर—११।

/ यह चरण (वे, का) में नहीं है।

≒ यह चरण (वे, स, का) में नहीं है।

⑥ गिरत तट की ओर—२।

⊥ यह चरण (स) में नहीं है।

⑦ सूरदास सु (जु) महरि मुख (सुख) हित—१, ११, १५। दास सूरज महरि मुख हित—२।

* राग धनाश्री

† चितै धौं कमल-नैन की ओर।
कोटि चंद वारौं मुख-छबि पर ए हैं साहु के चोर।
उज्ज्वल अरुन असित दीसति[1] हैं, दुहुँ नैननि की कोर।
मानौ सुधा पान कैं कारन, बैठे निकट चकोर।
कतहिं[2] रिसाति जसोदा इनसौं, कौन ज्ञान है तोर।
सूर[3] स्याम बालक मनमोहन, नाहिंन तरुन किसोर॥३५६॥६७७॥

राग नटनारायनी

‡ देखि री देखि हरि बिलखात।
अजिर लोटत राखि जसुमति, धूरि-धूसर गात।
मूँदि मुख छिन सुसुकि रोवत, छिनक मौन रहात।
कमल मधि अलि उड़त, सकुचत, पच्छ दल-आघात।
चपल दृग, पल भरे अँसुवा, कछुक ढरि-ढरि जात।
अलप जल पर सीप द्वै लखि, मीन मनु अकुलात।
लकुट कैं डर ताकि तोहिं तब पीत पट लपटात।
सूर प्रभु पर वारियै ज्यौं, भलेहिं माखन खात॥३६०॥६७८॥

* राग सारंग

§ कब के बाँधे ऊखल दाम[4]।
कमल-नैन बाहिर करि राखे तू बैठी सुखधाम।

---

* (ना) गौरी।
† यह पद (वृ, कौं, रा, श्या) में नहीं है।
① देखति है —१, ११, १५। देखति हौ—३, ६।
② सुनि जसुदा ऐसी न बूझिऐ—२।
③ सूरदास स्वामी बालक हैं—२।
‡ यह पद केवल (ना) में है।
(क) धनाश्री। (कौं) मलार। (रा, श्या) नट।
§ यह पद (ना) में नहीं है।
④ स्याम—३।

है निरदई, दया कछु नाहीं, लागि[1] रही गृह काम।
देखि छुधा तैं मुख कुम्हिलानौ, अति कोमल तन स्याम।
छोरहु बेगि भई बड़ी बिरियाँ, बीति गए जुग जाम।
तेरैं त्रास निकट नहिँ आवत बोलि सकत नहिँ राम।
जन[2]-कारन भुज आपु बँधाए, बचन कियौ रिषि ताम।
ताही[3] दिन तैं प्रगट सूर प्रभु यह दामोदर नाम ॥३६१॥६७६॥

* राग गौरी

† वारौं हौं वे कर जिन हरि कौ बदन छुयौ
वारौं रसना सो जिहिं बोल्यौ है तुकारि।
वारौं ऐसी रिस जो करति सिसु बारे पर
ऐसौ सुत कौन पायौ मोहन मुरारि।
ऐसी निरमोही माई महरि जसोदा भई
बाँध्यौ है गोपाल लाल बाहँनि पसारि।
कुलिसहुँ तैं कठिन छतिया चितै री तेरी
अजहूँ द्रवति जो न देखति दुखारि।

---

① लागि गई—।, ६, ११, १५। लागति है अति घाम—१६, १८, १६। ② जिहि—१, ११, १५। ③ ता दिन ते यह प्रगट सूर प्रभु दामोदर सो नाम—१, ३, ६, ११, १४। सूर भक्त हित आपु बँधाए सुत कुबेर के काम—१६,१६। सूरदास प्रभु अंतरजामी भक्तनि के बस स्याम—१८।

* (ना) कान्हरो।

† यह पद (वे, ना, ल, शा, का, गो, जै) में है। (वे, का, गो, जै) के पाठ प्राय एक ही हैं। (ना) के पाठ में भेद है। चरणों की संख्या सभी प्रतियों में चार ही मिलती है। परंतु भिन्न पाठों को मिलाकर देखने से छः चरण देख पड़ते हैं। इस संस्करण में तदनुसार छः चरण रक्खे गए हैं भिन्न पाठ नीचे दिए जाते हैं।

(ना) का पाठ
वारौं वेई कर जिनि
हरि कौ वदन छियौ
वारौं वह रसना जिहि
बोल्यौ है तुकारि।
वारौं वैसी रिस
जो करति सिसु बारे

कौन जानै कौन पुन्य प्रगटे हैं तेरैं आनि
जाकौं दरसन काज जपै मुख-चारि।
केतिक गोरस हानि जाकौ सूर तोरै कानि
डारौं तन स्याम रोम-रोम पर वारि ॥३६२॥६८०॥

* राग सोरठ

(जसोदा) तेरौ भलौ[1] हियौ है माई।
कमल[2]-नैन माखन कैं कारन, बाँधे ऊखल ल्याई।
जो संपदा देव-मुनि-दुर्लभ, सपनैं हु देइ न दिखाई।
याही तैं तू गर्ब भुलानी,[3] घर बैठे निधि पाई।
जो मूरति जल-थल मैं ब्यापक निगम न खोजत पाई।
सो मूरति तैं अपनैं आँगन, चुटकी दै जु नचाई।
तब[4] काहू सुत रोवत देखति, दौरि लेति हिय लाई।
अब[5] अपने[6] घर के लरिका सौं इती करति निठुराई!

ऐसौ सुत कोन
पायो मोहन मुरारि।
ऐसी निरमोही माई
महरि जसोदा को जानै कौन
पुन्य प्रगटे जाके मुख
देखै दुख हरत हमार।
सूर स्याम सुख रासि
कहौं कहा अद्भुत
जाकौ मुख-दरसन
काज जपै मुख चारि॥
(गो) का पाठ जो (वे, का, जै) से प्रायः मिलता है—
वारौ हो वे कर जिन
हरि कौ बदन छुवो
वारो वह रसना जिन
बोल्यौ है तुतकारि।
ऐसी निर्मोही भई
जसुदा न तोसी निरमोही।
देख्यौ गोपाल लाल
आयो क्यों हाथ पसारि।
कुलिस तैं कठिन बाहँ
वै तेरी छतिया
अजहूँ न द्रवति ज्यौं
देखत उपर मुरारि।
केतिक गोरस हानि
जाकौ तू तोरति कानि
डारयौ तुहिँ सूर स्याम
के रोम रोम पर वारि॥

* (ना, श्या) नट। (क, कां, रा) धनाश्री।

① कठिन--२। ② सु दर स्याम कमल दल लोचन--२। ③ करति है--२। भरी है--६, १४, १७। ④ औरन को सुत रोवति देखति--२, १६। ⑤ यह तौ है घरही कौ ढोटा यासौ कहा निठुराई--२। ⑥ काहे--६, १४, १७।

बारंबार[1] सजल लोचन करि[2] चितवत कुँवर कन्हाई।
कहा करौं, बलि जाउँ, छोरि तू, तेरी सौंह दिवाई।
सुर[3] पालक, असुरनि[4] उर सालक, त्रिभुवन जाहि डराई।
सूरदास[5] प्रभु की यह लीला, निगम नेति नित गाई ॥३६३॥६८१॥

* राग केदारौ

† देखि री नंद-नंदन-ओर।
त्रास तैं तन त्रसित भए हरि, तकत आनन तोर।
बार बार डरात तोकौं, बरन बदनहिं थोर।
मुकुर-मुख, दोउ नैन ढारत, छनहिं छन छबि-छोर।
‖ सजल चपल कनीनिका पल अरुन ऐसैं डोर (ल)।
रस[6] भरे अंबुजनि भीतर भ्रमत मानौ भौंर।
¶ लकुट कैं डर देखि जैसे भए स्रोनित ओर।
¶ लाइ उरहिं, बहाइ रिस जिय, तजहु प्रकृति कठोर।
कछुक करुना करि जसोदा, करति निपट निहोर।
⁂ सूर स्याम त्रिलोक[7] की निधि, भलैं हि माखन-चोर ॥३६४॥६८२॥

---

(१) बार बार जल लोचन भरि भरि रोवत कुँवर-कन्हाई--६, १७। (२) भरि--१, ११, १४। (३) सुर मुनि पालक असुर सँहारक--६, १७। (४) सब असुर सँहारक—१, ११, १४। (५) सूरदास बलि बलि चरनन की हित सौ कहा बसाई--२, १६।

* (ना) ललित। (के, क, पु) नट।

† यह पद (बृ, का, रा, श्या) में नहीं है।

‖ यह चरण (ना) में नहीं है।

(६) सरस अबुज भँवर भीतर भ्रमत है जनु भोर--१। रस भरे अबुज फिरे फिरि भ्रमत है भ्रम भोर--२। रस भरे अंबुज भवर भीतर भ्रमत जानेा (जनु) भोर--३, ११।

¶ ये दो चरण (स्य, के, क) में नहीं हैं।

⁂ (के, पु) में अतिम चरण के पश्चात् ये दो चरण अधिक लिखे हैं:—

सपिनि बहु बिधि देखि
सोभा दियौ प्रान अकोर।
स्याम सुभग सरोज
आनन चारु चित के चोर।

(७) बिलोकि जसुमति कहति माखन चार--१, ६, ११, १५।

* राग धनाश्री

† तब तैं बाँधे ऊखल आनि ।
बालमुकुंदहिँ कत तरसावति, अति कोमल अँग जानि ।
प्रातकाल तैं बाँधे मोहन, तरनि चढ्यो मधि आनि ।
कुम्हिलानौ मुख चंद दिखावति, देखो धौं नँदरानि ।
तेरैं[१] त्रास तैं कोउ न छोरत, अब छोरौ तुम आनि ।
कमलनैन बाँधेही छाँड़े, तू बैठी मनमानि ।
जसुमति के मन के सुख-कारण आपु बँधावत पानि ।
जमलार्जुन कौं मुक्त करन हित, सूर स्याम जिय[२] ठानि॥३६५॥६८३॥

* राग नट

† कान्ह[३] सौं आवत क्यौंऽब[४] रिसात ।
लै लै लकुट कठिन कर अपनैं परसत कोमल गात ।
देखत[५] आँसू गिरत नैन तैं यौं सोभित ढरि जात ।
मुक्ता मनौ चुगत खग खंजन, चोंच पुटो न समात ।
डरनि लोल[६] डोलत हैं इहिँ बिधि, निरखि भ्रुवनि[७] सुनि बात ।
मानौ सूर सकात[८] सरासन, उड़िबे कौं अकुलात ॥३६६॥६८४॥

---

* (क) नट ।

† यह पद (ना, बृ, कां, रा, श्या) में नहीं है ।

(१) तेरी—१,१४,१७ । (२) यह—१,३,११,१४,१२ ।

* (ना) देवगंधार ।

† यह पद (बृ, का, रा, श्या) में नहीं है ।

(३) कैसे आवत तोहिँ रिसात—२ । (४) क्यौं बिरसात—१ । क्यौहि रिसात—११ । (५) अँसुवा टूटि परत नैननि तै सोभित उर जल-जात—२ । (६) डोल—१,३,६, ११,१२, १७ । (७) सुभ्रुव—१, ६,११। सुमुख—१४ । (८) सकेत—१,३,६,११ ।

* राग रामकली

जसुदा यह न बूझि कौ काम ।
कमलनैन की भुजा देखि धौं, तैं बाँधे हैं दाम ।
पुत्रहु तैं प्यारौ[1] कोउ है री, कुल-दीपक मनि-धाम ।
‖ हरि पर वारि डारि सब तन, मन, धन गोरस अरु ग्राम ।
देखियत कमल बदन कुम्हिलानौ, तू निरमोही बाम ।
¶ बैठी है मंदिर सुख छहियाँ, सुत दुख पावत घाम ।
% येई हैं सब ब्रज के जीवन सुख पावति लिएँ नाम ।
सूरदास प्रभु भक्तनि कैं बस यह[2] ठानी घनश्याम ॥३६७॥६८५॥

* राग धनाश्री

| ऐसी रिस तोकौं नँदरानी ।
भली बुद्धि तेरैं जिय उपजी, बड़ी बैस अब भई सयानी ।
ढोटा एक भयौ कैसैंहु करि, कौन कौन करबर बिधि भानी ।
क्रम-क्रम करि अब लौ उबरयौ है, ताकौं[3] मारि पितर दै पानी !
≒ को निरदई रहै तेरैं घर, को तेरैं सँग बैठै आनी ।

---

* (ना) देवगधार । (का) सोरठ । (रा) बिलावल ।

① प्रीतम नहिं कोऊ—*, ६, ११, १५ ।

‖ यह चरण (ना, स, के, क, पू) में नहीं है ।

¶ इस चरण के उपरांत कुछ प्रतियों में ये दो चरण और मिलते हैं—
अति सुकुमार मनोहर मूरति
ताहि करति तू ताम ।
ये सुनि ग्वालि जगत के बोहित
पतितपावन है नाम ॥

% यह चरण (ना, का, का, रा, श्या) में नहीं है ।

② है जग के विस्राम—१, ३, ६, ११, १५, १७ ।
(ना) कल्यान ।

† यह पद (बृ, कां, श्या) में नहीं है ।

③ ताकौ मारति निरदइ बानी—२ ।

≒ (के, पू) में इस चरण के उपरांत ये तीन चरण मिलते हैं—
बहुतै कहि कहि हम पचिहारीं
चली घरनि बिरुझानी ।
जसुदा हठ कीयौ बहु भारी
कह्यौ न काहू मानी ।
सूर स्याम निज सैन बतायौ,
ग्वारिनि तुम जिनि जाहु रिसानी ।

सुनहु सूर कहि-कहि पचिहारौं, जुवती चलीं घरनि बिरुझानी॥ ३ ६८॥६८६

* राग सारंग

† हलधर सौं कहि ग्वालि सुनायौ।
प्रातहिं तैं तुम्हरौ लघु भैया, जसुमति ऊखल बाँधि लगायौ।
काहू के लरिकहिं हरि मार्‌यौ, भोरहिं आनि तिनहिं गुहरायौ।
तबहीं तैं बाँधे हरि बैठे, सो हम तुमकौं आनि जनायौ[1]।
हम बरजी, बरज्यौ नहिं मानति, सुनतहिं बल आतुर ह्वै धायौ।
सूर स्याम बैठे ऊखल लगि,[2] माता उर तनु अतिहिं त्रमायौ॥ ३ ६९॥६८७।

* राग सारग

यह सुनि कै हलधर तहँ धाए[3]।
देखि स्याम ऊखल सौं बाँधे, तबहीं दोउ लोचन भरि आए।
मैं बरज्यौ कै बार कन्हैया, भली करी दोउ हाथ बँधाए।
अजहूँ छाँड़ौगे लँगराई, दोउ कर जोरि जननि पै आए।
स्यामहिं छोरि मोहिं बाँधै बरु, निकसत सगुन भले नहिं पाए।
मेरे प्रान-जिवन-धन कान्हा, तिनके भुज मोहिं बँधे दिखाए।
माता सौं कह करौं ढिठाई, सो[4] सरूप कहि नाम सुनाए।
सूरदास तब कहति जसोदा दोउ भैया तुम इक मत[5] पाए॥ ३ ७०॥६८८॥

---

* (ना) कल्यान। (क) धनाश्री।

† यह पद (पू) में नहीं है।

(१) सुनायौ—२, ६। (२) लखि माता डरनि अतिहिं तरसायौ—२।

(३) आए—२, ३, ६, १४, १७। (४) सेष रूप—१, ३, ११, १५, १६। सिह—२। (५) मत भाए—१, ११, १५। मत आए—३, ६, १७। ह्वै आए—१४।

· (ना) रामकली।

रत्नाकर

ब्रजभाषा के सर्वश्रेष्ठ कवि गोलोक-निवासी श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के समस्त काव्यों का यह अपूर्व संग्रह है। इनकी कविता के संबंध में विज्ञ साहित्यिकों से निवेदन करने की आवश्यकता नहीं। कविता-कला का इतना उत्कृष्ट अभ्यासी इस युग में कहीं देखने को नहीं मिलता। यत्र-तत्र बिखरे हुए उनके काव्य-रत्नों का यह संग्रह यथार्थ ही अपने नाम के अनुरूप हुआ है। 'रत्नाकर' में ब्रजभाषा का प्राजल मणि भावों की उज्ज्वलता से चौगुना चमक उठा है। अवसर के अनुकूल यत्र-तत्र चतुर चितेरों के एकरंगे, तिरंगे चित्रों तथा अनेकानेक उत्तमोत्तम डिजाइनों से इसकी कांति और भी खिल उठी है। मुद्रक ने भी इसे सर्वांग-सुंदर बनाने में कोई कोर-कसर नहीं रखी। जो पुस्तक-प्रेमी स्थायी महत्त्व के सुंदर और सरस साहित्य को सुचारु और आकर्षक वेशभूषा में देखने के इच्छुक हैं उनके मनस्तोष की अपूर्व सामग्री इसमें विद्यमान है। यह प्रत्येक साहित्यिक की आलमारी में शोभा पाने की अधिकारिणी है और इसका अभाव अवश्य एक बड़ी कमी है। इसके दो संस्करण प्रकाशित किए गए हैं। आर्ट पेपर के रायल आठ पेजी साइज के ६०० पृष्ठों के इस ग्रंथ के राज-संस्करण का मूल्य केवल ८) और साधारण संस्करण का ७) है। आशा है, साहित्य-प्रेमी इस पुस्तक को खरीदकर अपनी गुणज्ञता का परिचय देंगे।

बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास

इस पुस्तक में रामायण-काल से लेकर आज तक का विवरण दिया गया है। इसमें पुराण, काव्य, कविता, इतिहास, गाथा, दंतकथा, शिलालेख आदि इतिहास के लिये सहायक प्रायः सभी साधनों से सहायता लेकर लेखक ने एक क्रमबद्ध निष्कर्ष निकाला है। बुंदेलखंड के इतिहास की कोई स्वतंत्र पुस्तक नहीं थी। इसने इस कमी की पूर्ति की है। पृष्ठ-संख्या ४५०, मूल्य केवल ३)।

मआसिरुल उमरा

इतिहास-प्रेमियों को भली भाँति विदित है कि यह ग्रंथ कितने महत्त्व का है। इसमें मुगल दरबार के जिन सरदारों की जीवनियाँ नवाब शाहनवाज खाँ समसामुद्दौला ने दी हैं, वे अत्यंत प्रामाणिक और पक्षपात-रहित हैं। प्रथम भाग में ९१ सरदारों की जीवनियाँ हैं। मूल्य केवल ४) रखा गया है।

ब्रजनिधि-ग्रंथावली

जयपुर-नरेश महाराज सवाई प्रतापसिंहजी की समस्त रचनाओं का यह संग्रह है जो बहुत खोज और परिश्रम के अनंतर एकत्र किया गया है। पाद-टिप्पणियों में कठिन शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं। प्रारंभ में विद्वान् संपादक पुरोहित हरिनारायणजी शर्मा की सुदीर्घ प्रस्तावना भी है। ४१९ पृष्ठों में समाप्त इस पुस्तक का मूल्य केवल ३) है।

कोशोत्सव-स्मारक संग्रह

संपादक रायबहादुर महामहोपाध्याय पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा। देश तथा विदेश के अनेक प्रख्यात विद्वानों एवं अनेकानेक लब्ध-प्रतिष्ठ कवियों की सर्वश्रेष्ठ कृतियों का अपूर्व संग्रह। मूल्य ५)।

*

द्विवेदी-अभिनंदनग्रंथ

अनेक सज्जनों के सतत आग्रह पर सभा ने दो महीने के लिये इस ग्रंथ का मूल्य घटाकर आधा कर दिया था। इस अवधि में इस पुस्तक की बहुतेरी प्रतियाँ बिकीं। समय बीत गया, पर आर्डरों का ताँता लगा ही रहा और निरंतर माँगें आती ही जा रही हैं। वस्तुत यह पुस्तक सभा ने आर्थिक लाभ की अभिलाषा से नहीं छापी थी। यह आचार्य महोदय के सम्मानार्थ प्रकाशित की गई थी। अत इस सदुद्देश की सिद्धि पूर्ण रीति से तभी होगी जब इस ग्रंथ-रत्न की एक एक प्रति हिंदी भाषा एव हिंदी भाषा के मान्य आचार्य महोदय के प्रत्येक भक्त के पास पहुँच जाय। अत अनेक सज्जनों के आग्रह से सभा ने इस ग्रंथ का मूल्य पुन ७॥) कर दिया है। यह रिआयत केवल उन्हीं लोगों के साथ की जायगी जो सभा में ग्रंथ का मूल्य ७॥) और पैकिंग तथा रजिस्टरी-व्यय ॥) कुल ८) मनीआर्डर से पेशगी भेज देंगे। ऐसे सज्जनों के पास यह ग्रंथ बैरंग रेलवे पार्सल से भेज दिया जायगा और रेल-भाड़ा उन्हें देना पड़ेगा। जो सज्जन डाक से यह ग्रंथ मँगवाना चाहते हों उन्हें ७॥) मूल्य के अतिरिक्त १॥।=) डाक-व्यय के लिये और भेजना चाहिए।

अभिनदन-ग्रंथ में विगत चालीस वर्षों के चुने हुए हिंदी-साहित्य के पंडितों के अपूर्व निबंध और कवियों की मनोरम रचनाएँ हैं। साथ ही इसमें देश और विदेश के सर्वश्रेष्ठ कलाकारों के सुंदर-सुंदर चित्रों का अलबम सजा दिया गया है जिसका मूल्य कला-रसिक ही अच्छी तरह आँक सकते हैं। यह कहने में अत्युक्ति न होगी कि साहित्य और चित्र-विद्या की ऐसी सयुक्त सुचारु प्रदर्शिनी कभी ही कभी सौभाग्य से देखने को मिलती है। जिस प्रकार 'गीता' या 'रामचरितमानस' के विषय में कहा जाता है कि सपूर्ण भारतीय साहित्य और सस्कृति के नष्ट हो जाने पर भी इन दो ग्रंथों से उनकी पूर्ति हो सकती है उसी प्रकार इस बीसवीं शताब्दि के हिंदी-साहित्य की प्रगति की पूरी सामग्री आपको इस ग्रंथ में मिलेगी।

यदि आप अपने समय के साहित्य के साथ-साथ नहीं चल सके या उससे पूर्णत परिचित नहीं हो सके तो यह एक ऐसा अभाव है जिसके कारण आपके मन में सकोच अवश्य होता होगा। अभिनदन ग्रंथ खरीदकर आप उसकी पूरी पूरी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

आशा है, हिंदी-प्रेमी इस सुअवसर से लाभ उठावेंगे और इस ग्रंथ-रत्न की एक-एक प्रति तुरत मँगाकर बीसवीं सदी की निधि अपने घरों में रख लेंगे।

पुस्तक-विक्रेताओं को १) प्रति कमीशन दिया जायगा।

प्रधान मंत्री,
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

*

* राग सारंग

† एतौ कियौ कहा री[1] मैया ।
कौन काज धन दूध दही यह, छोभ करायौ कन्हैया ।
आई सिखवन भवन पराऐं स्यानि ग्वालि बौरैया ।
दिन-दिन देन उरहनौ आवतिं दुकि-दुकि करतिं लरैया ।
॥ सूधी प्रीति[2] न जसुदा जानै, स्याम सनेही[3] ग्वैयाँ ।
सूर स्याम सुंदरहिं[4] लगानो, वह जानै बल भैया ॥३७१॥६८६॥

* राग केदारौ

‡ काहे कौं कलह नाध्यौ, दारुन दाँवरि बाँध्यौ,
कठिन लकुट लै तैं, त्रास्यौ मेरैं भैया ।
नाहीं कसकत मन, निरखि कोमल तन,
तनिक से दधि-काज, भलो री तू मैया ।
हौं तौ न भयौ री घर, देख्यौ तेरी यौं अर,
फोरतौ बासन सब, जानति बलैया ।
सूरदास हित हरि, लोचन आए हैं भरि,
बलहू कौं बल जाकौ सोई री कन्हैया ॥३७२॥६६०॥

राग बिलावल

§ काहे कौं जसोदा मैया, त्रास्यौ तैं बारौ कन्हैया,
मोहन हमारौ भैया, केतौ दधि पियतौ ।

---

* (ना) रामकली ।
† यह पद केवल (वे, ना, शा, का, गो, जौ) में है ।
① रिस—१ ।
॥ यह चरण (वे) में नहीं है ।
② प्रीति जसोदा—१, २, ६, ११, १५ । ③ सनेही गैया—२ । सनेह गवैया—११ । ④ सु दरिहिं लगाने—१, ६ ।
* (ना) ललित ।
‡ यह पद (वे, ना, ल, शा, का, गो, जौ) में है ।
§ यह पद (वे, स, ल, शा, का, गो, जौ) में है ।

हौं तौ न भयौ री घर, साँटी दीनी सर सर,
बाँध्यौ कर जेंवरिनि, कैसैं देखि जियतौ।
गोपाल सबनि प्यारौ, ताकौं तैं कीन्हौ प्रहारौ,
जाकौ है मोहूँ कौ गारौ, अजगुत कियतौ।
और होतौ कोऊ, बिन जननी जानतौ सोऊ,
कैसैं जाइ पावतौ, जौ आँगुरिनि छियतौ।
ठाढ़ौ बाँध्यौ बलबीर, नैननि गिरत नीर,
हरि[1] जू तैं प्यारौ तोकौं, दूध दही घियतौ।
सूर[2] स्याम गिरिधर, धरा-धर हलधर,
यह छबि सदा थिर, रहौ मेरैं जियतौ ॥३७३॥६६१॥

* राग सोरठ

† जसुदा तोहिं बाँधि क्यौं आयौ।
कसक्यौ नाहिं नैंकु मन[3] तेरौ, यहै कोखि कौ जायौ।
सिव बिरंचि महिमा नहिं जानत, सो गाइनि सँग धायौ।
तातैं[4] तू पहचानति नाहीं, कौन पुन्य तैं पायौ!
कहा भयौ जो[5] घर कैं लरिका, चोरी माखन खायौ?
इतनी[6] कहि उकसारत बाहैं, रोष सहित बल धायौ।
अपनैं कर सब बंधन छोरे, प्रेम सहित उर लायौ।
सूर सुबचन मनोहर कहि-कहि अनुज सूल बिसरायौ ॥३७४॥६६२॥

---

① हरि क डाटो केतो दधि पियतौ—३। ② सूरदास गिरिधरन धरनीधर हलधर—१, १५। सूर स्याम गिरिधरनि धरनीधर—३। सूर गिरिधरन धरनीधर हलधर—११।

* (ना) सारग। (क) धनाश्री।

† यह पद (वे, ना, स, ल, शा, का, गो, क, जौ) में है।

③ तन तेरौ यह काहि कहि खिझायौ—१, ११। मन तेरौ यह है मेरौ जायौ—२। मन तेरौ इन्हे कोषि कौ जायो—३। मन तेरो याही को है जायो—१४। ④ ताकौं—२, ३। ⑤ मन मोहन भैया—२, ३। ⑥ इतनी कहत रसिक मनि तबहीं—१, ६, ११, १५।

* राग सोरठ

काहे कौं हरि इतनौ त्रास्यौ ।
सुनि री मैया, मेरैं भैया, कितनौ गोरस नास्यौ ।
जब रजु सौं कर गाढै बाँधे, छर-छर मारी साँटी ।
सूनैं घर बाबा नँद नाहीं, ऐसैं करि हरि डाँटी ।
और नैंकु छूवै देखै स्यामहिं, ताकौ करौं निपात ।
तू जो करै बात, सोइ साँची, कहा कहौं[1] तोहिं मात ।
ठाढे बदत बात सब हलधर, माखन प्यारौ तोहि ।
ब्रज-प्यारौ, जाकौ मोहिं गारौ, छोरत काहे न ओहि[2] ।
काकौ ब्रज, माखन दधि काकौ, बाँधे जकरि कन्हाई[3] ।
सुनत सूर हलधर की बानी[4] जननी सैन बताई ॥३७५॥६६३॥

* राग सारंग

सुनहु बात मेरो बलराम ।
करन देहु इनकी मोहिं पूजा,[5] चोरी प्रगटत नाम ।
तुमहीं कहौ, कमी काहे की, नव-निधि मेरैं धाम ।
मैं बरजति, सुत जाहु कहूँ जनि, कहि हारी दिन[6] जाम ।
तुमहुँ मोहिं अपराध लगायौ माखन प्यारौ स्याम ।
सुनि मैया तोहिं छाँड़ि कहौं किहिं को राखै तेरैं[7] ताम ।
तेरी सौं उरहन लै आवतिं झूठहिं ब्रज की बाम ।
सूर स्याम अतिहीं अकुलाने कब के बाँधे दाम ॥३७६॥६६४॥

---

* (ना) नट । (क, पू) सारंग ।
① करौ तोहि मात—१ । कहौं तोहिं बात—२ । ② जोहि—२, ३, ६, १४, १७ । ③ बनाई—२, ३, ६, १४, १७ । ④ बातैं—१, ११, १२ । * (ना) नट । (गो) गौरी । ⑤ सेवा—१, ११, १२ । सोभा- ६ । ⑥ निज—३ । ⑦ मेरौ ताम—१, ११ । तेरौ नाम- २, १४ ।

* राग सारंग

कहा करौं हरि बहुत खिझाई ।
सहि न सकी, रिसही रिस भरि गई, बहुतै ढीठ कन्हाई ।
मेरौ कह्यौ नैंकु नहिँ मानत, करत आपनी टेक ।
भोर होत उरहन लै आवतिँ, ब्रज की बधू अनेक ।
॥ फिरत जहाँ तहँ दुंद[1] मचावत घर न रहत छन एक ।
सूर स्याम त्रिभुवन कौ कर्त्ता, जसुमति[2] गही निज टेक ॥३७७॥६६५॥

* राग गूजरी

जसोदा कान्हहु तैं दधि प्यारौ ?
डारि देहि कर मथत मथानी, तरसत नंद-दुलारौ ।
दूध-दही-माखन लै वारौं, जाहि करति तू गारौ ।
कुम्हिलानौ मुख-चंद देखि छबि, कोह न नैंकु निवारौ !
ब्रह्म, सनक, सिव ध्यान न पावत, सेा ब्रज गैयनि चारौ ।
सूर स्याम पर बलि-बलि जैऐ, जीवन-प्रान हमारौ ॥३७८॥६६६॥

× राग रामकली

जसोदा ऊखल बाँधे स्याम ।
मन मोहन बाहिर हो छाँड़े, आपु गई गृह-काम ।
दह्यौ मथति, मुख तैं कछु बकरति[3] गारी दै[4] लै नाम ।
घर-घर डोलत माखन चोरत, षट-रस मेरैं धाम ।

---

* (ना) सूहौ । (का) सोरठ ।

॥ (ना, कां, रा, श्या) में इस चरण के स्थान पर यह चरण है—काल डरत जाके डर भारी सुर नर असुर जितेक ।

① धूम—१४ । ② जसुमति कहति जनेक—१, ३, ६, ६, ११, १५, १७ । मातु कहति जिनि (जन) एक—१६, १६ ।
(ना) सूहौ । (गो) रामकली ।

× (ना) बिलावल ।
③ हुँकरति—२, १६, १६ । बकती—६ १७ । ④ दै-दै—१, ३, ६, ११, १४, १७ । लै-लै—२ ।

ब्रज के लरिकनि मारि भजत हैं, जाहु तुमहु बलराम ।
सूर स्याम ऊखल सौं बाँधे, निरखतिं ब्रज की बाम ॥३७६॥६६७॥

* राग गौरी

निरखि श्याम हलधर मुसुकाने ।
को बाँधै, को छोरै इनकौं, यह[1] महिमा येई पै जाने ।
उतपति-प्रलय करत हैं येई, सेष सहस-मुख सुजस बखाने ।
जमलार्जुन तरु तोरि उधारन, कारन करन[2] आपु मन माने ।
असुर सँहारन, भक्तनि तारन, पावन-पतित कहावत बाने ।
सूरदास प्रभु भाव-भक्ति के, अति हित जसुमति हाथ बिकाने ॥३८०॥६६८

* राग धनाश्री

† जसुमति, किहिं यह सीख दई ।
सुतहिं बाँधि तू मथति मथानो, ऐसी निठुर भई ।
हरैं बोलि जुवतिनि कौं लीन्हौ, तुम[3] सब तरुनि नई ।
लरिकहिं त्रास दिखावत रहिऐ, कत मुरझाइ गई ।
मेरे प्रान-जिवन-धन माधौ, बाँधे बेर[4] भई ।
सूर स्याम कौं त्रास दिखावति, तुम कहा कहति दई ॥३८१॥६६६॥

× राग गौरी

हरि चितए जमलार्जुन के तन ।
अबहीं आजु इन्हैं उद्धारौं, ये हैं मेरे[5] निज जन ।
इनहीं के हित भुजा बँधाई, अब बिलंब नहिं लाऊँ ।

---

* (ना, क) सार ग । (के कां, पू) सोरठी ।

① अपनी महिमा आपै जानै —२ । ② ये महिमा अपनी येइ जानै—१८ । करन करत—१, ६, ११,१५, १९ । करन सबै—१६ । (रा) गौरी । (श्या०) गूजरी ।

† यह पद (के, पू) में नहीं है ।

③ सुन—१, ११, १५ । ④ निठुर भई—२ ।

× (ना) देवसाष । (क) धनाश्री ।

⑤ मेरेई जन—१, ११, १५

परस करौं तन, तरुहिँ गिराऊँ, मुनिवर-साप मिटाऊँ ।
ये सुकुमार, बहुत दुख पायौ, सुत[1] कुबेर के तारौं ।
सूरदास प्रभु कहत मनहिँ मन, यह[2] बंधन निरवारौं॥३८२॥१०००॥

* राग धनाश्री

तबहिँ स्याम इक बुद्धि उपाई ।
जुवती गईँ धरनि सब अपनैँ, गृह-कारज जननी अटकाई ।
आपु गए जमलार्जुन-तरु-तर, परसत पात उठे झहराई ।
दिए गिराइ धरनि दोऊ तरु सुत कुबेर के प्रगटे आई ।
दोउ कर जोरि करत दोउ अस्तुति, चारि भुजा तिन्ह[3] प्रगट दिखाई ।
सूर धन्य ब्रज जनम लियौ हरि, धरनी की आपदा नसाई ॥३८३॥१००१॥

* राग बिलावल

धनि गोबिँद जो गोकुल आए ।
धनि-धनि नंद, धन्य निसि-बासर, धनि जसुमति जिन[4] श्रीधर जाए ।
धनि-धनि बाल-केलि जमुना-तट, धनि बन सुरभी-बृंद चराए ।
धनि यह समौ, धन्य ब्रज-बासी, धनि-धनि बेनु मधुर धुनि गाए ।
धनि-धनि अनख, उरहनौ धनि-धनि, धनि माखन, धनि मोहन खाए ।
धन्य सूर ऊखल तरु, गोबिँद हमहिँ हेतु धनि भुजा बँधाए ॥३८४॥१००२॥

× राग सोरठ

धन्य-धन्य ऋषि-साप हमारे ।
आदि अनादि निगम नहिँ जानत, ते हरि प्रगट देह ब्रज धारे ।

---

① सनकादिक सुत तारौं—३, ६, १४, १७ । ② कर—१, ३, ६, ११, १७, १६ । * (ना) देवगिरी । ③ धर—२ । धरि—१६ । * (ना) देवगिरी । (रा) ललित । ④ जिन उर हरि जाए—२ । जिन उर धरि जाए—३ । धनि श्रीधर जाए—६, ११ । जिन गोद खिलाए—१४, १६ । × (ना) संकराभरन । (का, के, क, का, पू, रा, श्या) कान्हरा ।

धन्य नंद, धनि मातु जसोदा, धनि आँगन खेलत भए बारे।
धन्य स्याम, धनि दाम बँधाए, धनि ऊखल, धनि माखन-प्यारे।
दीन-बंधु करुना-निधि हौ, प्रभु, राखि लेहु हम सरन तिहारे।
सूर स्याम कैं चरन सीस धरि, अस्तुति करि निज धाम[1] सिधारे॥३८५॥१००३

* राग बिलावल

यहै जानि गोपाल बँधाए।
साप-दग्ध ह्वै सुत कुबेर के, आनि भए तरु जुगल सुहाए।
ब्याज[2] रुदन लोचन जल ढारत, ऊखल दाम सहित चलि आए।
बिटप[3] भंजि, जमलार्जुन तारे, करि अस्तुति गोबिंद रिझाए।
तुम बिनु कौन दीन खल तारै, निरगुन सगुन रूप धरि आए।
सूरदास प्रभु के गुन गावत, हरषवंत निज पुरी सिधाए॥३८६॥१००४॥

* राग रामकली

तरु दोउ धरनि गिरे[4] भहराइ।
जर सहित अरराइ कै, आघात सब्द सुनाइ।
भए चकित लोग ब्रज के, सकुचि रहे डराइ।
कोउ रहे आकास देखत, कोउ रहे सिर नाइ।
घरिक लौं जकि रहे जहँ-तहँ, देह-गति बिसराइ।
निरखि जसुमति अजिर देखै, बँधे[5] नाहिँ कन्हाइ।
बृच्छ दोउ धर परे देखे, महरि कीन्ह पुकार।
अबहिँ आँगन छाँड़ि आई, चप्यौ तरु की डार।

---

① बास—११। * (ना) देसकाल। (का, रा, श्या) धनाश्री। ② कमलनयन—२। ब्याकुल रुदन—६, १७। ③ खैँचि ताहि—२, ३। तरुअरि भंजि—६, १७। * (ना) सारंग। ④ परे—१, ११, १५। ⑤ जहँ बँधे सु कन्हाइ—१४।

मैं अभागिनि, बाँधि राखे, नंद-प्रान-अधार।
सोर सुनि नँद-द्वार आए, बिकल गोपी ग्वार।
देखि तरु सब अति डराने, हैं बड़े बिस्तार।
‖ गिरे कैसैं, बड़ौ अचरज, नैं कु नहीं बयार।
दुहूँ तरु बिच स्याम बैठे, रहे ऊखल लागि।
भुजा छोरि उठाइ लीन्हे, महर हैं बड़भागि।
¶ निरखि जुवती अंग हरि के, चोट जनि कहुँ लागि।
¶ कबहुँ बाँधति कबहुँ मारति, महरि बड़ी अभागि।
नैन जल भरि ढारि जसुमति, सुतहिं कंठ लगाइ।
जरै रिस जिहिं तुमहिं बाँध्यो, लगै मोहिं बलाइ।
नंद सुनि मोहिं कहा कहैंगे, देखि तरु दोउ आइ।
मैं मरौं, तुम कुशल रहौ दोउ, स्याम-हलधर भाइ।
०/० आइ घर जो नंद देखे, तरु गिरे दोउ भारि।
०/० बाँधि राखति सुतहिं मेरे, देत महरिहिं गारि।
तात कहि[1] तब स्याम दौरे,[2] महर लियो अँकवारि।
कैसैं[3] उबरे बृच्छ-तर[4] तैं सूर है बलिहारि ॥३८७॥१००५॥

* राग नट

† मोहन हौं तुम ऊपर वारी।
कंठ लगाइ लिए,[5] मुख चूमति, सुंदर स्याम बिहारी।

‖ यह चरण (ना, स, का, के, गो, जौ, पू) में नहीं है।
¶ ये चरण (ना, रा, श्या) में नहीं हैं।
%ये चरण (ना, रा, श्या) में नहीं है।

① हित बस—१४। ② धाए—२, ३, ६, १७। ③ चूम आनन सूर प्रभु को बाल सा अनुहारि—६, १७। ④ कृष्ण तरु तैं—१, १४।
* (का, रा) जैतश्री। (श्या) धनाश्री।
† यह पद (के, पू) में नहीं है।
⑤ कियो मुख चुंबन सुंदर स्याम मुरारी—२, १६, १८, १६।

काहे कौं ऊखल सौं बाँध्यौ, कैसी मैं महतारी।
अतिहिं उतंग बयारि न लागत, क्यौं टूटे तरु भारी।
बारंबार बिचारति[1] जसुमति, यह लीला अवतारी।
सूरदास स्वामी को महिमा, कापै[2] जाति बिचारी ॥३८८॥१००६॥

* राग सारंग

अब घर काहू कैं जनि जाहु।
तुम्हरैं आजु कमी काहे की, कत तुम अनतहिं खाहु।
बरै जेंवरी जिहिं तुम बाँधे, परै[3] हाथ भहराइ।
नंद मोहिं अतिहीं त्रासत हैं, बाँधे कुँवर कन्हाइ।
रोग[4] जाउ मेरे[5] हलधर के, छोरत हो तब स्याम।
सूरदास प्रभु खात फिरौ जनि, माखन-दधि तुव धाम ॥३८९॥१००७

* राग सारग

ब्रज-जुवती स्यामहिं उर लावतिं।
बारंबार निरखि कोमल तनु, कर जोरतिं, बिधि कौं जु मनावतिं।
कैसैं बचे अगम तरु कैं तर, मुख चूमतिं, यह कहि पछितावतिं।
उरहन लै आवतिं जिहिं कारन, सेा सुख फल पूरन करि पावतिं।
सुनौ महरि, इनकौं तुम बाँधति, भुज गहि बंधन चिन्ह दिखावतिं।
सूरदास[6] प्रभु अति रति नागर, गोपी हरषि हृदय लपटावतिं ॥३९०॥१००८॥

यमलार्जुन उद्धार की दूसरी लीला

× राग बिलावल

ग्वालि उरहनौ भोरहिं ल्याई। जसुमति कहँ तेरौ[7] गयौ कन्हाई।

---

(१) विचारि जसोदा—१,११, १५। निहारि जसोदा—३। (२) कैसें जाति बिसारी—१६।

* (ना) रामकली।

(३) बरै—१, २, ३, ६ १७, १६। (४) बेगि—१४। (५) अपने हलधर की—१, ३, ६, ११, १५।

(ना) बिभास।

(६) सूर स्याम को अति तन कोमल जसुमति दया न आवति—६, १७।

× (ना) बिभास।

(७) कुँवर—२।

भलौ काम तैं सुतहिं पढ़ायौ। बारे ही तैं मूँड़ चढ़ायौ।
माखन मथि भरि धरी कमोरी। अबहीं सो[1] हरि लै गयौ चोरी।
यह सुनतहिं जसुमति रिस मानी। कहाँ गयौ कहि सारँगपानी।
खेलत तैं औचक हरि आए। जननी बाहँ पकरि बैठाए।
मुख देखत जसुमति तब[2] जान्यौ। माखन बदन कहाँ लपटान्यौ।
फिरि देखैं तो ग्वारिनि पाछैं। माता मुख चितवत नहिं आछैं।
चोरी के सब भाव बताए। माता सँटिया द्वैक लगाए।
माखन खान जात पर घर कौ। बाँधत तोहिं नैंकु नहिं धरकौ।
बाहँ गहे ढूँढति फिरै डोरी। बाँधौं तोहिं सकै को छोरी।
बाँधि पची डोरी नहिं पूरै। बार-बार खीझै, रिस-झूरै।
घर-घर तैं जेंवरि लै आईं। मिस ही मिस देखन कौं धाईं।
चकित भई देखैं ढिग ठाढो। मनौ चितेरैं लिखि-लिखि काढी।
जसुमति जोरि-जोरि रजु बाँधै। अंगुर द्वै-द्वै जेंवरि साधै।
जब जानी जननी अकुलानी। आपु बँधायौ सारँगपानी।
भक्त-हेत दाँवरी बँधाई। तब[3] जमलार्जुन की सुधि आई।
माता हेत जनहिं सुखकारी। जानि बँधाए श्री बनवारी।
मुख जम्हाइ त्रिभुवन दिखरायौ। चकित कियौ तुरतहिं बिसरायौ।
बाँधि स्याम बाहिर लै आई। गोरस घर-घर खात चुराई।
ऊखल सौं गहि बाँधे कन्हाई। नितहिं उरहनौ सह्यौ न जाई।
इक कहि जाति एक फिरि आवै। रैनि-दिवस तू मोहिं खिझावै[4]।
माखन दधि तेरैं घर नाहीं[5]। धाम भर्‌यौ, चोरी करि खाही।

---

(१) मोहन—१, ११, १५। (३) सनकादिक सुत की सुधि आई—३, ६, १४, १७। नचावै—२, ३, ६, १४, १७।
(२) पहिचानौ—१, ११, १५। (४) (५) माहीं—२।

नव लख धेनु दुहत घर मेरैं। केते ग्वाल रहत गउ[1] घेरे।
मथतिं नंद-घर सहस मथानी। ताकैं सुत चोरी की बानी।
मोसौं कहति आनि जब नारी। बोलि जात नहिं लाजनि मारी।
नंद महर की करत नन्हाई। बिरध बयस सुत भयौ कन्हाई।
तुम्हरे गुन सब नीके जाने। नित बरज्यौ, कबहूँ नहिं माने।
कोउ छोरै जनि ढीठ कन्हाई। बाँधे दोउ भुज ऊखल लाई।
भवन-काज कौं गई नँदरानी। आँगन छाँड़े स्याम[3] बिनानी।
उरहन देत ग्वालि जे आई। तिन्हैं दियौ जसुदा बहुराई[4]।
चलौं सबै मिलि सोचत मन मैं। स्यामहिं गहि बाँध्यौ इक छिन मैं।
हँसत बात इक कही कि नाहीं। ऊखल सौं बाँध्यौ सुत बाहीं।
कहा कहौं वा छबि कौ माई। बाँबी पर अहि करत लराई।
कान्ह-बदन अतिहीं कुम्हिलायौ। मानौ कमलहिं हिम तरसायौ।
डर तैं दीरघ नैन चपल अति। बदन-सुधा-रस मीन करत गति।
यह सुनि और जुवति सब आईं। जसुमति बाँधे कतहिं कन्हाई।
भलो बुद्धि तेरैं जिय उपजी। ज्यौं-ज्यौं दिनी भई त्यौं निपजी।
छोरहु स्याम करहु मन लाहौ। अति निरदई भईं तुम का हौ!
देखौ स्याम-ओर नँदरानी। सकुचि रह्यौ मुख सारँगपानी।
बाहिर बाँधि सुतहिं बैठारौ। मथति दही माखन तोहिं प्यारौ।
छाँड़ि देहु बहि जाइ मथानी। सौंह दिवावति छोरहु आनी।
हाँसी करन सबै तुम आईं। अब छोरौं नहिं कुँवर कन्हाई।
तुमहौं मिलि रसबाद बढ़ायौ। उरहन दै-दै मूँड़ पिरायौ।

---

① घर—१, ११, १५। ② करि मानी—२। ③ सारँगपानी —१, १७। ④ बहराई—१, ११, १५। भुराई—२। बौराई—१, १७। बुराई—१४।

सबहिनि गोधन सौंह दिवाई। चितै रहे मुख कुँवर कन्हाई।
कब तुमकौं मैं बोलि बुलाई। केहि कारन तुम धाई आईं।
॥ यह सुनि बहुरि चलीं बिरुझाई[1]। कहा करौं बलि जाउँ कन्हाई।
मूरख[2] कौं कोउ कहा सिखावै। याकी मति कछु कहत न आवै।
नारि गईं फिरि भवन आतुरी। नंद-घरनि अब भई चातुरी।
ओछी बुद्धि जसोदा कीन्ही। याकी जाति अबै हम चीन्ही।
यहै कहति अपनैं घर आईं। मानै नहीं कितौ समुझाईं।
मथति जसोदा दही मथानी। तबहिं कान्ह ऐसी मति ठानी।
भक्त-बछल हरि अंतरजामी। सुत[3] कुबेर के ये दोउ नामी[4]।
इहिं अवतार कह्यौ इन तारन। इनकौ दुख अब करौं निवारन।
जो जिहिं ढँग तिहिं ढँग सब लाए। जमला-अर्जुन पै प्रभु आए।
बृच्छ जीव ऊखल लै अटक्यौ। आगैं निकसि नैंकु गहि झटक्यौ।
अररात दोउ बृच्छ गिरे धर। अति आघात भयौ ब्रज-भीतर।
भए चकित सब ब्रज के बासी। इहिं अंतर दोउ कुँवर प्रकासी।
संख चक्र कर सारँग धारी। भगत-हेत प्रगटे बनवारी।
देखि दरस मन हरष बढायौ। तुमहिं बिना प्रभु कौन सहायौ।
धनि ब्रज कृष्न जहाँ बपुधारी। धनि जसुमति ब्रह्महिं अवतारी।
धन्य नंद, धनि-धनि गोपाला। धन्य-धन्य गोकुल की बाला।
धन्य गाइ, धनि द्रुम बन चारन। धनि[5] जमुना हरि करत बिहारन।

॥ (क) में इस युग्म के स्थान पर यह युग्म है—कहा करौं बलि जाउँ कन्हाई। हमरे बस न तुम्हारी माई।

(१) मुरझाई—१, २, ११, १५। (२) सीखे को—११। (३) सनकादिक सुत—३, ६, १४, १७। (४) कामी—१४। (५) धनि जन्म—२। धन्य जमुन—६, १७।

॥ धन्य उरहनौ प्रातहिँ ल्याई । धनि माखन चोरत जदुराई[1] ।
॥ धनि सो जन ऊखल गढ़ि ल्यायौ । धन्य दाम भुज कृष्न बँधायौ ।
गदगद कंठ बचन मुख भारी । सरन राखि लै गर्ब - प्रहारी ।
बार-बार चरननि परे धाई । कृपा करी भक्तनि सुखदाई ।
साधु-साधु कहि श्रीमुख बानी । बिदा भए इहिँ[2] भाँति बखानी ।
जमलार्जुन कौं तारि पठाए । नंद-द्वार दोउ बृच्छ गिराए ।
निकसि जसोदा आँगन आई । दुहूँ बृच्छ-बिच बचे कन्हाई ।
दौरि परे ब्रज के नर-नारी । नंद-द्वार कछु होत गुहारी ।
देखे आनि बृच्छ दोउ डारे । ये गुन जसुमति आहिँ तुम्हारे ।
तुरत छोरि ऊखल तैँ ल्याए । देखत जननि नैन भरि आए ।
ब्रज[3] -देवता कोउ है री माई । जहाँ तहाँ सो होत सहाई ।
प्रथम पूतना मारन आई । पय पीवत वह[4] तहाँ नसाई ।
तृनावर्त्त लै गयौ उड़ाई । आपुहिँ गिरयौ सिला पर आई ।
कागासुर आवत नहिँ जान्यौ । सुनी[5] कहत ज्यौं लेइ परान्यौ ।
¶ सकटासुर पलना ढिग आयौ । को जानै किहिँ ताहि गिरायौ ।
कौन-कौन करबर हैँ[6] टारे । जसुमति बाँधि अजिर लै डारे ।
बहुतै उबरयौ आजु कन्हाई । ऊपर बृच्छ गिरे भहराई ।
कहा कहौं न कहत बनि आवै । तुरत आइ हरि कौन बचावै ?

॥ इन दो युग्मों के स्थान पर (ना) में यह युग्म है—धनि उरहनौ प्रातहिँ आए । धनि दाम भुज करन बँधाए ।

(१) दिविराई—६, ६, १४, १७ । (२) सनकादि—३, ६, १४ १७ । (३) ब्रज देह हरि की है माई—१, ३, ६, ६, ११, १४, १७ । (४) हरि तुरत—२ । (५) नैन गहत जिय लेइ परान्यौ—१६, १६ ।

¶ अन्य प्रतियों में इस युग्म के उपरांत ये दो युग्म और मिलते हैं—खेलत मैँ केसी कौं मारयौ । घींचि तोरि तिहिँ धरनि पछारयौ । ग्वालन संग गए गोचारन । तहाँ बकासुर लाग्यौ मारन ।

(६) हरि—१, ११, १६ ।

सबहिनि[1] पेलि[2] करत मन भाई। पुन्य नंद कैँ बचे कन्हाई।
मुख चूमतिँ लै-लै उर लाए। जुवतिनि किए आपु मन भाए।
लै जननी सुत कंठ लगावति। चोरी की बातैँ समुझावति।
मैँ रिस ही रिस करति लाल सौँ। भुज बाँधे मन हँसत ख्याल सौँ।
मैँ[3] बरजे तुम करत अचगरी। उरहन कौँ ठाढ़ी रहैँ सिगरी।
बार-बार तन देखति माई। गिरत बृच्छ कहुँ चोट न आई।
कहत स्याम मैँ अतिहिँ डरान्यौ। ऊखल तर मैँ रह्यौ छपान्यौ।
बात सुतहिँ पूछति नँदरानी। कान्ह कहै मुख डर की बानी।
हरि के चरित कहा[4] कोउ जानै। जसुमति अति बालक करि मानै।
अखिल ब्रह्मंड जीव के दाता। माखन कौँ बाँधति है माता।
गुन अपार अबिगत अबिनासी। सेा प्रभु घर-घर घोष-बिलासी।
ऊखल बँध्यौ जु हेत भगत के। येइ माता येइ पिता जगत के।
जमलार्जुन कौँ मोच्छ कराए। पुत्र-हेत जसुदा-ग्रह आए।
ऐसे हरि जन के सुखकारी। परगट रूप चतुर्भुज-धारी।
जेा जिहिँ भाव भजै, प्रभु तैसे। प्रेम बस्य दुष्टनि कौँ नैसे।
सूरदास यह लेाला गावै। कहत सुनत सबकैँ मन भावै।
जेा हरि चरित ध्यान उर राखै। आनँद सदा दुखित-दुख नाखै ॥३६१॥१००६॥

* राग मलार

निगम[5] सार देखेा गेाकुल हरि।
जाकौ दूरि[6] दरस देवनि कौँ, सेा बाँध्यौ जसुमति ऊखल धरि।

---

(१) सब मिलि कहति बात मन भाई—२। (२) मिलि इक मत मन भाई—१४। (३) मेरे जेा—१, ११, १५। मैँ बाँधे—१६। (४) कथा नहिँ—१, ११, १५। *(ना) मालकौस। (के, पू) भैरव। (को, श्या) जैतश्री। (रा) धनाश्री। (५) स्वरूप देखि—१, ११। (६) दरस देवनि कौ दुर्लभ—११।

चुटकी दै-दै ग्वालि नचावति, नाचत कान्ह बाल[1]-लीला करि ।
जिहिँ डर भ्रमत पवन, रवि-ससि, जल, सेा[2] करै टहल लकुटिया सौं डरि ।
छीरसमुद्र सयन संतत जिहिँ, माँगत दूध पतौषी दै भरि ।
सूरदास गुन के गाहक हरि, रसना गाइ अनेक गए तरि ॥३६२॥१०१०॥

* राग सोरठ

जाकौ ब्रह्मा अंत न पावै ।
तापै नंद की नारि जसोदा, घर की टहल करावै ।
सेष, सनक, नारद, गनेस, मुनि, जाके गुन नित गावैं ।
निसि-बासर खेाजत पचिहारैं, मनसा ध्यान न आवै ।
धनि गेाकुल, धनि-धनि ब्रज-बनिता, निरखत स्याम बधावै ।
सूरदास प्रभु प्रेमहिँ कैं बस, संतनि दरस दिखावैं ॥३६३॥१०११॥

* राग बिलावल

गेाबिँद, तेरेा सरूप निगम नेति गावैं ।
भक्ति के बस स्याम सुँदर, देह धरे आवैं ।
जेागी जन ध्यान धरैं, सपनेहुँ नहिँ पावैं ।
नंद-घरनि बाँधि-बाँधि, कपी ज्यौं नचावैं ।
गेापी जन प्रेमातुर, तिनकौं सुख दीन्हेा ।
अपनैं-अपनैं रस[3] बिलास, काहू नहिँ चीन्हेा ।
स्रुती, सुमृति, सब पुरान, कहत मुनि बिचारी ।
सूरदास प्रेम-कथा, सबही तैं न्यारो ॥३६४॥१०१२॥

---

① आपु—१६। ② सेा क्यौं डरै लकुटिया के डर—१,११, १५।
* (ना) मालकौस । * (ना) सेकराभरन ।
③ सुख बिलास—१६, १८, १६ ।

राग सारंग

† भूखौ भयौ आजु मेरौ बारौ ।
भोरहिँ ग्वारि उरहनौ ल्याई, उहिँ यह कियौ पसारौ ।
पहिलेहिँ रोहिनि सौँ कहि राख्यौ, तुरत करहु जेवनार ।
ग्वाल-बाल सब बोलि लिए मिलि, बैठे नंद-कुमार ।
भोजन बेगि ल्याउ कछु मैया, भूख लगी मोहिँ भारी ।
आजु सबारैँ कछु नहिँ खायौ, सुनत हँसी महतारी ।
रोहिनि चितै रही जसुमति-तन, सिर धुनि-धुनि पछितानी ।
परसहु बेगि, बेर कत लावति, भूखे सारँगपानी ।
बहु ब्यंजन बहु भाँति रसोई, षटरस के परकार ।
सूर स्याम हलधर दोउ भैया, और सखा सब ग्वार ॥३६५॥१०१३॥

राग सारंग

‡ नंद-भवन मैँ कान्ह अरोगैँ । जसुदा ल्यावैँ षटरस भोगैँ ।
आसन दै, चौकी आगैँ धरि । जमुना-जल राख्यौ[1] झारी भरि ।
कनक-थार मैँ हाथ धुवाए । सत्रह सौ भोजन तहँ आए ।
लै-लै धरति सबनि के आगैँ । मातु परोसै जो हरि माँगैँ ।
खीर, खाँड़, घृत, लावनि[2] लाडू. । ऐसे होहिँ न अमृत खाँडू. ।
और लेहु कछु सुत ब्रज-राजा । लुचुई, लपसी, घेवर, खाजा ।
पेठापाक, जलेबी, कौरी[3] । गोँदपाक, तिनगरी[4], गिँदौरी ।

---

† यह पद (ना) मेँ नहीँ है ।
‡ यह पद (ना, ब्र, कां, रा, श्या) मेँ नहीँ है ।
① मेल्यौ—३, १४ । ② लावज—१, ११, १५ । ③ पेड़ा—१, ११, १४ । केरा—३ । ④ तिनगनी—३, १४ । चिनगिनी—६, १७ ।

गुझा, इलाचीपाक, अमिरती। सीरा साजौ लेहु ब्रजपती।
छोलि धरे खरबूजा, केरा। सीतल बास[1] करत अति बेरा।
खरिक, दाख अरु गरी, चिरारी। पिंड बदाम लेहु बनवारी।
बेसन-पुरी, सुख-पुरी लीजै। आछौ दूध कमल-मुख पीजै।
मैया मोहिँ और क्यौं प्यावै। धौरी को पय मोहिँ अति भावै।
बेला भरि हलधर कौं दीन्हौ। पीवत पय अस्तुति बल कीन्हौ।
ग्वाल सखा सबहीं पय अँचयौ। नीकैं ओटि जसोदा रचयौ।
दोना मेलि धरे हैं खूआ[2]। हौंस होइ तौ ल्याऊँ पूआ।
मीठे अति कोमल हैं नीके। ताते, तुरत चभोरे घी के।
फेनो, सेव, अँदरसे प्यारे। लै आवौं जेंवौ मेरे बारे।
हलधर कहत ल्याउ री मैया। मोकौं दै नहिँ लेत कन्हैया।
जसुमति हरष भरी लै परसति। जेंवत हैं अपनी रुचि सौं अति।
कान्ह माँगि सीतल जल लीयौ। भोजन बीच नीर लै पीयौ।
भात पसाइ रोहिनी ल्याई। घृत सुगंधि तुरतै दै ताई।
नीलावती चाँवर दिव-दुर्लभ। भात परोस्यौ माता सुरलभ।
मूँग मसूर उरद चनदारी। कनक-फटक[3] धरि फटकि पछारी।
रोटी, बाटी, पोरी, झोरी। इक कोरी इक घोव चभोरी।
गायौ-घृत भरि धरी[4] कटोरी। कछु खायौ[5] कछु फेटैं छोरी।
मीठैं तेल चना की भाजी। एक मकूनी दै मोहिँ साजी।
मीठे चरपर उज्ज्वल कूरा[6]। हौंस होइ तौ ल्याऊँ[7] मूरा।

---

① वायु—१। ② खजुआ—१, ११, १५। जुआ—३, ६, १४, १७। ③ बरन—१, ३, ११, १४। ④ धरी कचोरी—१, ११। दही कचोरी—३। धरयौ कचोरी—६, १७। धरेउ कचेरेउ—१४। ⑤ मायौ—३, ६, १४, १७। ⑥ कारा—१, ३, ६, १७। कौर—१४। ⑦ ल्याऊँ औरा—१। मागौ मौरा—६, १७। मागे और—१४।

मूँग-पकौरा पनौ पतबरा। इक कोरे इक भिजे गुरबरा।
पापर बरी मिथौरि फुलौरी। कूर बरी काचरो पिठौरी।
बहुत मिरच दै किए निमोना। बेसन के दस बीसक दोना।
बन कौरा पिडीक चिचिंडी। सीप पिँड़ारू कोमल भिडी।
चौराई लाल्हा अरु पोई। मध्य मेलि निबुआनि निचोई।
रुचिर लजालु[1] लोनिका फाँगो। कढी कृपालु दूसरैं माँगो।
सरसौं, मेथी, सोवा, पालक। बथुआ गाँधि लियो जु उतालक।
हींग हरद म्रिच छौंके तेले। अदरख और आँवरे मेले।
सालन सकल कपूर सुबासत। स्वाद लेत सुंदर हरि ग्रासत।
आँब आदि दै सबै सँधाने। सब चाखे गोबर्धन-राने।
कान्ह कह्यौ हौं मातु अघानौ। अब मोकौं सीतल जल आनौ।
अँचवन लै तब धोए कर मुख। सेष न बरनै भोजन कौ सुख।
उज्ज्वल पान, कपूर, कस्तुरी। आरोगत मुख की छबि रूरी।
चंदन अंग सखनि कैं चरच्यौ। जसुमति के सुख कौं नहिं परच्यौ।
जूठनि माँगि सूर जन लीन्हौ। बाँटि प्रसाद सबनि कौं दीन्हौ।
जन्म-जन्म बाढ्यौ[2] जूठनि कौ। चेरौ नंद महर के धन[3] कौ॥३६६॥१०१४

राग धनाश्री

† आरोगत हैं श्रीगोपाल।
षटरस सौंज बनाइ जसोदा, रचिकै कंचन-थाल।
करति बयारि निहारति हरि-मुख, चंचल नैन बिसाल।
जो भावै सो माँगि लेहु तुम, माधुरि मधुर रसाल।

---

① लजान—१, ३, ६, ११, १७। ② चाह्यौ—६, १७। बाध्यौ—११। ③ घर कौ—१, ३, ६, ११, १४, १७। † यह पद केवल (गो) में है।

जे दरसन सनकादिक दुर्लभ, ते देखति[1] ब्रज-बाल ।
सूरदास प्रभु कहति जसोदा, चिरजीवौ नँद-[2] लाल ॥३६७॥१०१५

* राग कान्हरौ

मोहिँ कहतिँ जुवती सब चोर ।
खेलत कहूँ रहौं मैँ बाहिर, चितै रहतिँ सब मेरी ओर ।
बोलि लेतिँ भीतर घर अपनैँ, मुख चूमतिँ, भरि लेतिँ अँकोर ।
माखन हेरि देतिँ अपनैँ कर, कछु कहि बिधि सौँ करतिँ निहोर ।
जहाँ मोहिँ देखतिँ, तहँ टेरतिँ, मैँ नहिँ जात दुहाई तोर ।
सूर स्याम हँसि कंठ लगायौ, वै तरुनी कहँ बालक मोर ॥३६८॥१०१६॥

* राग केदारौ

जसुमति[3] कहति कान्ह मेरे प्यारे, अपनैँ ही आँगन तुम खेलौ ।
बोलि लेहु सब सखा संग के, मेरौ कह्यौ कबहुँ जिनि पेलौ[4] ।
ब्रज-बनिता सब चोर कहतिँ तोहिँ, लाजनि सकुचि जात मुख[5] मेरौ ।
आजु मोहिँ बलराम कहत हे, झूठहिँ नाम धरति[6] हैँ तेरौ ।
जब मोहिँ रिस लागति तब त्रासति, बाँधति, मारति, जैसैँ चेरौ ।
सूर हँसति ग्वालिनि दै तारी, चोर नाम कैसैँ हु[7] सुत फेरौ ॥३६९॥१०१७॥

गो-दोहन राग बिलावल

† धेनु दुहत हरि देखत ग्वालनि ।
आपुन बैठि गए तिनकैँ सँग, सिखवहु मोहिँ कहत गो-दानि ।

---

① दुरि देखत हैँ ब्रजबाल । ② नद के लाल ।

* (ना) देवसाख । (रा) धनाश्री ।

(ना) देवसाख । (का, के, क, जौ, का, पू, रा) कान्हरा ।

③ जसुमति कहति कान्ह सौ मेरे—१ । ④ ठेलौ—६, १४, १७ । ⑤ मन मेरौ—१, २, ११ । ⑥ लेत हैं—१ । ⑦ कैसैँ हूँ फेरौ—२ । कैसैँ हूँ हरि फेरौ—१४ । कैसेउ तुम—१६ ।

† यह पद (ना, बृ, का, रा, श्या) मेँ नहीँ है ।

काल्हि तुम्हैं गो दुहन सिखावैं, दुहीं सबै अब गाइ
भोर दुहौ जनि नंद-दुहाई, उनसौं कहत सुनाइ।
बड़ौ भयौ अब दुहत रहौंगौ, अपनी धेनु निबेरि।
सूरदास प्रभु कहत सौंह[1] दै, मोहिं लीजौ तुम टेरि ॥४००॥१०१८॥

* राग कान्हरौ

† मैं दुहिहौं मोहिं दुहन सिखावहु।

कैसैं गहत दोहनी घुटुवनि, कैसैं बछरा थन[2] लै लावहु।
कैसैं लै नोई पग बाँधत, कैसैं लै[3] गैया अटकावहु।
कैसैं धार दूध की बाजति, सोइ सोइ बिधि तुम मोहिं बतावहु।
निपट भई अब साँझ कन्हैया, गैयनि पै कहुँ चोट लगावहु।
सूर स्याम सौं कहत ग्वाल सब, धेनु दुहन प्रातहिं[4] उठि आवहु॥४०१॥१०१९

बृंदावन-प्रस्थान

❀ राग सारंग

‡ महर-महरि कैं मन यह आई।

गोकुल होत[5] उपद्रव दिन प्रति, बसिऐ बृंदावन मैं जाई।
सब गोपनि मिलि सकटा साजे, सबहिनि के मन मैं यह भाई[6]।
सूर जमुन-तट डेरा दीन्हे, पाँच बरष के कुँवर कन्हाई ॥४०२॥१०२०॥

× राग बिलावल

§ जागौ हो तुम नंद-कुमार।

हौं बलि जाउँ मुखारबिंद की, गो सुत मेलौ खरिक सम्हार।

---

① सीख दै—३, १७।
* (के, पू) बिलावल।
† यह पद (ना, बृ, क, कां, रा, श्या) में नहीं है।
② थनहिं लगावहु—१, ११, १५। ③ लै या पग—१, ११, १५। लै या पग—३। ④ तुम प्रातहिं आवहु—६, १७।
❀ (ना) रामकली।
‡ यह पद (स, का, के, क, पू) में नहीं है।
⑤ बहुत—१, ११, १५।
⑥ आई—२, १६।
× (ना) विभास। (रा) भैरव।
§ यह पद (का, के, पू) में नहीं है।

अब[1] लौं कहा सोए मन मोहन, और बार तुम उठत सबार ।
बारहिं बार जगावति माता, अंबुज-नैन भयौ भिनुसार ।
दधि मथि कै माखन बहु दैहौं[2] सकल[3] ग्वाल ठाढ़े दरबार ।
उठि कै मोहन बदन दिखावहु, सूरदास के प्रान-अधार ॥४०३॥१०२१॥

राग बिलावल

† जागहु हो ब्रजराज हरी ।
लै मुरली आँगन ह्वै देखौ, दिनमनि उदित भए द्विघरी ।
गो-सुत गोठ बँधन सब लागे, गो-दोहन की जून टरी ।
मधुर[4] बचन कहि सुतहिं जगावति, जननि जसोदा पास खरी ।
भोर भयौ दधि-मथन होत, सब ग्वाल सखनि की हाँक परी ।
सूरदास प्रभु दरसन कारन, नींद छुड़ाई चरन धरी ॥४०४॥१०२२॥

* राग बिलावल

जागहु लाल ग्वाल सब टेरत ।
कबहुँ पितंबर डारि बदन पर, कबहुँ उघारि जननि तन हेरत ।
सोवत मैं जागत मनमोहन, बात सुनत सबकी, अवसेरत[5] ।
बारंबार जगावति माता, लोचन खोलि पलक पुनि गेरत[6] ।
पुनि कहि उठी जसोदा मैया, उठहु कान्ह रवि किरनि उजेरत ।
सूर स्याम, हँसि चितै मातु-मुख, पट कर लै, पुनि-पुनि मुख फेरत ॥४०५॥१०२३॥

❀ राग सूहा बिलावल

‡ जननि जगावति उठौ[7] कन्हाई । प्रगट्यौ तरनि, किरनि महि[8] छाई ।

---

① इतनौ—१, ११ । ② दीन्हौ—१, ११, १५, १६ । ③ संग सखा ठाढे सिह दुवार—१४ ।
† यह पद केवल (वे, गो, जौ) में है ।
④ निठुर—१, ११, १५ । * (ना) विभास ।
⑤ अवटेरत—१, ६, ११ । ⑥ घेरत—१, २, ३, ११, १५ फेरत—१६ ।
(ना) विभास ।
‡ यह पद (का) में नहीं है ।
⑦ कुँवर—६, १७ । ⑧ गन—१, २, ३, ११, १५ . मधि —६, १७ ।

आवहु चंद्र-बदन दिखराई। बार-बार जननी बलि जाई।
सखा द्वार सब तुमहिँ बुलावत। तुम कारन हम धाए आवत।
सूर स्याम उठि दरसन दीन्हौ। माता देखि मुदित मन कीन्हौ ॥४०६॥१०२४

* राग रामकली

† दाऊ जू, कहि स्याम पुकारचौ।
नीलांबर कर[1] ऐँचि लियौ हरि, मनु बादर तैँ चंद उजारचौ।
हँसत-हँसत दोउ बाहिर आए, माता लै जल बदन पखारचौ।
दतवनि लै दुहुँ करी मुखारी, नैननि कौ आलस जु बिसारचौ।
माखन[2] लै दोउनि कर दीन्हौ, तुरत मथ्यौ, मीठौ अति भारचौ।
सूरदास प्रभु खात परस्पर, माता अतर-हेत बिचारचौ ॥४०७॥१०२५॥

* राग बिलावल

‡ जागहु-जागहु नंद-कुमार।
॥ रवि बहु चढ़्यौ, रैनि सब निघटी, उचटे सकल किवार।
वारि वारि जल पियति जसोदा, उठि मेरे प्रान-अधार।
घर-घर गोपी दह्यौ बिलोवैँ, कर-कंकन झंकार।
¶ साँझ दुहन तुम कह्यौ गाइकौं, तातैँ होति अबार।
सूरदास[3] प्रभु उठे तुरत हीँ, लीला अगम अपार ॥४०८॥१०२६॥

---

* (ना) धनाश्री।
† यह पद (का) में नहीं है।
① पद—१, २, ३, ११, १५, १७। ② खाहु—१, ११, १५, १७। १६।
✡ (ना) गुनकली।
‡ यह पद (के, पू) में नहीं है।
॥ (ना, स, का, रा, श्या) में इसके पूर्व यह चरण मिलता है—
सोवत कहा सुदामा ठाढे सग सखा सब द्वार।
¶ यह चरण (ना, स, का, रा, श्या) में नहीं है।
③ सूरदास गिरिधर की लीला महिमा अगम अपार—२, ३।

राग बिलावल

† तनक कनक की दोहनी, दै-दै री मैया ।
तात[1] दुहन सीखन कह्यौ, मोहिँ धौरी गैया ।
अटपट आसन बैठि कै, गो-थन कर लीन्हौ ।
धार अनतहीं देखि कै, ब्रजपति हँसि दीन्हौ ।
घर-घर तैं आईं[2] सबै, देखन ब्रज-नारी ।
चितै चतुर[3] चित हरि लियौ, हँसि गोप-बिहारी ।
बिप्र बोलि आसन दियो, कह्यौ[4] बेद उचारी[5] ।
सूर स्याम सुरभी दुही, संतनि हितकारी ॥४०६॥१०२७॥

* राग देव गधार

‡ बछरा चारन चले गोपाल ।
सुबल, सुदामा अरु श्रीदामा, संग लिए सब[6] ग्वाल ।
॥ बछरनि कौं बन माँझ छाँड़ि सब खेलत खेल अनूप ।
दनुज एक तहँ आइ पहूँच्यो धरे बत्स कौ रूप ।
हरि हलधर दिसि चितै कह्यौ तुम जानत हौ इहिँ बीर ।
कह्यौ आहि दानव इहिं मारौं धारे बत्स-सरीर ॥
तब हरि सींग गह्यौ इक कर सौं इक कर सौं गह्यौ पाइ ।
थोरेक ही बल सौं छिन भीतर दीनौ ताहि गिराइ ।

---

† यह पद (वे, ल शा, का, के, गो, जै, पू) में है ।

① नद तात दूहन कह्यौ दुहि दौ री गैया–१,१७ । ② निकसी–१, १७ । ③ चोरि—१, ११, १५ । ④ करि—१, ११, १५ । ⑤ बिचारी—१, १७ ।

* (ना) धनाश्री ।

‡ यह पद (का, के, पू) में नहीं है ।

⑥ ब्रजबाल—३ ।

॥ यह चरण (वे, जै) में नहीं है । (गो) में इसके स्थान पर यह पंक्ति है :—

'खुर करि अवनि उड़ाइ
पक बहु देखत काल सरूप ।'

और (ना) में यह पाठ मिलता है —

'तुरतहिं जानि गए मन मोहन
प्रभु त्रिभुवन के भूप ।'

गिरत धरनि पर प्रान निकसि गए फिरि नहिँ आयो स्वास।
सूरदास ग्वालनि सँग मिलि हरि लागे करन बिलास ॥४१०॥१०२८

गो-चारण

* राग रामकली

आजु मैं गाइ चरावन जैहौं।
बृंदाबन के भाँति-भाँति फल अपने कर मैं खैहौं।
ऐसी बात[1] कहौ जनि बारे, देखौ अपनी भाँति।
तनक-तनक पग चलिहौ कैसैं, आवत ह्वै है राति।
प्रात जात गैया लै चारन, घर आवत हैं साँझ।
तुम्हरो कमल बदन कुम्हिलैहै[2], रैंगत घामहिँ माँझ।
तेरी सौं मोहिँ घाम न लागत, भूख नहीं कछु नेक।
सूरदास प्रभु कह्यौ न मानत, परचौ आपनी टेक ॥४११॥१०२९

* राग रामकली

† मैया हौं गाइ चरावन जैहौं।
तू कहि महर नंद बाबा सौं, बड़ौ भयौ न डरैहौं।
रैता, पैता, मना, मनसुखा, हलधर संगहिँ रैहौं।
बंसीबट तर ग्वालनि कैँ सँग, खेलत अति सुख पैहौं।
ओदन भोजन दै दधि काँवरि,[3] भूख लगे तैँ खैहौं।
सूरदास है साखि जमुन-जल सोंह देहु जु नहैहौं ॥४१२॥१०३०॥

---

* (रा) गौरी।
① अबहिँ—१,११। भाँति—१६। ② मुरझैहै—६, १४, १७।
(ना) ललित। (क, का, रा, श्या) सारंग।
† यह पद (के, पु) में नहीं है।
③ गाँठौ—२, ३। गाढौ—१६।

* राग रामकली

चले सब गाइ चरावन ग्वाल ।
हेरी टेर सुनत लरिकनि[1] के, दौरि गए नँदलाल ।
फिरि इत-उत जसुमति जो देखै, दृष्टि न परै कन्हाई ।
जान्यौ जात ग्वाल सँग दौरचौ, टेरति जसुमति धाई ।
जात चल्यौ गैयनि के पाछैं, बलदाऊ कहि टेरत ।
पाछैं आवति जननी देखी, फिरि-फिरि इत कौं हेरत ।
बल देख्यौ मोहन कौं आवत, सखा किए सब ठाढे ।
पहुँची आइ जसोदा रिस भरि, दोउ भुज पकरे गाढे ।
हलधर कह्यो, जान दै मो सँग, आवहिं आज सवारे ।
सूरदास बल सौं कहै जसुमति, देखे रहियौ प्यारे ॥४१३॥१०३१॥

* राग बिलावल

खेलत कान्ह चले ग्वालनि सँग ।
जसुमति यहै कहत घर आई हरि कीन्हे कैसे रँग ।
प्रातहिं तैं लागे याही ढँग अपनी टेक करचौ[2] है ।
देखौ जाइ आजु बन कौ सुख, कहा परोसि धरचौ है ।
माखन-रोटो अरु सीतल जल, जसुमति दियौ पठाइ ।
सूर नंद हँसि कहत महरि सौं, आवत कान्ह[3] चराइ ॥४१४॥१०३२॥

× राग सारंग

बृंदाबन देख्यौ नँद-नंदन, अतिहिं परम सुख पायौ ।
जहँ-जहँ[4] गाइ चरतिं, ग्वालनि सँग, तहँ-तहँ[5] आपुन धायौ ।

---

* (ना) धनाश्री । (रा) भैरो ।
(१) ग्वालनि—२ ।
(ना) जैतश्री । (रा) देवगधार ।
(२) परयो है—१, १', १४ ।
(३) गाइ—२ । धेन—३ ।
× (ना) देवगधार । (के, क, पू) कान्हरा । (गो) बिलावल।
(४) जहँ-जहँ बाल गाइ सँग डोलत—१ । जह-जहँ गाइ ग्वाल सँग डोलत—११ । (५) डोलत—१६ ।

बलदाऊ मोकौं जनि छाँड़ौ, संग तुम्हारैं ऐहौं।
कैसेहुँ आजु जसोदा छाँड़्यौ, काल्हि न आवन पैहौं।
सोवत मोकौं टेरि लेहुगे, बाबा नंद-दुहाई।
सूर स्याम बिनती करि बल सौं, सखनि समेत सुनाई॥४१५॥१०३३॥

राग सारंग

† हरि जू कौं ग्वालिनि भोजन ल्याई।

बृंदा बिपिन बिसद जमुना-तट, सुचि ज्यौनार बनाई।
सानि-सानि दधि भात लियौ कर, सुहृद सखनि कर देत।
मध्य-गोपाल-मंडली मोहन, छाक बाँटि कै लेत।
देवलोक देखत सब कौतुक, बाल-केलि अनुरागे।
गावत सुनत सुजस[1] सुख करि मन,[2] सूर दुरित दुख भागे॥४१६॥१०३४॥

राग गौरी

† बन तैं आवत धेनु चराए।

संध्या समय साँवरे मुख पर, गो-पद-रज लपटाए।
बरह-मुकुट कैं निकट लसति लट, मधुप मनौ रुचि पाए।
बिलसत सुधा जलज[3]-आनन पर, उड़त न जात उड़ाए।
बिधि-बाहन-भच्छन की माला, राजत उर पहिराए।
एक[4] बरन बपु नहिं बड़ छोटे, ग्वाल बने इक धाए।
सूरदास बलि लीला प्रभु की, जीवत जन जस गाए॥४१७॥१०३५॥

---

† यह पद (बे, ल, का, गो, जौ) में है।

① सुनत—१, ११। ② मनौ—१, ११।

‡ यह पद (बे, ल, शा, का, गो, जौ, रा) में है। इसमें केवल सात ही चरण मिलते हैं। ज्ञात होता है कि छठा चरण लेखक के प्रमाद से छूट गया है।

③ जलद—१, ११। ④ इक बपु रही नाहिं बड़ छोटे ग्वाल बने इक धाए—१। नाहिं बडे छोट छोटा सिसु मंडल ग्वाल बने इक धाएँ—१८।

* राग गौरी

जसुमति दौरि लिए हरि कनियाँ।
आजु गयौ मेरौ गाइ चरावन, हौं बलि जाउँ निछनियाँ[1]।
मो कारन कछु आन्यौ है[2] बलि, बन-फल तोरि नन्हैया।
तुमहिं मिलैं मैं अति सुख पायौ, मेरे कुँवर कन्हैया।
कछुक खाहु जो भावै मोहन, दै री माखन-रोटी।
सूरदास प्रभु जीवहु जुग-जुग हरि हलधर की जोटी ॥४१८॥१०३६॥

राग गौरी

† माखन[3]-रोटी ताती-ताती लेहु कन्हैया बारे।
मन[4] मैं रुचि उपजावै, भावै, त्रिभुवन के उजियारे।
और लेहु पकवान, मिठाई, बहु बिधि ब्यंजन सारे।
औट्यौ दूध, सद्य दधि, घृत, मधु, रुचि सौं खाहु लला रे।
तब हरि उठिकै करी बियारी, भक्तनि-प्रान-पियारे।
सूर स्याम भोजन करि कै, सुचि जल सौं बदन पखारे ॥४१९॥१०३७

* राग सारंग

मैं अपनी सब गाइ चरैहौं।
प्रात होत बल कैं सँग जैहौं, तेरे कहैं न रैहौं[1]।
ग्वाल बाल गाइनि के भीतर, नैंकहुँ डर नहिं लागत।
आजु न सोवौं नंद-दुहाई, रैनि रहौंगौ जागत।

---

* (रा) कल्यान।
① बचनिया—२। ② ताहीं—२, ३, १६।
† यह पद केवल (स, क) में है।
③ माखन रोटी लेहु कान्ह बारे—१४। ④ ताती ताती रुचि उपजावै त्रिभुवन के उजियारे—१४।
(ना) कल्यान। (रा) देवगधार।
⑤ भुरैहौ—१, ११

और ग्वाल सब गाइ चरैहैं मैं घर बैठो रैहौं ?
सूर स्याम तुम सोइ रहौ अब, प्रात जान मैं दैहौं ॥४२०॥१०३८॥

* राग केदारौ

बहुतै दुख हरि सोइ गयौ री ।
साँझहिं तैं लाग्यौ इहिं बातहिं, क्रम-[1] क्रम बोधि लयौ री ।
एक दिवस गयौ गाइ चरावन, ग्वालनि संग सबारै ।
अब तौ सोइ रह्यौ है कहि कै, प्रातहिं कहा बिचारै ।
यह तौ सब बलरामहिं लागै, सँग लै गयौ लिवाइ ।
सूर नंद यह कहत महरि सौं, आवन दै फिरि[2] धाइ ॥४२१॥१०३९॥

राग कान्हरौ

‡ पौढे स्याम जननि गुन गावत ।
आजु गयौ मेरौ गाइ चरावन कहि-कहि मन हुलसावत ।
कौन पुन्य तप तैं मैं पायौ ऐसौ सुंदर बाल ।
हरषि-हरषि कै देति सुरनि कौं सूर सुमन की माल ॥४२२॥१०४०॥

* राग बिलावल

करहु कलेऊ कान्ह पियारे ।
माखन-रोटी दियौ हाथ पर, बलि-बलि जाउँ[3] जु खाहु लला रे ।
टेरत ग्वाल द्वार हैं ठाढ़े, आए तब के होत सबारे ।
खेलहु जाइ घोष के भीतर, दूरि कहूँ जनि जैयहु बारे[4] ।

---

* (ना) कल्यान ।
† यह पद (ल) में नहीं है ।
(१) क्रम-क्रम तैं (करि) मन—२, ३, ११, १५, १७, १९ ।
(२) बहराइ—२, १९ ।
‡ यह पद केवल (स, क) में है ।
५ (ना) धनाश्री । (का, स्या) सोरठ ।
(३) जाउँ हो खाहु लला रे—१, ३, ११, १४ । (४) प्यारे—१, २, ९, १४ ।

टेरि उठे बलराम स्याम कौं, आवहु जाहिँ[1] धेनु बन चारे।
सूर स्याम कर जोरि मातु सौं, गाइ चरावन कहत हहा रे ॥४२३॥१०४१॥

* राग बिलावल

मैया री मोहिँ दाऊ टेरत।
मोकौं बन-फल तोरि देत हैं, आपुन गैयनि घेरत।
और ग्वाल सँग कबहुँ न जैहौं, वै सब मोहिँ खिझावत।
मैं अपने दाऊ सँग जैहौं, बन देखैं सुख पावत।
आगैं दै पुनि ल्यावत घर कौं, तू मोहिँ जान न देति।
सूर[2] स्याम जसुमति मैया सौं हा-हा करि कहै केति ॥४२४॥१०४२

* राग सारंग

बोलि लियौ बलरामहिँ जसुमति।
लाल सुनौ हरि के गुन, काल्हिहिँ तैं लँगरई करत अति।
स्यामहिँ जान देहि मेरैं सँग, तू काहैं डर मानति।
मैं अपने ढिग तैं नहिँ टारौं जियहिँ प्रतीति न आनति।
हँसी महरि बल की बतियाँ सुनि, बलिहारी या मुख की।
जाहु लिवाइ सूर के प्रभु कौं, कहति बीर के रुख की ॥४२५॥१०४३॥

× राग नट

अति आनंद भए हरि धाए।
टेरत ग्वाल-बाल सब आवहु, मैया मोहिँ पठाए।

---

① धाइ—१, १६।
* (ना) जेतश्री। (के, क, का, पू, रा स्या) सारग।
② सूर स्याम गयनि सौं अति हित खेलन सौं अति हेत—२, १६, १८, १६। सूर स्याम कहि जसुमति सो मोहि गैयन सो अति हेत—३।
(ना) गजरी।
× (ना) देवगिरी। (क,रा) सारग।

उत तैं सखा हँसत सब आवत,[1] चलहु कान्ह बन देखहिँ[2]।
बनमाला तुमकौं पहिरावहिँ, धातु-चित्र तनु रेखहिँ[3]।
गाइ लईं सब बेरि घरनि तैं, महर गोप के बालक।
सूर स्याम चले गाइ चरावन, कंस उरहिँ के सालक॥४२६॥१०४४॥

बकासुर बध

* राग सारंग

बन-बन फिरत चारत धेनु।
स्याम हलधर संग सँग बहु गोप-बालक-सेनु।
तृषित भए सब जानि मोहन, सखनि टेरत बेनु।
बोलि ल्यावहु सुरभि-गन, सब चलौ जमुन-जल देनु।
सुनत हीं सब हाँकि ल्याए, गाइ करि इक ठैन।
हेरि दै-दै ग्वाल-बालक, कियौ जमुन-तट गैन।
बकासुर रचि रूप माया, रह्यौ छल करि आइ।
चोंच इक पुहुमी लगाई, इक अकास समाइ।
आगैं बालक जात हे ते पाछैं आए धाइ।
स्याम सौं वे कहन लागे, आगैं एक बलाइ।
नितहिँ आवत सुरभि लीन्हे, ग्वाल गो-सुत संग।
कबहुँ नहिँ इहिँ भाँति देख्यौ आजु कैसौ रंग।
मनहिं मन तब कृष्न भाष्यौ, यह बकासुर अंग।
चोंच फारि[4] बिदारि डारौं, पलक मैं करौं भंग।

---

① धावत—१६। ② देखहु—१, २, ३, ६, ११, १४। ③ रेखहु—१, २, ३, ११, *४। * (ना) धनाश्री। ④ चीरि—२, ६, १६, १८, १६।

निदरि चले गोपाल आगैं, बकासुर कैं पास।
सखा सब मिलि कहन लागे, तुम न जिय की आस।
अजहुँ नाहिं डरात मोहन, बचे कितनैं गाँस।
तब कह्यौ हरि, चलहु सब मिलि, मारि करहिं बिनास।
चले सब मिलि, जाइ देख्यौ, अगम तन बिकरार।
इत धरनि उत ब्योम कैं बिच, गुहा कैं आकार।
पैठि बदन बिदारि डार्‌यौ, अति भए बिस्तार।
मरत असुर चिकार पार्‌यौ, मार्‌यौ[1] नंद-कुमार।
सुनत धुनि सब ग्वाल डरपे अब न उबरै स्याम।
हमहिं बरजत गयौ, देखौ, किए कैसे काम।
देखि ग्वालनि बिकलता तब, कहि उठे बलराम।
बका-बदन बिदारि डार्‌यौ, अबहिं आवत स्याम।
सखा हरि तब टेरि लीन्हे, सबै आवहु धाय।
चोंच फारि बका सँहारौ, तुमहु करहु सहाय।
निकट आए गोप-बालक, देखि हरि सुख पाए।
सूर प्रभु के चरित अगनित, नेति निगमनि गाए ॥४२७॥१०४५॥

* राग सारंग

ब्रज मैं को उपज्यौ यह भैया।
संग सखा सब कहत परस्पर, इनके गुन अगमैया।
जब तैं ब्रज अवतार धर्‌यौ इन, कोउ[2] नहिं घात करैया।

---

① तारि—२। ② को नहिं घात तकैया—
* (ना) गौरी। २, ३।

तृनावर्त पूतना पछारी, तब अति रहे नन्हैया।
कितिक बात यह बका बिदारचौ, धनि जसुमति जिनि जैया।
सूरदास प्रभु की यह लीला, हम कत जिय पछितैया ॥४२८॥१०४६॥

* राग धनाश्री

बका बिदारि चले ब्रज कौं हरि।
सखा संग आनंद करत सब, अंग-अंग बन-धातु चित्र करि।
बनमाला पहिरावत स्यामहिँ बार-बार अँकवार भरत धरि।
कंस निपात करोगे तुमहीँ, हम जानी यह बात सही परि।
पुनि-पुनि कहत धन्य नँद जसुमति, जिनि इनकौं जनम्यौ सो धनि घरि।
कहत इहै सब जात सूर प्रभु, आनँद-आँसु ढरत लोचन भरि ॥४२९॥१०४७॥

* राग कान्हरौ

ब्रज-बालक सब जाइ तुरतहीँ, महर-महरि कैँ पाइ परे।
ऐसौ पूत जन्यौ जग तुमहीँ धन्य कोखि जिहिँ स्याम धरे।
गाइ लिवाइ गए बृंदाबन, चरत चलीँ जमुना-तट हेरि।
असुर एक खग-रूप धरि रह्यौ, बैठ्यौ तीर, बाइ मुख, घेरि।
चोंच एक पुहुमी करि राखी एक रह्यौ तो गगन लगाइ।
हम बरजत पहिलेहिँ हरि धायौ, बदन चीरि पल माँहिँ गिराइ।
सुनत नंद जसुमति चकित[1] चित चकित गोकुल के नर-नारि।
सूरदास प्रभु मन हरि लीन्हौ, तब जननी भरि लए अँकवारि ॥४३०॥

॥१०४८॥

---

* (ना) गौरी। (ना) परज। (१) सोचति चित—१, १७।

अघासुर-वध * राग धनाश्री

‡ नंदराइ-सुत लाड़िले, सब-ब्रज-जीवन-प्रान ।
‡ बार-बार माता कहै, जागहु स्याम सुजान ।
जसुमति लेति बलाइ, भोर भयौ उठौ कन्हाई ।
संग लिए सब सखा, द्वार ठाढे बल भाई ।
सुंदर बदन दिखाइ कै, हरौ नैन कौ तापु ।
नैन कमल मुख धोइ कछु करौ कलेऊ आपु ।
माखन-रोटी लेहु सद्य दधि रैनि जमायौ ।
षटरस के मिष्टान्न, सु जेँवहु जो रुचि आयौ ।
मो पै लीजै माँगि कै, जोइ-जोइ भावै तोहिँ ।
सँग जेँवहु बलराम कैँ, रुचि उपजावहु मोहिँ ।
तब हँसि चितए स्याम, सेज तैँ बदन उघारयौ ।
मानहुँ पय-निधि मथत, फेन फटि चंद उजारयौ ।
सखा सुनत देखन चले, मानहुँ चंद[1] चकोर ।
जुगल कमल मनु इंदु पर, बैठि रहे अति भोर ।
तब उठि आए कान्ह, मातु जल बदन पखारयौ ।
बोलि उठे बलराम, स्याम कत उठे सबारयौ ।
दाऊ जू कहि, हँसि मिले, बाहँ गही बैठाइ ।
माखन-रोटी सद दही, जेँवत रुचि उपजाइ ।
जल अँचयौ, मुख धोइ, उठे बल-मोहन भाई ।

---

* (ना) रामकली । (क) बिलावल ।

‡ ये दो चरण (ना, स, जौ, कां, पू, रा, स्या) के आरभ मे नही हैँ । किसी मे तीसरे चौथे, किसी मे पांचवे छठें चरणों की जगह रक्खे गए हैँ ।

(१) नैन—१, ३, ६, ११, १४, १७ ।

गाइ लईं सब घेरि, चले बन कुँवर कन्हाई ।
टेर सुनत बलराम की, आए बालक धाइ ।
लै आए सब जोरि[1] कै, घर तैं बछरा गाइ ।
सखनि कान्ह सौं कह्यौ, आजु बृंदाबन जैऐ ।
जमुना-तट तृन बहुत, सुरभि-गन तहाँ चरैऐ ।
ग्वाल गाइ सब लै गए, बृंदाबन समुहाइ ।
अतिहिं सघन बन देखिकै, हरषि उठे सब गाइ ।
कोउ टेरत, कोउ हाँकि सुरभि-गन, जोरि चलावत ।
कोऊ हेरी देत, परस्पर स्याम सिखावत ।
अंतरजामी कहत जिय, हमहिं सिखावत टेरि ।
कान्ह[2] कहत अब गाइ जे गईं सु लीजै फेरि ।
कोउ मुरली कोउ बेनु-सब्द, सृंगी कोउ पूरैं ।
कृष्न कियौ मन ध्यान असुर इक बसत अँधेरैं[3] ।
बालक बछरनि राखिहौं, एक बार लै जाउँ ।
कछुक जनाऊँ अपुनपौ, अब[4] लौं रह्यौ सुभाउ ।
असुर-कुलहिं संहारि, धरनि कौ भार उतारौं ।
कपट रूप रचि रह्यौ दनुज, इहिं तुरत पछारौं ।
गिरि समान धरि अगम तन, बैठ्यौ बदन पसारि ।
मुख भीतर बन घन नदी, छल[5] माया करि भारि ।

---

① घेरि कै—१, ११, १५ । ② स्याम कहत अब के गई (गए) पुनि धौ लीजौ फेरि—२, ६, ११, १५, १६, १८ । कान्ह कहत अब के गइया सब लीजै पुनि धौ फेरि—६, १७ । ③ अधूरै—१, २, ३, ६, ११, १४ । ④ अचल रहौ (रहै) तिहिं ठाउँ—१६, १८, १६ । ⑤ छंद—२, ३, ६, ११, १७ ।

पैठि गए मुख ग्वाल धेनु बछरा सँग लीने।
देखि महाबन[1] भूमि, हरे तृन-द्रुम कृत कीने।
कहन लगे सब अपुन मैं सुरभी चरैं अघाइ।
मानहुँ पर्वत-कंदरा, मुख सब गए समाइ।
जब मुख गए समाइ, असुर तब चाव[2] सकोरचौ।
अंधकार इमि भयौ मनहुँ निसि बादर जोरचौ[3]।
अतिहिं उठे अकुलाइ कै, ग्वाल बच्छ सब गाइ।
त्राहि-त्राहि करि कहि उठे, परे कहाँ हम आइ।
धीर-धीर कहि कान्ह, असुर यह, कंदर नाहीं।
अनजानत सब परे अघा-मुख-भीतर माहीं।
जिय लाग्यौ यह सुनत हीं, अब को सकै उबारि।
बातैं दूनी देह धरी, असुर न सक्यौ सम्हारि।
सबद करचौ आघात, अघासुर टेरि पुकारचौ।
रह्यौ अधर दोउ चाँपि, बुद्धि बल सुरति बिसारचौ।
ब्रह्म द्वार सिर[4] फोरि कै, निक. गोकुलराइ।
बाहिर आवहु निकसि कै, मैं करि लिय[5] सहाइ।
बालक बछरा धेनु सबै मन अतिहिं सकाने।
अंधकार मिटि गयौ देखि जहँ-तहँ अतुराने।
आए बाहिर निकसि कै, मन सब कियौ हुलास।
हम अजान कत डरत हैं, कान्ह हमारैं पास।

---

① मया (माया)—२, ३, ६, ११, १७। ② चोंच—१, १४। जाव—२। तारु—६, १७। ③ घेरयौ—१, ११। ④ फिर फाटि कै—१। सो फोरि कै—२।

धन्य कान्ह. धनि नंद, धन्य जसुमति महतारी।
धन्य लियौ अवतार, कोखि धनि, जहँ दैतारी।
गिरि-समान तन अगम अति, पन्नग की अनुहारि।
हम देखत पल एक मैं मारचौ दनुज प्रचारि।
हरि हँसि बोले बैन, संग जौ तुम नहिं होते?
तुम सब कियौ सहाइ, भयौ तब कारज मोते।
हमहुँ तुमहुँ मिलि बैठि बन, भोजन करैं[1] अघाइ।
बंसीबट भोजन बहुत, जसुमति दियौ पठाइ।
ग्वाल परम सुख पाइ, कोटि मुख करत प्रसंसा।
कहा बहुत जो भए, सपूतौ एकै बंसा।
चढ़ि बिमान सुर देखहीं, गगन रहे भरि छाइ।
जय-जय धुनि नभ करत हैं, हरषि पुहुप बरषाइ।
ब्रह्मा सुनी यह बात, अमर-घर-घरनि कहानी।
गोकुल लीन्हौ जन्म, कौन मैं यह नहिं जानी।
देखौं इनकी ब्रज लै, सोच परचौ मन माहिं।
सूर स्याम ग्वालनि लए, चले बंसीबट-छाहिं ॥४३१॥१०४६॥

* राग सोरठ

गोबिंद चलत देखियत नीके।
मध्य गोपाल मंडली राजत, काँधैं धरि लिए सीके।
बछरा-बृंद घेरि आगैं करि, जन-जन स्रृंग बजाए।
जनु बन कमल सरोवर तजि कै, मधुप उनींदे आए।

---

(१) करिए जाइ—१, ११, १५। करैं बनाइ—२, १६।

* (ना) कल्यान।

बृंदाबन प्रवेसि अघ मारयौ, बालक जसुमति, तेरैं ।
सूरदास प्रभु सुनत जसोदा, चितै बदन प्रभु केरैं ॥४३२॥१०५०॥

* राग बिलावल

आजु जसोदा जाइ[1] कन्हैया महा दुष्ट इक मारयौ ।
पन्नग-रूप गिले सिसु गो-सुत इहिं सब साथ उबारयौ ।
गिरि-कंदरा समान भयानक[2] जब अघ बदन पसारयौ ।
निडर गोपाल पैठि मुख-भीतर, खड[3]-खड करि डारयौ ।
याकैं बल हम बदत न काहुहिं, सकल भूमि तृन चारयौ ।
जीते सबै असुर हम आगैं, हरि[4] कबहूँ नहिं हारयौ ।
हरषि[5] गए सब कहत महरि सौं, अबहिं अघासुर मारयौ ।
सूरदास[6] प्रभु की यह लीला ब्रज[7] कौ काज सँवारयौ ॥४३३॥१०५१॥

* राग नट

जसुमति सुनि-सुनि[8] चकित भई ।
मैं बरजति बन जात कन्हैया, का धौं करै दई ।
कहाँ-कहाँ तैं उबरयौ मोहन, नैंकु न तऊ डरात ।
आपुन[9] कहा तनक सौ, बन मैं, सुनौं बहुत मैं घात ।

---

* (ना) ईमन । (कां, स्या) रामकली ।

① तेरे बालक इक अरिष्ट अति टारयौ—२ । तेरे बालक महा दुष्ट इक मारयौ—६, १७ । ② भयौ बड़—१, ३, ११, १५ । भयौ तन—२ । ③ बपु प्रचंड करि फारयौ—१६, १६ । ④ यह—१, ११ । वह—६, १७ । ⑤ बरष बितीत भयौ ता दिन कौ जबै अघासुर मारयौ—२ । ⑥ सूरदास प्रभु तुम्हरी महिमा—२ । ⑦ को को भुलइ न पारयौ—१, ३, ११ । को भूलै नहिं पारयौ—६, १७ । को कोऊ भुलै न पारयौ—१४ ।

(ना) कल्यान ।

⑧ के— । ⑨ आपु जे कही तनक सो बातैं सुनहु बनहु मैं घात—१ ११ । आपुन कहा तनक सौ बातैं सुनौ बनहू मैं घात—२, ३ । आपुन कहा तनक सौ बालक, बातैं सुनहु बहुत मैं घात—६ ।

मेरौ कह्यौ सुनौ[1] जो स्रवननि कहति जसोदा खोझत।
सूर स्याम कह्यौ बन नहिँ जैहौं, यह कहि मन-मन रीझत॥४३४॥१०५२॥

* राग गौरी

† अघा मारि आए नँदलाल।
ब्रज-जुवती सुनि कै उठि धाईं, घर-घर कहत फिरत सब ग्वाल।
निरखत बदन चकित भईं सुंदरि, मनहीं मन यह करि अनुमान।
कहतिं परस्पर, सत्य बात यह, कौन करै इनको सरि आन!
येई हैं रति-पति के मोहन, येई हैं हमरे पति-प्रान।
सूर स्याम जननी-मन मोहत, बार-बार माँगत कछु खान॥४३५॥१०५३॥

ब्रह्मा-बालक-वत्स-हरण

* राग नटनारायन

‡ बिधि मनहीं मन सोच परयौ।
गोकुल की रचना सब देखत, अति जिय माहिं डरयौ।
मैं बिरंचि बिरच्यौ जग मेरौ, यह कहि गर्ब बढ़ायौ।
ब्रज-नर-नारि, ग्वाल-बालक, कहि, कौनैं ठाटि रचायौ?
बृंदाबन, बट सघन बृच्छ तर, मोहन सबै बुलाए।
सखा संग मिलि करि बन-भोजन, बिधि मन भ्रम उपजाए।
धेनु रहीं बन[2] भूलि कहूँ ह्वै, बालक भ्रमत न पाए।
यातैं स्याम अतिहिं अतुराने, तुरत तहाँ उठि धाए।
बालक-बच्छ हरे चतुरानन, ब्रह्म-लोक पहुँचाए।
सूरदास प्रभु गर्ब बिनासन, नव कृत फेरि बनाए॥४३६॥१०५४॥

---

① सुने—२, ६, १४। नहीं है। है।
* (ना) कान्हरौ। (ना, के, क पू) नट। ② बन मैं भूली ह्वै—१, ११।
† यह पद (शा) में ‡ यह पद (ल) में नहीं

* राग धनाश्री

† हरष भए नँदलाल बैठि तरु छाहँ के । ध्रुव ।
बंसीबट अति सुखद, और द्रुम पास चहूँ हैं ।
सखा लिए तहँ गए, धेनु बन चरति कहूँ हैं ।
बैठि गए सुख पाइ कै, ग्वाल-बाल लिए साथ ।
अति[1] आनँद पुलकित हिऐं, गावत हरि-गुन-गाथ ।
अहिर लिए मधु-छाक, तुरत बृंदाबन आए ।
ब्यंजन सहस प्रकार, जसोदा बनै[2] पठाए ।
स्याम कह्यौ बन चलत हीं, माता सौं समुझाइ ।
उत तैं वे आए सबै, देखत हीं सुख पाइ ।
कान्ह देखि मधु-छाक, पुलकि अँग-अंग बढ़ायौ ।
हँसि-हँसि बोले तबै, प्रेम सौं जननि पठायौ ।
नीकैं पहुँचे आइ तुम, भलौ बन्या संजोग ।
बार-बार कह्यौ सखनि सौं, आजु करैं सुख-भोग ।
बन-भोजन बिधि करत, कमल के पात मँगाए ।
तोरे पात पलास, सरस दोना चहु लाए ।
भाँति-भाँति भोजन धरे, दधि-लवनी-मिष्टान्न ।

---

* (ना) सारंग । (क) बिलावल ।

† यह पद (क) मे नहीं है । (ना, स, क, जौ, का, रा, स्या) मे एक ही चरण ध्रुव रूप से लिखा है । पर (वे, का, के, गो, पू) मे दो-दो चरण ध्रुव रूप मे पाए जाते हैं । वे इस प्रकार है ।

हरष भए नँदलाल बैठि तरु छाहँ की । ग्वाल बाल सँग करत कुलाहल छाहँ (छाक) की — (वे, गो) । हरषि भए नँदलाल बैठि तरु छाह है । बंसीवट अलि सुखद ओर चहुँ पास है—(का) । हरष भए नँदलाल बैठि तरु छाहँ घना की । ग्वाल बाल सब संग चले जु बाट जमुना की—(के, पू) ।

इस संस्करण मे प्रथमोक्त प्रतियो का अनुसरण किया गया है ।

(१) काँवरि झोरी लए सखा हो आनि नवायो माथ—१४ ।
(२) बनहिं—१, २, ३, ११ दिए—१६ ।

बन फल लए मँगाइ कै, रुचि करि लागे खान।
बन-भोजन हरि करत संग मिलि सुबल सुदामा।
स्याम कुँवर परसेन महर-सुत अरु श्रीदामा।
स्याम सबनि मिलि खात हैं लै-लै कौर छुड़ाइ।
औरनि लेत बुलाइ ढिग, डहकि[1] आपु मुख नाइ।
ब्रह्मा देखि बिचारि सृष्टि[2] कोउ नई चलाई।
मोहिँ पठयौ जिहिँ सौंपि, ताहि कहिहौं कहा जाई।
देखौं धौं यह कौन है, बाल-बच्छ हरि लेउँ।
ब्रह्मलोक लै जाउँ[3] हरि, इहिँ बिधि करि दुख देउँ।
अंतरजामी नाथ, तुरत बिधि मन की जानी।
बालक द्वै दए पठै, धेनु बन कहूँ हिरानी।
जहाँ-तहाँ बन ढूँढि कै, फिरि आए हरि-पास।
सखा[4] सबनि बैठारि कै, आपुन गए उदास।
हरि लै बालक-बच्छ, ब्रह्मलोकहिँ पहुँचाए।
फिरि आए जो कान्ह, कहूँ कोऊ नहिँ[6] पाए।
प्रभु तबहीँ जान्यौ यहै, बिधि लै गयौ चोराइ।
जो[7] जिहिँ रँग जिहिँ रूप कौ, बालक बच्छ बनाइ।
तातैँ कीने और ब्रह्म हृद-नाल उपायौ।
अपनौ करि तिहिँ जानि कियौ ताकौ मन भायौ।

---

① आपु लेत मुख नाइ—२, १६। ② कही—२। ③ जाहैंगो—१, २, ६, ११, १४। ④ बुधि—१, ६, ११, १४। ⑤ स्याम सखनि—१, ११, १५। स्याम सबनि—३। ⑥ नाहिँ बतायो—६, १७। ⑦ प्रभु तबहीँ तेहिँ रग रूप के बालक बच्छ बनाइ—१४।

उद्धारन मारन छमी, मन हरि कीन्हौ ज्ञान।
अनजानैं बिधि यह करी, नए रचे भगवान।
वहै बुद्धि वहै प्रकृति, वहै पौरुष तन सब के।
वहै नाउ, वहै भाउ, धेनु बछरा मिलि रब के।
स्याम कह्यौ सब सखनि सौं, ल्यावहु गोधन घेरि।
संध्या कौ आगम[1] भयौ, ब्रज-तन हाँकौ फेरि।
सुनत ग्वाल, लै चले, धेनु ब्रज बृंदाबन तैं।
कान्हहिं बालक जानि डरे, सब ग्वाले मन तैं।
मध्य किए लै स्याम कौं, सखा भए चहुँ पास।
बच्छ-धेनु आगैं किए[2], आवत करत बिलास।
बाजत बेनु बिषान, सबै अपनैं रँग[3] गावत।
मुरली-धुनि, गो-रंभ, चलत पग धूरि उड़ावत।
मोर-मुकुट सिर सोहई, बनमाला पट पीत।
गो-रज मुख पर सोहई, मनहुँ चंद कन-सीत।
देखि हरषि ब्रजनारि, स्याम पर तन-मन वारतिं।
इकटक रूप निहारि, रहीं मेटत चित-आरति।
कहा कहैं छबि आजु की, मुख मंडित खुर-धूरि।
मानौ पूरन चंद्रमा, कुहर रह्यौ आपूरि।
गोकुल पहुँचे जाइ, गए बालक अपनैं घर।
गो-सुत अरु नर-नारि मिले, अति हेत लाइ गर।
प्रेम सहित वै मिलत हैं, जे[4] उपजाए आजु।

---

① समयो— ६, १७। ② करे—१६, १८। ③ मन— १६, १८। ④ जेउ (ज) सुत जायौ आज—१,३,११। जेउ सब जाए आज—६,१७।

जसुमति मिलि सुत सौं कहति, रैनि करत किहिँ काज।
मैं घर आवन कहौं, सखा सँग कोउ नहिँ आवैं।
देखत बन अति अगम डरौं वै मोहिँ डरपावैं।
बार-बार उर लाइकै, लै बलाइ, पछिताइ।
काल्हिहिँ तैं वेई सबै, ल्यावैं गाइ चराइ।
यह सुनि कै हरि हँसे, काल्हि मेरी जाइ बलैया।
भूख लगी मोहिँ बहुत, तुरतही दै कछु मैया।
माखन दीन्हौ हाथ कै, तब लौं तुम यह खाहु।
तातो जल है घाम को, तनक तेल सौं न्हाहु।
तब जसुमति गहि बाहँ, तुरत हरि लै अन्हवाए।
रोहिनि करि जेवनार, स्याम-बलराम बुलाए।
जेँवत अति रुचि पावहीँ, परुसति माता हेत।
जेँइ उठे अँचवन लियौ, दुहुँ कर बीरा देत।
स्याम उनींदे जानि, मातु रचि सेज बिछाई।
तापर पौढ़े लाल अतिहिँ मन हरष बढाई।
अघ-मर्दन, विधि-गर्ब-हत, करत न लागी बार।
सूरदास प्रभु के चरित, पावत कोउ न पार ॥४३७ ॥१०५५॥

राग सारंग

† कह्यो गोपाल चरत हैं गो-सुत हम सब बैठि कलेऊ कीजै।
सीतल छाहँ बृच्छ की सुंदर, निर्मल जल जमुना कौ पीजै।
भोजन करत सखा इक बोल्यौ, बछरू कतहूँ दूरि गए।

† यह पद (वे, शा, का, गो, जौ) में है।

जदुपति कह्यौ बेरि हौं आनौं, तुम जेंवहु निहचिंत भए।
चतुरानन बछरा लै गोए फिरि माधव आए तिहि ठाउँ।
बालक-बच्छ हरे लोकेस्वर, बार-बार टेरत लै नाउँ।
जान्यौ ब्रह्मा-छल मन मोहन, गोपी गाइ, बहुत दुख पैहैं।
तजिहैं प्रान सबै मिलि निस्चय, सुत जौ गृह कौं आजु न जैहैं।
वाही भाँति, बरन, बपु वैसेहिं, सिसु सब रचे नंद-सुत आन।
आगैं बछ, पाछैं ब्रज-बालक, करत चले मधुरैं सुर गान।
पूरब प्रीति अधिक ताहू तैं, करतीं ब्रज-बनिता अरु धेनु।
सूरज प्रभु अच्युत ब्रज-मंडल, घरहीं घर लागे सुख देनु॥४३८॥१०५६॥

* राग बिलावल

नंद महर के भावते[1], जागौ मेरे बारे[2]।
प्रात भयौ उठि देखिऐ, रवि किरनि उज्यारे।
ग्वाल-बाल सब टेरहीं, गैया बन चारन।
लाल उठौ मुख धोइऐ, लागी बदन उघारन।
मुख तैं पट न्यारौ कियौ, माता कर अपनैं।
देखि बदन चकित भई, सौंतुष की सपनैं।
कहा कहौं वा रूप की, को बरनि बतावै।
सूर स्याम के गुन अगम, नँद-सुवन कहावै॥४३९॥१०५७॥

राग रामकली

† लालहिं जगाइ बलि गई माता।
निरखि मुख-चंद-छबि, मुदित भई मनहिं मन, कहत आधैं बचन भयौ प्राता।

---

* (ना) विभास। (के, क,) सूहो। (को) कल्यान।

① लाड़िले—२, ३। ② प्यारे—२, १६, १८, ११।

† यह पद केवल (क तथा रागकल्पद्रुम) में है।

नैन अलसात अति, बार-बार जम्हात, कंठ लगि जात, हरषात गाता ।
बदन पोंछियौ जल जमुन सौं धोइ कै, कह्यौ मुसुकाइ, कछु खाहु ताता ।
दूध औट्यौ आनि, अधिक मिसिरी सानि, लेहु माखन पानि प्रान-दाता ।
सूर प्रभु कियौ भोजन बिबिध भाँति सौं, पियौ पय मोद करि घूँट साता॥४४०॥१०५८

* राग ललित

उठे नंद-लाल सुनत जननी मुख बानी ।
आलस भरे नैन, सकल सोभा की खानी ।
गोपी जन बिथकित ह्वै चितवतिँ सब ठाढ़ी ।
नैन करि चकोर, चंद-बदन प्रीति बाढ़ी ।
माता जल झारी लै, कमल-मुख पखारयौ ।
नैन[1] नीर परस करत आलसहिँ बिसारयौ ।
सखा द्वार ठाढ़े सब, टेरत हैँ बन कौं ।
जमुना[2] -तट चलौ कान्ह, चारन गोधन कौं ।
सखा सहित जेँवहु, मैँ भोजन कछु कीन्हौ ।
सूर स्याम हलधर सँग[3] सखा बोलि लीन्हौ ॥४४१॥१०५९॥

* राग बिलावल

† दोउ भैया जेँवत माँ आगैँ ।
पुनि-पुनि लै दधि खात कन्हाई, और जननि पै माँगैँ ।
अति मीठौ दधि आजु जमायौ, बलदाऊ तुम लेहु ।
देखौ[4] धौं दधि-स्वाद आपु लै, ता पाछैँ मोहिँ देहु ।

---

* (ना) रामकली । (कं, क, का, पू रा, स्या) बिलावल ।
(१) नीर सरस—२,३ । (२) जननी आइ बचन कह्यो राम स्याम घन को—१ । (३) सब —१,११,१५ । (ना) जैतश्री ।
(४) दधि कौ स्वाद—१६,१८, १९ ।
† यह पद (का) में नहीं है ।

बल मोहन दोउ जेंवत रुचि सौं, सुख लूटति नँदरानो।
सूर स्याम अब कहत अघाने, अँचवन माँगत पानी ॥४४२॥१०६०॥

* राग रामकली

† (द्वारैं) टेरत हैं सब ग्वाल कन्हैया, आवहु बेर भई।
आवहु बेगि, बिलम जनि लावहु, गैया दूरि गईं।
यह सुनतहिं दोऊ उठि धाए, कछु अँचयो कछु नाहिं।
कितिक दूर सुरभी तुम छाँड़ो, बन तौ पहुँचो नाहिं ?
ग्वाल कह्यो कछु पहुँची ह्वैहैं, कछु मिलिहैं मग माहिं।
सूरदास[1] बल मोहन भैया, गैयनि पूछत जाहिं ॥४४३॥१०६१॥

* राग बिलावल

‡ बन पहुँचत सुरभी लई जाइ।
जैहौ कहा सखनि कौं टेरत, हलधर संग कन्हाइ।
जेंवत[2] परखि लियो नहिं हमकौं, तुम अति करी चँड़ाइ।
अब हम जैहैं दूरि चरावन, तुम सँग रहै बलाइ।
यह सुनि ग्वाल धाइ तहँ आए, स्यामहिं अंकम लाइ।
सखा कहत यह नंद-सुवन सौं, तुम सब के सुखदाइ।
आजु चलौ बृंदाबन जैऐ, गैयाँ चरैं अघाइ।
सूरदास प्रभु सुनि हरषित भए, घर तैं छाँक मँगाइ ॥४४४॥१०६२

राग बिलावल

§ आजु चरावन गाइ चलौ जू, कान्ह, कुमुद बन जैऐ।

---

* (ना) गुनक्ली।
† यह पद (का) में नहीं है।
(1) स्याम—1, २, ३ ६, ११, १४, १७।
२ (ना) देवगंधार।
‡ यह पद (का) में नहीं है।
(2) जेवत बेर भई कछु हमकौं—२, ३।
§ यह पद केवल (ल, शा) में है।

सीतल कुंज कदम की छहियाँ, छाक छहूँ रस खैऐ।
अपनी-अपनो गाइ ग्वाल सब, आनि करौ इक ठौरी।
धौरी, धूमरि, राती, रौंछी, बोल[1] बुलाइ चिन्हौरो।
पियरी, मोरी, गोरी, गैनी, खैरी,[2] कजरो जेती।
दुलही, फुलही, भौंरी, भूरी, हाँकि[3] ठिकाई तेती।
बाबा नंद बुरो मानैंगे, और जसोदा मैया।
सूरजदास जनाइ दियो है, यह कहिकै बल भैया ॥४४५॥१०६३॥

* राग बिलावल

† चले सब बृंदाबन समुहाइ।
नंद-सुवन सब ग्वालनि टेरत, ल्यावहु गाइ फिराइ।
अति आतुर ह्वै फिरे सखा सब, जहँ-तहँ आए धाइ।
पूछत ग्वाल, बात किहिँ कारन, बोले कुँवर कन्हाइ।
सुरभी[4] बृंदाबन कौं हाँकौ, औरनि लेहु बुलाइ।
सूर स्याम यह कही सबनि सौं, आपु चले अतुराइ ॥४४६॥१०६४।

* राग धनाश्री

‡ गैयनि घेरि सखा सब ल्याए।
देख्यौ कान्ह जात बृंदाबन, यातैं मन अति हरष बढ़ाए।
आपुस मैं सब करत कुलाहल, धौरी, धूमरि धेनु बुलाए।
सुरभी हांकि देत सब जहँ-तहँ, टेरि-टेरि हेरो सुर गाए।

---

① बोली बुलाही चौरी।—४। ② कबरी—४। ③ हठकी मिकही तेती—४।

* (ना) देवगिरी।

† यह पद (का) में नहीं है।

④ सुरभीबृंद तहीं कौं हाँकौ—१, ११, १२। सुरभी-बृंद इतहिं कौं हाँकौ—३, ६, १४, १५।

(ना) देवगिरी। (कां) सारंग।

‡ यह पद (का) में नहीं है।

पहुँचे आइ बिपिन घन बृंदा, देखत द्रुम दुख सबनि[1] गँवाए ।
सूर स्याम गए अघा मारि जब, ता दिन तैं इहिँ बन अब आए॥४४७॥१०६५

* राग नटनारायन

† चरावत बृंदाबन हरि[2] धेनु ।
ग्वाल सखा सब संग लगाए, खेलत हैं करि चैनु ।
कोउ गावत, कोउ मुरलि बजावत, कोउ बिषान, कोउ बेनु ।
कोउ निरतत कोउ उघटि तार दै, जुरी ब्रज-बालक-सेनु ।
त्रिबिध पवन जहँ बहत निसादिन[3] सुभग कुंज घन ऐनु ।
सूर स्याम निज धाम बिसारत, आवत यह सुख लैनु ॥४४८॥१०६६

* राग धनाश्री

‡ बृंदाबन मोकौं अति भावत ।
सुनहु सखा तुम सुबल, श्रीदामा, ब्रज तैं बन गौ-चारन आवत ।
कामधेनु सुरतरु सुख जितने, रमा[4] सहित बैकुंठ भुलावत[5] ।
इहिँ बृंदाबन, इहिँ जमुना-तट, ये सुरभी अति सुखद चरावत ।
पुनि-पुनि कहत स्याम श्रीमुख सौं, तुम मेरैं मन अतिहिँ सुहावत ।
सूरदास सुनि ग्वाल चकृत भए, यह लीला हरि प्रगट दिखावत॥४४९॥१०६७

× राग बिलावल

§ ग्वाल सखा कर जोरि कहत हैं, हमहिँ स्याम तुम जनि बिसरावहु ।
जहाँ-जहाँ तुम देह धरत हौ, तहाँ-तहाँ जनि चरन छुड़ावहु ।

---

① सब बिसराए—६,१७। —११। निरतर—१६। ⑤ बुलावत—१, ११, १५। लगावत—२।
* (ना, के, क, का, पू) सारंग। (स्या) धनाश्री। (ना) सारंग। × (ना) श्री।
† यह पद (का) में नहीं है। ‡ यह पद (का) में नहीं है। § यह पद (का) में नहीं है।
② अब—६। ③ निसानित ④ सभा—१, ३, ११, १५।

ब्रज तैँ तुमहिँ कहूँ नहिँ टारौं, यहै पाइ मैँ हूँ ब्रज आवत ।
यह सुख नहिँ कहुँ भुवन चतुर्दस, इहिँ ब्रज यह अवतार बतावत ।
और गोप जे बहुरि चले घर, तिनसौं कहि ब्रज[1] छाक मँगावत ।
सूरदास प्रभु गुप्त बात सब, ग्वालनि सौं कहि-कहि सुख पावत ॥४५०॥१०६८

* राग बिलावल

† कन्हैया हेरी दै । ॥

सुभग साँवरे गात की मैँ, सोभा कहत लजाउँ ।
मोर-पंख सिर-मुकुट की, मुख[2]-मटकनि की बलि जाउँ ।
कुडल लोल कपोलनि झाईं[3] बिहँसनि चितहिँ चुरावै ।
दसन-दमक, मोतिनि लर ग्रीवा, सोभा कहत न आवै ।
उर पर पदिक कुसुम बनमाला, अंगद[4] खरे बिराजैँ ।
चित्रित बाहँ पहुँचिया पहुँचै, हाथ मुरलिया छाजै ।
कटि पट पीत, मेखला मुखरित, पाइनि नूपुर सोहै ।
आस-पास बर ग्वाल-मंडली, देखत त्रिभुवन मोहै ।
सब मिलि आनँद प्रेम बढ़ावत, गावत गुन गोपाल ।
यह सुख देखत स्याम-संग कौ, सूरदास सब ग्वाल ॥४५१॥१०६९॥

* राग बिलावल

‡ कान्ह[5] काँधे कामरिया कारी, लकुट लिए कर घेरे हो ।

---

① मुख—१, ११ ।
* (ना) नट ।
† यह पद (का) में नहीं है ।
॥ यह चरण (पू) में नहीं है ।
② मृदु मुसुकनि की—२ ।
③ की छबि—२ । ④ अग धुकधुकी बिराजै—१, ११, १५ । अग देखियै बिराजै—३ । अग दिखाइ बिराजै—१७ ।
५ (ना) कल्यान । (के, गो, क, जो, का, पू, म्या) टोढ़ी ।
‡ यह पद (का) में नहीं है ।
⑤ कान्ह काधे कामरि (कामरी) लकुट लिए (लए) कर घेरे हो—१,२,३,६,११,१४ ।

बृंदाबन मैं गाइ चरावै, धौरी धूमरि टेरै हो।
लै लिवाइ ग्वालनि[1] बुलाइ कै, जहँ-तहँ बन-बन हेरै हो।
सूरदास प्रभु सकल लोक-पति, पीतांबर कर फेरै हो ॥४५२॥१०७०

राग टोड़ी

† सोई हरि काँधे कामरि, काछ किए नाँगे पाइनि, गाइनि टहल करैं।
त्रिभुवनपति दिसिपति, नर-नारी-पति, पंछिनिपति, रबि-ससि जाहि डरैं।
सिव-बिरंचि ध्यान धरत, भक्त त्रिविध ताप हरत, तिनहिं हित बपु धरैं।
सूरदास जिनके गुन, निगम नेति गावत, तेइ बन-बन मैं बिहरैं ॥४५३॥१०७१॥

* राग नट

छाक लेन जे ग्वाल पठाए।
तिनसौं पूछति[2] महरि जसोदा, छाँड़ि कान्ह[3] कित आए।
हमहिं पठाइ दिए नँद-नंदन, भूखे अति अकुलाए।
धेनु चरावत हैं बृंदाबन, हम इहिं कारन आए।
यह कहि ग्वाल गए अपनैं गृह, बन की खबरि सुनाए।
सूर स्याम बलराम प्रातहीं अधजेंवत उठि धाए ॥४५४॥१०७२॥

राग सारंग

‡ और ग्वाल सबही गृह आए, गोपालहिं बेर भई।
अतिहिं अबेर भई लालन कौं, अजहूँ नहिं छाक गई।
तबहीं तैं भोजन करि राख्यो, उत्तम दूध जमाइ।
ना जानौं धौं कान्ह कौन बन, चारत बेर लगाइ।

---

① गौवनि—३,६,१४,१७।

† यह पद (ल, का) में नहीं है। इसका पाठ भिन्न-भिन्न प्रतियों में छंद की दृष्टि से अस्त-व्यस्त था। इस संस्करण में इसे सबकी सहायता से यथासंभव शुद्ध किया गया है।

* (ना) सारंग। (का) टोड़ी।

② बूझति—१ ११, १५, १७। ③ कन्हैयहिं—१, ११, १५, १७।

‡ यह पद (का) में नहीं है।

* राग सारंग

† हरि कौं टेरत फिरति गुवारि ।
आइ लेहु तुम छाक आपनी, बालक बल बनवारि ।
आजु कलेऊ करत बन्यौ नहिं, गैयनि सँग उठि धाए ।
तुम[1] कारन बन छाक जसोदा, मेरैं हाथ पठाए ।
यह बानी जब सुनी कन्हैया, दौरि गए तिहिँ काजु ।
सूर स्याम कह्यौ नीकैं आई, भूख बहुत ही आजु ॥४६१॥१०७६

* राग सारंग

‡ बहुत फिरी तुम काज कन्हाई ।
टेरि-टेरि मैं भई बावरी, दोउ भैया तुम रहे लुकाई ।
जे सब ग्वाल गए ब्रज घर कौं, तिनसौं कहि तुम छाक मँगाई ।
लवनी[2] दधि मिष्टान्न जोरि कै जसुमति मेरैं हाथ पठाई ।
ऐसी भूख माँझ तू ल्याई तेरी किहिं बिधि करौं बड़ाई ।
सूर स्याम सब सखनि पुकारत, आवत क्यौं न, छाक है आई॥४६२॥१०८०

राग सारग

§ गिरि पर चढ़ि गिरिवर-धर टेरे ।
अहो सुबल, श्रीदामा भैया, ल्यावहु गाइ खरिक कैं नेरे ।
आई छाक अबार भई है, नैं सुक घैया पिएउ सबेरे ।
सूरदास प्रभु बैठि सिला पर, भोजन करैं ग्वाल चहुँ फेरे॥४६३॥१०८१

---

* (ना) विलावल ।
† यह पद (का) में नहीं है ।
① यह कहि ताहि जसोदा पठयौ, हरि बल ग्वाल पठाए—६ ।
· (ना) ललित ।
‡ यह पद (का) में नहीं है ।
② मापन—२ । नैनू—१७ ।
§ यह पद केवल (वे, ल, रा, गो, जै) में है ।

* राग नट

† बिहारी लाल, आवहु, आई छाक।
भई अबार, गाइ बहुरावहु, उलटावहु दै हाँक।
अर्जुन, भोजऽरु सुबल, सुदामा, मधुमंगल इक ताक।
मिलि बैठे सब जेँवन लागे, बहुत बने कहि पाक।
अपनो पत्रावलि सब देखत, जहँ-तहँ फेनि[1] पिराक।
सूरदास प्रभु खात ग्वाल सँग, ब्रह्मलोक यह[2] धाक॥४६४॥१०८२

* राग सारंग

आई छाक, बुलाए स्याम।
यह सुनि सखा सबै जुरि आए, सुबल, सुदामा अरु श्रीदाम[3]।
कमल-पत्र दोना पलास के, सब आगैँ धरि परुसत जात।
ग्वाल-मंडली मध्य स्याम-घन, सब मिलि भोजन रुचि करि[4] खात।
ऐसी भूख माहिँ यह भोजन, पठै दियौ हैं जसुमति मात।
सूर स्याम अपनौ नहिँ जेँवत, ग्वालनि कर तैँ लै-लै खात॥४६५॥१०८३

× राग सारंग

‡ सखनि संग जेँवत हरि छाक।
प्रेम सहित मैया दै पठई, सबै बनाई हैं इक ताक।
सुबल, सुदामा, श्रीदामा मिलि, सब सँग भोजन रुचि करि[5] खात।

---

* (ना) ललित। (का) सारंग।
† यह पद (का) में नहीं है।
① भए फराक - २। पानि फिराक—६। ② जिहिँ—२, १६, १८, १६।
** (ना) नट।
③ श्रीराम—६। ④ सौ—६, ११, १७। ⑤ करि—१, ११, १५, १७, १६।
× (ना) भैरवी।
‡ यह पद (का) में नहीं है।
⑥ सौं—१, ११।

ग्वालनि कर तैं कौर[1] छुड़ावत, मुख लै मेलि सराहत जात ।
जो सुख कान्ह करत बृंदावन सो सुख नहीं लोकहूँ सात ।
सूर स्याम भक्तनि बस ऐसे ब्रह्म[2] कहावत हैं नँद-तात ॥४६६॥१०८४

राग सारंग

† ग्वाल[3] मंडली में बैठे मोहन बट की छाँह, दुपहर बेरिया सखानि संग लीने ।
एक[4] दूध, फल, एक झगरि चबेना लेत, निज-निज कामरी के आसननि कीने ।
जेंवतऽरु[5] गावत हैं सारँग की तान कान्ह, सखनि के मध्य छाक लेत कर छीने ।
सूरदास[6] प्रभु कौं निरखि, सुख रीझि-रीझि, सुर सुमननि बरषत रस भीने॥४६७॥

॥ १०८५ ॥

* राग सारंग

‡ ग्वालनि कर तैं कौर छुड़ावत ।
जूठौ लेत सबनि के मुख कौ, अपनैं मुख लै नावत ।
षटरस के पकवान धरे सब, तिनमैं रुचि नहिं लावत ।
हा-हा करि-करि माँगि लेत हैं कहत मोहिं अति भावत ।
यह महिमा येई पै जानत, जातैं आपु बँधावत ।
सूर स्याम सपनैं नहिं दरसत,मुनि जन ध्यान लगावत॥४६८॥१०८६

---

① छाक—२, ६, १७। ② ब्रजहिं—१, ११, १५ ।

† यह पद (का) में नहीं है। इसका पाठ और छंद सब प्रतियों में अस्तव्यस्त हैं। अर्थ पर ध्यान रखते हुए इसको प्रतियो की सहायता से सुछंद बनान का प्रयत्न किया गया है। नम्रने के लिये कुछ पाठांतर दे दिए जाते हैं—

③ ग्वाल मडली में बैठे हे मोहन वड की छहिया दुपहरि की बिरियो सग लीने—१, २, ६, ११, १४, १५, १६ १७, १८ । ④ एक मथत दोहनी दूध एक बॅटावत फल चबैने । एकनि कर हरि झगरि लेत ये सबनि आपने कमर क आसन कीने—१ । ⑤ जेंवत हैं अरु गावत कान्ह सारगी की तान लेत सखनि के मध्य बिराजत छाक लेत कर छीने—१, १५,१६, १७, १८ । ⑥ सूरदास प्रभु कौ सुख देखत सुर रीझि रीझि सुमननि बरषत रस भीने—२, ३, १४ ।

* (ना) नट ।

‡ यह पद (का) में नहीं ह ।

* राग सारंग

† ब्रज-बासी पटतर कोउ नाहिँ ।

ब्रह्म, सनक, सिव ध्यान न आवै[१] , इनकी जूठनि लै-लै खाहिँ ।
धन्य नंद धनि जननि जसोदा, धन्य जहाँ अवतार कन्हाइ ।
धन्य-धन्य बृंदाबन के तरु, जहँ बिहरत त्रिभुवन के राइ ।
हलधर कहत छाक जेँवत सँग मीठौ लगत सराहत जाइ ।
सूरदास प्रभु बिस्वंभर हरि सो[२] ग्वालनि के कौर अघाइ॥४६६॥१०८७

* राग सारंग

‡ सीतल छहियाँ स्याम हैँ, बैठे, जानि भोजन की बिरियाँ ।
बाम भुजाहिँ सखा अँस दीन्हे, दच्छिन कर द्रुम-डरियाँ ।
गाइनि[३] घेरि, टेरि बलरामहिँ, ल्यावहु कहत अबिरियाँ ।
सूरदास प्रभु बैठि कदम तर, खात[४] दूध की खिरियाँ ॥४७०॥१०८८॥

× राग सारंग

§ जेँवत छाक गाइ बिसराई ।

सखा श्रीदामा कहत सबनि सौं, छाकहि मैँ तुम रहे भुलाई ।
धेनु नहीँ देखियत कहुँ नियरैँ, भोजन ही मैँ साँझ कराई ।
सुरभी काज जहाँ-तहँ धाए, आपु तहाँ उठि चले कन्हाई ।

---

* (ना) नट ।

† यह पद (का) में नहीं है ।

① पावत—१, ३, ६, ११, १७ । ② ते—१, २, ३, ६, ११, १७ ।

१ (के) नट नारायन ।

‡ इस पद का पाठ छंद की दृष्टि से कुछ बैठिकान था । सब प्रतियों की सहायता से उसे ठीक कर देने की चेष्टा की गई है ।

③ चलियै जू नैक गाइनि घेरो टेरा जु बलराम सों कहत बोलि लेहु आपनी अबरिया

(बेरिया) —१, ११, १५, १७, १६ । ④ गइया को दूध निकरिया—१ । गैया काज दूध की थरिया—१६ ।

× (ना) गौरी ।

§ यह पद (का) में नहीं है ।

ल्याए ग्वाल घेरि गो, गो-सुत, देखि स्याम मन हरष बढाई ।
सूरदास प्रभु कहत चलौ घर, बन मैं आजु अबार लगाई[1] ॥४७१॥१०८६

राग गौरी

† ब्रजहिँ चलौ आई अब साँझ ।
सुरभी सबै लेहु आगैं करि, रैनि होइ जनि[2] बनहीँ माँझ ।
भली कही यह बात कन्हाई, अतिही सघन अरन्य उजारि ।
गैया हाँकि चलाईं ब्रज कौं और ग्वाल सब लए पुकारि ।
निकसि गए बन तैं जब[3] बाहिर, अति आनंद भए सब ग्वाल ।
सूरदास प्रभु मुरलि बजावत, ब्रज आवत नटवर गोपाल ॥४७२॥१०६०

* राग कल्यान

‡ सुंदर स्याम, सुँदर बर लीला, सुंदर बोलत बचन रसाल ।
सुंदर चारु कपोल बिराजत, सुंदर उर जु बनो बनमाल ।
सुंदर[4] चरन सुँदर हैं नख मनि, सुंदर[5] कुंडल हेम जराल ।
सुंदर मोहन नैन चपल किए, सुंदर ग्रीवा बाहु बिसाल ।
सुंदर मुरली मधुर बजावत, सुंदर[6] हैं मोहन गोपाल ।
सूरदास जोरी[7] अति राजति ब्रज कौं आवत सुंदर चाल[8] ॥४७३॥१०६१

राग कल्यान

§ सुंदर स्याम[9], सखा सब सुंदर, सुंदर बेष धरे गोपाल ।
सुंदर पथ, सुंदर-गति आवन, सुंदर मुरली-सब्द रसाल ।

---

① कराई—१, ११, १५ ।

† यह पद (का) में नहीं है ।

② पुनि—१, ३, ६, ११, १७, १६ । ③ सब—१, ११, १५, १७, १६ ।

* (क) बिलावल । (रा) बिहागरा ।

‡ यह पद (ना, स, बृ, के, कॉ, पू, स्या) में नही है ।

④ सुंदर बदन नैन सुंदर मुख—१८ । ⑤ सुंदर है कुंडल मकराल—१, ११, १५ । ⑥ सुंदर राधे है गोपाल—१४ । ⑦ दपति—१४ । ⑧ बाल—१४ ।

§ यह पद (शा) में नहीं है ।

⑨ गाइ—२, ३, १६ ।

सुंदर लोग, सकल ब्रज सुंदर, सुंदर[1] हलधर सुंदर चाल ।
सुंदर बचन[2], बिलोकनि सुंदर, सुंदर गुन सुंदर बनमाल ।
सुंदर गोप, गाइ अति सुंदर, सुंदरि[3]-गन सब करतिँ बिचार ।
सूर स्याम सँग सब सुख सुंदर, सुंदर भक्त-हेत अवतार ॥४७४॥१०६२॥

राग बिलावल

† सुंदर ढोटा कौन कौ, सुंदर मृदुबानी ।
कहि समुझायौ ग्वालिनी, जायौ नँदरानी ।
सुंदर मूरति देखि कै, घन घटा लजानी ।
सुंदर नैननि[4] हरि लियौ कमलनि कौ पानी ।
सुंदरता तिहुँ लोक की, जसुमति[5] ब्रज आनी ।
सूरदास पुर[6] मैं भई, सुंदर रजधानी ॥४७५॥१०६३॥

* राग गौरी

‡ देखि सखी बन तैं जु बने ब्रज आवत हैं नँद-नंदन ।
सिखी सिखंड सीस, मुख मुरली, बन्यौ तिलक, उर[7] चंदन ।
कुटिल अलक मुख, चंचल लोचन, निरखत अति आनंदन ।
कमल मध्य मनु द्वै खग खंजन बँधे आइ उड़ि फंदन ।
अरुन अधर-छबि दसन बिराजत, जब गावत कल[8] मंदन ।
मुक्ता मनौ नील-मनि-मय-पुट, धरे भुरकि बर[9] बंदन ।

---

① सुंदर नंद मनोहर बाल (लाल)—२, ३, ६, १८ । सुंदर नंद महर के बाल—१६, १६ । ② बदन—१, ११, १६ । ③ सुंदर गुन—१, २, ३, ६, ११, १७ ।

† यह पद केवल (बे, गो) में है ।

④ नैन निहारि लियौ—१ । ⑤ ब्रज पुर मैं—१, ११ । ⑥ जसुमति—१, ११ ।

* (ना, गो, कां) कल्यान ।

‡ यह पद (शा, रा) में नहीं है ।

⑦ अति—२ । ⑧ सुर—१६ । ⑨ कुछ—१६ ।

गोप बेष गोकुल गो चारत हैं हरि असुर-निकंदन।
सूरदास प्रभु सुजस बखानत नेति नेति श्रुति छंदन ॥४७६॥१०६४॥

† सुनि सखि वे बड़भागी मोर।
जिनि पाँखनि कौ मुकुट बनायौ, सिर धरि नंदकिसोर।
ब्रह्मादिक सनकादि महामुनि, कलपत दीउ कर जोर।
बृंदाबन के तृन न भए हम, लगत चरन कैं छोर।
बड़ौ भाग नँद-जसुमति कौ है, कोऊ ठहर न और।
सूरदास गोपिन हित-कारन, कहियत माखन-चोर ॥४७७॥१०६५॥

* राग केदारौ

‡ सोभा कहत कही नहिं आवै।
अँचवत अति आतुर लोचन-पुट, मन[२] न तृप्ति कौं पावै।
सजल मेघ घनस्याम सुभग बपु, तड़ित बसन बनमाल[३]।
सिखि-सिखंड, बन[४]-धातु बिराजत, सुमन सुगंध प्रवाल।
कछुक कुटिल कमनीय सघन अति[५], गो-रज मंडित केस।
सोभित मनु अंबुज पराग-रुचि-रंजित मधुप सुदेस।
कुंडल[६]-किरनि कपोल लोल छबि, नैन कमल-दल-मीन।
प्रति-प्रति अंग[७] अनंग-कोटि-छबि, सुनि सखि परम प्रबीन।
अधर मधुर मुसुक्यानि मनोहर[८] करति मदन मन हीन।
सूरदास जहँ दृष्टि परति है, होति तहीं लवलीन ॥ ४७८॥१०६६ ॥

---

† यह पद केवल (ख) में है।

* (के, पू) कान्हरा।

‡ यह पद (ल, शा, का) में नहीं है।

① आदर—१, २, ११। मनसिज—२। ② मन न रूप को पावै—१, ११। अपित न कबहूँ पाव—३। मन तिरपित नहिं पावै—६, १७। ③ उर माल—१, ३, ११। ④ तन—१, ३, ११। ⑤ सिर—१, ११, १५, १७। ⑥ कुंडल लोल कपोलनि की छबि नवल कमल दल मीन—६, १७। ⑦ अग अंग कोटिक छबि—१, २, ३, ११। ⑧ कोटि—१, ११।

राग गौरी

† मेरे नैन निरखि सुख पावत ।

संध्या समय गोप गोधन सँग बन तैँ बनि ब्रज आवत ।
उर गुंजा बनमाल, मुकुट सिर, बेनु रसाल बजावत ।
कोटि किरनि-मनि मुख परकासित, उड़पति कोटि लजावत ।
नटवर रूप अनूप छबीलौ, सबहिनि कैँ मन भावत ।
गोप-सखा सब बदन निहारत, उर आनँद न समावत ।
चंदन खौरि, काछनी काछे, देखत ही मन भावत ।
सूर स्याम नागर नारिनि कौं, बासर-बिरह नसावत ॥४७६॥१०६७॥

* राग कान्हरौ

‡ आजु बने बन तैँ ब्रज आवत ।

नाना रंग सुमन की माला, नंद-नँदन-उर पर छबि पावत[1] ।
संग गोप गोधन-गन लीन्हे, नाना गति कौतुक उपजावत ।
कोउ गावत, कोउ नृत्य करत, कोउ उघटत कोउ[2] करताल बजावत।
राँभति गाइ बच्छ हित सुधि करि, प्रेम उमँगि थन दूध चुवावत ।
जसुमति बोलि उठी हरषित ह्वै, कान्हा धेनु चराए आवत ।
इतनी कहत आइ गए मोहन, जननी दौरि हिए लै लावत ।
सूर स्याम के कृत्य, जसोमति, ग्वाल बाल कहि प्रगट सुनावत ॥४८०॥१०६८

* राग गौरी

§ मैया बहुत बुरौ बलदाऊ ।

कहन लग्यौ बन बड़ौ तमासौ, सब मौड़ा[3] मिलि आऊ ।

---

† यह पद (वे, ना, स, गो, क, जै, पू) में है ।
* (ना) परज । (रा) मलार ।
‡ यह पद (का) में नहीं है ।
① छावत—३ । ② कोऊ ताल—१, २, ११ ।
* (ना) केदारौ ।
§ यह पद (का, के, पू) में नहीं है ।
③ बालक—१६ ।

मोहूँ कौं चुचकारि गयौ लै, जहाँ सघन बन झाऊ।
भागि चलौ, कहि, गयौ उहाँ तैं, काटि खाइ[1] रे हाऊ।
हौं[2] डरपौं, काँपौं अरु रोवौं, कोउ नहिं धीर धराऊ।
थरसि गयौं नहिं भागि सकौं, वै भागे जात अगाऊ।
मोसौं कहत मोल कौ लीनौ, आपु कहावत साऊ।
सूरदास बल बड़ौ चबाई, तैसेहिं मिले सखाऊ॥ ४८१॥१०६६॥

* राग नट

हरि की लीला कहत न आवै।
कोटि ब्रह्मांड छनहिं मैं नासै, छनही मैं उपजावै।
बालक-बच्छ ब्रह्म हरि लै गयौ, ताकौ गर्ब नवावै[3]।
ऐसौ पुरुषारथ सुनि जसुमति, खीझति फिरि समुझावै[4]।
सिव सनकादि अंत नहिं पावै, भक्त-बछल कहवावै[5]।
सूरदास प्रभु गोकुल मैं, सो, घर-घर गाइ चरावै॥४८२॥११०२॥

* राग सारंग

† ब्रह्मा बालक-बच्छ हरे।
आदि अंत प्रभु अंतरजामी, मनसा तैं जु करे।
सोइ रूप वै बालक गो-सुत, गोकुल जाइ भरे[6]।
एक बरष निसि-बासर रहि सँग, काहु न जानि परे।
त्रास भयौ अपराध आपु लखि, अस्तुति करत खरे।
सूरदास स्वामी मनमोहन, तामैं[7] मन न धरे॥४८३॥११०१॥

---

① खाहहैं—१,११। खाहगो—२। ② हौं डरपौं काँपौं रोऊँ अति—२।
* (ना) केदारो।
③ नसावै—६, १४, १७। ④ पछितावै—१, ११, १५। ⑤ सु कहावै—२।
†† (ना) भोपाली।
† यह पद (ल, का के, पू) मे नही है।
⑥ परे—१, २, ११, १५। बरे—३। ⑦ तातैं—२, १६।

राग कल्यान

† मैं तौ जे हरे हैं, ते तौ सोवत परे हैं, ये करे हैं कौनैं आन, अँगुरीनि दंत दै रह्यौ।
पुरुष[1] पुरान आनि कियौ चतुरानन, कै सोई प्रभु पूरन प्रगट इहाँ ह्वै रह्यौ?
उतै देखि धावै, इत आवै, अचरज पावै, सूर सुरलोक ब्रजलोक एक ह्वै रह्यौ।
बिवस ह्वै हार मानी, आपु आयौ नकवानी[2], देखि गोप-मंडली कमंडली चितै रह्यौ।
॥४८४॥११०२॥

* राग नट

‡ तब हरि हरचौ बिधि कौ गर्ब।
बच्छ-बालक लै गयौ धरि, तुरत कीन्हे सर्ब।
ब्रह्म लोक दुराइ आयौ, चरित देखन आप।
बच्छ-बालक देखि कै, मन करत पश्चात्ताप[3]।
तब गयौ बिधि लोक अपनैं, दृष्टि कै फिरि आइ।
जानि जिय अवतार पूरन, परचौ पाइनि धाइ।
बहुत मैं अपराध कीन्हौ, छमा कीजै नाथ।
जानि मैं यह नहीं कीन्हौ, जोरि[4] कह्यौ दोउ हाथ।
बच्छ-बालक आनि सन्मुख, सरन-सरन पुकारि।
सूर प्रभु के चरन गहि-गहि[5], कहत राखि मुरारि॥४८५॥११०३॥

* राग धनाश्री

§ ब्रज-ब्यौहार निरखि कै ब्रह्मा कौ अभिमान गयौ।

---

† यह पद केवल (म, बृ, कौ, स्या) मैं है।

(१) पूरन—।(२) भगवानी—७। भगवानी—१६। मनवानी—३, १६।

* (ना) सोरठि।

‡ यह पद (ल, पू) में नहीं है।

(३) बहु बिधि ताप—२। बिधि बहु ताप—१६। (४) जोरि कर कै रह्यौ माथ—१, ३, ६, ११, १४। जोरि कै रह्यौ हाथ—१६।

(५) कहि निकट राखि मुरारि—१, ३, ६, ११। कह्यौ निकट राखि मुरारि—१४।

(ना) नाहकी।

§ यह पद (ल, का, के, पू) में नहीं है।

गोपी ग्वाल फिरत सँग चारत, हौं हूँ क्यौं न भयौ।
ब्यंजन बर कर[1] बर पर राखत, ओदन मधुर दह्यौ।
आपुन खात खवावत औरनि, कौन बिनोद ठयौ।
सखा संग पय-पान करावत अपनैं हाथ लयौ।
संकर ध्यान धरत जुग बीते, यह रस तौ न दयौ।
अहो भाग, अहो भाग नंद-सुत, तप कौ पुंज लियौ।
लाला[2] सुभग सूर के प्रभु की, ब्रज मैं गाइ जियौ ॥४८६॥११०४॥

* राग जैतश्री

बदत[3] बिरंचि, बिसेष सुकृत ब्रज-बासिन के।
श्री[4] हरि तिनकैं बेष, सुकृत ब्रज-बासिन के।
ज्योति रूप, जगनाथ[5], जगत-गुरु, जगत-पिता, जगदीस।
जोग-जग्य-जप-तप-ब्रत[6]-दुर्लभ, सो हरि गोकुल ईस।
इक-इक रोम बिराट किए[7] तन, कोटि-कोटि ब्रह्मंड।
सो लीन्हौ अवछंग जसोदा, अपनैं भरि भुज-दंड।
जाकैं उदर लोक-त्रय, जल-थल, पंच तत्व चौखानि।
सो बालक ह्वै झूलत पलना, जसुमति भवनहिं आनि।
छिति मिति त्रिपद करी करुनामय, बलि छलि दियौ पतार।
देहरि उलँघि सकत नहिं, सो अब खेलत नंद दुवार।
अनुदिन[8] सुर-तरु, पंच सुधा रस, चिंतामनि, सुर धेनु।

---

① अँगुरीनि—२, ३, १६। ② लीला सुभग सूर की ब्रज में सब कोउ गाइ जियो—१, ११। * (का) गौरी। ③ कौन सुकृत इन ब्रज बासिन को बदत बिरंचि बिसेष—१४। ④ श्री हरि जिनके हेत प्रगटे मानुष बेष—१४। ध्रुव। ⑤ ब्रज धाम—३। जगधाम—६, १७। ⑥ मैं—१, २, ३, ११। मुनि—१६। ⑦ कोटि—१, २, ३, ६, १७। ⑧ अनदिन सवत सुधारस पचम चिंतामनि सी धेनु—२।

सो तजि, जसुमति कौ पय पीवत, भक्तनि कौं सुख देनु ।
रबि-ससि-कोटि कला[1] , अवलोकत त्रिबिध ताप छय जाइ।
सो अंजन कर लै सुत-चच्छुहिं[2] आँजति जसुमति माइ ।
दाता भुक्ता, हरता-करता, बिस्वंभर जग जानि ।
ताहि लाइ माखन की चोरी, बाँध्यौ जसुमति रानि ।
बदत बेद-उपनिषद, छहौं रस अर्पे भुक्ता नाहिँ ।
गोपी ग्वालनि के मंडल मैं हँसि-हँसि जूठनि खाहिँ ।
कमला-नायक, त्रिभुवन[3] -दायक, दुख-सुख जिनकैं हाथ ।
काँध कमरिया, हाथ[4] लकुटिया, बिहरत बछरनि साथ ।
बकी, बकासुर, सकट, तृनाब्रत, अघ, प्रलंब[5] , बृषभास ।
कंस-केसि कौं वह गति दीनी, राखे चरन निवास ।
भक्त-बछल प्रभु पतित-उधारन, रहे सकल भरि पूर ।
मारग रोकि रह्यौ द्वारैं परि, पतित-सिरोमनि सूर ॥४८७॥११०५

राग मलार

† बिनवै चतुरानन कर[6] जोरे ।
तुव प्रताप जान्यौ नहिँ प्रभु जू, करैं अस्तुति लट छोरे ।
अपराधी, मति-हीन, नाथ हौं, चूक परी निज भोरे[7] ।
हम कृत दोष छमौ करुनामय, ज्यौं भू परसत ओरे ।
जुग-जुग बिरद यहै चलि आयौ, सत्य कहत अब होरे ।
सूरदास प्रभु पछिले खेवा[8] , अब न बनै मुख मोरे ॥४८८॥११०६॥

---

(१) कला भव से लोचन त्रिबिध तिमिर भजि जात—२ १६, १८, १६ । (२) के चलु—३ । (३) बैकुंठदायक—१६, १८, १६ । (४) कांख—१, ३, ११ । (५) धेनुक—१४ ।
† यह पद केवल (वे, ना, ल, शा, का, गो, जै) में है ।
(६) कहि भोरैं—१ । (७) करि अस्तुति कर जोरैं—१ । (८) धोरैं—१ । (९) लेखे—१, ६, १५ ।

राग सारंग

† माधौ मोहिँ करौ बृंदाबन-रेनु ।
जिहिँ चरननि डोलत नँद-नंदन, दिन-प्रति बन-बन चारत धेनु ।
कहा भयौ यह देव-देह धरि, अरु ऊँचैं पद पाऐं ऐनु ।
सब जीवनि लै उदर माँझ प्रभु, महा प्रलय-जल करत हौ सैनु ।
हम तैं धन्य सदा वै तृन-द्रुम, बालक-बच्छ-बिषानऽरु बेनु ।
सूर स्याम जिनकैं सँग डोलत, हँसि बोलत, मथि पीवत फेनु॥४८६॥११०७

* राग सारंग

ऐसैं बसिऐ ब्रज की बीथिनि ।
ग्वारनि के पनवारे चुनि-चुनि, उदर भरीजै सीथिनि ।
पैंड़े के सब बृच्छ बिराजत, छाया परम[1] पुनीतनि ।
कुंज-कुंज-प्रति लोटि-लोटि, ब्रज[2] -रज लागै रँग-रीतनि ।
निसि दिन निरखि जसोदा-नंदन, अरु जमुना-जल पीतनि ।
परसत सूर होत तन पावन, दरसन करत अतीतनि॥४६०॥११०८

* राग सारंग

धनि यह बृंदाबन की रेनु ।
नंद-किसोर चरावत गैयाँ, मुखहिँ बजावत बेनु ।
मन-मोहन कौ ध्यान धरैं जिय, अति सुख पावत चैनु ।
चलत कहाँ मन और[3] पुरो तन, जहाँ कछु लैन न दैनु ।

---

† यह पद (ना, शा, बृ, कां, पू, रा, श्या) में नहीं है ।
* (ना) विहागरौ ।
① पत्र—३ । ② रति—१, ६, ११ । रज—३ । (ना) काफी ।
③ बसत पुरातन (पुरीतन)—१, ६, ११, १४, १७, १८ ।

इहाँ रहहु जहँ जूठनि[1] पावहु, ब्रजबासिनि कैं ऐनु।
सूरदास ह्याँ की सरवरि नहिं, कल्पबृच्छ सुर-धेनु ॥४६१॥११०६॥

बाल-वत्स-हरन की दूसरी लीला * राग धनाश्री

ब्रज की लीला देखि, ज्ञान बिधि कौ गयौ[2]।
यह[3] अति अचरज मोहिं, कहा कारन ठयौ ॥टेक॥
त्रिभुवन नायक भयौ, आनि गोकुल अवतारी।
खेलत ग्वालनि संग, रंग आनंद मुरारी।
घर-घर तैं छाकैं चलीं मानसरोवर-तीर।
नारायन[4] भोजन करैं, बालक संग अहीर।
ब्यंजन सकल मँगाइ, सखनि के आगैं राखे।
खाटे मीठे स्वाद, सबै रस लै-लै चाखे।
रुचि[5] सौं जेंवत ग्वाल सब, लै-लै आपुन खात।
भोजन को सब स्वाद लै, कहत परस्पर बात।
देखत गन-गंधर्व, सकल सुरपुर के बासी।
आपुस मैं सब कहत हँसत, येई अबिनासी।
देखि सबै अचरज भए कह्यौ ब्रह्मा सौं जाइ।
जाकौं अबिनासी कहत, सो ग्वारनि सँग खाइ।
यह सुनि ब्रह्मा चले, तुरत बृंदाबन आए।
देखि सरोवर सजल, कमल तिहिं मध्य सुहाए।

---

① पावहु निसि दिन ब्रजबासिनि की रेनु—१६।
* (ना) परज। (क) बिलावल।
② भयौ भारी—१, २, ११, १५, १६। गयौ भारी—३।
③ इस चरण के स्थान पर १, २, ११, १५, १६ मे यह चतुर्थ चरण है। "सोभित संग ब्रज बाल लाल गोबर्द्धनधारी।" ④ नँदनंदन के संग चले बालक सखा अहीर—३, ४, १४, १७। ⑤ पहलैं सबनि खवाइ कै पाछैं आपुन खात—२, १८, १६।

परम सुभग जमुना बहै, तहँ बहै त्रिबिध समीर।
पुहुप लता-द्रुम देखि कै, थकित भए मति-धीर।
अति रमनीक कदंब-छाहँ-रुचि परम सुहाई।
राजत मोहन मध्य अवलि बालक छबि पाई।
प्रेम-मगन ह्वै परस्पर, भोजन करत गोपाल।
ल्यावहु गो-सुत घेरि कै प्रभु पठए द्वै ग्वाल।
बन उपबन सब ढूँढ़ि सखा हरि पै फिरि आए।
बछरा भए अदृष्ट, कहूँ खोजत नहिँ पाए।
सबै सखा बैठे रहौ, मैँ देखौं धौं जाइ।
बच्छ-हरन जिय[1] जानि प्रभु, आपु गए बहराइ।
जब गोबिँद गए दूरि, बालकनि हर्‌यौ बिधाता।
लै हैँ तुरत मँगाइ आपु, जो हैँ जग-त्राता।
ब्रह्म-लोक ब्रह्मा गए, लै बालक बछ संग।
प्रभु की लीला गम नहीँ, कियौ गर्ब अति अंग।
तब चिंतामनि चितै चित्त इक बुद्धि बिचारी।
बालक बच्छ बनाइ रचे वेही उनिहारी।
करत कुलाहल सब[2] गए, ब्रज घर अपनैँ धाइ।
अति[3] आदर करि-करि लए अपनी-अपनी माइ।
ब्रह्मा कियौ बिचार, जाइ ब्रज गोकुल देखौं।
करिहैँ सोक सँताप, धाइ पितु-मातहिँ पेखौं।

---

① प्रभु जानि कै उठे धाइ अकुलाइ —१, १८, १९। ② ब्रज गए आप अपने घर माहिँ— १९। ③ सबहुनि अति आदर किए काहू के भ्रम नाहिँ—१९।

अति[1] आतुर ह्वै बिधि चले, घर-घर देख्यौ आइ।
साँझ कुतूहल होत है, जहँ-तहँ दुहियत गाइ।
यह गोकुल किधौं और किधौं मैं ही चित[2] भूल्यौ।
ये अबिनासी होइँ, ज्ञान मेरौ भ्रम झूल्यौ।
अंतरजामी जानि धौं गो[3]-सुत ल्याए जाइ।
जगत पितामह[4] संभ्रम्यौ, गयौ लोक फिरि धाइ।
देख्यौ जाइ जगाइ बाल गो-सुत जहँ राख्यौ।
बिधि[5] मन चक्रित भयौ बहुरि ब्रज कौं अभिलाख्यौ।
छिन भूतल छिन लोक निज[6], छिन आवै छिन जाइ।
ऐसे बीते बरष दिन, थकित भए बिधि[7]-पाइ।
तब[8] जान्यौ हरि प्रगट ज्ञान मन मैं जब आयौ।
धिग-धिग मेरी[9] बुद्धि, कृष्न सौं बैर बढायौ।
लै गो-सुत गोपाल-सिसु सरन गयौ ह्वै साधु।
चारौं मुख अस्तुति करत, छमौ मोहिँ अपराधु।
अनजाने मैं[10] करी बहुत तुमसौं बरियाई।
ये मेरे अपराध छमहु, त्रिभुवन के राई।
ज्यौं बालक अपराध सत[11], जननी लेति सम्हारि।
सरन गएँ राखति सदा, औगुन सकल बिसारि।
जोरे[12] उदित खद्योत ताहि क्यौं तिमिर नसावै?

---

① आए तहँ बिधता चले--१, ३, ११, १५। ② मति--१, ६, ११, १५ भ्रम--२, ३, ६, १४, १७। ③ हरे बच्छ ल आइ—१, ३, ६, १४। ④ पिता के भ्रम भयौ--१६। ⑤ करि मन मे संताप--१६। ⑥ मे--१, ३, ११, १४। कै'--२, १६। ⑦ द्विज राइ—२, १६। ⑧ तब हरि प्रगट्यौ जानि ज्ञान चित मै जब आयौ--१, ११। तब चितयौ हरि चरन ज्ञान जब मन मै आयौ--२, १६। ⑨ मेरो जनम--६, १७। ⑩ यह करी मे जु—१, ६। ⑪ सब—१६। ⑫ ज्यौं खद्योत उद्योत होइ कहा तिमिर नसावै--२, १६।

दीपक[1] बहुत प्रकास, तरनि सम क्यौं कहि आवै ?
मैं ब्रह्मा इक लोक कौ, ज्यौं गूलर-फल[2] - जीव ।
प्रभु[3] तुम्हरे इक रोम-प्रति, कोटिक ब्रह्मा सीव ।
मिथ्या यह संसार और मिथ्या यह माया ।
मिथ्या है यह देह कहौ[4] क्यौं हरि बिसराया ।
तुम जाने बिन जीव सब, उतपति प्रलय समाहि ।
सरन[5] मोहिं प्रभु राखिऐ चरन-कमल की छाहिं ।
करहु[6] मोहिं ब्रज रेनु देहु बृंदाबन बासा ।
माँगौं यहै प्रसाद और[7] मेरैं नहिं आसा ।
जोइ भावै सोइ करहु तुम, लता सिला[8] द्रुम, गेहु ।
ग्वाल[9] गाइ कौ भृत करौ, मानि सत्य ब्रत एहु ।
जो दरसन नर नाग अमर सुरपतिहुँ न पायौ ।
खोजत जुग गए बीति अंत मोहूँ न लखायौ ।
इहिं[10] ब्रज यह रस नित्य है, मैं अब समुझ्यौ आइ ।
बृंदाबन रज ह्वै रहौं, ब्रह्म लोक न सुहाइ ।
॥ माँगत बारंबार सेष ग्वालनि कौ पाऊँ ।
॥ आपु लियौ कछु जानि, भच्छ करि उदर पुराऊँ ।
अब मेरैं निज ध्यान यह रहौं[11] जूठ नित खाइ ।

---

(१) दीपक भयो प्रकास कहा सूरज सुचि पावै—१६ । (२) बिच—१, ११ । सम—३ । (३) तुम्हरे इक इक रोम में—२, १६ । (४) जाहि तें—२, १६ । (५) तात कृपा करि राखिए—१६ । (६) कीज ब्रज की रेनु रहौं पद अबुज पासा—२, १६ । (७) देहु बृंदाबन बासा—२, १६ । (८) सलिल—१, ३, ६, ११ १६ । (९) इन ग्वारनि के संग रहौं—१६ । (१०) माया रस ब्रज भूमि में म देख्यो है आई—१६ ।
॥ इन दो चरणों के स्थान पर (ना), (रा), (श्या) मे ये दो चारण है —
माँगौं यहै प्रसाद संग ग्वालनि कौ। पाऊँ । छाड़ौं लोक-प्रभुत्व चतु मुंख तव गुन गाऊँ ।
(११) सेऊँ तुम्हरे पाइ—१६ ।

और बिधाता कीजिये, मैं नहिं[1] छाँड़ौं पाइ।
तब बोले प्रभु आपु, बचन मेरौ अब मानौ।
और[2] काहि बिधि करौं, तुमहिं तैं कौन सयानौ।
तुम[3] ज्ञाता सब धर्म के, तुमतैं सब संसार।
मेरी माया अति अगम, कोउ न पावै पार।
श्री[4] मुख बानी कहो बिलँब अब नैंकु न लावहु।
ब्रज परिकर्मा करहु देह कौ पाप[5] नसावहु।
बिदा करे निज लोक कौं इहि बिधि करि मनुहार।
करि अस्तुति ब्रह्मा चले हरि[6] दीन्हौ उर हार।
॥ धनि बछरा धनि बाल जिनहिं तैं दरसन पायौ।
॥ उर मेरौ भयौ धन्य कृष्न माला पहिरायौ।
॥ धनि जसुमति जिन बस किए, अबिनासी अवतारि।
॥ धनि गोपी जिनकैं सदन, माखन खात मुरारि।
¶ धनि गोपी धनि ग्वाल, धन्य ये ब्रज के बासी।
¶ धन्य जसोदा नंद भक्ति-बस किए अबिनासी।
¶ धनि गो-सुत धनि गाइ ये, कृष्न चरायौ आपु।
¶ धनि कालिंदी मधुपुरी, दरसन नासै पापु।
मथुरा आदि अनादि देह[7] धरि आपुन आए।
धनि[8] देवै बसुदेव पुत्र तुम माँगे पाए।

---

① रचै जु सृष्टि बनाई--१८, १६। ② जो जाकौ अधिकार तासु कौ सोइ प्रमानौ--२ १८ १६। ③ तुम कर्ता कर्म धर्म के तुमही करौ संसार--२, १६। ④ बेगि जलज सुत जाहु फेरि जिनि गोकुल आवहु १८, १६। ⑤ ताप--३। कलह--१६। ⑥ दै कृष्णहिं उपहार--१६। ॥ ये चार पाद (ना), (रा) (श्या) में नहीं हैं। ¶ ये चार चरण (स), (का) में नहीं हैं। ⑦ भक्ति जातैं चलि आई--२, १८, १६। ⑧ ब्रजबासी हैं धन्य गीत (कीर्ति) जिनकी बिधि गाई--२, १६।

॥ चारि बदन मैं कह कहौं, सहसानन[1] नहिं जान।
॥ गाइ[2] चरावत ग्वाल सँग करत नंद की आन।
॥ जोगी जन अवराधि फिरत जिहिं ध्यान लगाए।
॥ ते ब्रजबासिनि संग फिरत अति प्रेम बढाए।
बृंदाबन ब्रज[3] कौ महत कापै बरन्यो जाइ।
चतुरानन[4] पग परसि कै लोक गयो सुख पाइ।
हरि लीला[5] अवतार पार सारद नहिं पावै।
सतगुरु-कृपा-प्रसाद[6] कछुक तातैं कहि आवै।
सूरदास कैसे कहै हरि-गुन कौ बिस्तार।
सेष सहस मुख रटत[7] है तऊ न पावै पार ॥४६२॥१११०॥

राग गौरी

आजु हरि धेनु चराए आवत।
मोर-मुकुट बनमाल बिराजत, पीतांबर फहरावत।
जिहिं-जिहिं भाँति ग्वाल सब बोलत, सुनि स्रवननि मन राखत।
आपुन टेर लेत ताही[8] सुर, हरषत पुनि[9] पुनि भाषत।
देखत नंद-जसोदा-रोहिनि, अरु देखत ब्रज-लोग।
सूर स्याम गाइनि सँग आए मैया लीन्हे रोग ॥४६३॥१११॥

* राग गौरी

माँगि लेहु जो भावै प्यारे।
बहुत भाँति मेवा सब मेरैं षटरस[10] ब्यंजन न्यारे।

॥ ये पाद (ना), (रा), (श्या) में नहीं हैं।
① तुम्हरी महिमा गाइ—१४। ② सहसानन निसि दिन रट तऊ न गाई जाई—१४। ③ कौ महातम—२, १६। ④ बच्छ हरन लीला भई कछु जस कहियत गाइ—२, १८, १६। ⑤ लीन्हो १, ३, ६, ११, १४। जनम करम बिस्तार—२, १६। ⑥ प्रताप—६, ११, १४, १७। ⑦ जपत—१, ३, ६, ११, १५। ⑧ लीन्हे—१, ३, ६, ११, १४, १६। ⑨ मुख—१, ६, ११, १२, १६।
* (ना) देवगिरी।
⑩ षट रस के प्रकार हैं न्यारे—१, २, ३, ६, ११, १४।

सबै जोरि राखति हित तुम्हरैं मैं जानति तुम बानि ।
तुरत मथ्यौ दधि माखन आछौ, खाहु देउँ सो आनि ।
माखन दधि लागत अति प्यारौ, और न भावै मोहि ।
सूर जननि माखन-दधि दीन्हौ, खात हँसत[1] मुख जोहि ॥४६४॥१११२॥

राग आसावरी

† सुनि मैया, मैं तो पय पीवौं मोहिं अधिक रुचि आवै रो ।
आजु सबारैं धेनु दुही मैं, वहै दूध मोहिं प्यावै रो ।
और धेनु कौ दूध न पीवौं, जो करि कोटि बनावै री ।
जननी कहति दूध धौरी कौ, पुनि पुनि सौंह करावै री ।
तुम तैं मोहिं और को प्यारौ, बारंबार मनावै री ।
सूर स्याम कौं पय धौरी कौ माता हित सौं ल्यावै री ॥४६५॥१११३॥

* राग गौरी

‡ आछौ दूध पियौ मेरे तात ।
तातौ लगत बदन नहिं परसत, फूँक देति है मात ।
औटि[2] धर्‌यौ है अबहीं मोहन, तुम्हरैं हेत बनाइ ।
तुम पीवौ, मैं नैननि देखौं, मेरे कुँवर कन्हाइ ।
दूध अकेली धौरी कौ यह,[3] तन कौं अति हितकारि ।
सूर स्याम पय पीवन लागे, अति तातौ दियौ डारि ॥४६६॥१११४॥

---

① हेत—२ । सतत—३ ।
† यह पद (का) में नहीं ।
* (ना) जैतश्री । (के) आसावरी ।
‡ यह पद (का) में नहीं है ।
② (श्या) में इस चरण के स्थान पर यह चरण है—बहुत जतन करि कै राख्यौ यह तुम कारन बल भाई । ③ है—१, ६, ११, १७ ।

* राग बिहागरौ

† देखत[1] पय पीवत बलराम ।

तातौ लगत डारि तुम दीन्हौ, दावानल अँचवत[2] नहिँ ताम ।
कबहूँ रहत मौन धरि जल मैँ, कबहूँ फिरत बँधावत दाम ।
कबहुँ अघासुर बदन समाने, कबहुँ अँध्यारैँ जात न धाम ।
कबहुँ करत बसुधा सब त्रैपद, कबहुँ देहरी उलँघि न जाइ ।
षट-दस-सहस गोपिका बिलसत, बृंदाबन रस[3]-रास रमाइ ।
यहै जानि अवतार धरत ब्रज, सुर-नर-मुनि यह भेद न पाइ ।
राजा छोरि बंदि तैँ ल्याए, तिहूँ लोक मैँ बिदित बड़ाइ ।
जुग-जुग ब्रज अवतार लेत प्रभु[4], अखिल लोक ब्रह्मांड के नाथ ।
येई गोपो येई ग्वाल यहै सुख यह लीला कहुँ तजत न साथ ।
येई कान्ह यहै बृंदाबन यहै जमुना येई कुंज-बिहार ।
यहै बिहार करत निसि[5]-बासर, येई हैँ जन[6] के प्रतिपार ।
येई हैँ श्रीपति भुव नायक, येई हैँ करता संसार ।
रोम-रोम-प्रति अंड कोटि रचे, मुख चूमति जसुमति कहि बार ।
इन कंसहिँ कै बार सँहारचौ, धारचौ ब्रह्म कृष्न अवतार ।
माखन खात चुराइ घरनि तैँ, बहुत बार भए नंद-कुमार ।

---

* (ना) देवगिरी । (क) बिलावल ।

† यह पद (का) मेँ नहीँ है । इस पद तथा 'बलि बलि चरित गोकुल राइ' इत्यादि पद को श्रीसूरदासजी ने श्रीबलरामजी की उक्ति मे रक्खा है । इन दोनों में कु ऐसी घटनाओं का समावेश ह जो भगवान् के कृष्णावतार की उन लीलाओं से भी सबधित हे जो प्रस्तुत अवतार मे अब तक घटित नहीँ हुई । कुछ समीक्षक इन्हे काल-विरुद्ध मान सकते हैँ । परतु सूरदासजी की भावना के अनुसार, जिसे उन्होने 'बहुत बार भए नदकुमार' पक्ति मे पूरा प्रगट भी किया है—इसमेँ कोई असंगति नहीँ आती ।

(१) पय पीवत देखत बलराम—२, ३, ११, १४ । (२) पीवत—१, ११ । (३) निसि—३, ६, १४, १७ । (४) हरि—३, ६, १४, । (५) नित ही नित-२, ३, ६, १०, १७ । (६) ब्रज—३ ।

आदि अंत कोऊ नहिँ जानत, हरता-करता सब संसार।
सूरदास प्रभु बाल-अवस्था तरुन वृद्ध कौ करै निवार ॥४६७॥११५॥

* राग केदारौ

† बलि[1] बलि चरित गोकुलराइ।
दवानल कौ पान कीन्हौ, पियत दूध सिराइ।
पूतना के प्रान सोखे,[2] आपु उर लपटाइ।
कहत जननी दूध डारत, खिझत कछु अनखाइ।
धरचौ गिरिवर, दोहनी कर धरत बाहँ पिराइ।
सकट भंजन, परसि तिय-कुच कठिन लागत पाइ।
तृनाव्रत आकास तैँ पटक्यौ सिला पर[3] जाइ।
डरत लाल हिँडोल झूलत, हरै[4] देत झुलाइ।
बकासुर की चोँच फारी, सखनि[5] प्रगट दिखाइ।
कीर पिँजरैँ गहत अँगुरी, ललन लेत भजाइ।
बिना दीपक, सदन[6] सूनैँ कबहुँ धरत न पाइ।
अघासुर-मुख पैठि निकसे, बाल बच्छ छुड़ाइ[7]।
लिख्यौ काजर नाग द्वारैँ[8], स्याम देखि डराइ।
नचत[9] काली नाग फन पर सप्त ताल बजाइ।
जमल अर्जुन तोरि तारे, हृदय प्रेम बढ़ाइ।
हठत[10] तोरि पलास पल्लव देहु, देत दिखाइ।

---

* (ना) विभास। (क, का, श्या) रामकली। (रा) नट।

† यह पद कुछ प्रतियों में दशम स्कंध के आरंभ में मिलता है।

① अदभुत—२, १६। ② लीन्हे—१, ११। ③ परयौ आइ—२, ३, १६। ④ खरे—२, ३, ६, १४, १६। ⑤ सबै दिष्टि—१, ११। ⑥ सदन महिया तहां—१, ११। घर अँधेरैँ स्याम—२। ⑦ जिवाइ—२, ३, १४, १६। ⑧ कौरैँ—१, ११, १६। ⑨ सहस फन पर निरत कीनौ—२, १६। ⑩ झटकि पात—१, ११। कहति मात—२।

हरे बालक बच्छ नव कृत, हेत दौरी माइ।
चरत[1] धेनु न मिलीं तिनकौं द्रुमनि ढूँढत जाइ।
बृषभ[2]-गंजन, मथन-केसी, हने पूँछ फिराइ।
भजत सखनि समेत मोहन, देखि ब्याई गाइ।
गोप-नारी-संग मोहन, कियौ रास बनाइ।
कहति जननी ब्याह कौं तब रहत[3] बदन दुराइ।
कहा बरनौं कोटि रसना हिऐं बुधि उपजाइ।
सूर[4] प्रभु की अगम महिमा देखि अगनित भाइ ॥४६८॥११६॥

धेनुक-वध

* राग भैरव

† सखा कहन लागे हरि सौं तब। चलौ ताल-बन कौं जैऐ अब।
ता बन मैं फल बहुत सुहाए। वैसे हम कबहूँ नहिं खाए।
धेनुक असुर तहाँ रखवारी। चलौ कह्यौ हँसि बल बनवारी।
बिहँसत हरि सँग चले गुवाला। नाचत गावत गुन-गोपाला।
सोयौ हुतौ असुर तरु-छाया। सुनत सब्द[5] तुरतहिं[6] उठि धाया।
हलधर कौं देख्यौ तिन आए। हाथ दोऊ बल करि जु चलाए।
पकरि पाइँ बलभद्र फिरायौ। मारि ताहि[7] तरु माहिं गिरायौ।
और बहुत ताकौ परिवारा। हरि-हलधर मिलि सबकौं मारा।
ग्वालनि बन-फल रुचि सौं खाए। बहुरौ बृंदाबनहिं सिधाए।
हरि-हलधर-छबि बरनि न जाई। सूरदास यह लीला गाई ॥४६६॥११७॥

---

① फूटि पसु जब रहत बन मैं--२, १६। ② बृषभ केसी हतन कीन्यौ हनै बच्छ पराइ-२। ③ लजत—२, १६। हँसत—६, १७। ④ सूर के प्रभु रसिक हरि पर अग अग बिहाइ (बिभाइ)—१, ११। सूर बाल विनोद बलकृत अग अग सुभाइ-३, ६, १७।

* (ना) सूहौ। (का) बिलावल।

† यह पद (का, के, पू) में नहीं है।

⑤ सोर--१, ३, ११, १५। ⑥ तरु तैं—१, ११। तरु लै—२। ⑦ तार पर ताहि गिरायौ-२, ३।

कालीदह-जल-पान * राग सारंग

चरावत बृंदाबन हरि गाइ ।
सखा लिए सँग सुबल, सुदामा, डोलत हैं सुख पाइ ।
क्रीड़ा करत जहाँ-तहँ सब मिलि, अति आनंद बढ़ाइ ।
बगरि गईं गैयाँ बन-बीथिनि, देखौं अति बहुताइ ।
कोउ गए ग्वाल गाइ बन घेरन[1] कोउ गए बछरु लिवाइ ।
आपुहिं रहे अकेले बन मैं, कहुँ हलधर रहे जाइ ।
बंसीबट सीतल जमुना-तट[2], अतिहिं परम सुखदाइ ।
सूर स्याम तहँ बैठि बिचारत, सखा कहाँ बिरमाइ ॥५००॥१११८॥

* राग सारंग

बार-बार हरि कहत मनहिं मन, अबहिं रहे सँग चारत धेनु ।
ग्वाल-बाल कोउ कहूँ न देखौं, टेरत नाउँ लेत दै सेनु ।
आलस-गात जात[3] मन मोहन, सोच[4] करत, तनु नाहिं न चैनु ।
अकनि रहत कहुँ, सुनत नहीं कछु, नहिं गो-रंभन बालक-बैनु ।
तृषावंत सुरभी बालक-गन, काली दह अँचयौ जल जाइ ।
निकसि आइ सब तट ठाढ़े भए, बैठि गए जहँ-तहँ अकुलाइ ।
बन-घन ढूँढ़ि स्याम तहँ आए, गो-सुत ग्वाल रहे मुरझाइ ।
मन मैं ध्यान करत ही जान्यौ, कालो उरग रह्यौ ह्याँ आइ ।
गरुड़ त्रास करि आइ रह्यौ दुरि, अंतरजामी सब के नाथ ।
अमृत दृष्टि भरि चितए सूर प्रभु, बोलि उठे गावत हरि गाथ॥५०१॥१११९

---

* (ना) देवगधार । (रा) टोड़ी ।
① हेरन—३, १६ । ②
जल—३ ।
③ (रा) गोरी ।
③ जानि—१, ११, १५, १६ । ④ बैठे छाहँ करत सुख चेनु—१, २, ११ । बैठे छाहँ देत तन चैन—३ ।

* राग सारंग

† आवहु[1] आवहु इतै, कान्ह जू पाई हैं सब धेनु।
कुंज-कुंज में देखि हरे तृन, चरति परम सुख चैनु।
द्रुमनि चढे सब सखा पुकारत, मधुर सुनावत बैनु।
जनि धावहु बलि चरन मनोहर, कठिन कंट मग ऐनु।
तुम[2] हमकौं कहँ कहँ न उबारचौ, पियो काली[3]-मुँह-फैनु।
सूर स्याम संतनि-हित-कारन, प्रगट भए सुख दैनु ॥५०२॥११२०॥

राग सारंग

† पाई पाई है रे भैया, कुंज-पुंज में टाली।
अबकैं अपनी हटकि चरावहु, जैहैं भटकी[4] घाली।
आवहु बेगि सकल दहुँ दिसि तैं कत डोलत अकुलाने ?
सुनि मृदु-बचन देखि उन्नत कर, हरषि सबै समुहाने।
तुम तौ फिरत अनत ही ढूँढ़त, ये बन फिरतिं अकेली।
बाँकी[5] गई कौन पैं ड़ै ह्वै, सघन बहुत द्रुम बेली।
सूरदास प्रभु मधुर बचन कहि, हरषित[6] सबहिं बुलाए।
नृत्य करत आनँद गो चारत सबै[7] कृष्न पै आए ॥५०३॥११२१॥

* राग नट नारायनी

मोहिं बन छाँड़ि आए ग्वाल।
कहाँ तैं कहँ[8] आइ निकसे, करे कैसे ख्याल।

---

* (ना) टोड़ी।

† यह पद (स, ल, वृ, क, कां, रा, श्या) में नहीं है।

(१) आवौ आवौ कन्हैया पाई हैं सब धेनु—६, १७। (२) बार-बार ब्रज कौन उबारै—१, ११, १५। (३) कालीदह—१। काली मथि—६, ६, ११, १७।

† यह पद (वे, ल, शा, का, के, गो, जो, पू) में है।

(४) हटकी—१, ६, १७। (५) ह्वा की गाइ कौन पर लै हो—१, ६, ११। (६) राखत—१, ११। (७) राम कृष्न रँग आए—६।

* (ना) सारंग। (कां, श्या) गोरी। (रा) कल्यान।

(८) चलि कहा आए निकसि—१७।

मुरछि काहैँ गिरे धरनी, कहा यह जंजाल ।
मैँ इहाँ जो आइ देखौं, परे सब बेहाल ।
आनि अँचयौ जल जमुन कौ, तबहिँ गए अकुलाइ ।
निकसि कै जब कूल आए, गिरि परे मुरझाइ[1] ।
प्रान बिनु हम सब भए ते, तुमहिँ दियौ जिवाइ ।
सूर के प्रभु तुम जहाँ तहँ हमहिँ लेत बचाइ ॥५०४॥११२२॥

राग गौरी

† बलदाऊ कहि स्याम पुकारयौ ।
आवहु बेगि चलौ घर जैऐ, बनहीँ होत अँध्यारौ ।
ल्याए बोलि सखा हलधर कौँ, हँसे स्याम मुख चाहि ।
बड़ी बेर भई बन[2] भीतर तुम, गाइनि लेहु निबाहि ।
हेरी देत चले सब बन तैँ गोधन दियौ चलाइ ।
सूरदास प्रभु राम स्याम दोउ ब्रज-जन के सुखदाइ ॥५०५॥११२३॥

ब्रज-प्रवेश-शोभा राग गौरी

वै मुरली की टेर सुनावत ।
बृंदाबन सब बासर बसि निसि-आगम जानि चले ब्रज आवत ।
सुबल, सुदामा, श्रीदामा सँग, सखा मध्य मोहन छबि पावत ।
सुरभी-गन सब लै आगैँ करि कोउ टेरत[3] कोउ बेनु बजावत ।
केकी-पच्छ-मुकुट सिर भ्राजत, गौरी राग मिलै सुर[4] गावत ।
सूर स्याम के ललित बदन पर, गोरज-छबि कछु[5] चंद छपावत ॥५०६॥११२४॥

---

① सब आइ—१ ६, ११, १४, १७, १६ । सब धाइ—२ ।
† यह पद (ना) में नहीं है ।
② तुमहिँ कन्हैया—१, ३, ६, ११, १७ ।
③ निर्तत—१६, १६ । ④ रस—१, ६, ११, १४, १७ । संग—३ । ⑤ कहुँ—१, ११, १५ । मनौ—२, १६, १८, १६ ।

राग गौरी

† हरि आवत गाइनि के पाछे।
मोर-मुकुट मकराकृति कुंडल, नैन बिसाल कमल तैं आछे।
मुरली अधर धरन[1] सीखत हैं, बनमाला पीतांबर काछे।
ग्वाल-बाल सब बरन-बरन के, कोटि मदन[2] की छबि किए पाछे।
पहुँचे आइ स्याम ब्रज पुर मैं, घरहिं चले मोहन-बल आछे।
सूरदास प्रभु दोउ जननी मिलि, लेतिं बलाइ बोलि मुख बाछे ॥५०७॥११२५

राग कल्यान

‡ आनँद सहित सबै ब्रज आए।
धन्य जसोदा तेरौ बारौ, हम सब मरत जिवाए।
नर-बपु[3] धरे देव यह कोऊ, आइ लियौ अवतार।
गोकुल-ग्वाल-गाइ-गोसुत के येई राखनहार।
पय पीवत पूतना निपाती, तृनावर्त इहिं भाँत।
वृषभासुर-बत्सासुर मारचौ, बल-मोहन दोउ भ्रात[4]।
जब तैं जनम लियौ ब्रज-भीतर, तब तैं यहै उपाइ।
सूर स्याम के बल-प्रताप तैं, बन-बन चारत गाइ ॥५०८॥११२६॥

* राग गौरी

तुम कत गाइ चरावन जात।
पिता तुम्हारौ नंद महर सौ अरु[5] जसुमति सी जाकी मात।

---

† यह पद (शा) में नहीं है।

① धरें—१६। ② मदन की छबि कौ पाछै—२। मदन के छबि के बाछे—३। मदन छबि बाछे—६, १७। मदन की छबि कौ बाछे—१४, १६।

‡ यह पद (ल) में नहीं है।

③ तन—२, १६। ④ न्याति—३, ६।

* (ना) कान्हरौ।

⑤ जाकै जसुमति सी है मात—१, ३, ११, १२, १७

खेलत रहौ आपने घर मैं, माखन दधि भावै सो[1] खात।
अंमृत बचन कहौ मुख अपने, रोम-रोम पुलकित सब गात।
अब[2] काहू के जाहु कहूँ जनि, आवति हैं जुवती इतरात।
सूर स्याम मेरे नैननि आगे तैं, कत कहूँ जात हौ तात ॥५०६॥११२७॥

* राग गौरी

† मैया हौं न चरैहौं गाइ।
सिगरे[3] ग्वाल घिरावत मोसौं, मेरे पाइ पिराइ।
जौ न पत्याहि पूछि बलदाउहिं, अपनी सौंह दिवाइ।
यह सुनि माइ जसोदा ग्वालनि, गारी देति रिसाइ।
मैं पठवति अपने लरिका कौं, आवै मन बहराइ।
सूर स्याम मेरौ अति बालक, मारत ताहि रिंगाइ ॥५१०॥११२८॥

* राग गौरी

‡ बल मोहन बन तैं दोउ आए।
जननि जसोदा मातु रोहिनी, हरषित कंठ लगाए।
काहैं आजु अबार लगाई, कमल बदन कुम्हिलाए।
भूखे भए आजु दोउ भैया, करन कलेउ न पाए।
देखहु जाइ कहा जे बन कियौ, रोहिनि तुरत पठाई।
मैं अन्हवाए देति दुहुँनि कौं, तुम अति करौ चँड़ाई।
लकुट लियौ, मुरली कर लीन्हीं हलधर दियौ बिषान।

---

① तब—१, २, ११, १६। जो—३। ② अब काहू के कहे जाहु जिनि—१६, १८, १६।

* (ना) केदारा। (का, के, क, जौ, कौं, पू, श्या) सार ग।

† यह पद (ल) में नहीं है।

③ सिगरे (सिगरी) गाइ—२, १६।

: (ना) बिहागरौ।

‡ यह पद (का) में नहीं है।

नीलांबर पीतांबर लीन्हे, सैँति धरति करि प्रान।
मुकुट उतारि धरचौ लै मंदिर, पोँछति है अँग-धातु।
अरु[1] बनमाल उतारति गर तैँ, सूर स्याम की मातु ॥५११॥११२६

राग कल्यान

अंग-अभूषन जननि उतारति।
दुलरी ग्रीव माल मोतिनि की, लै केयूर[2] भुज स्याम निहारति।
छुद्रावली उतारति कटि तैँ सैँति धरति मनहीँ मन वारति।
रोहिनि भोजन करौ चँड़ाई बार-बार कहि-कहि करि[3] आरति।
भूखे भए स्याम हलधर दोउ,[4] यह कहि अंतर प्रेम बिचारति।
सूरदास प्रभु मातु जसोदा, पट लै, दुहुनि अंग-रज झारति॥५१२॥११३०॥

राग कल्यान

ये दोऊ मेरे गाइ चरैया।
मोल बिसाहि लियौ मैँ तुमकौँ जब दोउ रहे नन्हैया।
तुमसौँ टहल करावति निसि-दिन और न टहल करैया।
यह सुनि स्याम हँसे कहि दाऊ, झूठ कहति है मैया।
जानि परत नहिँ साँच झुठाई, चारत[5] धेनु झुरैया।
सूरदास[6] जसुदा मैँ चेरी कहि-कहि लेति बलैया ॥५१३॥११३१॥

* राग कल्यान

† यह कहि जननि दुहुँनि उर लावति।
सुमना-सत अँग परसि, तरनि-जल, बलि-बलि गई कहि-कहि अन्हवावति।

---

① उर—१६। ② ल भुज तैँ उर स्याम निहारति—२। के उर—१, ६, ११, १५, १७, १६। ③ गहिड़ारति—२। ④ ए—१, ११। री—६। ⑤ धेनु चरावत रहत झुरैया (छुरैया)—१, २, ३, ६, ६, ११, १५, १६, १७, १८। ⑥ सूरदास प्रभु हँसति जसोदा मैँ कहि लेति बलैया—१, २, ३, ६, ६, ११, १४, १६, १७, १८।

* (ना) केदारो।

† यह पद (का) में नहीँ है।

सरस बसन तन पोंछि गई लै, षट रस की ज्यौनार जिँवावति ।
सीतल जल कपूर-रस रचयौ, झारी कनक लिए अँचवावति ।
भरचौ चुरू मुख धोइ तुरतहीं, पीरे-पान-बिरो मुख नावति ।
सूर स्याम सुख जननि मुदित मन, सेज्जा पर सँग लै पौढावति ॥५१४॥११३२॥

* राग बिहागरौ

† सोवत नींद आइ गई स्यामहिं ।
महरि उठी पौढाइ दुहुँनि कौं, आपु लगी गृह कामहिँ ।
बरजति हैं घर[1] के लोगनि कौं, हरुऐं लै-लै नामहिँ ।
गाढैं बोलि न पावत कोऊ, डर मोहन बलरामहिँ ।
सिव सनकादि अंत नहिँ पावत, ध्यावत अह[2]-निसि-जामहिं ।
सूरदास-प्रभु ब्रह्म सनातन, सो सोवत नँद-धामहिँ ॥५१५॥११३३॥

राग बिहागरौ

देखत नंद कान्ह अति सोवत ।
भूखे भए आजु बन-भीतर, यह कहि-कहि मुख जोवत ।
कह्यौ नहीं मानत काहू कौ, आपु हठी दोउ बीर ।
बार-बार तनु पोंछत कर सौं, अंतहिं प्रेम की पीर ।
सेज मँगाइ लई तहँ अपनी, जहाँ स्याम-बलराम ।
सूरदास प्रभु कैं ढिग सोए[3], सँग पौढी नँद-बाम ॥५१६॥११३४॥

* राग बिहागरौ

जागि उठे तब कुँवर कन्हाइ ।
मैया कहाँ गई मो ढिग तैं, सँग सोवति[4] बल भाई ।

---

* (ना) केदारौ ।
† यह पद (का) में नहीं है ।
① घर के सब लोगनि—१ ।
② हैं—१, २, ३, ११, १६ ।
③ सोई संग नद की बाम—१६ ।
④ सोवत जान्यौ—१, ३, ११, १६ ।
⑤ (का) गौरी ।

जागे नंद, जसोदा जागी, बोलि लिए हरि पास।
सोवत झझकि उठे काहे तैं, दीपक कियौ प्रकास।
सपनैं कूदि परचौ जमुना-दह, काहूँ दियौ गिराइ।
सूर स्याम सौं कहति जसोदा, जनि हो[1] लाल डराइ॥५१७॥११३५॥

* राग गौरी

† मैं बरज्यौ जमुना-तट जात।
सुधि रहि गई न्हात की तेरैं, जनि डरपौ मेरे तात।
नंद उठाइ लियो कोरा करि, अपनैं सँग पौढाइ।
बृंदाबन मैं फिरत जहाँ-तहँ, किहिं कारन तू जाइ।
अब जनि जैहौ[2] गाइ चरावन, कहँ[3] को रहति बलाइ!
सूर स्याम दंपति बिच सोए, नींद गई तब आइ॥५१८॥११३६॥

* राग कल्यान

‡ सपनौ सुनि जननी अकुलानी।
दंपति बात कहत आपुस मैं, सोवत सारँगपानी।
या ब्रज कौ[4] जीवन यह ढोटा, कह देख्यौ इहिं आजु!
गाइ चरावन जान न दीजै, याकौ है कह काजु।
गृह-संपति द्वै तनक दुटौना, इनहीं लौं सुख-भोग।
सूर स्याम बन जात चरावन, हँसी करत सब लोग॥५१९॥
॥११३७॥

---

① मेरे—२, १६।
* (ना) गुनकली।
† यह पद (का) में नहीं है।
② नहिं जैहौ—२। ③ तहँ कोउ रहति बलाइ—१४, १६। (ना) सुधराई।
‡ यह पद (का) में नहीं है।
④ की जीवनि—६, १७।

* राग भैरवी

† इहिँ अंतर भिनुसार भयौ ।
तारा गन सब गगन छपाने, अरुन उदित, अँधकार गयौ ।
॥ जागी महरि, काज-गृह लागी, निसि कौ सब दुख भूलि गयौ ।
प्रातः स्नान करन जमुना कौं, नंदहिँ तुरत उठाइ दयौ ।
मथनहारि सब ग्वारि बुलाईं, भोर भयौ उठि मथौ दह्यौ ।
सूर नंद घरनी आपुन हू, मथन[1] मथानी-नेति गह्यौ ॥५२०॥११३८॥

कमल-पुष्प मँगाना, काली-दमन लीला

* राग बिलावल

नारद सौं नृप करत बिचार । ब्रज[2] मैं ये दोउ कोउ अवतार ।
¶ नंद-सुवन बलराम कन्हाई । इनकी गति मैं कछू न पाई ।
तृनावर्त से दूत पठाए । ता पाछैं कागासुर धाए ।
बकी पठाइ दई पहिलैहीं । ऐसनि कौ बल वै सब[1] लैहीं ।
उनतैं कछू भयौ नहिं काजा । यह सुनि-सुनि मोहिं आवति लाजा ।
अब मुनि तुम इक बुद्धि बिचारहु । सूर स्याम बलरामहिँ मारहु ॥५२१॥
॥११३९॥

× राग बिलावल

नारद ऋषि नृप सौं यौं[4] भाषत ।
वै हैं काल तुम्हारे प्रगटे, काहैं उनकौं राखत ।

---

* (ना) सुघराई ।

† यह पद (का) में नहीं है ।

|| यह चरण (ना) में है । इसके स्थान पर उसमें चौथा चरण यह है—हरि चरित्र हरि जू जानत है नित्त चरित्र नयौ ।

① मथति—१, २, ३, १६ । मथत—६, १७ । (ना) रामकली ।

② ब्रज मैं कछ न पाइयै पार—२ । ब्रज मैं ये दोऊ अवतार—१७ । ब्रज मैं ये कोऊ अवतार—१६ ।

¶ यह युग्म (ना) में नहीं है ।

③ वैसेहि—१, ३, ६, ११, १४, १६ ।

× (ना) विभास । (का) धनाश्री ।

④ यह—१, ३, ११ । पुनि—२ ।

काली उरग रहै जमुना मैं, तहँ तैं कमल मँगावहु ।
दूत पठाइ देहु ब्रज ऊपर, नंदहिं अति डरपावहु ।
यह सुनि कै ब्रज लोग डरैंगे, वै सुनिहैं यह बात ।
पुहुप लैन जैहैं नँद-ढोटा, उरग करै तहँ घात ।
यह सुनि कंस बहुत सुख पायो, भली कही यह मोहि ।
सूरदास प्रभु कौं मुनि जानत, ध्यान धरत मन जोहि ॥५२२॥११४०॥

* राग सूहौ

कंस बुलाइ दूत इक लीन्हौ ।
कालीदह के फूल मँगाए, पत्र लिखाइ ताहि कर दीन्हौ ।
यह कहियौ ब्रज जाइ नंद सौं, कंस राज अति[1] काज मँगायौ ।
तुरत पठाइ दिऐं ही बनिहै, भली भाँति कहि-कहि समुझायौ ।
यह अंतरजामी जानी जिय, आपु रहे, बन ग्वाल पठाए ।
सूर स्याम, ब्रज-जन-सुखदायक, कंस-काल, जिय हरष बढाए ॥५२३॥
॥११४१॥

* राग रामकली

खेलन चले नंद-कुमार ।
दूत आवत जानि ब्रज मैं, आपु दीन्हयौ टार ।
नंद जमुना न्हाइ आए, महरि ठाढ़ी द्वार ।
नृपति दूत पठाइ दीन्हयौ, चल्यौ ब्रज इहिं[2] कार ।
महर पैठत सदन भीतर, छींक बाईं धार ।
सूर नंद कहत महरि सौं, आजु कहा बिचार ॥५२४॥११४२॥

---

* (ना) देवगधार । (का,श्या) सूहौ बिलावल । (रा) बिलावल ।

① इक—६ । अप—१६ ।

- (ना) ललित ।

② अहँकार—१, २, ३, ६, ११, १५, १७ ।

* राग सूहौ

पुनि-पुनि कंस मुदित मन कीन्हौ ।
दूतहिँ प्रगट कही यह बानी, पत्र नंद कौं दीन्हौ ।
कालीदह के कमल पठावहु, तुरत देखि यह पाती ।
जैसैं काल्हि कमल ह्याँ पहुँचे, तू कहियौ इहिँ भाँती ।
यह सुनि दूत तुरतहीं धायौ, तब पहुँच्यौ ब्रज जाइ ।
सूर नंद-कर पाती दीन्हीं, दूत कह्यौ समुझाइ ॥५२५॥११४३॥

* राग सूहौ

पाती बाँचत नंद डराने ।
कालीदह के फूल पठावहु सुनि सबही घबराने ।
जौ मोकौं नहिँ फूल पठावहु, तौ ब्रज देहुँ उजारि ।
महर, गोप, उपनंद न राखौं, सबहिनि डारौं मारि ।
पुहुप देहु तौ बनै तुम्हारी, ना तरु गए बिलाइ ।
सूर स्याम[२]-बलराम तिहारे, माँगौं उनहिँ धराइ ॥५२६॥११४४॥

राग बिलावल

नंद सुनत मुरझाइ गए ।
पाती बाँची, सुनी दूत-मुख, यह बानी सुनि चकित भए ।
बल मोहन खटकत वाकैं मन, आजु कही यह बात ।
॥ कालीदह के फूल कहौ धौं, को आनै, पछितात ।

---

* (ना) देवगिरी । सारंग । (का, का, रा) बिलावल । (क) * (ना) गूजरी । (का) बिलावल । (रा) सूहा बिलावल ।
① मँगाए (मँगावहु) सुनी सबनि ब्रज लोग घराने—१, ११, १२ । पठावहु सुनि सब (यह) ब्रज लोग घराने—२, ३, ६, ६, १७ । ② बल मोहन तेरे—१, २, ३, ११, १७ ।
॥ यह चरण (के, पू) में नहीं है । इसके स्थान पर उनमें पाचवां चरण यह है—कंस राइ इक दूत पठायौ कमल फूल भेजहु तुम तात ।

और गोप सब नंद बुलाए, कहत सुनौ यह बात ।
सुनहु सूर नृप इहिँ ढँग आयौ, बल मोहन पर घात ॥५२७॥११४५॥

* राग जैतश्री

आपु चढ़ै ब्रज-ऊपर काल[1] ।
कहाँ निकसि जैऐ को राखै, नंद कहत बेहाल[2] ।
मोहिँ नहीँ जिय कौ डर नैँकुहुँ, दोउ सुत कौँ डरपाउँ ।
गाउँ तजौँ, कहुँ जाउँ निकसि लै, इनहीँ काज पराउँ ।
अब उबार नहिँ दीसत कतहूँ, सरन राखि को लेइ ।
सूर स्याम कौँ बरजति माता, बाहिर जान न देइ ॥५२८॥११४६॥

* राग आसावरी

नंद-घरनि ब्रज-नारि बिचारति ।
ब्रजहिँ बसत सब जनम सिरानौ, ऐसी करी[3] न आरति ।
कालीदह के फूल मँगाए, को आनै[4] धौँ जाइ ।
ब्रजबासी नातरु सब मारै, बाँधै बलऽरु[5] कन्हाइ ।
यहै कहत दोउ नैन ढराने, नंद-घरनि दुख पाइ ।
सूर स्याम चितवत माता-मुख, बूझत बात बनाइ ॥५२९॥११४७॥

× राग आसावरी

पूछौ जाइ तात सौँ बात ।
मैँ बलि जाउँ मुखारबिंद की, तुमहीँ काज कंस अकुलात ।

---

* (ना) धनाश्री ।

① कालि (काली)—१, ११, १५ । काल्हि—२, ६, १७ ।

② है भाल्हि (भालि)—६, १४, १७ ।

(ना) जैतश्री । (का) गौरी ।

③ कंस करी नहिँ आरति—१, २, ३, ६, ६, ११, १४, १५ ।

④ आनन अब —२ । ⑤ बल न कन्हाइ—१, २, ३, ६, ११, १४ ।

× (ना) गूजरी । (के, पू) नट ।

आए स्याम नंद पै धाए, जान्यौ मातु-पिता बिलखात[1]।
अबहीं दूरि करौं दुख इनकौ, कंसहिं पठै देउँ जलजात।
मोसौं कहौ बात बाबा यह, बहुत करत तुम सोच बिचार।
कहा कहौं तुमसौं मैं[2] प्यारे, कंस करत तुमसौं कछु झार।
जब तैं जनम भयौ है तुम्हरौ, केते करबर टरे कन्हाइ।
सूर स्याम कुलदेवनि तुमकौं, जहाँ तहाँ करि लियौ सहाइ ॥५३०॥

॥११४८॥

* राग बिलावल

तुमहिं कहत कोउ करै सहाइ।
सो देवता संगहीं मेरैं, ब्रज तैं अनत कहूँ नहिं जाइ।
वह[3] देवता कंस मारैगौ, केस धरे धरनी घिसियाइ।
वह देवता मनावहु सब मिलि तुरत कमल जो देइ पठाइ।
बाबा नंद, झखत किहिं कारन, यह कहि मया[4] मोह अरुझाइ[5]।
सूरदास प्रभु मातु-पिता कौ, तुरतहिं दुख डार्‌यौ बिसराइ ॥५३१॥

॥११४९॥

* राग नट

खेलन चले कुँवर कन्हाइ।
कहत घोष-निकास जैये, तहाँ खेलैं धाइ।
गेंद खेलत बहुत बनिहै, आनौ[6] कोऊ जाइ।
सखा श्रीदामा गए घर, गेंद तुरतहिं आइ।

---

① अकुलात—१, २, ३, ६, ११, १४। ② मेरे—१, २, ३, ११।
* (ना) ललित।
③ बड़ौ देव गिरि गोबर्द्धन हे जो पुरवै आसा मन भाइ—१४।
④ माया मो अरुझाइ—३। ⑤ उपजाइ—२।
⑥ ल्याव—१६।
१० (ना) देवगिरी। (का) रामकली।

अपनैं कर लै स्याम देख्यौ, अतिहिं हरष बढ़ाइ ।
सूर के प्रभु सखा लीन्हें[1] करत खेल बनाइ ॥५३२॥११५०॥

* राग सारंग

खेलत स्याम, सखा लिए संग ।
इक मारत, इक रोकत[2] गेंदहिं, इक भागत करि नाना रंग ।
मार परसपर करत आपु मैं, अति आनंद भए मन माहिं ।
खेलत ही मैं स्याम सबनि कौं, जमुना-तट कौं लीन्हे जाहिं ।
मारि भजत जो जाहि, ताहि सो मारत, लेत आपनौ दाउ ।
सूर स्याम के गुन को जानै, कहत और कछु और उपाउ ॥५३३॥
॥११५१॥

* राग गौरी

लै गए टारि जमुन-तट ग्वालनि ।
आपुन जात कमल के काजहिं, सखा लिए सँग ख्यालनि ।
जोरी[3] मारि भजत उतही कौं, जात जमुन कैं तीर ।
इक धावत पाछैं उनहीं के, पावत नहीं अधीर ।
रौंटि करत तुम खेलत ही मैं, परी कहा यह बानी ?
सूर स्याम कौं कहत ग्वाल सब, तुमहिं भलैं करि जानी ॥५३४॥
॥११५२॥

× राग नट

स्याम सखा कौं गेंद चलाई ।
श्रीदामा मुरि अंग बचायौ, गेंद परी कालीदह जाई ।

---

(१) लै सँग—१६ । * (ना) आसावरी । (क, रा) नट ।
(२) लोकत—२, ३, ११, १७ । (ना) बिलावल । का) आसावरी । (के) सारग । (कां, पू, रा) नट ।
(३) चोरा—२ । जोरे—३ । × (ना) बिलावल । (के, पू) सोरठी । (रा) सारग ।

धाइ गहो तब फेँट स्याम की, देहु न मेरी गेँद मँगाई ।
और सखा जनि मोकौं जानौ, मोसौं तुम जनि करौ ढिठाई ।
जानि-बूझि तुम गेँद गिराई, अब दीन्हैं ही बनै कन्हाई ।
सूर सखा सब हँसत परसपर, भली करी हरि गेँद गँवाई[1] ॥५३५॥११५३॥

राग सोरठ

फेँट छाँड़ि मेरी देहु श्रीदामा ।
काहे कौं तुम रारि बढावत, तनक बात कैं कामा ।
मेरी गेँद लेहु ता बदलैं, बाहँ गहत हौ धाइ ।
छोटौ बड़ौ न जानत काहूँ, करत बराबरि आइ ।
हम काहे कौं तुमहिँ[2] बराबर, बड़े नंद के पूत !
सूर स्याम दीन्हैं ही बनिहै, बहुत[3] कहावत धूत ॥५३६॥११५४॥

* राग कल्यान

तोसौं कहा धुताई[4] करिहौं ।
जहाँ करी तहँ देखी नाहीं, कह तोसौं मैं लरिहौं ।
मुहँ सम्हारि तू बोलत नाहीं, कहत बराबरि बात ।
पावहुगे अपनौ कियौ अबहीं, रिसनि कँपावत गात ।
सुनहु स्याम, तुमहूँ सरि नाहीं, ऐसे गए बिलाइ ।
हमसौं सतर होत सूरज प्रभु, कमल देहु अब जाइ ॥५३७॥११५५॥

* राग गौरी

हमहीं पर सतरात कन्हाई ।
प्रथमहिं कमल कंस कौं दीजै, डारहु[6] हमहिं मराई ।

---

① गिराई—१ । ② तुम्हरी —२, १६ । ③ बडे—२, १६ । * (ना) नट । (का) धनाश्री । (के, पू) बिहागरा । ④ ढिठाई—२, १६ । ⑤ मैं (हम) तुम—२, १६ । * (ना) नट । (का) धनाश्री । (रा) कल्यान । ⑥ डारै—१४ ।

साँच कहौं मैं तुमहिं श्रीदामा, कमल-काज मैं आयौ।
कहा कंस बपुरौ, किहिं लायक, जाकौं मोहिं डरायौ?
अघा, बका, केसी, सकटासुर, तृना सिला पर डारयौ।
बकी कपट करि प्यावन आई, ताकौं तुरत पछारयौ।
कालीदह-जल-छुवत मरे सब, सोइ काली धरि ल्याऊँ।
सूरदास प्रभु देह धरे कौ, गुन प्रगट्यौ[1] इहिं ठाऊँ ॥५३८॥११५६॥

राग सोरठ

रिस करि लीन्ही फेंट छुडाइ।
सखा सबै देखत हैं ठाढ़े, आपुन चढ़े कदम पर धाइ।
तारी दै-दै हँसत सबै मिलि, स्याम गए तुम भाजि डराइ।
रोवत चले श्रीदामा घर कौं, जसुमति आगैं कहिहौं जाइ।
सखा-सखा कहि स्याम पुकारयौ, गेंद आपनौ लेहु न आइ।
सूर स्याम पीतांबर काछे, कूदि परे दह मैं भहराइ[2] ॥५३६॥११५७॥

* राग गौरी

हाय-हाय करि सखनि पुकारयौ।
गेंद-काज यह करी श्रीदामा, नंद[3] कौ ढोटा मारयौ।
जसुमति चली रसोई भीतर, तबहिं ग्वालि इक छींकी।
ठठकि रही द्वारे पर ठाढी, बात नहीं कछु नीकी।
आइ अजिर निकसी नँदरानी, बहुरी दोष मिटाइ।
मंजारी आगैं ह्वै आई[4], पुनि फिरि आँगन आइ।

---

(१) प्रगटौ—१, ११। प्रगटें—१६। (२) फहराई—१६।
* (का, रा, श्या) सोरठ।
(३) नंद महर कौ—१, २, ३, ६, ६, ११, १४, १५, १६, १७, १८, १६। (४) निकसी—१, २, ३, ६, ११, १७।

ब्याकुल भई, निकसि गई बाहिर, कहँ धौं गए कन्हाई ।
बाएँ काग, दाहिनैं[1] खर-स्वर, ब्याकुल घर फिरि आई ।
खन भीतर, खन बाहिर आवति, खन आँगन इहिँ भाँति ।
सूर स्याम कौं टेरति जननी, नैंकु नहीं मन साँति ॥५४०॥११५८॥

राग गौरी

देखे नंद चले घर आवत ।
पैठत पौरि छींक भई बाएँ, दहिनैं[2] धाह सुनावत ।
फटकत स्रवन स्वान द्वारे पर, गररी करति लराई ।
माथे पर ह्वै काग उड़ान्यौ, कुसगुन बहुतक पाई ।
आए नंद घरहिँ मन मारे, ब्याकुल देखी नारि ।
सूर नंद जसुमति सौं बूझत, बिनु छबि बदन निहारि ॥५४१॥११५९॥

* राग नट

नंद घरनि सौं पूछत बात ।
बदन झुराइ गयौ क्यौं तेरौ, कहाँ गए बल, मोहन तात ?
"भीतर चली रसोई कारन, छींक परी तब आँगन आइ ।
पुनि आगैं ह्वै गई भँजारो, और बहुत कुसगुन मैं पाइ ।"
मोहिँ भए कुसगुन घर पैठत, आजु कहा यह समुझि न जाइ ।
सूर स्याम गए आजु कहाँ धौं, बार-बार पूछत नँदराइ ॥५४२॥११६०॥

* राग गौरी

महर-महरि-मन गई[3] जनाइ ।
खन भीतर, खन आँगन ठाढ़े, खन बाहिर देखत है जाइ ।

---

① सूकर—१, ११ । ② दाहिनैं—१, २, ३, ११, १६ । * (ना) सारंग । (ना) सारंग । ③ गए—१, ३, ६, ११, १४, १७ ।

इहिँ अंतर सब सखा पुकारत, रोवत आए ब्रज कौं धाइ ।
आतुर गए नंद-घरही कौं, महर-महरि सौं बात सुनाइ ।
चकित भए दोउ बृझन लागे, कहौ बात हमकौं समुझाइ ।
सूर स्याम खेलतहिँ कदम चढि, कूदि परे कालीदह जाइ ॥५४३॥११६१॥

* राग सोरठ

सुपनौ परगट कियौ कन्हाई ।
सोवत ही निसि आजु डराने, हमसौं यह कहि बात सुनाई ।
धरनि परी मुरझाइ जसोदा, नंद गए जमुना-तट धाई ।
बालक सब नंदहिँ सँग धाए, ब्रज-घर जहँ-तहँ सोर मचाई ।
त्राहि-त्राहि करि नंद पुकारत, देखत ठौर गिरे भहराई ।
लोटत धरनि, परत जल-भीतर, सूर स्याम दुख दियौ बुढ़ाई॥५४४॥११६२॥

राग गौरी

ब्रज-बासी यह सुनि सब आए ।
कहाँ परचौ गिरि कुँवर कन्हैया, बालक लै सो ठौर दिखाए ।
सूनौ गोकुल कियौ स्याम तुम, यह कहि लोग उठे सब रोइ ।
नंद गिरत सबहिनि धरि राख्यौ, पोँछत बदन नीर लै धोइ ।
ब्रज-बासी तब[1] कहत महर सौं, मरन भयौ सबही कौ आइ ।
सूर स्याम बिनु को बसिहै ब्रज, धिक जीवन तिहुँ भुवन कहाइ ॥५४५॥११६३॥

× राग सोरठ

महरि पुकारति कुँवर कन्हाई ।
माखन धरचौ तिहारेहि कारन, आजु कहाँ अवसेरि लगाई ।

---

* (ना) नट ।
* (ना) नट ।
(१) सब—१६, १८ ।
× (ना) सारंग ।

अति कोमल, तुम्हरे मुख लायक, तुम जेँवहु मेरे नैन जुड़ाई ।
धौरी-दूध औटि हौं राख्यौ, अपनेँ कर दुहि[1] गए बनाई ।
बरजति ग्वारि जसोदा कौं सब, यह कहि-कहि नीकेँ जदुराई ।
सूर स्याम सुत जीय[2] मातु के, यह बियोग बरन्यौ नहिँ जाई॥५४६॥११६४

* राग गौरी

माखन खाहु लाल मेरे आई । खेलत आजु अबार लगाई ।
बैठहु आइ संग दोउ भाई ! तुम जेँवहु मैया बलि जाई ।
सद माखन अति हित मैँ राख्यौ । आजु नहीँ नैँकुहुँ तुम[3] चाख्यौ ।
प्रातहिँ तैँ मैँ दियौ जगाइ । दतुवनि करि जु गए दोउ भाइ ।
मैँ बैठी तुव पंथ निहारौं । आवहु तुम पर तन मन वारौं ।
ब्रज-जुवती सुनि-सुनि यह बानी । रोवति धरनि परीँ अकुलानी ।
सोक - सिंधु बूड़ी नँदरानी । सुधि-बुधि तन की सबै भुलानी ।
सूर[4] स्याम लीला यह कीन्हौ । सुख कैँ हेत जननि दुख दीन्हौ॥५४७॥११६५

* राग नट

चौंकि परी तन की सुधि आई ।
आजु कहा ब्रज सोर मचायौ, तब जान्यौ दह गिरचौ कन्हाई ।
पुत्र-पुत्र कहिकै उठि दौरी, ब्याकुल जमुना-तीरहिँ धाई ।
ब्रज-बनिता सब संगहिँ लागीँ आइ गए बल, अग्रज भाई ।
जननी ब्याकुल देखि प्रबोधत, धीरज करि नीकेँ जदुराई ।
सूर स्याम कौं नैँकु नहीँ डर, जनि तू रोवै जसुमति माई॥५४८॥११६६॥

---

(१) दधि कियौ बनाई—१६ । (२) बिरह मातु कौ—१,३,११,१५, १७ । चित—२ । * (ना) बिलावल । (का) सोरठ । (३) तै—१, ११, १४ । तिहिँ—३ । (४) सूरज स्याम खेल—१६ । (ना) सूहौ । (का) सोरठ ।

*राग विलावल

† ब्रज-बासी सब उठे पुकारि । जल भीतर कह करत मुरारि ।
संकट मैं तुम करत सहाइ । अब क्यौं नाहिं बचावत आइ ।
मातु-पिता अतिहीं दुख पावत । रोइ-रोइ सब कृष्न बुलावत ।
हलधर कहत सुनहु ब्रज-बासी । वै अंतरजामी अबिनासी ।
सूरदास प्रभु आनँद-रासी । रमा सहित जल ही के बासी ॥५४६॥११६७॥

* राग सूहौ

अति कोमल तनु धरचौ कन्हाई ।
गए तहाँ जहँ काली सोवत, उरग-नारि देखत अकुलाई ।
कह्यौ कौन को बालक है तू, बार-बार कही, भागि न जाई ।
छनकहि मैं जरि भस्म होइगौ, जब देखै उठि जागि जम्हाई ।
उरग-नारि की बानी सुनि कै, आपु हँसे मन मैं मुसुकाई ।
मोकौं कंस पठायौ देखन, तू याकौं अब देहि जगाई ।
कहा कंस दिखरावत इनकौं, एक फूँक ही मैं जरि जाई ।
पुनि-पुनि कहत सूर के प्रभु कौ, तू अब काहे न जाइ पराई ॥५५०॥११६८।

× राग गुड मलार

कहा डर करौं इहिं फनिग कौ बावरी ।
कह्यौ मेरौ मानि, छाँडि अपनो बानि, टेक परिहै जानि सब रावरी ।
तोहिं देखे मया,[1] मोहिं अतिहीं भई, कौन कौ सुवन, तू कहा आयौ ।
मरौ वह कंस, निरबंस वाकौ होइ, करचौ[2] यह गंस तोकौं पठायौ ।

---

* (का) धनाश्री । (रा) कल्यान ।
† यह पद (के, पू) में नहीं है ।
* (ना) जैतश्री । (का) धनाश्री । (का, रा) विलावल ।
× (ना) मारु । (का) मारु कर्का ।
① दया—१६ । ② कह्यौ यह कस—१, ११, १४ । करवर

कंस कौं मारिहौं धरनि निरवारिहौं, अमर उद्धारिहौं उरग-धरनी।
सूर प्रभु के बचन सुनत, उरगिनि कह्यौ, जाहि अब क्यौं न, मति भई मरनी ॥५५१॥
॥११६६॥

राग मारू

झिरकि कै नारि, दै गारि गिरिधारि तब, पूँछ पर लात दै अहि जगायौ।
उठ्यौ अकुलाइ, डर पाइ खग-राइ कौं, देखि बालक गरब अति बढ़ायौ।
पूँछ लीन्ही झटकि धरनि सौं गहि पटकि फुंकर्‌यौ लटकि करि क्रोध फूले।
पूँछ राखी चाँपि, रिसनि काली काँपि, देखि सब साँपि-अवसान भूले।
करत फन-घात, बिष जात उतरात[1] अति, नीर जर्‌यो जात, नहिँ गात परसै।
सूर के स्याम, प्रभु, लोक-अभिराम, बिनु जान अहिराज बिष ज्वाल बरसै ॥५५२॥
॥११७०॥

* राग नट

† अहि[2] कौं लै अब ब्रजहिँ दिखाऊँ।
कमल-भार याही पर लादौं, याकौं[3] आपन रूप जनाऊँ।
मात-पिता अतिहीं दुख पावत, दरसन दै मन हरष बढ़ाऊँ[4]।
कमल पठाइ देउँ नृपराजहिँ, काल्हि कह्यौ ब्रज ऊपर धाऊँ।
मन-मन करत बिचार स्याम यह, अब काली कौं दाउँ[5] बताऊँ।
सूरदास प्रभु की यह बानी, ब्रज-बासिनि कौं दुख बिसराऊँ ॥५५३॥
॥११७१॥

* राग कान्हरौ

उरग-नारि सब कहतिँ परस्पर, देखौ या बालक की बात।

यह कंस—२। करो यह काम—२।
① अतुरात—१, २, ३, ६, ६, ११, १५।
* (ना) नट।
† यह पद (का) में नहीं है।
② इनकौ लै ब्रज लोग दिखाऊँ—१, ३, ६, ११, १५, १७।
इहिँ—१६। ③ अहि कौ—२।
④ कराऊँ—१, ६, ११, १७।
⑤ दाप नवाऊँ—२, ३। दाव दिवाऊँ—६, ११, १७।
(ना) टोड़ी।

बिष-ज्वाला जल जरत जमुन कौ, याकैं तन लागत नहिँ तात !
यह कछु तंत्र[1] मंत्र जानत है अतिहीं सुंदर कोमल गात।
यह अहिराज महा बिष ज्वाला, कितने करत सहस फन घात !
छुवत नहीं तनु याकौ बिष कहुँ, अब लौं बच्यौ पुन्य पितु-मात।
सूर स्याम सो दाउँ बतायौ,[2] काली अंग लपेटत जात ॥५५४॥११७२॥

राग बिलावल

उरग लियौ[3] हरि कौं लपटाइ।
गर्व-बचन कहि-कहि मुख भाषत, मोकौं नहिँ जानत अहिराइ।
लियौ लपेटि चरन तैं सिख लौं, अति[4] इहिँ मोसौं करी ढिठाइ।
चाँपी पूँछ लुकावत अपनी, जुवतिनि कौं नहिं सकत दिखाइ।
प्रभु अंतरजामी सब जानत, अब डारौं इहिं[5] सकुच मिटाइ।
सूरदास प्रभु तन बिस्तार्‌यौ, काली बिकल भयौ तब जाइ ॥५५५॥११७३॥

* राग कान्हरौ

जबहिँ स्याम तन अति बिस्तार्‌यौ।
पटपटात टूटत अँग जान्यौ, सरन-सरन सु[6] पुकार्‌यौ।
यह बानी सुनतहिँ करुनामय, तुरत गए सकुचाइ।
यहै बचन सुनि द्रुपद-सुता-मुख,[7] दीन्हौ बसन बढ़ाइ।
यहै बचन गजराज सुनायौ,[8] गरुड़ छाँड़ि तहँ धाए।
यहै बचन सुनि लाखा-गृह मैं पांडव जरत बचाए।

---

① जत्र—१, ३, ११, १५, १७। ② न पायौ—२। बतावत—३। ③ गयौ—६, १६, १८, १६। ④ अतिहीं—२, ३। ⑤ सब—१६। * (ना) बिलावऊ। ⑥ अहिराज—१, २, ३, १६। ⑦ को—१७। ⑧ उबार्‌यौ—१६।

यह बानी सहि जात न प्रभु सौं, ऐसे परम कृपाल ।
सूरदास प्रभु अंग सकोरचौ,[1] ब्याकुल देख्यौ ब्याल ॥५५६॥११७४॥

* राग गौरी

नाथत ब्याल बिलंब न कीन्हौ ।
पग सौं चाँपि घींच बल तोरचौ, नाक[2] फोरि गहि लीन्हौ ।
कूदि चढे ताके माथे पर, कालो करत बिचार ।
स्रवननि सुनी रही यह बानी, ब्रज ह्वै है अवतार ।
तेइ अवतरे आइ गोकुल मैं, मैं जानी यह बात ।
अस्तुति करन लग्यौ सहसौ मुख, धन्य-धन्य जग-तात ।
बार-बार कहि सरन पुकारचौ, राखि-राखि गोपाल ।
सूरदास[3] प्रभु प्रगट भए जब, देख्यौ ब्याल बिहाल ॥५५७॥११७५॥

* राग बिलावल

देखि दरस मन हरष भयौ ।
पूरन ब्रह्म सनातन तुमहीं, ब्रज अवतार लयौ ।
श्रीमुख कह्यौ, अजहुँ लौं तुम नहिं, जान्यौ ब्रज[4] अवतार ?
और कौन जो तुम सौं बाँचै, सहस फननि की झार !
अनजानत अपराध किए प्रभु[5], राखि सरन मोहिं लेहु[6] ।
सूरदास धनि-धनि मेरे फन, चरण-कमल जहँ देहु[7] ॥५५८॥११७६॥

---

① सकोच्यौ—१६, १८, १६ ।
* (ना) सूहो बिलावल । (के) बिलावल ।
② फोरि नाक कर सौं—१, ३, ६, ६, ११, १५, १७, १८ । बहुरि नाग कर सौ—२, १६, १६ । ③ सूरदास प्रभु सकुचि गए सरण कहत (गहत) तब ब्याल—१, ११ । सूरदास प्रभु दीन बचन सुनि सदय भए तेहि काल—३ ।
४ (का) सोरठ ।
④ ब्रह्म—१ । ⑤ बहु—१, ३, ११, १७ । ⑥ लीनौ—२ । लीजै—१६ । ⑦ दीनौ—२ । दीजै—१३ ।

*राग गौरी

अब कीन्ह्यौ प्रभु मोहिँ सनाथ ।
कोटि-कोटि कीटहु सम नाहीँ, दरसन दियौ जगत के नाथ ।
असरन सरन कहावत हौ तुम, कहत सुनी भक्तनि मुख बात ।
ये अपराध छमा सब कीजै, धिक मेरी बुधि कहत डरात ।
दीन बचन सुनि काली-मुख तैँ, चरन धरे फन-फन-प्रति आप ।
सूर स्याम देख्यौ अहि ब्याकुल, खसु दीन्ह्यौ, मेटे त्रय ताप ॥५५६॥११७७॥

*राग गौरी

जसुमति टेरति कुँवर कन्हैया ।
आगेँ देखि कहत बलरामहिँ, कहाँ रह्यौ तुव भैया ।
मेरौ भैया आवत अबहीँ, तोहिँ दिखाऊँ मैया ।
धीरज करहु, नैँकु तुम देखहु, यह सुनि लेति बलैया ।
पुनि यह कहति मोहिँ परमोधत,[1] धरनि गिरी मुरझैया ।
सूर बिना सुत भई अति ब्याकुल, मेरौ बाल नन्हैया ॥५६०॥११७८॥

राग सारग

†जमुना तोहिँ बह्यो क्यौँ भावै ।
तोमैँ कृष्न हेलुवा खेले, सो सुरत्यौ नहिँ आवै !
तेरौ नीर सुची जो अब लौँ, खार पनार कहावै ।
हरि-बियोग कोउ पाउँ न दैहै, को तट बेनु बजावै !
भरि भादौँ जो राति अष्टमी, सो दिन क्यौँ न जनावै ।
सूरदास कौ ऐसौ ठाकुर, कमल-फूल लै आवै ॥५६१॥११७९॥

---

*(ना) सारग । (का) आसावरी ।

*(ना) सारग ।

(१) परबोधत—१ ।

†यह पद केवल (वे, ल, गो, जै) मेँ है ।

* राग सोरठ

† ब्रज-बासी सब भए बिहाल ।
कान्ह-कान्ह कहि-कहि टेरत हैं, ब्याकुल गोपी-ग्वाल ।
अब को बसै जाइ ब्रज हरि-बिनु, धिक जीवन नर-नारि ।
तुम बिनु यह गति भई सबनि की, कहाँ गए बनवारि ।
प्रातहिं तैं जल-भीतर पैठे, होन लग्यौ जुग जाम ।
कमल लिए सूरज प्रभु आवत सब सौं कही बलराम ॥५६२॥११८०॥

राग नट

आवत उरग नाथे स्याम ।
नंद, जसुदा, गोप-गोपी, कहत हैं बलराम ।
मोर-मुकुट, बिसाल लोचन, स्रवन कुंडल लोल ।
कटि पितंबर, बेष नटवर, नृतत फन प्रति डोल ।
देव दिवि दुंदुभि बजावत, सुमन-गन बरषाइ ।
सूर स्याम बिलोकि ब्रज-जन, मातु, पितु सुख पाइ ॥५६३॥११८१॥

* राग नट

मातु[२] -पिता मन हरष बढायौ ।
मोर-मुकुट पीतांबर काछे, देख्यौ[३] निकट जु आयौ ।
सुर[४] दुंदुभी बजावत गावत, फन-प्रति[५] निर्तत स्याम ।
ब्रजबासी सब मरत जिवाए, हरषि उठीं सब बाम ।

---

* (ना) बृंदावनी सारंग ।
† यह पद (का) में नहीं है ।
① हरष मनहिं बढ़ाइ—१४ ।
② (का) बिलावल । (जौ, कां, पु, रा, श्या) कान्हरो ।
② हलधर कहत स्याम यह आयौ—१४ । ③ देख्यौ अतिहिं निकट जब आयौ—१, २, ३, ६, ६, ११, १४, १६, १७, १८ । ④ दिवि—३, १४, १६ । दिव—६, १७ । देव—११, १५ । ⑤ पर—१, ११ ।

सोक-सिंधु बहि गयो तुरतहीं, सुख कौ सिंधु बढ़ायौ ।
सूरदास प्रभु कंस-निकंदन, कमल उरग पर लायौ ॥५६४॥११८२॥

* राग कान्हरौ

फन-फन-प्रति निरतत नँद-नंदन ।
जल-भीतर जुग जाम रहे कहुँ, मिट्यौ नहीं तन-चंदन ।
उहै काछनी कटि, पीतांबर, सीस मुकुट अति सोहत ।
मानौ गिरि पर मोर अनंदित, देखत ब्रज-जन मोहत ।
अंबर[1] थके अमर ललना सँग, जै-जै धुनि तिहुँ लोक ।
सूर स्याम काली पर निरतत, आवत हैं[2] ब्रज-ओक ॥५६५॥११८३॥

* राग सोरठ

गोपाल राइ निरतत फन-प्रति ऐसे ।
गिरि पर आए बादर देखत, मोर अनंदित जैसे ।
डोलत मुकुट सीस पर हरि के, कुंडल-मंडित गंड ।
पीत बसन, दामिनि मनु घन पर, तापर सुर-कोदंड ।
उरग-नारि आगैं सब ठाढ़ीं, मुख-मुख अस्तुति गावैं ।
सूर स्याम अपराध छमहु अब, हम माँगैं पति पावैं ॥५६६॥११८४॥

× राग कान्हरौ

बहुत कृपा इहिं[3] करी गुसाईं ।
इतनी कृपा करी नहिं काहूँ, जिनि[4] राखे सरनाई ।
कृपा करी प्रहलाद भक्त कौं, द्रुपद-सुता-पति राखी ।

---

* (ना) नट ।
(१) हरषत अमर-अमर ललना सँग जै जै धुनि चहुँ ओर—६ ।
(२) नैदकि सार—५ ।
(ना, गो) कान्हरौ । (का) आसावरी ।
× (का) आसावरी ।
(३) तुम—२ । (४) जितने राखि लिए सरनाई—१, २, ३, ६, ६, ११, १५, १६, १७, १८ ।

ग्राह ग्रसत[1] गजराज छुड़ायौ, बेद पुरानन्हि भाखी।
जो कछु कृपा करी काली पर, सो काहूँ नहिं कीन्हौ।
कोटि ब्रह्मंड रोम-प्रति अंगनि, ते पद फन-प्रति दीन्हौ।
धरनि सीस धरि सेस गरब धर्‌यौ, इहिँ[2] भर अधिक सँभार्‌यौ।
पूरन कृपा करी सूरज प्रभु, पग फन-फन-प्रति धार्‌यौ ॥५६७॥११८५॥

* राग सोरठ

ठाढ़े देखत हैं ब्रजबासी।
कर जोरे अहि-नारि बिनय करि कहति, धन्य अबिनासी।
जे पद-कमल रमा उर राखति, परसि सुरसरी आई।
जे पद-कमल संभु की संपति, फन-प्रति धरे कन्हाई।
जे[3] पद परसि सिला[4] उद्धरि गई, पांडव गृह फिरि आए।
जे पद-कमल-भजन महिमा तैं, जन प्रहलाद बचाए।
जे पद ब्रज-जुवतिनि सुखदायक, तिहूँ[5] भुवन धरे बावन।
सूर स्याम ते पद फन-फन-प्रति, निरतत अहि कियौ पावन ॥५६८॥
॥११८६॥

* राग सोरठ

ऐसी कृपा करी नहिं काहूँ।
खंभ प्रगटि प्रहलाद बचायौ, ऐसी कृपा[6] न ताहूँ।
ऐसी कृपा करी नहिं गज कौं, पाइ पियादे धाए।

---

① मुखनि—१६। ② भार अधिक संभार्‌यौ—१,२,११।
* (ना) कान्हरौ दरबारी। (का) बिहागरा। (गो) कानरा।
③ जे पद-पद्म सदा उर धारे गए बन गृह पांडव फिरि आए—२। ④ सिला उद्धारी—१।
⑤ त्रैपद तिहुँ पुर—१६।
(ना) सारंग। (का) बिहागरा।
⑥ भई—६, १७।

ऐसो कृपा तबहुँ नहिं कीन्ही, नृपतिनि[1] बंदि छुड़ाए।
ऐसी कृपा करी नहिँ भीषम-परतिज्ञा सत भाषो।
ऐसी कृपा करी नहिँ, जब त्रिय नगन समय पति राखी।
पूरन कृपा नंद-जसुमति कौं, सोइ पूरन इहिं पायो।
सूरदास प्रभु धन्य कंस, जिनि, तुमसौं कमल मँगायो ॥५६६॥११८७।

* राग कान्हरौ

सुनहु कृपानिधि, जिती कृपा तुम या काली पै[2] कीन्ही।
इती बड़ाई कबहुँ[3], कैसहूँ, नहिँ काहू कौं दीन्ही।
जिनि पद-कमल-सुकृत-जल-परस्यौ, अजहुँ धरैं सिव सीस।
ते पद प्रगट धरे फन-फन-प्रति, धन्य कृपा जगदीस।
एक अंड कौ भार बहत[4] है, गरब धरयौ जिय सेष।
इहिँ भरु अधिक सह्यौ अपनैं सिर, अमित-अंड-मय बेष।
सुर, नर, असुर, कीट, पसु, पच्छी, सब सेवक प्रभु तेरे।
सूर स्याम अपराध छमहु अब, या अपने जन केरे ॥५७०॥११८८॥

* राग कान्हरौ

† चरन-कमल बंदौं जगदीस्वर, जे गोधन-सँग धाए।
जे पद-कमल धूरि लपटाने, गहि गोपिनि उर लाए।
जे पद-कमल जुधिष्ठिर पूजे, राजसूय चलि आए।
जे पद-कमल पितामह भीषम, भारत देखन पाए।
जे पद-कमल संभु, चतुरानन. हृद[5] अंतर लै राखे।

---

① नृप बंदि तैं—१, २, ३, ११।
* (ना, का) सारग।
② कौं—२, ६, ११, १५, १७। ③ कबहुँ केसव—१६।
④ बहु—१, २, ३, ११, १७, १६।
** (ना) नट। (का) भैरव।
† यह पद (शा) में नहीं है।
⑤ हृदय कमल मैं—२, १६। हृदय कमल अंतर—१, ३, ११, १५, १७।

जे पद-कमल रमा-उर-भूषन, बेद, भागवत भाखे ।
जे पद-कमल लोक-त्रय-पावन, बलि की पीठि धरे ।
ते पद-कमल सूर के स्वामी, फन-प्रति नृत्य करे ॥५७१॥११८६॥

* राग कान्हरौ

गिरिधर, ब्रजधर, मुरलीधर, धरनीधर, माधौ पीतांबरधर ।
संख-चक्र-धर, गदा-पद्म-धर, सीस-मुकुट-धर, अधर-सुधा-धर ।
कंबु-कंठ-धर, कौस्तुभ-मनि-धर, बनमाला-धर, मुक्त-माल-धर ।
सूरदास प्रभु गोप-बेष-धर, काली-फन पर चरन-कमल-धर॥५७२॥११९०॥

* राग कान्हरौ

गरुड़-त्रास तैं जो ह्याँ आयौ ।
तौ प्रभु-चरन-कमल फन-फन-प्रति अपनैं सीस धरायौ ।
धनि रिषि साप दियौ खगपति कौं, ह्याँ तब रह्यौ छपाइ ।
प्रभु-बाहन[1]-डर भाजि बच्यौ अहि, नातरु लेतौ खाइ ।
यह सुनि कृपा करी नँद-नंदन, चरन-चिह्न प्रगटाए ।
सूरदास प्रभु अभय ताहि करि, उरग-द्वीप पहुँचाए ॥५७३॥११९१॥

राग सारंग

† अति बल करि-करि काली हार्‌यौ ।
लपटि गयौ सब अंग-अंग-प्रति, निर्बिष कियौ सकल बल झार्‌यौ[2] ।
निरतत पद पटकत फन-फन-प्रति, बमत रुधिर नहिँ जात सम्हार्‌यौ ।
अति बल-हीन, छीन भयौ तिहिँ छन, देखियत है रज्वा[3] सम डार्‌यौ ।

---

* (ना) टोड़ी । (का) कांफी ।
* (ना) नट ।
① याही—२ ।
† यह पद केवल (वे, ना, गो, जौ) में है ।
② हारयो—२ । ③ ज्वाला—१ । ब्रजबासिनि—२ ।

तिय-बिनती करुना उपजी जिय, राख्यौ स्याम नाहिँ तिहिँ मार्‌यौ।
सूरदास प्रभु प्रान-दान कियौ, पठयौ सिधु, उहाँ[1] तैँ टार्‌यौ ॥५७४॥११९२॥

* राग कान्हरौ

† सबै ब्रज है जमुना कैँ तीर।
कालिनाग[2] के फन पर निरतत, संकर्षन कौ बीर।
॥ लाग मान थेइ-थेइ करि उघटत, ताल मृदंग गँभीर।
॥ प्रेम-मगन गावत गंधब गन ब्यौम बिमाननि भीर।
उरग-नारि आगैँ भईँ ठाढी, नैननि ढारतिँ नीर।
हमकौँ दान देइ पति छाँड़हु, सुंदर स्याम सरीर।
आए निकसि पहिरि मनि-भूषन, पीत-बसन कटि चीर।
सूर स्याम कौँ भुज भरि भेँटत, अंकम देत अहीर ॥५७५॥११९३॥

राग कान्हरौ

‡ खेलत-खेलत जाइ कदम चढि, झपि[3] जमुना-जल लीन्हौ।
सोवत काली जाइ जगायौ, फिरि भारत हरि कीन्हौ।
उठि जुवती कर जोरि बिनति करी, स्वामि दान मोहिँ दीजै।
टूटत फन, फाटत तन[4] दुँ दिसि, स्याम निहोरौ लीजै।
तब[5] अहि छाँड़ि दियौ करुनामय, मोहन-मदन, मुरारी।
सागर-बास दियौ काली कौँ, सूरदास[6] बलिहारी ॥५७६॥११९४॥

---

① गरुड—११।

* (ना) नट। (का, रा, श्या) आसावरी।

† यह पद (का) में नहीँ है। शेष प्राप्त प्रतियों में स्थानान्तर पर सन्निविष्ट है। पर इसके लिये यह स्थान विशेष उपयुक्त है।

② काली के सिर ऊपर—२।

॥ ये चरण (ना, श्या) में नहीँ है।

‡ यह पद (वे, ल, के, गो, जै) में है।

③ धँसि जमुना दह—६। झँपि जमुना-जल—४। ④ तन दही—१, ११। ⑤ तबहीँ—६। ⑥ सुर मुनि यह बलिहारी—६।

* राग सोरठ

† (तुम) जाहु बालक, छाँड़ि जमुना, स्वामि मेरौ जागिहै।
अंग कारौ मुख बिषारौ[1], दृष्टि परैं तोहिं लागिहै।
(तुम) केरि[2] बालक जुवा खेल्यौ, केरि दुरत दुराइयाँ।
लेहु तुम[3] होरा पदारथ, जागिहै मेरौ साँइयाँ।
नाहिं नागिनि जुवा खेल्यौ, नाहिं दुरत दुराइयाँ।
कंस-कारन गेंद खेलत कमल-कारन आइयाँ।
‖ (तब) धाइ धायौ, अहि जगायौ, मनौ छूटे हाथियाँ।
‖ सहस फन फुफुकार छाँड़े, जाइ काली नाथियाँ।
(जब) कान्ह काली लै चले, तब नारि बिनवै, देव हो!
चेरि[4] कौं अहिवात दीजै, करै तुम्हरी सेव हो।
(तब) लादि पंकज कढ्यौ[5] बाहिर, भयौ ब्रज-मन-भावना।
मथुरा नगरी कृष्न राजा, सूर मनहिं[6] बधावना ॥५७७॥११९५॥

* राग देवगंधार

‡ काली-बिष-गंजन दह[7] आइ।
देखे मृतक बच्छ बालक सब, लए[8] कटाच्छ जिवाइ।
बहु उतपात होत गोकुल मैं, मैया[9] रही भुलाइ।
बड़ी बेर भई अजहुँ न आए, गृह-कृत कछु न सुहाइ।

---

* (ना) बँगाली। (कां) बिलावल। (रा) कान्हरा।

† यह पद (ल, के, पू) में नहीं है।

① बिकारौ—१, ११। पसारौ—३। ② कैर—२। कोरे—३। आए—१६। ③ सिसु—१६।

‖ ये चरण (स) में नहीं है।

④ अब के चेरी—१। अब कै चिरु—२। अब के अभै जिय दीजिए—३। अब कै बेर—११। ⑤ बाहिर काढ्यौ—१,२, ३,११। ⑥ तिनहिं—१,११। (ना) सारंग। (रा) धनाश्री।

‡ यह पद (ल, का, के, क, पू) में नहीं है।

⑦ हरि—३। ⑧ कृपा कटाच्छ जिवाए—२। ⑨ सविता रह्यौ भुलाइ—१, ११। चिंता रह्यो भुलाइ—३।

नंदादिक सब गोप-गोपि मिलि, चले बिकल[1] बन धाइ।
देखे[2] जाइ उरग लपटाने, प्रान तजत अकुलाइ।
अति गंभीर धीर करि जानत, संकर्षन निज भाइ।
सूरदास प्रभु नाग कियो बस, आनँद उर न समाइ ॥५७८॥११६६॥

* राग कल्यान

जय-जय-धुनि अमरनि नभ कीन्हौ।
धन्य-धन्य जगदीस गुसाईं, अपनौ करि अहि लीन्हौ।
अभय कियौ फन चरन-चिन्ह धरि, जानि आपुनौ दास।
जल तैं काढि कृपा करि पठयौ, मेटि गरुड़ कौं त्रास।
अस्तुति करत[3] अमर-गन बहुरे, गए आपनैं लोक।
सूर स्याम मिलि मातु-पिता कौ दूरि कियो तनु-सोक ॥५७९॥११६७॥

* राग कान्हरौ

लीन्हौ जननि कंठ लगाइ।
अग पुलकित, रोम गदगद, सुखद आँसु बहाइ।
मैं तुमहिं बरजति रही हरि, जमुन-तट जनि जाइ।
॥ कह्यो मेरौ कान्ह कियौ नहिं, गयौ खेलन धाइ।
कंस कमल मँगाइ पठए, तातैं[4] गयउँ डराइ।
मैं कह्यो निसि सुपन तोसौं, प्रगट भयौ सु आइ।
ग्वाल-सँग मिलि गेंद खेलत, आयौ जमुना-तीर।

---

① सकल — १,२,३,११।
② दरसे — १, २, ३, १६।
* (ना) नट नारायनी। (का) धनाश्री।
③ करि अहिपति कुटुंब लै चल्यो आपनै ओक — १४।
* (ना) सोरठ। (का) धनाश्री। (के, क, कां, पू, रा, स्था) नट।
॥ यह चरण (के, क) में नहीं है।
④ तात गयउ (गए) डराइ — १, २, ३, ११, १५, १७, १६।

काहु लै मोहिं डारि दीन्हो, कालिया - दह - नीर ।
यह कही तब उरग मोसौं, किन पठायो तोहिं ।
मैं कही, नृप कंस पठयो कमल-कारन मोहिं ।
यह सुनत डरि कमल दीन्हो, लियो पीठि चढाइ ।
सूर यह कहि जननि बोधी, देख्यो तुमहीं आइ ॥५८०॥११९८॥

राग गौरी

ब्रज-बासिनि सौं कहत कन्हाई ।
जमुना-तीर आजु सुख कीजै, यह मेरैं मन आई ।
गोपनि सुनि अति हरष बढायो, सुख पायो नँदराइ ।
घर-घर तैं पकवान मँगायो, ग्वारनि दियो पठाइ ।
दधि माखन षट रस के भोजन, तुरतहिं ल्याए जाइ ।
मातु-पिता-गोपी-ग्वालनि कौं, सूरज प्रभु सुखदाइ ॥५८१॥११९९॥

राग गौरी

तुरत कमल अब देहु पठाइ ।
सुनहु तात कछु बिलँब न कीजै, कंस चढै ब्रज-ऊपर धाइ[1] ।
कमल मँगाइ लिए तट-ऊपर, कोटि कमल तब दिए पठाइ ।
बहुत बिनय करि पाती पठई, नृप लीजै सब पुहुप गनाइ ।
तैसी मोकौं आज्ञा दीजै, बहुत धरे जल-माँझ सजाइ ।
सूरदास नृप तुव प्रताप तैं, काली आपु[2] गयो पहुँचाइ ॥५८२॥१२००॥

* राग सोरठ

सहस सकट भरि कमल चलाए ।
अपनी समसरि और गोप जे, तिनकौं साथ पठाए ।

---

① आइ—१, २, ३, ११, १२ । ② आइ—६, १७ । * (ना) कान्हरौ ।

और बहुत काँवरि दधि-माखन, अहिरनि काँधैं जोरि ।
नृप[1] कैं हाथ पत्र यह दीजौ, बिनती कीजौ मोरि ।
मेरौ[2] नाम नृपति सौं लीजौ, स्याम कमल लै आए ।
कोटि कमल आपुन नृप माँगे, तीनि कोटि हैं पाए ।
नृपति हमहिं अपनौ करि जानौ, तुम लायक हम नाहिं ।
सूरदास कहियौ नृप आगैं तुमहिं छाँड़ि कहँ जाहिं ॥५८३॥१२०१॥

* राग गौड़

कमल के भार, दधि-भार, माखन-भार लिए, सब ग्वार, नृप-द्वार आए ।
तुरतहीं[3] टोरि, गनि, कोरि सकटनि जोरि, ठाढ़े भए पैरिया तब सुनाए ।
सुनत यह बात, अतुरात और डरत मन, महल तैं निकसि नृप आपु आए ।
देखि दरबार, सब ग्वार नहिं पार कहुँ, कमल के भार सकटनि सजाए ।
अतिहिं चकित भयौ, ज्ञान हरि हरि लयौ, सोच मन मैं ठयौ, कहा कीन्हौ !
गोप-सिरमौर नृप और कर जोरि कै, पुहुप कैं काज प्रभु पत्र दीन्हौ ।
यह कह्यौ नंद, नृप बंदि, अहि-इंद्र पैं गयौ मेरौ नंद, तुव नाम लीन्हौ ।
उठ्यौ अकुलाइ, डरपाइ तुरतहिं धाइ, गयौ पहुँचाइ तट आइ दीन्हौ ।
यह कह्यौ स्याम-बलराम, लीजौ नाम, राज कौ काज यह हमहिं कीन्हौ ।
और[4] सब गोप आवत जात नृप बात कहत, सब सूर मोहिं नहीं चीन्हौ ॥५८४॥

॥ १२०२ ॥

---

(१) बहुतै बिनती मेरी कहियौ और धरे जलजामल तोरी—१, ११ । (२) नृप के हाथ पत्र यह दीजौ स्याम कमल (कालह) लै आयौ—१, ११ ।

* (ना) कान्हरो । (का) मारू कर्का । (क) नट । (कों) मलार । (रा) गौड़ मलार ।

(३) तुरत ही टारि जनि करि (कोरि) सकटनि जोरि भए ठाढे पैरि तब सुनाए—१, ११ । तुरत ही भूर गन करोर सकटनि जोरि भए ठाढे पैरिया तब सुनाए—२ । तुरत ही टोर गनि कोर सकटनि जोरि भए ठाढे पैरि तब सुनाए—३, ६, १७ । (४) और सब गोप-कर जोरि नृप सौं कहत बात यह सूर मोहिं नहीं चीन्हौ—२ ।

*राग बिलावल

ग्वालनि हरि की बात सुनाई[1]। यह सुनि कंस गयो मुरझाई[2]।
तब मनहीं मन करत बिचार। यह कोउ भलौ नहीं अवतार।
यासौं मेरौ नहीं उबार। मोहि मारि[3], मारै परिवार।
दैत्य गए ते बहुरि न आए। काली तैं ये क्यौं बचि पाए।
ताही पर धरि कमल लदाए। सहस सकट भरि ब्याल पठाए।
एक ब्याल मैं उनहिं बताए। कोटि ब्याल मम सदन चलाए।
ग्वालनि देखि मनहिं रिस काँपै। पुनि मन मैं भय-अंकुर थापै।
आपुहिं आपु नृपति थल[4] त्याग्यौ। सूर देखि कमलनि उठि भाग्यौ॥५८५॥१२०३

❀ राग नट

भीतर लिए ग्वाल बुलाइ।
हृदय दुख, मुख हलबली करि, दिए ब्रजहिं पठाइ।
नंद कौं सिरपाव दीन्हौ, गोप सब पहिराइ।
यह कह्यौ बलराम-स्यामहि, देखिहौं दोउ भाइ।
अतिहिं पुरुषारथ कियौ उन, कमल दह के ल्याइ।
सूर उनकौं देखिहौं मैं, एक दिवस बुलाइ॥५८६॥१२०४॥

× राग गुडमलार

कमल पहुँचाइ सब गोप[5] आए।
गए जमुना-तीर, भई अतिहीं भीर, देखि नँद तीर तुरतहिं बुलाए।
दियौ सिरपाव नृपराव नै महर कौं, आपु पहिरावने[6] सब दिखाए।

---

* (का) सोरठ। (का, श्या) मलार।
(1) चलाई—१। (2) अकुलाई—१। (3) समेत—१७।
(4) तन—१, ३, ११, १४। मन—१७। (ना) ललित। (क, पु) नट नारायन।
× (ना) मारू। (का) मारू कर्का।
(5) ग्वाल—३। (6) पहिरावनी—१, ३, ६, ११, १६।

अतिहिँ सुख पाइ कै, लियौ सिर नाइ कै, हरष[1] नँदराइ कैँ मन बढ़ाए ।
स्याम-बलराम कौ नाम जब हम लियौ, सुनत सुख कियौ उन कमल ल्याए ।
सूर नँद-सुवन दोउ, दिवस इक देखिहौं, पुहुप लिए, पाइ सुख, इन बुलाए ॥५८७॥

॥ १२०५ ॥

* राग धनाश्री

यह सुनि नंद बहुत सुख पाए ।
कमल पठाइ दए, नृप लीन्हे, देखन कौं दोउ सुतनि बुलाए ।
सेवा बहुत मानि हैं लीन्ही, ब्रज[2]-नारी-नर हरष बढाए ।
बडी बात भई कमल पठाए, मानहुँ आपुन जल तैँ ल्याए ।
आनँद करत जमुन-तट ब्रज-जन, खेलत-खातहिँ दिवस बिहाए ।
इक सुख स्याम बचे काली तैँ, इक सुख कंसहिँ कमल पठाए[3] ।
हँसत स्याम-बलराम सुनत यह हमकौं देखन नृपति बुलाए[4] ।
सूरदास प्रभु मातु-पिता-हित, कमल कोटि दै ब्रजहिँ पठाए ॥५८८॥१२०६

* राग धनाश्री

नारद कही समुझाइ कंस नृपराज कौं ।
तब पठयौ ब्रज दूत, पुहुप के काज कौं । ध्रुव ।
तब पठयौ ब्रज दूत, सुनी नारद-मुख-बानी ।
बार-बार रिषि-काज, कंस अस्तुति मुख गानी ।
धन्य-धन्य मुनिराज तुम भलौ मंत्र दियौ मोहिँ ।
दूत चलायौ तुरतहीँ, अबहिँ जाइ ब्रज होहि[5] ।

---

(१) नंद के मनहिँ अति भए बधाए—२ । (२) ब्रज नारिन मन —१ । ५ (ना) परज । (का, क, का) बिलावल ।
* (ना) ललित । (३) चलाए—१, २, ३, ११, १६ । (४) मँगाए—१, ६, ११, १४ । (५) जोहि—१, ३, ११, १५ ।

यह कहियौ तुम जाइ, कमल नृप कोटि मँगाए ।
पत्र दियौ लिखि हाथ, कह्यौ, बहु भाँति जनाए ।
काल्हि कमल नहिँ आवहौं, तौ तुमकौं नहिँ चैन ।
सिर नवाइ, कर जोरि कै, चल्यौ दूत सुनि बैन ।
तुरत पठायौ दूत नंद घरही मैं पायौ[1] ।
"कमल फूल के भार कंस नृप बेगि मँगायौ ।
'काल्हि न पहुँचै आइकै, तब बसिहौ ब्रज लोग !
'गोकुल मैं जे सुख किए, ते करि देहौं सोग ।
'जौ न पठावहु पुहुप, कहौगे तैसी मोकौं ।
'जानहु यह गोपनि समेत धरि ल्यावहु तोकौं ।
'बल-मोहन तेरे दुहुँनि कौं, पकरि मँगाऊँ कालि ।
'पुहुप बेगि पठऐं बनै, जौ रे बसौ ब्रज-पालि ।"
यह सुनि नंद, डराइ, अतिहिँ मन-मन अकुलान्यौ ।
यह कारज क्यौं होइ, काल अपनौ करि जान्यौ ।
और महर सब बोलि कह्यौ; कैसौ करैं उपाइ ।
प्रात[2] साँझ ब्रज मारिहै, बाँधि सबनि लै जाइ ।
बल-मोहन कौ नाम धरचौ कह्यौ पकरि मँगावन ।
तातैं अति भयौ सोच, लगत सुनि मोहिँ डरावन ।
यह सुनि सिर नाए सबनि, मुखहिँ न आवै बात ।
बार-बार नँद कहत हैं यह लरिकनि पर घात ।
कै बालकनि भगाइ, जाहिँ लै आन भूमि पर ।

---

(१) आयौ—१, ११ । (२) काल्हि प्रात—१, २, ६, ११, १४, १७ ।

बरु हमकौं लै जाइ, स्याम-बलराम बचैं घर।
महरि सबै ब्रजनारि सौं, पूछति कौन उपाउ।
जनमहिं तैं करबर टरी,[1] अबकैं नाहिं बचाउ।
कोउ कहै देहैं दाम, नृपति जेतौ धन चाहैं।
कोउ कहै जैऐ सरन, सबै मिलि बुधि अवगाहैं।
इहीं सोच सब पगि रहे, कहूँ नहीं निरबार।
ब्रज-भीतर, नँद-भवन मैं, घर-घर यहै बिचार।
अंतरजामी, जानि नंद सौं पूछत बाता।
कहा करत हौ सोच, कहौ कछु मोसौं ताता।
कहा कहौं मेरे लाड़िले, कहत बड़ौ संताप।
मथुरापति कैं जिय कछू, तुम पर उपज्यौ पाप।
कालीदह के पुहुप माँगि पठए हमसौं उनि।
तब तैं मो जिय सोच, जबहिं तैं बात परी सुनि।
जौ नहिं पठवहुँ काल्हि तौ, गोकुल दवा[2] लगाइ।
मो समेत दोउ बंधु तुम, काल्हिहिं लेहि बँधाइ।
यह कहि पठयौ कंस, तबहिं तैं सोच परयौ मोहिं।
प्रथम पूतना आइ, बहुत दुख दै जु गई तोहिं।
तृनावर्त के घात तैं, बहुत बच्यौ दुख पाइ।
सकटा-केसी तैं बच्यौ, अब को करै सहाइ!
अघा-उदर तैं बच्यौ, बहुत दुख सह्यौ कन्हाई।
बका रह्यौ मुख बाइ, तहाँ भयौ धर्म सहाई।

---

(१) टरे—२। (२) देउ—१, ३, ६, ११, १४, १७। दैहु—२।

एती करबर हैं टरी, देवनि करो सहाइ।
तब तैं अब गाढ़ी परी, मोकौं कछु न सुझाइ।
बाबा तुमहीं कहत, कौन धौं तोहिं उबारै।
सोइ ब्रज-भीतर[1] प्रगटि, कंस गहि केस पछारै।
यह जबहीं हरि सौं सुनी, नंद मनहिं पतियाइ।
गगन गिरत जो सँग रह्यौ, सो करि लेइ सहाइ।
नंदहिं यह समुझाइ कान्ह, उठि खेलन धाए।
जहँ ब्रज-बालक हुते[2], तुरत तहँ आपुन आए।
गोप-सुतनि सौं यह कह्यौ, खेलैं गेंद मँगाइ।
श्रीदामा यह सुनतहीं घर तैं ल्याए जाइ[3]।
सखा[4] परस्पर मारि करैं, कोउ कानि न मानै।
कौन बड़ौ को छोट, भेद[5] अनुभेद न जानैं।
खेलत जमुना-तट गए, आपुहिं ल्याए टारि।
लै श्रीदामा हाथ तैं, गेंद दयौ दह डारि।
श्रीदामा गहि फेंट कह्यौ, हम तुम इक जोटा।
कहा भयौ जौ नंद बड़े, तुम तिनकैं ढोटा।
खेलत मैं कह छोट बड़, हमहुँ महर के पूत।
गेंद दियैं ही पैं[6] बनै, छाँड़ि देहु मति-धूत।
तुमसौं धूत्यौ कहा करौं, धूत्यौ नहिं देख्यौ।
प्रथम पूतना मारि[7] काग सकटासुर पेख्यौ।

---

① देवता—१। ② बहुत—३, ६, १७। ③ धाइ—२। ④ सबै—२। ⑤ भेद - भेदा नहिं जानैं—१, २, ११, १५, १७, १६। भेद अभेद न जानै—३। ⑥ ते—२। ⑦ नारि—३, १४, १६। आइ—६।

तृनावर्त पटक्यौ सिला, अघा बका संहारि।
तुम ता दिन सँगहीं रहे, धूत न कहत सम्हारि।
टेढ़े कहा बतात, कंस कौं, देहु कमल अब।
कालिहिं पठए माँगि पुहुप अब ल्याइ देहु जब।
बहुत अचगरी जिनि करौ, अजहूँ तजौ झवारि[1]।
पकरि कंस लै जाइगौ, कालिहिं परै खँभारि[2]।
कमल पठाऊँ कोटि, कंस कौ दोष[3] निवारौं।
तुम देखत ही जाउँ, कंस जीवत धरि मारौं।
फेंट लियौ तब झटकि कै, चढ़े कदम पर जाइ[4]।
सखा हँसत ठाढ़े सबै, मोहन गए पराइ।
श्रीदामा चले रोइ जाइ कहिहौं नँद-आगे।
गेंद लेहु तुम आइ, मोहिं डरपावन लागे!
यह कहि कूदि परे सलिल, कीन्हे नटवर-साज।
कोमल तन धरि कै गए, जहँ सोवत अहिराज।
इहिं अंतर नँद-घरनि कह्यौ हरि भूखे ह्वै हैं।
खेलत तैं अब आइ, भूख कहि मोहिं सुनैहैं।
अति आतुर भीतर चली, जेंवन साजन आप।
छींक सुनत कुसगुन कह्यौ,[5] कहा भयौ यह पाप।
अजिर चली पछितात छींक कौ दोष निवारन।
मंजारी[6] गई काटि बाट, निकसत तब बारन।

---

① छवारि—२, १६। ② गुहारि—१६। ③ दुख—२। ④ आइ—१। धाइ—२। ⑤ भयौ—२, ६, १७। ⑥ मजारी गइ काटि तबहिं निकसत ही बारन—१, ३, ११, १४। मजारी पथ काटि गई—२। मंजारी गई काट तबहिं निकसत भई बारन—६, १७।

जननी जिय ब्याकुल भई, कान्ह अबेर लगाइ।
कुसगुन आजु बहुत भए, कुसल रहैं दोउ भाइ।
स्याम परे दह कूदि, मातु-जिय गयौ जनाई।
आतुर आए नंद घरहिं बूझत दोउ भाई।
नंद, घरनि सौं यह कहत, मोकौं लगत उदास।
इहिं अंतर हरि तहँ गए, जहँ कालो कौ बास।
देख्यौ पन्नग जाइ अतिहिं निर्भय भयौ सोवत।
बैठी तहँ अहि-नारि, डरो बालक कौं जोवत।
भागि-भागि सुत कौन कौ, अति कोमल तव गात।
एक फूँक कौ नाहिं तू बिष-ज्वाला अति तात।
तब हरि कह्यौ प्रचारि, नारि, पति देइ जगाई।
आयौ देखन याहि, कंस मोहिं दियौ पठाई।
कंस कोटि जरि जाहिंगे, बिष की एक फुँकार।
कहो मेरी करि जाहि तू, अति बालक सुकुमार।
इहिं अंतर सब सखा जाइ ब्रज नंद सुनायौ।
हम सँग खेलत स्याम जाइ जल माँझ धँसायौ[1]।
बूड़ि गयौ, उचक्यौ नहीं ता बातहिं भई बेर।
कूदि परयौ चढ़ि कदम तैं खबरि न करौ सबेर।
त्राहि-त्राहि करि नंद, तुरत[2] दौरे जमुना-तट।
जसुमति सुनि यह बात, चली रोवति तोरति लट।
ब्रजबासी नर-नारि सब, गिरत परत चले धाइ।

---

① समायौ—१६। ② सुनत—१, ३, ११, १५।

बूड़्यौ कान्ह सुनी सबनि, अति ब्याकुल मुरझाइ ।
जहँ-तहँ परी पुकार, कान्ह बिनु भए उदासी ।
कौन काहि सौं कहै, अतिहिँ ब्याकुल ब्रजबासी ।
नंद-जसोदा अति बिकल, परत जमुन मैं धाइ ।
और गोप उपनंद मिलि, बाहँ पकरि लै आइ ।
धेनु फिरति बिललाति बच्छ थन कोउ न लगावै ।
नंद जसोदा कहत, कान्ह बिनु कौन चरावै ।
यह सुनि ब्रजबासी सबै, परे धरनि अकुलाइ[1] ।
हाय-हाय करि कहत सब, कान्ह रह्यौ कहँ जाइ ।
नंद पुकारत रोइ बुढाई[2] मैं मोहिँ छाँड़्यौ ।
कछु दिन मोह लगाइ, जाइ जल-भीतर माँड़्यौ ।
यह कहि कै धरनी गिरत, ज्यौं तरु कटि गिरि जाइ ।
नंद-घरनि यह देखि कै, कान्हहिँ टेरि बुलाइ ।
निठुर भए सुत आजु, तात की छोह न आवति ।
यह कहि-कहि अकुलाइ, बहुरि[3] जल भीतर धावति ।
परति धाइ जमुना-सलिल, गहि आनतिँ ब्रजनारि ।
नैंकु रहौ सब मरहिँगी, को है जीवनहारि ?
स्याम गए जल बूड़ि बृथा धिक जीवन जग कौ ।
सिर फोरतिँ, गिरि जातिँ, अभूषन तोरति अँग कौ ।
मुरछि परी, तन-सुधि गई, प्रान रहे कहुँ जाइ ।
हलधर आए धाइ कै, जननि गई मुरझाइ ।

---

① मुरझाई—१६ । ② बुढ़ापा मोकौं—१, २, ११, १५ । ③ जलहिँ भीतर कौ—१, २, १६ ।

नाक मूँदि, जल सींचि जबहिँ[1] जननी कहि टेरचौ।
बार-बार झकझोरि, नैकु हलधर-तन हेरचौ।
कहति उठी बलराम सौं, कितहिँ तज्यौ लघु भ्रात।
कान्ह तुमहिँ बिनु रहत नहिँ, तुमसौं क्यौं रहि जात।
अब तुमहूँ जनि जाहु, सखा इक देहु पठाई।
कान्हहिँ ल्यावै जाइ, आजु अवसेर कराई।
छाक पठाऊँ जोरि कै, मगन सोक-सर-माँझ।
प्रात कछू खायौ नहीं, भूखे ह्वै गई साँझ।
कबहुँ कहति बन गए, कबहुँ कहि घरहिँ बतावति।
कहँ खेलत हौ लाल, टेरि यह कहति बुलावति।
जागि परी दुख-मोह[2] तैं, रोवत देखे लोग।
तब जान्यौ हरि दह गिरचौ, उपज्यौ बहुरि बियोग।
धिक-धिक नंदहि कह्यौ[3], और कितने दिन जीहौ।
मरत नहीं मोहिँ मारि, बहुरि ब्रज बसिबौ कीहौ।
ऐसे दुख सौं मरन सुख, मन करि देखहु ज्ञान।
ब्याकुल धरनी गिरि परे, नंद भए बिनु प्रान।
हरि के अग्रज बंधु; तुरतही पिता जगायौ।
माता कौं परमोधि,[4] दुहुँनि धीरज धरवायौ।
मोहिँ दुहाई नंद की, अबहीं आवत स्याम।
नाग नाथि लै आइहैं, तब कहियौ बलराम।
हलधर कह्यौ सुनाइ, नंद, जसुमति, ब्रजबासी।

---

① जननि—१, ३, ४, ११, १४। ② नेह—२, ३। ③ कहत—३। ④ परबोधि—१।

बृथा मरत किहिँ काज, मरै क्यौं वह अबिनासी ?
आदि पुरुष मैं कहत हौं, गयौ कमल कैं काज।
गिरिधर कौ डर जनि करौ, वह देवनि सिरताज।
वह अबिनासी आहि, करौ धीरज अपनैं मन।
काली छेदे नाक लिए आवत, निरतत फन।
कंसहिँ कमल पठाइहै, काली पठवै दीप।
एक घरी धीरज धरौ, बैठौ सब तर-नीप।
ह्वाँ नागिनि सौं कहत कान्ह, अहि क्यौं न जगावै।
बालक-बालक करति कहा, पति क्यौं न उठावै।
कहा कंस, कह उरग यह, अबहिँ दिखाऊँ तोहिँ।
दै जगाइ मैं कहत हौं, तू नहिँ जानति मोहिँ।
छोटैं मुँह बड़ी बात कहत, अबही मरि जैहै।
जो चितवै करि क्रोध, अरे, इतनेहिँ जरि जैहै।
छोह लगत तोहिँ देखि मोहिँ, काकौ बालक आहि।
खगपति[1] सौं सरबरि करी, तू बपुरौ को ताहि।
बपुरा मोकौं कहति, तोहिँ बपुरो करि डारौं।
एक लात सौं चाँपि, नाथ तेरे कौं मारौं।
सोवत काहु न मारियै, चलि आई यह बात।
खगपति कौं मैं ही कियौ, कहति कहा तू जात[2]।
तुमहिँ विधाता भए, और करता कोउ नाही।
अहि मारौंगे आपु तनक से, तनक सी बाहीँ।

---

① कोमल तन तुम हौ जगत ताते पूछति जाहि—१। ② बात—१, २, ३, ११।

कहा कहौं कहत न बनै, अति कोमल सुकुमार।
देती अबहिँ जगाइ कै, जरि बरि होत्यौ छार।
तू धौं देहि जगाइ, तोहिँ कछु दूषन नाहीँ।
परी कहा तोहिँ नारि. पाप अपनैँ जरि जाहीँ।
हमकौं बालक कहति है, आपु बड़े की नारि।
बादति है बिनु काजहीँ, बृथा बढ़ावति रारि।
तुहीँ न लेत जगाइ, बहुत जो करत ढिठाई।
पुनि मरिहैँ पछिताइ, मातु, पितु तेरे भाई।
अजहुँ कह्यौ करि, जाहि तू, मरि लैहै सुख कौन?
पाँच बरष कै सात कौ, आगैँ तोकौं हौन।
झिरकि नारि, दै गारि, आपु अहि जाइ जगायौ।
पग सौँ चाँपी पूँछ, सबै अवसान भुलायौ।
चरन मसकि धरनी दली, उरग गयौ अकुलाइ[1]।
काली मन मैँ तब कही, यह आयौ खगराइ।
बिषधर झटकी पूँछ, फटकि[2] सहसौ फन काढ़ौ।
देख्यौ नैन उघारि, तहाँ बालक इक ठाढ़ौ।
बार-बार फन-घात कै, बिष-ज्वाला की झार।
सहसौ फन फनि फुंकरै, नैँकु न तिन्हैँ[3] बिकार।
तब काली मन कहत, पूँछ चाँपी इहिँ पग सौँ।
अतिहिँ उठ्यौ अकुलाइ, डरचौ हरि बाहन खग सौँ।
यह बालक धौं कौन कौ, कीन्हौ जुद्ध बनाइ।

---

① कुम्हिलाइ-२, ३, १०। ② फनिग अति तामस बाढ़्यौ—२, १६। ③ तनहिँ लगार—१, ३, ११।

दाउँ घात बहुतै कियौ, मरत नहीं जदुराइ।
पुनि देख्यौ हरि-ओर, पूँछ चाँपी इहिँ मेरी।
मन-मन करत बिचार, लेउँ याकौं मैं घेरी।
दाउँ पर्‌यौ अहि जानि कै, लियौ[1] अंग लपटाइ।
काली तब गरबित भयौ, प्रभु दियौ दाउँ बताइ।
कहति उरग की नारि, गर्ब अतिहीं करि आयौ।
आइ पहूँच्यौ काल बस्य, पग इतहिँ चलायौ।
अहि नारिनि सौं यह कही, मो समसरि कोउ नाहिँ।
एक फूँक बिष-ज्वाल की, जल-डूँगर जरि जाहिँ।
गर्ब-बचन प्रभु सुनत, तुरतहीं तन बिस्तार्‌यौ।
हाय-हाय करि उरग, बारहोँ बार पुकार्‌यौ।
सरन-सरन अब मरत हौं, मैं नहिँ जान्यौ तोहिँ।
चटचटात अँग फटत[2] हैं, राखु-राखु प्रभु मोहिँ।
स्रवन सरन धुनि सुनत, लियौ प्रभु तनु सकुचाई।
छमहु मोहिँ अपराध, न जानैं करी ढिठाई।
ब्रजहिँ कृष्न-अवतार हौ, मैं जानी प्रभु आज।
बहुत किए फन-घात मैं, बदन दुरावत लाज।
रह्यौ आनि इहिँ ठौर, गरुड़ कैं त्रास गुसाईं।
बहुत कृपा मोहिँ करो, दरस दीन्हौ जग-साईं।
॥ नाक फोरि फन पर चढ़े, कृपा करी जदुराइ[3]।
॥ फन-फन-प्रति हरि[4] चरन धरि, निरतत हरष बढ़ाइ।

---

① गयौ—२। ② फूट हीं —२, ३, ६, ११, १४। ॥ ये चरण (ना) में नहीं हैं। १४, १७। ③ दिवराइ—३, ६, ११, १४। ④ प्रति—१, ११,